शहीदे इन्सानियत

लेखक: आयतुल्लाहिल उज़मा सय्यदुल उलमा

मौलाना सय्यद अली नक़ी नक़वी र.अ.

हिन्दी अनुवाद: फ़िरोज़ आलम रिज़वी

alinaqinaqvi.blogspot.in
www.slideshare.net/changezi
youtube.com/user/mahakavi

शहीदे इन्सानियत

लेखक

आयतुल्लाहिल उज़मा सय्यदुल उलमा मौलाना

सय्यद अली नक़ी नक़वी र०अ०

जुमला हुकूक़ महफ़ूज़

नाम किताब	:	शहीदे इन्सानियत
मुसन्निफ़	:	आयतुल्लाहिल उज़्मा सय्यदुल उलमा मौलाना सय्यद अली नक़ी नक़वी[र०अ०]
तादाद	:	एक हज़ार
सने इशाअत	:	फ़रवरी 2017
कम्पोज़िंग	:	शाहिद अली आज़मी
प्रेस	:	नुक्कर प्रिन्टिंग एण्ड बाइन्डिगं सेन्टर 26– शरीफ़ मंज़िल, हुसैनाबाद, लखनऊ–3
क़ीमत	:	Rs. 300

नाशिर

नूरे हिदायत फ़ाउन्डेशन

इमामबाड़ा गुफ़रानमआब, मौलाना कल्बे हुसैन रोड, चौक, लखनऊ-226003 (उ० प्र०) भारत

फ़ोन नं० 0522-2252230 मो० :08736009814, 09335996808

Email: noorehidayat@gmail.com, Web: noorehidayatfoundation.org

بِسْمِ اللّٰهِ الرَّحْمٰنِ الرَّحِيْمِ

وَلَا تَحْسَبَنَّ الَّذِيْنَ قُتِلُوْا فِيْ سَبِيْلِ اللّٰهِ أَمْوَاتًا بَلْ أَحْيَاءٌ عِنْدَ رَبِّهِمْ يُرْزَقُوْنَ

और जो लोग खुदा की राह में शहीद किये गए उन्हें हरगिज़ मुर्दा न समझो बल्कि वह लोग जिन्दा हैं और अपने परवरदिगार की तरफ़ से रिज़्क़ पाते हैं। (सूरए आले इमरान/169)

इन्सान को बेदार तो हो लेने दो
हर क़ौम पुकारेगी हमारे हैं हुसैन
(जोश मलीहाबादी)

शहीदे इन्सानियत

लेखक

आयतुल्लाहिल उज़्मा सय्यदुल उलमा मौलाना सय्यद अली नक़ी नक़वी[ताबा]

मिलने का पता

नूरे हिदायत बुक डिपो

इमामबाड़ा गुफ़रानमआब, मौलाना कल्बे हुसैन रोड, चौक, लखनऊ-226003 (उ० प्र०) भारत

फोन नं० 0522-2252230 मो० :08736009814, 09335996808

Email: noorehidayat@gmail.com, Web: noorehidayatfoundation.org

अर्ज़े हाल

हिन्दी के इस दौर में शिद्दत से इस बात की ज़रूरत महसूस की जा रही थी कि जवान तबके के लिए जो उर्दू से ज़्यादा हिन्दी ज़बान से आशना हैं किताब **"शहीदे इन्सानियत"** हिन्दी ज़बान में शाया की जाए ताकि हिन्दी रस्मुल ख़त पढ़ने वाले हज़रात भी सरकारे सैय्यदुल उलमा आयतुल्लाहिल उज़मा मौलाना अली नक़ी नक़वी की इस शाहकार और अज़ीमुश्शान किताब से फ़ायदा उठा सकें जो सीरते इमामे हुसैन और वाक़-ए-करबला पर मबनी अपनी नौइयत की मुनफ़रद और बेमिसाल किताब है। याद रहे कि इसके पहले 1984 ई0 में यादगारे हुसैनी के ज़ेरे एहतेमाम ये किताब अंग्रेज़ी ज़बान में भी शाया हो चुकी है। जिसका तरजमा जनाब सै0 अली अख़्तर साहब मरहूम ने फ़रमाया था। इसके अलावा लन्दन से भी शहीदे इन्सानियत का अंग्रेज़ी तरजमा शाया हो चुका है। चुंकि सरकारे सैय्यदुल उलमा की आलेमाना गुफ़तगु हिन्दीदाँ हज़रात को समझने में दुशवारी न हो लेहाज़ा मुशकिल अलफ़ाज़ के नेमुलबदल आसान अलफ़ाज़ भी रखे गये हैं और जनाब की असल तहरीर से कोई छेड़छाड़ नहीं की गई है जो उन्होंने अवाम के लिए तरतीब दी है। हिन्दी ज़बान में तरजमा करने में जनाब मौलाना असीफ़ जायसी और जनाब तज़हीब नगरौरी ने हक़ीर का मुकम्मल साथ दिया जो शुक्रिये के मुस्तहक़ हैं।

अपनी कोताह इल्मी का एतेराफ़ करते हुए नेमुलबदल अलफ़ाज़ में जो कमी रह गई हो उसके लिए तमाम क़ारईन से मुआज़ेरत ख़्वाह हूँ।

वस्सलाम

फ़िरोज़ आलम रिज़वी
शीशमहेल, हुसैनाबाद, लखनऊ
मोबाइल नं0 : 09450637057

मुन्दरजात

S. NO	उनवान	पेज न0
1	पेश लफ़्ज़	8
2	तमहीद	9
3	नसबी ख़ुसूसियात, ख़ानदान और उसके शानदार रिवायात	22
4	बनी हाशिम और बनी उमय्या	36
5	इस्लाम और उसका पैग़ाम	40
6	इस्लाम का मज़ाहिम ताक़तों से तसादुम (रूकावट)	51
7	हुसैन बिन अली[अ0स0] की विलादत और इब्तेदाई ज़िन्दगी	63
8	इमाम हुसैन[अ0स0] की ज़िन्दगी का दूसरा दौर, नाना की वफ़ात के बाद से बाप की शहादत तक	67
9	बनी उमय्या का इक़तेदार और उनकी सियासी रविश (चाल)	91
10	पैग़म्बरे ख़ुदा[स0अ0] के बाद इस्लामी मफ़ाद के मुहाफ़िज़ीन, (हिफ़ाज़त करने वाले) उनमें और मुख़ालिफ़ कूव्वतों में तसादुम और उसके नताएज	100
11	हसने मुजतबा[अ0स0] की सुल्ह और उसके नताएज	104
12	यज़ीद की वली अहदी	139
13	मुआविया की वफ़ात और यज़ीद की तख़्त नशीनी	151
14	यज़ीद तारीख़ की रौशनी में	154
15	इमाम हुसैन[अ0स0] के बलन्द अख़लाक़ और कमालात गराँक़द्र मक़ूलात (अक़वाल)	160
16	यज़ीद का बैयत पर इसरार और हुसैन[अ0स0] का इन्कार	181
17	हसन[अ0स0] की ख़ामोशी और हुसैन[अ0स0] का इक़दाम	190
18	हुसैनी मुवक़्क़िफ़ की तशरीह	196
19	हरमे रसूल[स0अ0] से सफ़र और हरमे ख़ुदा में पनाह	207
20	दावते अहले कूफ़ा और सिफ़ारते मुस्लिम बिन अक़ील	214

21	मक्के से करबला तक	251
22	यज़ीदी हुकूमत की सरगर्मी और करबला में फ़ौजों की आमद	286
23	अन्सारे इमाम हुसैन[अ0स0], उनकी क़िल्लते तादाद और उसके असबाब (वजह)	292
24	सुल्ह की बातें	296
25	बन्दिशे आब और ग़लब–ए–तश्नगी (प्यास की शिद्दत)	300
26	सुल्ह की आख़िरी कोशिश और उसका अन्जाम	305
27	शबे आशूर यानी मोहर्रम की दसवीं रात	312
28	दसवीं मोहर्रम सन 61हि0, इतमामे हुज्जत और आग़ाज़े हर्ब (जंग)	317
29	अन्सारे इमाम[अ0स0] के हालात और हैरत अंगेज़ कुर्बानियाँ	338
30	अक़रूबा–ए–इमाम, यानी बनी हाशिम की कुर्बानियाँ	409
31	जिहादे आख़िर और शहादत	429
32	शहादत के बाद	435
33	असीरी–ए–अहले हरम के वाक़ेयात पर एक जामे तब्सेरा (मुकम्मल बहस)	455
34	उसरा–ए–अहलेबैत (क़ैदियों) के मुख़्तसर हालात	461
35	गुज़िश्ता वाक़ेयात की रौशनी में हुसैनी शख़सियत और कारनाम–ए–हुसैनी पर तब्सेरा	475
36	फ़तह किसकी हुई?	482
37	मुजरिमों की पशेमानी	487
38	आलमे इस्लामी के तअस्सुरात (ख़यालात)	495
39	आसारे इन्क़ेलाब, वाक़–ए–हर्रा, ख़िलाफ़ते इब्ने ज़ुबैर, इज़्तेराबे इराक़ व ईरान और दीगर जुज़ई (छोटे) वाक़ेयात	498
40	जमाअते तव्वाबीन (तौबा करने वालों का गिरोह)	511
41	ख़ूने नाहक़ का इन्तेक़ाम	518
42	उमवी हुकूमत का अन्जाम	529
43	बनी अब्बास की सलतनत	531

44	तब्दीले ज़हनियत	534
45	अख़लाकी नताएज	537
ख़ातिम–ए–किताब : आलमे इन्सानी को इस्लाहे अमल और इत्तेबा–ए–(पैरवी) उसव–ए–हुसैनी की दावत		583

पेश लफ़्ज़

ब–फ़ज़्ले इलाही अब उसकी तौफ़ीक़ से वह हंगाम आ गया कि "शहीदे इन्सानियत" अस्ल किताब की शक्ल में मन्ज़रे आम पर लाई जा सके।

किताब के "मसव्वदे" (ख़ाके) की ब–ग़रज़े इस्तेसवाब इशाअत (प्रिन्ट) के बाद जिन अफ़राद ने नर्म व गर्म मुख़तलिफ़ लहजों, और तामीरी (सुलझे हुए) व तख़रीबी (फ़साद वाले) मुख़्तलिफ़ सूरतों से अपने ख़यालात का इज़हार फ़रमाया वह सब ही शुक्रिये के मुस्तहक़ हैं और इस ऐडीशन में अस्ल मक़ासिदे (मक़सद की जमा) किताब और नश्रे हुसैनियत के अहम मफ़ादात (फ़ाएदों) का तहफ़्फ़ुज़ (लिहाज़) करते हुए जहाँ तक मुमकिन था उन सबका लिहाज़ किया गया है।

वस्सलाम

अली नक़ी नक़वी उर्फ़ेया अन्हू

तमहीद

بسم الله الرحمن الرحيم

الحمد لله رب العالمين والصلوة على سيد المرسلين و آله الطاهرين

दुनिया में कोई तालीम याफ़्ता ऐसा न होगा जिसने अरब का नाम न सुना हो। अरब एक रेगिस्तानी मुल्क है जो ऐशिया की मग़रबी सरहद पर वाक़े है और जिसके साहिल पर बहरे अहमर (लाल समुद्र) लहरें मार रहा है. उसी मुल्क से सातवीं सदी ईसवी शुरू होने के बाद एक इन्क़ेलाब की लहर उठी जिसका नाम है "इस्लाम" उस इन्क़ेलाब के बानी हज़रत मोहम्मद बिन अब्दुल्लाह थे जिन्हों ने अपनी पैग़म्बरी का ऐलान करते हुए दुनिया को कामिल तौहीद का पैग़ाम पहुंचाया और बुत परस्ती, इक़तेदार परस्ती, सरमाया परस्ती ग़रज़कि ग़ैरुल्लाह की हर तरह की परस्तिश की मुख़ालिफ़त की। उससे उन लोगों को मुख़ासिमत (दुश्मनी) पैदा हो गई जिनके इक़तेदार को इस तालीम से नुक़सान पहुँचता था। उन्होंने इस इन्क़ेलाब को रोकने की कोशिश की और उनके हाथों पैग़म्बर को बड़ी तक्लीफ़ें उठाना पड़ीं।

इस मुख़ालिफ़त में बनी उमय्या पेश पेश थे। इसलिये कि अगरचे पैग़म्बरे इस्लाम[स०अ०] की तालीम बराहे रास्त किसी ख़ानदान की बलन्दी और किसी खानदान की पस्ती की हिमायत नहीं करती थी मगर आपकी तालीम में बलन्दी और इज़्ज़त का जो मेयार क़रार दिया गया था वह सिर्फ़ किरदार की ख़ूबी, फ़राएज़े इन्सानी की बजा आवरी (पूरा करना) थी। इस मेयार पर बनी उमय्या के अक्सर अफ़राद पूरे न उतरते थे। चुनानचे उमय्या के पोते अबू सुफ़यान बिन हर्ब ने इस्लाम के ख़िलाफ़ बग़ावत का झंडा बलन्द किया। अरब के हट धर्म और जाहिल बुत परस्त उस अलम के नीचे जमा हो गए और हज़रत मोहम्मद मुस्तफ़ा[स०अ०] को सताने और तबलीग़े इस्लाम में रोड़े अटकाने लगे और आप बराबर मुसीबतें और सख़्तियाँ झेलते रहे और दायरा आपके पैग़ाम की मक़बूलियत का वसीअ् (फैलता) होता गया। यहाँ तक कि हिजाज़ (आज का सऊदी अरब) के दूसरे अहम शहर मदीने के रहने वालों ने इस तालीम को क़ुबूल कर लिया और आपकी नुसरत का वादा करके आपको और आपके

साथियो को वहाँ आने की दावत दे दी। चुनानचे आपके साथ वाले वहाँ रफ्ता रफ्ता जाने भी लगे और ज्यादातर चले गए। जब मक्का वाले आपके मुखालिफीन ने यह देखा तो अब उन्होने ऐका करके आपकी जान लेने का फैसला कर लिया और रात के वक्त आपके मकान को आकर घेर लिया मगर आप अपने चचाजाद भाई हजरत अली[अ०स०] को अपने बिस्तर पर लिटा कर खुद उनके हलके से निकल गए और मदीने की तरफ़ रवाना हो गए। इस वाकिये को "हिजरत" के नाम से याद किया जाता है और इसी से मुसलमानों के हिजरी सन की इब्तेदा होती है।

दुश्मनों ने हिजरत के बाद भी आपको चैन से बैठने न दिया और कई मर्तबा चढ़ाई करके आपको कत्ल करने आये। मजबूरन आपको कई लड़ाईयाँ लड़नी पड़ी जिन मे बद्र, ओहद, और अहजाब बहुत मशहूर हैं। मगर इन तमाम लड़ाईयो मे अबू सुफियान को हर मर्तबा शिकस्त हुई और हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स०अ०] के हामियों की तादाद और उनकी ताकत बराबर बढ़ती रही। आखिर बनी उमय्या की कूव्वत बिल्कुल टूट गई और अपनी कमजोरी को छुपाने के लिये उन्होंने भी कुबूले इस्लाम की नकाब डाल ली मगर मौके के मुन्तजिर रहे कि इस्लाम की ताकत कुछ भी कमजोर हो तो उन्हें अपने गए हुए इकतेदार (हुकूमत) को वापस लाने का मौका मिले

हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स०अ०] की जिन्दगी में उनकी इस आरजू के पूरा होने का कोई इम्कान न था मगर उसके थोड़े ही अरसे बाद हजरत की वफात हो गई और मुसलमानों के निजाम मे अबतरी (कमजोरी) पैदा हो गई। उस वक्त की हुकूमत की मसलहतो के दुनयबी मसालेह (मसलहतों) ने बनी उमय्या को शाम में अपनी हुकूमत कायम करने का मौका दे दिया जो शुरू मे सिर्फ एक सूबेदार या गवर्नर की हैसियत से थी मगर रफ्ता रफ्ता उसके इकतेदार और कूव्वत मे इजाफा होता गया। यहाँ तक कि आखिर में उसने खुद मुख्तार (आजाद) सलतनत की हैसियत हासिल कर ली।

उन लोगो ने शाम के मुल्क में अपना कब्जा जमाते ही हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स०अ०] के राएज किये हुए तरीकों और इस्लाम की फैलाई हुई मसावात (बराबरी) को मिटाना शुरू कर दिया और आखिर मे तो यह हालत हुई कि कुरआनी अहकाम की एलानिया मुखालिफत होने लगी।

हजरत रसूल[स०अ०] के हकीकी जानशीन जो इस्लामी तमद्दुन व तहजीब के मुहाफिज थे उसको किसी तरह बर्दाश्त न कर सकते थे। जब अली इब्ने

अबी तालिब[अ०स०] जो रसूल[स०अ०] के चचाजाद भाई, उनकी आवाज पर सबसे पहले लब्बैक कहने वाले और शुरू से आखिर तक इस्लाम की इशाअत मे उनके दस्तो बाजू (शाना बशाना) थे मुसलमानो के तख्ते हुकूमत पर आये तो उन्हे हुकूमते शाम से मुकाबला करना पड़ा और सिफ्फीन की खूँरेज लड़ाई हुई मगर अभी हजरत अली[अ०स०] का इरादा और काम मुकम्मल नहीं हुआ था कि मस्जिदे कूफा मे ऐन हालते सजदा में हजरत अली[अ०स०] के सर पर तलवार लगाई गई जिससे आप ने शहादत पाई। हजरत अली[अ०स०] के बाद आपके बडे फरजन्द इमाम हसन[अ०स०] ने कुछ शराएत का पाबन्द करने के बाद हुकूमते शाम से सुल्ह करली मगर हुकूमते शाम ने उन शराएत की पाबन्दी नहीं की और खुफिया तौर पर जहर दिलवा कर उनकी जिन्दगी का खातेमा कर दिया। अब पैगम्बर[स०अ०] के खानदान में उसूले इस्लाम के तहफ्फुज की पूरी जिम्मेदारी हुसैन[अ०स०] पर थी जो हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स०अ०] के दूसरे नवासे और हजरत अली[अ०स०] छोटे बेटे थे।

हुकूमते शाम के तख्त पर अबू सुफियान का पोता यजीद बिन मुआविया बैठा जो बडा ही शराब ख्वार और बद-किरदार था और ऐसे अखलाकी जराएम का मुरतकिब (करता) होता था जिनका तजकेरा भी तहजीब और शाइस्तगी के खिलाफ है उसके बावजूद इतने दिन के मजबूत उमवी इक्तेदार (हुकूमत) की हैबत से अवाम को दम मारने की हिम्मत न थी। वह हुकूमत के जुल्मो सितम से इतना डर गए थे कि ख़ौफे खुदा का एहसास बाक़ी न रहा था।

मगर यजीद जानता था कि हिजाज के मुल्क में शहरे मदीना के महल्ल-ए-बनी हाशिम के अदर एक इन्सान है जो मुझसे नहीं डरता सिर्फ खुदा से डरता है और वह उसूले इस्लाम का हकीकी मुहाफिज रसूल[स०] का नवासा है। वह खामोश सही मगर किया मालूम किस दिन दुनिया की आँखो से ग़फलत के पर्दे हट जायें और वह सच्चाई की तरफ खिंच जाये। इस बिना पर यजीद को फिक्र लाहक हुई कि किसी न किसी तरह वह हुसैन[अ०स०] से बैअत हासिल कर ले। चुनानचे उसने मदीने के हाकिम वलीद बिन अतबा बिन अबी सुफियान को हुक्म भेजा कि हुसैन से बैअत हासिल करो और इस मुआमले में किसी मुराआत (रिआयत) से काम न लो। हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने इस पैगाम के माना समझ लिये और आप उसे पहले ही से समझे हुए थे

उसूलन आप के लिए यजीद की बैअत करना गैर मुमकिन था। सर का कलम होना बेशक आसान था मगर हिफाजते खुद इख्तियारी के फर्ज को अन्जाम देने के बाद जो इस्लामी शरीअत का एक बुनियादी हुक्म है।

इस के लिये हुसैन[अ०स०] ने तर्के वतन का फैसला कर लिया। आपने अपने तमाम मुतअल्लेकीन (रिश्तेदार) को जिन में औरतें और बच्चे भी थे अपने साथ लिया और मक्के में जाकर पनाह ली। इस तरह आपने यह साबित कर दिया कि आप किसी से जग करना और अपनी और अपने साथियों की जिन्दगी को मोरिजे खतर (खतरे) में डालना नहीं चाहते थे बशरतेकि आपको यजीद की बैअत पर मजबूर न किया जाता।

मक्का अरब के बैनुल अकवामी (International) कानून और फिर इस्लाम के रु से एक ऐसा अमन का मकाम था जहाँ किसी मुतनफ्फिस (शख्स) के लिये खतरा न होना चाहिए। मगर फरजन्दे रसूल[अ०स०] को यहाँ भी अपने कत्ल का सामान दिखाई दिया। आखिर अय्यामे हज मे कि जब तमाम आलमे इस्लामी मक्के की तरफ खिचा चला आ रहा था हुसैन[अ०स०] को मक्के से रुखसत होना पडा और आप कूफे की तरफ रवाना हुए जहाँ के लोग आपको इसरार के साथ बुला रहे थे। और आप से मजहबी रहनुमाई के तालिब (चाहते) थे और आप अपने चचाजाद भाई मुस्लिम बिन अकील को वहाँ के हालात का मुशाहिदा (जाएजा लेने) करने के लिए भेज चुके थे मगर इस दौरान मे कूफे की हालत दिगरगूँ (बिगड) हो गई वहाँ सगदिल हाकिम उबैदुल्लाह बिन जियाद का इक्तेदार कायम हो गया और मुस्लिम बिन अकील शहीद कर डाले गए। उसके बाद कूफे जाने का ब-जाहिर कोई मौका न था मगर मक्का और मदीना वापस जाने का भी इम्कान न था। उधर कूफे से आपको गिरफ्तार करने के लिए फौज भेज दी गई जिसने आपको आगे बढ़ने या वापस जाने से रोका। मजबूरन आप करबला की सर जमीन पर उतर पडे। दूसरे ही दिन से यजीद का टिड्डी दल लश्कर करबला के मैदान में आना शुरु हो गया। तमाम रास्ते बन्द कर दिये गए और इमाम हुसैन[अ०स०] को घेर कर यजीद की बैअत पर इसरार किया जाने लगा।

हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ सिर्फ आपके सत्तरह अजीज, चन्द गुलाम और सौ डेढ सौ के करीब वह खास दोस्त थे जो कूफे या बाज दूसरे मकामात से बावजूद रास्तों के बन्द होने के किसी न किसी तरह आप तक पहुच सके थे।

सातवीं मोहर्रम से आप पर और आपके तमाम साथियों यहाँ तक कि छोटे बच्चों पर पानी बन्द कर दिया गया मगर चूँकि अमन पसन्दी हकीकी मानी में आपका शिआरे जिन्दगी (जिन्दगी का चलन) था लिहाजा इतमामे हुज्जत के तौर पर आपने यजीदी फौज के अफसर उमर बिन सअ्द के सामने ऐसे शराएत पेश किये जिन से मामलात रू ब–इस्लाह (सुलह) हो जाये। और जग की नौबत न आये. आप का तरीक–ए–कार इतना सुलझा हुआ था कि उमर बिन सअ्द को भी इस बात का कायल होना पड़ा कि हुसैन[अ०स०] सुलह के रास्ते पर गामजन हैं चुनानचे उसने कूफे के हाकिम उबैदुल्लाह बिन जियाद के पास इसी मजमून पर मुशतमिल एक खत भेजा मगर इब्ने जियाद को हुकूमत का गुरूर और सलतनत का नशा था। उसने इमाम हुसैन[अ०स०] को पहचाना भी न था कि वह मुशकिलात का कहाँ तक मुकाबला कर सकते हैं। उसने आपकी सुलह पसन्दी को कमजोरी और आजजी का नतीजा खयाल करते हुए उमर बिन सअ्द को लिख भेजा कि हुसैन[अ०स०] गैर मशरूत (बगैर किसी शर्त क) तरीके पर इताअत कर लें। जब ही उनकी जान बच सकती है गैरतदार और फर्ज शनास इमाम हुसैन[अ०स०] के लिए ऐसा मुमकिन न था।

नवीं मोहर्रम की शाम को इस बडे लश्कर ने आप पर हमला कर दिया मगर आपने एक शब के लिए इलतवाये जग (जग टालने) की ख्वाहिश फरमाई जो ब–मुशकिल मन्जूर की गई। आपका मकसद यह था कि आखरी मर्तबा यह पूरी रात इबादते खुदा में बसर कर लें। इसके अलावा दोस्त और दुश्मन दोनों को जग के कतई तौर पर तय हो जाने के बाद सोचने का मौका दे दे। दुश्मनों पर इतमामे हुज्जत हो जाये और साथियो में से कोई साथ छोड कर जाना चाहता हो तो चला जाए आपने आने साथियो को जमा करके साफ तौर पर बता दिया कि कल हमारी जिन्दगी का फैसला है मैं तुम से अपनी बैअत की जिम्मेदारी हटाये लेता हूँ। तुम इस रात के पर्दे मे जिधर चाहो चले जाओ मगर उन जाँबाजो ने उस मौके से फायदा उठाना नहीं चाहा और एक जबान होकर कहा कि हम आपका साथ कभी न छोडेगे। उन लोगों ने जो कहा था वही कर दिखाया।

सामने फौजों का समन्दर लहरें मार रहा था। गिर्दो पेश (चारों तरफ) वीरानी और बरबादी के सिवा कुछ और नजर न आता था। अजीजो, भाईयों भतीजो, और औलाद के खूबसूरत चेहरे इमाम के सामने थे और आपके साथ पर्दा दार औरते और छोटे बच्चे भी मौजूद थे। दरिया पर फौज का पहरा बैठा

हुआ था और हुसैन[अ०स०] और उनके साथियों तक एक कतर ए आब तक के पहुँचने की इजाजत न थी। बे जबान बच्चे प्यास की शिद्दत से बेताब नजर आ रहे थे मगर ताक़त की तमाम नुमाइशे और ईजा रसानी (तकलीफ पहुचाने) की तमाम सूरतें इमाम हुसैन[अ०स०] और आपके साथियों को मजबूर न कर सकीं कि एक फासिक व फाजिर को जाएज हुकमरान तस्लीम करे।

दसवीं मोहर्रम को सुबह से दोपहर के बाद तक इमाम हुसैन[अ०स०] के जाँबाज साथी जो आपसे खानदानी तअल्लुक (रिश्ता) न रखते थे बराबर अपनी जाने हुसैन[अ०स०] और आपके उसूल की खातिर कुर्बान करते रहे। जब उन में से कोई बाकी न रहा तो अजीजो की नौबत आई। इस मौके पर आपके लिए आसान होता कि आप खुद आगे बढ कर राहे हक में अपने सर का हदिया पेश कर देते मगर आपको अपनी कूव्वते बर्दाश्त का पूरा इम्तेहान देना था। चुनाँनचे उसके बाद आपके अजीज आपसे जुदा होने लगे। सबसे पहले आपने अपने जवान बेटे अली अकबर को जो शबीहे पैगम्बर[स०अ०] भी थे मरने के लिए भेजा। माँ खैमे में थीं और बाप खैमे के दरवाजे पर और उनका चाँद फौजे मुखालिफ की घटा में छुपा था। बाप ने देखा और माँ ने सुन लिया कि अली अकबर तलवारों से टुकड़े टुकड़े हो गए मगर सब्रो सुकून में फर्क न आया। उसके बाद दूसरे अज़ीज भी एक एक कर के रूख्सत हुए और राहे हक में निसार हो गए। सबसे आखिर मे आपके जाँबाज भाई अब्बास बिन अली[अ०स०] आपसे रूखसत हुए। यह हुसैनी जमाअत के अलमदार थे जिनके कत्ल होने से हुसैन[अ०स०] की कमर टूट गई मगर हिम्मत शिकस्ता नहीं हुई। उसके बाद आपके पास काई सरमाया हक की बारगाह मे नज्र देने के लिए न था। मगर सबसे आखिर मे आपने एक ऐसा मासूम हदिया पेश कर दिया जिस पर किसी शरीअत और कानून की रू से मुजरिम होने का इल्जाम न आ सकता था। वह शीरख्वार (दूध पीता) बच्चा जो अपनी माँ की गोद में प्यास से सिसकियाँ ले रहा था हुसैन[अ०स०] ने उसकी हालत देखी और दुश्मन की फौज के सामने अपने हाथों पर लिया, यह था हुसैन[अ०स०] का सबसे आखरी फिदया। इन्सानियत के हाथ पैरों में लरजा पड़ गया और रहमो करम की दुनिया में अंधेरा छा गया। जब उस दुश्मन फौज के एक सिपाही ने तीर चिल्ल–ए कमान में जोडा और बच्चे की गर्दन को निशाना बनाया हुसैन का यह आखिरी तोहफा भी कुबूल हो गया। अब क्या था? ब–जाते खुद हजरत को हक की हिमायत में जेहाद का फर्ज अन्जाम देना था और अपनी जान की कुर्बानी पेश करना थी। चुनानचे

आपने इस शिकस्तगी और बेकसी के आलम में तलवार न्याम से निकाली और जितना कानूने इस्लाम की रु से आपको अपना फरीजा महसूस होता था उस हद तक इन्तेहाई शदीद मुकाबला किया। वह मुकाबला जो ऐसे हालात में आम इन्सानों की ताकत से यकीनन बाला तर (पहुँच से बाहर) है। मगर कहाँ एक इन्सानी जिस्म और कहाँ फौलादी तलवारो का सैलाब, जिस्म जख्मों से चूर हो गया। आप घोड़े से जमीन पर गिरे और वह मरहला जो आपके लिये पहले ही आसान था अब ज्यादा आसान हो गया। आपका सर कलम करके नैजे पर बलन्द किया गया। शहीदों की लाशें घोडों से पामाल की गई मालो असबाब लूटा गया। खानदाने रिसालत की मुकद्दस ख्वातीन के सरों से चादरे उतारी गई। खेमों में आग लगाई गई मर्दों में एक बीमार व नातवाँ अली बिन हुसैन[अ०स०] बाकी रह गए थे जिन्हे तौक व जजीर पहनाये गए और अरब के शरीफ तरीन खानदान की गैरत मन्द बीबियाँ असीर करके शहर–ब–शहर फिराई गई।

यह है दुनिया–ए–तारीख का वह बडा हादसा जो "वाक–ए–करबला" के नाम से याद किया जाता है।

यूँ तो आलम का हर वाकेया अपने महल्ले वुकूअ (जहाँ वाकेया हुआ है) के एतेबार से किसी खास जगह, किसी खास कौम और किसी खास तब्के से मुतअल्लिक होता है और इस लिहाज से वाक–ए–करबला भी इराक की सरजमीन, अरब के मुल्क, हाशिम की नस्ल और मुसलमानों की जमाअत से तअल्लुक रखता था मगर वाकेयात मे हमागीरी और वुसअत पैदा हो जाती है उन खुसूसियात और नताएज के लिहाज से जो कुल्ले नौये इन्सानी (पूरी इन्सानियत) से वाबस्ता हो और जिन मे मजहबो मिल्लत की कोई तफरीक (फ़र्क) न हो। इस हैसियत से देखा जाता है तो वाकय–ए–करबला मुतअद्दिद वजूह (बहुत सी वजहों) से तमाम नौ–ए–इन्सानी (पूरी इन्सानियत) के तअल्लुक का मरकज (सेन्टर) है।

अव्वलः यह कि जालिम से नफरत और मजलूम के साथ हमदर्दी फ़ितरते बशरी में (इन्सान के नेचर) दाख़िल है। अगर कोई क़िस्सा हमारे सामने पेश हो जिस में एक तरफ जुल्म का मुजाहरा हो और दूसरी तरफ मजलूमियत तो चाहे इस वाकेया से मुतअल्लिक शख्सियतों से हम बिल्कुल वाकिफ न हो तब भी जालिम से नफरत और मजलूम के साथ हमदर्दी पैदा हो जायगी और उसमे किसी मजहब व खयाल का इम्तेयाज (फर्क) न होगा।

हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] पर जो मजालिम करबला में वाके हुए उनकी मिसाल तारीखे आलम मे नापैद (मौजूद नही) है। यू तो अक्सर अम्बिया और मुकर्रबीन (अल्लाह से करीब) अबनाये जमाना (दुनिया परस्तों) के हाथो मजालिम का शिकार हुए। बहुत से बे गुनाह अफराद क़त्ल किये गये। बहुतो का माल असबाब लूटा गया और बहुत से लोग कैद हुए मगर बहेसियते मजमूई (आमतौर पर) वह तमाम मसाएब जिनका सामना फरदन फरदन बहुत से अशखास (लोगो) को करना पडा। हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की जात में एकटठा हो गये। और उन पर ब–वक्ते वाहिद (एक वक्त मे) जमा हो जाने से आपकी जाते मजलूमियत में अपनी आप मिसाल करार पा गई

लिहाजा जिस कद्र हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की मजलूमियत का दर्जा बलन्द और जालिम के जुल्म का दर्जा शदीद (ज्यादा) है उसी कद्र वह हमदर्दी भी कि जो इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ ब–हैसियते मजलूम होना चाहिए। हर दूसरे मजलूम से ज्यादा है और वह नफरत भी कि जो आपके दुश्मनो से ब–हैसियते जालिम होना चाहिए तमाम दुनिया के सितमगारो की बनिसबत ज्यादा है।

दुसरे यह कि हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की मजलूमियत बेबसी की मजलूमियत न थी, जिस तरह किसी शख्स पर अकेले जगल में डाकू हमला कर दे और उसके मालो असबाब को लूट लें। या उसे कत्ल कर डाले। मजलूम यह भी है और हमदर्दी इसके साथ भी होगी मगर यह मजलूमियत गैर इख्तियारी तौर पर है। इसके साथ कोई अमल ऐसा शरीक नहीं है जो अखलाकी नुकत ए नजर से काबिले मदह (तारीफ) हो। हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की मजलूमियत इस नौ (तरह) की नहीं है। आपने एक मसलके (मजहब) हक़ की हिमायत और एक सही उसूल की हिफ़ज़त के लिए इन तमाम मसाएब को बर्दाश्त किया। इसका नाम कुर्बानी है। यूँ तो कुर्बानी के बहुत से अक्साम (किस्में) हो सकते हैं मगर सब मे बलन्द जान की कुर्बानी है और अगर इस फर्ज के आयद (लागू) होने पर कोई इस मन्जिल मे साबित क़दम नजर आये तो तमाम अफरादे इन्सानी (लोगों) के नजदीक ज़्यादा इज्जत व एहतेराम का मुस्तहक होगा और जिस कद्र मकसद इज्जतदार और शरीफ होगा उतनी ही कुर्बानी अहम और काबिले इज्जत समझी जायेगी। करबला की सरजमीन पर हजरत हुसैन बिन अली[अ०स०] ने जो कुर्बानी पेश की वह इन्सानी तारीख का एक बेमिसाल कारनामा है। हक परस्ती और हक परवरी की

बुनियादें मुतजलजल (लरज) हो रही थीं और गल्बा (ताकत) व इकतेदार (हुकूमत) इन्सानी आजादी का सर कुचल कर अपनी गुलामी का इकरार ले रहा था। इस नाजुक मौके पर हुसैन[अ०स०] ने अपने को और अपने अजीजों बल्कि बच्चों तक को मैदाने जेहाद में ला कर जब्रो इस्तिबदाद (जुल्म) का पर्दा चाक कर दिया और सिबातो इस्तेकलाल (साबित कदमी) जब्तो सब्र (बर्दाशत) ईसारो कुर्बानी, हक परवरी और रास्त किरदारी (नेक राह) का बहुत बलन्द नमूना पेश किया। इस लिहाज से हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] किसी कौम और मजहब से मख्सूस नहीं समझे जा सकते। हुसैन[अ०स०] का तअल्लुक तमाम दुनिया ए इन्सानियत से है। आपने वह काम किया जिसने इन्सानियत के मिटते हुए नुकूश (निशान) को फिर से उभार दिया और दम तोडती हुई इन्सानियत को नये सिरे से जिन्दा कर दिया। आपने दुनिया-ए-इन्सानियत को वह पैगाम दिया जो जिन्दा है और हमेशा जिन्दा रहेगा। आपने दुनिया को सच्चाई और रास्त बाजी (नेक राह) की सही कद्रो कीमत का अन्दाजा कराया और उस मौत के मानी समझाये जिसमें दवामी जिन्दगी (हमेशा की जिन्दगी) की हकीकत मुजमर (छिपी) है। इसलिये तमाम अकवामे आलम (सारी कौमें) जो कुर्बानी की इज्जत करती हैं मजबूर हैं कि हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] को इन्तेहाई कद्रो मन्जिलत की निगाह से देखें।

तीसरे यह कि हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] का मकसद अपनी कुर्बानी से कोई ऐसा अम्र (चीज) न था जो मुखतलिफ मजाहिब के नुकत ए-नजर (नजरिये) से महल्ले इख्तलाफ हो। इन्सानी औसाफ (सिफत) व इख्लाक की एक मन्जिल वह है जहाँ तमाम मजाहिब (धर्म) मुत्तफिक (एक) हो जाते हैं तमाम मजाहिब की अस्ल असास (बुन्याद) जिस पर उनकी इमारत बलन्द की गई है अखलाके इन्सानी को नुकत-ए इरतेका (बलन्दी के केंद्र बिंदु) तक पहुचाना है। यह और बात है कि जमाने के एख्तेलाफ से कुछ अहकाम (कानून) में अमदन (जानबूझ कर) तबदीलियाँ की गई हो और बाज मजाहिब के उसूल में बाद की आने वाली नसलों की ना समझी से कुछ ज्यादती या कमी हुई हो मगर अस्ली महवर (सेन्टर) सबका तहजीबे इख्लाक और तकमीले बशरियत (मानवता की पूर्ति) है। हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] का मकसद यही नुकत-ए-मुशतरक (यही एक बात सबसे अलग थी) था। यकीनन अगर हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] का मुकाबला किसी दूसरे दीन व मिल्लत के अफराद से हुआ होता यानी कोई गैर मुस्लिम जमाअत आपके सामने होती तो चाहे आपकी कुर्बानी कितनी ही

हक्कानियत (सच) पर मबनी होती और आपको कितने ही जुल्म के साथ शहीद किया गया होता मगर वह मजहबी जमाअत जिसके मुकाबले मे आप थे और जिसके हाथों आपको यह मजालिम बर्दाश्त करना पडे थे किसी हद तक आपके नाम और आपके काम से बिनाये मुखासिमत (दुश्मनी) जरूर महसूस करती और वाकय–ए–करबला के साथ हमदर्दी मे उमूमियत (आम लोगों मे) पैदा न होती लेकिन हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की कुर्बानी रसमी तौर पर किसी एक मजहब को मिटाने और दूसरे मजहब को कायम करने के लिए नहीं थी बल्कि एक ही दीन के जाहरी मानन वालों मे बुराईयों को मिटाने और अच्छाईयो के कायम करने के लिए अमल में लाई गई थी और चूँकि बुराई और अच्छाई के मुतअल्लिक उसूली हैसियत से मजाहिब में कोई एख्लेलाफ नहीं पाया जाता। यानी हर मजहब के नजदीक बुराईयाँ मिटाने के काबिल और अच्छाईयाँ कायम करने की मुस्तहक हैं इसलिये हर मजहब के लोगो को हुसैन[अ०स०] के मकसद से इत्तेफाक होगा और वह आपकी कुर्बानी को इज्जत व एहतेराम का मुस्तहक समझेगे।

चौथे हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] और उनके साथियों ने वाकेय–ए–करबला के दौरान मे मुखतलिफ अखलाक व औसाफे कामिला (तमाम सिफतों) की जो मिसालें पेश कीं हैं वह आम्म–ए–ख़लाएक (लोगों) के लिए एक दायमी (हमेशा) दर्से अमल की हैसियत रखती हैं जिससे तमाम अफरादे बशर यकसाँ तौर पर फायदा उठा सकते हैं। उन ही तमाम वजूह का नतीजा यह है कि दुनिया ने वाकेय ए करबला के साथ अपने बाहमी तफरका (आपसी इख्तिलाफ) और जज्बात की कशमकश के बावजूद यगानगी (एकता) का बर्ताव किया और अकवामे आलम ने यकसाँ तौर पर उसकी अहमियत का एतेराफ़ व इकरार किया और सदियाँ गुजरने के साथ उनकी दिलचस्पी इस अहम हादसे से न सिर्फ कायम रही बल्कि मुखतलिफ अवकात (वक्तों) में इसमें इजाफा होता रहा।

अगर कोई सय्याह (सैलानी) मोहर्रम के जमाने में शर्क व गर्ब 'Asia &Eurup आलम की सय्याहत (सैर) करे और हर मर्तबा मोहर्रम के पहले दस दिन एक नये खित्त–ए–जमीन (मुल्क) पर गुजारे तो वह देख लेगा कि हर जगह अपने अपने मेयारे जिन्दगी और तर्जे मआशिरत (समाजी जिन्दगी) के एतेबार से किसी न किसी तरह करबला के शहीद को याद किया जाता है।

यह सालाना यादगार जो अजादारी के मुख्तलिफ मरासिम (रस्मों) की शक्ल मे मनाई जाती है करबला के वाकेये के बाद पहली ही सदी में मुसलमानो ने कायम कर ली थी और उसके हल्क–ए इशाअत (फैलाओ) मे बराबर इजाफा होता रहा।

हालाँकि इन्सान फितरतन खुशी को पसन्द करता है और रन्जो गम से भागता है। इसलिये अगर जमाने के हादसों के मातहत गम के असबाब पैदा भी होते हैं तो उनको भुलाने की कोशिश करता है। यही वजह है कि अक्वामे आलम (दुनियावी कौमों) मे जितने त्योहार हैं वह सब खुशी की यादगार हैं। गम की यादगारे कभी कायम नहीं की गई यह सिर्फ हुसैन मजलूम की शहादत है जिसकी यादगार गम की सूरत में सदहा साल (सैकडों साल) से बराबर कायम है जाहिर है कि फितरते इन्सानी (नेचर) किसी बार को अरसे तक बर्दाश्त नही कर सकती। इस गम की यादगार का इस तरह बरकरार रहना इस अम्र (हुक्म) की दलील है कि वाकेय–ए करबला की याद मे इन्सानी जिन्दगी के लिये नफा बख्श (फायदेमन्द) अनासिर मुजमर (चीजे छुपी हुई) हैं।

फिर यह भी एक हकीकत है कि हमेशा हाल का नक्श माजी (पॉस्ट) को फरामोश बना कर उसके असर को खत्म कर देता है। लेकिन इसके बरखिलाफ वाकेय ए करबला की यादगार इस शिददत के साथ कायम रहना कि हाल का कोई वाकेया इस पर असर अन्दाज न हो सके। यह मानने पर मजबूर करता है कि तारीखे आलम इसके बाद से इस वक्त तक कोई नजीर इसकी पेश नहीं कर सकी।

बावजूदेकि वाकेय–ए–करबला के बाद कितने ही इन्केलाब हुए। तमददुन (तहजीब) ने कितनी ही करवटे बदलीं। मेयारे अख्लाक में कितने ही तगैय्युरात (बदलाव) हुए मगर हुसैनी कुर्बानी की याद मुसलसल तेरह सौ बरस से यकसाँ इज्जत व एहतेराम के साथ कायम है। मानना पडेगा कि वह कुर्बानी ऐसे मुशतरक इन्सानी उसूल की हिफजत के लिए की गई है कि जब तक दुनिया मे इन्सानियत कायम है इस उसूल की भी कद्रो मन्जिलत है और इस यादगार कुर्बानी की याद भी बरकरार (बाकी) है।

खुली हुई बात है कि जितना कोई मौजू (सबजेक्ट) अहम होगा और तारीखी हैसियत से जिस कद्र किसी वाकये मे नुदरत (ब्यूटी) और अहमियत ज्यादा होगी उसी कद्र अहले फिक्रो कलम तबा आजमाई (काम) ज्यादा करेंगे। इसी का नतीजा है कि दुनिया की तारीख मे करबला के वाकये से बढकर

किसी वाकये से मुतअल्लिक नजमो नस्र शाएरी और तहरीरों (Prose and poetry) का जखीरा फराहम नही हुआ।

करबला की जमीन पर अभी खूने शहीदों की तरी खुश्क न होने पाई थी कि शायरो की जबान से इस वाकये के मुतअल्लिक अशआर तराविश (कहने लगे) करने लगे और नस्र (Prose) में उन खुतबों से कतए नजर (हटकर) करते हुए जो अहलेबैतु हुसैन[अ०स०] की जबान या दूसरे मुकर्रेरीन (स्पीकर) के दहन से हगामी हालात के मातहत निकले हैं खुसूसन उन एकदामात के जैल मे जो इमाम हुसैन[अ०स०] के खून का बदला लेने के लिए सुलैमान बिन सुरदे खुजाई और फिर मुख्तार की जानिब से हुए थे जिनका मकसद ही यह था कि लोगों को वाकय–ए–करबला की अहमियत से मुतअस्सिर किया जाये। मुस्तकिल तौर से इस वाकये पर तसानीफ (बुक्स) की इब्तेदा पहली सदी हिजरी के अवाखिर (आखिर) से हुई और उसके बाद बराबर मुअर्रेखीन (इतिहास कार) वाकय–ए–करबला पर मकातिल लिखते रहे और तसानीफ (किताबों) का सिलसिला जारी हो गया और यह वाकेया है कि दुनिया कि है किसी दूसरे मौजू पर इतना नही लिखा और कहा गया जितना वाकेय ए करबला के मुतअल्लिक लिखा और कहा जा चुका है, फिर भी मौजू तश्ना है और बहुत कुछ समझने और समझाने की ज़रूरत बाकी है। इसके अलावा अब तक जितनी किताबें लिखी गई हैं उनका अन्दाजे बयान ज्यादा तर मजहबी मोतकेदात (अकीदे)[1] से वाबस्तगी रखने वाले अफराद के मजाक (जौक) के मुताबिक है जिससे अक्सर गैर मजाहिब के अफराद अजनबियत महसूस करते हैं। कोई नावाकिफ और अजनबी शख्स अगर वाकय ए करबला और इमाम हुसैन[अ०स०] की शखसियत को आलमे असबाब (सबब) की तारीखी रफ्तार और उसके नताएज और उनके जरूरी तफसीलात के साथ जनना चाहे तो उसकी तश्नगी दूर करने के लिए कोई एक किताब ऐसी जामे (मुकम्मल) नहीं है जिसका पता दिया जा सके। जेरे नजर किताब इस जरूरत को सामने रख कर लिखी जा रही है और इस मौके पर जबकि दुनिया–ए–इन्सानियत के इस अजीम वाकये को पूरे तेरह सौ बरस हो गए हैं और हर मजहबो मिल्लत

---

[1] इमाम की शान क्या होती है? इस बारे में जो शख्स मजहबे शिया के मोतकेदात (अकीदे) मालूम करना चाहे उसे अरबी में उसूले काफी और उसकी शुरूह फारसी में हक्कुल यकीन अल्लामा मजलिसी (मुतवफ्फी 1111 हिजरी) और हदीक ए सुल्तानिया मुसन्निफ जनाब सय्यदुल उलमा सय्यद हुसैन (मुतवफ्फी 1273 हिजरी) और उर्दू में मजकूरा किताबों के तर्जुमा की तरफ रुजू करना चाहिये मुख्तसिर तौर पर उसूले मजहब शिया को समझने के लिए खुद मेरी वह तसानीफ (किताबें) देखना मुनासिब होंगी जो इमामिया मिशन से शाये हुई हैं।)

के अफराद ने मुत्तफिक (एक) हो कर हुसैन बिन अली[अ०स०] की सीजदह सद साला (तेरह सौ साल) यादगार कायम की है। यह किताब इस सदी की यादगार के तौर पर हक इन्साफ, और सच्चाई की बारगाह में हुर्रियत मसावात (बराबरी) और ईसार की बारगाह मे, इन्सानी दिल दिमाग, और जमीर की बारगाह में इन्सानी जज्बात, एहसासात और शरीफाना खयालात की बारगाह मे, इन्सानी वकार, इज्जत और इफ्तेखार की बारगाह में, इन्सानी फिक्र, नजर और किरदार की बारगाह में और इन सबके जरिये से उनके परवरदिगार की बारगाह में पेश की जाती है

हुसैन इब्ने अली[अ०स०] के कारनाम–ए–जावेद की कद्रो कीमत का सही अन्दाजा तो अलफाज की महदूद दुनिया के बस से बाहर है लेकिन अगर इस पूरी किताब मे एक जुमला भी इस ईसार व कुर्बानी की तस्वीर का कोई रुख ऑखो के सामने ला सके तो यही इस खिदमत का पूरा माहसल (निचोड) होगा।

अली नकी अन–नकवी

पहला बाब

नसबी खुसूसियात, खानदान और उसके शानदार रिवायात।

निजामे अखलाक की तश्कील में आबाओ अजदाद (बाप दादा) का बड़ा हिस्सा होता है "तवारिसे सिफात" (अच्छाईयो की मीरास) और खानदानी एहसासात के लिहाज से भी और इसलिये भी कि बचपन से कान मे पडे हुए माजी (पास्ट) के तजकेरों से कवा–ए–इदराक (दिलो दिमाग) की इस तरह परवरिश होती है जिस तरह दूध से बच्चे की जिस्मानी परवरिश और जिस तरह दूध खून की शक्ल में तब्दील हो कर रगों में दौड़ता है यूँ ही बचपन के सुने हुए तजकेरे बिजली की रौ के साथ इन्सान के दिल व दिमाग की गहराईयो में उतरते और नफ्स के तहतुश शुऊरी तब्कों में रासिख (नफ्स की गहराईयों में उतर जाते हैं) हो जाते हैं। इसलिये मजहबी मोतकेदात (अकीदों) से कतए नजर (हटकर) करते हुए इन्सानी हैसियत से हुसैन[अ०स०] को समझने के लिये उनके आबाओ अजदाद (खानदान वालों) के कारनामों पर नजर डालना जरूरी है।

हजरत इब्राहीम खलीलुल्लाह की जात बडी हद तक बैनुल अकवामी (इन्टरनेशनल) हैसियत रखती है। यानी यहूद व नसारा और मुसलमान सब उनको मानते हैं और वह मजहबी तौर पर मुसलमानों के मूरिसे आला (वारिस पूर्वज) कहे जा सकते हैं क्योकि कुर्आने करीम की तसरीह (साफ तौर पर) के मुताबिक हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स०अ०] ने अपने को मिल्लते इब्राहीम का रहबर बताया और हजरत इब्राहीम[अ०स०] ही ने इस जमाअत का जो राहे हक में उनके पीछे आई सबसे पहले नाम 'मुस्लिम' रखा और इब्राहीम[अ०स०] की जबानी अपने परवरदिगार की बारगाह में यह दुआ भी मजकूर (लिखा) है कि खुदा वन्दा हमको 'मुस्लिम" करार दे और हमारी औलाद में से भी एक "उम्मते मुसलेमा' करार दे। इस तरह मुसलमानो की कौमी जिन्दगी और पैगम्बरे इस्लाम की बेसत (रिसालत का एलान) गोया दुआ–ए–इब्राहीम का नतीजा थी इसलिये हजरत इब्राहीम[अ०स०] के रवायात जिन्दगी अबनाये इस्लाम (आने वाली नसलों)

के लिए एक मौरूसी तर्का (खानदानी विरसे में) की हैसियत रखते हैं और फरजन्दाने इस्लाम के अनासिरे अखलाक की तशकील मे उनका बडा हिस्सा है।

हजरत इब्राहीम[अ०स०] के दो बेटे थे। इस्हाक[अ०स०] और इस्माईल[अ०स०]। हजरत इस्हाक[अ०स०] सिलसिल–ए बनी इस्राईल के और हजरत इस्माईल[अ०स०] पैगम्बरे इस्लाम हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स०अ०] के मूरिसे आला (जद) हैं। बाज मसालेह (मसलहतों) की बिना पर हजरत इब्राहीम[अ०स०] ने अपने फरजन्द इस्माईल[अ०स०] को शीरख्वारगी (कमसिनी) के आलम मे आपकी वालिद ए–गिरामी हाजेरा के साथ मक्के की सर जमीन पर पहुचा दिया जिस पर खान ए काबा वाके है खान ए काबा की तामीर का काम उन्हीं बाप बेटे इब्राहीम[अ०स०] और इस्माईल[अ०स०] ने अन्जाम दिया जो मजहबी तौर पर तमाम खल्के खुदा (लोगों) का महल्ले इज्तेमाअ् (जमा होने की जगह) करार पाया और यह आले इब्राहीम[अ०स०] की मरकजियत का एहसास आम्म–ए खलाएक (अवाम) के दिल मे पैदा होने का एक बडा जरिया बन गया।

इन दोनो बुजुर्गवारो की निसबत इस्लामी तारीख का यह वाकेया बडी अहमियत रखता है कि हजरत इब्राहीम मिन जानिब अल्लाह मामूर हुए (अल्लाह की तरफ से चुने गए) कि अपने फरजन्द हजरत इस्माईल[अ०स०] को अपने हाथ से जिबह करें और आपने बड़ी साबित कदमी और पुर जिगरी के साथ हुक्मे रब्बानी की तकमील को अमल के आखिरी दर्जे तक पहुचा दिया। अगरचे वक्त पर परवरदिगारे आलम की तरफ से बजाये इन्सान के जानवर की कुर्बानी के अमल में आने का इन्तेजाम हो गया मगर इस एलान के साथ कि आइन्दा इस का मुआवजा राहे खुदा में एक बडी कुर्बानी के साथ होना जरूरी है। "وفديناه بذبح عظيم"[1] इस वाकये को इस्लाम ने बडी अहमियत दी और ईदे कुर्बान की शक्ल में इसकी मुस्तकिल यादगार कायम कर दी

इस्माईल[अ०स०] के बारह फरजन्द थे। उन में से नाबत और कीदार की औलाद हिजाज (आजका सऊदी) मे आबाद हुई और बहुत फैली। कीदार की औलाद मे अदनान बहुत मशहूर हैं और पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] उन्हीं की औलाद में से थे।[2]

---

[1](सूरए साफ्फात आयत 107)

[2]अल–उमम वल–मुलूक तबरी/2, पेज/181–182

हजरत का नसब नामा आपकी जात से लेकर अदनान तक मुत्तफेका तौर से (शिया सुन्नी के यहाँ एक साथ) तवारीख (History) व सीरत में मौजूद है। इस तरह (1) अदनान (2) मअ्द (3) निजार (4) मुजर (5) इल्यास (6) मुदरका (7) खुजैमा (8) कनाना (9) नजर (10) मालिक (11) फहर (12) गालिब (13) लुई (14) काअ्ब (15) मुर्रा (16) किलाब (17) कुजैय (18) अब्दे मनाफ (19) हाशिम (20) अब्दुल मुत्तलिब (21) अब्दुल्लाह जो हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स०अ०] के वालिदे बुज़ुर्गवार थे।[1]

इससे मालूम होता है कि हजरत से अदनान तक इक्कीस पुश्तें हैं और अगर हर नस्ल का औसत तीस साल करार दिया जाये तो कुल पुश्तो की मुद्दत 630 बरस हुई। कुरैश का लकब उन इक्कीस आदमियों में से किसको मिला। इसमे इख्तेलाफ है बाज कहते हैं कि कुरैश का लकब सबसे पहले नजर बिन कनाना को मिला बाज के नजदीक फहर को और बाज के नजदीक कुसैय बिन कलाब को। वजहे तस्मिया (नाम रखने की वजह) में भी कई कौल हैं उनमें से एक यह है कि वह तकररूश से माखुज (लिया गया) है, तिजारत और कस्बे मआश (रोजी कमाना) के माना में, चूँकि यह लोग अपनी मेहनत व मुशक्कत और कुव्वते बाजू की कमाई को मेयारे इज्जत समझते थे और अमली तौर पर उस के पाबन्द थे इसलिये कुरैश कहलाये और एक कौल यह है कि वह तकररूश ब–माना इज्तेमा से माखुज (लिया गया) है। चूँकि उन लोगों ने मुतफर्रिक (अलग–अलग) होने के बाद इज्तेमाई शक्ल इख्तियार की इसलिये कुरैश कहे जाने लगे।[2]

चूँकि कुसैय के वक्त तक नस्ले अदनान के लोग मक्के के पहाडो और वादियों में मुन्तशिर थे, कुसैय ने इन सबको जमा करके काब के आस पास मकानों मे आबाद किया इसी लिये खुद कुसैय को मुजम्मेअ् (जमा करने वाले) के लकब से याद किया जाने लगा जैसा कि अरब के शायर ने कहा है

ابوکم قصی کان یدعی مجمعاً
بہ جمع اللہ القبائل من فہر

---

[1] सीरते इब्ने हिशाम जि 1 त मिस्र पेज 2 तबकाते इब्ने सअद त लीदन जि 1 पेज 27–28
[2] सीरते इब्ने हिशाम जि/1, पेज/60–61

(यानी) तुम्हारे मूरिसे आला कुसैय वह हैं कि जो 'मुजम्मेअ्' कहलाते थे। उन्हीं के जरिये से अल्लाह ने कबील–ए–फहर की मुख्तलिफ शाखो को एक जगह जमा किया।[1]

नाबत बिन इस्माईल[अ०स०] के बाद खान–ए–काबा की तौलियत (मुतवल्ली) जुरहमी खानदान की तरफ जो उनके ननिहाल वाले थे मुन्तकिल हो गई थी और इस तरह यह लोग दुनियवी और मजहबी इक्तेदार दोनो के मालिक बने हुए थे। अरसे तक काबिज रहने के बाद उन्होंने काबा के अमवाल (पैसों) में तगल्लुब (इख्तियार) व तसर्रुफ और हज को आने वाले परदेसियों पर जुल्मो सितम और हरमे मक्का की हुरमतों को बर्बाद करना शुरू कर दिया जिसके नतीजे में बनी खुजाआ ने यमन से निकल कर उन पर हमला कर दिया और उन्हें मक्के से निकाल कर खुद काबिज हो गए यह खानदान तकरीबन दो सौ साल तक काबे का मालिक बना रहा। कुसैय ने उन्हीं में शादी की और जब उनका असरो रसूख (दबदबा) हिजाज में बढ गया तो उन्होंने नजर बिन कनाना की तमाम औलाद को जमा करके उन्हें खान–ए–काबा की हिमायत और तौलियत की जिम्मेदारी याद दिलाई और आखिर मुत्तफेका (मिली जुली) ताकत के साथ खुजाईयों को शिकस्त दे कर मक्के पर खुद काबिज हुए। उन्होंने मक्क–ए मुअज्जेमा के मकानात की अज सरे नौ (नए सिरे से) तामीर की और दारुन नदवा (मशवरे की जगह) के नाम से एक इमारत तय्यार कराई जिसमे जमहूर (अवाम) के काम अन्जाम दिये जाते थे। उनके लिये मआशिरत के कवानीन मुनजबित किये (आपसी लेनदेन के कानून नाफिज किए) और खिराज की वसूलियाबी और हाजियो के खुर्दो नोश (खाने पीने) का भी इन्तजाम कराया।[2] उन्होंने शराब खोरी की मजम्मत और उसकी मुजिरतों (नुक्सान) का एलान भी किया।[3]

कुसैय के फरजन्द मे अब्दे मनाफ औसाफ (अच्छे गुणों) व कमालात मे अपने बुजुर्गों के हकीकी जानशीन थ इसलिये अपने बाप की जिन्दगी ही मे उन्होंने मुल्के अरब में शोहरत व इम्तेयाज का दर्जा हासिल कर लिया।[4]

---

[1] तबरी जि 2 पेज 182
[2] सीरते इब्ने हिशाम जि/1, पेज/71.79
[3] अल अमाली लिस्सुदूक पेज/4
[4] सीरते इब्ने हिशाम जि/1, पेज/81

अब्दे मनाफ के फरजन्दों में हाशिम जिनका अस्ल नाम अम्र था निहायत बाअसर और मुमताज थे। काबे की मुअज्जि (मोहतरम) खिदमतें हाजियों की सैराबी और जियाफत (मेहमान दारी) उनको सिपुर्द की गई जो उन्होने बहुत काबलियत से अन्जाम दीं। उन्होने सलतनते रोम से खतो किताबत करके कुछ खास हुकूक अरब तज्जार (ताजिर) के वास्ते हासिल किये थे।[1] 'हाशिम'' उनका लकब इस वजह से हुआ कि उन्हों ने सबसे पहले अहले मक्का को रोटियों के टुकड़े शोरबे मे भिगो कर खिलाये।[2] (अरबी में हशम चूरा करने को कहते हैं)

हाशिम की वफात के बाद उनके भाई मुत्तलिब जानशीन हुए इसलिये कि हाशिम के फरजन्द शैबा उस वक्त निहायत कमसिन थे। जब मुत्तलिब की वफात हुई तो उनकी जगह उनके भतीजे शैबा ने हासिल की जो अब्दुल मुत्तलिब के नाम से मशहूर हुए यह शरफ, अजमत और शोहरत में अपने बुजुर्गों पर भी फौकियत ले गए।[3] और ''सय्यदुल बतहा'' के खिताब से मशहूर हुए जो उनकी औलाद में बाकी रह गया। चुनानचे वह आज तक 'सादात' कहे जाते हैं। अब्दुल मुत्तलिब का तवक्कुल (भरोसा) और एतेमाद खुदा पर उस वक्त पूरे तौर पर जाहिर हुआ जब अबरहा ने यमन से बढकर काबे को ढाने के इरादे से मक्का पर चढाई की। मक्के वालों के पास कोई ऐसी फौजी ताकत न थी जिससे वह गनीम का मुकाबला करते मगर अब्दुल मुत्तलिब खुदा वन्दी इमदाद पर भरोसा रखते थे आखिर गैबी ताकत ही ने असहाबे फील (हाथियों वाला लश्कर) को तबाह कर दिया।[4] अब्दुल मुत्तलिब के दस बेटों में से दो बेटे अब्दुल्लाह और अबू तालिब थे।

अब्दुल्लाह बिन अब्दुल मुत्तलिब की कुर्बानी का वाकेया भी कुतुबे तवारीख मे मजकूर (बयान) है और मशहूर है कि अब्दुल मुत्तलिब अपने फरजन्द अब्दुल्लाह की कुर्बानी पर तय्यार थे मगर उनके ननिहाल वालो के इसरार पर कुरआ डाला गया और सौ ऊँटो की कुर्बानी के बदले में अब्दुल्लाह की जान बची।[5]

---

[1] तबरी जि 1 पेज 190 जि 2 पेज 180

[2] सीरते इब्ने हिशाम जि/1. पेज/185. तबरी जि/2. पेज/179

[3] सीरते इब्ने हिशाम जि/1. पेज/88

[4] रसूले अकरम तथा लखनऊ पेज 283 सीरते इब्ने हिशाम जि 1 पेज 32 34 तबरी जि 2 पेज/172 174

[5] सीरते इब्ने हिशाम जि/1. पेज/94.97

चूँकि अब्दुल्लाह का इन्तेकाल बाप के सामने हो गया। इसलिये अब्दुल मुत्तलिब के तमाम इम्तेयाजात (खुसूसियसात) व इख्तियारात अबु तालिब को हासिल हुए। "शैखुल बतहा" और सय्यदुल कुरैश के खिताबों से मशहूर हुए। और उन अमानतो के साथ साथ जो इब्राहीम व इस्माईल(अ०स०) की मतरूका (छोडी) थीं एक सबसे बडी अमानत जो उनकी हिफाजत में आई वह अब्दुल्लाह के यतीम फरजन्द मोहम्मद की जात थी

हजरत मोहम्मद मुस्तफा(स०अ०) की उम्र नौजवानी की मन्जिल में थी कि आपकी रास्तबाजी (सच्चाई) और अमानत दारी को तमाम अरब ने तस्लीम करते हुए आपको 'अमीन' का लकब दे दिया[1] अपनी अमानते आपके पास रखवाना शुरू कर दी अहम मुआमेलात (लेन देन) में आपके तसफिये (फैसले) को काबिले कुबूल समझने लगे। जब आपकी उम्र बीस साल की थी तो कुरैश मे "हलफुल फुजूल" (एक दूसरे के जानो माल की सलामती का मीटिंग में फैसला) का अहद नामा हुआ।[2] जो बेनजीर शरीफाना उसूल पर मबनी था और उसकी तहरीक का सेहरा बनी हाशिम ही के सर रहा, इसलिये कि जुबैर बिन अब्दुल मुत्तलिब उसके दाई (बानी) थे।

वाकया यह था कि अब्दुल मुत्तलिब के इन्तेकाल के बाद अरब में मुतजकुल अनानी और बेआईनी (मनमानी और बगैर तरीके) का दौर दौरा हो गया रिश्तेदारियों के लिहाज से आपस में किश्तो खून (खून खराबा) तो नहीं होने पाया मगर अजनबी लोगों के साथ इन्साफ नहीं होता था। चुनानचे कबील–ए–जुबैर के एक यमनी शख्स ने जिससे कि आस बिन वायल सहमी ने कोई बेश कीमत चीज खरीद कर कीमत अदा नहीं की थी तमाम आले फहर को मुखातिब करके मुअस्सिर अन्दाज मे इस जुल्मो सितम का शिकवा भी किया।

उन्हीं वाकेयात से मुतअस्सिर हो कर बनी हाशिम, जोहरा और असद बिन अब्दुल उजा के कबीले अब्दुल्लाह बिन जदआन के मकान मे जमा हुए और मुत्तफका तौर पर अहद किया कि हम हमेशा मजलूम का साथ देगे और उस वक्त तक चैन नहीं लेगे जब तक उसका हक अदा न हो जाये। इस मुआहदे का नाम 'हलफुल फुजूल" (कसम) रखा गया जिसमे फजल, फज्जाल मुफजिल और फुजैल शामिल थे और इसलिये उसका नाम फुजूल करार पागया

---

[1] तबकात इब्ने सअद जि/1, पेज/78

[2] इब्ने सअद जि/1 पेज/82

था। हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स0अ0] इस मुआहदे में शरीक थे और हमेशा इस पर नाज़ों रहे बल्कि बेअसत के बाद जबकि अरब के तमाम कदीम मुआहदात (एग्रीमेन्ट) और मुखसिमात (दुश्मनियाँ) कल अदम (मन्सूख) करार दे लिये गए थे आप अपने को इस मुआहदे का पाबन्द समझते थे और फरमाते थे कि आज भी अगर कोई मुझे इस मुआहदे की बिना पर आवाज दे तो मैं उसकी सदा पर लब्बैक कहूँगा।[1]

अगर आपने अरब की तारीख पढ़ी है तो आपको मालूम होगा कि यह मुआहेदा इस कौम की आम जहनियत के बिल्कुल खिलाफ था वहाँ तो यह था कि हमको अपने कबीले वाले की मदद करना चाहिए ख्वाह वह जालिम हो या मजलूम। इस कबायली तअस्सुब का नतीजा यह था कि एक शख्स की जाती जंग कबायली जंग बन जाती थी जो चालीस चालीस बरस जारी रहती थी। इस गलत जहनियत की सबसे पहले मुखालिफत करने वाले बनी हाशिम थे जो दुनिया को हक व इन्साफ की कद्रो कीमत का अन्दाजा करा रहे थे और बता रहे थे कि इसके मुकाबले मे कौमियत या बरादरी कोई चीज नहीं है

जब हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स0अ0] की उम्र तीस बरस की थी अबू तालिब के यहाँ अली[अ0स0] की विलादत हुई [2]और अभी अली बिन अबी तालिब चन्द ही साल के थे कि मक्के में कहत (सूखा) पड़ा और अबू तालिब एक्तेसादी (माली) तकालीफ में मुबतिला हो गए। आपके बार को कम करने के लिए मोहम्मदे मुस्तफा[स0अ0] ने अली की परवरिश खुद से मुतअल्लिक कर ली इस तरह अली मोहम्मद के आगोशे तरबियत में आ गए।[3]

यहाँ एक मर्तबा इस पर नजर डाल लिजिये कि इस खानदान की जमीने शरफ किस आसमान तक पहुँच चुकी थी और उसके कदीम रिवायात किस दर्जा शानदार हैं।

1. काबा जो तमाम अरब के मजहबी इज्तेमा का मरकज है वह तामीर किया हुआ है उनके मूरिसे आला हजरत इब्राहीम[अ0स0] का

2. उनके दादा हजरत इस्माईल[अ0स0] अल्लाह की बारगाह में अपनी जान का नजराना पेश करके 'जबीहुल्लाह' (जिबहे खुदा) कहलाये।

---

[1] इब्ने हिशाम जि/1, पेज/84, इब्ने सअ्द जि/1, पेज/82

[2] आप मक्का-ए- मुअज्जमा के अन्दर 13 रजब सन 30 आमुल फील को काबा पर हाथियों के हमले से तीस बरस के बाद पैदा हुए) मुरव्वेजुज जहब मसऊदी, मुस्तदरक हाकिम, इरशाद शैख मुफीद

[3] इब्ने हिशाम जि/1, पेज/156

फिर अब्दुल मुत्तलिब और उनके फरजन्द अब्दुल्लाह ने इसी सबक को दोहरा कर साबित कर दिया कि यह कुर्बानी का जज्बा इस खानदान का विरसा है जो दुनिया को बराबर याद रहा। चुनाँनचे इन दोनों तय शुदा कुर्बानियों की बिना पर हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स0अ0] को "इब्नुज जबीहैन" (दो जबीहों के बेटे) के लकब से याद किया गया।[1]

3 तमाम कबायल मुजिर की शीराजा बन्दी का फख़ उन ही को हासिल है।

4 खान ए काबा के मुहाफिज और मौसमे हज के मुन्तजिम होने की हैसियत से उन्हें तमाम अरब की मरकजियत हासिल है

5 तमाम अन्दरूनी और बैरूनी मुआमिलात मे अरब कौम की कयादत और नुमाइन्दगी उनका हिस्सा है।

6 वह गरीबो के दस्तगीर और कहत साली (सूखा पडने) वगैरह के सख्त अवकात (वक्तों) मे मिसकीनो की खबरगीरी करने वाले हैं

7 वह इस्म (नाम) और मुसम्मा (नाम आवर) दोनो हैसियतों से सय्यद (सरदार) माने जाते हैं।

8 वह एक ही वक्त मे मैदाने जग के शहसवार और आलमे रूहानी के राजदार हैं जिसका गवाह अस्हाबे फील के मुकाबले में अब्दुल मुत्तलिब का तरीक–ए–पैकार है।

9 उन्होंने मजलूमों की हिमायत और हक की तरफदारी का बेडा उठाया और इस बारे में तमाम कुरैश की रहनुमाई की थी।

यह हैं वह नुमायाँ खुसूसियात जो तारीखी असनाद (सनदों) क साथ इस खानदान के लिये अभी तक साबित थे मगर अब इसी मशरिक से वह आफताब चमकता है जिसकी शुआऐ दुनिया ए इन्सानियत को सुबहे कयामत तक रौशन रखेंगी।

सातवीं सदी ईसवी के शुरू होने पर जबकि दुनिया तारीकी के अजीम दौर से गुजर रही थी जजीरा नुमाये अरब से यह आफताब ताले (जाहिर) हुआ जिसकी इब्तेदाई किरनें अगरचे हिजाज की सर जमीन मक्का से जाहिर हुई थीं मगर रफ्ता रफ्ता उसकी रौशनी शर्क व गर्ब (Asia and Eurup) में

---

[1] तबरी जि. १ पेज. १३५ शरीयते इस्लामिया में यह तरीक–ए–कुर्बानी कि अपने हाथ से अल्लाह की रिजा के लिये अपना या किसी आन में मुकद्दसतक इन्सान को खून बहाया जाये मन्सूख रद कर दिया गया मगर राह खुदा में जब जरूरत हो तो दुश्मनों से जेहाद करके अपनी जान कुर्बान करने का उसूल कायम रहा और आले रसूल[स0] ने अमली तौर पर इसी की मिसालें पेश कीं।

फैल गई और दुनिया को रौशन कर दिया। यह आलमगीर मजहब इस्लाम था और उस खुदा वन्दी पैगाम के पहुचाने के लिए मोहम्मदे मुस्तफा[स०अ०] मुन्तखब हुए जिनके जरिये से कायनात को एक खुदा–ए–तवाना के सामने सर झुकाने की तालीम दी गई और गैरूल्लाह की परस्तिश (पूजा) को मिटाने का एलान किया गया। ख्वाह वह सोने चाँदी और पत्थर के बुत हो या गोश्त पोस्त से बना हुआ इन्सान जो उलूही इक्तेदार के सामने अपनी सितवत (शाही) व हैबत का सिक्का जमाना चाहता हो और खल्के खुदा को अपने सामने सरनिगूँ होने पर मजबूर करे।

उस वक्त हजरत अली इब्ने अबी तालिब[अ०स०] की उम्र दस बरस की थी और चूँकि अली[अ०स०] पहले रसूल[स०अ०] की आगोशे तरबियत में थे [1] इसलिये यह कहना बिल्कुल दुरूस्त है कि अली[अ०स०] और इस्लाम मे वही वाबस्तगी पैदा हुई जो एक आगोश में रहने वाले दो बच्चो में आपस में होना चाहिए

चन्द साल तक राजदारी के साथ फर्जे तबलीग को अदा किया गया। [2] उसके बाद हुक्म आ गया وانذر عشيرتك الاقربين (यानी अपने करीबी रिश्तेदारों को तबलीग कीजिये।)[3]हजरत ने इस हुक्म की तामील मे दावत का इन्तजाम कर दिया और तमाम औलादे अब्दुल मुत्तलिब को जमा करके अपनी रिसालत का एलान किया और तौहीदे इलाही का पैगाम पहुचाया। फिर फरमाया कि तुम में से कौन शख्स इस दीन की इशाअत में मेरा दस्ता बाजू बनने के लिये तय्यार है? इस वादे पर कि वही मेरा भाई मेरा वसी और मेरा जानशीन करार पायेगा। मजमा तमाम खामोश था हजरत अली[अ०स०] अगरचे सबसे ज्यादा कमसिन थे मगर आप खडे हो गए और कहा कि मैं आपका इस मुहिम में हर तरह से मददगार रहूँगा, आप ने हजरत अली[अ०स०] के कांधे पर हाथ रखा और फरमाया बस यह मेरा भाई, मेरा वसी और मेरा जानशीन है, तुम सबको इसकी इताअत लाजिम है।[4]

अब एलानिया बुत परस्ती की मजम्मत होने लगी जिससे कुरैश आपकी मुखालेफत पर कमर बस्ता और ईजा रसानी (तकलीफ पहुचाना) पर आमादा हो गए मगर आपके चचा जनाबे अबू तालिब की शखसियत आपके सामने

---

[1]तबरी जि/2, पेज/312

[2]तबकात इब्ने सअद जि/1, पेज/132 तबरी जि/2, पेज/216–218, इरशाद पेज/16

[3]कुर्आन सुरए सुरा आयत/214

[4]तबरी जि 2 पेज 217

सीना सिपर थी जिसकी वजह से उन लोगों को कुछ बन न पडता था। आखिर एकाबिरे कुरैश (कुरैश की सरदारों) का एक वफ्द अबू तालिब के पास आया। उसमें अतबा, शैबा, अबू सुफियान आस बिन हिशाम, अबू जेहल वलीद बिन मुगीरा और आस बिन वाएल वगैरह शरीक थे। उन लोगो ने अबू तालिब से कहा कि तुम्हारा भतीजा हमारे माबूदों (खुदाओं) को बुरा कहता है। हमारे मजहब की मजम्मत करता है। हमको अहमक ठहराता है और हमारे अबाओ अजदाद (पूवर्जों) को गुमराह बताता है इसलिये या तो तुम उसे इन बातों से रोक दो या उसे हमारे सिपुर्द कर दो। पहली बार अबू तालिब ने नर्मी से उनको टाल दिया मगर कुछ अरसे के बाद जब यह वफ्द (Delegation) फिर आया तो उसने निहायत सख्ती से कहा कि अब हम इस सूरते हाल को बर्दाश्त नहीं कर सकते। या तो तुम उन्हें रोको या हमारे तुम्हारे दरमियान जंग हो कि हम दोनों में से एक का फैसला हो जाये। अबू तालिब ने मुनासिब समझा कि अब रसूल अल्लाह[स0अ0] से इसका तजकेरा करें। हजरत ने पूरा वाकेया सुना तो फरमाया "खुदा की कसम अगर यह लोग मेरे एक हाथ में सूरज और दूसरे में चाँद लाकर दे दें तब भी मैं अपने फर्ज से बाज न आऊगा। खुदा इस काम को पूरा करेगा या मैं खुद इस पर निसार हो जाऊँगा।' और यह कहते कहते आँखो में आँसू आ गए। यह देखना था कि अबू तालिब का दिल हिल गया उन्होंने कहा कि 'अच्छा तुम अपने फर्ज को अन्जाम देते रहो मैं आखिर दम तक तुम्हारा साथ दूँगा।[1]

चुनाँनचे अबू तालिब ने हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स0अ0] की हिफाजत में कोई दकीका उठा न रखा और जब तक जिन्दा रहे रसूल[स0अ0] के सीना सिपर रहे।

मगर हजरत अबू तालिब और खदीज–ए कबुरा की वफात के बाद अहले मक्का की ईजा रसानी हजरत रसूल[स0अ0] के खिलाफ बहुत बढ़ गई और आपने उनके राहे रास्त पर आने से ब‑ जाहिर असबाब ना उम्मीद हो जाने की वजह से यह तय कर लिया कि अब मक्क‑ ए मुज्जेमा को जो आपका आबाई वतन था तर्क फरमा दें। चुनानचे रफ्ता रफ्ता अपने मुत्तबईन (इताअत करने वाले) को मदीने की तरफ जहाँ के कुछ लोगो ने आपकी पैरवी कुबूल कर ली थी रवाना फरमाने लगे। यह देख कर मक्के वाले सब आपकी जान लेने के दरपै हो गए और एका हुआ कि रात के वक्त आपके घर को घेर कर आपको कत्ल कर डालें। आप अपने चचाजाद भाई अली बिन अबी तालिब[अ0स0] को यह

---

[1]सीरते इब्ने हिशाम जि/1, पेज/163–164, तबरी जि/2, पेज/218–220

हिदायत फरमा कर कि वह आपके बिस्तर पर आपकी चादर ओढ़कर सो रहे खुद मदीनेकी तरफ रवाना हो गए। हजरत अली[अ०स०] ने दुश्मनो की खिंची हुई तलवारों के अन्दर रसूल[स०अ०] के बिस्तर पर आपकी चादर ओढ़कर आराम किया।[1]

फिर मदीना पहुचने के बाद जब मुखालेफीने इस्लाम ने फौजी ताकतो के साथ मुसलमानों पर चढाई की और बद्र व ओहद और खन्दक वगैरह की लड़ाईयाँ हुई तो उन लड़ाईयों मे हक व सदाकत की रूहानी ताकत के साथ हजरत अली ए मुरतजा[अ०स०] की तलवार हर मौके पर इस्लाम की फतह मन्दी का सबब बनती रही।

हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स०अ०] की एक बेटी थी फातिमा जहरा जिनकी उनके बलन्द औसाफ की बिना पर आप इतनी इज्जत करते थे कि जब वह आपके पास आती थीं तो आप ताजीम के लिये खडे हो जाते थे।[2] और ब कसरत हदीसे आपने उनकी फजीलत के बारे मे इरशाद कीं जिन मे एक यह थी कि वह सरदारे जेनाने जन्नत और सरदारे जनाने अहले ईमान हैं।[3] और फरमाया कि فاطمة بضعة مني यानी फातिमा मेरा एक टुकड़ा है।[4]

जाहिर है कि ऐसी बेटी के लिए रसूल ऐसे ही साहिबे औसाफ मौजू तरीन कुफ़ु (बराबरी) का मुन्तखब फरमा सकते थे। इसी का नतीजा था कि बहुत से पैगाम और निसबतें आई मगर सब मुस्तरद कर दी गई और सिर्फ अली[अ०स०] ही की एक जात जिसके लिए रसूल[स०अ०] का कौल था कि मैं और अली एक ही नूर से हैं।[5] इस रिश्ते के लिये मौजू समझी गई और रसूले खुदा[स०अ०] ने फरमाया कि यह मेरा ही नहीं बल्कि अल्लाह का इन्तेखाब है।[6]

उन्हीं दोनों मुकद्दस और बुजुर्ग मर्तबा माँ बाप से दो फरजन्द पैदा हुए। एक हसन[अ०स०] और दूसरे हुसैन[अ०स०] अब क्या हुसैन[अ०स०] भुला सकते थे अपने खानदानी खुसूसियात और कदीम रवायात को?

ब–कौल मौलाना डाक्टर सय्यद मुजतबा हसन साहब कामून पूरी

---

[1] तबकाते इब्ने सअद जि 1 पेज 153 इब्ने हिशाम जि 1 पेज 289 290 तबरी जि 1 पेज 244

[2] इस्तीआब जि/2 पेज/272, आलामुल वरा पेज/856

[3] सही बुखारी जि/2 पेज/174–185–189 सही मुस्लिम जि/2 पेज/290

[4] बुखारी जि/2 पेज/185,189

[5] फिरदौसुल अखबार दैलमी व तजकेरा सिब्ते–ए–इब्ने जोजी वगैरह

[6] सवाएके मुहर्रका पेज/84,97

"हुसैन जिस नस्ल की यादगार थे वह सदियों से कुर्बानी व फिदाकारी की एक मुसलसल तारीख तय्यार कर रही थी।' हुसैन[अ0स0] ने देखा नहीं मगर कानों से सुनते तो रहे कि हमारे मूरिसे आला इब्राहीम[अ0स0] खुदा की रजा के लिए बेटे के जिबह पर तय्यार हो गए हमारे परदादा अब्दुल मुत्तलिब ने अपने बेटे अब्दुल्लाह को कुर्बानगाहे उबूदियत में पेश किया। हमारे जद्दे बुजुर्गवार हाशिम ने अपने माल व दौलत और असर को हमेशा खल्के खुदा की खिदमत मे सर्फ किया हमारे खानदान ने मजलूमों की इमदाद और जालिमों से मुकाबले का हलफ उठाया है इसलिये अगर खल्के खुदा किसी जालिम के हाथ से परेशान हो तो हमारा फर्ज है कि हम मजलूमो की दस्तगीरी के लिए आगे बढ़ जायें।[1]

हुसैन[अ0स0] को मालूम हुआ कि सच्चाई की खातिर पत्थर खाये मुसीबतें उठाईं मेरे नाना रसूल[स0अ0] ने। और पैगम्बरे इस्लाम की हिफाजत के लिये सीना सिपर रहे मेरे दादा अबू तालिब[अ0स0]। और जब इस्लाम की हिफजत का मसअला दर पेश था तो सबसे पहले अहदे वफादारी करने वाले और फिर तलवारों के हिसार मे बिस्तरे रसूल[स0अ0] पर लेटने वाले और फिर हर सख्त मौके पर सच्चाई के लिये जेहाद करने वाले मेरे बाप अली बिन अबी तालिब[अ0स0] थे

यह आम कायदा है कि बच्चे जब अपने बुजुर्गों के हालात सुनते हैं तो उनमें बचपन ही से वलवला पैदा होता है कि हमे भी कोई मौका ऐसे कारनामे पेश करने का मिल जाये इसलिये आम फितरत के तकाजों और जाहरी असबाब के लिहाज से यह कहना बिल्कुल सही है कि इमाम हुसैन[अ0स0] के लिये अलावा मन्सबी जिम्मेदारी के खानदानी रिवायात और बलन्द फितरत का तकाजा यही था कि बचपन से मुन्तजिर और मुश्ताक रहें (शौक) कि सच्चाई की खिदमत गरीबो की दस्तगीरी ओर मजलूमो से हमदर्दी का कोई मौका पेश

[1] हलफुल फ़ुज़ूल को इमाम हुसैन[अ0स0] अपने पेशे नज़र रखते थे इसका सुबूत यह है कि एक मौके पर जब वलीद बिन अतबा हाकिमे मदीना ने आपके साथ जुल्म व सितम से काम लिया तो आपने हल्फुल फ़ुज़ूल का हवाला दिया था और उसकी पाबन्दी की तरफ सबको तवज्जो दिलाई थी जिसके नतीजे मे अब्दुल्लाह बिन जुबैर मसूर बिन मखरमा बिन नौफिल जहरी और अब्दुर रहमान बिन उसमान बिन अबैदुल्लाह तैमी मुतअद्दिद अशखास (बहुत से लोग) ने यह एलान किया कि अगर हुसैन बिन अली[अ0स0] इस मुआहदे (Agreement) की बिना पर अपने हक को तलब करने के लिए खड़े हो तो हम साथ होंगे। आखिर वलीद ने सरे तस्लीम खम कर दिया और हज़रत के मुतालबे को मन्जूर किया सीरते इब्ने हिशाम जि/1, पेज/84

आये और आप भी हक की हिमायत में अपने फरीजे को अन्जाम देकर अपनी खानदानी रिवायात को जिन्दा और बरकरार रखें।

शजर–ए–नसब आले अदनान

شجرۂ نسب آلِ عدنان

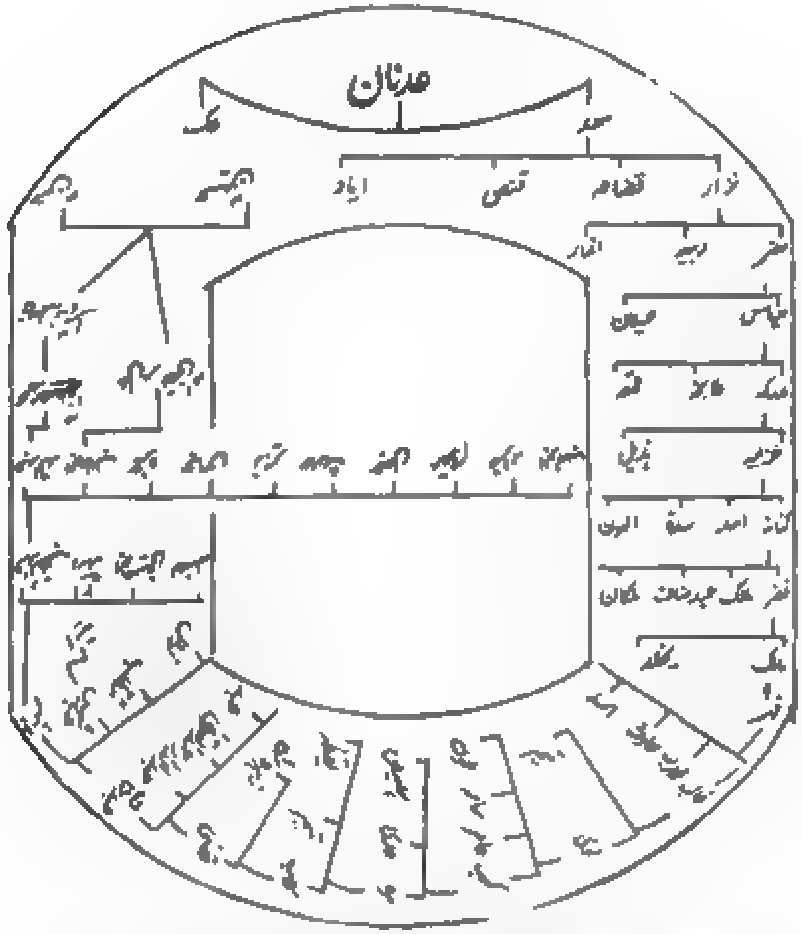

۱ ماخوذ از سیرۃ النبی لشیخ ابی محمد عبد الملک بن ہشام ج ۱ مطبوعہ مصر۔ ۲ حضرت محمد مصطفیٰ کی والدہ آمنہ بنت وہب بن عبد مناف بن زہرہ بن قصی (طبقات ابن سعد طبع لیدن ج ۱ ص ۳۔ ابن ہشام ج ۱ ص ۹۔ اصول کافی و تحفہ ص ۲۹)۔

۳ حضرت علی مرتضیٰ کی والدہ فاطمہ بنت اسد بن ہاشم تھیں۔ اسی لیے آپ کے خصوصیات میں سے ہے "اول ہاشمی ولد ہاشم مرتین" پہلا شخص ہیں جو ددھیال اور ننھیال دونوں طرف سے ہاشمی النسل تھے (اصول کافی و تحفہ ص ۔۔ و ارشاد مفید و ایمان ص ۔۔)

दूसरा बाब

बनी हाशिम और बनी उमय्या

बनी हाशिम के बिल मुकाबिल तारीख में जो नाम नजर आता है वह "बनी उमय्या" है। इस कबीले की बनी हाशिम से रिकाबत (दोस्ती) और मुखालिफत (लड़ाई) के लिये यह हिकायत बयान की गई है कि उमय्या का बाप अब्दुश शम्स और बनी हाशिम के मूरिसे आला हजरत हाशिम यह दोनों माँ के पेट से जुड़वाँ पैदा हुए थे इस तरह कि उगली एक दूसर की पेशानी से चस्पाँ (जुडी) थी। मजबूरन उनको काट कर अलग अलग किया गया जिससे खून बहने लगा उस वक्त लोगों ने उसे बदशगूनी मान कर कहा कि उनमें आपस में खूरेज़ियाँ होती रहेंगी।[1] यह हिकायत दुरूस्त हो या न हो लेकिन उससे यह तो अन्दाजा होता है कि उन दोनों खानदानों की जग ने कितनी जड पकड ली थी कि लोग उसको एक नागुजीर (न टलने वाला) और कुदरती चीज समझने लगे थे। मगर हम जहाँ तक तारीख के वाकेयात की छान बीन करते है हमे खुद अब्दुश शम्स और हाशिम की जग या मुनाजअत (आपसी झगडे) की कोई मिसाल नहीं मिलती। बेशक अब्दुश शम्स के बाद उमय्या की तरफ से मुखासिमत (दुश्मनी) की इब्तेदा नजर आती है जबकि वह हजरत हाशिम से मुकाबले की कोशिश मे नाकाम हुआ और उस वक्त से उसने एक शिकस्त खुर्दा फरीक (हारा हुआ गिरोह) की तरह इन्तकामी तसादुम (मुडभेड) का सिलसिला जारी रखा वाकेया यह था कि मक्का में कहत पड़ा जिसमें कुरैश बहुत तबाह हाल हो गए। हजरत हाशिम शाम की जानिब गए और वहाँ उन्होंने बहुत ज्यादा मिकदार मे आटा फराहम करके उसकी रोटियाँ पकवाईं और उन्हें ऊँटो पर बार करके मक्का लाये। उन रोटियो को उन्होने चूरा कराया और उन ऊँटों को नहर (कुर्बान) करके शोरबा तय्यार कराया और बड़ी

---

[1] तबरी, जि/2, पेज/180

बड़ी देगों में उंडलवा कर वह तमाम रोटियों का चूरा उन देगों में डलवा दिया। इस खाने को अरब मे "सरीद" (रोटी के टुकड़े सालन मे भीगे हुए) कहते थे। इस तरह उन्होंने तमाम मक्के के लोगो को खाने से सेर किया। इत्तेफाक से उसके बाद अब्र आया पानी बरसा और कहत साली दूर हो गई हर शख्स कहने लगा कि अब की पहला बाराने रहमत का छींटा वह था जो हाशिम के जरिये से बरसा। "हाशिम" के माना हैं रोटियो का चूरा करने वाला। शायरों ने इस वाकये को ख़ास अलफाज में नज्म किया। एक शायर ने कहा

عمرو الذی هشم الثرید لقومه

قوم بمکة مسنتین عجاف

तरजुमा "अम्र (यह हाशिम का अस्ली नाम है) जिन्हो ने अपनी कौम के लिये रोटी के टुकड़े करके उन्हें खाना खिलाया, वह कौम जो मक्के मे कहत से भूखी और तबाह हाल हो रही थी।"[1]

उमय्या दौलत मन्द आदमी था। उसने जो देखा कि हजरत हाशिम ने यह किया तो उसे हसद दामनगीर हुआ और ख्वाह मख्वाह ब गरजे मुकाबला उसने भी हाशिम की नक्ल उतारने की कोशिश की मगर वह कामयाब नहीं हुआ और यह अम्र (हुक्म) कुरैश में उसकी रूसवाई और बदनामी का बाइस बन गया। इस बारे मे हाशिम का कोई कुसूर नहीं था मगर लोगों के तानों तशनियों से खिसयाने होकर वह हाशिम को बुरा भला कहने लगा और उसने हाशिम को "मुनाफिरत" (नफरत) की दावत दी यह एक तरह का मुकाबला अरबो में रायज था कि दो शख्स अपने अपने कारनामों को पेश करके किसी सालिस (तीसरे) को हकम (जज) बनाते थे कि वह फैसला कर दे कि कौन उनमे ज्यादा साहिबे फख्र व लाएके अजमत है इस सालिसी (तीसरे फरीक) के लिये ज्यादा तर काहन (जादूगर) मुन्तखब किये जाते थे जो इल्म कयाफा (अच्छे बुरो की पहचान करने वाला और सितारो का इल्म करने वाला) और नुजूम में बड़े माहिर हाते थे। हजरत हाशिम ने अपनी उम्र की बुजुर्गी और अपने रुतबे की बलन्दी के लिहाज से उमय्या के साथ मुकाबला से इन्कार किया मगर कुरैश के आम अफराद ने हजरत हाशिम को बजबूर किया। आखिर आप भी आमादा हो गए और कहा कि मैं इस शर्त पर मुकाबला करता हूँ कि शिकस्त खुर्दा फरीक (हारा हुआ गिरोह) अपने मुकाबिल को 50 ऊँट सियाह

---

[1] सीरते इब्ने हिशाम जि/1, पेज/85

आँखो वाले सिपुर्द करे जो सरजमीने मक्का मे नहेर (जिबह) किये जायें और दस बरस के लिये वह मक्का से जिला वतन (देश से निकालना) हो जाये। उमय्या इस शर्त पर रजामन्द हो गया। चुनानचे कबील–ए खुजाआ के काहन को हकम (जज) मुकर्रर किया गया। उसने फैसला हाशिम के हक में और उमय्या के खिलाफ दिया हजरत हाशिम ने करार दाद के मुताबिक 50 ऊँट हासिल किये और उन्हे नहेर कराके फिर तमाम अहले मक्का की दावत कर दी और उमय्या को दस बरस के लिये मक्का से जिला वतन होना पड़ा और वह इस मुद्दत तक शाम में कयाम पजीर रहा। यह पहली अदावत थी[1] जो उमय्या की औलाद मे बनी हाशिम के मुकाबले मे नस्ल दर नस्ल बरकरार रही। उसके बाद हाशिम के फरजन्द जनाबे अब्दुल मुत्तलिब और उमय्या के फरजन्द हर्ब में मुकाबला हुआ। इस तरह कि जनाबे अब्दुल मुत्तलिब के जवार (पडोस) मे एक यहूदी का कयाम था जिसका नाम अजीना था। उसे तिजारत मे बहुत तरक्की हुई जिससे वह बहुत दौलतमन्द हो गया तो हर्ब बिन उमय्या को उससे पुरखाश हो गई। उसने कुछ लोगों को आमादा करके उसे कत्ल करा दिया और उसका सामान लुटवा दिया। जनाबे अब्दुल मुत्तलिब को तहकीक से कातिलों का पता चल गया मगर यह मालूम हुआ कि हर्ब ने उन्हें कही छुपा दिया है तो उन्हों ने हर्ब को समझाया कि कातिलो को हवाले करदो लेकिन वह इस पर तय्यार न हुआ बल्कि जनाबे अब्दुल मुत्तलिब से लड़ने पर आमादा हो गया। उसके नतीजे मे फिर नुफैल काहन को सालिस बनाया गया जिसके फैसले पर हर्ब को यह जुरमाना अदा करना पडा कि वह सौ ऊँटनियाँ जनाबे अब्दुल मुत्तलिब के हवाले करे जिन्हे वह उस मकतूल यहूदी के वारिस को खूनबहा के तौर पर दे दे और उस यहूदी का जो माल लूटा गया था वह सब भी वापस दिलवाया गया। चन्द चीजे दस्तयाब नहीं हुई तो उनका तावान हजरत अब्दुल मुत्तलिब ने अपने माल से अदा किया [2]पै दर पै (लगातार) शिकस्त खाने के लाजमी नतीजे के तौर पर बनी उमय्या अरबी खून की बहुत सी लताफतें खोते गए और उनमें दनाअत नालाएकी फरेब, (धोखा धडी) एहसासे कमतरी और दूसरे इसी तरह के औसाफ पैदा होते गए जो मुसलसल शिकस्त खाने वालों की खासियत हुआ करते हैं।

---

[1]तबकात इब्ने सअद मतबूआ लीडन जि/1, पेज/43.44. तबरी जि/2. पेज/180

[2]कामिल इब्ने असीर तबा/मिस्र. जि/2, पेज/6

यहाँ तक कि बनी हाशिम और बनी उमय्या के दरमियान आम अफरादे अरब की निगाहों में इतना तफरिका पैदा होता गया कि यह चीज काबिले गौर बन गई कि यह दोनों एक ही नस्ल की दो शाखे हैं भी या नहीं

अरब कौम के यह तअस्सुरात (खयालात) देख कर बनी उमय्या, बनी हाशिम के खिलाफ जरबें लगाते थे मगर हर मर्तबा उन्हें नाकामी ही होती थी। हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स०अ०] भी उठे तो बनी हाशिम ही के यहाँ से। यह आखरी बड़ी शिकस्त थी जिसे बनी उमय्या आसानी से सह न सकते थे। शिबली नोमानी सीरते नबी जिल्द अव्वल में पेज 158 पर लिखते हैं कि 'आँहजरत की नुबूवत को खानदाने बनी उमय्या अपने रकीब (हाशिम) की फतह का खयाल करता था इसलिये सबसे ज्यादा इसी कबीले ने आँहजरत की मुखलिफत की।'

तीसरा बाब

इस्लाम और उसका पैग़ाम

जहूरे इस्लाम से कब्ल का जमाना 'अय्यामे जाहलियत' के नाम से याद किया जाता है, इसके मुतअल्लिक यह खयाल दुरुस्त नही है कि अरब इसमें वहशत और बरबरियत (वहशी पन) के दौर से गुजर रहे थे और तुमद्दुन व तहजीब से वाकिफ नहीं हुए थे बल्कि जिस तरह डाक्टर वहीद मिर्जा साहब ने लिखा है वाकेया यह है कि जुनूबी अरब इस्लाम से सदिया कब्ल एक बड़ी तहजीब का गहवारा और कारोबार तिजारत का एक खुशहाल मरकज था। 'हुमैरी' बादशाहो के आसारे कदीमा सद्दे मारिब बागे शद्दाद और तख्ते बिल्कीस मलक–ए–सबा वगैरह के तजकेरा में इसका मुकम्मल सुबूत मौजूद है। इसके अलावा अय्याम जाहलियत की शायरी जो कि अदब का बेहतरीन नमूना है इसी से यह भी पता चलता है कि अय्यामे जाहलियत के अरब बहुत सी खूबियों के हामिल थे मसलन बहादुरी, सखावत मेहमान नवाजी वफादारी शौहरी मोहब्बत और बरादरी उन्स (भाईयों में मुहब्बत) वगैरह खुलासा यह कि शायरी उनके अखलाकियात का दफ्तर है और इससे पता चलता है कि वह शराफत का काफी उनसुर (तबियत) रखते थे। उनकी शायरी बिलखुसूस उनमें से चन्द की, इस बात को भी जाहिर कर देगी कि अगरचे वह उस जमाने के इलहामी मजहब (अल्लाह के दीन) को न मानने के बाइस मुशरिक थे और बुत परस्ती भी किया करते थे ताहम वह मजहब के खास खास अकायद से बिल्कुल ना–वाकिफ व बेगाना न थे। वह अपनी बुत परस्ती की यह तावील (दलील) करते थे कि उन बुतों के जरिये से हम खुदा–ए–वाहिद (अल्लाह) की बारगाह में कुर्ब हासिल करते हैं। फिर यह कि अरबो की एक बडी तादाद जनाबे इस्माईल[अ०स०] की नस्ल से तअल्लुक रखती थी और यह नामुमकिन है कि वह अपने आबाओ अजदाद (पूवर्जो के तालीमात से कतअन बेगाना हो गए हो बल्कि हकीकत यह है कि तुमद्दुनी (तहजीबी) हैसियत से इस्लाम से कब्ल

के जमाने में अरब की जमाअत तरक्की के बाद तनज्जुली (गिरावट) की तरफ़ जा रही थी। अब इसमें कुछ उमदा क़दीम खुबियो का शायबा (अक्स) तो मौजूद था लेकिन ज्यादा तर इस में बुरी आदते दाखिल हो गई थीं। वह हर साल मक्के में ब–फर्जे हज जमा होते थे लेकिन इस मुकद्दस फर्ज की अहमियत उनके दिलों से महो (गायब) हो चुकी थी। उनके कारवाँ हिजाज इराक और शाम में अब भी असबाब (सामान) से लदे हुए जाते थे लेकिन अब उन मे सनअत व तिजारत का जोश सर्द (ठंडा) हो चुका था और इन्तेहाई ग़ुरबत ने उन्हें हरीस (लालची) बना दिया था। उनमे अल्लाह का एक धुँधला और मदधम तसव्वुर मौजूद था लेकिन उनके बुत उनके नजदीक ज्यादा मुकद्दस थ। वह सुलह पसन्द और मुतमइन जिन्दगी के फवायद (फायदों) से वाकिफ थे और जग से मुतनफ्फिर (दूर) रहना चाहते थे जिसे वह 'शोला दर आग' या उस मन्हूस जानवर से जिसके यहाँ कसरत से तमाम (जुड़वाँ) बच्चे पैदा होते हैं तशबीह (मिसाल) दिया करते थे लेकिन उनकी खुद गर्जी और ग़ुरबत उनको आमादा करती थी कि वह अपने हमसाए (पडोसी) के माल पर दस्ते ततावुल दराज (माल गस्ब करना) करे। वह अपने मुर्दो का खूब मातम करते थे लेकिन इन्तेकाम कशी (बदले की कार्रवाई) से अपने को बाज न रख सकते थे नतीजा यह होता था कि नस्लन बाद नस्लिन बराबर खूँरेज जगे जारी रहती थीं। वह अपने बच्चों से मोहब्बत करते थे इसलिये कि वह उनके जिगर के टुकडे हैं जो जमीन पर चलते फिरते हैं लेकिन उन ही में से बाज को अपनी इज्जत का इतना पास रहता था कि वह इस खयाल को बर्दाश्त ही नहीं कर सकते थे कि उनकी लड़कियाँ किसी जालिम भाई या चचा की कनीजी म चली जायें या उनके रहमो करम पर पड जायें और इसलिये वह उनकी हलाकत को अपनी इज्जत के बरकरार रखने का बेहतरीन जरिया समझते थे।

यही हालत वह होती है जिसकी इस्लाह निहायत्त दुशवार है क्योंकि दौरे बरबरियत (वहशी पन) व वहशत से गुजरती हुई कौमे सादा लौह होती हैं। उनक दिलों पर जैसा नक्श बिठलाया जाये वह आसानी से उतर आता है इसलिये कि उसके खिलाफ कोई नक्श जमा हुआ नहीं है मगर अरबो की तमद्दुनी (रहेन सहन) खराबियाँ वह थीं जो खालिस माद्दी साख्त (दुनियावी बनावट) के तमद्दुन और हवसे इक्तदार की पैदावार होती हैं। उन्होंने अरबों

की उफतादे तबा (मिजाजी खराबियाँ) के साथ मिलकर सोने पर सुहागे का काम किया था।

एहसासे बरतरी कौमियत से मुन्तकिल हो कर जब इन्फेरादियत की तरफ आता है तो उसका नतीजा होता है बाहमी रिकाबत (आपसी दुस्ती) और आपस की खाना जगी। यह बात अरबो में इन्तेहा दर्जे पर पहुच गई थी फिर इसी का नतीजा था कि मसावाते (बराबरी) इन्सानी कोई चीज न रही थी और गल्ब ए ताकत और इकतेदार सब कुछ था। उसकी एक अदना मिसाल यह है कि एक बड़े आदमी के कत्ल हो जाने पर सिर्फ उसके कातिल को कत्ल न किया जाता था बल्कि उसके कबीले के सैंकडों बे गुनाह आदमियों को मार डाला जाता तब कहीं यह समझा जाता था कि उसके खून का बदला हुआ उसके बरखिलाफ अगर बड़े आदमी के हाथ से कोई छोटा आदमी कत्ल होता था तो उसका खून किसास (बदल) का मुस्तहक न समझा जाता था यह बडे और छोटे की तफरीक हजारो तमद्दुनी गुनाहों का सरचश्मा थी और इन्सानियत के परख्चे उडा रही थी। इसका सबब यह था कि उन्होने माद्दियत को सब कुछ समझ लिया था। मावराउल माददा का तखय्युल (आखिरत का खयाल) बाकी न रहा था। इसलिये माद्दी (दुनियावी) ताकत ही की बिना पर वह इम्तेयाजात कायम करते थे। यह हालत कमो बेश अरब के अलावा दूसरे मुल्कों की भी थी।

मजहबी हैसियत से अरब निहायत पस्ती में थे। उनमें कोई एक मजहब मुशतरक न था बल्कि वहाँ मुतअद्दिद (बहुत से) मजाहिब के अफराद रहते थे और बड़ी जमाअत बुत परस्ती और सितारा की परस्तिश को अपना शिआर बनाये हुए थी चुनानचे काबे ही में तीन सौ साठ बुत रखे हुए थे जिनमें से एक एक की परस्तिश साल के एक एक दिन की जाती थी क्योकि अरबी साल तीन सौ साठ दिनो का होता है। जो मजहब रायज थे जैसे यहूद मजूस और नसारा वह भी पस्ती की तरफ मायल नजर आ रहे थे। आमाले नाशाइस्ता (गलत काम) दूसरी जमाअतों से नफरत रवादारी का मफकूद (न होना) होना, आपस की खूँरेजी और ऐसी ही बहुत सी खराबियाँ उनमें वाजेह तौर पर मौजूद थीं और इसलिये फितरते इन्सानी किसी ऐसी मुन्तखब हस्ती की ख्वाहाँ थी जो दुनिया को इस मुसीबत से निजात दिलाए।

ऐसे वक्त में मोहम्मद बिन अब्दुल्लाह[स०] इस्लाम का जलजला अफगन (हलचल मचा देने वाला) पैगामे इन्कलाब लेकर दुनिया के सामने आ गये और

मुर्दा इन्सानियत को जिन्दगी का मुजदा (पैगाम) सुनाया जैसा कि डाक्टर वहीद मिर्जा साहब ने लिखा है: "हज़रत[स०अ०] का काम यकीनन दुशवार था इसलिये कि आप महज वहशी लोगों को मुतमद्दिन (तहजीब याफ्ता) नही बना रहे थे बल्कि बिगडी हुई समाजी कैफियत को सुधारना चाहते थे। आपका काम उन तमाम अकायद व तवहहुमात, रिवायत व मरासिम (रसमे) का अरबो के दिलों से महो (मिटाना) करना था जो उनकी जिन्दगी का जुजवे ला–युनफक (न खत्म होने वाला जिन्दगी का हिस्सा) बन चुकी थी। रसूल[स०अ०] उन लागों को बुर्दबारी, ख़ाकसारी पाकबाजी और अफव (माफ करना) का सबक पढ़ाना चाहते थे जिनके नजदीक माफ कर देना कमजोरी की दलील और इन्तेकाम न लेना जिल्लत और बुजदिली की अलामत समझा जाता था। रसूल[स०अ०] उन लोगों को मसावात और अख़ूवत (भाई चारगी) की तालीम देना चाहते थे जो कि अपने ख़ानदानी शरफ पर फख किया करते थे और अपने आबाओ अजदाद के पूरे शजरे को निहायत सख्ती के साथ महफूज रखा करते थे। उन चीजों के अलावा इस्लाम को अरबों के और बहुत से दूसरे रूजहानात से बरसरे पैकार (मुकाबला) होना पडा। मसलन उसने शराब की ममानिअत (मना) कर दी जिसके वह आदी हो चुके थे और जिसका इस्तेमाल वह सखावत की दलील समझते थे। उसने कमारबाजी (जुआ खेलना) बन्द कर दी जो अरबों के नजदीक बुजदिल वजूद की एक कतई अलामत थी और बहुत सी मुखरबे अखलाक (उनके अन्दर की खराबियाँ) आदतों को ममनूअ् (पाबन्दी) करार दिया। अरब इस बात का तसव्वुर भी न कर सकते थे कि सबसे ज्यादा मुकद्दस इन्सान क्योंकर खुदा की बारगाह मे सबसे ज्यादा मुअज्जिज (मोहतरम) हो सकता है या इस्लाम कुबूल करने के बाद कोई पस्त इन्सान क्योंकर अरब के शरीफ तरीन खानदानों के अशख़ास से बरतरी का दावा कर सकता है।"

ख्वाजा गुलामु सय्यदैन साहब ने इसे बहुत अच्छे लफजो मे लिखा है कि "इस्लाम एक ऐसी दुनिया के लिए जो पुजारियों के कब्ज ए–इकतेदार और दौलतमन्दों के जेरे हुकूमत मुसीबत के दिन काट रही थी पैगामे आजादी ले आया। आजादी पुजारियो की कैद से जो अब्दो माबूद (बन्दे और अल्लाह) के दरमियान वास्ता बनने के दावेदार थे आजादी गिरोहे उमरा (अमीरों) की हुकूमत से जो न किसी खुदाई कानून की परवाह करते थे और न किसी इन्सानी कानून की बल्कि बगैर रोक टोक के हरीसाना (लालच) तरीकों पर

दूसरों की मेहनत व मुशक्कत के फलों से खुद लुत्फ अन्दोज हो रहे थे आजादी गुलामों और नीच जातों के लिये उनके मालिको के मजालिम और खिलाफे इन्सानियत बेरहमाना सुलूक से आजादी तब्क–ए–निसवाँ (औरतो) के लिये उस अमली गुलामी से जिसमें वह इन्सानी हुकूक के इब्तेदाई मनाजिल से भी महरूम कर दी गई थीं, आजादी आम इन्सानो के लिये उन कुऊद (पाबदी) से जिनमें वह जात पात रग और कौम की तग नजरी की बन्दिशों में मुबतिला थे जिससे उनकी हयाते इजतेमाई फना (आम जिन्दगी बरबाद) हो रही थी और वह मुतखासिमीन (झगड़ालूओं) के गिरोह में मुन्कसिम (बट) हो रहे थे गरोहे इन्सानी किस तरह अपने खुद साख्ता (बनाए हुए) जालिमाना कैदो में मुतकय्यद (बन्द) हो रहा था। हिन्दुस्तान के मशहूर शायर और "फैलसूफ" एकबाल ने इस मन्जर की तसवीर कशी जैल के अशआर में की है।

बूद इन्साँ दर जहाँ इन्साँ परस्त
ना–कसो नाबूदमानदो ज़ेरे दस्त

सतवते किसरा व कैसर रहजनश
बन्दहा दरदस्तो पाओ गर्दनश

काहिनो सुलतान व पापा व अमीर
बहरे यक नखचीर सद नखचीर गीर

अज गुलामी फ़ितरते ऊँ दूँ शुदा
नगमहा अन्दर नये ऊ खूँ शुदा

इस्लाम ने उसे एक पैगामे आज़ादी सुनाया। हुररियत (आज़ादी) व मसावात (बराबरी) और इन्सानी बरादरी की तलकीन की और तवारीखे इन्सानी में पहले पहल शहरी और इन्सानी हुकूक पूरे तौर पर आम इन्सानों को बिल उमूम (एक जैसे) अता किये जिससे वह ब–सबबे कौमियत, रंग या जिन्स के या ब–सबबे गुरबत व फलाकत (फाका जद) के महरूम थे गुरबा, मजलूम और आम इन्सानों के आम तब्के को जो अब तक बड़ी बेदर्दी से पीसा जा रहा था नई उम्मीदों और अपने कारआमद होने का नया एहसास अता किया।

ता आमीने हक़ ब–हक दाराँ सिपुर्द
बन्दगाँ रा मसनदे ख़ाकाँ सिपुर्द

एतेबारेकारबन्दाँ रा फ़ज़ूद
ख्वाजगी अज़ कारफरमायाँ रबूद

कुव्वते ऊ हर कुहन पैकर शिकस्त
नौए इन्साँ रा हिसारे ताजा बस्त

ताजा जाँ अन्दर तने आदम दमीद
बन्दा रा बाज़ अज़ खुदा वन्दाँ खरीद

हुर्रियत जाद अज जमीरे पाक ऊ
ई मए नोशीं चकीद अज ताके ऊ

ना–शकीबे इम्तेयाजात आमदा
दर निहादे ऊ मसावात आम्दा

असरे नौ कीं सद चिराग़ आवुर्दा अस्त
चश्मदर आग़ोशे ऊ वाकरदा अस्त

यह कीमती खयालात थे जिनको इस्लाम अरबों की जिन्दगी में दाखिल करना चाहता था और अरबो की विसातत से तमाम इन्सानो में पहुचाना चाहता था।"

इस्लाम ने इस जहनी इन्केलाब के पैदा करने के लिये सबसे पहले असली सबब को दूर करते हुए लोगों की निगाह को माद्दियत के एहाते (सर्किल) से निकाल कर एक गैबी ताकत की जानिब मुतवज्जेह किया जिसके लिहाज से तमाम अफरादे इन्सानी यकसाँ हैसियत रखते थे। इसके सिवा मसावात कायम करने के लिये दौलत को बराबर तकसीम कर दिया जाये लेकिन बाजूओं की ताकत मौरूसी वजाहत (नस्ली शान व शौकत) कौम व कबीले की तकसीम किस तरह की जा सकती है? इस्लाम जानता था कि खारजी (बाहरी) मसावात (बराबरी) मुमकिन नहीं इसलिये उसने जहनी इन्केलाब पैदा करने की कोशिश की ताकि इस जहनी तब्दीली के जरिये एक इन्सान दूसरे इन्सान को बराबर समझे उसने सही तौर पर समझा कि बरादरी और बराबरी की अस्ल कुंजी क्या है? अहसासे अखूवत व मसावात की वाहिद बुनियाद यह है कि जब कोई कसरत किसी वहदत की तरफ मुसतनद (पलट) हो जायेगी तो उसके अजजा में बरादरी और बराबरी का एहसास पैदा हो जाना फितरी है। दो भाई क्यों एक दूसरे के साथ बराबरी का दावा रखते हैं? इसलिये कि एक बाप के बेटे हैं एक खानदान के आदमी क्यों आपस में

बरादरी और बराबरी का तसव्वुर रखते हैं? इसलिये कि एक मूरिसे आला की नस्ल से है। एक मुल्क के लोग आपस में क्यो राब्त–ए–अखूव्वत महसूस करते हैं और क्यों हुकूक मे बराबरी के तालिब (मॉग) होते हैं? इसलिये कि एक सरजमीन के बाशिन्दे हैं। इतना ही नहीं बल्कि मशरिक वाले आपस में यगानगी (बराबरी) और मगरिब वाले आपस में यकजेहती (इत्तेहाद) क्यों महसूस करते हैं? इसलिये कि वह आफताब के लिहाज से एक सिम्त के रहने वाले हैं। मालूम हुआ कि कसीर अफराद में इत्तेहाद व मसावात का एहसास पैदा करने का जरिया सिर्फ वह एक वसी नुक्त ए वाहिद (मरकज) है जिसकी तरफ ज्यादा से ज्यादा अफराद यकसॉ तौर पर मन्सूब हो सकते हैं दूसरे लफजों मे कुल्लिया (निचोड़) यह हुआ कि जब कोई कसरत वहदत की तरफ मन्सूब हो तो उसके अन्दर बराबरी और बरादरी का एहसास पैदा हो जायेगा। मगर याद रखना चाहिए कि मजकूरा बाला इत्तेहादों में से हर इत्तेहाद इफ्तेराक (जुदाई) का पेश खैमा करार पाया। यानी जब एक बाप के बेटों में ऐका पैदा हुआ तो दूसरे बाप के बेटों के सामने महाज कायम हुआ और जब एक खानदान के लोगों में ऐका कायम हुआ तो दूसरे खानदान वालों के सामने महाज कायम हुआ जिसका नतीजा हुआ करता है कौमों की जग और ममालिक का बाहमी तसादुम (मुल्कों का आपसी टकराओ) और फतह व शिकस्त (जीत और हार) का गैर मुतनाही सिलसिला (न खत्म होने वाला सिलसिला) जिसके करिश्मे आज भी नजर आ रहे हैं और जब एक सिम्त वालों मे इत्तेहाद हुआ तो दूसरी सिम्त वालों के सामने महाज कायम हुआ यहाँ तक कि युरोप वाले एक अलग कौम बन गए और एशिया वाले एक अलग कौम और जब इसके साथ रग के इत्तेहाद ने असर दिखाया तो गोरो और कालों का ऐसा इफतेराक (जुदाई) पैदा हुआ कि गोरों ने न सिर्फ कालों को अपने साथ एक होटल मे खाना खाने से रोका बल्कि एक इबादतगाह मे इबादत के लिये एक ही मजहब वालों के लिये जमा होना तक ममनूअ करार दिया। यह सब नतीजा था इसका कि इत्तेहाद की दीवारें आलमे इन्सानियत के बीच में उठाई गई थीं इसलिये हर दीवार जो उठी उसने इधर वालों को तो मुत्तहिद किया और उधर वालो को जुदा कर दिया। इस्लाम ने इस अस्ल उसूल को लेते हुए कि इत्तेहादे अफराद का राज इत्तेहादे मरकजी मे मुजमर है (लोगों का इत्तेहाद एक मरकज पर जमा होने में पोशीदा है।), जरूरत समझी कि इन तमाम दरमियानी दीवारो को ढा दिया जाये और बीच के उन तमाम खुतूत

(तअस्सुब की हदे) को मिटा कर उनके बजाये एक वसी एहाता ऐसा कायम किया जाये जहाँ नस्ल रंग, मुल्क और कौमियत किसी चीज की तफरीक न हो वह एहाता ऐसा हो जो तमाम आलमे इन्सानी को अपने घेरे में ले ले और चूँकि इस एहाते के बाहर फिर कुछ रह नहीं जायेगा इसलिये इफतेराक (जुदा) व इम्तयाज (फर्क) का सवाल ही न पैदा हो सकेगा। इस के लिये कोई माद्दी चीज नुकत–ए–मरकजी नहीं बन सकती थी क्योंकि जो माद्दी (दुनियावी) शै होगी वह महदूद होगी और महदूद होने के साथ उसमें कुर्ब व बोद (नजदीक व दूर) नीज कमी व ज्यादती के मदारिज (दर्जे) पैदा होगे इसलिये जरूरत थी कि निगाह को तमाम माद्दी चीजों से हटा कर उस गैर माद्दी (दुनियावी) बलन्द व बालातर ताकत की तरफ मोड दिया जाये जहाँ हुदूद व इकदार (limitation & Boundation) कायम नहीं होते इसका सबके साथ यकसाँ तअल्लुक है जो सबका है और सब उसके हैं। यह खालिक की जात है जिसे इस्लाम ने माबूदे बर हक और खुदाए कुल साबित करते हुए सबका किबल–ए मकसद करार दे दिया है।

इस एहसास के पैदा होने के साथ कि सब खुदा के बन्दे हैं। अफरादे इन्सानी में एहसासे उखूव्वत (भाई चारगी) व मसावात (बराबरी) पैदा होना लाजमी है, जब एक बाप के बेटे आपस में भाई भाई हैं और एक मूरिसे आला की औलाद में बरादरी कायम हो जाती है और एक सरजमीन के रहने वाले अपनी मादरे वतन के लिहाज से आपस में उखूव्वत महसूस करते हैं और एक सिम्त के रहने वाले अपने में यकजेहती का तसव्वुर करते हैं तो क्या वजह है कि एक खालिक के बन्दे सब आपस में भाई भाई न बन जाये यह था वह अमली सबक जो इस्लाम की तौहीद में मुजमर (पोशीदा) था।

बाज मजाहिब ने खालिक के तखय्युल (खयालात) में भी मुगायेरात (तब्दीली) बरती थी। उन्होंने खुदा को अपना करार दे लिया था और यह कहते थे कि हम उसके बेटे हैं इस्लाम ने उन लोगों के खयाल या जोम का जिक्र करते हुए एक तन्जिया अन्दाज मे उसकी मुखालिफत की और उसके मुकाबले मे मुसलमानो को यह तलकीन नहीं किया कि तुम ही अल्लाह के सपूत हो और बस, बल्कि मुसलमानों को अकवामे आलम के मुकाबले मे यह कहने की तालीम दी कि هو ربنا وربكم لنا اعمالنا ولكم اعمالكم (यानी) "वह हमारा भी परवरदिगार है और तुम्हारा भी। हमारे लिये हमारे आमाल हैं और तुम्हारे लिये तुम्हारे आमाल " इस तरह इस्लाम ने सबको मसावात का दर्जा देते हुए एक

मेयार इम्तेयाज का भी कायम कर दिया और वह इन्सानी किरदार है। अब साबिक के तमाम तफव्वुक (बरतरी) और बलन्दी के इम्तेयाजात (फर्क) मिट कर एक न्या मेयार इम्तेयाज का कायम हो गया और वह यह कि जो शख्स फराएजे इन्सानी को सबसे ज्यादा अन्जाम देता हो वह सबसे बेहतर है। "إن أكرمكم عند الله أتقاكم" 'बेशक अल्लाह के नजदीक साहिबे करामत वह है जो मुत्तकी व परहेजगार है' इस उसूल के मातहत गल्बा, ताकत, इक्तेदार, कौम व कबीला की ज्यादती और तादाद की अक्सरियत यह तमाम बातें कुछ न रहीं बल्कि यह उसूल कायम हो गया कि एक इन्सान को दूसरे इन्सान पर फकत एहसासे फराएज की बिना पर फजीलत हासिल होती है। इसके मातहत अख्लाक पर बहुत जोर दिया गया, यहाँ तक कि बानिए इस्लाम ने अपना मकसदे रिसालत ही यह करार दिया और एलान किया انما بعثت لاتمم مكارم الاخلاق।दूसरी लफजों मे انما بعثت لاتمم حسن الاخلاق मेरी बेअसत महेज इन्सान सुधार और अच्छे एखलाक की तकमील के लिए है।[1]

मुसलमानों से साफ कह दिया गया कि यह खयाल न करना कि तुम्हें तुम्हारे आमाल की सजा न मिलेगी बल्कि जो जैसे आमाल करेगा वैसा ही पायेगा। मुसलमान वह है जो अहकामे खुदा के आगे सरनिगूँ (झुकाना) हो जाये। सरकशी मुस्लिम की शान नहीं है। तुम अल्लाह के दोस्त जब ही कहलाये जा सकते हो जब उसके अहकाम की तमील (पालन) करो वरना उसकी रहमत के हकदार नहीं और न उम्मते मरहूमा में शामिल होने के काबिल।

मआशिरत (आपसी मेल जोल) के बाब में इस बात पर जोर दिया गया कि सब इन्सान जात और असलियत के लिहाज से एक ही हैं।(خلقكم من نفس واحدة)[2] कबायल और अकवाम मे उनकी तकसीम सिर्फ तआरुफ और शनाख्त के लिये है। (وجعلناكم شعوبا وقبائل لتعارفوا)[3] मगर फजीलत व बलन्दी का तअल्लुक जात और कौमियत से बिल्कुल नहीं है। (لافخر للقرشي على غير القرشي ولا للعربي على غير العربي)[4] फजीलत व बुजुर्गी सिर्फ परहेजगारी और तकवा यानी इन्सानी आमाल और फराएज की बजाआवरी के साथ वाबस्ता है

---

[1] तबकात इब्ने सअद जि/1, पेज/138

[2] उसने तुमको एक नफ्स से पैदा किया

[3] हमने तुम्हें मुख्तलिफ खानदानों और कबीलों में इसलिये करार दिया है कि आपस में शनाख्त और पहचान पैदा हो

[4] करशी को गैर करशी और अरब को गैर अरब पर कोई फख्र नहीं

"إن أكرمكم عند الله أتقاكم"[1] उसको पैगम्बर ने सिर्फ कौलन नही बल्कि अमलन भी दिखाया आपने अपना मुअज्जिन (अजान देने वाला) बिलाले हबशी को करार दिया और जब किसी ने उसे देख कर नाक भौं चढ़ाई और कहा 'यह काले रंग का गुलाम भी भला इस काबिल है कि अजान दे' तो कुरआन की आयत उतरी (يا أيها الناس إنا خلقناكم من ذكر وأنثى) यानी सब आदमी यकसाँ हैं, उनमें कोई फर्क नहीं[2] जैसाकि अब्दुल हामिद साहब बदायूनी ने कहा है 'इस्लाम दर अस्ल हुकूमते इलाहिया का कयाम चाहता है इस्लामी हुकूमत का दारो मदार अदल व इन्साफ करार दिया गया है चुनानचे कुरआन मजीद ने इस बारे में फरमाया

(وإذا حكمتم بين الناس أن تحكموا بالعدل إن الله نعما يعظكم) (सूरए निसा)

(ولا يجرمنكم شنآن قوم على ألا تعدلوا اعدلوا هو أقرب للتقوى واتقوا الله) (सूरए मायदा) "यानी अगर तू गैर मुस्लिम के बारे मे फैसला करे तो इन्साफ से फैसला कर। बेशक खुदा इन्साफ करने वालो को दोस्त रखता है।' इस्लामी कानून मे शाह व गदा यकसाँ हैसियत रखते हैं।

चुनानचे हुजूरे अनवर[स०अ०व०] ने फरमाया ليس لاحد على احد فضل الا بالدين وتقوى (मिशकात) इसी का नतीजा यह है कि इस्लाम मे सियासत, "हुसूले इक्तदार के कामयाब जराये के इस्तेमाल' का नाम नहीं है बल्कि सियासत मुल्को मिल्लत के सही नज्मो जब्त और उमूरे खल्क (लोगों के काम) के बेहतरीन तरीके पर चलाने का नाम है। इस लिहाज से सियासी हुकूमत मजहबी कयादत से अलग नहीं हो सकती और इसकी मिसाल खुद हजरत पैगम्बर[स०अ०व०] की जाते गिरामी है।

मगर याद रखने की बात है कि हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स०अ०व०] ने इस मुकम्मल इक्तदार के बावजूद जिसके मातहत एलान कर दिया गया कि 'उन को हर शख्स पर खुद उसकी जात से ज्यादा हक और इख्तियार है।' कभी अपने को बादशाह कहा या समझा जाना पसन्द नहीं किया बल्कि इससे इन्कार फरमाया। चुनानचे एक मर्तबा एक शख्स आपकी खिदमत में हाजिर हुआ जूँही आपके सामने खडा हुआ रोब से कापने लगा आपने फरमाया

---

[1] तुम मे अल्लाह के नजदीक सबसे ज्यादा मुअज्जिज मोहतरम वह है जो तुम में सबसे ज्यादा परहेजगार हो

[2] इतोहफाक सुयूती देहली पेज/148

''अपने आपे मे आओ मैं कोई बादशाह नहीं हूँ। मैं तो एक करशी औरत का बेटा हू, जो शोरबे में रोटी भिगो कर (गरीबाना खाना) खाती थी।''

यह इसलिये था कि मुसलमानों में शरीयते इलाहिया की रहबरी से अलग हुक्मरान का तखय्युल (खयाल) पैदा न हो और सिवाए खुदा वन्दी इक्तेदार के किसी इक्तेदार के आगे मुसलमानो की गर्दने न झुकें

[1]तबकात इब्ने सअद. कूम. जि/1. पेज/4

चौथा बाब

इस्लाम का मुज़ाहिम (मुख़ालिफ़) ताकतों से तसादुम (टकराव)

जहाँ तक आईन और निजाम की तशकील का तअल्लुक है पैगम्बरे इस्लाम की जिन्दगी मे यह मकसद हासिल हो गया और लाखों आदमी उसके तस्लीम करने वाले और उसको हक कहने वाले हो गए और यह एक इन्केलाब की कोई कम कामयाबी नहीं है। मगर इस इन्केलाब पैदा करने मे रसूल[स0अ0] को कितनी दिक्कतें दर पेश हुई और किन किन ताकतों से मुकाबला करना पड़ा। यूँ तो कुछ लोग वह होते हैं जो जजबात के लिहाज से हर कदीम शै (पुरानी चीज) के साथ उलफत रखते हैं इसलिये उन्हे हर इन्केलाब के मुहर्रिक (बानी) से बुग्ज लिल्लाही होता है। इलाही बैर का मतलब यह है कि चाहे इस इन्केलाब का उनकी जात से कोई तअल्लुक न हो और उन्हें इससे कोई नुकसान भी न पहुँचता हो मगर वह इन्केलाब से सिर्फ इसलिये दुश्मनी रखते हैं कि वह इन्केलाब है लेकिन कुछ लोग ऐसे भी होते हैं जिनके खुद गरजाना मफाद (फाएद) कदीम रस्मो रवाज के साथ वाबस्ता हैं और उन्हे इस इन्केलाब से अपने मनाफे (फाएदों) का खून होते हुए नजर आता है। चुनान्चे इस्लाम जो इन्केलाब लेकर आया था और उसने जिन्दगी के हर शोबे मे जो तब्दीलियाँ कर दी थी उनसे बहुत सी किस्म के लोगो को जाती नुकसानात पहुँच रहे थे। यह नुकसानात माली भी थे और वजाहत (शानो शौकत) व इक्तेदार के भी। मिसाल के तौर पर इस्लाम की मआशी (मालियत) तालीम कि सूद खारी ममनूअ (मना) है उससे क्या तमाम अरब के इन महाजनों का दीवाला नहीं निकल गया, जिनकी जिन्दगी ही हाजत मन्द मखलूक का खून चूस कर अपनी हवसे दौलतमदी को पूरा करने पर थी फिर अगर सिर्फ यह होता कि सूद लो नहीं तो यह मुमकिन था कि यह लोग इस्लाम न कुबूल करके अपने को इस हुक्म की पाबन्दी से महफूज रखते मगर वहॉ तो यह था कि न सूद लो और

न सूद दो जाहिर है कि सूद देना काम होता है कम हैसियत ही लोगों का जो मेकनातीसी (चुबकीय) कशिश के साथ इस्लाम के गरीब परवर तालीमात की तरफ खिचे चले जा रहे थे। अब अगर सरमायादार खुद इस्लाम न भी क़ुबूल करें तो क्या फायदा जब उनकी जिन्दगी का दारोमदार जिन लोगों के रूपये पर था उन्होंने इस्लामी तालीमात पर अमल पैरा हो कर अपना हाथ खींच लिया और वह अब एक पैसा भी सूद के नाम से देने पर तय्यार नहीं। उसके अलावा इस्लाम की यह तालीम कि अफरादे इन्सानी में इम्तेयाज सिर्फ अखलाके हसना (अच्छे नेचर) व फराएजे इलाहिया की बिना पर है। दूसरी किसी हैसियत से फजीलत व तफव्वुक हासिल नहीं हो सकता (बरतरी हासिल नहीं हो सकती) उन लोगो के इक्तदार पर कारी जर्ब थी जो उसके पहले नस्ली तफव्वुक या माल व दौलत या कौम व कबीले की कसरत की बिना पर गल्बा व इक्तदार पर कब्जे किये हुए थे। इस्लाम ने नजरिया ए तफव्वुक व इम्तेयाज बदल कर इसे मिलकियत में दाखिल खारिज कर दिया इस तरह के साहबाने इकतदार जितने थे वह चूँकि इस्लामी मेयारे इज्जत के लिहाज से सिफर (0) का दर्जा रखते थे इसलिये वह कुछ न रहे और जो लोग परदेसी या मोहताज या उन लोगों की नजर में नीच जात के होने की वजह से निगाह उठाकर बात करने के काबिल न समझे जाते थे वह बडे साहिबे इज्जत हो गए। इसलिय कि वह अमल की कसौटी पर पुरे उतरते थे और परहेजगारी और तकवे में दरज-ए कमाल पर फाएज थे। यह बात उन लोगों को ठंडे दिल से क्यो कर गवारा हो सकती थी जो अब तक इज्जत की मसनदों पर इतमिनान के साथ बिराज रहे थ और जो खल्के खुदा को खुदा के बदले खुद अपना ग़ुलाम बनाये हुए थे।

बनी उमय्या के लिय इन तमाम मुहर्रेकात के अलावा उनकी देरीना मुखासिमत (पुरानी रंजिश) बनी हाशिम के साथ और जाती रश्को हसद भी था जिसके मातहत उनके सरगिरोह अबू सुफयान ने तकरीबन तमाम अरब को हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स0अ0] के खिलाफ बरअन्गेख्ता (उकसाना, भड़काना) कर दिया।

आपको तरह तरह की तकलीफें दी जाने लगीं। जिस्म पर पत्थर मारे गए। सर पर कूड़ा फेंका गया। निजासतें डाली गईं और कत्ल की धमकियाँ दी गईं। यहाँ तक कि जब खतरा बहुत बढ गया तो हजरत के चचा अबू तालिब[अ0स0] ने आपको अपने एक महफूज मकान में जो पहाड की घाटी में एक

कले की सूरत पर था मुन्तकिल कर दिया। तमाम कुरैश ने बाहम एक तहरीरी मुआहदा (Agreument) किया कि बनी हाशिम से न सिर्फ शादी बियाह तर्क कर दिया जाये बल्कि उनके साथ खरीदो फरोख्त भी न की जायेगी। इसके मातहत महसूरीन (कैदियों) तक जरूरियाते जिन्दगी पानी और खाना तक पहुँचना तकरीबन गैर मुमकिन बना दिया गया था यह वाकेया बेअसत (एलाने रिसालत) के सातवे साल का है जो चार बरस तक कायम रहा। चार बरस की तवील मुद्दत के बाद यह तर्के मवालात (दोस्ती) खत्म हुआ और यह लोग कले से बाहर निकले। अब कुछ दिन तक मुखालिफते ठडी रहीं मगर फिर एक ही साल के अन्दर अबू तालिब और खदीजा दोनो की वफात[1] के बाद इस मुखालेफत ने इन्तेहाई जोर पकडा यहाँ तक कि अहले मदीना तक इस्लाम की रौशनी फैली और उन्हो ने आपको मदीने की तरफ तशरीफ ले जाने की दावत दी और आपने बहुत से मुसलमानो को वहाँ भेज दिया उन्हीं मुशरकीन ने आपको कत्ल कर देने का पूरा मन्सूबा तय्यार कर लिया। जिसके बाद आपने मदीने की तरफ हिजरत फरमाई।

मदीने मे आकर भी मुखालेफीन ने चैन से बैठने न दिया। एक तरफ तो उन लोगो को जो आप पर ईमान लाये थे और मजबूरन मक्के में रह गए थे तरह तरह की तकलीफें पहुँचाई जातीं, दूसरी तरफ आप के जाए पनाह मदीन–ए–मुनव्वरा पर फौज कशी के इन्तजामात होने लगे। आपको अपनी हिफाजत और अपने से ज्यादा उन लोगों के घरबार की हिफाजत के लिये जिन्हों ने आपको पनाह दी थी मैदाने मुकाबला में निकल आना पड़ा

सबसे पहली जग जो मदीने में आकर हुई बद्र की लडाई थी। इस मौके पर मुसलमान बिल्कुल तय्यार न थे सिर्फ तीन सौ तेरह आदमी[2] जिनके पास सवार होने को सिर्फ तीन घोड़े थे।[3] और चन्द तलवारें मगर बनी हाशिम की तलवार ने मुकाबिल वालों के दाँत खट्टे कर दिये। हमजा बिन अब्दुल मुत्तलिब[अ0स0], उबैदा बिन हारिस और अली इब्ने अबी तालिब[अ0स0] ने वह कारहा ए नुमायाँ दिखलाये कि मुखालिफों की हिम्मत पस्त हो गई। अगरचे इस्लाम को बिल खुसूस बनी हाशिम को यह बडा नुकसान पहुँचा कि उबैदा इस जग में शहीद हो गए मगर मक्के वालों को और बिल–खुसूस बनी उमय्या

---

[1]तबरी जि/1 पेज/229
[2]तबरी जि/2 पेज/272
[3]सीरते इब्ने हिशाम जि/1, पेज/407

को बहुत ज्यादा नुकसानात से दो चार होना पड़ा। इसमें अबू सुफियान को अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के हाथ से महेज अपने बेटे हन्जला के कत्ल ही पर मातम करना नही पड़ा बल्कि आपने उसके एक दूसरे बेटे अम्र को कैद भी किया।[2] इसके अलावा उसकी बीवी हिन्द को अपने बाप अतबा और अपने चचा शैबा और भाई वलीद का मातम करना पड़ा।[3]

इसके बाद अबू सुफियान ने अहद किया कि वह उस वक्त तक नहायेगा नहीं जब तक कि रसूल[स०अ०] पर चढ़ाई न करे। मगर अब मुशरिकीन में आम तौर पर मुकाबले की हिम्मत न थी। मजबूरन अबू सुफियान ने सिर्फ बराए नाम अपनी कसम को पूरा करने के लिये दो सौ सवार कुरैश के इकट्ठा किये और उनको लेकर मदीने की तरफ रवाना हुआ। मदीने के हुदूद में पहुच कर उसने रसूल के दो पैरओं (मानने वालो) को कत्ल कर डाला और खजूर के दरख्तों को तबाह कर दिया। हजरत अपने पैरूओं के साथ जग के लिये निकल आये मगर अबू सुफियान अपने साथियो के साथ खौफ खा कर पहले ही फरार हो चुका था और सब भागने की जल्दी मे अपने सामान के गठ्ठरो को रास्ते में फेकते गए थे उसमें ज्यादा तर सत्तू बधे हुए थे जो मुसलमानों को हासिल हुए। इसी वजह से इसको "जगे सवीक" कहते हैं क्योंकि अरबी मे सवीक के मानी सत्तू के हैं।[4]

हिजरत के तीसरे साल वह निहायत अहम लड़ाई पेश आई जिसका ओहद की जग कहते हैं।[5] अकरमा, बिन अबी जेहल अबू सुफियान और हिन्द को उस वक्त तक चैन कहाँ आ सकता था जब तक कि वह मदीने वालों से इन्तेकाम न लेते मक्का वालो ने बड़ी बड़ी तय्यारियाँ की थीं उनकी फौज में कुरैशियों के अलावा खानदाने कनाना और बाशिन्दगाने तहामा भी शामिल थे[6] फौज में तीन हजार मुसल्लह (हथियारो से लैस) सिपाही थे।[7] उनमे सात सौ जिरह पोश थे उनके बिल मुकाबिल रसूले खुदा[स०अ०] के साथ सात सौ आदमी

---

[1] इरशाद पेज 38
[2] सीरते इब्ने हिशाम जि/1, पेज/397
[3] इब्ने हिशाम जि/2, पेज/37 तबरी जि/2, पेज/279
[4] सीरते इब्ने हिशाम जि/2, पेज/56, तबरी जि/2 पेज/299
[5] सीरते इब्ने हिशाम जि/2, पेज/65
[6] इब्ने हिशाम जि/2, पेज/60
[7] इब्ने हिशाम जि/2, पेज/60

थे जिनमें सिर्फ सौ जिरह पोश थे और फौज में फकत दो घोडे थे।[1] अकरमा और खालिद बिन वलीद दोनों फौज के अफसर थे और खास बात यह थी कि फौज के अकब (पीछे) में अबू सुफियान की बीवी हिन्द मक्के की दूसरी औरतों के साथ मैदाने जग मे ढोल बजा बजा कर सिपाहियों की हौसला अफजाई कर रही थी। हिन्द के अशआर उस मौके के जो वह पढ रही थी कुतुबे तारीख में महफूज हैं।[2]

हिन्द के इन्तेकामी जजबात का अन्दाजा इससे हो सकता है कि ओहद की जग में जब रसूल[स०अ०] के चचा हजरत हम्जा शहीद हुए तो हिन्द जजब-ए इन्तेकाम मे अपनी सिन्फ बल्कि इन्सानियत की हुदूद से गुजर गई। उसने इस बरबरियत का सुबूत दिया कि जनाबे हम्जा का पहलू चाक कराके उनका जिगर निकलवाया और उसे मुँह मे रख कर चबाने की कोशिश की। और कुश्तों के कान और नाक वगैरह आजा ए जिस्म का गुलूबन्द (गले का हार) और सीना बन्द बनाया।[3] बल्कि बाज राविये ने तो यहाँ तक बयान किया किया है कि उसने हजरत हम्जा के जिगर को भून कर खा लिया [4] उससे उस एनाद और दुश्मनी का अन्दाजा किया जा सकता है जो उस खानदान के मर्दों और औरतों के दिलों मे बनी हाशिम, पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] और इस्लाम के खिलाफ पाई जाती थी।

इस जग में अगरचे आम तौर पर मुसलमानों की जमाअत में बडी अबतरी (कमजोरी) पैदा हो गई थी मगर आखिर में बनी हाशिम और बिल-खुसूस अली इब्ने अबी तालिब[अ०स०] की तलवार ने मुखालिफ जमाअत को शिकस्त दी और वह हजीमत खुर्दा (बेइज्जती) सूरत में वापस गई। अब उनकी इन्फेरादी ताकत रसूल के मुकाबले में ना-काफी साबित हो चुकी थी। इसलिये 5 हिजरी में आखरी कोशिश उन्होने यह की कि जितनी जमाअते मुल्के अरब मे इस्लाम के खिलाफ उनको मिल सकती थीं सबको मुत्तहिद (एकजुट) किया यहाँ तक कि यहूद को साज बाज करके अपने साथ मिलाया और इज्तमाई ताकत (एक जुट होकर) से दस हजार के लश्कर के साथ वह इस जग के लिये आये जिसको इसी जत्थाबन्दी की वजह से "जगे अहजाब" के नाम से याद किया

---

[1] तबरी जि. 3. पेज 12
[2] तबरी जि/3. पेज/15-16
[3] इब्ने हिशाम जि/2. पेज/84. तबरी जि/3. पेज/23
[4] इस्तीआब जि/2. पेज/786. तबरी जि/3. पेज/43

जाता है। उनके मुकाबले मे मुसलमान तीन हजार थे मगर फौजे मुख़ालिफ को इस मर्तबा भी शिकस्त का रोजे बद देखना नसीब हुआ और उनका माय–ए–नाज़ सूरमा अम्र बिन अब्दवद इब्ने अबी कैस आमरी अली इब्ने अबी तालिब[अ०स०] के हाथ से तलवार के घाट उतरा।[1] अबू सुफियान को ब–हाले खस्ता व तबाह मक्का वापस जाना पड़ा और अब हिम्मते मुकाबला व लश्कर कशी खत्म हो गई मगर दिल में इन शिकस्तों से जो घाव पड़े थे वह कभी भी भर न सकते थे।

पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] ने जब कुछ अरसे तक यह देखा कि अब मुशरेकीने कुरैश की तरफ़ से कोई जंगी कारवाई नहीं होती तो आपने सन 6 हिजरी में खान ए काबा की जियारत (उमरा) का इरादा किया और मुसलमानों की जमाअत के साथ मक्के की तरफ रवाना हुए।[2] आपके पास बुदने (कुर्बानी के ऊँट) थे।[3] जिससे जाहिर था कि आप लड़ाई के लिये नहीं जा रहे हैं मगर जब कुरैश को रसूल के आने की खबर पहुची तो वह खालिद बिन वलीद की कयादत में "कराउल गमीम" (नामी) मकाम तक रसूल[स०अ०] का रास्ता रोकने के लिये निकल आये।

जाहिर है कि मुसलमानों की हिम्मतें इसके पहले की हासिल शुदा पैदरपै फ़ुतूहात (जीत) से बढ़ी हुई थीं और सामने वही शिकस्त खुर्दा (हारी हुई) जमाअत थी जो इस वक्त जंग के लिये कोई तय्यारी भी न कर सकी थी इसलिये यह बहुत आसान था कि आप मुकाबले का हुक्म दे देते और फातेहाना सूरत से मक्के मे दाखिल होते मगर पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] को अमन पसन्दी का सुबूत देना था जूँही गर्दो गुबार उठता नजर आया आपने फरमाया इस रास्ते को छोड़ दो। किसी दूसरे रास्ते से आगे निकल चलो चुनानचे दायें जानिब का रूख़ किया गया और आप "हमस" (नामी जगह) की पुश्त पर से "सनियतुल मरार" (नामी जगह) से होते हुए हुदैबिया को जो रास्ता जाता है उधर मुतवज्जे हुए।[4]

आपकी इस अमन पसन्दी के मुजाहरे का जमाअते मुखालिफ को इस हद तक एहसास हुआ कि वह भी वापस चली गई, और उसने अब नामा व पयाम

---

[1] इब्ने हिशाम जि/2, पेज/112, तबरी जि/3, पेज/48

[2] इब्ने हिशाम जि/12, पेज/210, तबरी जि/3, पेज/71

[3] तबरी जि/3, पेज/72

[4] तबरी जि/3, पेज/73

(खतो किताबत) का सिलसिला शुरू किया। चुनानचे उरवा बिन मसऊद सक्फी ने आकर गुफ्तगू–ए–सुलह का आगाज किया और हजरत रसूले खुदा[स०अ०] की सुलह पसन्दाना बातों से ऐसी खुशगवार फिजा कायम हुई कि सुहैल बिन अम्र कुरैश का नुमाइन्दा बनाकर गुफ्तगू–ए सुलह के लिये हजरत के पास भेजा गया और उसने अपनी जमाअत के मुतालबात पेश कर दिये यह मुतालबात सब मुशरिकीन के हक मे थे और उनके जरिये से ब–जाहिर पैगम्बरे इस्लाम को दबाया जा रहा था मगर आपने इन सब बातों को मन्जूर फरमा लिया और सुलहनामा मुरत्तब हो गया। इस सुलह नामे के शराएत हस्बे जैल थे।

1. रसूल इस साल अपने मुत्तबईन (साथियों) के साथ बगैर जियारत किये हुए वापस जायें।
2. दस साल तक आपस में जग न हो।
3. जो शख्स कुरैश में से अपने वली (सरदार) की इजाजत के बगैर रसूल अल्लाह[स०अ०] के पास चला जाये उसको आप वापस कर देंगे मगर जब आपके पास से कोई निकल कर कुरैश के पास चला जाये तो कुरैश वापस न करेंगे।
4. जो कबील–ए–रसूल[स०अ०] का हलीफ (हिमायती) होना चाहे वह आपके साथ मुआहद–ए–दोस्ती कर ले और जो कबील–ए–कुरैश के साथ मुआहद–ए–दोस्ती करना चाहे वह उनके साथ हो जाये।
5. आइन्दा साल मुसलमान मक्के की जियारत के लिये आ सकेंगे इस तरह कि बाशिन्दगाने मक्का तीन दिन के लिये मक्के को खाली कर देंगे मगर मुसलमानों को लाजिम होगा कि तीन दिन के अन्दर मक्के से बाहर निकल जायें और एक आदमी भी तीन दिन के बाद मक्का मे रहने न पाये।
6. मुसलमान अपने साथ उस तरह के असलहे ला सकेंगे जैसे मुसाफिर अपने साथ रखते हैं यानी तलवारें नियाम के अन्दर रखी हुई।[1]

यह ऐसी गैर मुतवाजिन (यकतरफा) शर्तें थीं कि पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] के अक्सर साथ वालों मे जो रसूल के बलन्द मसालेह की तह तक पहुचने से कासिर थे। शदीद बचैनी पैदा हो गई थी। तारीख के अलफाज यहाँ तक हैं कि ''लोगों के दिलों में अम्रे अजीम (रसूल के लिए गुमान) पैदा हुआ यहाँ तक कि करीब था कि वह हलाकत में मुबतिला हो जाये '' इसका मतलब यह है

[1]इब्ने हिशाम जि/2, पेज/216, तबरी जि/3, पेज/79

कि उनके अकायद में तजलजुल (अकीदे में डगमगाहट) हो गया। ऐसा कि करीब था कि वह इस्लाम से मुन्हरिफ ही हो जाये।[1]

इसी का नतीजा था कि जब पैगम्बरे खुदा[स0अ0] ने मुआहदे की तकमील के बाद असहाब से फरमाया कि उठो, कुर्बानियाँ करो और फिर सरों के बाल मुडवा कर वापस चलो। तो आलम यह था कि रसूल[स0अ0] हुक्म दे रहे थे और मजमे की अक्सरियत खामोश थी। कोई तामील के लिए उठता न था, यहाँ तक कि जब हजरत ने उनकी तरफ से बऐतेनाई इख्तियार करके खुद जाकर कुर्बानी की और बाल मुडवाये तो मजबूरन दूसरे लोग भी खडे हुए और सरों के बाल मूडना या तराशना शुरू किये मगर रंज और सदमे का यह आलम था कि मालूम होता था एक दूसरे को कत्ल कर रहा है।[2]

लेकिन रसूल[स0अ0] ने अपने साथियों के इन जज़बात का कोई लिहाज न किया और कुफ्फार के इन जाबिराना शराएत को मन्जूर करके वापसी इख्तियार फरमाई। इस खयाल से कि अगर इस मौके पर जंग करके मक्के को फतह किया जाता तो कहने को हो जाता कि रसूले इस्लाम[स0अ0] चढाई करके आये, इस तरह जारेहाना हमला (जुल्म के साथ हमला आवर होने) का इल्जाम आप पर आएद किया जाता। लिहाजा आपने इस का मौका न दिया और सुलह के शराएत की पाबन्दी इस हद तक फरमाई कि अभी यह तहरीर खुश्क न होने पाई थी कि खुद सुहैल बिन अम्र (जो मुशरिकीन की तरफ से नुमाइन्द–ए सुलह था) का लडका जो पहले से मुसलमान हो चुका था और उसे सिर्फ इस्लाम लाने की वजह से घर वालों ने लोहे में जकड़ दिया था। उस वक्त मौका पाकर पा ब–जन्जीर होने ही की हालत में वा–मुहम्मदाह वा–मुहम्मदाह कहता हुआ आया और अपने को रसूल के सामने डाल दिया। सुहैल ने जो यह देखा तो वह खडा हो गया, उसे तमाचा लगाया और गरीबान पकड कर खींचता हुआ ले चला। उसने पुकार कर आवाज दी "क्यों मुसलमानो! क्या मैं फिर मुशरिकीन ही की तरफ वापस कर दिया जाऊगा कि वह मुझे दीन से मुन्हरिफ करने की कोशिश करें। मगर हजरत[स0अ0] ने कोई तअर्रूज (एतेराज) नहीं फरमाया और कहा "ऐ अबू जन्दल! सब्र कर यह चन्द दिन की तक्लीफ है। अल्लाह तेरे लिये और तमाम कमजोर मुसलमानों के लिये जो मुशरिकीन के पंजे में गिरफ्तार हैं कोई कशाइश (आसानी) की सूरत पैदा

---

[1]तबरी जि0/2, पेज/79

[2]तबरी जि0/3, पेज/80

करेगा। इस वक्त तो हम ने इस कौम के साथ एक मुआहदा कर लिया है और इस मुआहदे की मुखालिफत हम नहीं करेंगे [1]

गरज पैगम्बरे इस्लाम[स0अ0] ने इन गैर मसावियाना (गैर बराबरी) शराएत पर सुलह करके मक्के से वापसी इख्तियार की और दसूरे साल मुआहदे के मुताबिक मक्का की जियारत के लिये तशरीफ ले गए. मुशरिकीन ने तीन दिन के लिये शहर खाली कर दिया और रसूल[स0अ0] अपने साथियों समेत मक्के में दाखिल हुए मरासिमे जियारत बजा लाये और फिर हस्बे मुआहदा तीन दिन के बाद मक्के को छोड़ दिया और मदीने वापस चले गए।[2]

मगर मक्के वाले इसके बाद मुआहदे के दूसरे दफआत (दौर में) अदमे तअर्रूज वादे) पर कायम नहीं रहे।

मुआहदे में कबाएल (कबीले वालों) को जो इख्तियार दिया गया था कि वह जिसके साथ चाहें शरीक हो जायें। इसके मातहत कबील ए खुजाआ पैगम्बरे इस्लाम का हलीफ (तरफदार) हुआ था और बनी बक्र ने मुशरिकीन के साथ हलीफ (तरफदार) होने का एलान किया था चूँकि इन दोनों कबीलो में कदीम अदावत थी इसलिये दोनो हमेशा एक दूसरे के खिलाफ तय्यार रहते थे मगर अब जो उनमे हर एक एक जानिब मुआहदे (Argument) के रू से मुन्सलिक हो गया और यह तय पा गया कि दस बरस तक जानिबैन (दोनों तरफ के लोगों में) मे जंग न होगी तो खुजाआ के लोग मुतमइन हो गए। उन्होंने असलेहे जिस्म से उतार दिये और जंग की तय्यारियाँ तर्क कर दीं। बनी बक्र ने इस मौके को गनीमत समझा और बनी खुजाआ पर इस वक्त जब कि वह एक पानी चश्मे के किनारे मुकीम थे हमला कर दिया और बहुत से लोगों को कत्ल कर डाला।[3]

कुरैश के आदमियों ने भी ऐलानिया नहीं तो खुफिया बनी बक्र को मदद पहुँचाई और वह भी खुजाआ की तबाही के शरीक हुए।

मजबूरन कबील ए खुजाआ का एक आदमी जिसका नाम अम्र बिन सालिम था फरयाद करता हुआ मदीने गया और उस वक्त जब पैगम्बरे खुदा[स0अ0] असहाब के दरमियान मस्जिद मे तशरीफ रखते थे उसने इन्तेहाई

---

[1] तबरी जि/3, पेज/79–80

[2] इब्ने हिशाम जि 2 पेज 249–250 तबरी जि 3 पेज 100-101 बुखारी जि 3 पेज 36 मुस्लिम जि 2 पेज 105

[3] इब्ने हेशाम जि/2, पेज/200, तबरी जि/3, पेज/111

दर्द अन्गेज अशआर में अपने कबीले की रूदादे गम सुनाई जिसके आखिर में हस्बे जैल मजमून नज्म किया गया था

''ऐ खुदा के रसूल[स0अ0]। आपको मालूम हो कि कुरैश ने आपसे अहद शिकनी (वादा तोडना) की बनी बक्र ने हमारे कबीले पर चश्मे के किनारे कमीनगाह से हमला कर दिया। वह समझते थे कि हमारा कोई फरयाद रस नहीं है। अगर हम जग के लिये तय्यार होते तो उनकी क्या मजाल थी कि वह हमसे मुकाबला करते। वह तादाद में भी कम और ताकत में भी हमारे मुकाबले मे हमेशा सुबुक साबित हुए। मगर हम तो नमाजे शब में मसरूफ थे। उन्होने रूकू व सुजूद की हालत मे आकर हम को कत्ल कर दिया।''

इन अशआर को पढने के दौरान मे आपकी हमदर्दी के तअस्सुरात इतने शदीद हो गए थे कि आपने जवाब मे कोई तवील कलाम सुनने के इन्तेजार की जहमत भी देना न चाही और अशआर खत्म होते ही आपकी जबान से जो जुमला निकला वह यह था कि ''कद नसरता या अम्र बिन सालिम'' (अन्करीब अम्र बिन सालिम की मदद होगी) इसके नतीजे में आप इतमामे हुज्जत के दरमियान कुछ मराहिल तय करने के बाद मुसलमानों को लेकर मक्क-ए-मुअज्जेमा की तरफ रवाना हो गए। अब तेवर बदले हुए थे। मुशरकीन में ताकते मुकाबला तो अब थी ही नही। उन्होने हथियार डाल देने मुनासिब समझे और इसी मजबूरी के आलम में अबू सुफियान ने भी जाहरी तौर पर इस्लाम कुबूल कर लिया जिसका वाकेया यह है कि अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब और अबू सुफियान मे पुराने जमाने की दोस्ती थी। इस रात को जब रसूल[स0अ0] मक्के के करीब पहुच चुके थे और मुशरिकीन पर हिरास (खौफ) छाया हुआ था। अबू सुफियान चन्द आदमियों के साथ रसूले खुदा की नक्लो हरकत का हाल मालूम करने के लिये शहर से बाहर निकला। इसी वक्त अब्बास इस फिक्र मे निकले थे कि अगर कुरैश ने पैगम्बरे खुदा की मुखालिफत बरकरार रखी तो यह सब आज मारे जायेगे। अबू सुफियान को वहाँ पा कर उन्होंने कहा, कुछ खबर है? रसूल[स0अ0] दस हजार मुसलमानों की जमईयत (गिरोह) के साथ आये हैं, तुम उनका मुकाबला हरगिज नहीं कर सकते। अबू सुफियान ने कहा फिर आपकी क्या राय है? मुझे क्या करना चाहिए? उन्होने कहा। आओ मेरे साथ ऊँट पर बैठ जाओ और रसूल[स0अ0] के पास चल कर अमान हासिल कर लो वरना अगर तुम उनके हाथ आगए तो बगैर कत्ल किये न छोडेगे अबू सुफियान को यह जरिया गनीमत मालूम हुआ

वह नाके (ऊँट) पर पीछे बैठ गया और अब्बास उसे लिये हुए पैगम्बर[स०अ०] के पास हाजिर हुए। रसूले खुदा से उसके लिये अमान चाही पैगम्बर[स०अ०] ने फरमाया कि अच्छा इस वक्त अमान है। सुबह को उन्हे फिर मेरे पास लाईयेगा। हस्बे हुक्म सुबह को अब्बास ने अबू सुफियान को हाजिर किया। हजरत[स०अ०] ने उसको इस्लाम की दावत दी वह पसो पेश करने लगा। अब्बास ने कहा इस्लाम कुबूल करो नही तो जान की खैर नहीं। यह सुन कर अबू सुफियान ने इस्लाम कुबूल कर लिया।[1]

बुखारी की रिवायत से जाहिर होता है कि अबू सुफियान और उसके साथी जब मालूमात हासिल करने बाहर निकले तो इत्तेफाक से लश्करे इस्लाम के पहरे दारो के हाथों मे गिरफ्तार हो गए और रसूल[स०अ०] की खिदमत में हाजिर किये गए। इस वक्त अबू सुफियान ने इस्लाम कुबूल किया।[2]

पैगम्बरे खुदा[स०अ०] की यह वुसअते कल्बी थी कि आपने अबू सुफियान की न सिर्फ जान बख्शी फरमाई बल्कि एलान कर दिया कि जो अबू सुफियान के घर में पनाह ले ले उसे भी अमान है और जो मस्जिदुल हराम (काबा) में दाखिल हो जाये उसे अमान है और जो अपने घर का दरवाजा बन्द करके बैठ जाये वह भी अमान में है।[3]

दूसरी रिवायत में मस्जिदुल हराम (काबे) में दाखले के बजाये यह है कि जो हथियार डाल दे उसे अमान है।[4] और मक्के में दाखिल होने के बाद तो आपने सब ही की जान बख्शी कर दी। आपने मक्के के आदमियों से जो आपके सामने थे पूछा क्यों तुम्हारा क्या खयाल है मैं तुम्हारे साथ क्या सुलूक करूँगा? उन्होने कहा हमें नेकी ही का गुमान है। आप हमारे फय्याज भाई हैं और फय्याज भाई के बेटे हैं। फरमाया 'اذهبوا فانتم الطلقاء' 'जाओ तुम सबको मैंने छोड़ दिया।[5]

उसके बाद अबू सुफियान की बीवी हिन्द ने भी जिसके इन्तेकामी जजबात की तस्वीर जगे ओहद में सामने आ चुकी है इस्लाम कुबूल किया और जितने

---

[1] तबरी जि/3, पेज/116
[2] बुखारी जि/3, पेज/29
[3] तबरी जि/3, पेज/116
[4] सही मुस्लिम जि/2, पेज/104
[5] तबरी जि 3, पेज 120.

सख्त और मुतअस्सिब (कट्टर) एकाबिर (सरदार) कुरैश उस वक्त बाकी थे सब ही मुसलमान हो गए।[1]

मगर मजकूरा (ऊपर बयान किए हुए) वाकेयात से हर इन्सान यह सोचने पर मजबूर है कि बेबस हो जाने के बाद आदमी सर झुका सकता है हाथ रोक सकता है हथियार डाल सकता है जबान बन्द कर सकता है लेकिन अपने दिल मे तब्दीली नहीं पैदा कर सकता। अपने कल्ब में यकीन की सिफत पैदा नहीं कर सकता। और अपनी नफरत को मोहब्बत से तब्दील नहीं कर सकता वह नफरत व दुश्मनी जो उन हुदूद तक पहुँच चुकी थी जिनका मुजाहरा गुजिश्ता वाकेयात से हो चुका है क्या इस सबके बाद मोहब्बत व अकीदत से तब्दीली हो सकती है? आम उसूले फितरत और वाकेयात की रफतार के मुताबिक यह बात गैर मुमकिन मालूम होती है। आम फितरत के मुताबिक सिर्फ इतना समझा जा सकता है कि वह दुश्मन जो अब तक फुन्कारे मारते हुए अजदहे की तरह सामने मौजूद था अब मारे आस्तीन(आस्तीन का साँप) बन कर खुफिया रीशा दवानियो (साजिश रचने लगे या मुनाफिकत) के लिये आजाद हो गया और कोई शुबह नहीं कि दुश्मन मौजूदा सूरत मे पहली सूरत से ज्यादा खतरनाक साबित हो सकता है यही खयाल था कि उनके बारे में इस्लाम के नक्काद (इस्लाम की परख रखने वाले) हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] का। आपने फरमाया 'مااسلموا ولاكن استسلموا'। "यह लोग हकीकतन इस्लाम नहीं लाये थे बल्कि इस्लाम के सामने उन्होंने हथियार डाल दिये थे और बस।"

[1] तबरी जि/3, पेज/121

पाँचवाँ बाब

हुसैन बिन अली[अ०स०] की विलादत और इब्तेदाई ज़िन्दगी

सन3 हिजरी (से) सन 11 हिजरी

हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स०अ०] को मक्के से हिजरत करके मदीने में आये हुए तीसरा बरस था।[1] कि 5 शाबान को हुसैन बिन अली की विलादत हुई [2]

हजरत फातिमा जहरा[स०अ०] अपने पिदरे बुजुर्गवार रिसालतमाब की खिदमत में मौलूद को लेकर हाजिर हुईं। हजरत ने हुसैन नाम रखा और एक मेढे (भेड) की कुर्बानी के साथ अकीका किया।[3]

अब पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] की गोद जो इस्लाम की तरबियत का गहवारा थी उन दो बच्चों की परवरिश का मरकज बनी, एक हसन और दूसरे हुसैन[अ०स०]।

उनकी आँखों के सामने एक तरफ नाना का उसव ए हसना (नेक सीरत) था जो बानिये इस्लाम थे दूसरी तरफ बाप जो मुजाहिद व मुहाफिजे इस्लाम थे और तीसरी तरफ माँ जो तब्क ए ख्वातीन के लिये तालीमाते पैगम्बर[स०अ०] की अमली तरजुमान बनने के लिये पैदा हुई थी। ब कौल इकबाल

मजरये तस्लीम रा हासिल बतूल
मादराँ रा उसव–ए कामिल बतूल

तरजुमा मस्जिद मे पाँचों वक्त नमाजे जमाअत पैगम्बर के बसीरत आफरीं मवाएज (वाज) और खुत्बे, मुसलमानों का जौक व शौक और जोशो खरोश और घर में रात दिन इबादत व जिक्रे इलाही की आवाजें तकबीर की सदायें वही की आयतें, गजवात (जगें) के तजकेरे इस्लाम को तरक्की देने के मशवरे और या फिर गरीबों की खबरगीरी कमजोरो की दस्तगीरी और मजलूमों की

---

[1] काफी जि० १ पेज 394
[2] मकातिलुत तालिबीन पेज/54, इरशाद
[3] इरशाद

दादरसी बस हर वक्त यही जिक्र है यही फिक्र। यही किस्से हैं और यही कहानियाँ एक तरफ फितरत के मखसूस अतिये थे दूसरी जानिब यह नूरानी और रूहानी माहौल और इस पर तरबियते पैगम्बर ऐसे बलन्द मुअल्लिम की जिनका मकसदे रिसालत ही कुरआन के एलान के मुताबिक तज़किय–ए–नुफूस (दिलों की पाकीज़गी) और तालीमे किताब व हिकमत था।[1] और आपने खुद भी ऐलान किया था कि मकारिमे अखलाक की तकमील मेरा असली नसबुल ऐन (मकसद) है फिर क्योंकर मुमकिन था कि रसूल अपने अहलेबैत की तरबियत में इस फर्ज को नजर अन्दाज़ कर देते जो ब–हैसियते मुअल्लिमे (उस्ताद) अखलाक के ब–हैसियते बुज़ुर्ग खानदान के और ब हैसियते एक पैगम्बर के आप पर आएद होता था। चुनानचे हजरत ने इस कमसिनी ही के आलम में इन बच्चों को अपने अखलाक व औसाफ का नमूना बना दिया और उन आईनों मे जो कुदरत की तरफ से कमाल का जौहर लेकर आये थे अपनी सीरत का पूरा अक्स उतार दिया।

उन्हीं जात व सिफात की मखसूस बलन्दियों का यह नतीजा था कि रसूल[स०अ०] इन अपने नवासों के साथ गैर मामूली मोहब्बत रखते थे जिसके मुज़ाहरात (इजहार) तारीख और हदीस की किताबों में यकसाँ तौर पर दर्ज हैं इसके अलावा आप दूसरों को भी इनसे मुहब्बत की ताकीद फरमाते थे। आपका कौल था कि जिसने हसन[अ०स०] व हुसैन[अ०स०] से मुहब्बत रखी, उसने मुझ से मुहब्बत रखी और जिसने उनको दुश्मन रखा उसने मुझे दुश्मन रखा।[2] आप अल्लाह को गवाह करते थे कि मैं इनसे इन्तेहाई मुहब्बत करता हूँ[3] मगर इन तमाम बातो के साथ साथ हुसैन[अ०स०] अपने नाना की बलन्द सीरत, फराएज के बारे में एहतिमाम और इस्लाम के मुतअल्लिक आपके इन्हेमाक (लगन) को देखते हुए यह मुशाहिदा करते थे कि रसूल अल्लाह हमको बहुत चाहते हैं। मगर हमसे ज्यादा आप अपने दीन यानी इस्लाम और उसके आईन व शरीअत को चाहते हैं। इसलिये अगर इस दीन और शरीअत पर कोई वक्त पडे तो पैगम्बर तय्यार होंगे कि हम को इस पर निसार कर दे

सन 10 हिजरी मे नजरान (यमन) के ईसाइयो के साथ एक तरह के रूहानी मुकाबले का मौका आया जिसका नाम "मुबाहला" है। यानी दोनों

---

[1] कुर्आने करीम सूरए बकरा आयत/129 व 151, आले इमरान आयत 165, जुमा आयत/2

[2] सुनन इब्ने माजा जि/1 पेज/33

[3] सही मुस्लिम जि/2, पेज/282

फरीक (दोनों तरफ के लोग) अल्लाह से दुआ करे कि झूठे पर अजाब नाजिल हो, इस मौके पर रसूल[स0अ0] तशरीफ ले गए तो इस तरह कि हाथ मे अली इब्ने अबी तालिब[अ0स0] का हाथ था। हसन व हुसैन[अ0स0] आगे आगे थे और फातिमा जहरा[स0अ0] पीछे आ रही थीं। नजरान वाले यह नूरानी मन्जर देखकर मरऊब (डरे) हुए और खिराज (टैक्स) देने के लिये आमादा हो गए।[1] जाहिर है कि पैगम्बरे खुदा इस मुहिम को तन्हा सर कर सकते थे। फिर कुरआन की तसरीह[2] (वाजाहत) के मुताबिक रसूल अल्लाह[स0अ0] अपने अहलेबैत को साथ ले जाने पर क्यों मामूर हुए? इसका मकसद एक तरफ हक के कामिल नुमाइन्दों का खल्क (लोगो) से तआरूफ था तो दूसरी तरफ तालीम व तरबियत का अन्दाजा भी था। गोया अभी से खानदाने रसूल की इन हस्तियो पर जिम्मेदारी का बार डाला जा रहा था कि जरूरत के वक्त हिफाजते इस्लाम की इन ही से उम्मीद है। रसूल[स0अ0] इन मे से एक एक का हाथ पकड कर कह रहे थे कि देखो आज तो मैं खुद मौजूद हूँ। मैं तुमको अपने साथ लिये जा रहा हूँ लेकिन अगर किसी वक्त मे मैं मौजूद न हूँ तो तुम इसी तरह हिफाजते इस्लाम के लिये निकल खडे होना जिस तरह मैं निकला हूँ। आज के इस अमल से यह भी वाजेह हो गया कि इस्लाम की नुसरत और खिदमत के मौके पर मर्द औरत जवान, बच्चा कोई मुस्तस्ना (अलग) नही हो सकता। और जरूरत पर हर एक को इस मकसद मे सर्फ होना लाजिम है सबसे कमसिन इस जमाअत मे हुसैन[अ0स0] थे और ऐसा मालूम हो रहा है कि जैसे इस मौके पर साथ लाना कुदरत से इस मुस्तक्बिल (Future) की तमहीद है कि उन्हीं को अम्ली तौर पर दोबारा इस मिसाल के पेश करने का मौका मिलेगा जिसे आज पेश किया गया है।

हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स0अ0] से बढ़कर कोई शख्स जौहर शनास (खूबियों का जानने वाला) नही हो सकता था आप जानते थे कि आप के तालीमात की हिफाजत किन के जरिये से होगी। इसलिये मुखतलिफ सूरतो से अपनी उम्मत को हिदायत की कि मेरे अहलेबैत की पैरवी करते रहना। कभी फरमाया कि मैं तुम मे दो गिराँ कद्र चीजे छोडता हूँ। जब तक तुम इन से तमस्सुक (जुड) रखोगे गुमराही से महफूज रहोगे। इन मे से एक कुरआन है और दूसरे

[1] इरशाद, पेज/87
[2] सूरए आले इमरान आयत/61

मेरे अहलेबैत।[1] और कभी फरमाया कि मेरे अहलेबैत की मिसाल कश्ति–ए–नूह की सी है जो इस कश्ती पर सवार हुआ उसने निजात पाई और जो रूगर्दा (गुमराह) हो वह दरिया–ए हलाकत में गर्क हुआ।[2]

खुसूसियत के साथ अपने दोनों नवासो के बारे में कभी फरमाया "हसन[अ०स०] व हुसैन[अ०स०] जवानाने अहले जन्नत के सरदार हैं।"[3] इसका मतलब यही हो सकता है कि इन दोनों का किरदार इतना बलन्द है और रहेगा कि इनकी सीरते जिन्दगी की अमली हैसियत से तक्लीद ही (उनके दिखाए हुए रास्ते पर) रजा ए इलाही का सबब बन सकती है और कभी फरमाया कि 'यह दोनों मेरे फरजन्द इमाम (वाजिबुल इताअत) हैं ख्वाह खडे हो और ख्वाह बैठे।'[4] आयेगा एक मुस्तक्बिल जब एक इन में से सुलह करके बैठा होगा और एक जिहाद में खडा होगा। पैगम्बर इस्लाम[स०अ०] के इरशाद से दोनों के तर्जे अमल के अपनी अपनी जगह सही होने पर रौशनी पडेगी।

इसके साथ खास इमाम हुसैन[अ०स०] के बारे में जो हदीसे हैं उनमें से एक यह है कि हुसैन[अ०स०] मुझसे है और मैं हुसैन से हूं।"[5] यानी मेरा काम और मेरा नाम दुनिया में हुसैन[अ०स०] की ब–दौलत कायम रहेगा। इसके अलावा ब–कसरत हदीसें हैं जो फजाएल व मनाकिब की किताबों में दर्ज हैं।

अफसोस कि हुसैन के लिये इस लुत्फ व मोहब्बत बेपायाँ सूकून और इतमीनान की उम्र तूलानी नहीं हो सकी। अभी आपका सिन सात बरस का भी पूरा न हुआ था कि रबीउल अव्वल 11 हिजरी में [6]हजरत मोहम्मद मुस्तफा[स०अ०] की वफात हो गई और हुसैन रसूल अल्लाह[स०अ०] के साया–ए–आतफत (मुहब्बत) से महरूम हो गए।

---

[1] मुस्नद अहमद हम्बल
[2] मआरिफ इब्ने कुतैबा
[3] इब्ने माजा जि/1, पेज/29
[4] इरशाद पेज/204
[5] इब्ने माजा जि/2, पेज/33
[6] अल–काफी जि/1, पेज/275, तबरी जि/3, पेज/207

छठा बाब

इमाम हुसैन[अ०स०] की जिन्दगी का दूसरा दौर नाना की वफ़ात के बाद से बाप की शहादत तक।

सन11 हिजरी (से)सन 40 हिजरी

हजरत रसूल[स०अ०] की वफ़ात तमाम ख़ान्दान के लिये एक बड़ा रूह फ़रसा (दर्द भरा) हादिसा थी। आपके अखलाक व औसाफ़ ने दोस्त और दुश्मन के दिल को मुसख्खर (हमवार) कर लिया था इसलिये आप के दुनिया से उठ जाने का एहसास हर फ़र्दे बशर को था और इस्लामी गिरोह का हर फ़र्द जितना तअल्लुक पैगम्बर से रखता था, इस एतेबार से गैर मामूली तौर पर मुतअस्सिर हो रहा था।

फिर ख़ास अहलेबैत[अ०स०] के गम व अलम का अन्दाजा कहाँ किया जा सकता है। खुसूसन हुसैन[अ०स०] जिनके साथ पैगम्बर[स०अ०] की शफकत का अन्दाज ही एक निराला था वह नाना जो अपनी गोद में बिठाता था, सीने पर लिटाता था और काँधे पर चढ़ाता था, जो जरा सी भी खातिर शिकनी (तकलीफ़) हुसैन[अ०स०] की गवारा न करता था, आज हुसैन आँखें फिरा फिरा कर चारों तरफ़ देखते थे और वह शफीक व मेहरबान नाना नजर न आता था।

यह भी खुली हुई बात है कि पैगम्बर की हयात में उनकी गैर मामूली मोहब्बतों को देख कर नीज उनके उन मुतवातिर (लगातार) ऐलानात की वजह से कि जो मुझसे मुहब्बत रखता है उसे हुसैन से मुहब्बत करना चाहिये। आम मुसलमान जो भी रसूल के साथ अकीदत और मुहब्बत का दम भरते थे और उनके पसीने पर खून बहाने का दावा रखते थे पैगम्बर[स०अ०] के सामने उनके इन फरज़न्दों के साथ इन्तेहाई लतीफ तरीन जजबाते मुहब्बत व नियाजमन्दी का इजहार करते थे और अगर ज़रा सा भी उसमे कमी काशायबा पैदा होता था तो पैगम्बर की तेवरियों पर बल दिखाई देने लगते थे। एक खुला हुआ सुबूत इसका इस वाकेये से मिलता है कि जब रसूल हसने मुजतबा[अ०स०] को

काँधे पर सवार किये हुए थे और एक सहाबी ने कह दिया कि "ऐ साहब जादे कितना अच्छा मरकब है तुम्हारा।" रसूल[स०अ०] ने फौरन टोक दिया और फरमाया "यह सवार भी तो कितना अच्छा है।"[1] यह बाते ऐसी थी जिनके बाद मिजाजे नुबूअत में कुछ भी दरखोर (समझ) रखने वाले मुसलमान या आपके चश्मो अबरू पर चलने वाले नियाज मन्दान साहबजादों की खातिर दारी और उनके साथ इजहारे मोहब्बत मे जरा भी फरूगुजाश्त (कमी) करते। इस तरह यह कहना हरगिज मुबालिग़ा नहीं है कि उस दौर मे हुसैन एक चिराग़ थे जिसके गिर्द परवाने तवाफ करते थे या एक आफताब जिसके गिर्द सितारे चक्कर लगाते थे। अकीदत की एक दुनिया उनके कदमो पर निसार होती थी और मुहब्बत का एक आसमान था जो उनके सर पर साया फिगन (साया किये था) था मगर दुनिया एक हाल पर नहीं रहती। वह इन्केलाबात का मजमूआ है। आज वह मरकज जिसकी मेक़नातीसी (चुबकीय) कशिश दुनिया को जज्ब किये हुए थी क़ब्र में पहुंचा चुका था। वह एक क्या गया कि हुसैन की दुनिया बिल्कुल बदल गई वह माहौल भी बिल्कुल तब्दील हो गया जो आपके सामने रहा था। सुबह हुई और रसूल ने दरवाजे पर आकर आवाज दी[2] अस–सलात अस–सलात यानी उठो उठो नमाज का वक्त आ गया और फिर कुरआन की यह आयत[3] "إِنَّمَا يُرِيدُ اللَّهُ لِيُذْهِبَ عَنكُمُ الرِّجْسَ أَهْلَ الْبَيْتِ وَيُطَهِّرَكُمْ تَطْهِيرًا" पढ़ते थे (जो आयते ततहीर के नाम से मशहूर है।) "यानी अल्लाह को मन्जूर यही है कि ऐ अहले बैत तुमसे हर तरह की नजासत को दूर रखे और तुमको पाक रखे जो पाक रखने का हक़ है।" सब फौरन उठ बैठे बाप और भाई की तरह हुसैन ने भी फौरन वुजू किया। मस्जिद में पहुचे। मुसलमानों का इजतेमाअ् हुआ। पैगम्बर ने नमाज पढाई फिर जोहर अस्र, मगरिब और इशा हर वक्त यही समाँ नमाजों के बाद या पहले और जरूरत की सूरत में मुखतलिफ अवकात पर पैगम्बर[स०अ०] के खुत्बे। शरीयते इस्लाम की तालीम हासिल करने वालों का हुजूम, कबाएले अरब और सलातीने (हाकिम) दुनिया के वफूद(Deligation) और सुफरा (Ambasdars) का दौर, मुखतलिफ जमाअतों की सरगरमियो का तजकेरा और उसके मुदाफती इन्तेजामात (निमटने के तरीके) दीवानी और फौजदारी के मुकदमात का पेश होना, गवाहों के बयानात, बहस और जिरह और मुकदमात

---

[1]सवाएके महर्रेका पेज/83

[2]इस्तीआब जि/2 पेज/615

[3]सूरए अहजाब आयत/33

का फ़ैसला, मुजरिमों की सजायें, जकात व खुमुस और अमवाले गनीमत का आना, और मुकर्रर उसूल व कवाएद के मुताबिक तकसीम गरज यह कि दीन और दुनिया के तमाम मसाएल इस एक नुकते पर मजतमा नजर आते थे। हुसैन[अ०स०] अपने नाना के पास तकरीबन हर वक्त मौजूद रहते थे और आँख खोल कर इसी आलम से रूशनास हुए थे अब पैगम्बर की वफ़ात के बाद यह तमाम समाँ आँखो से ओझल हो गया। इन्केलाब और अजीमुश्शान इन्कलाब।

अफ़सोस है कि रसूल[स०अ०] की ख़िलाफ़त का मसअला इतना एख़्तिलाफ़ी बन गया कि आज तक उसकी बुनियाद पर शिया और सुन्नी का तफरेका कायम है इस किताब में जो वाकेया–ए–करबला को गैर निजाई (बगैर इख्तेलाफ के) तौर पर दुनिया के सामने पेश करने के लिये लिखी जा रही है इस पर बहस करना मन्जूर नही है न इन नागवार वाकेआत का कोई मुस्तकिल तजकिरा मकसूद है बहरहाल यह मुत्तफक अलैह तारीखी हकीकत है कि रसूल[स०अ०] के बाद कुछ अफरादे उम्मत ने मुत्तफिक हो कर सियासी इकतेदार खानदाने रसूल से हटा दिया है। इस इन्केलाब का लाजमी नतीजा यह था कि सरकारे रिसालत के बाद डेयूढ़ी की चहल पहल और रौनक सन्नाटे से तब्दील हो गई और वह माहौल जिसमें हुसैन[अ०स०] जिन्दगी बसर कर रहे थे एक दम बिल्कुल बदला हुआ नजर आया

हुसैन[अ०स०] माँ के पास जाते तो यह देखते कि सिवा अवकाते नमाज के हर वक्त गिरया व जारी से काम है कुछ दिन तक तो घर ही पर रोया करती थीं फिर अहले मदीना की इस शिकायत पर कि आपके नाला व शेवन (रोना पीटना) ने हम पर ख्वाब व खोर (खाना पीना) हराम कर दिया है, आप जन्नतुल बकीअ में चली जाती थीं और इस कब्रिस्तान में गिरया करती रहती थीं [1] हुसैन[अ०स०] बाप के पास आते तो यह देखते कि उन्होंने अहले ज़माना की बेरूखी को देखते हुए घर से निकलना और लोगों से मिलना जुलना तर्क कर दिया है आप हर वक्त एक गोशे में बैठे कुरआने मजीद के मुतफ़र्रिक अजजा (मुखतलिफ हिस्से) को असली तरतीब और शाने नुज़ूल के मुताबिक़ किताबी शक्ल में मुरत्तब करते रहते हैं और फरमाते हैं कि मैं ने अहद किया है कि अबा दोश पर न डालूँगा जब तक कि कुरआन जमा न कर लूँ [2] क्या इस सूरते हाल को देखकर हुसैन[अ०स०] का दिल न घुटता होगा। वह सोचते होंगे

---

[1]कशफ़ुल गुम्मा पेज/148

[2]सवाएके मुहर्रेका पेज/78

कि ऐ ख़ुदा यह कैसा अधेरा है जो एक दम हमारी आँखों के सामने छा गया है बहरहाल अपने बाप के तर्ज़े अमल मे यह नसबुल ऐन नुमायाँ पाया कि चाहे हालात कितने ही नासाजगार हों मगर हमें इस्लाम की खिदमत से हाथ नहीं उठाना चाहिये। हमारा और कुरआन का साथ है इसलिये कुरआन की हिफ़ाजत हमारा फ़र्ज़ है और इस फ़र्ज को किसी वक्त नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता।

हुसैन[अ०स०] ने यह भी देख लिया कि लोग मेरे बाप के पास आते हैं और वह उन्हें जोश दिलाना चाहते हैं कि आप इस्लामी हुकूमत के हुसूल के लिये कोशिश कीजिये जो वाकई आपका हक है। उठिये और हम आपकी इमदाद के लिये तय्यार हैं। उनमे सच्चे दोस्त भी हैं और नुमाइशी भी। एक तरफ रसूल के चचा अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब कहते हैं कि अपना हाथ बढ़ाओ, मैं तुम्हारी बैअत कर लूँ इसका मुसलमानों पर बड़ा असर पडेगा। और वह कहेंगे कि पैगम्बर के चचा ने उनके इब्ने अम (चचा के बेटे) की बैअत कर ली फिर किसी को उज्र न होगा और दसूरी तरफ बनी उमय्या का सरदार अबू सुफियान बिन हर्ब है और वह आकर कहता है कि कितने गजब की बात है कि आपके होते हुए अरब के एक रजील (पस्त) तरीन ख़ानदान ने ग़ल्बा हासिल कर लिया। ख़ुदा की कसम अगर आप चाहें तो मैं आपकी इमदाद के लिये मदीने को सवार और प्यादों से भर दूँ। मगर चूँकि आपकी जात जज्बात से बलन्द और नफसानियत के लौस से पाक थी और आप इस्लाम का हकीकी दर्द अपने सीने मे रखते थे इसलिये आप अपना हक समझते हुए भी उन लोगों के कहने में नही आये और आपने अबू सुफियसान को इस तरह डॉंट कर जवाब दिया कि 'ख़ुदा की क़सम तुम हमेशा इस्लाम और अहले इस्लाम के दुश्मन रहे हो।'[1] यह इसका अमली इजहार था कि चाहे हमारे हुकूक हाथ से जायें। हमारे शख़्सी मफाद को नुकसान पहुचे मगर हमको हमेशा इज्तेमाई और इस्लामी मफाद पर नजर रखना चाहिये और इसके लिये हर तरह की कुर्बानी के लिये तय्यार रहना चाहिये। यह नतीजा भी इस वाकेये से जाहिर था कि अबू सुफ़ियान और उसके खानदान के लोगो का इस्लाम सिर्फ नुमाइशी हैसियत रखता है और उनसे इस्लाम के मुतअल्लिक हमेशा नुक़सान रसानी का अन्देशा मौजूद है। इसीके साथ यह भी कि इस्लाम को उसके खुले हुए दुश्मनों

---

[1] इरशाद पेज 100 इस्तीआब जि/2 पेज 7 0. सवाएके मुहर्रका पेज/37 तारीखुल खुलफा पेज 45 तबरी जि/3 पेज/202–203

के हाथो इतना नुकसान नहीं पहुच सकता था जितना इन नुमाइशी दोस्तों से पहुँच सकता है इसलिये अगर इस्लाम का तहफ्फुज करना है तो हमेशा इस जमाअत की नक़्लो हरकत पर नजर रखना चाहिये और कोई मौका न आने देना चाहिये कि यह अपने मक़सद में कामयाब हो जाये।

अफसोस है कि रसूल[स0अ0] की वफ़ात से चन्द ही महीनों के बाद गूनागूँ (तरह तरह) मसाएब व तकालीफ उठाने के साथ हुसैन[अ0स0] से उनकी बुजुर्ग मर्तबा माँ भी जुदा हो गईं। हजरत फ़ातिमा जहरा[स0अ0] की वफात से अली इब्ने अबी तालिब[अ0स0] और भी दिल शिकस्ता हो गए और हसन व हुसैन[अ0स0] के लिये महरो मोहब्बत की दुनिया बड़ी हद तक वीरान नजर आने लगी। अब उनके लिये गहवार–ए–शफकत व तरबियत सिर्फ एक था और वह उनके बुजुर्ग मर्तबा बाप की जात सात बरस की उम्र से लेकर छत्तीस साल की उम्र तक उन्नतीस साल बराबर हुसैन[अ0स0] अपने वही कमालात के मावरा हजरत अली इब्ने अबी तालिब[अ0स0] ऐसे हकीमे इलाही आलिमे रब्बानी मुअल्लिमे अखलाके इन्सानी और मजमूअ–ए–फजाएले नफसानी के इल्मी और अमली फ़ुयूज (फ़ाएदे) से बहरावर (हासिल करते रहे) होते रहे और यही वह जमाना है जिसमे आम निजामे असबाब की दुनिया में इन्सानियत की हकीकी तामीर होती है इस उम्र के आगाज से बुलूग की मुद्दत तक अवसाफ व मलकात (कमालात) की दाग बेलें पड़ती हैं। नौजवानी के जमाने मे उन पर दीवारें उठती हैं और जवानी के इखतेताम तक यह इमारत मुकम्मल होकर उस पर नक्शो निगार बन जाते हैं और वह साजो सामान औरशीशा आलात से भी आरास्ता हो जाती है हुसैन[अ0स0] के लिये इन तमाम मनाजिल की जाहरी तकमील अली इब्ने अबी तालिब[अ0स0] की निगरानी में हो रही थी

हुसैन ने देखा कि उनके वालिदे बुजुर्गवार अली इब्ने अबी तालिब[अ0स0] बावजूदेकि जमाने की बेतवज्जोही, हक फरामोशी और सर्दमुहरी से कबीदा खातिर (गमजदा) जरूर थे लेकिन जब किसी इलमी मसले में किसी मुहिम के मुतअल्लिक मशवरे में किसी मुकदमे के फैसले मे उनकी जरूरत पड जाती है और उनसे इमदाद की ख्वाहिश की जाती है तो वह फौरन बिला उज्र इमदाद करने के लिये तय्यार हो जाते हैं। यह जजबा इन्सानो के रवैये के बिल्कुल ख़िलाफ है। वह अगर किसी मन्सब के हुसूल से जिसके हक़दार हो महरूम कर दिये जाये तो वह मुतअल्लिका अफ़राद से खफ़ा हो कर अलग हो जायेगे और अगर इस मन्सब से तअल्लुक रखने वाले मुआमिलात में उनसे मदद तलब

की जाये तो वह अपनी दिली रंजिश की बिना पर तआउन से इन्कार कर देंगे इससे अहलेबैत[अ0स0] के हर फ़र्द के सामने यह नमूना पेश हो रहा था कि हम चाहे मुसलमानों के मुआमिलात से कितने ही गैर मुतअल्लिक़ कर दिये जाये मगर हमे कभी अपने को गैर मुतअल्लिक समझना नही चाहिये। हमं हर ऐसे मौके का मुन्तजिर रहना चाहिए कि जिस वक्त हमारे जरिये से इस्लामी मफाद को हकीकी फाएदा पहुच सकता हो तो उस मौके पर हमें अपने फर्ज को अन्जाम देना चाहिये और इस्लाम की ख़िदमत को अपना नसबुल ऐन समझना चाहिये

तीसरे खलीफा के इन्तेखाब के मौके पर ऐसा वक्त आया कि हजरत अली बिन अबी तालिब[अ0स0] तख्ते हुकूमत को हासिल कर लेते जबकि खलीफा–ए–दोम ने अपने इन्तेकाल के वक्त छे आदमियों की कमेटी बना कर खिलाफत को उनमें मुन्हसिर कर दिया और उनमे से एक हजरत अली बिन अबी तालिब[अ0स0] को भी करार दिया था तमाम दूसरे अरकान हजरत अली[अ0स0] को खिलाफत के मन्सब पर नामजद करने के लिये तय्यार थे ब–शर्तेकि आप किताब व सुन्नत के अलावा शैखेन (अबू बकर व उमर) की सीरत पर अमल का भी अहद करें[1] मगर हुसैन[अ0स0] ने देखा कि उनके हकीकत परवर बलन्द हिम्मत और मुस्तगनी तबियत (फराग़ दिली) बाप ने इस मौके को अपने हाथ से दे दिया। इस बिना पर कि वह किताब और सुन्नत पर अमल के अलावा किसी दूसरीशर्त को मानने के लिये तय्यार नहीं हुए जिसके नतीजे में वह जाहरी खिलाफत का हुमा (परिन्दा) जो उनके सरे हुमाईयूँ (हुकूमत पाने वाले) पर चक्कर लगा रहा था एक तवील अरसे तक के लिये उनसे अलाहेदा हो गया।

हुसैन[अ0स0] ने इस में एक बड़े अहम सबक का अमली नमूना देखा जिस पर उनके आईन्दा एकदामात की बुनियाद क़ायम थी और वह यह कि शरीअत और मुसलमान हुक्मरानों की सीरत दो अलग अलग चीजें हैं ऐसा नही है कि जो हुकूमते वक्त का आईन और उसका अमल हो उसको शरीअत की रू से भी सही मानना पड़े बल्कि शरीअत के मुस्तकिल उसूल हैं जिन्हें मुक्तदा (पेशवा के तौर पर) होना चाहिये और हुकूमत के अमल को उनका मातहत होना चाहिये और जब ऐसा न हो तो एक मुसलमान का फर्ज है कि वह शरीअत को तस्लीम करे और हुक्काम के अमल को तसलीम न करे और अगर

---

[1] तबरी जि/5, पेज, 40

किसी वक्त ऐसा मौका पेश आये कि हुक्काम का अमल खुल्लम खुल्ला शरीअत के ख़िलाफ़ और आईने मजहब में बुनियादी तब्दीली का बाइस हो तो मुसलमान का फर्ज है कि वह शरीअत की हिमायत में कमर बस्ता हो जाये और इसके लिये ब–शर्ते जरूरत किसी कुर्बानी से दरेग न करे इसी दौर में सन 31 हिजरी में यज्द जुर्द बादशाह ईरान का सरासिमगी और कस्मपुरसी के आलम में एक ईरानी ही के हाथ से ख़ातिमा हुआ [1] जिसके बाद शाहजादियाँ ब–हैसियते कैदी के मदीने भेजी गई और इस मौके पर जबकि गनीम मुल्क की शाहज़दियों को कैद देखकर बहुत से आदमी खुश हो रहे होंगे हजरत अली और उनके आली दिमाग शाहजादा हुसैन ने उन्हें कनीजी की जिल्लत से बचा ही नही लिया बल्कि उन्हें ख़ानदाने रसूल के घर मे मलेका का ताज पहना दिया। चुनानचे वह शाहजादी जिनका नाम शहरबानो या शाह जमान मशहूर है हुसैन[अ०स०] के अक्द में आई और इस तरह उन्होंने इस्लाम की इस तालीम को जिन्दा रखा जो मुल्की तफ़रीक़ को मिटा देने की अलमबरदार है।

तीसरे खलीफा उसमान के दौर का आखरी हिस्सा बडी बे इतमिनानी और कशमकश में गुजरा मुसलमानों को उनसे शिकायतें पैदा हुई और आखिर एक़दामात की हद तक पहुचीं मगर हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] ने उन एक़दामात को तक़वियत पहुचाने के बजाये पूरी कोशिश केसाथ उनको रोकने की सई (कोशिश) फरमाई। कई मर्तबा बीच मे पड कर सुलह कराई। मुखालिफ़ जमाअत की शिकायात दूर कराई और उसे समझा बुझा कर मुन्तशिर किया [2] मगर मरवान जो उस दौर में ''कातिब' [3] के ओहदे पर था उसकी शरारतों ने इन कोशिशों को कामयाब न होने दिया और आखिर इस जमाअत ने हाकिमे वक्त के मकान का मुहासेरा कर लिया।[4] उस वक्त भी हजरत अली इब्ने अबी तालिब[अ०स०] ने यह हमदर्दी की कि जब आपको मालूम हुआ कि मुहासिरा करने वालो ने पानी बन्द कर दिया है तो आपने हसन और हुसैन[अ०स०] अपने दोनों फरजन्दों को कुछ मश्कों के साथ रवाना किया और उन दोनों साहबजादों ने अपने को खतरे में डाल कर पानी कसरे हुकूमत के अन्दर पहुँचा दिया बहर हाल नजमे हुकूमत का पैमाना लबरेज़ था और पानी सर से ऊँचा

---

[1]तबरी जि 5 पेज, 71

[2]तबरी जि/5, पेज 96–97–110–117 व 122

[3]कातिब का दर्जा उस दौर में 'वजीर' का सा होता था वह हाकिम का राजदार, मुशीरकार, उसकी मोहर का इमानतदार और उसकी तरफ से खत व किताबत का जिम्मादार होता था

[4]अल वश यल किताब पेज/14, तबरी जि/5. पेज/11 –112

हो चुका था। हमला आवर जमाअत ने दारूल हुकूमत की सरजमीन को खलीफा के खून से रगीन और उनके रिशता ए हयात को कता कर दिया। हैरत का अम्र है कि इतना बडा मुस्लिम अकसरियत का मुसल्लमुस सुबूत (कामिल) फरमाँरवा खुद अपने दारूस सलतनत में एक महीना उन्नीस दिन महसूर रहा।[1] और आखिर तलवार के घाट उतार दिया गया और इस दारूस सलतनत के लोगों में जो पैगम्बर का दारूल हिजरत (हिजरत का घर) और मुसलमानों का सबसे बड़ा मरकज था और जहाँ के अहले हल्लो अकद (असर वाले) ख़लीफा गरी के काम का अपने को वाहिद जिम्मेदार समझते थे कोई जोशे मकाविमत (बदले का जज्बा) पैदा न हुआ। इससे ज्यादा तअज्जुब की यह बात है कि लाश तीन दिन तक बे गोरो कफन रही।[2] और आम्म–ए–मुसलिमीन (आम मुसलमान) दफन की तरफ मुतवज्जा नहीं हुए आख़िर में रातो रात "हश कौकब" नाम के मकाम पर जो मुसलमानों के कब्रिस्तान से अलग था सिपुर्द खाक किये गए[3]

इस इबरत खेज मुरक्के से एक हस्सास इन्सान किस कद्र अहम नताएज अख्ज़ (ले) कर सकता था, सलतनते दुनिया की बे सेबाती (मिटने वाली), जमहूर (अवाम) की वफादारी पर अदम एतेमाद (भरोसा न होना) नीज मरवान और दूसरे बनी उमय्या के हाथों इस्लाम के शीराजे की अबतरी (तबाही) यह सब कुछ हुसैन[अ०स०] ने देखा और अपनी आइन्दा जिन्दगी के सबसे अहम कारनामे की बुनियादो को मुस्तहकम (मजबूत) बनाने में उनमे से हर एक पहलू का लिहाज रखा जिसके सुनने और समझने के लिये आपको मुस्तकबिल का इन्तेजार करना चाहिये

हालात बहुत तेजी से तब्दील होते हैं और इन हालात के लिहाज़ से जमहूर के रूजहानात भी बदलते रहते हैं। इस हगामी इन्केलाब के नतीजे में मुसलमानों की आँखें खुलीं और उनके इन्तेखाब की निगाहें हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के चेहरे पर जम गईं उन्होंने आपके पास आकर खिलाफते इस्लामी की जिम्मेदारी को सभालने की दरख्वास्त की यह बात हैरत में डालने वाली थी कि हजरत अली बा–वजूदकि इसके पहले हमेशा खल्के खुदा की हिदायत और उनके नज़्मो नस्क की इस्लाह के लिये बे चैन और

---

[1]तबरी जि/5, पेज/122

[2]तबरी जि/5, पेज, 143

[3]तबरी जि/5, पेज/143–144

खिलाफ़त रसूल[स०अ०] के लिये अपने इस्तेहकाक (हक) का ऐलान फरमाते रहे थे आज मुसलमानो की इस मुत्तफ़ेका मुलतजियाना पेशकश को मुस्तरद फरमा रहे थे।[1] और इसके लिये किसी तरह तय्यार नहीं थे। हुसैन[अ०स०] खूब जानते थे कि इसका सबब क्या है? हुकमूत और उम्माले हुकूमत (हुकूमत के मुलाजिम) हुकूमत के रवैये की ब–दौलत मुसलमानो की आदतें बिगड़ चुकी थीं और जाविय–ए–निगाह (नजरया) मे तब्दीली हो चुकी थी इस्लामी हुकूमत बड़ी हद तक दुनयवी एकतेदारे सलतनत के क़ालिब (दिलों) में ढल गई थी और किसरवियत व कैसरियत (बादशाहत) के आसार उसमें नमूदार हो गए थे। यह चीज़ किसी तरह उस सादगी और मसावात के साथ साजगार न थी जिसे पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] ने दुनिया मे फैलाया था और जिस पर हज़रत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] निहायत सख्ती के साथ आमिल (पाबन्द) थे इसलिये हजरत खूब जानते थे कि अगर मैं इस वक्त हुकूमत की बाग को सभालूँगा तो या तो मुझे जमाने के साथ साज करके हवा के रूख पर चलना पडेगा और इसके लिये मेरा ज़मीर मुझको इजाज़त नहीं दे सकता और या मैं ज़माने के साथ जंग करूँगा बेशक अगर मैं जिम्मेदारी अपने सर ले लूँ तो मुझे ऐसा ही करना चाहिये मगर उसका नतीजा यह होगा कि ममलिकत में खलफिशार (उथल पुथल) रहेगा और ब हैसियत एक हाकिम के मेरा दौर ना कामियाब समझा जायेगा। आपने पूरे तौर पर इन्कार किया मगर मुसलमानो का इसरार इतमामे हुज्जत की सूरत इख्तियार कर गया यानी वह अली बिन अबी तालिब[अ०स०] पर यह जिम्मेदारी आयद करने लगे कि दुनिया आपसे हिदायत व इस्लाह की तालिब है और आप इससे गुरेज करते हैं। एक दाईये हक़ (हक़ के नुमाइन्दे) को यह भी ज़ेबा नही है कि वह खल्के खुदा पर बे एतेमादी की आड़ पकड़ कर उनकी दरख्वास्त को ठुकराता रहे और उनकी हिदायत की जिम्मेदारी को पूरा कर के उन पर हुज्जत तमाम न करे। मजबूरन हजरत अली[अ०स०] को यह जिम्मेदारी कुबूल फरमाना पड़ी। बेशक आपने दुनिया को धोखे में मुबतिला न रखने के लिये साफ ऐलान कर दिया कि देखो जब तुम जिम्मेदारी को मेरे सिपुर्द कर रहे हो तो मैं जो ठीक रास्ता समझूँगा उसी पर तुम्हे चलाऊँगा और किसी के एतेराज और नुक्ता चीनी की परवा न करूँगा।[2] लोगों ने इसका इकरार करके जिलहिज्जा सन 35 हिजरी में अली बिन अबी

---

[1] तबरी जि / 5, पंज / 152

[2] तबरी जि 5, पंज 156

तालिब[अ०स०] की बैअत की और खलीफतुल मुसलिमीन तस्लीम किये गए। इससे एक तरफ यह साबित किया गया कि दुनिया की फिजा अब अहलेबैत[अ०स०] की हुकूमत व इक़्तेदार के लिये मौज़ू नहीं है। दूसरी तरफ यह कि अगर अल्लाह के बन्दे वफादारी के अहद के साथ रहनुमाई के तालिब हों तो जब तक हुज्जत उन पर पुरे तौर से तमाम न हो जाये हमारा फर्ज यह है कि हम ब जाहिर उनके अहदो पैमान को बावर (वाजेह) करें और उनकी ख्वाहिशे रहनुमाई की तकमील के लिये क़दम आगे बढ़ायें

खिलाफ़त की जिम्मेदारी क़ुबूल करने के बाद वही हुआ जो हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] पहले से समझे हुए थे कि दुनिया आपके तालीमात की पैरवी के लिये तय्यार नहीं हुई। कुछ लोगो ने तो बैअत से पहलूतही की जैसे उसामा बिन जैद हस्सान बिन साबित अब्दुल्लाह बिन उमर और सअद बिन अबी वेक़ास वग़ैरह। हजरत अली[अ०स०] ने उनके साथ कोई सख़्ती नहीं की हालांकि तमाम मुसलमानों के नुकत ए नजर से आप की बैअत मुकम्मल हो चुकी थी और इसलिये उनका बैअत से इन्हेराफ उन सबके नजदीक ग़लत था मगर जब तक वह अमली तौर से कोई मुखालिफत न करते और इस निजाम मे खलल न डालते, जरूरत ही क्या थी कि उनसे तअररूज (टोका) किया जाय जबकि उसूले मजहब मे दस्तूर यह है कि لا اكراه في الدين '(दीन में जबरदस्ती नहीं) तो खिलाफत के तस्लीम कराने में इकराह के क्या मानी?

लेकिन बाज लोगों का यह मशवरा कि मुआविया और जितने उसमान के जमाने के आमिल (काम करने वाले) हैं उन सबको आप बरकरार रखें और जब वह मुतमइन हो जाय और आपकी गिरफ्त में आ जायें तो फिर चाहे सबको माजूल कर दें। इसे आप ने मन्जूर नहीं फरमाया और आपने कहा और मजहबी जिम्मेदारी के लिहाज से आप इसके सिवा कह ही क्या सकते थे कि सियासते दुनिया के लिहाज से तो बेशक यही बेहतर है जो तुम कहते हो मगर जब मैं जानता हूँ कि वह जालिम और ना अहल हैं तो उन्हें अपनी तरफ से हुकूमत

[1] पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] का इरशाद है कि जो शख्स मुसलमानों की हुकूमत का जिम्मेदार हो फिर वह अपनी जानिब से किसी शख्स को वाली करार दे दरोहालेकि उससे बेहतर शख़्स मुसलमानों के मफाद के लिये मौजूद हो तो उसने खुदा व रसूल से ख्यानत की दूसरी हदीस में है कि जो शख्स किसी आदमी को कोई मन्सब अता करे किसी जमाअत के अन्दर हालांकि उस जमाअत में उस आदमी से ज्यादा पसन्दीदा शख्स मौजूद है तो उसने खुदा और उसके रसूल और तमाम मोमेनीन से खयानत की। अल- सियासतुश शरीया फि सलाहिर राये व राइया लिश्शैख इब्ने तैमिया पेज/3

का परवाना भेजकर मैं उनके मजालिम में शरीक हूँ। यह क्योंकर हो सकता है

यह बड़ा दूर रस वाकेया है। अगर अली बिन अबी तालिब[अ०स०] अपनी मातहती में मुआविया ऐसे शख्स की हुकूमत कोदीनी फरीज़े के मातहत बरदाश्त नहीं कर सकते थे तो उसके बाद कभी हुसैन[अ०स०] बैअत करके मुआविया से बढ़कर यजीद ऐसे शख्स की हुकूमत क्योकर तस्लीम कर सकते हैं ?

फिर भी हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] ने मुआविया के नाम जो ख़त लिखा उसमें कोई सख्ती व दुरूश्ती, लबो लहजे की तल्खी और जंगजूयाना अन्दाज न था बल्कि एक बरसरे इकतेदार आने वाले हाकिमे आला को अपने किसी आमिल को जिस तरह का खत लिखना चाहिये वैसा ही था इस खत में मजमून जो मशहूर मुअर्रिख वाकदी की किताब अल जमल से मन्कूल है हस्बे जैल है।

'तुमको मालूम होगा कि मैंने मुसलमानों के मुआमिलात मे अपने दामन को किस तरह साफ रखा और किस तरह तख्ते खिलाफत से बे एतेनाई (दूरी) इख्तियार करता रहा। यहाँ तक कि वह हुआ जो टल न सकता था (कत्ले उसमान) और उसके बाद मेरे लिये चार ए कार बाकी न रहा यह वाकेयात बहुत तूलानी हैं। बहरहाल जो होना था वह हुआ और अब जो हालात पेश हैं वह आँखों के सामने हैं अब तुम वहाँ के लोगों से बैअत हासिल करो और अपने यहाँ के आदमियो के एक वफ्द के साथ मेरे पास हाजिर हो।''[1]

मुआविया अगर मुख़ालिफ्त पर पहले ही से तुले हुए न होते तो इस ख़त के मजमून पर उन्हें अमल करना चाहिये था मगर वहाँ तो ऐनाद (दुश्मनी) व मुखालिफ़त की चिगारियाँ पहले से सुलग रही थीं आखिर आपके मुक़ाबले में क़त्ले उसमान का गलत इल्जाम तराशा गया और इस बहाने से आपकी मुखालिफत का झंडा ऊँचा किया गया

मुआविया ने शाम वालो को हजरत अली इब्ने अबी तालिब[अ०स०] के खिलाफ़ इस गलत तोहमत को उनके ज़ेहन नशीन करके पूरे तौर पर मुशतइल कर दिया। मस्जिदे जामा दमिश्क में मातमी जल्से किये गए मकतूल खलीफा का खून भरा कुर्ता मिम्बर पर डाल दिया गया और आलम यह था कि पचास साठ हजार का मजमा उसे देख देख कर नाला व जारी करता और

---

[1] नहजुल बलागा जि/2 पेज/140

इस जोशे रिक्कत मे उनसे कहा जाता था कि अब तुम्हें अली[अ०स०] से इस खून का बदला लेना है [1] अब हजरत अली[अ०स०] शाम की मुहिम के तदारुक का सामान करना चाह रहे थे जो यक बयक यह खबर आई कि तलहा और जुबैर ने जौज–ए–रसूल आइशा बिन्ते अबी बकर को आमादा करके आपके खिलाफ महाज तय्यार कर लिया है।[2]

वह लोग जो पच्चीस बरस तक हजरत अली[अ०स०] को मैदाने जग से बिलकुल अलाहदा रहते हुए खामोशी की जिन्दगी गुजारते देख चुके थे उन्हें यकीन होगा कि हजरत अली[अ०स०] किसी न किसी तरह इस कजिये (झगडे) को रफा दफा कर देंगे। और जग की नौबत न आने देगे मगर उन्होने देख लिया कि वही अली जो अपनी तलवार को इतने अरसे तक नियाम में रख चुके थे कि जवानी गुजर के बुढापा आ गया था। आज वह जिम्मेदारी अपने ऊपर आयद हो जाने के बाद आईन व उसूल और हक की हिफाजत के लिये जग पर बिल्कुल तय्यार हैं। बेशक इमाम हुसैन[अ०स०] ने देखा कि उनके पिदरे बुजुर्गवार ने इस उसूल की सखती के साथ पाबन्दी फरमाई कि जब तक फरीके मुखलिफ अमलन जग की इब्तेदा न कर दे उस वक्त तक तलवार नियाम से न निकाली जाये। चुनानचे जमल[3] के मैदान में यही हुआ कि जब सुफूफे लश्कर (लशकर की सफें) मुरत्तब हो चुकीं तो हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] ने एक कुरआन हाथ में लेकर अपने साथियो से फरमाया कि कौन है जो इस कुरआन को ले जा कर उन्हें इस पर अमल करने की दावत दे मगर यह बताये देता हूँ कि वह कत्ल कर दिया जायेगा यह सुनकर अहले कूफा मे से एक जवान जिसका नाम मुस्लिम था खड़ा हो गया कहा मैं जाऊँगा। हजरत ने सुकूत फरमाया और फिर बलन्द आवाज से कहा कौन है जो इस कुरआन को ले जाकर उन्हें इस पर अमल की दावत दे मगर वह कत्ल हो जायेगा। फिर खडा हुआ तो वही जवान। हजरत ने फिर सुकूत किया और फिर वही अलफाज बलन्द आवाज से कहे। जब फिर वही जवान खड़ा हुआ तो आपने वह कुरआन उसके सिपुर्द किया वह उसे लेकर सुफूफे

---

[1] तबरी जि 5 पेज / 163

[2] तबरी जि, 5, पेज / 164

[3] जमल अरबी में ऊँट को कहते हैं चूंकि इस जंग में ज़ौजः ए रसूल आइशा को एक ऊँट पर महमिल में सवार करके हज़रत के मुकाबिल पर लाया गया था इसलिये इस का नाम जमल हुआ।

मुखालिफ़ के सामने गया। जालिमो ने उसका दाहना हाथ कता कर दिया तो उसने कुरआन को दोनो कटे हुए बाजूओं से थाम कर सीने से लगा लिया।

इस हालत में कि खून की उसके कपड़ों पर बारिश हो रही थी उसके बाद वह क़त्ल कर दिया गया। अली बिन अबी तालिब[अ०स०] पुकारे कि अब इन से जग हलाल हो गई। अब दुनिया ने देखा कि वही तलवार जो बद्र, ओहद, खन्दक और खैबर में किसी वक्त चमक चुकी थी जमल के मैदान में चमकने लगती है। वही हाथ है और हाथ की सफाई वही दिल है और दिल की ताकत। यहाँ तक कि जमल का मारिका फरीके मुखालिफ की शिकस्त पर खत्म हुआ उस वक्त हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] ने फ़रीके मुखालिफ की सरगिरोह उम्मुल मोमनीन आइशा के साथ वह शरीफाना और बा–इज्जत बर्ताव किया जैसा कि किसी फ़ातेह ने अपने मफ़तूह (हारा हुआ) फरीक़ के साथ नहीं किया होगा।[2] यह मारिका रोजे पजशम्बा (जुमेरात) 10 जमादिउस सानिया सन 36 हिजरी मे पेश हुआ [3]

जाहिर है कि आम असबाब के लिहाज़ से अब जनाबे अमीर[अ०स०] का सिन लड़ाईयों की उमगों का मुतकाजी तकाजा नही था उनसठ बरस की उम्र थी मगर आपका पच्चीस बरस की खामोशी के बाद अब मैदाने जग में आ जाना ऐलान कर रहा था कि हकीक़तन हमारा हरकत व सुकून सब फ़र्ज के एहसास का नतीजा होना चाहिये। फर्ज की पुकार पर हमें हमेशा जवाब देना चाहिये। उसूल और फर्ज के हुदूद में जजबात का तकाजा और सिन का इखतेलाफ कोई चीज नही है। अगर फर्ज हमारा खामोशी का हो तो चाहे जवानी की तमाम उमगे कदम उठाने पर आमादा कर रही हों फिर भी हमको अपनी जिन्दगी खामोशी के साथ गुज़ार देना चाहिये और जवानी सुकून के आलम में बसर करना चाहिये और अगर फर्ज़ हमारा अमली इकदाम का हो तो चाहे बुढापे का इजमेहलाल (कमजोरी) जिस्मानी कुव्वतों को मुतअस्सिर भी किये हो मगर हमें अज्म व इरादे के कदमो पर खड़ा होना चाहिये और वह करना चाहिये जो जवाँमरदाना हिम्मत का तकाजा है।

उधर शाम में इशतेआल अगेजी मुसलसल जारी रही। जनाबे उसमान का खून भरा कुर्ता और उनकी जौजा नायला की कटी हुई उगलियाँ मिम्बर पर

---

[1]तबरी जि/5, पेज/205–206

[2]तफसील के लिए देखो तबरी जि/5, पेज/203–205, 218, 219, 225

[3]तबरी जि/5, पेज/219

आवेजाँ और उसके सामने गिरया व जारी, यह सिलसिला एक साल तक बराबर जारी रहा। बहुत से अहल शाम ने कसम खाई की वह औरतों के करीब न जाऐंगे सिवा ग़ुस्ले वाजिब के किसी दिन नहायेंगे नहीं और बिछौने पर सोऐंगे नहीं जब तक उन आदमियों को जो क़त्ले उसमान में शरीक थे क़त्ल न कर लेंगे।[1] इस तरह मुआविया ने पूरे शाम को हज़रत अली[अ0स0] के खिलाफ बरअंगेख़्ता (भड़का) कर दिया मगर आपने अपनी जानिब से इस्लाह की कोशिश जारी रखी। चुनानचे इसी के लिये आपने जुरैर बिन अब्दुल्लाह बिजली को दमिश्क भेजा मगर इसका कोई भी नतीजा न निकला आखिर को सिफ्फ़ीन की जंग के लिये फ़ौजें मैदान में आ गईं। अब भी आपने फहमाइश और नसीहत का सिलसिला मौकूफ़ (ठहरा) नहीं किया। बशीर बिन अम्र बिन मोहसिन अन्सारी, सईद बिन क़ैस हमदानी और शबस बिन रबई तमीमी इन तीन आदमियों को मुआविया के पास रवाना फ़रमाया कि वह जा कर इत्तेहाद व इत्तेफाक और इताअत व इज्तेमा की तरफ दावत दें मगर इस अमन पसन्दाना पेश क़दमी का जवाब यह मिला कि पलट जाओ मेरे पास से क्योंकि मेरे तुम्हारे दरमियान बस तलवार से फैसला होगा।[2] कहाँ तो हाकिमे शाम के यह जंगजूयाना अन्दाज और कहाँ हज़रत अली[अ0स0] की वह गुफ्तगू जो आपने नमुइन्दगाने शाम हबीब बिन मुस्लिम फ़हरी शरहबील बिन समत और मअ्न बिन यजीद बिन अखनस के सामने फरमाई थी जिसमें आपने कहा था' "तुम लोगों को किताबे खुदा और सुन्नते रसूल, बातिल को पामाल करने और हक को जिन्दा करने की जानिब दावत देता हूँ।'[3] लेकिन आपकी यह दावत मुस्तरद कर दी गई और बिल आखिर मुसलमानों का खून बेदरेग बहाया जाने लगा।

इस जंग का आग़ाज़ असना और अन्जाम में बहुत से जाजिबे तवज्जोह उमूर पेश आते रहे पहले यह कि इस जंग में भी हज़रत अली[अ0स0] ने अपनी फौज को हिदायत कर दी कि जब तक दुश्मन इब्तेदा न करे तुम जंग न करना।[4] आपने इन तमाम मारकों में जो नाम निहाद मुसलमानों के साथ पेश आये हैं बराबर अपनी फौज को यह हिदायत फरमाई कि उस वक्त तक जंग

---

[1] तबरी जि/5, पेज/235
[2] तबरी जि/5, पेज/243
[3] तबरी जि/6, पेज/4
[4] तबरी जि/5, पेज/238

न छेड़ना जब तक कि वह इब्तेदा न करें। इसलिये कि तुम्हारी हुज्जत बेहमदिल्लाह हक्कानियत के लिहाज से तो तमाम है ही अब यह तुम्हारा जंग में इब्तदा न करना और उधर से इब्तेदा होना उनके मुकाबिले में मजीद इतमामे हुज्जत का बाइस हो जायेगा और जब लड़ाई छिड़ जाये और फिर दुश्मन को शिकस्त हो तो किसी भागते हुए का पीछा न करना। किसी जख्मी पर हाथ न उठाना। किसी औरत की बेहुरमती न करना किसी मक्तूल के आजा कता न करना, ख्याम में बिला इजाजत दाखिल न होना। उनके माल व असबाब को न लूटना और दुश्मनों की औरतें तुम्हें और तुम्हारे सरदारों को गालियाँ भी दे तो उन्हें कोई ईजा न पहुचाना।[1]

इसके अलावा यह भी एक वाकेया सामने आया कि मुआविया के मुकद्दमतुल जैश (फौज का वह हिस्सा जो बडी फौज के लिए राह हमवार करता है) अबुल आवर सलमी ने नहरे फुरात पर कब्जा कर लिया और हजरत अली[अ०स०] के लश्कर पर पानी बन्द कर दिया। मजबूरन आपने पानी के लिये जंग का हुक्म दिया। आपके लश्कर ने अबुल आवर सलमी की फौज से घाट छीन लिया और यह इरादा किया कि अब दुश्मन की फौज पर इसी तरह पानी बन्द कर दिया जाये जैसा उसने हम पर बन्द किया था मगर हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] ने उसको गवारा न फ़रमाया। आपने कहा वह उनका फेअल (काम) था मगर तुम उन्हें पानी से न रोको। इतमिनान के साथ सेराब होने दो।

इससे यह सबक दिया जा रहा है कि हमारी मुखालिफ जमाअत इन्सानियत और अखलाक में कितनी ही पस्त हो जाये मगर हमको हमेशा बलन्द जरफी से काम लेना चाहिये। और उसके कमीना तर्जे अमल का मुआवेजा उसके मिस्ल से नहीं करना चाहिये बल्कि हमें इन्सानियत की बलन्दी का तहफ्फुज करना जरूरी है

जंगे सिफ्फीन मे हज़रत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] को मुसलमानों की खूरेजी से बड़ी तकलीफ महसूस हो रही थी। चुनानचे आपने पुकार कर अमीरे श्शाम से कहा कि इससे क्या हासिल है कि आम मुसलमानों का खून फय्याजी के साथ बह रहा है। बस तुम निकल आओ मैदान में और मैं आजाऊँ और इस जंग का फैसला हो जाये[2] मगर मुआविया ने इस खतरे को अपनी जात के

---

[1]तबरी जि/6, पेज/6

[2]तबरी जि/6, पेज/203

लिये मोल न लिया वह दूसरो के गले कटवाते रहे और खुद कभी मुकाबले के लिये मैदान मे नहीं आये बरखिलाफ इसके हजरत अली[अ०स०] जान को जान न समझते हुए बराबर मुजाहदीन की सफों के आगे आगे थे। इसलिये कि उनका जमीर मुतमइन था। वह शहादत के मुश्ताक थे। उनका तो कौल था कि "मैं मौत के साथ इससे ज्यादा मानूस हूँ जितना बच्चा आगोशे मादर से मानूस होता है।' बेशक वह उस मौत को ना–पसन्द करते थे जो बुजदिली के साथ बिस्तरे इस्तेराहत (आरामदेह बिस्तर) पर हो। चुनानचे असहाब से फरमाते थे कि याद रखो अगर तुम कत्ल न हुए तो अपनी मौत मरोगे और कसम उस खुदा की जिसके कब्जे में मेरी जान है कि हजार जरबतें तलवार की जो सर पर पड़े आसान हैं फर्शे ख्वाब पर एडियाँ रगड़ कर मरने से।[1] चुनानचे उनका तर्जे अमल हमेशा इसी का मजहर रहा था। इब्तेदा–ए–शबाब में जब हर इन्सान को जिन्दगी इन्तेहाई अजीज होती है रसूल का इरशाद कि अली मेरे बिस्तर पर सो रहो और अली का ब–सर व चश्म आमादा हो जाना इस का तजकरा पहले हो चुका है यह कोई मामूली बात नहीं थी। मालूम था कि खून के प्यासे दुश्मन की खिची हुई तलवारें लिये कत्ल पर आमादा हैं मगर वहाँ राहे हक़ में मौत तो खुशगवार समझी जाती थी।

इसी जगे सिफ्फीन मे एक मौके पर इमाम हसन[अ०स०] से फरमाया

"तुम्हारे बाप को कोई परवाह नहीं है कि मौत उस पर गिर रही है या वह खुद मौत के ऊपर गिर रहा है।[2] फिर ऐसे बाप के जो बेटे हो जिनके सामने यह सीरत हो और जिनके कानों मे यह बातें पड रही हो उन्हें मौत का अन्देशा क्योंकर रह सकता है। चुनानचे हुसैन[अ०स०]अपने भाई हसन और मोहम्मद बिन हनफिया के साथ इस जग मे बराबर से हिस्सा ले रहे थे और सख्त से सख्त मौको पर सिबाते क़दम के जौहर दिखला रहे थे तारीख ने एक ऐसे मौके की तस्वीर कशी करते हुए कि जब अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के लश्कर का बडा हिस्सा शिकस्त खा चुका था लिखा है कि उस वक्त नहीं रह गए थे अली[अ०स०] के पास मगर बड़े फर्ज शनास और पुरजिगर अफ़राद, उस वक्त आपने अपने घोड़े का रूख मैसरा की जानिब फेरा कि जिधर कबील–ए–रबीया के लोग अब तक दुश्मनो का मुकाबला कर रहे थे रावी जिसका नाम जैद बिन वहब जहनी है बयान करता है कि मैं देख रहा था

---

[1] इरशाद पेज/128

[2] तबरी जि, 6, पेज/11

अली[अ०स०] को कि आप रबिया की फौज की तरफ जा रहे थे और आपके फरजन्द हसन[अ०स०] व हुसैन[अ०स०] और मोहम्मद हनफिया आपके साथ साथ थे और तीर अली के कान और शानों के पास से गुजर रहे थे मगर आप के फरज़न्द बढ बढकर सिपर बन जाते थे और अपने बाप की हिफ़ाजत करते थे [1]क्या यह जजबा ए फिदाकारी और कुर्बानी का मामूली मुजाहरा है जो अली[अ०स०] की आँखों के सामने उन साहबजादों से जाहिर हो रहा था? क्या इसके बाद कभी यह खयाल किया जा सकता है कि अली[अ०स०] के यह बहादुर बेटे मौत के डर से किसी फ़र्ज़ में कोताही करें या किसी बातिल ताक़त के सामने जान के खौफ़ से सर झुकाये।

इसी सिफ्फीन के मैदान में एक और मजर का भी मुशाहदा हुआ। वह यह कि ऐन जग की हालत मे हजरत अली[अ०स०] की निगाह आफताब पर थी। इब्ने अब्बास ने सबब दरयाफ्त किया हजरत ने फरमाया कि देखता हूँ नमाज़े जोहर का वक्त आया या नहीं। इब्ने अब्बास ने अर्ज किया, क्या यह नमाज का मौका है? जग तो हो रही है। आपने फ़रमाया कि और यह हमारी जग किस बात के लिये है? इसी नमाज के लिये तो जग कर रहे हैं।

यह इबादते इलाही के फर्ज की अहमियत का एक बेमिस्ल अमली दर्स था कि तीरों की बारिश हो या आग बरस रही हो। जब नमाज का वक्त आये तो लाजिम है कि इस फर्ज के अदा करने के लिये खडे हो जाये

जग को बहुत तूल हो चुका था। आखिर एक दिन हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] ने तय कर लिया कि अब मुकम्मल फतह हासिल करने के बाद ही जग को मौकूफ किया जायेगा। एक दिन और रात मुसलसल हगाम ए दारो दगीर (धड पकड) बरपा रहा जिसके नतीजे में फौजे शाम के कदम उखडने लगे और मुआविया को शिकस्त का यकीन हो गया। मगर अम्र बिन आस ने उस दिन के लिये एक चाल उठा रखी थी वह यह कि फौरन कुरआन नैजों पर बलन्द कर लिये गए और निदा दी गई कि भाईयो यह किताबे खुदा ही हमारे और तुम्हारे दरमियान फैसला कर देगी। शाम वाले सब हलाक हो गए तो शाम के हुदूद का कौन निगहबान होगा। [2]हालाँकि आगाजे जग से पहले ही हजरत अली[अ०स०] कुर्आन के फैसले की दावत दे चुके थे। मगर इस वक्त कामयाबी के तखय्युलात की बिना पर अली की दावत को मुस्तरद कर दिया

---

[1]अखबारूत्तोवाल पेज/184, तबरी जि 6, पेज/10

[2]तबरी जि/6 पेज/46

गया। अब शिकस्त के आखरी अन्जाम से बचने के लिये कुर्आन दरमियान में लाया जा रहा था। हजरत अली[अ०स०] ने अपनी फौज वालों को इस मक्कारी और चालबाजी से आगाह किया और साफ फरमाया कि यह लोग न अहले दीन हैं और न अहले कुर्आन।[1] मगर आपकी फौज के बहुत से लोग आपसे मुन्हरिफ होकर इस बात पर मुसिर हो गए कि अब तलवार रोक लीजिये। नही तो हमारे आपके दरमियान तलवार चलेगी। यह बडी कशमकश का मौका थ। दुश्मन से मुक़ाबले के हगाम में ऐसी सूरत पैदा हो जाना कि खुद अपनी फौज में तलवार चलने लगे एक इन्तेहाई हौलनाक सूरते हाल थी। जिसे हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] गवारा न कर सकते थे। मजबूरन आपने जग के इलतिवा (जग बन्दी) का हुक्म दिया और तय पाया कि एक हकम अहले शाम की तरफ़ से नामजद हो और एक अहले कूफा की तरफ़ से मगर अहले शाम की तरफ़ से अम्र बिन आस ऐसा अमीरे शाम का नफ़्से नातिक़ा (बोलने वाला) मुकर्रर किया गया और जब हज़रत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] ने चाहा कि मालिके अश्तर या अब्दुल्लाह बिन अब्बास या किसी दूसरे ऐसे ही अपने मुखलिस और खैरख्वाह को अपनी जानिब से मुकर्रर करे। तो वही फौज वाले फिर बिगड़ गऐ कि यह लोग तो बिल्कुल इस जग के जिम्मेदार हैं हम उनको क्यों कर मुकर्रर करें।[2] आखिर सबने अबू मूसा अशअरी को जो पहले ही हजरत अली[अ०स०] की मुवाफिकत से गुरेज कर चुके थे अपनी जानिब से मुकर्रर किया मसलहते वक्त यही थी क्योंकि अपनी जमाअत में खूरेंजी का इन्सेदाद (रोकना) इसी पर मौकूफ था कि हज़रत बा दिले नख्वास्ता (ना चाहते हुए) उसको बरदाश्त कर लें यहाँ तक कि नतीजा सबकी आँखों के सामने आजाये। ताहम आपने जो सुलहनामा लिखवाया उसका मज़मून हस्बे जैल था

"अली बिन अबी तालिब[अ०स०] जिम्मा लेते हैं अहले कूफा और तमाम मुसलमानो का जो उनके साथ हैं और मुआविया ने जिम्मेदारी ले ली है अहले शाम और तमाम अपने तरफदारों की कि हम अल्लाह और उसकी किताब के फ़ैसले पर दारोमदार रखते हैं और सिवा किताबे खुदा के कोई शै हम में फैसला कुन नहीं होगी और किताबे खुदा हमारे सामने रहेगी। शुरू से लेकर आखिर तक हम जिन्दा करेंगे उसी बात को जिसे खुदा जिन्दा करे। और मुर्दा करेंगे उसको जिसे किताबे खुदा मुर्दा करे लिहाजा हकेमैन (दोनों फ़ैसला

---

[1] तबरी जि / 6, पेज / 27, इरशाद पेज / 144

[2] तबरी जि / 6, पेज / 28

करने वालो को) को लाजिम होगा कि वह किताबे खुदा पर नजर करें और जो कुछ उसमें मिले उस पर अमल करें और अगर किताबे खुदा में उन्हें कोई हिदायत नजर न आये तो रसूले खुदा की सुन्नत पर जो इखतेलाफी न हो अमल किया जायेगा।[1]

इस मुआहदे के अलफाज से साफ जाहिर है कि हकमैन (दोनों फैसला करने वालो) को अपनी जाती राय से जो किसी सियासते दुनयवी का तकाजा हो फैसला करने का हक नहीं दिया गया था। चुनानचे हजरत अली[अ0स0] ने खुद हकेमैन से जो फैसले के लिये मुकर्रर हुए थे फ़रमाया था कि "तुम इस शर्त पर हकम (काजी) हो कि किताबुल्लाह के रू से फैसला करना और अगर तुम्हें किताबे खुदा की रू से फैसला न करना हो तो तुम्हें अपने को हकम नहीं समझना चाहिये। दूसरे अशखास को भी यह बता दिया गया कि हकमैन पर यह शर्त लगा दी गई है कि वह कुरआन की बिना पर फ़ैसला करें और अपनी जाती राय को काम में न लायें [2]

यह इकरार नामा 13 सफ़र सन 37 हिजरी को पाय ए तकमील तक पहुँचा।

बावजूद हजरत अली बिन अबी तालिब[अ0स0] की इस दूर अन्देशी और एहतियात के फिर भी साथ वाले मुफसिद (फ़सादी) आदमी फितना व फ़साद बरपा करने से बाज न आये और अभी इकरार नामा लिखा ही गया था कि उसी वक्त हजरत अली[अ0स0] की फौज मे यह आवाज बलन्द हो गई कि इन्सानों को हकम (फैसला करने वाला बनाना) दुरूस्त नहीं 'ला हकमा इल्लल्लाह' यानी हकम होना अल्लाह से मखसूस है। इस आवाज का सबसे पहला बलन्द करने वाला कबील ए बनी तमीम का एक शख्स उरवा बिन अदीय्या था।[3]

यह जमाअते खवारिज (हजरत अली[अ0स0] की मुखालिफ जमाअत) का सगे बुनियाद था। उन लोगों ने हजरत अली[अ0स0] से इसरार किया कि पहले मुआविया से जग कीजिये हम आपके साथ हैं। आपने वही जवाब दिया जो रसूले खुदा[स0अ0] सुलहे हुदैबिया के बाद देते थे।

---

[1]असदुल गाबा जि/3, पेज/246

[2]तबरी जि/6, पेज/32, इरशाद पेज/44

[3]तबरी जि/6, पेज/30–31

"हम ने नविश्ता (लिखी हुए सनद) दे दिया है। शराएत तय किये हैं। अहदो मीसाक (वादा) कर लिया है। अब उसकी मुखालिफत मुमकिन नहीं है। कुरआन मे हुक्म हुआ है कि वफा करो अहदो पैमान के साथ और कसम खाने के बाद उसकी मुखालिफत न करो जबकि तुम ने अल्लाह को इसका जामिन बना दिया है और यकीनन अल्लाह तुम्हारे अफआल व आमाल पर मुत्तेला है।"

आपने इस सख्ती के साथ मुआहदा पर कयाम किया मगर हकमैन ने खुद शराएते मुकर्ररा (की गई शर्तों) की पाबन्दी नहीं की और किताबे खुदा व सुन्नते रसूल से कोई सरोकार ही नहीं रखा। चूँकि अबू मूसा सादा लौह आदमी थे और जनाबे अमीर[अ०स०] से कोई खुलूस और मुहब्बत भी नहीं रखते थे उन्हे अम्र बिन आस ने अपनी सियासत का शिकार बना लिया। इस तरह कि जब वक्ते मुकर्ररा पर "दूमतुल जन्दल" में जो कूफे व शाम के लिहाज से बिल्कुल वसत (बीच) में वाके था और इसलिये फैसला के लिये वहीं इज्तेमा तय पाया था यह लोग यकजा हुए। रोजाना मुलाकात और तबादल–ए खयालात का सिलसिला कायम हो गया तो अम्र बिन आस ने यह तरीका इख्तियार किया कि जब गुफ्तगू हो तो अबू मूसा अशअरी को अपने ऊपर मुकद्दम करार दे और कहे कि आप बुजुर्ग हैं। रसूले खुदा[स०अ०] की सहाबियत का मुझसे ज्यादा शरफ रखते हैं। आप पहले तकरीर कीजिये फिर मैं जो कहना है कहूँगा। इस तरह अम्रे आस ने अबू मूसा अशअरी पर अपने खुलूस व अकीदत का असर जमाया और आइन्दा के लिये जो मन्सूबा सोचा था उसकी तमहीद कायम कर दी।

फिर जेरे बहस मसअले के मुतअल्लिक तबादल ए खयालात किया और अबू मूसा को यह पटटी पढाई कि हम दोनों फरीक यानी हजरत अली[अ०स०] और मुआविया को एक साथ माजूल (हटा) कर दे। और फिर मुसलमानो को इख्तियार दें कि वह अज सरेनौ (नय सिरे से) जिसको चाहें मुन्तखब कर लें। अबू मूसा इस फरेब में आ गए और ब खयाले खुद मुत्तफका हैसियत से यही तय कर लिया।

जब फैसले का वक्त आया और तरफैन (दोनों तरफ) के आदमी फैसला सुनने को जमा हुए तो अम्रे आस ने हस्बे आदत अबू मूसा अशअरी से कहा "बिस्मिल्लाह! आप फरमाईये जो कुछ फरमाना है। उनको तो आदत पड़ी ही थी कि हमेशा गुफ्तगू मे पहल वह करें। वह बिला उज्र तकरीर के लिये आमादा हो गए अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने जो समझदार आदमी थे मुतनब्बेह

(खबरदार) किया कि देखो अम्र बिन आस कही चोट न दे दे। पहले उसे तकरीर कर लेने दो। फिर तुम तकरीर करना। मगर अबू मूसा अशअरी ने कहा कि नहीं हमने बाहम मुत्तफेका तौर पर एक चीज़ तय कर ली है। चुनानचे खडे हो गए और हम्द व सना के बाद कहने लगे कि "हमने इन्तेहाई गौर व खौज के बाद ऐसी बेहतरीन सूरत तय की है जिससे इफतेराक (तफरका) व इखतेलाफ़ का खातिमा हो सकता है। वह यह है कि हम दोनों अली[अ०स०] और मुआविया दोनो को माज़ूल कर दें और ख़िलाफत अज सरेनौ मुसलमानों के हवाले कर दें। कि वह जिसे चाहे मुन्तखब कर लें।' वह यह कह कर जूही बैठे अम्र आस ने खड़े हो कर कहा कि "हजरात[1] आप लोगों ने अबू मूसा अशअरी की तकरीर सुनी वह अली के नुमाइन्दे हैं और उन्होने अली को माज़ूल कर दिया है मै मुआविया का नुमाइन्दा होने की हैसियत से अली के माज़ूल करने में उनसे मुत्तफ़िक़ हूँ मगर मुआविया को मैं बरक़रार रखता हूँ।" यह सुनना था कि अबू मूसा चीख उठे

"अरे यह तूने क्या किया? खुदा तुझसे समझे तूने गद्दारी की, बेईमानी की, तू कुत्ते की तरह है कि चाहे उस पर हमला करो या उसे उसके हाल पर छोड दो वह भौकने से बाज न आयेगा।"

अम्रे आस ने जवाब दिया।

"तुम्हारी मिसाल गधे की सी है जिसकी पुश्त पर किताबे लाद दी गई हों।

मजमे में से कोई अबू मूसा की तरफ झपट कर हमला आवर हुआ और कोई अम्र आस पर। गरज इस हड़बन्ग और इन तहजीब व अखलाक के मुजाहरों के साथ यह इज्तेमा मुन्तशिर हो गया। जाहिर है कि इस तरह की मक्काराना धांधली को किसी बा जाब्ता फैसले का दर्जा दिया ही नहीं जा सकता था चुनानचे उसे किसी ने भी सही तस्लीम न किया और इखतेलाफ जूँ का तूँ कायम रह गया लेकिन उससे हजरत अली[अ०स०] की जमाअत मे इन्तेशार में कुछ और ज्यादती हो गई

उधर ख्वारिज ने अपनी जमाअत को मुनज्जम करके मुकाबले की तय्यारी कर दी जिससे सन 38 हिजरी मे जगे नहरवान की सूरत पेश आई।

वाकेयात के इस तवील सिलसिले में बडे नताएज बरामद हुए थे और महसूस होता था कि एक कायद को अपने साथ वालो के हाथों जबकि वह

---

[1] तबरी जि/6 पेज, 40

खालिस व मुखलिस, यकदिल और हमआहंग न हो कितनी कशमकश और रूहानी तकलीफ का सामना हुआ है और इससे मकसद को किस दर्जा नुकसान पहुँच जाता है

नहरवान के बाद भी यह फितने और शोरिशें बिल्कुल खत्म नहीं हुईं। एक तरफ खवारिज नहरवान के हम खयाल अफराद जो जंग में नहीं गए थे और शहरों के अन्दर मुकीम थे हजरत अमीर[अ०स०] के खिलाफ फिजा में इन्तेशार पैदा करते रहते थे और दूसरी तरफ अमीरे शाम मुआविया जिन्हों ने अहले कूफा के इफ़्तेराक का फाएदा उठा कर अपनी कुव्वत को ज्यादा मुनज्जम कर लिया था बराबर अतराफे ममलिकत (हुकूमत) में अपनी फौजें भेजकर बद–अमनी का सिलसिला कायम किये हुए थे जिसमें खुफिया और एलानिया हर क़िस्म के एकदामात शामिल थे। मसलन मिस्र में जनाबे अमीर[अ०स०] के बहुत बड़े मुआविन (मददगार) मालिके अश्तर का ज़हर दिलवा कर ख़ात्मा किया [1] उसके बाद मोहम्मद बिन अबी बकर गवर्नर बना कर भेजे गए तो अम्र बिन आस ने खुतूत लिखकर खुद मिस्र के बाज अमाएद (हम खयाल लोगों) से साजबाज़ की और फिर अपनी फौज लेकर हमला कर दिया। उधर से शाम की फौज और इधर से खुद मिस्र वालों का एक मुसल्लह (अस्लहों से लैस) लश्कर मोहम्मद बिन अबी बकर मैय अपनी जमाअत के चक्की के दो पाटों में आ गए।[2] आखिर उनकी फौज ने शिकस्त खाई और खुद इन्तेहाई बेदर्दी के साथ कत्ल किये गए बल्कि लाश को भी आग में जला दिया गया।[3] मोहम्मद बिन अबी बकर के बाद मिस्र में मुआविया का तसल्लुत कायम हो गया। इसी से उनकी हिम्मत और बढ़ी। चुनानचे सन 39 हिजरी में नोमान बिन बशीर की सरकर्दगी में दो हजार की फौज ने ऐनुत तमर पर हमला किया जो नाकामी के साथ पसपा हुआ।[4] सुफियान बिन औफ गामदी ने छे हजार की फौज के साथ अम्बार पर हमला किया और अशरस बिन हिसान बकरी को जो जनाबे अमीर[अ०स०] की तरफ से वहाँ मुकर्रर थे उनके तीस हमराहियों समेत कत्ल कर दिया और तमाम माल व असबाब लूट का वापस चला गया [5] अब्दुल्लाह बिन मुसअ्दा

---

[1] तबरी जि/6, पेज/54
[2] तबरी जि/6, पेज/57
[3] तबरी जि/6, पेज 60
[4] तबरी जि/6, पेज 77
[5] तबरी जि/6, पेज/78

खज़ारी ने सत्तरह सौ आदमियो के साथ तैमा पर हमला किया। हजरत अली[अ०स०] ने मुसय्यब बिन नजबा फ़ज़ारी को उसके मुकाबले के लिय भेजा जिन्हो ने जग करके उसको शिकस्त दी और उसने शाम की जानिब फरार किया।[1] इसी सूरत में जहाक बिन क़ैस को तीन हजार फौज के साथ भेजा गया जो लूट मार करती हुई कादसिया के हुदूद तक पहुच गई।[2] और हुज्र बिन अदी फौज को लेकर गए तो उसने फरार इख्तियार किया मालूम होता है कि सिफ्फ़ीन की जग के बाद महसूस हो गया था कि हजरत अली[अ०स०] से खुले मैदान में मुकाबला करके कामयाबी हासिल कर लेना मुमकिन नहीं है। इसलिये यह गोरीला जंग का तरीका इख्तियार कर लिया गया था जिससे इस्लामी ममलिकत में एक मुसतकिल खलफिशार कायम रखने का इन्तेजाम किया गया था इस सिलसिले का सबसे अन्दोहनाक (दर्दनाक) सानेहा बसर बिन अबी इरताह का तीन हजार की फौज के साथ हिजाज़ पर हमला था जिसने मदीने और मक्के वालों से ब–जब्र बैयत लेने के बाद यमन का रूख किया और वहाँ कई आदमियों को क़त्ल किया

उबैदुल्लाह बिन अब्बास का मकान लूटा और उनके दो कमसिन बच्चों को जिबह करा दिया। फिर जब हजरत अली[अ०स०] ने मुकाबले के लिये लश्कर भेजा तो वह मैय अपनी फौज के फरार कर गया।[3]

यह बुजदिली का तरीक़ा ए–जग हजरत अली[अ०स०] के लिये इन्तेहाई तकलीफ का बाइस था। मजबूरन फिर आपने तहय्या फरमा लिया था कि दमिश्क़ पर फौज कशी करके हमेशा के लिये इस किस्से को खत्म किया जाये जिसके लिये आपने एक निहायत पुरज़ोर खुत्बा पढ़कर मुसलमानों को आमादा कर लिया मगर उसके बाद एक हफ्ता भी पूरा न हुआ था कि मस्जिद मे ऐन हालते नमाज मे 19/रमजान को आपके सरे मुबारक पर इब्ने मुलजिम मुरादी ने जहर से बुझी हुई तलवार लगाई।[4] जिसके असर से 21/रमजान सन 40 हिजरी को आपने दुनिया से रेहलत फ़रमाई।

---

[1] तबरी जि/6, पेज/78
[2] तबरी जि/6, पेज/78
[3] तबरी जि/6, पेज/80–81
[4] तबरी जि/6, पेज/84–85

उस वक्त हुसैन इब्ने अली[अ0स0] छत्तीस बरस की उम्र को पहुँच चुके थे। इस तूलानी दौर में हुसैन[अ0स0] ने अपने वालिदे बुजुर्गवार अली बिन अबी तालिब[अ0स0] से क्या कुछ देखा, क्या कुछ सुना और कितना असर लिया?

मुसल्लमुस सुबूत (पुख्ता सुबूत) शीई मोअतकदात (अकीदे) से कत–ए–नजर (हट कर) करने के बाद भी आम तारीखी हालात और जाहरी असबाब के मातहत यह अहम तजरेबात और गराँ कद्र तालीमात जो एक रूब्आ सदी (25 साल) से ज्यादा तक हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] को हासिल होते रहे। एक इन्सान के बलन्दी ए अखलाक़ व सिफात और पुख्ता कारी के कतई जामिन और जिम्मेदार हैं

सातवाँ बाब

बनी उमय्या का एकतेदार और उनकी सियासी रविश

बनी उमय्या और इस तरह के अक्सर लोग जो दबदबा और शिकोह (शानो शौकत) से मुतअस्सिर होकर मुसलमान हुए थे उनकी नफ्सीयाती कैफियत वही थी जो हर दबी हुई और शिकस्त खुर्दा कौम की होती है यानी नफरत, दुश्मनी, गुस्सा, जज्ब–ए इन्तेकाम और उसके साथ साथ डर जिसके नतीजे में वह खुल कर अपनी अदावत का इजहार तो न कर सकते थे मगर बराबर मौक़े के मुन्तजिर थे कि किस तरह हम इस्लाम को नुकसान पहुँचायें और अगर उसको खत्म न कर सकें तो कम अज कम उन खुसूसियाते इम्तेयाजी को तब्दील कर दें जो उसने कायम किये हैं और जिनसे हमारे एकतेदार को सदमा पहुँचा है और इस्लाम के पर्दे में ही सही उन हुदूद व इम्तेयाजात को कायम कर दें जो इस्लाम के पहले अरब में कायम थे उन्होंने उसकी तय्यारी तो रसूल[स0अ0] के जमाने ही से शुरू कर दी थी मगर पैगम्बरे इस्लाम[स0अ0] की जिन्दगी मे उनके इस मक्सद की तक्मील मुशकिल थी। पैगम्बर ने उनके दिलों को इस्लाम की तरफ माएल करने के वास्ते हर तरह कोशिश की मगर उनके जज्बात वही रहे और एक जरा इस्लाम पर कोई मुसीबत पडती तो उनके चेहरे खुशी से खिल जाते और कभी जज्बाते दिली जबान पर आ जाते थे। चुनानचे जगे हुनैन मे जब मादूदे चन्द के सिवा बाकी तमाम मुसलमान मैदाने जंग से रू ब फरार हुए तो अबू सुफियान ने कहा: बस अब यह समन्दर तक भागते चले जायेंगे। और एक नौ मुस्लिम ने कहा। बस अब जादू खत्म हो गया।[1]

वफ़ाते रसूल[स0अ0] के बाद अबू सुफ़ियान ने इस्लाम पर हमला करने की पहली कोशिश वह की जिसका तजकेरा पहले हो चुका है कि हजरत अली बिन अबी तालिब[अ0स0] के पास आ कर आपको तलवार उठाने पर आमादा

---

[1] तबरी जि/3. पंज/128

करना चाहा। यकीनन उस मौके पर अगर कोई जज्बाती इन्सान होता तो अबू सुफियान का यह हर्बा इतना कारी साबित होता कि इस्लाम की बुनियाद हिल जाती। मुसलमान उसी वक्त खाना जगी में मुबतिला हो जाते और इस्लाम का शीराजा दरहम बरहम हो जाता मगर वह नूरे इलाही से देखने वाले नब्बाजे फितरत (इस्लाम की नब्ज पर कुदरती महारत रखने वाले) अली थे जिन्हो ने मुखातिब के मकसद को ताड़ लिया और बावजूदेकि ख़िलाफत का मुस्तहक वह सिर्फ अपने को मसझते थे। फिर भी अबू सुफियान को डाँट कर जवाब दिया कि तुम हमेशा इस्लाम और अहले इस्लाम के दुश्मन रहे हो।

जब उधर से मायूसी हुई तब अबू सुफियान ने चोला बदला। उधर जा कर मिल गए और इस रविश में कामयाबी भी हो गई। इस तरह कि सन 13 हिजरी के आगाज में खलीफ ए अव्वल अबू बकर ने मुल्के शाम पर फौज कशी का बन्दोबस्त किया और सात हजार के लश्कर के साथ यजीद बिन अबी सुफियान को रवानः किया गया।[1]

फौज के दूसरे हिस्से पर अब उबैद ए जरीह को मुक़र्रर किया गया और यजीद बिन अबी सुफियान के साथ सुहैल बिन अम्र और दीगर 87 शेयूखे कुरैश (बुजुरगाने कुरैश) को मुशीरे कार बनाया गया और उसके बाद जब कुछ और फौज जमा हुई तो उस पर मुआविया इब्ने अबू सुफियान को अफसर मुकर्रर करके यज़ीद के पास रवाना किया गया [2]

मजमूअन यह सत्ताईस हजार की जमइयत हो गई। उन लोगों की इमदाद के लिये खालिद बिन वलीद को हुक्म दिया गया कि वह अपनी फौज लेकर इराक़ से पहुँच जायें चुनानचे 9 हजार फौज लेकर वह पहुँचे। इस तरह मुसलमानो का छत्तीस हजार का लश्कर हो गया। उसी वक़्त इन उमरा (सरदारो रईसों) मे से हर एक को एक जगह की हुकूमत के लिये नामजद भी कर दिया गया था चुनानचे अबू उबैदा जर्राह को हमस शरजील बिन हसना को शर्क़ उरदन, अम्र बिन आस और अल्कमा बिन मुजज्जर को फ़िलिस्तीन और यजीद बिन अबी सुफियान को दमिश्क का हाकिम करार दिया गया।[3]

---

[1]तबरी जि/4 पेज/29
[2]तबरी जि/4 पेज/30
[3]तबरी जि/4 पेज/32

इस फ़ौज में खुद अबू सुफियान फ़ौज के सरदारो का दिल बहलाने के लिये क़िस्सा गोई की ख़िदमत अन्जाम देते थे [1]

अबू सुफियान की औलाद में से यजीद और मुआविया के अलावा उनकी एक बहन जुवेरिया बिन्त अबू सुफियान भी अपने शौहर के साथ मौजूद थीं और उन्होंने जग में शिरकत भी की। [2]

इस दौरान मे खलीफ ए अव्वल का इन्तेकाल हो गया लेकिन मुल्के शाम में लड़ाईयाँ होती रही यहाँ तक कि रजब सन 14 हिजरी में शहरे दमिश्क़ फतह हुआ और हस्बे करारदादे साबिक (पहले की तरह) यजीद बिन अबी सुफियान वहाँ के हाकिम हुए [3]उकसे बाद तदरीजन (एक के बाद एक) शाम के दूसरे शहर भी फ़तह हुए।

सन 18 हिजरी के ताऊन (P age की बीमारी) मे अबू उबैदा और यजीद बिन अबी सुफियान दोनों का इन्तेक़ाल हो गया।[4]

अबू सुफियान उस वक्त मदीने में थे उनको बेटे की इतनी फिक्र न थी जितनी कि शाम के मुल्क की। चुनानचे खलीफ–ए–दोम (दूसरे) ने जब उन्हें बुला कर यज़ीद के मरने की इत्तेलाअ् दी तो उन्होंने फ़ौरन यह सवाल किया कि आपने उसकी जगह पर किसे मुकर्रर किया? जब मालूम हुआ कि मुआविया को वहाँ का हाकिम बना दिया गया तो वह खुश हो गए।[5]

अब मुआविया इब्ने अबी सुफियान को दमिश्क और उसके मुजाफात (आस पास) और शरजील बिन हसना को शर्के उरदन (पुर्वो जार्डन) और उसके मुजाफ्फात की हुकूमत मिली [6]उसके कुछ अरसे के बाद शर्के उरदन की हुकूमत भी मुआविया ही को मिल गई।[7]

उस दौर में अबू सुफियान वगैरह ने खूब ही फाएदे हासिल किये। यहाँ तक कि हिन्दा मादरे मुआविया को जिन्हें अबू सुफ़ियान ने अब तलाक दे दी थी मरकजी हुकूमत के बैतुल माल से चार हजार दिरहम की रकम कर्ज दी गई जिससे उन्होंने तिजारत शुरू की और नफा ए खतीर (बहुत ज्यादा

---

[1]तबरी जि/4 पेज/34
[2]तबरी जि/4. पेज/36
[3]तबरी जि, 4 पेज 55–59
[4]तबरी जि, 4, पेज/302
[5]तबरी जि 5 पेज/69
[6]तबरी जि/4 पेज/202
[7]तबरी जि/5. पेज/88

फाएदा) हासिल किया और अबू सुफियान दमिश्क गए तो उन्हे एक दफा सौ अशरफियाँ ब–तौर परवरिश हासिल हुई।[1]

हालाँकि उनके जज्बात इस्लाम के मुतअल्लिक अब भी खैर ख्वाही के न थे। चुनानचे जगे यरमूक में जबकि मुसलमानों का मुकाबला सल्तनते रोम के लश्कर से था और मारिका–ए–कारजार गर्म था उस वक्त अबू सुफियान दूर से खडा हुआ तमाशा देख रहा था। जब रोमियो को गल्बा हासिल होते नजर आता तो कहता था "शाबाश ऐ मुल्के रोम के बहादुरो" और जब मुसलमानों का ज़रा तकवियत हासिल होती थी तो अबू सुफ़ियान की जबान से हसरतो यास के साथ यह शेअ्र निकलता था

وبنو الاصفر الملوك ملوک   الروم لم یبق منهم مذکور

मतलब यह था कि "हाय अफ़सोस सलतनते रोम के पुर शौकत बादशाहों का नाम मिटते हुए नजर आता है।" अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर ने इस वाक़ेये का अपनी आँखों से मुशाहदा किया और अपने बाप ज़ुबैर से बयान किया उस वक्त कि जब मुसलमानों को कामिल तौर पर फतह हासिल हो चुकी थी। ज़ुबैर ने कहा खुदा उसे गारत करे। यह निफाक से बाज न आयेगा क्या हम उसके लिये रोमियों से बेहतर नही हैं।[2]

उसके बाद सन 23 हिजरी मे जब उसमान ख़लीफ़ा हुए तो चूँकि वह खानदाने बनी उमय्या के एक फ़र्द थे अबू सुफियान वगैरह समझे कि अब हमारी बन आई दिली जज्बात इतनी कुव्वत के साथ उबले कि ताब न ही

अबू सुफियान उनके पास आया। वह उस वक्त बहुत बूढा था और आँखों से माजूर हो चुका था उसने कहा बडी मुद्दत के इन्तेजार के बाद अब यह खिलाफत तुम तक पहुँची है। अब उसको गेद की तरह अपनी मर्जी के मुताबिक़ गर्दिश दो और बनी उमय्या के जरिये से उसकी बुनियादों को मजबूत करो। इसलिये कि जो कुछ है वह यही दुनयवी सलतनत। रह गया जन्नत व दोजख उसको मैं कुछ समझता नहीं।[3]

चुनानचे अबू सुफ़ियन के खानदान वालों ने इस खिलाफत से खूब फायदा उठाया और कोई शक नही कि अबू सुफ़ियान ने अपने दुनयवी ख्वाबों की ताबीर अपनी जिन्दगी में अपनी आँखों से देख ली। सन 31 हिजरी तक

---

[1] तबरी जि/5, पेज/30

[2] इस्तीआब

[3] इस्तीआब।

दमिश्क और शर्के उरदन के साथ साथ हमस, कन्सरीन और फिलिस्तीन भी मुआविया के जेरे नगीन हो गए और वह बिला शिरकते गैरे पूरे मुल्क पर क़ाबिज करार दे दिये गए[1]

इसी सन 31 हिजरी में अबू सुफियान बिन हर्ब 88 बरस की उम्र मे रहे सिपारे आलमे आख़िरत हुए। (यानी मौत हो गई)[2]

मगर वह मशवरा जो उन्होंने खलीफ–ए–सोम को दे दिया था वही उनके बाद उनकी जान जाने का बाइस हुआ। चुनानचे हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] ने अपनी सबसे पहली मुलाकात में जो इस्लाहे हालात के लिये खलीफ ए–सालिस से की थी उनसे साफ़ कह दिया था कि आप अपने कराबत दारों के साथ गैर मामूली मुराआतें (मेहरबानियॉ) बरत्ते हैं। उनकी ग़लतियों से चश्मपोशी करते है। इन्तेहा यह है कि मुआविया बग़ैर आपकी मर्जी के जो चाहता है करता है और लोगो से कहता है कि उस्मान का हुक्म है। आपको इसका इल्म होता है और फिर भी आप मुआविया को इस पर कोई तम्बीह नहीं करते[3]

अब हजरत उस्मान के मुह पर यह कहा जाने लगा था कि उनके बाद आलमे इस्लामी की खिलाफत मुआविया को मिलेगी और उसकी कोई रद न की जाती थी।[4]

गालिबन इसी का नतीजा था कि जब उनका मुहासरा हुआ और उन्होंने मुआविया को मदद के लिये लिखा तो मुआविया ने अपनी जगह से कोई जुम्बिश नहीं की। बल्कि नतीजे के मुन्तज़िर हो गए।[5] क्योंकि वह यकीन रखते थे कि उनके बाद खिलाफत मुझे मिलेगी और अम्र बिन आस तो साफ साफ उस्मान के खिलाफ इशतेआल अंगेजी करते थे। और जब कस्रे हुकूमत का मुहासरा हो गया तो वह फिलिस्तीन जाकर अपनी कोशिशों के इन्तेज़ार मे बैठ गए और हर आने वाले से मदीने का हाल बडी बेताबी से दरयाफ्त करते थे। यहाँ तक कि जब कत्ले उस्मान की खबर मिली तो कहा क्या कहना मेरा, यह तो मेरी ही कोशिश का नतीजा है।[6]

---

[1] तबरी जि, 5 पेज 69
[2] तबरी जि/5, पेज/79
[3] तबरी जि/5, पेज/97
[4] तबरी जि/5 पेज/100
[5] तबरी जि 5 पेज, 115
[6] तबरी जि/5. पेज 108–109–111

उसके बाद यही अम्र बिन आस मुआविया के दस्ते रास्त बने और बड़े मनासिब हासिल किये। उन्होने खुद एक मौके पर मुआविया से साफ कह दिया कि अगर हक्कानियत सामने होती तो हम तुम्हारा साथ ही क्यों देते अली का साथ न देते जिनके इस्लामी खिदमात फज़ीलत और रसूल[स0अ0] से कराबत सबको मालूम हैं मगर हमारे पेशे नजर तो दुनिया है इसी लिये तुम्हारा साथ दे रहे हैं।

आले अबू सुफियान ने शाम में हुकूमत कायम करने के बाद इब्तेदा ही से अपनी सियासी रविश शहाना रखी। कोई सय्याह अगर ममालिके इस्लामिया का सफ़र करके इस्लामी सादगी और मसावात की मिसालें देख चुका होता और फिर शाम जाकर वहाँ के तुज्को एहतेशाम (शानो शौकत) का मुशाहदा करता तो वह हैरत व इस्तेजाब (तअज्जुब) की एक दुनिया में चक्कर लगाने लगता। वह सादगी जो इस्लामी जिन्दगी का तुर्रा ए इम्तेयाज (खुसूसियत) थी वहाँ नामो निशान को भी न थी। बल्कि उसके बजाये मुलूकाना अजमतो जलालत के मुजाहरात पूरी ताकत के साथ नजर आते थे। देखने वालों ने देखा और पैगम्बरे इस्लाम[स0अ0] के जारी किये हुए तर्जे जिन्दगी से मानूस बाज सहाबा को अन्देशा हुआ कि इस तरह इस्लाम के उसूल, कद्रो कीमत और मेयारे अजमत जो उसने बड़ी कोशिश से दुनयवी जाह व शौकत की क़द्रो क़ीमत को मिटा कर कायम किया था फना हो जायेगा। चुनाँनचे मुआविया ने पानी पीने के प्याले सोने के ज्यादा वजन पर फ़रोख्त किये तो अबू दरदा सहाबी ने मना किया और कहा, हमने रसूल अल्लाह[स0अ0] से सुना है कि ज्यादा वजन पर खरीद मना है मुआविया ने कहा, मेरे नज़दीक तो इसमें कोई खराबी नही है। यह सुनकर अबू दरदा ने कहा क्या खूब[1] मैं तो रसूल अल्लाह[स0अ0] का हुक्म बयान कर रहा हूँ और तुम उस पर अपनी राय जाहिर कर रहे हो। मैं ऐसे मकाम पर जहाँ तुम हो नहीं रहूँगा।

एबादा बिन सामित (मशहूर सहाबी) के साथ भी सोने की बैअ् व शरा (खरीदो फरोख्त) के मुआमले में इसी तरह का किस्सा हुआ था और मुआविया ने उनको भी यही जवाब दिया था कि हम इसको किसी तरह बुरा नहीं समझते एबादा ने कहा मैं तो रसूले खुदा का हुक्म बयान करता हूँ और तुम

---

[1](1) (1 तबरी जि / 5. पेज / 235

अपनी राय बयान करते हो। खुदा मुझे इस जगह से निकाले मैं इस सरजमीन पर हरगिज़ न रहूँगा जिस पर तुम हाकिम हो।[1]

इससे मालूम होता है कि एक कशमकश दमिश्क की सियासत और परस्ताराने शरीअत में उस वक्त से शुरू हो गई थी

इसकी एक और मिसाल मुलाहेजा हो अब्दुर रहमान बिन सहल अन्सारी तीसरी खिलाफत के दौर मे एक जेहाद के सिलसिले मे शाम की तरफ गए तो उन्होंने देखा कि ऊँटो पर शराब की मश्के भरी हुई जा रही हैं। वह आगे बढ़े और उन्होंने अपने नैजे से उन मश्कों को चाक कर दिया। गुलामो ने मजाहमत (रोकने की कोशिश) की और यह खबर मुआविया को पहुंचाई। उन्होंने कहा छोड़ो उस बूढ़े को। उसकी अक्ल जाती रही है अब्दुर रहमान ने कहा मेरी अक्ल नहीं गई है मगर रसूल अल्लाह[स0अ0] ने हमको ममानेअत (मना) फरमाई है कि शराब हमारे शिकमों (पेटों) और हमारे ज़ुरूफ (बर्तनों) मे दाखिल न हो [2]

इन्ही बातों का नतीजा था कि इन सिन रसीदा अफराद को जो सहाब–ए–रसूल मे महसूब (शुमार) होते थे मुआविया से तनफ्फुर (नफरत) पैदा हो गया था चुनाने एक दफा ऐसा हुआ कि मुआविया अहले शाम की एक जमाअत के साथ जबकि वह मक्क ए मुअज्जेमा हज को गए हुए थे सुबह सवेरे सअ्द बिन अबी विकास की तरफ से गुजरे उन्हें सलाम किया मगर सअ्द ने जवाब नहीं दिया। मुआविया ने अपनी खिफ्फत मिटाने को अपने साथ वालों से कहा कि यह सअ्द हैं। हजरत रसूल[स0अ0] के सहाबी। उनका उसूल है कि सूरज तालेअ (निकलने तक) होने तक किसी आदमी से बात नही करते। सअ्द को यह ख़बर मालूम हुई कहा इसकी कोई असलियत नहीं मगर ब–खुदा मैं ने इस से बात करना पसन्द न की [3]

उसके बाद सलतनते दमिश्क जितनी ताकतवर होती गई उतना ही उसने इस्लामी तमद्दुन (तहजीब) के बजाये दुनिया दाराना तमद्दुन को फरोग दिया। जिसका नतीजा यह था कि इस्लामी कद्रो कीमत के मेयार और वह इम्तेयाजात खत्म हो गए जो इस्लाम के सादा और गुरबा परवर उसूल ने कायम किये थे। उसका एक नमूना है सन 30 हिजरी मे हजरत अबूजर गफ्फारी का जिला वतन किया जाना। उनका एक कुसूर यह था कि वह उस

---

[1] सुनन इब्ने माजा जि/1, पेज/7

[2] एसाबा जि/2, पेज/401, असदुल गाबा जि/3, पेज/299

[3] अल बांजानवल किताब पेज/26

सरमाया परस्ती की मजम्मत करते थे जो उन्हे उस वक्त इस्लामी मुल्क में नजर आ रही थी वह गरीब मुसलमानों को भूखा मरते देखते तो दमिश्क की गलियों मे वह आयते कुरआन की पढ़ते फिरते थे जो सरमाया परस्ती के खिलाफ हैं। वह कहते थे कि जो लोग सोना चाँदी खजानो मे जमा कर रहे हैं और उन्हें राहे खुदा में सर्फ नही करते उन्हे मुन्तजिर रहना चाहिये उस वक्त का कि जब आतिशे जहन्नम से उनकी पेशानियाँ, उनके पहलू और उनकी पुश्तें दागी जायेंगी।[1]

यह भी था कि वह हुकूमत की खुशामद नही करते थे बल्कि मौके पर सच्ची बात कह गुजरते थे। चुनानचे जब मुआविया ने कस्रे खिजरा की तामीर की तो अबूजर से पूछा, क्यों इसे आप कैसा समझते हैं? हजरत अबूजर ने फरमाया। अगर तुम ने इसे खुदा के माल से बनाया है तो तुमने खयानत की और अगर खुद अपने जाती माल से बनाया है तो इसराफ किया।[2]

मिजाजे कैसरियत इसका मुतहम्मिल (बरदाश्त) कब हो सकता था? नतीजा यह हुआ कि उनकी शिकायत दारूस सलतनत (राजधानी) मदीने में भेजी गई और वहाँ से हिदायत हुई कि अबूजर को मदीने रवाना कर दो।[3]

अबूजर शाम से मदीना भेज दिये गए और यहाँ पहुच कर बजाए इसके कि मुआविया को कुछ तम्बीह की जाती इस जलीलुल कद्र सहाबी को मदीने से निकलने का हुक्म हो गया मुसाफिरत और बेसरो सामानी आस पास कोई हमदर्द कैसा शनासा तक नहीं, आखिर यह शदायद (तकलीफ़ें) न उठ सके। सन 33 हिजरी में दाई–ए–अजल को लब्बैक कहा।

जब अबूज़र की हालत ख़राब हुई, पास सिर्फ बीवी और एक लड़की थी। अबूजर ने उनको वसीयत की कि मरने के बाद तुम दोनों मिल कर मुझे गुस्ल देना, कफ़न पहनाना और फिर लाश को ले जाकर क़ाफ़ले की गुजरगाह पर लिटा देना और जो क़ाफेला उधर से गुजरे उससे कहना यह रसूले खुदा का सहाबी अबूजर है उसको दफ्न करा दो। चुनानचे जब उनका इन्तेक़ाल हो गया तो गमजदा माँ बेटी ने उसी हिदायत पर अमल किया। लाश के साथ सरे राह आकर बैठ गई। इत्तेफाकन अब्दुल्लाह बिन मसऊद अहले इराक के एक क़ाफ़ले के हमराह जो मक्का ए मुअज्जमा हज के लिए जा रहा था उधर से

---

[1]तबरी जि/5, पेज/66
[2]किताबुल बिलदान पेज/156
[3]तबरी जि/5, पेज/66

गुजरे रोती हुई ख़ातून और बच्ची को देखकर ठहर गए और दरयाफ़्त हाल किया। मुसीबत जदो ने कहा "लोगो! रसूल के मजलूम सहाबी अबूजर ने गुरबत के आलम में वफ़ात पाई। उन्ही का लाशा है जो बेगोरो कफन पड़ा है। इब्ने मसऊद उनके साथी चीखें मार मार कर रोने लगे और उन्होंने अबूज़र को दफ़न किया।

यह हुकूमते वक्त की सियासत मुलूकाना के खिलाफ पहली कुर्बानी थी, जो रसूल के मुकद्दस सहाबी हजरत अबूजर गफ्फारी ने पेश की।

याद रखने की बात है कि यह अबूजर गफ्फारी और अब्दुर्ररहमान बिन सहल अन्सारी अपनी फर्ज शनासी की बिना पर इस्लाम के कायम करदा हुदूद व इम्तेयाजात में बड़ी अजमत के मुस्तहक थे मगर मौजूदा सियासत के हुदूद मे वह बिल्कुल कम हकीकत और बे वकअत हो गए थे। इसके मानी यह थे कि इस्लामी इन्केलाब की जगह क़दामत परस्ताना (बादशाही) इन्केलाब फ़तह पाने लगा और इस्लाम के मुक़र्रर करदा हुदूद के बजाये दूसरे हुदूद व इम्तेयाजात क़ायम हो गए।

आठवाँ बाब

पैग़म्बरे खुदा[स०अ०] के बाद इस्लामी मफ़ाद के मुहाफ़िज़ीन, उनमें और मुख़ालिफ़ क़ूवतों में तसादुम और उसके नताएज।

यह एक नुमायाँ हकीकत है कि पैगम्बरे इस्लाम के बाद पैग़म्बर के हकीक़ी विरसादार जो उनके अहलेबैत थे, इस्लामी इन्केलाब और उसके खुसूसियात व इम्तेयाजात के मुहाफ़िज थे। दुनिया में आलीशान महेल तामीर हो चुके थे लेकिन उनका वही छोटा सा मकान था जिसमें उन्हें पैग़म्बर ने रख दिया था। दुनिया के महल्लात में रेशमी पर्दे दरवाजों पर हो गए थ मगर उनके दरवाजे पर वही फटा हुआ पर्दा अब भी नजर आता था दुनिया के जिस्म पर हरीर व दीबा (रेशमी लिबास) नजर आता था लेकिन यह खद्दर का मलबूस अब भी जेबतन करते थे। दुनिया मफ्तूहा ममालिक (जीते हुए मुल्क) की दौलत से चैन करती और ऐश व इशरत मे ज़िन्दगी गुजारती थी मगर यह अब भी अपने हाथ की मेहनत से रोजी कमाना और माले हलाल की तलाश करना अपना फ़र्ज समझते थे। और जो दौलत भी मिलती उसे गरीबों, मिसकीनों बेवाओं और यतीमों की नज्र कर दते। और इस बिना पर उनमे और उसके मुतवाजी (मुकाबले) दूसरे इन्केलाब के अलमबरदारों में कशमकश लाजमी थी। हजरत अली[अ०स०] से मुआविया का तसादुम जिसके बहुत से वाक़ेआत का तजकिरा पहले हो चुका है इसी कशमकश का नतीजा था।

इसमें कोई शक नही कि इस वक्त इसके अलावा जब भी मुकाबला पड़ा है दुनिया में आले रसूल[स०अ०] के साथी कम निकले और यह सिलसिला हमेशा जारी रहा। इसके वजूह इक्तेसादी (माली) भी हैं और सियासी भी। नफसियाती भी और नस्ली भी। यह पहले मालूम हो चुका है कि इस्लाम क़दीम इम्तेयाजात को मिटा कर मसावात (बराबरी) का पैग़ाम लेकर आया था और उसने इम्तेयाज सिर्फ फराएजे इन्सानी की ज्यादा से ज्यादा बजा आवरी (अमल) की बिना पर क़रार दिया था। मुशतरिका दौलत (मिल्लत की दौलत) जो माले

गनीमत से हासिल होती है उसकी इस तरह तकसीम कि जिसमे जानिबदारी (यकतरफ़ा) और अदमे मसावात (ना इन्साफी) पैदा हो जाये इस्लाम के उसूल के खिलाफ़ थी और इस्लाम के सच्चे मुहाफ़िज़ीन उसके करीब न जा सकते थे। इसलिये आले रसूल^{स०अ०} के लिये यह नामुमकिन था कि वह खजाने में रूपये जमा करके दौलतमन्द बनें और खुसूसियत से उन लोगों को जर व जवाहर से माला माल करें जिनसे उनको अपने एकतेदार के कवी बनाने में फ़ाएदे की उम्मीद हो। यहाँ तो यह आलम था कि हजरत अली बिन अबी तालिब^{अ०स०} जो कुछ बैतुल माल में आता है रोज़ का रोज तक्सीम कर देते हैं और फिर बैतुल माल मे झाडू दिलवा देते हैं और वहीं पर नमाज पढते हैं कि वह जमीन खुदा के यहाँ गवाही दे कि अली^{अ०स०} ने मुसलमानो के माल के पहुँचाने में मुस्तहक लोगों तक दरेग नहीं किया।[1]

इसफहान से माल आता है। उस वक्त इत्तेफ़ाक से सात आदमी साहबे इस्तेहकाक (जरूरत मन्द) मौजूद हैं आपने तमाम माल के सात बराबर हिस्से कर दिये और एक रोटी भी उस माल में नजर आ गई तो उसके भी सात टुकड़े करके हर हिस्से में एक टुकड़ा रख दिया मुमकिन है खयाल किया जाये कि ऐसी छोटी छोटी बातों का आदमी को लिहाज नहीं करना चाहिये और उस रोटी को किसी एक हिस्से मे शामिल कर दिया जाता तो ब जाहिर शरीअत के मुताबिक़ कोई जुर्म न था मगर याद रखना चाहिये कि जहनियते अवाम की तशकील इन ही छोटी छोटी बातों से होती है। हजरत अली^{अ०स०} तो अवाम की जहनियत उसी मसावात के साँचे में ढालने का काम अन्जाम दे रहे थे जिसे रसूल^{स०अ०} ने सिखाया था और मुसलमान रसूल^{स०अ०} की रेहलत के बाद उसे भुला बैठे थे।

उसके बर खिलाफ अमीरे शाम के यहाँ इन बातों की कोई परवा न थी। वहाँ अपने एक़्तेदार के क़ायम रखने के लिये खजाने का मुँह खुला था और जिसको मतलब का समझा जाता था उसे माला माल कर दिया जाता था। फिर लोग जो इम्तेयाजात के आदी हो चुके थे इनका साथ देते या उनका।?

दुनिया की तो यह हालत है कि चाहे मिले मिलाये कुछ नहीं लेकिन अगर मालूम हो कि किसी के पास रूपया बहुत है और खजाने में दौलत जमा है तो यही उसका असर कायम होने के लिये काफ़ी होता है। और इसी तरह उसकी साख कायम हो जाती है। यहाँ हजरत अली^{अ०स०} की यह कैफियत कि मिम्बर

---

[1] इस्तीआब जि/2 पेज/478

पर अपनी तलवार के फरोख्त का ऐलान करते हैं और बतलाते हैं कि मुझे एक लिबास की जरूरत है जो बगैर इस तलवार के फरोख्त किये हुए मुमकिन नहीं है। अब्दुर रज्ज़ाक मुहद्दिस ने इस रिवायत को नक्ल करके लिखा है कि यह उस हालत में था कि जब सिवा शाम के तमाम आलमे इस्लाम की सलतनत आपके कब्जे मे थी।[1] हर एक हरीस शख्स समझता था कि जिसके पास खुद अपने लिबास के लिये रूपया न हो उसके पास नाहक किसी दूसरे को देने के लिये रूपया कहाँ हो सकता है।

दुनिया ज़ाहरी तमतिराक (चमक दमक) और आओ भगत से भी मरऊब होती है मगर यहाँ यह हालत थी कि जनाबे अमीर[अ०स०] अपनी हुकूमत के ज़माने मे कभी इसको आर न समझते थे कि मीसमे तम्मार की दुकान पर खरीद व फरोख्त करें। बाजार में कम्बर को साथ ले कर गए और दो पैराहन (लिबास) खरीद किये। एक सात दिरहम का और एक पाँच दिरहम का। सात दिरहम का पैराहन कम्बर को दिया और पाँच दिरहम का खुद जेब बदन किया। क़म्बर ने कहा यह ज़्यादा कीमत वाला आप लें कोई और होता और वह ऐसा करता तो शायद जवाब देता कि मैं मसावात के फैलाने और गुलामों का दर्जा बलन्द करने के लिये ऐसा करता हूँ। अली[अ०स०] का मकसद यक़ीनन ऐसा ही था लेकिन अगर यह जवाब देते तो इसमें खुद अदमे मसावात (ना इन्साफ़ी) का पहलू मुजमर (छुपा) था। सुनने वाले को एहसासे गुलामी जरूर पैदा हो जाता इसलिये आपने ऐसा जवाब दिया जो अपने बच्चों को दिया जाता है। फरमाया कम्बर! तुम नौ उम्र हो तुम्हे वही पैराहन अच्छा मालूम होता है। मेरा क्या, मैं यही पहन लूँगा। इन बातों की कद्र अहले दुनिया कहाँ कर सकते थे और उनके दिल पर इन बातों का असर कहाँ कायम हो सकता था।

इसके अलावा इस्लाम ने उन तमाम मुकतदर अशखास (बड़े लोगों) और जमाअतो के इम्तेयाजात को खत्म किया था जो उसके पहले बर सरे एक़तेदार थीं। वह मुकतदर जमाअतें (दौलत मन्द) आपस मे कितनी ही रकीबाना चश्मक (दुश्मनी) रखती हों लेकिन इस्लाम से जख्म खुर्दा (हार मानी हुई) वह सब ही थीं। इसलिये इस्लाम के हकीकी मकसद और कायम कर्दा इम्तेयाज के मिटाने मे वह सब हम आहन्ग (एक आवाज) बन सकती थीं क्योकि उसके मिटाने में उनमें से हर एक के एकतेदारे रफ्ता (हुकूमत मे) की वापसी मुन्हसिर थी और

---

[1] इस्तीआब जि 2 पेज, 478

फिर साबिक की शिकस्तो का असर सब ही पर था और सब ही मे जज्बा ए–इन्तेक़ाम पाया जाता था। फिर यह भी कि इस्लाम ने अपने उसूले मसावात की तलकीन (नसीहत) से खुद कौमे अरब का ब–हैसियते कौम भी इम्तेयाजे खास खत्म किया था। और परदेसिसो के हुकूक पर बड़ा जोर दे दिया था और गैर अरबी अनासिर (लोग) जो आते थे उन्हें अरबों के बराबर हुकूक़ दिये जाते थे। यह बात तमाम अरब ही को खलने की थी बनी उमय्या ने अपन दौर में अरबी तअस्सुब (हसद) का मुजाहरा करके अरबी क़ौमियत के इम्तेयाज की हिमायत की और मवाली और आजाम (अजम की जमा ईरानी नस्ल) की कोर (जोर को) दबाने की कोशिश की। चुनानचे इस दौर के इम्तयाजी खुसूसियात मे से यह है कि अरब और गैरे अरब का सवाल पैदा हो गया। बनी उमय्या की इस सियासी रविश का कुदरतन यह नतीजा होना चाहिये था कि अरब ज्यादा तर बनी उमय्या के तरफदार हो जाते। बनी हाशिम इस्लामी उसूल के हामी होने की वजह से अरबी क़ौमियत के इस जज्बे की तरफदारी नहीं कर सकते थे। इसलिये उनका अरब की जानिब दारी का पहलू कमजोर था। इसकी तस्दीक इससे हो सकेगी कि उसके बाद जब बनी उमय्या के खिलाफ़ हाशेमियैन यानी बनी अब्बास वगैरह ने अलम बलन्द किया तो हाशिमयैन का साथ देने वाले मवाली और अजम ज्यादा थे

बनी हाशिम के कदीमी रिवायात और सयादत (बुजुर्गी) व शराफत के इम्तेयाज की वजह से अरब खानदानो को उनसे पहले ही हसद व एनाद था। इसलिये नस्ली तअस्सुबात भी मुखालिफत पर आमादा करते थे और अरब में कबाइली निजाम बड़ी कुव्वत के साथ कायम था हर कबीले के सरगरोह (सरदार) और बड़े अफराद अपने जज्बात की बिना पर जिस रास्ते पर जाते थे अवाम और पस्त अफराद अहले कबीला भी उन ही की पैरवी करते थे क्योंकि अवाम का कोई नजरिया नहीं हुआ करता वह लीडरों के पाबन्द होते हैं और लीडर ज्यादातर जज्बात के शिकन्जे में कैद होते हैं। इन्हीं बातों का नतीजा था कि आले रसूल के मुक़ाबले में उनके मुखलेफीन की तादाद ज्यादा रहती थी।

नवाँ बाब

हसने मुजतबा[अ०स०] की सुल्ह और उसके नताएज

सन40 हिजरी (से) सन 60 हिजरी

इन्तेकाल फरमाने से पहले हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] ने एक तहरीरी वसीयत नामा इमाम हसन[अ०स०] के नाम लिखा और उस पर इमाम हुसैन[अ०स०] और मोहम्मद बिन हन्फिया और अपनी दीगर औलाद, अइज्जा और मखसूस असहाब की गवाहियाँ लिखवाईं और वसीयत नामा हसने मुजतबा[अ०स०] को सिपुर्द करते हुए फरमाया कि दुनिया से रूख्सत होते वक्त तुम इसे हुसैन[अ०स०] के सिपुर्द कर देना इसके अलावा एक वसीयत आपने हसन और हुसैन[अ०स०] दोनों भाईयों से मुशतरक तौर पर फरमाई वह यह थी कि 'मैं तुमको फर्ज शनासी की वसीयत करता हूँ और यह कि तुम कभी दुनिया के तलबगार न होना चाहे वह दुनिया खुद तुम्हारी तलबगार हो, और किसी दुनयवी नुकसान पर कभी रंजीदा न होना और हमेशा हक के लिये जबान खोलना और सवाब के लिये काम करना और जालिम के मद्दे मुक़ाबिल और मजलूम के मददगार रहना [2] मैं तुमको अपनी तमाम औलाद और अइज्जा और उन लोगों को जिन तक मेरा पैगाम पहुँचे वसीयत करता हूँ कि हमेशा खुदा से डरते रहना और अपने शीराजे को मुन्तशिर न होने देना और अपने दरमियान झगडो को सुलह व आश्ती के साथ तय करते रहना और देखो यतीमों का खयाल रखना, उनकी खबर गीरी करते रहना और पड़ोसियों का खयाल रखना इसलिये कि रसूल अल्लाह ने उनके बारे में वसीयत की थी, और देखो कुरआन का खयाल रखना, तुम से बढ़कर कोई कुरआन पर अमल करने वाला न हो, और नमाज का खयाल रखना, यह तुम्हारे दीन का सुतून है। और अल्लाह के घर (ख़ाना–ए काबा) का खयाल रखना। जिन्दगी भर उसको कभी

---

[1] काफी जि/1 पेज, 184

[2] तबरी

एकेला न छोडना, और देखो खुदा की राह मे अपने जान व माल और जबान से जेहाद करते रहना। और आपस में सिल ए-रहेमी (नर्म दिली) रखना, और एक दूसरे के साथ फय्याजी के साथ पेश आना और देखो कभी खल्के खुदा को नेक आमाल की तरगीब देने और बद आमालियों से रोकने से बाज न आना ताकि तुम पर बुरे लोगो का एकतेदार कायम न होने पाये।[1] और देखो मेरे बाद ऐसा न होने पाये कि बनी हाशिम मुसलमानों मं मेरे खून के बहाने से खूँरेजी शुरू कर दें। ज्यादा से ज्यादा मेरे खून के किसास (बदला) के तौर पर बस मेरे कातिल को कत्ल किया जा कसता है। और वह भी इस तरह कि उसको एक जरबत की पादाश (जुर्म) मे बस एक ही जरबत लगाई जाये और उसको हरगिज मुसला (आँख कान, वगैरह को अलग करना) न किया जाये। यानी आजा व जवारेह (जिस्म के हिस्सों को काटा न जाए) कता न किये जायें। इसलिए कि रसूल अल्लाह[स0अ0] फ़रमा गए हैं कि खबरदार किसी को मुसला न करो चाहे वह काटने वाला कुत्ता ही क्यों न हो।[2]

नफसियात के वाकिफकार खूब जानते हैं कि कुछ वह हालात होते हैं जिनम बात पत्थर की लकीर की तरह सुनने वाले के दिल पर जम जाती है। यह सूरत कि एक बुजुर्ग मर्तबा वाजिबुल इताअत बाप बिस्तरे बीमारी पर है। उसकी रेहलत का हगाम करीब है और उस वक्त वह अपने तमाम अहले बैत[अ0स0] में से दो एक सईद फरजन्दो को खुसूसियत के साथ बुलाकर कोई खास बात कहता है यकीनन उस वक्त की कही हुई बात उन फरजन्दों के दिल व दिमाग पर ऐसा असर करेगी जैसा किसी दूसरे सब्रो सुकून के लमहों की बात असर नही कर सकती

आम दुनिया से जाने वाले बाप उस वक़्त अपनी औलाद से वसीयत अपने घर के निजी मुआमिलात के मुतअल्लिक करते हैं मगर आले मोहम्मद[स0अ0] तो दीन व शरीयत, किताब और सुन्नत को अपने जातियात में दाखिल समझते थे। उन्होंने उस वक्त पर जो वसीयतें की हैं वह सरासर मफादे आम्मा, (आम लोगों के फाएदे) मफादे शरीयत और अहकामे इलाही से मुतअल्लिक थीं।

यूँ तो यह फ़रजन्द वह थे जो खुद सही और मुनासिब ही काम करते मगर हजरत अली इब्ने अबी तालिब[अ0स0] को तो ब–जाहिर असबाब एक मुरब्बी

---

[1] नहजुल बलागा जि, 2 पेज 78.79 तबरी और अबुल फजे असफहानी ने उनमे से अक्सर फिकरात को इमाम हसनअ0स0 के नाम के तहरीरी वसीयत नामे में दर्ज किया है। मुकातिलुत तालिबीन पेज/25.27

[2] तबरी जि/6. पेज/88. नहजुल बलागा जि/2. पेज/80

(शफीक) बाप की तरह अपना फर्ज अन्जाम देना था। जिसका नतीजा यह होना चाहिये कि उन वसीयतों का हर हर लफ्ज सआदत शेयार (लाएक मन्द) बेटों के दिल पर नक्श हो जाये। यह अलफाज उनके कानों मे हमेशा गूजते रहें कि फ़र्ज शनासी को अपना उसूल रखना दुनयवी जाह व इकतेदार के कभी तालिब न होना। दुनयवी नुकसान की कभी परवाह न करना। जबान पर हक को जारी रखना। जालिम के मद्दे मुक़ाबिल रहना और मजलूमो के मददगार रहना। चुनाँनचे इन तमाम तालीमात को दोनो फ़रजन्दो ने अपने अमल से मुजस्सम शक्ल में पेश किया और आपस में हमआहगी को भी हर सूरत में बरक़रार रखा।

यह अलफ़ाज कि "खुदा की राह में अपने जान व माल और ज़बान से जिहाद करते रहना अम्रबिल मारूफ और नही अनिल मुन्कर (अच्छी बातो की हिदायत और बुरी बातों से ममानियत) को कभी तर्क न करना। ऐसा न हो कि तुम पर बुरे लोगों का इकतदार क़ायम हो जाये।'

खुसूसियत के साथ उनको अमली जामा पहनाने का जिस तरह हुसैन[अ0स0] को मौक़ा मिला वह दुनिया की तारीख मे यादगार है

हजरत अली इब्ने अबी तालिब[अ0स0] की वफात के बाद तमाम मुसलमानों ने मुत्तफिका तौर पर आपके बडे फरजन्द इमाम हसन[अ0स0] की खिलाफत तस्लीम की। आप पर अपने वालिदे बुजुर्गवार की शहादत का बड़ा असर था। आपने इस मौके पर जो खुत्बा इरशाद फरमाया उसमें हजरत अली बिन अबी तालिब[अ0स0] के फजाएल व मनाकिब तफ्सील के साथ बयान करते हुए खास तौर पर आपकी सीरत और तर्के दुनिया का तज़किरा किया और उस जिक्र में गिरया आपके गुलूगीर हुआ और तमाम हाजेरीन भी आपके साथ बे इख्तियार रोने लगे फिर आपने अपने जाती और खानदानी फजाएल बयान किये। उसके बाद अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने खडे होकर लोगो को आपकी बैयत करने की तरफ दावत दी। और सबने ब–रजा व रगबत आपकी बैयत की। यह जुमा के दिन 21/माहे रमजान सन 40 हिजरी का वाकेया है।[1] आपने उसी वक्त लोगों से साफ साफ यह क़ौल व करार ले लिया था कि अगर मैं सुलह करूँ तो तुमको सुलह करना होगी और अगर मैं जग करूँ तो तुम्हें मेरे साथ जग करना होगी। उसके बाद आप मुल्क के बन्दोबस्त की तरफ मुतवज्जेह हुए अतराफ

---

[1] इरशाद पेज/192

मे उम्माल (हुकूमत का काम समालने वाले) मुकर्रर किये। हुक्काम मुऐय्यन किये और मुक़द्दमात के फैसले करने लगे

अभी मुल्क हजरत अली[अ0स0] के गम में सोगवार ही था और हजरत इमाम हसन[अ0स0] पूरे तौर पर इन्तेजामात भी न कर चुके थे कि मुआविया की तरफ से आपकी ममलिकत मे दरअन्दाजी शुरू हो गई और उनके खुफिया कारकुन (जासूस) रीशा दवानियाँ (मक्कारियाँ) करने लगे चुनाँनचे एक शख्स कबील–ए–हुमैर का कूफे में और एक शख्स बनी कैन में से बसरा में पकड़ा गया। यह दोनों इस मकसद से आये थे कि यहाँ के हालात से दमिश्क़ में इत्तेला दे और फिजा को इमाम हसन[अ0स0] के खिलाफ ना–खुशगवार बनायें। गनीमत है कि इसका इन्केशाफ (पर्दाफाश) हो गया। हुमैर वाला आदमी कूफे में एक कसाई के घर से और कैन वाला आदमी बसरा में बनी सुलैम के यहाँ से गिरफतार किया गया और दोनों को जुर्म की सजा दी गई इस वाक़ये के बाद हजरत इमाम हसन[अ0स0] ने मुआविया को एक खत लिखा जिसका मजमून यह था कि "तुम अपनी दरअन्दाजियों से बाज नहीं आते हो। तुमने लोग भेजे हैं कि मेरे मुल्क मे बगावत पैदा करायें और अपने जासूस यहाँ फैला दिये हैं। मालूम होता है कि तुम जग के ख्वाहिशमन्द हो। ऐसा है तो फिर तैयार रहो। यह मन्जिल कुछ दूर नही है नीज मुझको ख़बर मालूम हुई है कि तुम ने मेरे बाप की वफात पर तान व तशनीअ् के अलफाज कहे यह हरगिज किसी जीहोश (अक्लमद) आदमी का काम नहीं है मौत सबके लिए है। आज हमें इस हादिसे से दो चार होना पड़ा तो कल तुम्हे होगा। और हक़ीकत यह है कि हम अपने मरने वाले को मरने वाला समझते नहीं वह तो ऐसा है जैसे कोई एक मकान से मुन्तकि़ल होकर अपने दूसरे मकान में जाये और आराम की नींद सोए।' इस खत के बाद मुआविया और इमाम हसन[अ0स0] के दरमियान बहुत से खुतूत की रद्दो बदल (अदला बदली) हुई।[1] बहरहाल इन वाकेआत से यह अम्र बिल्कुल जाहिर हो गया कि अमीरे शाम मुआविया को जनाबे अमीर[अ0स0] की जात से कोई वक्ती अदावत न थी वरना वह उनकी शहादत के साथ खत्म हो जाती बल्कि यह आले रसूल[स0अ0] से एक मुस्तकिल दुश्मनी है जिसके नताएज आइन्दा देखिये क्या हो यह भी इस वाक़ेये से साबित हो गया कि मुल्क में दुश्मन के जासूसों और मुख़बिरो के लिए जाये पनाह मौजूद है और अगर दो एक वाकेआत का इन्केशाफ हुआ और दो आदमी गिरफतार

---

[1]इरशाद पेज 192 193

हो गए तो यह यकीन नही किया जा सकता कि ऐसे ही कुछ दूसरे लोग मौजूद नहीं हैं जिनका इन्केशाफ नहीं हो सका है और जिन्हें काफी काम करने का मौका मिल रहा है बहरहाल इमाम हसन^{अ०स०} दुश्मन के मुकाबले के लिए तैयार थे और हक के बारे में उसके साथ कोई मुराआत (रिआयत) करने पर आमादा न थे बेशक आपको और आपके साथ हुसैन^{अ०स०} को अपने मुल्क की फिजा की तरफ बेइतमिनानी जरूर थी इसलिए कि खवारिज (हजरत अली^{अ०स०} के दुश्मन) के फितने के बाद से खुद अहले कूफा में फूट पड़ चुकी थी और बहुत से लोग ऐसे भी थे जो ब–जाहिर हजरत अली^{अ०स०} की फौज में शामिल थे मगर कराबत और दोस्ती या किसी और वजह से खवारिज के साथ हमदर्दी रखते थे। हजरत अमीर^{अ०स०} को खुद उन लोगों की शोरिश पसन्दी, एख्तेलाफे राय और नज्म (इत्तेहाद) की कमी से इतनी तकलीफ और परेशानी थी कि आप मौत के आर्जूमन्द थे। तमाम कुतुबे तारीख़ और बिल–खुसूस नहजुल बलागा में वह खुत्बे आपके दर्ज हैं जो आपकी कबीदा खातिर (रंजीदा) बल्कि रूहानी तकलीफ़ के मजहर हैं। आपने उनको मुखातब करके कभी फरमाया कि तुम ने मेरा दिल पीप से भर दिया और मेरे सीने को गम व गुस्से से पुर कर दिया।[1] कभी फरमाया कि काश मुआविया मेरे साथ अपनी जमाअत का तुम्हारी जमाअत (साथियों) से तबादेला (बदल) कर लेता इस तरह जैसे सोने के सिक्के का तबादला चाँदी के सिक्के से होता है यानी तुम में से दस ले लेता और अपनों में का एक मुझे दे देता।[2] कभी फरमाया कितने अफसोस की बात है कि अहले शाम बातिल रास्ते पर मुत्तफिक हैं और तुम हक रास्ते पर हो के बाहम तआवुन (एक दूसरे का साथ) नहीं रखते [3] अहले शाम अपने हाकिम की इताअत करते हैं दराँहालेकि वह खुदा की नाफरमानी करता है और तुम अपने इमाम का कहना नहीं मानते दराँहालेकि वह खुदा की इताअत करता है।[4] और कभी फरमाया कि तुम लोगों से कहा जाता है कि जिहाद के लिए चलो जाड़े के जमाने में तो तुम कहते हो कि यह कड़ाके का जाड़ा है हमें इतनी मोहलत दीजिये कि यह सर्दी कम हो जाये और जब तुम से कहा जाता है गर्मी के जमाने में तो कहते हो कि यह तो तड़ाके की गर्मी है इतनी

---

[1] अखबारूत तुवाल पेज/214, नहजुल बलागा जि/1 पेज 78
[2] इरशाद पेज/164, नहजुल बलागा जि/1, पेज/205
[3] इरशाद पेज/148, नहजुल बलागा जि/1 पेज/72
[4] इरशाद पेज/164, नहजुल बलागा जि/1, पेज/205

मोहलत दीजिये कि यह गर्मी कम हो जाये। अफसोस! तुम गर्मी और सर्दी से इतना भागते हो तो तलवार की आँच से और ज्यादा भागोगे।[1]

यही वह जमाअत थी कि जिससे अब इमाम हसन[अ०स०] को साबिका पड़ा था। आप उन लोगों की हालतों से अच्छी तरह वाकिफ थे और यकीनन अमीरे शाम को भी अपने जासूसो के ज़रिये से यहाँ के हालात का इल्म हो गया होगा और वह यह भी समझते होंगे कि अमीरुल मोमिनीन हजरत अली[अ०स०] की जो हैबत तमाम अरब के कुलूब (दिलों) पर छाई हुई थी वह बिल्कुल उसी दर्जे पर हजरत हसन[अ०स०] के लिए अभी हासिल नहीं हो सकती इसलिए उन्हें हिम्मत हुई कि वह यकायक इराक पर हमला कर दें। चुनाँनचे वह अपनी फौजो को लेकर जसरे मुनहज तक पहुँच गए अब इमाम हसन[अ०स०] ने भी मुदाफिअत (बचाओ) के इन्तेज़ामात शुरू किये और हुज्र बिन अदी को भेजा कि वह दौरह करके तमाम मुकामात के आमिलों को सूरते हाल का मुक़ाबिला करने पर अमादा करें और लोगो को जिहाद के लिए तैयार करे। मगर अन्दाजे के बिल्कुल मुताबिक यह अफसोसनाक सूरत सामने आई कि लोगों ने हुज्र बिन अदी की कोशिश का गर्म जोशी के साथ इस्तेकबाल नहीं किया। आम तौर पर जमूद और सर्द मुहरी (बेहिसी) से काम लिया गया। कुछ थोड़ी सी जमइयत मुकाबले के लिए तैयार हुई थी तो उसमे कुछ हिस्सा खवारिज का था जो किसी न किसी हीले से मुआविया से जंग करना ही चाहते थे। कुछ शोरिश पसन्द और माले गनीमत के तलबगार और कुछ लोग सिर्फ अपने सरदारान कबाएल के दबाव से बा–दिले ना–ख्वास्ता (ना चाहते हुए) साथ हो गए थे। जिन्हे फर्ज के एहसास से कोई वास्ता न था थोड़े लोग वह होंगे जो वाकेई हजरत अली[अ०स०] और इमाम हसन[अ०स०] के शिया समझे जा सकते हैं।[2] बहरहाल हजरत हसन[अ०स०] ने कैस बिन सअ्द बिन एबादह अन्सारी को बीस हजार की फौज के साथ आगे रवाना किया और खुद मुकामे दैर कॉब के करीब साबात में जाके कयाम किया यहाँ पहुँच कर नुमायाँ तौर से आपको अपने साथियो की सर्द मुहरी का मुशाहिदा हुआ आपने उन लोगों को जमा करके खुतबा इरशाद फरमाया जिसका मजमून यह था कि "देखो मैं तमाम खल्क से ज्यादा खल्के खुदा का बही ख्वाह (बेहतर) हूँ और मुझे किसी मुसलमान से कीना नहीं। आगाह होना चाहिए कि इत्तेफाक़ व इत्तेहाद चाहे तुम्हें नापसन्द हो इख्तेलाफ

---

[1] अखबारूत्तुवाल पेज/214 इरशाद पेज/151 नहजुल बलागा पेज/77

[2] इरशाद पेज/193

व इफतेराक़ से बेहतर है चाहे वह तुम्हें कितना ही पसन्द हो याद रखो कि मैं तुम्हारे फायदे के लिए तुम से बेहतर सोचने का हक रखता हूँ। तुमको लाजिम है कि मेरी राय से इन्हेराफ़ और मेरे हुक्म की मुखालिफत न करो। आपकी तक़रीर का खत्म होना था कि मजमे में बद–नजमी पैदा हो गई और खवारिज ने पुकार पुकार कर कहना शुरू किया कि यह काफिर हो गए कुछ लोगों ने आप पर हमला करके आपके क़दमों के नीचे से मुसल्ला खींच लिया और दोशे मुबारक पर से चादर भी उतार ली। आप फौरन घोड़े पर सवार हो गए और आवाजें बलन्द से पुकारा कि कहाँ हैं रबीआ और हमदान यह दोनों कबीले इधर उधर से दौड़ पड़े और शोरिश पसन्दों को आपसे दूर किया [1]

इब्ने जुरैर की रिवायत यह है कि किसी ने खबर उड़ा दी कि कैस बिन सअ्द क़त्ल हो गए बस उस पर यह गदर मच गया और वह खैमा जिसमें इमाम हसन[अ०स०] का कयाम था लूट लिया गया। यहाँ तक कि जिस बिछौने पर आप थे उसे आपके नीचे से खींच लिया गया [2]

उसके बाद आप मदाएन की तरफ रवाना हो गए मगर वहाँ पहुचने पर जर्राह बिन कबीसा असदी ने जो उन्हीं खवारिज में सेथा कमीनगाह मे छुप कर खजर से हमला कर दिया जिससे आप जख्मी हो गए अरसे तक मदाएन में इलाज के बाद आप अच्छे हुए और फिर मुआविया से मुक़ाबिला की तैयारी की

मुआविया ने आपके पास पैगाम भेजा कि आप जिन शराएत पर चाहें मैं सुल्ह करने पर तैयार हूँ और उसके साथ आपकी फौज के उन सरदारों के खुतूत भी रवाना कर दिये जिन्होंने खुफिया तरीक़े पर मुआविया से साज़ बाज करना चाही थी और दावत दी थी कि आप आईये तो हम हसन[अ०स०] को गिरफ्तार करके आपके सिपुर्द कर देंगे या उनको क़त्ल कर डालेगे [3]

इमाम हसन[अ०स०] पहले ही अपने साथियो की गद्दारी से वाकिफ थे और इसलिए जग को मुनासिब वक्त खयाल नहीं करते थ लेकिन यह जरूर चाहते थे कि कोई सूरत ऐसी पैदा हो कि बातिल की हिमायत का धब्बा भी मेरे दामन पर न आने पाये इस खानदान के लोगो को हुकूमत व इकतेदार की तो हवस कभी रही नहीं, उन्हें तो मतलब इससे था कि मखलूके खुदा की बेहतरी हो

---

[1] इरशाद पेज 194

[2] तबरी जि/6 पेज/92

[3] सही बुखारी जि/2 पेज/71. इरशाद पेज/195

और हुदूद व हुकूके इलाही का इजरा (राएज) हो अब मुआविया ने जो आप से मुँह मागे शराएत पर सुलह करने की आमादगी जाहिर की तो आपने अपने नाना और बाप की देखी हुई सीरत के मुताबिक मसालिहत के बढ़ते हुए हाथ को नाकाम वापस नहीं किया। आपने सुल्ह के शराएत मुरत्तब करके मुआविया के पास रवाना किये वह तमाम शराएत जिन से कानूनी तौर पर आईन व शरीयत का तहफ्फुज हो जाता है। चुनानचे सुलह की दस्तावेज मुकम्मल हुई और जंग का खातिमा हो गया। हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] अपने बाप की वफात के बाद अपने बड़े भाई हजरत इमाम हसन[अ०स०] के साथ उन सर्द व गर्म हालात का बराबर मुतालिआ कर रहे थे उन्होंने उन वाकेयात पर कभी एक गैर मुतअल्लिक इन्सान की तरह नजर नहीं डाली बल्कि वह उसको अपनी सरगुजश्त (सानेहा) समझते थे और जानते थे कि हमें इसी हाल पर मुस्तक्बिल की इमारत को बलन्द करना है उस वक्त के वाकेयात का यह पहलू बहुत अहम था कि साथियों की कसरत और जमइयत पर एतेमाद का खयाल कुल्लियतन दूर अज कार (सिरे से गलत है) है। हुसैन[अ०स०] अपने वालिदे बुजुर्गवार के साथ एक दफा उन साथियों के अमल को देख चुके थे कि वह उनके सामने तलवारें खींच कर आ गए और अब अपने बड़े भाई के साथ साथियो के तर्जे अमल को देख लिया कि खुद अपनी फौज के हाथों किस तरह उनके भाई की जान खतरे में पड़ गई थी मुमकिन है किसी वजह से उस वक्त हुसैन[अ०स०] अपने बड़े भाई के पास मौजूद न हों और ऐसा ही मालूम होता है। इसलिए कि उस सख्त और नागवार मौके पर कोई तजकिरा इमाम हुसैन[अ०स०] का नजर नहीं आता मगर उन्होंने यकीनन उन हालात को दर्दमन्दाना तरीके पर सुना और उस जख्म को देखा होगा जो उनके भाई के जिस्म पर खुद अपने साथ वालो मे से किसी के हाथ से आ गया था और उसका असर उनके हस्सास दिल पर जितना भी हुआ हो वह कम है।

इसके अलावा आपने अपने बुजुर्गों की सीरत में एक दफा यह नमूना और देख लिया कि अम्ने आलम के लिए नुक्त-ए-अव्वल सुल्ह व सलामती हैं जंग का दर्जा सुल्ह के बाद है और सुल्ह के इमकानात पैदा होने तक है इसलिए सुल्ह के खयाल को जंग के पहले और जंग के दौरान मे हमेशा पेशे नजर रखना चाहिए दुश्मन से सुल्ह की गुफ्तगू को कभी अपनी खुद्दारी के खिलाफ न समझो चाहे जजबाती लोग इस पर मोतरिज भी हों और चाहे उसके लिए तुम्हे अपने जाह व इकतेदार राहत व आराम या किसी दूसरे

शख़्सी मफ़ाद की क़ुर्बानी भी कर देना पड़े मगर यह खयाल जरूरी है कि इस सुल्ह के अन्दर कोई ऐसा उसूल पामाल न होने पाये जिसका महफ़ूज रखना बहरहाल अपना मुकद्दस फरीजा है। यही नमूना हुसैन[अ०स०] ने अपने नाना से देखा था यही उनको अपने बाप के यहाँ नजर आया और यही अब उनको अपने वाजिबुल इताअत भाई इमाम हसन[अ०स०] की जानिब से पेशे नजर था।

एक बात जिम्नी तौर पर और दोबारा सामने आ गई। वह यह कि सच्चाई के रास्ते मे अगर इतमामे हुज्जत की जरूरत हो तो दोस्त नहीं बल्कि दुश्मन के भी इक़रार पर भरोसा कर लेना चाहिए

इस सुल्ह नामे के मुकम्मल शराएत जो अल्लामा इब्ने हजर मक्की ने दर्ज किये हैं हस्बे जैल हैं।[1]

1. यह कि मुआविया हुकूमत इस्लाम में किताबे खुदा और सुन्नते रसूल और सही रास्ते पर चलने वाले खुलफ़ा–ए–राशेदीन के तरीके पर अमल करेंगे [2]
2. यह कि मुआविया को अपने बाद किसी खलीफा के नामजद करने का हक न होगा।
3. यह कि शाम व इराक व हिजाज व यमन सब जगह के लोगों के लिए अमान होगी।
4. यह कि हजरत अली[अ०स०] के असहाब और शिया जहाँ भी रहें उनके जान व माल व नामूस व औलाद महफूज रहेंगे। [3]
5. यह कि मुआविया हसन इब्ने अली[अ०स०] और उनके भाई हुसैन[अ०स०] और किसी को भी खानदाने रसूल[स०अ०] में कोई नुकसान पहुँचाने या उनकी जान लेने की कोशिश न करेंगे। न खुफिया तरीके पर और न ऐलानिया और उनमे से किसी को किसी जगह धमकाया, डराया और दहशत में मुबतिला नहीं किया जायेगा

यह मुआहिदा रबीउल अव्वल या जमादिउल ऊला सन 41 हिजरी को अमल मे आया।

---

[1] सवाएके मुहर्रिका पेज 81
[2] शिया माखजों (Writers) में इस शर्त के आख़िरी जुज का जिक्र नहीं है
[3] इस शर्त के सुबूत के लिए मुलाहिज़ा हो तबरी जि/6 पेज/97

अगर ग़ौर किया जाये तो इस सुल्ह के जरिये से हजरत इमाम हसन[अ०स०] ने वह मकसद हासिल कर लिया था जिसके लिए उनकी अपने फरीक़ मुख़ालिफ से (मुनाजेअत) लड़ाई थी

इसमे कोई शुबहा नही कि यह हजरात जाती अगराज (फाएदों) के लिए किसी से मुख़ासिमत (दुश्मनी) नहीं रखते थे। उनकी लड़ाई जो कुछ थी वह उसूले शरियत व मजहब के लिए हजरत इमाम हुसन[अ०स०] ने सुल्ह नामे की पहली शर्त के लिहाज से अमीरे शाम को पाबन्द बना दिया था कि वह किताब व सुन्नत के मुताबिक़ अमल करे इससे आपने एक तरफ तो यह बात हमेशा के लिए मुसल्लम बना दी कि उसूले शरीयत और है आईने हुकूमत और है। यह वह बड़ी चीज थी जिसके लिए आले मोहम्मद बराबर कोशाँ रहे थे यानी कभी ऐसा न हो कि हुक्कामे इस्लाम का तर्जे अमल ऐने शरीयत समझ लिया जाये। दूसरा अम्र यह भी आपने साबित कर दिया बल्कि फरीके मुख़ालिफ से तस्लीम करा लिया कि अब तक जो कुछ हुकूमते शाम का रवैया रहा है वह किताब और सुन्नत के मुताबिक़ नहीं है क्योंकि हर शख़्स जानता है कि सुल्हनामे की बुनियादी चीजें वही होती हैं जो दो फरीकों मे बेनाए मुख़ासिमत (लड़ाई की बुनियाद) हों अगर हुकूमते शाम का साबिका तर्जे अमल अब तक बराबर किताब व सुन्नत के मुताबिक़ होता तो इस शर्त की जरूरत क्या थी। इसके बाद दूसरी अहम शर्त यह करार दी कि उनको अपने बाद किसी को नामजद करने का हक़ न होगा। इस तरह आपने मुसतक्बिल का तहफ्फुज़ किया क्योकि यह मुमकिन था कि मुआविया अपनी जिन्दगी भर किताब और सुन्नत के मुताबिक अमल करते लेकिन बाद मे कोई ऐसा आता जो इसके ख़िलाफ करता इसलिए आपने आइन्दा के लिए जानशीन बनाने के हक़ को सल्ब (छीन) कर लिया।

बहर हाल सुल्ह हो गई। फौजें वापस चली गईं और मुआविया की गिरफ्त तमाम ममालिक इस्लामिया पर मज़बूत हो गई और अब शाम व मिस्र के साथ इराक व हिजाज़, यमन और ईरान वग़ैरह भी उनके तसर्रुफ मे आ गए। हजरत इमाम हसन[अ०स०] को इस सुल्ह के बाद अपने साथ के बहुत से लोगों की तरफ़ से इन्तेहाई दिलख़राश और तौहीन आमेज अलफाज़ सुनना पड़े जिनका बर्दाश्त करना उन्हीं का काम था। बाज लोग ऐसे जो कल तक "अमीरुल मोमिनीन" कहकर तस्लीम बजा लाते थे आज "मुजिल्लुल मोमिनीन" यानी मोमिनीन की जमाअत को जलील करने वाले' के अलफ़ाज़ से सलाम

करते थे मगर इमाम हसन[अ०स०] ने सब्र व इस्तेकलाल और नफ्स की बलन्दी के साथ इन तमाम नागवार हालात को बरदाश्त किया और मुआहिदे पर सख्ती के साथ कायम रहे लेकिन मुआविया ने जग के खत्म और सियासी इकतेदार के कायम होते ही इराक में दाखिल होकर नखीला में जिसे कूफे की सरहद समझना चाहिए कायम किया। और जुमे के खुतबे के बाद यह ऐलान कर दिया कि मेरा मकसद जग से यह न था कि तुम लोग नमाज पढने लगो। रोजे रखने लगो, हज करो या जकात अदा करो यह सब तो तुम करते ही हो। मेरा तो मकसद जग से फ़कत यह था कि मेरी हुकूमत तुम पर मुसल्लम हो जाये। वह हसन[अ०स०] के इस मुआहदे के बाद मुकम्मल हो गई और बावजूद तुम लोगो की नागवारी के खुदा ने मुझे इस मतलब में कामयाब कर दिया। रह गए वह शराएत जो मैंने हसन[अ०स०] के साथ किये हैं वह सब मेरे पैरों के नीचे हैं और उनका पूरा करना या न करना मेरे हाथ की बात है। मजमे में एक सन्नाटा छाया हुआ था मगर अब किस में दम था कि वह उसके खिलाफ लबकुशाई (मुँह खोलना) करता।

इकतेदार शाही की जुरअत इस नुक्ते तक पहुँची कि कूफ़े में इमाम हसन[अ०स०] और इमाम हुसैन[अ०स०] की मौजूदगी में मुआविया ने हजरत अमीर[अ०स०] और इमाम हसन[अ०स०] की शान में ना सजा कलेमात इस्तेमाल किये। इस पर सुकूत करना एतराफ व इकरार का मुरादिफ़ (बराबर) समझा जा सकता था। इसलिए फौरन इमाम हुसैन[अ०स०] जवाब देने के लिए खडे हो गए मगर हजरत इमाम हसन[अ०स०] ने आपको बिठा दिया और खुद खडे होकर निहायत मुख्तसर और जामे अलफाज में अमीरेशाम की तकरीर का जवाब दिया[2] हुसैन[अ०स०] जानते तो पहले ही थे मगर उस वक्त महसूस कर लिया था कि हालात की रफ्तार क्या है और हम को इसका आखिरी मुकाबिला किस तरह करना होगा। मगर वह जल्दबाज इन्सान न थे, न वह जिम्मेदारियों के महल से ना–वाकिफ थे इन्हीं सब्र आजमा इन्तेजार के साथ हालात की तदरीजी रफ्तार (धीरे धीरे) के दोश ब दोश अपने किरदार की मन्जिल को आगे बढ़ाना था और उसके पहले एक फर्ज शनास इन्सान की तरह अपने भाई के साथ वक्त की मौजूदा साकिन मगर पुर इज्तिराब (बेचैनी) खामोशी में गर्क़ रहना था।

---

[1] इरशाद पेज 196

[2] इरशाद पेज / 196

हज़रत इमाम हसन[अ०स०] ने उमूरे सलतनत से किनारा कशी इख़्तियार करने के बाद कूफ़े का क़याम तर्क करके फिर से मदीने में जाकर सुकूनत इख़्तियार फ़रमाई तो हुसैन[अ०स०] ने भी भाई का साथ दिया और मदीने में जाकर क़याम फ़रमाया। मगर इस इत्तेहादे अमल के बावजूद भी बनी उमय्या ने यह गलत शोहरत दी कि इस सुलह के बारे में हज़रत इमाम हसन[अ०स०] और इमाम हुसैन[अ०स०] दोनो भाईयों की यकजेहती (एकता) में वाकई कोई फर्क आ जाये मगर उनके तमाम तवक़्क़ुआत (अन्देशे) बिल्कुल गलत साबित हुए

इमाम हुसैन[अ०स०] कौल, अमल और मसलक में अपने भाई इमाम हसन[अ०स०] के साथ बिल्कुल मुत्तहिद थे और हमेशा रहे। आपको मालूम था कि इमाम हसन[अ०स०] ने अगरचे इतमामे हुज्जत के लिए ख़ामोशी और गोशा नशीनी इख़्तियार कर ली है मगर खयाल इनका भी यही है कि आख़िर मे फिर तलवार दरमियान में आयेगी और आख़िरी फैसला बग़ैर एक सख़्त और मुशकिल अकदाम के न हो सकेगा और वह इसके लिए तय्यार भी हैं ब शर्तेकि हालात की तदरीजी (धीरे धीर) रफ्तार इन्हीं के दौरे हयात में इस आखिरी नुक्ते तक पहुँच जाये। जो इस आख़िरी इकदाम के लिए ज़रूरी है। इमाम हसन[अ०स०] अक्सर यह अशआर ब तौरे तम्सील (मिसाल) पढा करते थे

من عاذ بالسيف لاقی فرصة   موت علی عجل او عاش منتصعا

لاتركبوا السّهل ر السهل معصدة   لن تدركوا المجد حتّی تركبوا عنف

'जो तलवार को अपना पुश्त पनाह बनाये वह अजीब सुकून व इतमिनान हासिल करेगा या दुनिया से जल्द ही गुजर जाना और या जिन्दगी ऐसी जो दाद रसी के साथ हो कभी सहूलत पसन्दी से काम न लो। सहूलत पसन्दी बड़ी खराबी की बात है इज्जत हासिल कर ही नहीं सकते जब तक कि दुशवार गुजार मन्जिल को तय न करो '[1]

रह गये मौजूदा हालात, उनके लिहाज से इमाम हुसैन[अ०स०] भी इस सुल्ह से मुत्तफ़िक थे चुनानचे ब–रिवायत दीनवरी जब हुज्र बिन अदी और उबैदा बिन अम्र जो सुल्ह के मुआमले में एख़तेलाफ रखते थे इमाम हुसैन[अ०स०] के पास आये और कहा आप लोगों ने इज्जत के बदले में जिल्लत को खरीद लिया। कम हुकूक हासिल करके बहुत से हुकूक से दस्तकशी (हाथ खींचना) कर ली। अच्छा अब आप ब–जाते खुद आज हमारी एक बात मान लीजिये फिर कभी कोई बात न मानियेगा वह यह है कि आप हजरत इमाम हसन[अ०स०] को तो

[1] किताबुल–यिलदान ले–इब्नुल फ़िक़ीह अल–हम्दानी तबअ लीदन पेज 53

इस सुल्ह के रास्ते पर जो उन्होने इख्तियार किया है छोड दीजिये। लेकिन आप अपने साथियो को जो कूफ़े में या कूफ़े के बाहर हैं जमा कीजिये और हम दोनो को मुकददमतुल जैश (थोड़ा लशकर जो बड़ी फ़ौज के आगे चले) का अफसर बना दीजिये। फिर देखियेगा कि मुआविया को खबर भी न होगी और हम अचानक तलवारें मारते हुए नजर आयेंगे। हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने फरमाया यह नहीं हो सकता। हम अहेद कर चुके और कौल व करार हो चुका। इसी तरह अली बिन मोहम्मद बिन बशीर हमदानी का बयान है कि मैं सुफियान बिन अबी लैला की मईयत मे मदीना पहुँचा और इमाम हसन[अ०स०] के पास मिलने गया आपके पास उस वक्त मुसय्यब बिन नुजबा अब्दुल्लाह बिन दवाक तमीमी और सिराज बिन मालिक खशई मौजूद थे। मैंने कहा अस्सलामु अलैका या मुजिल्लुल मोमिनीन सलाम हो आपको ऐ मोमिनीन को जलील करने वाले आपने फरमाया व अलैकस्सलाम बैठो मैं मोमिनीन की जिल्लत का बाइस नहीं हूँ। मैंने तो उनकी इज्जत रख ली और उनको खूँरेजी से बचा लिया। मैं देख रहा था कि अब जंग का जोश और वलवला बाकी नहीं है और कमजोरी नुमायाँ है। मैं देख रहा था कि अगर जंग जारी रखी गई तब भी एक दिन यही होना है कि मुआविया की बादशाहत कायम हो जाये।' अब यह लोग हजरत के पास से उठकर इमाम हुसैन[अ०स०] के पास गए और पूरी गुफ्तगू हजरत इमाम हसन[अ०स०] की बयान की। आपने फ़रमाया सच कहा अबू मोहम्मद (हजरत हसन[अ०स०]) ने तुम्हें लाजिम है कि हर शख्स तुम मे से खामोश होकर घर में बैठ जाये और बैठा रहे उस वक्त तक कि जब तक यह शख्स (मुआविया) जिन्दा है।[1]

यह आखिरी फिकरा दर हकीकत बड़ा दूर रस था। आप समझते थे कि मुआहिदे की पाबन्दी नही होगी और आप जानते थे कि यह मुआहिदा मौत की आखिरी हिचकी उस वक्त लेगा जब मुआविया दुनिया से जाने लगेंगे। और अपने बाद जानशीन नामजद कर जायेंगे। वह वक्त होगा जब हमारी जानिब से कोई दूसरा इक़दाम किया जाये। आइन्दा चल कर दुनिया को हुसैन[अ०स०] के तदब्बुर की दाद देना पड़ेगी जिन्हो ने बीस बरस पहले यानी सन 41 हिजरी की तस्वीर अपनी आँख से देख ली और हुसैन[अ०स०] की पेश बीनी अईन्दा चलकर हर्फ़ ब–हर्फ़ पूरी हो कर रही।

---

[1] अख़बारूत्तुवाल पेज / 222

इस मुआहिदे के बाद अब बनी उमैया की कूव्वत बहुत मुस्तहकम हो गई थी। उनके रास्ते में जो एक खरख्शा (रुकावट) था वह बिल्कुल दूर हो गया था। और इन्हे अपनी स्कीम को पूरा करने का पूरा मौका मिल गया था। चुनानचे जितनी शर्तें हुई थीं सबकी मुख़ालिफ़त की गई और किसी एक पर भी अमल न हुआ।[1]

पहली शर्त यह थी कि किताब खुदा और सुन्नते रसूल[स०अ०] पर अमल होगा। यह शर्त मुसलमानों के किसी फ़िर्के के नजदीक भी पूरी नहीं हुई। शियों का अकीदा तो इस बारे में जाहिर है और अहले सुन्नत के नुक्त ए नजर से हजरत रसूल अल्लाह[स०अ०] की वफात के बाद सिर्फ तीस बरस तक खिलाफते राशिदा रही है और यह तीस बरस की मुद्दत खत्म हो जाती है। हजरत इमाम हसन[अ०स०] की सुलह पर। उसके बाद मुलूकियत व जहाँबानी और दुनिया दारी है खिलाफते राशिदा नहीं है। अगर यह शर्त पूरी हुई होती कि किताबे खुदा और सुन्नते रसूल[स०अ०] पर अमल हो तो कोई वजह न थी कि मुआविया की हुकूमत खिलाफते राशिदा के हुदूद से खारिज होती उमर बिन अब्दुल अजीज तक के बारे में यह कहा गया है कि उनका जमाना खिलाफते राशिदा से मिलता जुलता है मगर फासिला होने की वजह से इसमें महसूब (शुमार) नहीं हुआ। मगर मुआविया के दौरे हुकूमत के मुतअल्लिक किसी ने यह राय जाहिर नही की। मालूम हुआ कि तमाम मुसलमानो के नजदीक इस शर्त पर अमल नहीं हुआ। इसके अलावा वाकेआत से भी यही जाहिर होता है। इसकी चन्द मिसालें जैल में दर्ज की जाती हैं।

इनमें से एक बात थी सियासी मसालेह (Adviser) की बिना पर जियाद बिन सुमय्या को अपने बाप का नाजाएज फ़रजन्द बना कर अपना भाई क़रार देना हालाँकि इस्लाम में नाजाएज फरजन्द को नसब में शरीक नहीं किया गया है तफसील इसकी यूँ है कि जियाद पहले जियाद बिन उबैद कहलाता था क्योंकि उसकी माँ सुमय्या एक सकफी कबीले वाले शख्स के गुलाम उबैद की जौजियत में थी और यह खुद हारिस बिन कल्दा की कनीज थी हारिस ने इसको आजाद कर दिया तब इसके यहाँ जियाद पैदा हुआ और इसलिए जियाद गुलामी से खारिज रहा और बढ़ा तो बड़ा समझदार और जहीन और अक्लमन्द और अदीब देखा गया। मुगीरा बिन शअ्बा जब खलीफ़–ए–दुवुम की तरफ से बसरा के हाकिम हुए तो वह जियाद को अपने साथ बसरा ले गए

[1]तबरी जि/6. पेज/93

और वहाँ उसे लिखना पढ़ना सिखलाया जब हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] खलीफा हुए तो आपने जियाद को सरजमीनें फारस का गवर्नर बनाया। आपकी शहादत के बाद मुआविया ने जियाद को एक तहदीद आमेज (धमकाने वाला) खत लिखा जिस पर जियाद ने मज्म–ए–आम में खुत्बा पढ़ा और कहा कि जिगर ख्वारा का लड़का और निफाक़ का मरकज और दुश्मनाने इस्लाम का सरदार मुझे डराना चाहता है? हालाँकि मेरे और उसके दरमियान रसूल अल्लाह[स०अ०] के चचाजाद भाई (इब्ने अब्बास) और हसन बिन अली[अ०स०] नव्वे हजार अपने शियों की फौज लिये हुए मौजूद हैं। खुदा की कसम अगर उसने इधर का रूख किया तो वह देखेगा कि मैं तलवार लिये हुए सामने मौजूद हूँगा और बड़ी शदीद जंग करूँगा। मुआविया को मालूम हो गया कि उस शख्स को धमकियों से मुतअस्सिर नही किया जा सकता जब इमाम हसन[अ०स०] ने सुल्ह फरमाई और मुआविया की सलतनत मजबूत हो गई तो जियाद इस्तखर (फारस का किला) में किला बन्द हो गया [1]

मुआविया ने उसे अमान नामा लिखा कि तुम मेरे पास आ जाओ। जो कुछ तुम कहोगे वह मैं तुम्हे दूँगा चुनानचे जियाद, मुआविया के पास आया और मुआविया की बारगाह में उसका रसूख बढ़ता चला गया। यहाँ तक कि सन 44 हिजरी में मुआविया ने उसे अपना भाई जाहिर किया [2] जाहिर है कि एक ऐसा शख्स जिसके असली बाप का पता न हो और हो भी तो वह एक गुलाम के सिवा कोई न हो वह एक दम शहनशाहे वक्त का भाई बन जाये इससे बढ़कर उसकी इज्जत क्या हो सकती है। मुआविया ने कहा यह मेरे बाप अबूसुफियान के नुत्फे से है और उसकी गवाही किसने दी? अबू मरयम सलूली ने जो क़ब्ले इस्लाम ताएफ़ में शराब बेचता था। उसने कहा कि अबू सुफियान मेरे शराब खाने मे आया और मुझसे एक इस किस्म की औरत को बुला देने को कहा जो उस रात में उसकी दिलचस्पी का बाइस हो मैंने सुमय्या को उसके पास बुला दिया और इस तरह अबू सुफियान और सुमय्या में तअल्लुकात नाजाएज पैदा हुए और उन तअल्लुकात से ज़ियाद की विलादत हुई। एक शख्स ने क़बील–ए–बनी मुसतलक़ में से जिसका नाम यज़ीद था गवाही दी की मैंने अबू सुफियान को यह कहते सुना था कि जियाद मेरे नुत्फे से है हालाँकि पहले जियाद ने कूफे में आकर वहाँ के लोगो से यह ख्वाहिश

---

[1] तबरी जि 6, पेज 97

[2] अल फुज़रा वल किताब पेज/17

की थी कि तुम मुआविया के साथ मेरी कराबत के लिए गवाही दे दो उन सबने इन्कार किया कि हम झूठी गवाही न देंगे। यहाँ से मायूस होकर वह बसरा गया और वहाँ एक शख़्स गवाही देने के लिए तय्यार हो गया [1]इस सुबूत को काफी समझा गया और जियाद मुआविया के भाई क़रार पा गए।

इस बात से मुसलमानो में और बिल-ख़ुसूस सहाबा के तब्के में बड़ी बेचैनी पैदा हुई क्योंकि पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] का यह इरशाद मुतवातिर तौर पर सबको मालूम था कि ''الولد للفراش و للعاهر الحجر'' यानी 'बच्चा अस्ली शौहर की तरफ मन्सूब होगा और ज़ानी के लिए बस पत्थर है।' मगर इकतेदारे हुकूमत के कान अवाम की चीख़ पुकार सुनने से बालातर होते हैं। उन्होंने कोई परवा नहीं की उनके लिए इससे बढ़कर और क्या हो सकता है कि इस ज़रिये से उन्होंने जियाद और उसकी औलाद को हमेशा के लिए ख़रीद लिया

चुनानचे जब जियाद के ज़रा सर उठाने का अन्देशा पैदा होता तो यह एहसान याद दिला कर उसको सर झुकाने पर मजबूर कर दिया जाता था जैसा कि एक मर्तबा जबकि जियाद बहुत से तहाएफ लेकर मुआविया के पास आया जिनमें जवाहरात का एक निहायत नफीस गुलूबन्द भी था और मुआविया उसको देखकर बहुत खुश हुए तो जियाद ने ब तौरे फ़ख़्र कहना शुरू किया। हुज़ूर देखिये मैंने आपके लिए किस तरह इराक़ को पामाल कर दिया है और किस तरह वहाँ के चप्पे चप्पे पर आपका तसल्लुत कायम कर दिया है और वहाँ की हर लज़्ज़त व नेअमत आपके कदमों पर लाकर डाल दी है। यह सुनकर मुआविया अभी कुछ कहने न पाये थे कि यजीद बोल उठा तुमने यह सब कुछ किया तो कमाल क्या किया? हमने जो तुम को क़बील ए सकीफ की गुलामी से निकाल कर कुरैशी होने की इज्जत दे दी और उबैद की फरजन्दी के बजाये अबू सुफियान की फरजन्दी का शरफ अता कर दिया और दफ्तर मे कलम की घिस घिस से ऊँचा करके मिम्बरों की बलन्दी नसीब कर दी [2]

ज़ाहिर है यजीद ऐसे नौ उम्र की जबान से जियाद ऐसे सिन रसीदा का इन अल्फाज को सुनकर बर्दाश्त करना एहसासे कमतरी ही का नतीजा था जो नसबी एतेबार से उसमे मौजूद थी। फिर इस सूरत मे जियाद की नस्ल अब कभी मुआविया या उनके बाद यजीद के मुकाबले मे सरताबी की कहाँ हिम्मत

---

[1]तबरी जि/6 पेज/122

[2]तबरी जि/6 पेज/123

रख सकती थी। यह दूर रस असर था इस सियासी इकदाम का जो जियाद को भाई बनाकर किया गया था चाहे शरीयत इस पर कितनी भी सरजनिश का मुस्तहक क़रार देती हो।

दूसरा वाकेया एक शख़्स थे हतात बिन जैद बिन अलक़मा तमीमी दारमी हज़रत रसूल अल्लाह[स0अ0] ने उनमे और मुआविया में मुवाख़ात (भाई चारगी) क़रार दी थी वेसी ही मुवाख़ात जैसी एक मर्तबा महाजरीन में और एक मर्तबा महाजरीन और अन्सार में की गई थी हर शख़्स जानता था कि इस मुवाख़ात से नसबी एहकाम जारी नहीं होते और मीरास एक की दूसरे का नहीं मिलती। यही अमल दर आमद मुत्तफिका तौर पर साबित था कि हर एक की मीरास उसके नस्बी वरसा को पहुँचे। इस मजहबी भाई को नहीं जो मुवाख़ात के जरिये से भाई करार दिया गया है मगर इत्तेफाक की बात कि हतात मुआविया के पास आये हुए थे और उनका वही इन्तेकाल हो गया तो मुआविया ने उनकी मीरास पर कब्ज़ा कर लिया। यह कहकर कि यह मेरा भाई है। इस पर भी मुसलमानों मे शोर हुआ यहाँ तक कि फरजदक ने इस बारे में शेअर भी कहे:

ابوک وعمی یا معاوی اورثا تراثا فیحتا زالتراث اقاربه

فما بال میراث الحتات آکلته ومیراث صخر جامدلک دائبه

فلوکان هذا الامر فی جاهلیة عصمت من المرء اغنیں حلائبه

ولوکان فی دین سوی ذا سا حقنا اوعض بالماء شاربه

(यानी) तुम्हारे बाप ने और मेरे चचा ने ऐ मुआविया मीरास छोड़ी तो उसूल यही रहा कि मीरास कराबतदारों को दी जाये। फिर क्या बात है कि हतात की मीरास तो तुमने नोश जाँ फरमाई और अबू सुफ़ियान की मीरास तुम्हारी ही मिलकियत क़रार पाई। पस यह मुआमला अगर जमान ए जाहिलियत की रस्म में दाखिल है तो हमें इसका इल्म होना चाहिए और अगर यह इसके अलावह किसी और दीन मे है जिसकी तुमने ईजाद की है तो हमें भी हमारा हक मिलना चाहिए नहीं तो यह तुम्हें हज्म नहीं हो सकता [1]

---

[1] असदुल गाबा जि/1 पेज/379

मगर तारीख नहीं बताती कि मुआविया ने इस माल को कभी वापस किया हो या हतात के वरसा को इसका मुआविजा दिया गया हो। इसके अलावा और बहुत सी बातें खिलाफे शरीयत रिवाज पा रही थीं। मसलन मुआविया ने जकाते फितरा के मुतअल्लिक कहा हमारी राय मे जकाते फितरा दो मुद (एक तरह का पैमाना) समरा शाम हैं यानी शाम के गेहूँ दो मुद (समर–ए–शाम यानी शाम के गेहुँ 2 मुद) अबू सईद खदरी ने फरमाया यह मुआविया की मुकरर करदा मिकदार है हम न इस पर अमल करते हैं और न इसे कुबूल करते हैं। हम अहदे रसूल[स0अ0] में हर एक छोटे बड़े और गुलाम व आज़ाद की तरफ से जकाते फितरा एक साअ् गन्दुम (यानी दो सौ 234 चौतीस तोला वजन) एक साअ् पनीर या जौ या खुजूर या मुनक्का, इसी तरह निकालते रहे यहाँ तक कि जब मुआविया हज के लिए आये तो उन्होंने कहा हमारी राय में दो मुद गन्दुम शाम जकाते फ़ितरा है। अबू सईद ख़दरी का कौल है कि मैं जब तक जिन्दा हूँ कभी मुआविया के इस कहने के मुताबिक़ अमल न करूंगा। इब्ने जुबैर ने मुआविया की इस राय को सुनकर कहा ''بئس الاسم الفسوق بعد الايمن'' यानी ईमान लाने के बाद फासिक होना बहुत बुरा है 'मिकदारे जकाते फितरा तो बस साअ् ही है[1]

मिक़दाम बिन मअ्दी कर्ब की गुफ्तगू जो मुआविया से हुई है उसमें उन्होंने कहा तुम्हें खुदा की क़सम बताओ, क्या रसूल[स0अ0] ने नही फ़रमाया है कि सोना पहनना हराम है। मुआविया ने कहा सही है। फिर मिकदाम ने कहा क्या आँहजरत[स0अ0] ने दरिन्दा जानवरो की खाल पर बैठना और उनका पहनना ममनूअ करार नहीं दिया था? मुआविया ने कहा, हाँ यह भी सही है मिकदाम ने कहा, फिर क्या बात है कि मैं यह सब चीजें तुम्हारे घर में देखता हूँ? इसके अलावा शरीयतं इस्लाम का हुक्म है कि पेशाब या पायखाने के वक्त रू ब किब्ला या पुश्त ब किब्ला बैठना जाएज नहीं है। हजरत अबू एय्यूब अन्सारी जब शाम मे पहुँचे तो तमाम पायखानेके मुकामात को रू–ब–किब्ला पायाउन्होंने अस्तिगफार पढकर मुह फेर लिया।[2]

अरफा के रोज (हज के दिन) हज में तलबिया कहना लब्बैक अल्लहुम्मा लब्बैक ला–शरीक ल–क–लब्बैक। जरूरी और लाजिमी शआएरे (निशानी) हज मे से है। रसूले करीम[स0अ0] और असहाब बराबर कहते चले आये मगर इस नेक

---

[1]दरासातिल लबीब मुल्ला मोहम्मद मुईन पेज / 77
[2]दरासातिल लबीब पेज / 139

काम को मुआविया तर्क करते हैं और लोगों को इससे मना करते हैं। हजरत इब्ने अब्बास ने सईद से अरफा के रोज़ पूछा कि क्या वजह है मैं लोगों से तलबिया की आवाज नहीं सुनता। सईद ने कहा कि लोग मुआविया से डरते हैं। यह सुनकर इब्ने अब्बास अपने खैमे से निकले और पुकारे लब्बैक अल्लहुम्मा लब्बैक और कहा। अगरचे यह मुआविया के लिए अलज्ज़ाम (जिल्लत का सबब हो) इन लोगो ने अली[अ०स०] की अदावत से इस सुन्नत को तर्क कर दिया है। इस तरह की तीन रिवायतें कन्जुल उम्माल में दर्ज हैं जिनमें इब्ने अब्बास ने बद–दुआ दी है इस बात पर कि अरफा के रोज तलबिया कहने से इसलिए मना करते है कि अली अरफे के रोज तलबिया फरमाया करते थे।

हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] से यह कद (हसद) और ज़िद बहुत से सिनन व अहकाम में तरमीम का बाइस हो गई। चुनान्चे इमाम फखरूद्दीन राजी लिखते हैं कि हजरत अली[अ०स०] नमाज में बिस्मिल्लाह बलन्द आवाज से कहने पर ज़ोर देते थे। इसलिए जब बनी उमय्या को इकतेदार हासिल हुआ तो उन्होंने बलन्द आवाज से बिस्मिल्लाह कहने की मुमानिअत पर जोर दिया सिर्फ़ इस कोशिश में कि हजरत अली[अ०स०] के आसार बाकी न रहें।[1]

मदीने में मुआविया ने लोगो को नमाजे इशा बा जमाअत पढ़ाई तो न बिस्मिल्लाह पढ़ी और न बाज तकबीरें कहीं। जब नमाज से फारिग़ हुए तो जमाअते मुहाजरीन व अन्सान ने शोर मचाया कि तुमने नमाज़ मे अमदन चोरी की है या भूल गए हो? बिस्मिल्लाह और सज्दे मे जाते हुए तकबीरें कहाँ गईं? मगर मुआविया ने कोई परवाह नहीं की और उस नमाज का ऐआदा (दोबारा नहीं पढ़ी) नहीं किया।[2]

इसके साथ ही बुखारी और मुस्लिम दोनो के यहाँ यह रिवायत मौजूद है कि इमरान बिन हसीन ने हजरत अली[अ०स०] के साथ बसरा में नमाज पढ़ी और ख़त्मे नमाज के बाद कहा कि उन्होने हमको वह नमाज़ याद दिलाई जो हम रसूल अल्लाह के साथ पढ़ते थे फिर जिक्र किया कि अली[अ०स०] जब सजदे से उठते थे और जब सजदे में जाते तो तकबीर कहते थे।[3]

---

[1] तफसीर कबीर जि/1. पेज, 107

[2] कन्जुल उम्माल जि, 2 पेज/210

[3] बुखारी जि 1 पेज 91

नीज मुतरफ बिन अब्दुल्लाह का बयान है कि मैंने और इमरान बिन हसीन ने अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के पीछे नमाज पढ़ी पस जब अली सज्दा करते थे तो तकबीर कहते थे और जब सजदे से सर उठाते थे तो भी तकबीर कहते थे और जब दो रकअतों के बाद उठते थे तो तकबीर कहते थे। पस जब नमाज से फारिग हुए तो इमरान ने मेरा हाथ पकड़ कर कहा, बेशक उन्होंने हमको हजरत रसूल[स०अ०] की नमाज याद दिला दी या यह अलफाज कहे कि उन्होने हमको हज़रत मोहम्मद मुस्तफा[स०अ०] वाली नमाज पढ़ाई।[1] इन ही बातों का नतीजा था कि असहाबे रसूल[स०अ०] रोते थे और अफसोस करते थे। चुनाँनचे बुखारी की रिवायत है कि एक रोज अबुल दर्दा गुस्से में भरे घर में आये, सबब दरियाफ्त किया गया तो कहने लगे कि मैं उन लोगों में उम्मते मोहम्मद होने की कोई निशानी नहीं पाता। सिवा इसके कि नमाज जमाअत से पढ़ लेते हैं। इमाम मालिक ने रिवायत की है कि जो बातें हम पहले पाते थे उनमें से एक बात भी अब हम नहीं देखते ब--जुज इसके कि अजान दे लेते हैं और जहरी बयान करते हैं कि मैं अनस बिन मालिक के पास दमिश्क गया तो उनको रोते पाया। सबब पूछा तो अनस ने कहा कि जो बातें मैंने अहदे रसूल अल्लाह[स०अ०] में देखी थीं। अब उनमें से सिवा इस नमाज़ के कोई नजर नहीं आती और यह नमाज भी ज़ाया (बरबाद) कर दी गई है।[2]

अमीरे शाम के यहाँ गाने वालो की कद्र व मन्जिलत होती थी चुनानचे सायब फ़ासिर ने जो एक फासिक व फाजिर शख्स था उन्हें गाना सुनाकर अपनी तमाम हाजतें जो लेकर आया था पूरी करा लीं।[3]

इस आग़ाज का अन्जाम अगर यजीद की शराबख़्वारी और रक्सो सुरूर के साथ फरेफ्तगी (दीवानगी) की शक्ल में जाहिर हो तो तारीख की तबई (बुराई) रफ्तार के लिहाज से काबिले तअज्जुब नहीं है।

अल्लामा इब्नुल फकीह ने लिखा है कि मुआविया ने सबसे पहले पुलिस चौकी और पहरेदार मुकर्रर किये और ख्वाजा सरा बनाये और अमवाल ख़ज़ाने मे जमा करके रखे।[4] उन्होंने सलातीन (बादशाह) रोजगार की तरह अपने उम्माल (सरकारी मुलाजिमों) के जरिये से नौरोज और महरगान (ईरानी

---

[1] बुखारी जि 1 पेज, 91 96, मुस्लिम जि 1 पेज 169

[2] सही बुखारी जि/1 पेज/65

[3] तारीखे तबरी जि/6 पेज/188

[4] अल--बुल्दान पेज 09

त्योहार) के तहाएफ वसूल किये जिनकी मिकदार एक करोड़ दिरहम सालाना तक पहुची।[1]

मजकूरा बाला वाकेआत में से मुमकिन है कि बाज हैरत में डालने वाले हों मगर इसको क्या किया जाये कि तारीख में इससे ज्यादा हैरत अगेज बातें भी दर्ज हैं जिनको देखकर हर इन्सान यह नतीजा निकाल सकता है कि अबू सुफियान की औलाद को बनी हाशिम से एक मौरूसी अदावत (खानदानी दुश्मनी) जो थी उसकी बिना पर वह उनकी हर सुन्नत हर रस्म और हर तरीके को फना कर देना चाहते थे बल्कि सिरे से इस्लाम ही को नीस्तो नाबूद कर देने के दरपै थे सिर्फ मजबूरी यह थी कि उनकी हुकूमत इस्लाम की बिना पर थी इसलिए उन्हें पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] की नुबूअत का इन्कार मुमकिन न था लेकिन वह फिर भी हजरत की अजमत के एहसास और उसके असरात के कायम रखने का कोई जोश व वलवला न रखते थे। इसकी एक अदना मिसाल यह है कि मुआविया को शौक पैदा हुआ एक बड़े मुअम्मर (ज़ईफ) आदमी से मुलाकात का जो गुजिश्ता जमाने के हालात बयान करे लोगों ने कहा कि हजरमूत (एक जगह का नाम) में एक शख्स है जिसकी तीन सौ साठ बरस की उम्र है। मुआविया ने उस के पास आदमी भेजे और उसे बुलवाया। जब वह आया तो पूछा कि तुम्हारा नाम क्या है? उसने कहा कि अबद बिन अबद। मुआविया ने उससे अब्दुल मुत्तलिब और उमैया वगैरह के हालात पूछे। फिर कहा तुमने मोहम्मद[स०अ०] को भी देखा है? उसे एक मुसलमान की जबान से हजरत का नामे नामी इस तरह सुनकर हैरत हुई और उसने कहा व मन मुहम्मद यानी 'मोहम्मद कौन? उन्होंने कहा "वही रसूल अल्लाह" उसने कहा फिर तुमने पहले ही उनका नाम इस शान के साथ क्यो न लिया? जिसका खुदा ने उन्हें मुस्तहक करार दिया है यह क्यों नहीं कहा कि तुमने रसूल अल्लाह को देखा है।?[2]

इससे ज्यादा और इन्तेहाई हैरत खेज यह है कि मुआविया को रसूल अल्लाह[स०अ०] कह कर सलाम किया गया और उनको सजा तो दरकिनार मामूली सी तन्बीह भी नहीं की गई इस वाक़ेये की तफ्सील यह है कि अम्र बिन आस एक दफा अहले मिस्र की एक जमाअत के साथ मुआविया के पास दारूल खिलाफा शाम मे बारयाबी (हाजरी) के लिए आये यह वह जमाना था कि अम्र

---

[1] अल वुजरा वल किताब पेज/15

[2] किताबुल मुअम्मरीन पेज/87 व असदुल गाबा जि/1. पेज/115

बिन आस मुआविया से कुछ बरसरे पुरखाश (नाराज) थे उन्होने अपने साथियो को समझा दिया कि देखो जब तुम मुआविया के दरबार में जाना तो उसे खलीफा कह कर सलाम न करना और जहाँ तक मुमकिन हो उससे हिक़ारत के साथ बात करना। उसकी वजह से तुम्हारी हैबत उसके दिल पर क़ायम हो जायेगी। मुआविया को जब उन लोगों के पहुँचने की इत्तेलाअ् हुई तो वह अपनी जहानत से अम्र बिन आस की साजिश को ताड़ गए और दरबानो से कहा मेरा खयाल है कि नाबगा के लडके (अम्र आस) ने उन लोगों की नजर में मेरी मन्जिलत को घटा दिया होगा। लिहाजा तुम खयाल रखो जब यह लोग आये तो उनके साथ इन्तेहाई सख्ती करना यहाँ तक कि हर शख्स को उनमें से यकीन हो जाये कि उसकी जान की खैर नही। नतीजा यह हुआ कि सबसे पहले जो शख्स मुआविया के सामने दरबार में हाजिर हुआ वह यूँ आदाब बजा लाया कि 'अस्सलामु अलैका या रसूल अल्लाह' बस फिर क्या था सब ने उसकी मुवाफिकत की और जो आया उसने मुआविया को रसूल अल्लाह कह कर सलाम किया।[1]

मसल मशहूर है "अन्नासा अला दीने मुलूकेहिम' लोग बादशाहों के तरीक़े पर चलते हैं।' जब हुकूमत की यह रविश हो तो आम अफराद की नजर में रसूल और शरीयते रसूल की क्या इज्जत बाकी रह सकती है। जब लोग देख रहे हों कि हुकूमत की तरफ से मजहब का नीलाम कराया जाता है और थोड़े से सिक्कों के एवज दीन व मजहब की ख़रीदारी होती है तो लोगों की निगाह मे मजहब की क्या वकअत बाक़ी रह सकती है?

वाक़ेया यह है कि हत्तात मजाशई जारिया बिन कुदामा, अहनफ बिन कैस और जौन बिन कतादा चारो आदमी मुआविया के पास आये। मुआविया ने हर एक को एक एक लाख दिरहम दिये मगर हत्तात को सत्तर हजार दिरहम दिये। हत्तात को जब इसका इल्म हुआ तो मुआविया से आकर इसकी शिकायत की। मुआविया ने कहा कि उन लोगो से मैंने उनका दीन खरीद किया है। हत्तात ने फिर कहा फिर मुझसे भी मेरा दीन खरीद लीजिये।[2]

अब जो ज़रा भी ख़ुदा तरस मुसलमान थे वह जिन्दगी से आजिज हो गए थे चुनानचे हकम बिन अम्र गफ्फारी ने जो यमन व ख़ुरासान के हाकिम बनाये गए थे जब 50 हिजरी मे एक जग के बाद अमवाले गनीमत (जग मे जीता

---

[1] तबरी जि / 6. पेज / 135, असदुल गाबा पेज / 154

[2] तबरी जि / 6. पेज / 135, इस्तीआब जि / 1 पेज / 154. असदुल गाबा जि 1 पेज / 379

हुआ माल) हासिल किये और यह हुक्म नामा पहुँचा कि लूट के माल को सिपाहियों में तकसीम करने के बजाये तमाम नक्द व जिन्स खज़ान–ए–सरकारी में भेज दिया जाये तो उन्होंने हिम्मत करके यह जवाब लिख दिया कि यह हुक्म करआन के बिल्कुल खिलाफ है इसलिए मैं अमल करने से क़ासिर हूँ। मगर उसके बाद इतना ख़ौफ हुआ कि ख़ुदा से दुआ की। बारे इलाहा अब मुझे जिन्दगी दरकार नहीं है। मेरी रूह कब्ज फरमा ले। उसके बाद उनका इन्तेकाल हो गया।[1]

आसारे बनी हाशिम के मिटाने की सई (कोशिश) तामीरी यादगारों तक भी पहुँची। चुनाँनचे जब मुआविया ने हज किया तो वापसी में मदीने भी गए। और मिमबरे रसूल को उसकी जगह से हरकत दी चाहते थे कि उसे शाम ले जायें उसी वक्त सूरज को गहेन हुआ जाबिर बिन अब्दुल्लाहे अन्सारी ने कहा मुआविया ने रसूल अल्लाह के शहर और उनके दारूल हिजरत (हिजरत के घर) में बड़ा हादिसा रूनुमा (जाहिर) किया। जरूर यह किसी मुसीबत में मुब्तिला होंगे उसी साल मुआविया लक़वह में मुब्तिला हुए।[2]

यह सन 50 हिजरी का वाक़ेया है मिमबर को जुम्बिश देते ही सूरज में ग्रहन लगा ऐसा कि तारे नजर आने लगे। अहले मदीना में इससे इतना हैजान पैदा हुआ कि मुआविया को अपना इरादा तर्क करना पड़ा और कहा कि मैंने तो मिमबर हटा कर सिर्फ यह देखना चाहा था कि उसे दीमक तो नहीं लगी है।[3]

हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के साथ जो दुश्मनी थी वह भी आपकी जात से खुसूमत (कीना) की बिना पर न थी बल्कि सिर्फ इसलिए कि आप बनी हाशिम के चश्मो चिराग और उसूले इस्लाम के अलम बरदार थे। इसलिए सियासत का तकाजा यह था कि मुल्क में आपके खिलाफ नफरत पैदा कराई जाये। कत्ले उसमान का इल्जाम भी फकत इस सियासत के पूरा करने का एक बहाना था। चुनाँनचे अल्लामा इब्ने हजर मक्की ने लिखा है। मरवान बिन हकम की जबानी मन्कूल है उसने कहा कि कोई शख्स अली से ज्यादा उस्मान की हिमायत करने वाला न था किसी ने कहा कि फिर तुम लोग

---

[1] तबरी जि 6 पेज/140-14

[2] किताबुल बुलदान पेज/24

[3] तबरी जि 6, पेज 133

मिम्बरों पर उन्हें गालियाँ क्यो देते हो? उसने कहा बगैर इसके हमारा इक्तेदार कायम नहीं हो सकता।

फिर जबकि सुल्हनाम की बुनियाद यानी किताब और सुन्नत की मुवाफिकत (साथ चलने) वाली शर्त का यह अन्जाम हुआ तो दूसरी शरतों का नतीजा जाहिर है। चुनाँनचे दूसरी शर्त यह कि मुआविया को अपने बाद किसी के नामज़द करने का हक़ न होगा, इसके अन्ज़ाम का आइन्दा एक मुस्तकिल बाब में बयान होगा

तीसरी शर्त यह थी कि शाम व इराक़ व हिजाज़ (आज का सऊदी) व यमन सब जगह के लोगों के लिए अमान होगी। इसका अन्जाम बहुत दर्दनाक है। इराक में जियाद बिन सुमैया के हाथों जो खूरेजियाँ हुईं वह सफहा–ए–तारीख पर नुमायाँ हुरूफ में दर्ज हैं। उस शख्स के खुसूसियात में लिखा है कि वह जुर्म के पहले सजा देता बदगुमानी की बिना पर बिला तहकीक व तफतीश कैद कर देता और शुबहा (शक) पर ईजा रसानी (तकलीफ देना) करता था इन्सान की जान लेना उसके नजदीक कोई बात ही न थी उसका एक अजीब नमूना इस वाकेये में है कि उसने यह आम हुक्म दे दिया था कि जो निस्फ शब (आधी रात) के करीब गली कूचे मे नजर आये उसको कत्ल कर दिया जाये। एक रात एक देहाती अरब को गिरफ्तार किया गया और उसे जियाद के पास लाये उसने अपनी सफ़ाई पेश की कि मैं यहाँ का रहने वाला नही हूँ। देहात से आज ही आया हूँ और मुझ आपके इस हुक्म की इत्तेला (जानकारी) नहीं थी। जियाद ने कहा कि वल्लाह मेरे खयाल में तू सच कह रहा है और बे खता है मगर तेरे कत्ल कर देने में अम्म ए खलाएक़ (तमाम लोग) के लिए बेहतरी है चुनानचे फौरन उसे क़त्ल कर दिया गया।[2]

जियाद की विलायत कूफे के बाद बसरा मे उसके जानशीन समरा बिन जुन्दब के मजालिम उससे भी ज्यादा थे। एक बार छेः महीने की मुद्दत में आठ हजार आदमी उसने तहेतेग़ किये। अबू सवार अददी का बयान है कि सुमरा ने मेरी कौम मे से एक दिन में 47 आदमी कत्ल किये जो सबके सब हाफिजे कुरआन थे।

एक दिन सुमरा अपने लावलशकर के साथ शहर से बाहर निकला। बनी असद के मकानों के करीब एक शख़्स उस कबीले का किसी जरूरत से एक

---

[1] सवाएके मुहरिका पेज, 33

[2] तबरी जि / 6, पेज, 126

गली में से निकला लश्कर के आगे आगे के सवारो मे से एक ने उसे देखते ही अपने हरबे से हमला कर दिया और वह गिर कर ख़ाक व ख़ून में तड़पने लगा सुमरा बिन जुन्दब उसकी लाश पर से गुजरा और वाक़ेया मालूम होने पर कहा कि जब हमारी सवारी गुजरा करे तो हमारे नैजो से बचते रहा करो।[1]

मुस्लिम अजली का बयान है कि एक शख़्स सुमरा के पास आया और अपने माल की ज़कात अदा की। फिर मस्जिद में आकर नमाज पढ़ना शुरू की। इतनी देर में एक शख़्स आया और उसकी गर्दन उडा दी। इस तरह कि मस्जिद में एक तरफ उसका सर कट कर जा गिरा और दूसरी तरफ बदन।

एक दूसरे मौके पर मुशाहिदा बयान किया है कि बहुत से आदमी इस तरह कत्ल किये गए कि उनसे शहादतैन (दो गवाहियाँ) का इकरार लिया जाता था वह तौहीद और रिसालत का इक़रार करते थे और खवारिज (दीन से फिरे हुए) से बराअत (बेजारी) का एलान करते थे और फिर उसके बाद उनका सर कलम कर दिया जाता था और यह सब कुछ अमीरे शाम मुआविया की मर्जी के मुताबिक़ होता था। चुनाँनचे जब अरसे के बाद मुआविया ने सुमरा को माज़ूल (हटाना) किया तो उसने कहा ख़ुदा गारत करे मुआविया को। अगर मैंने अल्लाह की इतनी इताअत की होती जितनी मुआविया की इताअत अन्जाम दी तो वह कभी मुझको अजाब न करता।[2]

चौथी शर्त यह थी कि हज़रत अली[अ०स०] के असहाब और शियो के जान व माल व नामूस व औलाद महफ़ूज रहेंगे इस शर्त पर कतई अमल नहीं हुआ।

इराक मे शिअ्याने अली[अ०स०] पर जितने मजालिम हुए उनमे सबसे हल्की बात यह थी कि उनको कूफ़े से जिला वतनी पर मजबूर किया जाता था और उनकी जगह मुआविया के तरफ़दारों को ला कर बसाया जाता था।[3]

कूफे और बसरा दोनो जगह के शियो को मुल्क बदर कर दिया गया। उनमें से अक्सर को शाम के मकाम कन्सरीन मे जो बिल्कुल ग़ैर आबाद था ले जाकर फौजी जिन्दगी गुजारने पर मजबूर किया गया।[4]

---

[1]तबरी जि / 6. पेज / 132
[2]तबरी जि / 6 पेज / 164
[3]तबरी जि / 3 पेज / 240
[4]तबरी जि / 4. पेज / 260

हुज्र बिन अदी और उनके साथी शाम में बुलवाकर कत्ल कर दिये गए हालाँकि वह ऐलान कर रहे थे कि हम मुसलमान हैं अपने मुहाएदे पर क़ायम हैं और बाग़ी नहीं हैं।[1]

मगर उनका सबसे बड़ा जुर्म यही था कि वह मुहिब्बे अहलेबैत[अ०स०] थे इसलिए उनके वास्ते न हिल्म (बरदाश्त) मे गुन्जाइश थी न रहमो करम उन पर निगाह डालने की इजाजत देता था। सैफी बिन फसील शैबानी जो उन्हीं में से एक मुमताज फ़र्द थे। ज़ियाद के पास लाये गए तो ज़ियाद ने पूछा कि तुम अली बिन अबी तालिब के बारे मे क्या राय रखते हो? कहा बेहतरीन राय जो अल्लाह के बन्दगाने मोमिन में से किसी के बारे में रखी जा सकती है। जियाद ने हुक्म दिया कि इसे लकड़ी से पीटो, इतना कि जमीन से लग जाये। चुनाँनचे उन्हें इतनी ही शिद्दत से जदो कूब (मारना, तकलीफ पहुचाना) किया गया जियाद ने कहा बस करो। फिर पूछा हाँ अब बताओ अली के बाब में क्या कहते हो कहा ब–खुदा अगर उस्तुरों और छुरियो से मेरी बोटियाँ काट डालो तब भी वही कहूँगा जो पहले सुन चुके हो। कहा तुझ को उन पर लानत करना होगी वरना तेरी गर्दन उड़ा दी जायेगी। सैफी ने कहा तो फिर पहले गर्दन उड़ा ही क्यों न दो, मुझे इसमें कोई उज्र नहीं बल्कि मैं इससे राजी और मुतमइन हूँ[2]

जियाद ने बारह आदमियों को पा–ब–जजीर शाम की तरफ़ रवाना किया।[3]

1, हुज्र बिन अदी कन्दी 2, अरकम बिन अब्दुल्लाह कन्दी 3 शरीक बिन शद्दाद हजरमी, 4,सैफी बिन फ़सील, 5. कबसिया बिन ज़बीआ अबसी 6, करीम बिन अफीफ खसअमी 7, आसिम बिन औफ बिजली 8, वरका बिन समी बिजली, 9, कुदाम बिन हयात गजी, 10 अब्दुर्रहमान बिन हिसान गजी, 11, महरज बिन शहाब तमीमी, 12, अब्दुल्लाह बिन हविया सअ्दी

अतबा बिन अखनस सादी और सअद बिन नमरान हमदानी, इन दो आदमियो को जियाद ने बाद मे भेजा जिसके बाद उनकी तादाद चौदह हो गई।[4]

---

[1]तबरी जि/6, पेज/148,153
[2]तबरी जि/6 पेज/149
[3]तबरी जि/6, पेज/144
[4]तबरी जि/6 पेज/152

उनमे से सात आदमी मुखतलिफ लोगो की सिफारिश पर छोड़ दिये गए और छे आदमियों को मकामे मरज अजरा में तहतेग (कत्ल) किया गया।[1]

एक शख्स अब्दुर्रहमान बिन हिसान गजी के लिए मुआविया को खुद अपनी बेरहमी नाकाफ़ी महसूस हुई और उनको फिर जियाद के पास भेज दिया इस इन्तेबाह (ख़बरदार) के साथ कि यह उन लोगों में सब से ज्यादा शियीयत में सख्त है तुम उसको बद से बद तरीका जो इख्तियार कर सको उस तरह कत्ल करो चुनाँनचे जियाद के हुक्म से उन्हें जिन्दा जमीन में दफ्न कर दिया गया।[2]

हुज्र बिन अदी उनमें से थे जो मरजे अजरा में कत्ल किये गए उनको आलमे इस्लाम मे कितनी हरदिल अजीजी थी। इसका अन्दाजा इससे हो सकता है कि जब जियाद की मुखबिरी की इत्तेला उम्मुल मोमिनीन आइशा को पहुँची तो उन्होंने अब्दुर्रहमान बिन हारिस बिन हिशाम को हस्बे जैल (नीचे लिखे हुए) पैगामात के साथ मुआविया के पास रवाना किया 'अल्लाह अल्लाह फी हुज्र व असहाबेही' यानी हुज्र और उनके असहाब के बारे में खुदा का खौफ करना, मगर अफसोस है कि अब्दुर्रहमान उस वक्त पहुँचे जब हुज्र अपने साथियो समेत कत्ल हो चुके थे। अब्दुर्रहमान ने मुआविया से कहा, आपके पास से कहाँ चला गया था अबू सुफियान से मीरास में मिला हुआ हिल्म? आपने उस हिल्म से काम क्यों न लिया? आपने उनको जेल खाने ही मे डाल दिया होता और वबा व ताऊन (Plage) से हलाक हो जाने दिया होता। मुआविया ने तन्जिया तौर पर जवाब दिया कि तुम्हारे ऐसा कोई मशवरा देने वाला मौजूद न था। अब्दुर्रहमान ने कहा। अब ब खुदा अरब में न तो आपके हुक्म का कोई जिक्र होगा और न आपकी इसाबते राय (ठीक राय) काबिले तस्लीम रही। आपने एसे आदमियों को कत्ल किया जिनको कैद करके आपके पास भेजा गया था और वह मुसलमान थे।

आएशा को इस हादिसे की इत्तेला पहुँची तो उन्होंने कहा "अगर मुआविया को एहसास होता कि अहले कूफ़ा मे कुछ भी जुरअत व हिम्मत है तो वह कभी हुज्र और उनके असहाब को गिरफ्तार कराके शाम बुलवाने और कत्ल करने की जुरअत न करता। लेकिन जिगर ख्वारा के लडके को मालूम है कि आदमी फना हो चुके हैं खुदा की कसम यह लोग अपनी इल्मी लियाकत

---

[1]तबरी जि 6, पेज / 154

[2]तबरी जि / 6, पेज / 155

और फिक्ही काबिलियत के लिहाज से अरब के सर और दिमाग समझे जा सकते थे लुबीद शायर ने क्या खूब नज्म किया है अपने दो शेअरों में जिनका मजमून यह है कि गुजर गए वह लोग जिनकी पनाह मे जिन्दगी बसर की जा सकती थी और रह गया हूँ मैं ऐसे पस मान्दा (दबे कुचले) अफराद में जो खारशी (खुजली वाले) ऊँट की खाल के मिस्ल हैं। न तो उनसे कोई फायदा है और न उनसे किसी अच्छाई की तवक्को है जब वह बात करते हैं तो उयूब से ममलू (खराबियों से भरी) होती है चाहे वह शोरो गुल बर्पा न करें।

जब मुआविया मदीन–ए–रसूल में आये और उम्मुल मोमिनीन आएशा के पास सलाम के लिए हाजिर हुए तो सबसे पहली बात जो आएशा ने पेश की वह हुज्र का मुआमला था और उस गुफ्तगू मे यहाँ तक तूल हुआ कि मुआविया ने कहा, अच्छा फिर छोड दीजिये, मुझ और हुज्र को खुदा के यहाँ देखा जायेगा

अब्दुल्लाह बिन उमर का वाकेया है कि वह बाजार में थे उनको हुज्र के कत्ल की खबर मिली तो वह बेचैन हो गए नशिस्त कायम न रख सके और खडे हो कर चीखें मार मार कर रोने लगे।

हसन बसरी को जब हुज्र और उनके साथियों के कत्ल का हाल मालूम हुआ तो पूछा कि क्या उन पर नमाजे जनाजा पढ़ी गई? कफन दिया गया? और दफ्न किया गया और किब्ला रूख लाश रखी गई? मालूम हुआ कि यह सब किया गया हसन ने कहा तो फिर बखुदा हुज्जत उनकी तमाम हो गई।[1]

मतलब यह था कि लाशो के साथ इस्लामी अहकाम पर अमल उनके मुसलमान समझे जाने का सुबूत है तो फिर उनका खून मुबाह (जाएज) क्योंकर हो सकता है।

रबी बिन जियाद हारसी ने जो खुरासान के हाकिम थे हुज्र बिन अदी के कत्ल होने और मुसलमानों की बेहिसी का तजकिरा किया और फिर जुमा के दिन मस्जिद मे आ कर हाजिरीन से कहा ऐ लोगो मै इस जिन्दगी से आजिज आ चुका हूँ। अब में एक दुआ माँगता हूँ, तुम सब आमीन कहना। उसके बाद हाथ उठाये और कहा। खुदा वन्दा अगर रबीअ् के लिए तेरे नजदीक कुछ बेहतरी है तो जल्दी उसकी रूह कब्ज फरमा ले। उसके बाद

[1]तबरी जि/6. पेज/155

मस्जिद से बाहर निकले, कुछ दूर न गए थे कि ज़मीन पर गिर पड़े और इन्तेकाल किया।[1]

खुद मुआविया को बाद मे हुज्र के बेगुनाह कत्ल करने के जुर्म का एहसास पैदा हो गया था चुनाँनचे जब वह मरजुल मौत में मुबतिला हुए और तकलीफ़ ज्यादा हुई तो एक रोज अब्दुल्लाह बिन यजीद असदी उनके पास आया। उसने देखा कि वह बहुत मुजतरिब (बेचैन) हैं उसने (खुशामदाना लब व लहजे में कहा) आपको इज़तेराब की क्या जरूरत है? अगर मर गए तो जन्नत मे पहुँचे और अगर जिन्दा रहे तो मुसलमानो के जहाँ पनाह रहे। मुआविया ने कहा "खुदा रहमत नाजिल करे तुम्हारे वालिद पर, वह मुझे हुज्र बिन अदी के कत्ल से मना करते थे।" मुहम्मद बिन सीरीन की रिवायत है कि जब मुआविया का वक्ते वफात करीब आया और उन्हें घर्रा लगा तो उन्होने कहा कि: يومي منك يا حجر يوم طويل (ऐ हुज्र तुम्हारे कत्ल से मुझे तवील रोज़ का समना होगा)[2] हुज्न व मुशक्कत का जमाना तूलानी होता है लिहाजा इससे मकसूद यह है कि मुझे इस कत्ल के सबब से रोजे कयामत बड़ी तकलीफ़ व ज़हमत का सामना करना पड़ेगा।

अम्र बिनुल हुमुक़ अल खुज़ाई एक बुज़ुर्ग थे जिनको हजरत पैगम्बर[स0अ0] ने सलाम कहलवाया था और इसलिए बहुत बलन्द मर्तबा इन्सान समझे जाते थे उनकी गिरफ्तारी का हुक्म हुआ और मुआविया की खुसूसी हिदायत के मुताबिक उन पर नौ वार नैजे के किये गए। हालाँकि पहले या दूसरे ही जख्म मे वह जाँ बहक तस्लीम हो चुके थे[3]

तारीख की तस्रीह (खुली हुई) के मुताबिक सबसे पहला सर जो इस्लाम मे नैजे की नोक पर बलन्द किया गया था उनका सर था।

इन वाकेयात से शिआयाने अली[अ0स0] में तलातुम (हलचल) बर्पा हो गया। और हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] पर भी सख्त असर हुआ चुनाँनचे देनवरी ने लिखा है कि जब हुज्र बिन अदी और उनके असहाब कत्ल हो गए तो अहले कूफा ने उसको बड़ी नागवार मुसीबत समझा और कुछ लोग अशराफे (बुजुर्ग) अहले कूफा में से हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] के पास गए और आपको इत्तेला

---

[1] तबरी जि/6, पेज/163
[2] तबरी जि/6, पेज/143
[3] तारीखे जि/6, पेज/148

दी। आपने कहा "ان لله وانا اليه راجعون" और यह वाकेया आपको बहुत शाक हुआ।[1]

ताहम आपने इस वाकेये पर एक दम कोई इन्तेहाई कदम उठाना मुनासिब नहीं समझा बल्कि आइन्दा हालात का बेचैनी के साथ इन्तेजार करते रहे। बेशक जब मुआविया को यह मालूम हुआ कि लोग इमाम हुसैन[अ०स०] के पास शिकायत ले गए हैं और आपने भी उनके साथ इजहारे हमदर्दी किया है तो उन्हें यह अन्देशा पैदा हुआ कि कहीं आप मुखालिफत के लिए खड़े न हो जायें। इस बिना पर उन्होंने उनके नाम एक तहदीदी (सख्ती भरा) खत लिखा। उसके जवाब में अब हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] खामोश न रह सकते थे। आपने एक एक कर के अमीरे शाम की जो खिलाफ वर्जियाँ मुआहदे के मुतअल्लिक थीं वह गिनवाईं और खुसूसियत के साथ हुज्र बिन अदी वग़ैरह के क़त्ल को आपने मुअस्सिर (असर दार) अलफाज में पेश किया और उस पर सख्त एहतिजाज फरमाया। जिसका जिक्र इस बाब के आखिर में आयेगा।

पाँचवी शर्त यह थी कि इमाम हसन[अ०स०] और इमाम हुसैन[अ०स०] या किसी को भी खानदाने रसूल[स०अ०] में से कोई नुकसान पहुँचाने की कोशिश न की जायेगी। न खुफिया न एलानिया। इस शर्त की भी सरीह (खुली) खिलाफ वर्जी की गई। हालाँकि इस सुल्ह के बाद यह हजरात मुल्की और सियासी उमूर से बिल्कुल बे तअल्लुक रहे मगर उसके बाद भी इमाम हसन[अ०स०] बनी उमैया की ईजा रसानियों (तकलीफ पहुँचाना) से महफूज नहीं रहे। उसकी मुखतलिफ सूरतें थी। पहले गलत प्रोपैगन्डे और बे बुनियाद इलजामात जिनसे उनकी रफअते (बलन्द) मर्तबा पर आम निगाहों मे हर्फ़ आये वह लोग समझते थे कि खानदाने पैगम्बर[स०अ०] के इन मुकद्दस अफ़राद की जिन्दगी इतनी पाक है कि उनके खिलाफ ऐसा जुर्म जो खुला हुआ उसूले शरियत के खिलाफ़ हो आयद करना किसी तरह मुफीद न होगा। और वह हरगिज मुसलमानों की जमाअत में बावर (कुबूल) नहीं किया जा सकता इसलिए इस तरह के इलजामात लगाये जो शरअ् के हुदूद के अन्दर तो हों मगर आम निगाहों में कुछ अच्छी हैसियत से देखे न जाते हो मसलन कसरते इजदवाज (ज्यादा शादियाँ) और कसरते तलाक़। यह चीज बजाये खुद शरअ् इस्लामी में जाएज है लेकिन बनी उमैया के प्रोपैगन्डे ने उसको हज़रत इमाम हसन[अ०स०] की निसबत ऐसे हौलनाक तरीके पर पेश किया जिससे लोग हजरत इमाम हसन[अ०स०] की निसबत कुछ

---

[1]अख़बारुत्तुवाल, इरशाद पेज / 206

अच्छी राय कायम न करें इसी तरह दोनों भाईयों के इखतिलाफे तबियत और इख़तिलाफ़े राय का प्रोपिगन्डा और ऐसी बहुत सी चीज़ें जो सिर्फ़ उमवी सियासत की पैदावार थी।

दूसरे उम्माल बनी उमैया (बनी उमैया के कारिन्दे) और उनके हवा ख्वाहों का हजरत इमाम हसन[अ०स०] से बुरा बर्ताव सख्त कलामी और दुशनाम तराज़ी (गाली गलौज) जिससे किसी वक्त मुशतइल (गुस्सा) हो कर हज़रत इमाम हसन[अ०स०] या बनी हाशिम में से दूसरे लोग लड़ने मरने पर तैयार हो जाये। और इससे एक तरफ उन पर मुआहिदे की खिलाफ वर्जी का बे बुनियाद इलजाम आयद किया जा सके। दूसरे उनकी खूँरेज़ी का एक बहाना हाथ आये। उसका अन्दाजा इमाम हुसैन[अ०स०] के इन अलफाज से होता है जो आपने मरवान बिन हेकम को मुखातब करते हुए फरमाये है। उस वक्त कि जब इमाम हसन[अ०स०] की वफात के बाद आपके जनाजे पर मरवान रो रहा था। इमाम हुसैन[अ०स०] ने कहा 'आज तुम रो रहे हो हालाँकि इसके पहले तुम ही उनको ग़म व गुस्से के घूँट पिलाया करते थे।' मरवान ने कहा "ठीक है मगर वह सब मैं ऐसे इन्सान के साथ करता था जो इस पहाड़ से ज्यादा कुव्वते बर्दाश्त रखने वाला था।'

मगर इस इन्तेहाई ज़ब्त और तुहम्मुल (बरदाश्त) के बाद भी इमाम हसन[अ०स०] की जिन्दगी महफूज न रह सकी। सलतनत को जब कोई बहाना उनके खिलाफ खुले हुए जौरो सितम का न मिला तो फिर वह खामोश हर्बा इस्तेमाल किया गया जो सलतनते बनी उमैया में अक्सर बड़ी मुहिमों के सर करने में सर्फ किया जाता रहा था। अमीरे शाम मुआविया ने अशअस बिन कैस की बेटी जाअ्दा के साथ जो हजरत इमाम हसन[अ०स०] की जौजियत में थी साज बाज करके उसको एक लाख दिरहम भिजवाये और यजीद के साथ शादी हो जाने का वादा किया और उसके जरिये से हजरत को जहर दिलवा दिया जिससे आपके कलेजे के टुकड़े हो गए।[1] जब आप की हालत दिगरगूँ (ख़राब) हुई तो आपने अपने मुख़तलिफ़ुल बत्न (सौतेले) भाई मोहम्मद बिन हन्फिया को बुला कर फरमाया कि देखो कहीं ऐसा न हो कि मेरे बाद हुसैन से तुम इखतिलाफ़ करो हुसैन मेरे बाद इमाम है। और उनकी इताअत लाजिम

---

[1] इरशाद पेज 197

है। मोहम्मद ने निहायत खुलूस के साथ इक़रारे वफ़ादारी किया और इमाम हुसैन[अ०स०] की इताअत का वादा किया।[1]

फिर हजरत ने इमाम हुसैन[अ०स०] को पास बुलाया और वसीयत की कि मुझे गुस्लो कफन के बाद मेरे जद्दे बुजुर्गवार रसूले खुदा[स०अ०] के रौजे पर ले जाना ताकि एक मर्तबा जियारते रसूल का शरफ और हासिल हो जाये।[2]और मुझे यकीन है कि लोग यह खयाल करते हुए कि मुझे वहाँ दफ्न किया जायेगा मुजाहमत (रोकंग) करेगे तो खबरदार इस बारे में एक कतरा खून भी गिरने न पाये। तुम मुझको मेरी दादी फ़ातिमा बिन्ते असद की क़ब्र के पास जन्नतुल बकी में दफ्न कर देना।[3]

28/सफ़र सन 50 हिजरी को वह अमन व सुलह व सलामती का शहनशाह दुनिया से रूखसत हो गया। इमाम हुसैन[अ०स०] वसीयत के मुताबिक अपने भाई को गुस्ल के बाद ताबूत में लिटा कर रौज–ए–रसूल की तरफ़ ले चले बनी उमैया को यकीन हुआ कि आपको वहाँ दफ्न करेगे। सबके सब मरवान के साथ हथियार बाँध कर निकल आये और बीच में सद्दे राह हुए। उस वक्त बनी हाशिम को बहुत ज्यादा इश्तेआल (बेचैनी) था मगर हुसैन[अ०स०] अपने भाई इमाम हसन[अ०स०] की वसीयत और फर्ज के एहसास से मजबूर थे। आप फरमा रहे थे कि खुदा की क़सम अगर भाई की वसीयत और उनके उसूल का पास न होता तो तुम देखते कि कैसी इस वक्त तलवार चलती है।[4] बहरहाल हजरत इमाम हसन[अ०स०] के जनाजे को रौज–ए–रसूल से वापस ले गए और जन्नतुल बकी में दफ्न कर दिया।[5] फिर यह खबरें भी मालूम हुईं कि अमीरे शाम ने इमाम हसन[अ०स०] की वफात पर इजहारे मसर्रत किया और तअ्न व तशनीअ के कलिमात कहे। इत्तेफाक से उस वक्त इब्ने अब्बास दमिश्क में थे उन्होंने यह अलफाज सुने तो कहा कि खुश न हो तुम भी हसन के बाद अरसे तक जिन्दा न रहोगे।[6]

हजरत इमाम हसन[अ०स०] की वफात बनी हाशिम के लिए एक सख्त हादिसा थी, चुनाँनचे इस सानेह–ए–अजीम पर बनी हाशिम एक महीना कामिल

---

[1]काफी जि/1 पेज/186
[2]काफी जि/1 पेज/185 व 187
[3]इरशाद पेज 198
[4]इरशाद, पेज/199
[5]काफी जि/ पेज/188
[6]अखबारूततवाल, पेज/224

सोगवार रहे।[1] मगर इसके बाद भी इमाम हुसैन[अ०स०] उसी रास्ते पर कायम रहे जो इमाम हसन[अ०स०] ने कायम कर दिया था और इस तरह यह ख़याल बिल्कुल गलत साबित हो गया कि आपको अपने भाई से उसूली इखतिलाफ था। और सिर्फ उनके दबाओ की वजह से आप उस पर कायम थे। ऐसा नहीं बल्कि आप उसी रास्ते को सही समझते थे और इसी लिए खुद साहिबे इख़्तियार होने के बाद भी उसी को बरकरार रखा। हालाँकि उस वक्त शियो में हैजान भी पैदा हुआ जिसका तजकिरा तारीख इन अलफाज में करती है कि जब हजरत इमाम हसन[अ०स०] की वफात हुई तो इराक के शियों में हरकत पैदा हुई और उन्होंने इमाम हुसैन[अ०स०] को लिखा कि हम लोग मुआविया की बैयत तोड़कर आपसे बैयत करने पर तैयार हैं मगर आपने फरमाया कि नहीं, हम में और मुआविया में मुआहेदा हो चुका है। इसका तोड़ना मेरे लिए सही नहीं है बेशक जब मुआविया का इन्तेकाल होगा तो देखा जायेगा[2]

आप सब्र व सुकून के साथ तमाम शराएत की खिलाफ वर्जी और हुकूमते शाम की चीरह दस्तियां (सरकशी) को देखते और उनसे मुतअस्सिर होते रहे और उन्हे आप ने एक एक करके उस वक्त जाहिर कर दिया जब अमीरे शाम ने आपको एक तहदीद आमेज (सख्ती भरा) खत लिया है आपने उसके जवाब में एक तारीख़ी मकतूब (लिखित) तहरीर फरमाया जो दर्ज जैल है।

"तुम्हारा खत मिला जिसमें तुम ने लिखा है कि तुम ने मेरे मुतअल्लिक अपनी मुखालिफत के बारे मे कुछ खबरें सुनी हैं जिनकी तुमको उम्मीद न थी। तुमको जो खबरें पहुँची हैं वह तुम्हारे खुशामदी लोगों और चुगलखोरों की पहुँचाई हुई हैं। जो इफ़तेरा (झूठ) और बोहतान की हैसियत रखती हैं। मैं इस वक्त तुम से मुखासिमत और जंग का कोई इरादा नही रखता। और खामोश हूँ मगर तुम को मालूम होना चाहिए कि मै इस खामोशी से खुश नहीं हूँ और यकीनन मुझे अपने इस सुकूत से यह अन्देशा है कि कहीं खुदा इसकी वजह से मुझ पर नाराज न हो यह मेरी खामोशी तुम्हारे लिए और तुम्हारे हवाख्वाहों (तरफदारों) के लिए कभी कोई सनद नहीं बन सकती क्यो मुआविया। क्या तुम ही नहीं हो वह शख्स जिसने हुज्र कन्दी को कत्ल किया? क्या तुम ही वह नहीं हो जिसने ऐसे नमाज गुजारों और परहेजगारों को कत्ल किया जो जुल्म व बिदअत को पसन्द न करते थे। और दीन के मुआमिले में किसी शख्स की

[1]मुस्तदरक हाकिम जि/ 3, पेज/ 173
[2]इरशाद पेज/206

मलामत और सरज़निश की परवा न करते थे। हालाँकि तुम उनके साथ बड़ी कस्में खा कर पुख़्ता वादा कर चुके थ और उन्होंने न कोई फ़ितना मुल्क में पैदा किया था और न तुम्हारी मुखालिफत की थी मगर तुम ने उनको कत्ल किये बग़ैर न छोड़ा क्या तुम ही वह शख़्स नहीं हो कि जिसने अम्र बिन हुमुक खुज़ाई सहाबिये रसूल[स0अ0] को कत्ल किया जो ऐसा सालेह और इबादत गुजार बन्दा था कि कसरते इबादत से उसका जिस्म घुल गया था। बदन ढल गया था कुव्वतें ज़ायल (खत्म) हो गई थीं और चेहरे पर जर्दी छा गई थी। तुम ने पहले उनको अमान दे दी और ऐसा मजबूत वादा किया था कि अगर ऐसा वादा किसी जानवर से भी किया जाये तो वह पहाड़ की चोटी से उतर कर पास आ जाये फिर तुम ने बड़ी जसारत के साथ इस अहेद को तोड़ डाला और बे जुर्म व खता उनको मार डाला। क्या तुम ही वह शख़्स नहीं हो जिसने जियाद बिन सुमैया को जो बनी सक़ीफ के गुलाम उबैद नामी का बेटा था अपना भाई, अपने बाप अबू सुफियान का बेटा करार दिया। हालाँकि रसूल अल्लाह[स0अ0] ने फरमाया है कि बेटा उसका समझा जायेगा जो औरत का असली शौहर हो, और जिना कार के लिए बस पत्थर हैं और कुछ नहीं। मगर तुम ने अपनी मसलहत की बिना पर रसूल[स0अ0] को पसे पुश्त डाल दिया और उसको अपना भाई बना कर इराक़ीन का हाकिम बना दिया ताकि वह मुसलमानों के हाथ पैर कता करे और उनकी आँखों को गर्म लोहे की सलाखों से फोड़े। और दरख़्तो की शाखों में लटका कर मारे क्या तुम ही वह नहीं हो जिसे ज़ियाद बिन सुमैया ने लिखा था कि हज़रमीयीन अली के दीन पर है। तुम ने हुक्म दिया कि जो लोग अली[अ0स0] के दीन पर हैं उनमे से एक को जिन्दा न छोडो। उसने सबको मार डाला और मुसला (जिस्म के टुकडे करना) भी किया और जो तुम ने मुझे लिखा है कि मैं अपने नफ्स का, अपने दीन का और उम्मते मोहम्मदी का खयाल करूँ और उनको फितने में न डालूँ। और जमाअत की तफरीक़ से परहेज करूँ। तो मेरे ख़याल में कोई फ़ितना इस उम्मत में तुम्हारी खिलाफत व हुकूमत से बढ़कर नहीं है और मैं अपने नफ़्स, अपने दीन और उम्मते मोहम्मदी के लिए किसी फ़ायदे को इससे बढ़कर नहीं समझता कि मैं इन उमूर (काम) में तुम्हारी मुजाहमत (मुखालिफत) करूँ। अगर मैं ऐसा करूँ तो बेशक कुरबते इलाही का मूजिब (सबब) होगा और अगर तर्क करूँ और खामोश रहूँ तो इसके लिए खुदा से इस्तेगफार करूँगा। और उससे रुशदो (हिदायत) सलाहियत का तालिब हूँगा।'

इस खत से इमाम हुसैन[अ०स०] के तअस्सुरात का पूरे तौर पर अन्दाजा होता है और यह कि आप किसी अहम इकदाम के लिए अपनी जिम्मेदारी को महसूस कर रहे थे लेकिन इसके बाद भी आपने उस वक्त तक बिल्कुल खामोशी इख्तियार की जब तक कि मुआहेदे की आखिरी साँस भी क़ायम समझी जा सकती थी। उसके बाद के वाकयात आने वाले अबवाब (किताब के हिस्से) में नज्रे नाजरीन होगे।

दसवाँ बाब

यज़ीद की वली अहदी

मुआविया के लिए उनकी जिन्दगी का तवील दौर कम न था जिस में उन्होंने मुसलमानों की किसमत के मालिक बन कर अपने हौसले निकाल लिये थे। और दुनिया की जाहो हशमत और माल व दौलत के खूब खूब मजे उठा चुके थे। जिसका एतेराफ़ उन्होंने एक खास अन्दाज मे खुद भी किया और कहा कि हम तो दुनिया में ग़लताँ (खो गए) हो गए और लोट लोट के उस में रहे।[1] मगर उन्होंने इस पर इक्तेफा न की और यह चाहा कि उनकी औलाद भी इसी तरह बहरा अन्दोज (फायदा उठाये) हो। हालाँकि वह मुआहेदे में यह शर्त कर चुके थ कि मैं अपने बाद किसी को खलीफ़ा नामजद न करूँगा। फिर भी उन्हे फिक्र इस की हुई कि अपने बेटे को अपना जानशीन बना दें मगर वह यजीद के अफ़आल व आदात की वजह से समझते थे कि मुसलमानो को इस पर तैयार करना बड़ा दुशवार गुजार मरहला है। इस लिए वह उसको जबान पर नहीं लाते थे। ताहम रफ्ता रफ्ता (धीरे धीरे) उसके इन्तेजामात मुकम्मल कर रहे थे। उनमे से एक ऐसे बाअसर अफराद का जो मुद्दईये खिलाफ़त (खिलाफत का दावेदार) बन सकें ख़त्म करना था चुनाँनचे अब्दुर्रहमान बिन खालिद बिन वलीद जिनका असर इस वजह से शाम मे बढ गया था कि उनके वालिद के कारनामे रूमियो के मुकाबले मे अहले शाम के जबाने जद (जबानों पर) थे और इस बिना पर मुआविया को अन्देशा था कि कहीं अहले शाम उनको खलीफ़ा तस्लीम न कर लें। लिहाजा उनका इलाज यह किया गया कि इब्ने असाल के जरिये से उनको जहर दिलवा दिया। जिससे उनका खातिमा हो गया।[2] मुआविया ने इब्ने असाल को इसका मुआवेजा यह दिया कि

---

[1] तबरी जि/6, पेज, 186

[2] अल वुजरा वल किताब पेज/16

हमेशा के लिए टेक्स से मुस्तसना (अलग) कर दिया और हमस के ख़िराज (टेक्स) की वसूलियाबी का उसे वाली क़रार दे दिया [1]

मगर उसे इस रिशवत से फायदा उठाने का ज्यादा मौका नहीं मिला। इस लिए कि अब्दुर्रहमान के भाई महाजिर बिन खालिद ने मदीने से दमिश्क़ जाकर अपनी तलवार से इब्ने असाल को कत्ल कर दिया जिस पर मुआविया ने महाजिर को कैद की सजा दी और एक साल के बाद रिहा किया। [2]

दूसरा कौल यह है कि अब्दुर्रहमान के बेटे खालिद बिन अब्दुर्रहमान बिन खालिद बिन वलीद ने अपने बाप के कातिल को हुमस जा कर वही तहतेग किया इस पर मुआविया ने उसको थोड़े दिन तक कैद किया फिर दियत (खून बहा) लेकर रिहा कर दिया [3] यह सन 46 हिजरी का वाकेया है उनके मुकर्रबीन और गिर्दो पेश के रहने वाले इसका अन्दाजा रखत थे कि मुआविया की यह दिली ख़्वाहिश है कि वह यजीद को अपना वली अहेद बनाये मगर उन्हें भी इसके बरूए कार (उस पर अमल करने की) आने की सूरत नजर न आती थी। सबसे पहले जिसन इस तअत्तुल और जुमूद (रूके हुए काम) को हरकत और अमल में तब्दील किया वह मुगीरा बिन शअ्बा दाई कूफा था। यह शख़्स बड़ा ही मुदब्बिर (जहीन) और अरब के निहायत चालाक लोगो में महसूब (शुमार) था। वाकेया यह पेश आया कि मुगीरा ने शायद फकत इम्तिहान के तौर पर दमिश्क जा कर मुआविया के सामने हुकूमते कूफा से इस्तीफा देने का खयाल जाहिर किया। वह समझता होगा कि अमीरे मुआविया मुझे किसी कीमत पर हटाने के लिए तैयार न होंगे और उसके बाद मेरी खुशामद करेंगे। वहाँ मुआमिला बरअक्स (उलटा) हुआ और मुआविया ने एक दूसरे शख़्स को कूफे की हुकूमत के लिए तजवीज (चुन) किया। जब यह सूरत पेश आई तो मुग़ीरा ने हुकूमते कूफा पर बरक़रार रहने के लिए तदबीर की कि वह यज़ीद के पास गया और उसे यह पट्टी पढ़ाई कि तुम अपने बाप से वली अहदी का ऐलान क्यों नही कराते।[4] कौन कह सकता है कि यजीद खुद ही इसके वास्ते दिल ही दिल में बेचैन न होगा और अगर उसे शराब व कबाब के मशगलों में अब तक इस पर गौर करने का मौका न भी मिला हो तब भी मुगीरा का यह कहना

---

[1]तबरी जि/6, पेज/128

[2]अल बुज़रा वल किताब पेज/17

[3]तबरी जि 6, पेज/129

[4]तबरी जि/6, पेज, 169

उसकी दीवाना तबियत के लिए 'हुए बस अस्त'' से कम न था। वह मुआविया के पास गया और एक लाड प्यार से पले हुए बेबाक बेटे की तरह अपने बाप से बजिद हो कर अपनी वली अहदी के लिए ख्वाहिश की और मुगीरा बिन शअ्बा के खयालात को जो इस बारे मे थे बयान किया। मुआविया को तो कभी इसकी तवक्को होती ही न थी कि कोई सजीदा इन्सान इस मन्सब के लिए यजीद का नाम पेश करेगा। उन्होने मुगीरा की गुफतगू सुनी तो समझे कि सूख धानों पानी पडा उन्होंने मुगीरा को बुलवाया और उससे इस बारे में तबादल–ए–खयाल किया। मुगीरा ने बडे एतेमाद (भरोसा) के साथ बतलाया कि इस मुहिम का पूरा होना कोई मुशकिल नहीं है। कूफे में यजीद की मुवाफिकत पर लोगों को हमवार करने के लिए मैं काफ़ी हूँ। बसरा में जियाद इस काम को अन्जाम देगा इन दो मकामात के बाद फिर तीसरी कोई जगह ऐसी नही है जो यजीद की मुख़ालिफत की जुरअत कर सके मुआविया ने मुग़ीरा की इन बातो को बड़ी तवज्जोह के साथ सुना और उसको कूफ़े की गुवर्नरी पर बहाल कर दिया मुगीरा फौरन कूफे पहुँचा और इस मकसद की तकमील में मसरूफ हो गया उसे अपनी कार गुजारी का नतीजा जल्दी से मुआविया की खिदमत मे पेश करके सिला हासिल करना और अपनी वफादारी का सिक्का जमाना था। इसलिए उसने सबसे पहले जो खास बनी उमैया के हवा ख्वाह (चापलूस) थ उनको बुला कर अपने मकसद का तजकिरा किया और बताया कि 'खलीफतुल मुसलिमीन'' इस अम्र के मुतअल्लिक मुतमइन नहीं है कि कूफे के लोग इस वली अहदी को तस्लीम करेंगे इस लिए जरूरत है कि यहाँ से एक वफ्द उनकी खिदमत मे जाये और यह इल्तेजा पेश करे कि वह यजीद को अपना वली अहद करार दे फिर भी ऐसे लोग कम मिलते थे जो इस वफ्द में शरीक होना पसन्द करे। इस के लिए मुग़ीरा को अपनी जब खास या खजान–ए–सरकारी से 30 हजार दिरहम रिशवत में सर्फ (खर्च) करना पडे। इस तरह कूफियों का एक वफ्द मुरत्तब करके अपने बेटे मूसा की क़यादत में मुआविया से यजीद की नामज़दगी के लिए दरख़्वास्त पेश की मुआविया इस इल्तेजा की हकीकत को खूब समझते थे चुनानचे उन्होंने वफ्द को मुनासिब जवाब देने के बाद एलाहदगी में मूसा बिन मुगीरा से पूछा कि सच बताओ कितने पर तुम्हारे बाप ने इन लोगों के दीन व ईमान को खरीद किया? मूसा ने कहा तीस हजार दिरहम में।[1]

---

[1] कामिल इब्ने असीर

मुआविया को इस मुआमिले मे मुसलमानो की राय अम्मा (आम राय) के मुतअल्लिक अब भी इतमीनान न था उन्हे जमहूर (अक्सरियत) की नफ़रत व बेजारी का खौफ दामनगीर था। वह समझते थे कि मुगीरा के इस वफ्द को राय आम्मा का तरजुमान नहीं समझा जा सकता। अब उन्होंने जियाद बिन अबीह को जिसे वह सियासी तौर पर अपना भाई बना चुके थे। इस मुआमिले मे मशवरा लेने के तौर पर खत लिखा। ज़ियाद को मुआविया की इस ख्वाहिश का अन्दाजा बहुत अरसे से होगा। अब इस खत से इस ख्वाहिश का इजहार भी हो गया और यह जाहिर है कि एक वफादार गवर्नर की हैसियत से उसका क्या फर्ज होना चाहिए था खुसूसन जबकि मुआमिला इसके "भतीजे" का था। मगर मुआमिले की नजाकत और उसके तमाम पहलू जियाद को लरजा बरअन्दाम (खौफजदा कपकपी पैदा कर रहे) बना रहे थे। चुनाँनचे उसने अपने खास महरमे राज (राजदाँ) उबैद बिन काब नमीरी को बुला कर कहा, कि 'खलीफतुल मुस्लिमीन ने मुझे खत लिखा है कि उन्होंने यजीद की बैयत लेने का इरादा किया है मगर उन्हें लोगो की नफरत व बेजारी का खौफ है और चाहते हैं कि किसी तरह जमहूर (अक्सरियत) मुसलिमीन मुत्तफिक किये जा सके और इस बारे में मुझसे मशवरा किया है। इस्लामी जिम्मेदारी का एहसास बहुत अहम है और यजीद एक आवारा और मुतलकुल ऐनान (आवारह) शख्स है और शिकार का बड़ा दिलदादा है। तुम मेरी तरफ से सरकार के पास जाकर यजीद के अफआल व हालात का तजकिरा करो और कहो कि जरा सोच समझ कर इस काम को करें थोडे दिन की ताखीर कर लेना इस से बेहतर है कि जल्द बाजी से काम लिया जाये जिसका नतीजा नाकामी की सूरत में जाहिर हो उबैद ने इस मे इतनी तरमीम की कि मुआविया को इस तरह दो टूक जवाब न दिया जाये बल्कि यजीद से मिलकर उससे कहा जाये कि अगर आपको राय आम्मा अपने मुवाफिक बनाना है तो इन अफआल को तर्क कीजिये जिन्हें मुसलमान उमूमन ना पसन्द करते है। जियाद ने मुआविया को सिर्फ़ इतना लिखा कि इस बारे मे जरा ताखीर से काम लिजिये। ताजील (जल्द बाजी) मुनासिब नहीं है। कहा जाता है कि उसके बाद यजीद ने अपनी बहुत सी बद आमालियों को तर्क कर दिया [2] मगर बाद के हालात से अन्दाजा होता है कि यह कीना (गुस्सा) यजीद के दिल में जियाद की तरफ से पैदा हो

[1]तबरी जि / 6. पेज / 169

[2]तबरी जि 6. पेज 70

गया बल्कि शायद हमसिनी की रकाबत से उसको यह खयाल हुआ कि जियाद ने यह मुखालिफत अपने बेटे उबैदुल्लाह के इशारे से की है इस लिए वह उबैदुल्लाह बिन जियाद से भी एक अरसे तक उसके बाद बदज़न रहा

सन 49 हिजरी या सन 50 हिजरी में सत्तर बरस की उम्र में मुगीरा का इन्तेकाल हो गया।[1] अब कूफ़े में जियाद की हुकूमत हो गई वह सन 45 हिजरी मे मुआविया की तरफ से बसरा, खुरासान और सजिस्तान का हाकिम बनाया गया था। फिर बहरैन और ओमान भी उसकी हुकूमत में शामिल कर दिये गए [2] अब मुगीरा के मरने के बाद कूफ़ा भी उसकी हुकूमत में शामिल कर दिया गया। चूँकि इस तमाम कलमरू (सलतनत) मे बसरा और कूफ़ा दो अहम मकाम थे लिहाजा अब वह साल में छे महीना बसरा में रहता था और छ महीने कूफ़े मे और इस मुद्दत में बसरे की हुकूमत पर समरा बिन जुन्दब को अपना कायम मकाम बना जाता था।[3] तीन या चार साल की मुद्दत गुजरने पर 4 माह रमजान सन 53 हिजरी को जियाद की भी वफात हो गई।[4] अब शायद इस अन्देशे में कि रहे सहे खास खास खैर ख्वाह भी कहीं राहिये मुल्के अदम न हो जायें (मर न जायें) मुआविया ने एक तहरीरी फरमान यजीद की वली अहदी का लिख कर मजमये आम में इसका एलान कर दिया और रिआया से उसका इकरार लिया गया।[5]

वाकेयात बतलाते हैं कि मुगीरा बिन शॉबा बड़ी हद तक कूफे की जमीन को हमवार बनाने का काम कर चुका था और कम अज कम हवा ख्वाहाने (चापलूस) बनी उमैया को उसके लिए तैयार कर लिया था बसरा मे बहरहाल उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद को इस इस्कीम की तकमील करना लाजिम थी। चाहे उसकी जाती राय इस बारे में कुछ भी होती और वहाँ की खिलकत (अवाम) उसके बाप से और खुद उससे इस दर्जा मरऊब व खाएफ थी कि वहाँ किसी मुखालिफत का इमकान न था और शाम तो अपना मुल्क ही था। ले दे कर वहाँ एक अब्दुर्रहमान बिन खालिद बिन वलीद थे जिन से अन्देशा होता उन्हें पहले ही ख़त्म किया जा चुका था। दूसरे मकतूल खलीफा उसमान के बेटे

---

[1]तबरी जि 6, पेज 31
[2]तबरी जि/6, पेज/
[3]तबरी जि/6, पेज, 131
[4]अन बुजरा वल किताब, पेज/16
[5]तबरी जि/6, पेज/177

सईद थे। उन्होंने जरा खिलाफते यजीद पर इजहारे नाराजगी किया और खुद मुआविया के पास आकर कहा कि आपने यजीद को मुझ पर मुकद्दम किया और उसके लिए बैयत ली हालाँकि बखुदा आप जानते हैं कि मेरे बाप उसके बाप से बेहतर और मेरी माँ उसकी माँ से अच्छी और मैं खुद उससे बेहतर हूँ और आपको जो कुछ मिला है यह मेरे बाप का सदका है। यह सुनकर मुआविया ने कहा कि तुम ने जो अपने बाप के एहसान का मुझ पर जिक्र किया तो मुझे इसका इन्कार नहीं मगर मैंने इसका एवज (बदला) यह कर दिया कि उनके खून का मुतालिबा किया और कातिलों से उनका बदला लिया और तुम्हारे बाप की फजीलत, इस में भी कोई शक नहीं कि मुझसे बेहतर थे और उन्हे रसूले खुदा[स0अ0] से क़राबत मुझसे ज्यादा हासिल थी इसी तरह तुम्हारी माँ की फजीलत। इस मे भी कोई शक नहीं क्योंकि करशिया की बुजुर्गी कल्बिया पर जाहिर है लेकिन यह बात कि तुम यज़ीद से बेहतर हो तो मालूम होना चाहिए कि मेरे नजदीक अगर तुम ऐसों से मेरा घर भरा हो वह सब मिलकर भी यजीद के बराबर न होंगे।

वह तो यह जवाब सुनकर अपना सा मुँह लेकर रह गए होगें मगर फिर कहा जाता है कि यजीद ने अपने बाप से सिफारिश कि सईद मेरी वजह से कबीदा खातिर (रजीदा) हो गए हैं तो आप इन्हें किसी सूरत से खुश कर दीजिये। इस पर मुआविया ने उन्हें खुरासान का हाकिम बना दिया।[1] इस तरह यह खदशा भी दूर हो गया शाम और इराक़ को हमवार करने के बाद मुआविया ने मक्का और मदीने के मुतअल्लिक़ खयाल किया उस जमाने मे मरवान मदीना का हाकिम था। मुआविया ने उसको लिखा कि हम ने यजीद को अपना वली अहद बनाया है और उसके लिए वलीअहदी की बैयत ली जा चुकी है तुम खुद भी यजीद से बैयत करो और हमारी तरफ से वहाँ मदीने के लोगों से यजीद के लिए बैयत लो मरवान ने जब मुआविया का हुक्म पढ़ा तो गुस्से से बरअफरोख्ता (भड़क कर) हो कर घर में गया घर वालों और अपने मामूजाद कबील ए बनी कनाना के लोगों पर भी अपनी इस नाराज़गी और रज व गजब का इजहार किया और इसी गुस्से मे दमिश्क की तरफ मुआविया से खुद बात चीत करने की गरज से रवाना हो गया वहाँ पहुच कर मुआविया से मिला और इस अन्दाज से चलता था जिस तरह दो बराबर के रिश्तेदार होते हैं। मुआविया से गुस्से से भरी हुई तेज़ व तुन्द तकरीरें कीं और कहा यह

---

[1] तबरी जि0/6 पेज/171

आप क्या कर रहे हैं। छोकरो को अमीर और सरदार बनाते हैं। इस इरादे से बाज आईये। याद रखिये कि आपकी क़ौम म ऐसे और भी मौजूद हैं जो आपके मशवरों में शरीक और आपके कामों में आपके वजीर व मददगार रहे हैं। मुआविया ने कहा मरवान खफा न हो। तुम बेशक खलीफ–ए–वक्त की नजीर हो और हर मुशकिल में उसके पुश्तपनाह और मददगार हो। इस लिए यजीद के बाद तुम को ही यजीद का वली अहद हम ने क़रार दिया है यह था वह सियासी मन्तर जिसने मरवान के गुस्से को खत्म कर दिया और मरवान बखयाले खुद मुतमइन हो कर मदीना वापस हुआ। मदीने में मरवान ने एक जलसा मुन्अक़िद किया और उसमें यजीद की तख्त नशीनी के मुतअल्लिक़ जिक्र किया और कहा मुआविया ने अपने बेटे यजीद की बैयत का उसी तरह हुक्म दिया है जिस तरह अबू बकर ने उमर के लिए बैयत ली थी। यह सुनना था कि अब्दुर्रहमान बिन अबी बकर बिगड गए और कहा अबू बकर ने अपने बेटे की बैयत नहीं ली थी यह तो किसरा व क़ैसर का तरीका है हम हरगिज उस शराबी व जानी की बैयत न करेंगे अब्दुर्रहमान के खयालात की ताईद हजरत इमाम हुसैन[अ०स०], अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर और अब्दुल्लाह बिन उमर ने की। जो वाकेया पेश आया उसकी इत्तेलाअ् मरवान ने मुआविया को कर दी मुआविया ने कुछ दिन तअम्मुल (इन्तेजार) किया फिर यजीद को लेकर हज के बहाने से रवाना हुए। मुआविया को खूब एहसास था कि उन लोगों को जिन्हों ने खिलाफते यजीद पर एतेराज़ किया है दुनिया–ए–इस्लाम में क्या अहमियत हासिल है यह याद रखने के काबिल बात है कि मुसलमानो के हर फिरके के नुक्त ए नजर से जिन जिन अफराद को इस्लामी मुआमलात से दिलचस्पी का विरसा पहुँचता था वह सब ही यजीद से इखतेलाफ रखने में मुत्तफिक थे। चुनाँनचे एक तरफ उनमें हज़रत हुसैन बिन अली[अ०स०] थे तो दूसरी तरफ।

अब्दुर्रहमान इब्ने अबी बकर
आइशा———— बिन्ते अबी बकर
अब्दुल्लाह——— इब्ने उमर
अब्दुल्लाह————इब्ने अब्बास और
अब्दुल्लाह— इब्ने ज़ुबैर भी थे

इन नामों को देखने से वाज़ेह हो जाता है कि मुसलमानों में जो फ़िरका बन्दी आज कायम है उसका कोई असर यजीद की वली अहदी के जवाज़ पर

नहीं पडता। उसूलन यजीद की वली अहदी से इख़तेलाफ में तमाम वह अफराद मुत्तफ़िक़ थे जो किसी फिरक़े के नुकत–ए–नजर से भी मजहबी नुमाइन्दगी कर सकते थे अब यह अपना अपना सिबाते क़दम और इस्तेकलाल है कि कोई तमाम मुशकिलात के बावजूद आखिर वक्त तक अपनी इस बात पर कायम रहे और कोई फिर हालात से मजबूर हो जाये लेकिन उसूल और आईन के एतेबार से उन सब का मुत्तफिक होना खुद एक बड़ी वज़नी हक़ीक़त है।

मुआविया ने उन लोगों को खौफ दिला कर भी दबाना चाहा और लालच दिला कर भी माएल करना चाहा। चुनाँनचे सब से पहले जब वह मदीना के करीब पहुँचे तो इमाम हुसैन[अ0स0] से मुलाकात हुई। आपको देख कर मुआविया ने कहा न तुम्हारे लिए खुशी हो और न बरकत। तुम एक कुर्बानी का दुम्बा हो जिस का खून जोश खा रहा है खुदा की कसम यह खून जरूर गिराया जायेगा। इमाम हुसैन[अ0स0] ने फरमाया: चुप रहो। हम ऐसे कलाम के अहल नहीं हैं मुआविया ने कहा। इससे भी बदतर कलाम के मुस्तहक हो। फिर उसके बाद इब्ने ज़ुबैर से मिले तो उनसे कहा कि तू एक छुपे हुए मक्कार सूसमार गोह (जानवर) के मानिन्द है जो सर को अपने सूराख़ मे डाल कर दुम हिलाता है। कसम है खुदा की अन्क़रीब उसकी दुम पकड़ ली जायेगी। दूर करो इसको और फिर उनके खच्चर पर चाबुक मारा और हटा दिया फिर उसके बाद अब्दुर्रहमान बिन अबी बर्क मिले उनको कहा कि यह बुढ़ा भी सठिया गया है और इसकी अक्ल जाती रही है फिर हुक्म दिया कि उनके सवारी के खच्चर पर भी ताजियाना मारो और हटा दो। फिर अब्दुल्लाह बिन उमर से भी ऐसा ही सुलूक किया गया [1]

उसके बाद मदीने में दाखिल हो कर भी खिलाफते यजीद के लिए उन हजरात को डराने दहलाने और कत्ल की धमकियाँ देने लगे।

आएशा ने जो यह सुना तो गुस्से में मुआविया के पास गई और कहा कि यह कोई अच्छी बात नहीं है कि तुम पहले मेरे एक भाई (मोहम्मद बिन अबी बर्क) का क़त्ल कर चुके और तुमने लाश उनकी आग में जलाई आज मदीने में आकर मेरे दूसरे भाई को तकलीफ पहुचाते हो और उनके बारे मे सख्त अलफ़ाज इस्तेमाल करते हो और फरजन्दे रसूल और अब्दुल्लाह बिन उमर और अब्दुल्लाह बिन जुबैर को भी डराते धमकाते हो। तुम उन लोगो में से हो

[1] कामिल इब्ने असीर जि/3, पेज/454

जिन्हें रसूल[स०अ०] ने रहम खा कर फतहे मक्का में कत्ल से आजाद कर दिया था। तुम को ऐसी हरकते हरगिज जेब नहीं देतीं

तबरी ने मुआविया का मुकालिमा जो अब्दुर्रहमान बिन अबी बक्र के साथ दर्ज किया है वह हस्बे जैल है।

मुआविया ने कहा ऐ अब्दुर्रहमान कैसे हाथ पैरों के साथ तुम मेरी नाफरमानी करने की जुरअत करते हो? अब्दुर्रहमान ने कहा इस लिए कि इस अम्र (काम) के लिए मैं अपने को ज्यादा मुस्तहक समझता हूँ मुआविया ने कहा कि मैं इस सूरत में तुम्हारे कत्ल का इरादा रखता हूँ अब्दुर्रहमान ने कहा अगर तुम ऐसा करोगे तो लानते खुदा और सजा–ए–आखिरत के मुस्तहक होगे।[1]

यह तो ख़ौफ दिलाने की तरकीबें थीं। जब यह कामयाब नहीं हुई तो दूसरी सूरत भी इख्तियार की गई चुनानचे एक लाख दिरहम अब्दुर्रहमान बिन अबी बकर के पास भेजे मगर उन्होंने रूपया वापस कर दिया और कहा कि हम दीन को दुनिया के एवज (बदले) फरोख्त नहीं करेंगे और मक्का से हिजरत कर गए। इसी तरह अब्दुल्लाह बिन उमर को भी एक लाख दिरहम भेजे गए, उन्होंने कहा कि मैं बूढ़ा हो चुका हूँ और मेरा दीन एक लाख दिरहम से ज्यादा क़ीमती है। यह कह कर रूप्या वापस कर दिया। और इमाम हुसैन[अ०स०] को भी बहुत कुछ तहाएफ़ और जरो माल पेश किया गया था मगर आपने कुबूल न फरमाया और वापस कर दिया

अजवाजे रसूल[स०अ०] में से आएशा ने इस मुखालिफ़त में ज्यादा हिस्सा लिया चुनानचे हाफिज जलालुद्दीन स्यूती ने लिखा है कि मुआविया मदीने में मिम्बरे रसूल पर बैठे यजीद की बैयत ले रहे थे कि आएशा ने अपने हुजरे से पुकार कर कहा कि खामोश हो जाओ, क्या कर रहे हो? क्या तुम से पहले शैख़ेन ने अपने बेटों के लिए कभी बैयत ली थी? मुआविया ने कहा कि नहीं। तो आएशा ने कहा फिर तुम किसकी पैरवी करते हो? मुआविया यह सुनकर शर्मिन्दा हुए और मिम्बर से उतर आये

इससे जाहिर है कि यजीद की वली अहदी सबके नजदीक उसूले शरीयत और आईने इस्लाम के खिलाफ थी। इसके अलावा हजरत इमाम हसन[अ०स०] के साथ शराएते सुलह में यह बात तय पा चुकी थी कि मुआविया को अपने बाद

[1] तबरी जि/ 8, पेज/ 177

किसी जानशीन के नामजद करने का हक न होगा। उसके बाद मुआविया को अपने बेटे का खुद नामजद करना किसी तरह दुरुस्त नहीं हो सकता।

यह सब इस सूरत में भी था कि जब यजीद अपने किरदार के लिहाज़ से अच्छा ही आदमी होता चेजायकि यजीद के अखलाक व आदात वह थे जो किसी शाइस्ता इन्सान और एक मामूली मुसलमान के भी शायाने शान नहीं चेजाएकि ख़िलाफ़त के लिए जो बहरहाल एक मजहबी ओहदा समझा जाता है डॉक्टर वहीद मिर्जा साहब लिखते हैं: "इस्लाम के शुरू से हाकिमे इस्लाम दीन और दुनिया दोनों का मुक्तदा (पेशवा) समझा जाता था। मजहब और सियासत का यह इज्तिमा अक्लमन्दाना उसूल पर मबनी था या नही यह एक मुखतलिफ फीह (एक साथ ज्यादती) बात है जिसके मुतअल्लिक मैं अपनी राय का इजहार जरूरी नही समझता लेकिन यह उसूल आम तौर पर तस्लीम कर लिया गया था और इस लिए यह जरूरी समझा जाता था कि खलीफ ए इस्लाम में अलावा सियासी काबलियत के मजहबी और दीनी सिफ़ात भी बदर्जा–ए–अतम (पूरी तरह) मौजूद हों। और यह सबको मालूम था कि यजीद इस लिहाज से किसी तरह भी मुस्तहक्के खिलाफत नहीं था।' इसी लिए जितने समझदार इन्सान थे सब ही इस इक़दाम को नाजेबा समझ रहे थे और उसे एक मोहलिक इकदाम की हैसियत से देखते थे।

हसन बसरी का कौल था कि मुआविया ने चार बातें ऐसी कीं जिनमें से एक भी हो तो वही हलाकत के लिए काफ़ी है। अव्वल जाहिलों की मदद से बग़ैर उम्मत के मशवरे के उन्होंने ख़िलाफत पर कब्जा कर लिया हालाँकि उस वक्त असहाबे रसूल[स०अ०] और साहबाने फजीलत मौजूद थे। दूसरे अपने बेटे को जो शराब ख्वार नशा बाज था और रेशम पहनता और तनबूरह बजाया करता था अपना जानशीन बनाया तीसरे जियाद को अपने बाप अबू सुफियान का बेटा करार दिया हालाँकि रसूल अल्लाह[स०अ०] ने फरमाया है कि बेटा उसी का करार दिया जा सकता है जो असली शौहर हो और जिना कार के लिए बस पत्थर है। चौथे हुज्र और असहाबे हुज्र का कत्ल करना [1]

दूसरा कौल उनका यह भी था कि मुसलमानों की तबाही के जिम्मेदार दो शख्स हैं एक अम्र बिन आस जिसने मुआविया को कुरआन नैजो पर बलन्द करने की राय दी थी। चुनाँनचे वह बलन्द भी किये गए और दूसरे मुग़ीरा जिसने मुआविया को यजीद की बैयत लेने का मशवरा दिया। अगर मुगीरा की

---

[1] कामिल इब्ने असीर जि/2 पेज/ 45, अबुल फिदा जि/1 पेज/ 196, तबरी जि/6 पेज/ 157

यह राय न होती तो कयामत तक इन्तेखाब का उसूल कायम रहता मुआविया के बाद जो तख्त नशीन हुए वह सब के सब मुआविया की मिसाल के मुताबिक अपने बेटों की बैयत कराते रहे

मुसलमानों की इस राय आम्मा की नुमाइन्दगी वह चन्द अशखास कर रहे थे जिनके नाम तारीख़ में दर्ज हैं।

मुआविया पर यह अम्र छुपा हुआ नहीं था कि इस जमाअत में सबसे नुमायाँ हस्ती हुसैन[अ०स०] की है और इस बिना पर उन्होंने मदीने में आ कर सबसे पहला काम जो किया वह यह कि हुसैन बिन अली को बुलवाकर कहा कि इस मुआमिले मे तमाम लोग हमवार हो चुके हैं सिवा पाँच आदमियों के कुरैश में से जिनकी सरकरदगी (रहनुमाई) आप कर रहे हैं। हजरत ने मुतअज्जिबाना (तअज्जुब से) अन्दाज से कहा "मैं उनकी सरकरदगी (रहनुमाई) करता हूँ।' मुआविया ने कहा बेशक आप ही उनके सरग़ना हैं ' यह सुनकर हजरत ने फरमाया तो इसकी तदबीर यह है कि आप दूसरे लोगों को बुलवा कर उनसे बैयत का मुतालिबा कीजिये। अगर उन सब ने बैयत कर ली तो तन्हा मुझसे आपको किसी अन्देशे की जरूरत नहीं है। यह दफउल वक्ती (वक्ती छुटकारा) कामयाब हुई और नतीजे में मुआविया की यह कोशिश बेसूद साबित हुई और वह नाउम्मीदी के साथ शाम वापस गए। इमाम हुसैन[अ०स०] का बैयत से इन्कार सलतनत के इकतेदार के लिए बडी सख्त ठोकर थी जिसे मुआविया की कूव्वते सियासत दानी समझती थी मगर उसे हुसैन इब्ने अली का एक बडा तदब्बुर समझना चाहिए कि आपने अपने अमल को सलबी हुदूद तक महदूद रखा यानी सिर्फ बैयत न करना और सुकूत इख्तियार करना। आप जानते थे कि फरीके मुखालिफ एक वक्त में इस सुकूत को तोड़ने के लिए तशद्दुद से काम लेगा जिसके लिए आप तैयार थे मगर आप यह न चाहते थे कि आपकी तरफ किसी जारिहाना इकदाम का इलज़ाम आयद किया जा सके। दूसरी तरफ मुआविया ने भी ब–तकाजा–ए–सियासत उस वक्त किसी अमली इक़दाम को मुनासिब न समझा मगर उसके बाद न मुआविया तदबीरों से गाफिल थे और न हुसैन[अ०स०] मुस्तक्बिल से ब खबर थे अस्ल मे हुसैन[अ०स०] चाहते थे कि मैं खामोश रहूँ और हरीफ (मुखालिफ) तशद्दुद से काम ले और मुआविया का मतलब यह था कि हम अपनी तरफ से अमली तौर पर तशद्दुद की पहल न करें और हुसैन[अ०स०] जोश में आकर कोई ऐसा इकदाम कर बैठें

जो अमने आलम (शांति) को सदमा पहुचाने की जिम्मेदारी उन पर आयद कर दे

दर हकीकत करबला की जग अपने करीबी असबाब के लिहाज से शुरू यहीं से हो गई मगर यह उस वक्त एक सब्र आजमा नफसियाती कशमकश थी जो न मालूम कब तक जारी रहती। अगर मुआविया का रिश्त–ए–उम्र कता न होता (न मरता) और नौ उम्र, ना तजरेबा कार, गुरूरे सलतनत से बदमस्त यजीद तख्ते सलतनत पर न बैठता।

ग्यारहवाँ बाब

मुआविया की वफ़ात और यज़ीद की तख़्त नशीनी

सन 50 हिजरी में अमीर शाम मुआविया मरज़ुल मौत में मुबतिला हुए। उन्हें अपनी बीमारी के आलम में और खुसूसन उस वक्त जबकि सेहत से मायूसी हो गई थी शदीद एहसास था कि उन्होंने यजीद की खिलाफत तस्लीम कराने मे कितनी मेहनत व मशक्कत बरदाश्त की है और किस दर्जा अपने राहत व आराम और माल व दौलत और सबसे बढ कर जमीर की कुर्बानी की है जो रूहानी तकलीफ़ का बाइस होती है जिसका इजहार उन्होंने ब–सीग ए–राज (खामोशी) मरवान से किया। मुलाहिजा हो इब्ने हज्र मक्की की किताब "ततहीरूल जिनान वल लिसान" जो उन्होने मुआविया के मनाकिब (तारीफ) व फजाएल में तस्नीफ (लिखी) की है वह लिखते हैं कि एक रोज मुआविया रोने लगे। मरवान ने सबब दरयाफ्त किया उन्होंने जवाब दिया कि दुनिया में कौन सी राहत थी जो मैंने नही उठाई हो। अब सिन ज्यादा हो गया और हड्डियाँ घुल गईं और जिस्म कमजोर हो गया लेकिन अगर मुझ पर यजीद की मोहब्बत का ग़ल्बा न होता तो मैं अपने लिए राहे रास्त को हासिल कर लेता।[1]

अल्लामा इब्ने हज्र ने इसकी तशरीह करते हुए लिखा है कि इन अलफाज में मुआविया ने पूरे तौर पर इकरार कर लिया है कि यजीद की मोहब्बत ने उनको हिदायत के रास्तों से अंधा बना दिया है और इसी फर्ते (जोशे) मोहब्बत मे मुसलमानो को उनके बाद ऐसे फ़ासिक व फ़ाजिर के हाथों में मुब्तिला कर दिया जिसने उनको तबाह कर दिया।[2]

फिर यह फितरी बात है कि जितना ज्यादा किसी ने एक मकसद के लिए ईसार और कदो काविश (कोशिश) की हो उतनी ही उसे अपने उस मकसद

---

[1]हाशिया सवाएके मुहर्रिका, पेज / 58
[2]हाशिया सवाएके मुहर्रिका, पेज / 58

की कामयाबी की फिक्र होती है और उसमें किसी खलल के वाके होने का कलक (दुख) होता है मुआविया ने यजीद के लिए क्या कुछ किया और उसमें उनके नजदीक खलल क्या बाकी रह गया। इसका तज़किरा उन्होंने खुद यजीद से किया। अपने मरज़ुल मौत (मौत का मरज) की इब्तेदा मे जबकि उन्होने उसे बुला कर कहा। बेटा मैंने तुमको कच और मकाम (सफर और कयाम) की जहमतों से बचा दिया और तुम्हारे लिए तमाम इन्तेजामात मुकम्मल कर दिये और तमाम दुश्मनो के सर तुम्हारे लिए खम करा (झुका) दिये और तमाम कौमे अरब की गर्दन को तुम्हारे वास्ते झुका दिया और सबको तुम पर मुजतमा (तुमहारा) कर दिया मगर मुझे इस खिलाफत के मसले मे जो तुम्हारे लिए मुकम्मल हो चुका है। बस कुरैश के चार आदमियो से खटका है। हुसैन बिन अली[अ०स०], अब्दुल्लाह बिन उमर, अब्दुल्लाह बिन जुबैर और अब्दुर्रहमान बिन अबी बकर [1]

जाहिर है कि इन आँखो की सूईयों के रह जाने का मुआविया को कितना खयाल और सदमा होगा और यह सदमा उतना उतना बढ़ता था जितना जितना उनकी मौत का वक्त करीब आता जाता था

लेकिन वह यजीद जिसके लिए उन्होंने सब कुछ किया था अपने बूढे बाप के आख़िर वक्त पास मौजूद भी न था [2] और दमिश्क के बाहर मक़ामे हवारीन पर रग रलियों में मसरूफ था [3] मुआविया ने अपनी हालत दिगरगूं (नाज़ुक) पाकर उसके पास बुलाने के लिए आदमी भेजा मगर उसके आने में ताखीर हुई तो उन्होने अपने पुलिस आफीसर जहाक बिन कैस फहरी और अपने पहरेदारो के सरदार मुस्लिम बिन अकबा को बुला कर कहा कि जब यजीद आये तो मेरी वसीयत उस तक पहुँचा देना और उसे बतलाना कि मेरा हुक्म उसके लिए यह है कि वह अहले हिजाज के साथ मराआत (नर्मी) से काम ले। जो लोग वहाँ से दारूस्सलतनत मे आयें उनका इकराम व एहतराम किया जाये और जो वहाँ के अशराफ और बुजुर्ग यहाँ से दूर हैं उनकी भी वक्तन फवक्तन खबर गीरी की जाती रहे और अहले शाम को अपना दस्तो बाजू (करीबी) और अपना चश्मो गोश (देखना सुनना यानी उनकी खबर गीरी) बनाये रखे और उन्हें शाम के सूबे से बाहर ज्यादा अरसे तक न रखा जाये ताकि उनमें दूसरे मकामात के

---

[1] तबरी जि 6 पेज 79
[2] तबरी जि 6 पेज 182
[3] तबरी जि/6. पेज/183

अखलाक़ व अवसाफ सरायत (दाखिल) न करें। उसके बाद यह बतला देना कि मुझे उसके खिलाफ सिर्फ चार आदमियों से खौफ है। अव्वल हुसैन[अ०स०], दूसरे अब्दुल्लाह बिन उमर, तीसरे अब्दुर्रहमान बिन अबी बकर, और चौथे अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर।[1]

इस वसीयत से साफ जाहिर है कि मुआविया बिस्तरे मर्ग पर भी अपने दिल में तमाम दर्द यजीद का लिये हुए थे। उनको न अपनी बीमारी का कोई खयाल था न अपनी तकलीफ का कोई तसव्वुर, न अपने अन्जाम के मुतअल्लिक कोई फ़िक्र, उन्हें उस वक्त भी खयाल था, तसव्वुर था और फिक्र थी तो यजीद और सिर्फ़ यजीद की और उसके साथ आखिर वक्त की पथराई हुई निगाहों में भी सूरतें थीं तो चार, जो यज़ीद के लिए उनके नजदीक एक खतरे की हैसियत रखती थी। जिनमें सबसे पहली तस्वीर थी हुसैन[अ०स०] की

रजब सन 60 हिजरी में मुआविया दुनिया से रहलत कर गए।[2] अड़तीस बरस की उम्र में वह शाम के गवर्नर बने थे। 58 बरस की उम्र में वह खुद मुखतार खलीफा हुए और 78 बरस की उम्र में अब उनकी वफात हुई।[3]

बाज मुअर्रिख़ीन (इतिहास कारों) के बयान के मुताबिक उनकी उम्र इससे कुछ कम 73 या 75 और बाज के नजदीक इससे ज्यादा पच्चासी साल की थी।[4]

यजीद को उसकी शिकार गाह में इस सानेह की इत्तेलाअ् दी गई जिसको सुनकर वह दमिश्क पहुँचा। ऐसे वक्त जब मुआविया दफ्न भी किये जा चुके थे बाप की बिछाई हुई मसनद उसके आने ही की मुन्तजिर थी। वह तखते खिलाफत पर मुतमक्किन (बैठा) हुआ और तमाम अहले शाम ने फौरन उसकी बैयत कर ली।

---

[1]अख़बारुत्तुवाल, पेज/237 तबरी जि/6, पेज/180

[2]तबरी जि/6 पेज/180, इरशाद पेज, 208

[3]किताबुल बिलदान

[4]तबरी जि/6 पेज/181

बारहवाँ बाब

यज़ीद तारीख़ें की रोशेनी में

यजीद की माँ मैसून बिन्ते बहदिल बिन अनीफ़ कलबिया[1] एक सहराई औरत थी जो शहरी जिन्दगी से नफरत करती थी मगर वह अपने हुस्नो जमाल की बदौलत मुआविया की बहुत मन्जूरे नजर हो गई थी और उन्होंने उसके लिए गुता के मुकाबिल एक कस्र तामीर कराया था। जहाँ से उस पुर नुजहत (खूबसूरत) जगह की सैर दूर तक हो सकती थी और इस कस्र में बड़े आराइश के सामान और सोने चाँदी के बर्तन और दीबा-ए-रूमी (रेशमी) के रंगा रंग और मुनक्कश (दिलकश) फर्श मुहैया किये थे और बहुत सी हसीन व जमील कनीजें खिदमत के लिए दी थीं। इन शाहाना इन्तेजामात के साथ मैसून को इस महल मे उतारा गया था मगर यह सब कुछ इस सहराई औरत की निगाह में ख़ाक था इस लिए कि उसे तो अपना जगल और उसमे चरती हुई भेड बकरियाँ याद आती थीं एक दिन मुआविया के महल में आने का वक्त था और मैसून एक बेहतरीन पोशाक पहन कर और कीमती जेवरात पहन कर और खुशबू लगा कर कनीजो के झुरमुट में उस खिडकी के सामने बैठी थी जो कि गूता के मुर्गजार (बाग) की तरफ थी। उसको वहाँ के दरख्त नजर आ रहे थे और ताएरों (परिन्दों) के नगमों की सदा और फूलों की खुशबू आ रही थी। उस वक्त उसे अपना नज्द (आज का सऊदी) का बादिया (पडोसी) और हमजोलियाँ और सहेलियाँ याद आईं। जिसकी बिना पर वह बेसाख्ता रोने लगी और ठडी सासें भरने लगी एक खवास (करीबी) ने रोने का सबब दरयाफ्त किया। मैसून ने एक लम्बी साँस ली और कुछ अशआर पढे जिनका मज़मून यह था। "यक़ीन समझो कि वह डेरा जिसमें चौबाई हवा के झांके आते रहते हैं मुझे इस आलीशान महल से ज्यादा महबूब है और वह बालों की एबा जो मेरे जिस्म पर होती थी इन बारीक और साफ पोशाक से ज्यादा महबूब थी और

---

[1]तबरी जि/6 पेज/183 व जि/7 पेज/15

एक सूखी रोटी का टुकड़ा अपने झोंपड़े के कोने में बैठ कर खाना मुझे इन साफ और उमदा रोटियों से ज्यादा मरगूब (बेहतर) था और वह दुर्राहाये कोह (किला नुमा पहाड़) में हवाओं के थपेड़े की सदा मेरे लिए तबलों की आवाज से ज्यादा दिलकश थी और वह कुत्ता जो मेहमानों के आने के वक्त भौंकता था इन खूबसूरत सधी हुई मुर्गाबियों से ज्यादा महबूब था और वह सरकश ऊँट जो हौदजो (अमारी जिसमें औरतें सवार होती हैं) को लेकर चलता था मुझे इस जीन व लजाम से आरास्ता ख़च्चर (गधे) से ज्यादा पसन्द था और मेरे कौम व कबीले का एक दुबला पतला हकीर आदमी मुझे एक बदखू (बुरी आदत वाले) मुसटन्डे से ज्यादा महबूब था।

जब मुआविया आये तो उस खवास ने यह किस्सा मुआविया से दोहराया या यह कि मुआविया ने मैसून को यह अशआर पढते खुद सुन लिया। बहरहाल उनको बड़ा गुस्सा आया और उन्होंने कहा कि सब तो सब उसने मुझको सख्त बदखू मुसन्डा बनाया मैं उसको तीन तलाक़ देता हूँ। जाओ उससे कहो कि वह जो कुछ महल में साज व सामान है सब कुछ ले ले और चली जाये, चुनाँनचे उसे नज्द में उसके अजीजों के यहाँ भेजवा दिया गया इस हालत में कि यजीद उसके पेट में था।[1] सन 22 हिजरी में यजीद का तवल्लुद (पैदा) हुआ [2] दो बरस के बाद जब मुआविया को इसकी इत्तेला हुई तो उन्होंने उसको वहाँ से बुलवा लिया [3] नौजवानी ही की उम्र से वह फिस्क़ो फुजूर (अय्याशी) और लहो लअ्ब (खेलकूद) में मुब्तिला हो गया और सिन के साथ साथ उसके इन अवसाफ मे भी तरक्की होती गई। चुनाँनचे मुखतलिफ जानवरों के साथ उसके रकीक हरकात (बुरे कामों) का तारीख़ में मुख़तलिफ़ सूरतों से चर्चा मौजूद है।

अल्लामा दमीरी ने लुगत "महज" के तहत लिखा है कि सब से पहले उसको घोडे पर सवार यजीद बिन मुआविया ने किया है।[4] दूसरे मकाम पर लिखा है कि यजीद के एक बन्दर को गधे पर बैठने की मश्क कराई गई थी और घुड़ दौड़ में उसका बड़े शहसवारों से मुक़ाबला कराया जाता था और एक मर्तबा वह तमाम शहसवारों से सबक़त ले गया तो यज़ीद ने इस बारे में शेअ्र

---

[1] हैयातुल हैवान जि / 2, पेज / 207
[2] तबरी जि / 4, पेज / 259
[3] हयातुल हैवान, जि / 2, पेज / 207
[4] हयातुल हैवान जि / 2, पेज / 186

कहे जिनका मजमून यह था कि कोई मेरी तरफ से कह दे इस बन्दर से जो एक गधी की पुश्त पर बैठ कर घोडो से आगे निकल गया कि ऐ अबू कैस जब तू उस पर सवार हुआ कर तो उससे लिपटा रहा कर क्योंकि अगर तू मर गया तो इस गधी से कोई बाज पुर्स भी न हो सकेगी।[1]

यजीद ने अपने बन्दर की कुन्नियत (लकब) अबू क़ैस करार दी थी और अपने सागर की बची हुई शराब उसे पिलाया करता था और कहा करता था कि यह बनी इस्राईल का एक बुज़ुर्ग है जिसने गुनाह किया था तो वह मस्ख़ (तब्दील) हो गया और वह उसको एक गधी पर सवार करता था जो उसी मक्सद से सधाई गई थी और घुड़ दौड़ के मैदान में वह उसे घोड़ों के साथ छोड़ देता था एक रोज गधी आगे बढ़ गई तो यजीद बहुत खुश हुआ और यह शेअ्र पढ़े

"ऐ अबू क़ैस उसकी मेहार से लिपटा रहा कर, अगर तू गिर पड़ा तो उस पर कोई जिम्मेदारी न होगी इस गधी ने यह कारेनुमायाँ किया है कि वह तमाम घोड़ो से आगे निकल गई है।"[2]

यह तो उसके लग्वो अफआल (बेहूदा आमाल) थे। इसके अलावा शराब ख्वारी उसकी जरबुल मसल (अपनी मिसाल आप) थी चुनानचे अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर ने नाम ही उसका "सुकरान" यानी बदमस्त रख लिया था [3] वह किसी मौक़े पर मसलहतन भी इस आदत को तर्क करने पर तैयार न होता था। चुनाँनचे वली अहदी के दौर में मुआविया के हुक्म से वह मक्का व मदीना में अपना असरो रूसूख जमाने के लिए हज को गया तो मदीन ए रसूल[स०अ०] में पहुँच कर भी मुसाहिबों के झमघटे मे शराब का दौर ज़रूर चलाया।[4]

वाकदी ने अब्दुल्लाह बिन हन्जला गसीलुल मलाएका (सहाबिये रसूल जिनको मलाएका ने गुस्ल दिया) की ज़बानी नक्ल किया है कि खुदा की कसम हमको यजीद की हुकूमत में यह खौफ हो गया था कि अब आसमान से हम पर पत्थर बरसेंगे। वह ऐसा शख़्स था जो अपनी सौतेली माओं और बेटियों

---

[1]हयातुल हैवान जि/2, पेज/201
[2]तारीख़ इब्ने गुती
[3]अख़बारूत्तुवाल, पेज/261
[4]कामिल जि/1 पेज/63

और बहनो तक को न छोड़ता था और शराब आजादी से पीता था और नमाज को तर्क करता था।[1]

इतना ही नहीं कि वह अमली हैसियत से एक लाउबाली और गुनहगार शख्स था बल्कि उसके खयालात भी ऐसे ही थे वह अपने अफआल पर मुन्फ़इल नहीं होता था (यानी अपने किए पर पछतावा नहीं होना) बल्कि उन पर नाज़ाँ था इस का मुजाहरा उसके दीवान के उन अशआर से होता है जिन मे उसने अहक़ाम शरीअत का मजाक उड़ाया है बल्कि कुरआन व हदीस के साथ तमस्खुर (मजाक़) किया है। यह ठीक है कि अशआर में अक्सर बातें गैर वाक़ई भी नज्म हो जाती हैं और उनके बयानात अक्सर तखैयुली (खयाली) पैराए रखते हैं मगर इसमे भी कोई शक नही कि खयालात वैसे ही दिमाग में आते हैं और अशआर वैसे ही तराविश (निकलते हैं) करते हैं जैसा इन्सान का मजाक़ (जौक) तबियत होता है एक दीनदार मुत्तक़ी और परहेजगार शख्स से मुमकिन नही है कि वह अशआर में खुदा या रसूल या अइम्मा–ए–दीन के साथ इस तरह की जसारतें करे जो इन्तेहाई हिकारत आमेज हों यजीद के अशआर इसी तरह के हैं।

वह सिर्फ लजाएज से मुतमत्ते (लुत्फ अन्दोज) नहीं होता था बल्कि नजरया भी यही रखता था। देखा जाये तो उमर खैयाम का यह फलसफा कि आखिर मे फ़ना होना है इस लिए जितना मुमकिन हो दुनिया में मज़े लूट लो। खैयाम से पहले यजीद के जहन में तशकील पा चुका था। चुनानचे वह कहता है

اقول الصحب صمت الكاس شمدهم | وداعى ميبابالهدى يترنم

حدو ابنصيب من نعيم ولذة | فكل وان طال الهدينصرم

'उन साथियों से जिन्हें सागरो शराब ने एक मरकज पर जमा कर दिया है और जिनके सामने इश्को मुहब्बत के मुहर्रिकात (हरकत करने वाले) नगमा सराई करते हैं मेरा यह क़ौल है कि जितना मुमकिन हो ऐश व लज्जत से बहरावर (डूबेहुए) हो लो क्योंकि कितनी ही मुद्दत तूलानी हो आखिर मे तो खत्म ही होना है।"[2]

---

[1] सवाएके मुहर्रिका पेज 135

[2] सवाएके मुहर्रिका पेज 132

नमाज और शराब खोरी का मवाज़िना (मुकाबला) करते हुए उसने एक शेअ्र में कहा

ماقال ربک ویل الالی شربوا

بل قال ربک ویل اللمصلین

'यानी खुदा ने शराबख्वारों को अज़ाब से डराने के लिए ''वैलुश्शारेबीन' (लानत) कहीं नहीं कहा बल्कि कुरआन में नमाज गुजारों को 'वैलुल लिलमुसल्लीन'' (वाये हो ऐसे नमाजियों पर) कहा है '

एक जगह उसने शराब के बारे मे इस तरह कहा है।

فان حرمت یوما علی دین احمد

فحذحا علی دین المسیح ابن مریم

यानी अगर दीने अहमद में शराब पीने को हराम समझा गया है तो खैर दीने मसीह पर ही कर ही पी लो।' उसने आख़ेरत की नेमतों का मवाज़ना नमाज व शराब से करते हुए यूँ कहा है

معشرالندمانقوموا | واسمعو، صوت الاغانی

واشربوکاسمدام | واترکواذکرالمعانی

شغلتنی نعمة العید | ان من صوت الاذان

وتعوّضت عن الحو | رعجورابالذنان

''ऐ हरीफाने शराब (शराबी साथियों) उठो और गानो की सदा सुनो, सागरे शराब पियो और दूसरी बातो का जिक्र छोड दो, मुझको सितार और सारगी के नगमो से अजान की आवाज सुनने की फुरसत नहीं और हूरो के एवज मैं ने शीशा की परी को पसन्द कर लिया है।''

यूँ तो यह अशआर तफ़रीहे तबा का जरिया भी बन सकते हैं मगर उनमें हूरो कुसूर की खबरों का मजहका जरूर मुजमर (छुपा) है इतना ही नहीं बल्कि उसने हश्रो नश्र (आखिरत) के इन्कार को बिल्कुल सराहत (साफ साफ) के साथ ज़ाहिर कर दिया है। अपने इन अशआर में।

علیۃ هاتی واعلی وترنمی بذالک انی لاحب التنجیا

حدیث ابی سفیان فتمسمابھ الیٰ احد حتی اقام البواکیا

الاهات سقینی علی ذالک قهوة تحیرها العنی کرماشامیا

اذامانطرسنی امور قدیمة وجدنا حلالاشربها متوالیا

وان مت یالم الاحیم فانکحی ولاتاملی لعد الفراق تلاقیا

كن الذى حدثت عن يومانعتنا | احاديث طسم تحعلاالقلب ساهيا
ولابتلى من ان زورمحمدا | بشمولة صفراء تروى عظاميا

'ऐ नाजनीन महबूबा मुझे सुना और बलन्द आवाज से सुना और गा कर पढ, मुझे चुपके चुपके गुफ्तगू अच्छी नहीं मालूम होती सुना अबू सुफियान का वह पुराना किस्सा ओहद मे उसका कारनामा जहाँ उसने दुश्मनों के घर मे मातम बरपा कर दिया था। हाँ उसी अफसाने के साथ मुझे शराब पिलाती जा वह शराब जिसे शाम के बहुत मुन्तखब अगूर से बनाया गया हो हम जब कदीमी अमल दरआमद पर नजर डालते है तो हमे उसका पीना हलाल ही नज़र आता है और मैं मर जाऊँ ऐ नाज़नीन महबूबा तो तू किसी और से निकाह कर लेना और यह उम्मीद न करना कि इस जुदाई के बाद कभी फिर मुलाकात होगी। दूसरी जिन्दगी के मुतअल्लिक तूने जो किस्से सुन होंगे वह पारीना किस्स (पुरान) हैं जो इन्सान के दिल को नादानी मे मुब्तिला करते हैं। यह यकीनी है कि मैं मुहम्मद[स0अ0] का सामना करूँगा ऐसी शराब के नशे में मस्त रह कर जिस का असर मेरी हडडियों तक पहुँच गया हो।

इन अशआर से साफ जाहिर है कि उसके दिल मे जाहलियत के खयालात और बद्र व ओहद का मुशरिकाना जज्बा और हजरत मुहम्मद मुस्तफा[स0अ0] से जिद और कद (दुश्मनी) का जज्बा मौजूद था इनके साथ आगे चल कर वह अशआर भी आयेगे जो उसने कत्ले हुसैन[अ0स0] के बाद और अहलेबैत[अ0स0] के शाम में वारिद होने के वक्त कहे हैं तो वह भी उन्हीं खयालात के हामिल नजर आयेंगे। इस सबके बावजूद यह सियासते दुनिया की सितम जरीफी नही तो और क्या था कि ऐसा शख्स इस्लामी खलीफा और एक हैसियत से जानशीने रसूल[स0अ0] और अमीरूल मोमिनीन बन कर बैठ गया था और मुसलमानों की अक्सरीयत उसकी इस हैसियत को तस्लीम कर रही थी। उसका असर आम मुसलमानों के अखलाक पर क्या पड सकता, सिवा इसके कि उनमे भी मजहबी बेहिसी बल्कि मजहब को निगाहे हिकारत से देखने का जज्बा और वही ऐश व निशात की गर्म बाजारी पैदा हो जाती चुनानचे ऐसा ही हुआ।

तेरहवाँ बाब

इमाम हुसैन[अ०स०] के बलन्द अख़्लाक़ व कमालात और गराँ क़द्र मक़ूलात

अरब के एक फ़लसफ़ी शायर ने कहा है। "ان العظائم كفوها العظماء" बडे कारनामों के लिए बडे ही नुफ़ूस दरकार होते हैं " एक दूसरे शायर ने कहा है

على قدر اهل العزم تاتی العزائم	وتاتی علی قدر الكرام المكارم
ويكبرفی عين الصغير صغارها	وتصغرفی عين العظيم العظائم

"यानी साहिबाने इरादा की शख़सियत के मुताबिक ही होते हैं उनके इरादे और बुज़ुर्ग मर्तबा नुफ़ूस की मुनासिबत ही से होती हैं उनकी बुज़ुर्गियाँ, छोटे आदमी की निगाह में छोटा सा काम भी बड़ा मालूम होता है। इसलिए अव्वल तो वह उसके करने की हिम्मत नहीं करता और अगर कर भी लेता है तो उसको अपना सबसे बड़ा कारनामा समझ कर उस पर नाज़ाँ हो जाता है और बडे की निगाह में बडा काम भी छोटा मालूम होता है इस लिए वह उसे कर गुजरता है और उस पर भी उसका दिल नहीं भरता बल्कि उससे भी बडे कारनामे के लिए तैयार रहता है।'

इस नुकत ए नजर से देखा जाता है तो मुजाहिद ए करबला ऐसे अजीमुश्शान कारनामे का हामिल होना ही हुसैन[अ०स०] के नफ्से बुज़ुर्गी और उनके किरदार की रिफअत के मुतअल्लिक वह सब कुछ बतला देता है जिसका शायद पूरे तौर पर अन्दाजा करना और फिर उसे वाजेह तौर पर अलफाज़ के जरिये से पेश करना मुअर्रीख़ीन (इतिहास कारों) के तसव्वुर और तहरीर की ताक़तों से बाहर था।

हकीक़त यह है कि वाक़ेय–ए–करबला के नादिर ख़ुसूसियात आलमे वक़ूअ(वजूद) में आ ही न सकते थे। अगर उसके अन्जाम देने के लिए हुसैन[अ०स०] के ऐसे बदलन्द नफ्स का इन्सान मौजूद न होता और वाक़ेय–ए–करबला में अज़मत, अहमियत और नतीजे के लिहाज से यह तासीर

पैदा हो ही नहीं सकती थी अगर उसका तअल्लुक़ हुसैन[अ०स०] ऐसी अजीमुल मरतबत जात के साथ न होता

यूँ तो वाकेय–ए–करबला खुद ही ऐसी नादिर खुसूसियात रखता है कि बहैसियत वाकेय–ए–करबला उसकी मिसाल कोई मिल ही नहीं सकती लेकिन उन खुसूसियात समैत भी उसकी तासीर का बड़ा तअल्लुक उस चीज के साथ है कि वह हुसैन[अ०स०] ऐसी बलन्द हस्ती के साथ मुतअल्लिक़ है कोई मामूली शख्स ऐसा कर ही नहीं सकता था और बफर्जे मुहाल करता भी तो उसकी यह तासीर नही हो सकती थी। इसलिए वाक–ए–करबला का वकूअ भी हुसैन[अ०स०] के नफ्स की इन्तेहाई अज़मत का सुबूत है और उसकी वह तासीर भी जो आलमे इस्लाम में पैदा हुई हुसैन[अ०स०] के नफ्स की रिफ़अत व बलन्दी और आपकी शख़सियत की बरतरी की दलील है।

मगर यह नुकता भी पेशे नजर रखना जरूरी है कि शखसियत और किरदार का बाहमी तअल्लुक एक मुतआकिस (अलग) नतीजा रखता है यानी किसी खास अमली कारनामे में अहमियत और तासीर पैदा होती है। शखसियत की रिफ़अत (बलन्दी) व शोहरत और सर बलन्दी से, और फिर उस इन्सान की शख़सियत व अज़मत मे इज़ाफ़ा हो जाता है उस किरदार से इसलिए कोई शुबहा नहीं है कि अगरचे वाकेय ए करबला का वजूद में आना और फिर उसमें यह तासीर पैदा होना मुमकिन न था बगैर इमाम हुसैन[अ०स०] के। मगर इमाम हुसैन[अ०स०] की शखसियत की हमागीरी और रहनुमायाने आलम मे आपकी इम्तियाज़ी फौकियत (बलन्दी) के आफ़ताब का बिला तफ़रीके मजहबो मिल्लत हर वाक़िफ़ और मुन्सिफ़ (इन्साफ पसन्द) शख्स की निगाह में खत्ते निस्फ़ुन्नहार (हद्दे कमाल) पर पहुँचना भी वाकेय–ए–करबला के सबब से था यही वजह है कि वाकेय–ए–करबला के दौरान में आपकी सीरत के खत्तो खाल अपने छोटे छोटे जुज़ियात (वाकआत) के साथ महफूज हैं। सबब इसका साफ़ जाहिर है वाकेय–ए–करबला के पहले इमामे हुसैन[अ०स०] को मुअर्रिख़ीन की निगाह बस उस हद तक देख सकती थी जितना कि आपके बड़े भाई इमाम हसन[अ०स०] या आपकी औलाद में उन इमामो को वह देख सकी, जिन में से हर एक तक़्वा, इस्मत और पाकबाजी का मुजस्समा था। जैसे उनके औसाफ व किरदार के मुतअल्लिक कभी इजमाल (मुख्तसर) और कभी कुछ तफ़सील के साथ बाज़ वाक़ेयात, सखावत, इबादत, रियाजत, व हिल्म (बरदाश्त) वगैरह का तजकिरा है। उसी तरह इमाम हुसैन[अ०स०] के मुतअल्लिक़

भी जस्ता जस्ता (थोडे थोडे) इस किस्म के मुखतलिफ वाकेयात और हालात का तजकिरा सफ़हाते तारीख़ पर पाया जाता है। उस वक़्त के तारीख़ी वाकेयात महफ़ूज करने वालों को सन 60 हिजरी के पहले तक क्या मालूम था कि आप एक ऐसा अजीम कारनामा अन्जाम देने वाले हैं जिसकी मिसाल तारीख के सफ़हात पर नापैद होगी ताकि वह इब्तिदा–ए–उम्र से आपकी जिन्दगी के हर जिजये (हिस्से) को महफ़ूज रखने की कोशिश करते और उन्हें सीना ब सीना महफ़ूज करके लब ब लब मुन्तकिल करते हुए किताबों के दामन तक पहुँचाते

लेकिन एक तरफ तो वाकेय–ए–करबला के दौरान मे तमहीदी (शुरूआती) या जिमनी तौर पर तारीख ने जो मुखतलिफ़ अखलाकी वकेयात और हालात हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के बयान कर दिये हैं वह आपकी सीरत व किरदार का एक आईना पेश करते हैं दूसरी तरफ आपकी साबिका जिन्दगी के मुतअल्लिक जिन रिवायात को तारीख़ ने हम तक पहुँचाया है उन से भी आपकी अजमत और अवसाफ व कमालात के मुतअल्लिक एक रौशन मुरक्का हमारी आँखों के सामने आ जाता है जिससे मालूम होता है कि हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] सिर्फ़ एक मज़लूम और सितम रसीदा, शहीद होने के लिहाज ही से दुनिया के कुलूब (दिलो) का मरकज नहीं हैं बल्कि आपके जाती खुसूसियात और अवसाफ़ व कमालात भी आपको दुनिया का किब्ला बनाने के लिए काफी थे जिनसे आप इन्सानियत की मेराज व बलन्दी में सबसे ज्यादा रफ़ीअ् (बुलन्द) दर्जे पर नजर आते हैं।

जाहरी हैसियत से माहरीने नफसियात के नुकत ए नजर से शखसियतों की तशकील (बनने) के असबाब हस्बेजैल होते हैं।

पहले खानदानी खुसूसियात और बुजुर्गों के कदीम रिवायात। दूसरे माहौल और तालीम व तरबियत। तीसरे जिन्दगी के अहम तजुरबात पहली चीज वह है जो इन्सान के खून में दौड कर उसकी सलाहियत और इस्तेदाद (ताक़त)और फितरी काबलियतों की तश्कील करती है। दूसरी चीज उन सलाहियतों को फेलियत (काम) के दर्जे से करीब तर पहुँचाने का काम अन्जाम देती है या बसा अवकात (कभी कभी) फेलियत में ले आती है। और तीसरी चीज उन फेअ्ली कमालात में पुख्तगी पैदा करके मलक–ए–जाती बनाती और उन में इस्तेहकाम (मजबूती) पैदा करती है। हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] में तीनों बातें ब–दर्जा–ए अतम (पूरी तरह) पाई जाती हैं। आपके खानदादी खुसूसियात

वह थे जिनकी नजीर दूसरे शख्स में पाई न जाती थी और यह खुसूसियत वह थी जिसके लिहाज से आपके मुखालिफ गिरोह को अपनी फौकियत साबित करने के लिए कोई दलील न मिलती थी सिवा ज़ुल्मो जब्र और कहर व इस्तिबदाद (सख्ती) के। उन्हें एक खास एहसासे कमतरी के साथ आपकी बलन्द खुसूसियात को खुद अपनी ज़बान पर लाना पड़ता था और जवाब देने ही के इरादे से उनका एतेराफ करना पड़ता था। चुनाँनचे यजीद ने भी अपने दरबार में इसका इक़रार किया कि बेशक उनकी माँ मेरी माँ से बेहतर और उनके नाना मेरे नाना से बेहतर थे।[1] इन खानदानी खुसूसियात के साथ जो जाहरी असबाब की बिना पर हुस्ने फितरत के जामिन हैं हुसैन[अ०स०] ने तरबियत ऐसी बलन्द पाई थी जिससे इन्सान के अखलाक व अवसाफ मे बलन्दी पैदा होना लाज़मी है। इसके अलावा आपको मुखतलिफ हालात और मुतज़ाद (मुखतलिफ) वाक़ेयात के ऐसे दौर से गुजरना पड़ा था जिसमे इन्सान को जज्बाते नफ्स के खिलाफ अक्ल की ताक़त से काम लेना पड़ता है इसलिए नफ्स में पुख्ता कारी, तदब्बुर (बलन्द फिक्री) और इस्तेकलाल (साबित क़दमी) पैदा होना लाजमी है।

इन वाकेयात से एक ऐसा शख्स भी जो इमाम हुसैन[अ०स०] की बहैसियत एक मासूम ज़ात के मारिफत न रखता हो यह मानने के लिए मजबूर है कि हुसैन[अ०स०] कोई जज्बाती इन्सान न थे वह मुतहम्मिल (बरदाश्त) और बुर्दबार थे और कभी गुस्से और जोश मे आकर कोई ऐसा काम न करते थे जो नज्मो ज़ब्त और सुकून के खिलाफ हो सख्त से सख्त मवाके पर खामोशी आपका एक मुस्तकिल किरदार बन गई थी बशर्तेकि उस खामोशी से उन मुकासिद को कोई ज़रर (नुकसान) न पहुँचे जिनके वह खुद और उनके नाना, बाप और भाई मुहाफिज रहे थे। हर शख्स समझ सकता है कि ऐसी सुल्ह कुल मुतहम्मिल और अमन पसन्द ज़ात किसी ऐसे इकदाम के लिए तैयार नहीं हो सकती जिस में वह और उसके तमाम साथी एक दम तहे तेग हो जायें। जब तक ऐसे अहम और गैर मामूली असबाब पैदा न हो जायें जिन के बाद वह ऐसा कर गुजरना खालिक की तरफ से अपना फर्ज समझे। चुनानचे जब ऐसी सूरतें पैदा हो जाती हैं तो वह ऐसा कर गुजरता है और इससे उसके नफ्स की इरादी ताकत और अमली कुव्वत की पुख्तगी और अपने ज़ाती जज्बात को

[1] तबरी. जि/6. पेज 266

फराएज के मुकाबले मे फ़ना कर देने की वह बलन्द मन्जिल जाहिर होती है जिस पर हर इन्सान नहीं पहुँच सकता।

नफसानियत की फ़ना और फर्ज़ शनासी का मलका यही वह एक जामे और वसी मफ़हूम (खुलासा) है जिसके तहत मे इन्सानी किरदार के तमाम मुजाहरात (जाहिर होना) जुज़्ई व कुल्ली (मुखतसर व पूरे) तौर पर दाखिल हो जाते हैं मगर हजरत हुसैन[अ०स०] के कमालात व अवसाफ की तशरीह के लिए जब अहले मारिफत ने कलम उठाया तो उस पर इजमाली तब्सरे के लिए भी बलन्द तरीन अलफाज तलाश करना पड़ा और तफसील के मौके पर भी जरीं रिवायात सामने आये।

इब्ने अबी शैबा मशहूर मुहद्दिस (हदीसों को जमा करने वाले) ने इमाम हुसैन[अ०स०] का हाल दर्ज करते हुए लिखा है

كان عالما بالقرآن عاملا عليه زاهدا تقيا ورعا جوادا فصيحا بليغا عارفا بالله ودليلا على ذاته تعالى

आप कुरआन के आलिम और उस पर आमिल, जोहद व तकवा के जौहर के हामिल, पाकीज़ा खिसाल, परहेजगार, सखी, शीरीं बयान और शेवा जबान खुदा की मारिफत रखने वाले और ज़ात इलाही का एक सुबूत थे "

आखिरी फिक़रे से ज़ाहिर है कि लिखने वाला पहले तो अवसाफ के इजहार में ब–मजबूरी इन अलफाज को सर्फ करता रहा जो मामूली दरजे के उलमा और जुह्हाद (परहेजगार) के मुतअल्लिक भी सर्फ होते रहते हैं। फिर उसका हौसला–ए–इजहार उन अलफाज की कोताही से तगी करने लगा और उसने आखिरी अलफाज में सिफाते इन्सानी की मेराजे कमाल का पता दे दिया कि वह अपने खालिक के अवसाफ का मजहर बन जाये। अल्लामा इब्ने अरबी ने इसी लिए पहले ही कोताह दामने अलफाज के दफ्तर को तह ही रखना मुनासिब समझा और उन्होंने कहा कि "كان الحسين السبط آية من آيات الله' सिबते रसूल इमाम हुसैन[अ०स०] खुदा की निशानियों मे से एक बडी निशानी थे।' यह इख्तेसार बयाने अवसाफ में वह होता है जो हजार तफसीलों से बढ़कर फ़ायदा देता है

हुसैन[अ०स०] बेशक जाते इलाही का सुबूत और उसकी बडी निशानी थे। इसी लिए खुदा को न मानने वालों का भी हुसैन[अ०स०] को देख कर दिल चाहने लगता है कि खुदा को मान लें या मानने लगते हैं

जैसा कि "जोश मलीहाबादी" ने कहा है

हाँ वह हुसैन जिसका अबद आशिना सिबात
कहता है गाह गाह हकीमों से भी यह बात
यानी दुरूने परद ए सद रगे काएनात
एक कार साज जहन है एक जी शऊर जात

सजदों से खींचता है जो मसजूद की तरफ
तन्हा जोइक इशारा है माबूद की तरफ

इबादत आपकी यानी वह जिसे आम तौर पर इबादत समझा जाता है वरना हकीकत के लिहाज से तो आपका हर अमल रिजा ए परवरदिगार की ग़रज से और फ़र्ज के एहसास का नतीजा होता था। इसलिए कोई हरकत व सुकून भी आपका इबादत से बाहर न था मगर उस महदूद मफहूम के लिहाज से भी जिसके एतेबार से लोग इन्सान को आबिद कहते हैं आपकी इबादत दुनिया के लिए एक बेमिसाल नमूना थी। रात दिन की नमाज गुज़ारी और मुसलसल रोजादारी के अलावा 25 हज आपने पापियादा (पैदल) किये।[1]

इन तमाम हजों के वाकेयात और जमाने की तईन (तहकीक) से हमारे मौजूदा मालूमात कोताह हैं। एक मर्तबा के सफरे हज का तजकिरा यह मिलता है कि खलीफ़ ए सालिस के जमाने मे इमाम हुसैन[अ०स०] अपने वालिद बुजुर्गवार जनाबे अमीर[अ०स०] की मईयत (साथ) में हज के लिए मुतवज्जेह हुए मगर आप सकिया और एरज के दरमियान थ कि बीमार पड़ गए। अब्दुल्लाह बिन जाफ़र आपको उठा कर अपने साथ ले गए हजरत अली[अ०स०] शायद कुछ आगे बढ़ चुके थे। आपको भी ख़बर दी गई आप असमा बिन्ते उमैस को लेकर तशरीफ लाये तकरीबन बीस दिन तक और एक रिवायत के मुताबिक चालीस दिन तक तीमार दारी होती रही तब आप सेहतयाब हो कर मदीने वापस आये [2] लेकिन यह वाकेया अगर दुरूस्त हो तो इस तादाद से खारिज होगा हाँ एक मर्तबा का यह तजकिरा है कि आप और आपके भाई इमाम हसन[अ०स०] दोनो शाहजादे पियादा (पैदल) हज के लिए जा रहे थे। इत्तेफाक़ से रास्ते में हाजियों का काफ़िला भी उन तक पहुँच गया अब जो उन शाहजादों को लोगो ने पियादा देखा तो हर शख़्स जिसकी नजर पड़ती वह फौरन उनके एहतेराम के लिहाज से सवारी से उतर पड़ता। कुछ देर तो लोग साथ साथ पियादा चलते रहे। आखिर ताकते रफतार ने जवाब दिया। सब मिलकर सअद

[1] तहज़ीबुल असमा नूदी जि/2

[2] तफसीरे मजमउल बयान तबरी. जि, 2 पेज/240

बिन अबी विकास के पास आये जो उस काफिले में सिन रसीदा (बूढे) सहाबी थे उनसे आकर कहा कि अब तो रास्ता चलना हम लोगों पर बहुत बार है मगर यह अच्छा नहीं मालूम होता कि हम लोग सवार हों और यह दोनो शहजादे पापियादा (पैदल) रस्ता तय करे। सअ्द इमाम हसन[अ०स०] की खिदमत में हाजिर हुए और कहा कि आपके साथ वालों में से बाज़ पर पियादा (पैदल) चलना निहायत शाक़ (दुशवार) हो रहा है। मगर लोग जब आप दोनों बुज़ुर्गों को पियादा चलते देखते है तो उनका दिल नही चाहता कि वह सवार हो कर रास्ता चलें। इसलिए बेहतर मालूम होता है कि अब आप दोनों हजरात सवार हो जायें। इमाम हसन[अ०स०] ने फरमाया कि यह तो हो नहीं सकता क्योंकि हम ने अपने ऊपर फर्ज़ यही करार दिया है कि हम खान-ए-काबा की तरफ अपने पैरो से चल कर जायें मगर लोगों को तकलीफ देना भी हमे गवारा नही है इस लिए हम इस रास्ते को छोड़ देते हैं। चुनानचे वह दोनों बुज़ुर्गवार शाहराह (Main Road) से हट कर दूसरे रास्ते से रवाना हो गए।[1] एक मर्तबा के हज का तजकिरा है कि आप के भतीजे अब्दुर्रहमान बिन हसन[अ०स०] आपके साथ थे और हालते एहराम में अबवा के मकाम पर उनकी वफात हो गई।[2]

इबादते इलाही के साथ जो दिली वाबस्तगी थी उसका अन्दाजा आपको इमाम हुसैन[अ०स०] के उन अलफाज से भी हो सकता है जो 9 मुहर्रम की सेहपहर को आपने एक शब की मोहलत तलब करने के मौके पर इरशाद फरमाये थे आपने कहा कि इस शब को हम इबादत व जिक्रे इलाही मे बसर कर लें। खुदा ही जानता है कि मुझे उसकी इबादत व जिक्र से कितनी मुहब्बत है[3] चुनाँनचे यह शब आपने और आपके साथियों ने इस तरह गुजारी की لهم دوىى كد وىّ النحل यानी उनके तस्बीह व तहलील और जिक्रो मुनाजात की आवाज रात के तारीक सन्नाटे मे इस तरह गूँज रही थी कि जैसे शहद की मक्खी के छत्ते से आवाज बलन्द होती है। और रोजे आशूरा ऐसे सख्त वक्त मे नमाज ब- जमाअत अदा की जब कि मौत का बाजार गर्म था। करबला की जमीन पर खून की बारिश अलग थी। तीरो की बारिश अलग थी और गर्मी से आग अलग बरस रही थी। मरग इस मौके पर जोहर की नमाज जमाअत के साथ यूँ अदा हुई कि दो जाँ निसारो को मुहाफ़िजत के लिए सामने खड़ा

---

[1]अल इरशाद पेज/266
[2]अल इरशाद पेज/203
[3]अल इरशाद पेज/243

किया कि जो तीर आये उसे अपने सीने पर रोके। इधर नमाज़ तमाम हुई और उधर उनमें से एक सहाबी सईद बिन अब्दुल्लाह हनफी जख्मों से चूर हो कर जमीन पर गिरे इस तरह हुसैन[अ०स०] ने खालिक की इबादत और फरीज–ए–नमाज़ की अहमियत दुनिया में साबित की।

इसी के साथ आप फय्याज़ थे और ख़ल्के ख़ुदा को फ़ायदा पहुँचाने की फ़िक्र रखते थे। इसके वाकेयात तारीख में बकसरत मिलते हैं।

खुद रसूल अल्लाह[स०अ०] ने अपने इस नवासे के अन्दर बचपने ही से इस सिफ़त को कुछ ऐसा नुमायाँ पाया कि इरशाद फरमाया:

امّا الحسن فان له هيبتي وسوددی و امّاالحسين فان له جودی و شجاعتی

"यानी हसन के लिए मेरा रोअ़ब व दाब और शाने सरदारी है और हुसैन[अ०स०] में मेरी सखावत और मेरी बहादुरी [1] यूँ तो हुसैन[अ०स०] औसाफे रसूल[स०अ०] के वारिस थे ही लेकिन खुसूसियत से अपनी सखावत व शजाअत बख्शने से जाहिर होता है कि हजरत के यह औसाफ दीगर औसाफ से जरूर कुछ इम्तियाज़ रखते हैं

खिदमते खल्क और नौए इन्सानी की हमदर्दी के बेहतरीन जज्बे के साथ साथ आपने इस की भी तल्कीन फ़रमाई है कि इस बारे में हिफ़्जे मराबित (मर्तबों को लिहाज) का खयाल रखना चाहिए। यानी साएल जितना सिफ़ात के एतेबार से काबिले इज्जत हो और इल्मो मारिफ़त में बलन्द दर्जा रखता हो उतना उसके साथ सुलूक बेहतर किया जाये। इसका बेहतरीन सुबूत यह वाकेया है कि एक आराबी (देहाती) इमाम हुसैन[अ०स०] की खिदमत में हाजिर हुआ और तस्लीम बजा लाया और अर्जे हाल करते हुए कहने लगा कि मैं ने आपके जद्दे बुजुर्गवार को यह फरमाते हुए सुना है कि जब कोई हाजत पेश करना हो तो चार किस्म के आदमियों में से किसी एक के सामने पेश करना। या तो शरीफुन्नफ्स अरब या सखी सरदार या हामिले कुरआन या वजीह व शकील (खुबसूरत) इन्सान। आप में यह चारों सिफतें जमा हैं। अरब कौम, उसको तो शरफ आपके जद्दे बुजुर्गवार से हासिल हुआ। और सखावत, यह आपका शेवा और खसलत है। और कुरआन वह आप ही के घर में नाजिल हुआ और खूबसूरती उसके मुतअल्लिक मैं ने आपके जद्दे बुजुर्गवार को फरमाते हुए सुना कि अगर मुझे देखना हो तो हसन[अ०स०] व हुसैन[अ०स०] को देख लेना। यह पुर मारिफत तकरीर सुनकर हजरत ने फरमाया कि तुम्हारी हाजत

[1] इरशाद पेज/291

क्या है? उसने अपनी हाजत जमीन पर लिख दी आपने फ़रमाया कि मैंने अपने वालिद बुज़ुर्गवार का यह कौल सुना है कि हर इन्सान की कद्र व मन्जिलत वही है कि जो उसमें हुनर मौजूद है, और मैंने अपने जद्दे बुज़ुर्गवार का इरशाद यह सुना है कि एहसान बकद्रे मारिफत होना चाहिए। इसलिए मैं तुम से तीन सवाल दरयाफ्त करता हूँ अगर तुमने एक सवाल का जवाब ठीक दिया तो तुमको मै एक तिहाई माल दे दूँगा अगर दो जवाब तुम ने ठीक दिये तो दो तिहाई माल दूँगा और अगर तुमने तीनों सवालो का जवाब दुरूस्त दिया तो जो कुछ मेरे पास मौजूद है वह सब मैं तुम्हें दे दूँगा। मेरे पास माले दुनिया से इस वक्त यह एक थैली है, जरे नक्द (नक्दी पैसा) की जो इराक से भेजी गई है। उसने कहा। पूछिये? अल्लाह मेरी मदद करेगा आपने फ़रमाया। बताओ कौन सा अमल सबसे बेहतर है? उसने कहा अल्लाह पर ईमान लाना। पूछा कि अच्छा बन्दे की निजात का जरिया हलाकत से क्या है? उसने कहा अल्लाह पर भरोसा रखना हजरत ने फरमाया। इन्सान की जीनत क्या है? उसने कहा इल्म जिसके साथ अक्ल मौजूद हो। फरमाया अगर यह न हो? उसने कहा फिर माल हो जिसके साथ सखावत हो। फरमाया। अगर यह भी न हो? उसने कहा फिर फ़कीरी हो जिसके साथ सब्र मौजूद हो। हजरत ने फरमाया और अगर यह भी न हो तो? उसने कहा तो फिर एक बिजली गिरे और उस शख़्स को जला कर खाकिस्तर कर दे। हजरत हँसने लगे और वह पूरी थैली उसकी जानिब फेक दी।[1]

यह तर्जे अमल गुरबा और मसाकीन का मालूमात मजहबी हासिल करने का बेहतरीन मुहर्रिक (तरीका) था और इस ज़रिये से अवाम में उलूम व मआरिफ की इशाअत होती थी यह इस लिए था कि आप खुद अपने तमाम सिफाते जलीला के साथ साथ आलिम थे ऐसे जिनसे लोग मजहबी मसाएल और अहम मुशकिलात मे रूजू करते थे। अरब की मसल है। الناس اعداء لما جهلوا "लोग दुश्मन होते हैं उस चीज के जिसको वह न जानते हों।" रोऊसा (अमीर) और हुक्काम जो खुद इल्मो हुनर से बेबहरा हुआ करते हैं। अपनी इस कमजोरी पर पर्दा डालने के लिए आम अफराद की इल्मी सतह को पस्त रखने की फिक्र करते और लोगो की नजर मे इल्मो हुनर की कद्रो कीमत घटाने की कोशिश करते हैं लेकिन इस्लाम के हकीकी रहनुमा हमेशा

---

[1] तफसीरे कबीर पेज/272 गरायबुल कुरआन जि/1 पेज/136

मुसलमानों की इल्मी सतह के बलन्द करने में मुनहमिक (लगे) रहे। हजरत अली[अ०स०] की ज़िन्दगी इसी में गुजरी और आपके फरजन्द इसी रास्ते पर क़ायम रहे।

अलावा उन ख़ुतबो और अशआर के जो आपकी जबानी मन्कूल (नक्ल) हैं और जो इल्मे इलाहियात (ख़ुदा का इल्म) और मआरिफे हक्कहू (अल्लाह की मारिफत) के खजानादार हैं या उन दुआओं और मुनाजातो के जो आपकी जबान से निकली हैं ओर जिन में से बाज का मजमूआ "सहीफ–ए हुसैनिया" के नाम से इस वक्त भी मौजूद है और खालिक व मख़लूक के बाहमी रब्त की बे नजीर आइनादार हैं अगर जवामे हदीस (हदीसों के जखीरों) की सैर की जाये तो उन में मसाएल फकीह के बारे में कसीर अहादीस आपसे मन्कूल मिलेगी।

उस वक्त भी जब आप अहले हरम को लेकर मक्क–ए–मुअज्जिमा से बरामद हुए हैं और सफरे ग़ुरबत इख़्तियार किया है तो रास्ते में फरजदक बिन गालिब शायर से मुलाकात हुई और उसने कुछ मसाएल आप से नज़्र और मनासिके हज के मुतअल्लिक दरयाफ्त किये और उनका जवाब हासिल किया।[1]

इसी का नतीजा है कि करबला में आपके असहाब की फेहरिस्त पर नजर डालने से मालूम होता है कि वह अवाम नही थे बल्कि उस वक्त की इस्लामी जमाअत की पूरी रूह और इल्मो अमल का मुकम्मल खजाना था जो हुसैन[अ०स०] पर निसार हो रहा था। उन में हाफिज़ाने कुरआन भी थे आलिमाने किताब भी और हामिलाने हदीस (हदीसो के जानकार) भी उनके जज्ब और कशिश का मरकज कोई हो ही नही सकता सिवा ऐसी जात के जो खुद इन सिफात में बलन्द तर जज्बा रखती हो बल्कि जो आपके ख़ानदानी मुख़ालिफ थे वह भी आपकी बुलन्दी–ए मर्तबा और बरतरी–ए–सिफात के क़ायल थे। चुनानचे एक मर्तबा मस्जिदे नबवी मे एक मजमा था जिसमें अबू सईद खदरी, और अब्दुल्लाह बिन अम्र बिन आस भी मौजूद थे उधर से हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] का गुजर हुआ और आप ने तालीमे इस्लाम के मुताबिक़ मजमे को सलाम किया। सब ने जवाब दिया उस वक्त अम्र बिन आस के फरजन्द अब्दुल्लाह चुप रहे। जब सब जवाब दे कर खामोश हो गए तो उन्होंने आवाज बलन्द की और कहा व अलैकस्सलामो व रहमतुल्लाहे व बरकातुहू फिर मजमे की तरफ मुख़ातब हो कर कहा क्या मैं आप लोगो को बतलाऊँ कि अहले जमीन में

---

[1] इरशाद पेज / 228

सबसे ज्यादा महबूब शख़्स अहले आसमान का कौन है? सबने कहा जरूर बतलाइये। उन्होंने कहा वह यही रास्ते से गुजरने वाला है। उन्होंने मुझसे जंग सिफ्फ़ीन के बाद से अब तक बात नहीं की और अगर यह मुझसे किसी तरह राजी हो जायें तो यह मेरे लिये सुर्ख रंग के ऊँटो से ज्यादा महबूब चीज़ होगी [1]

यह अब्दुल्लाह खानदाने बनू उमैया में जोहदो तक्वा और इबादत व रियाजत में मशहूर थे मगर जंग सिफ्फ़ीन में अपने बाप अम्र बिन आस के साथ हजरत अली[अ०स०] से जंग करने के लिए आ गए थे। उस वक्त से हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने उनसे बात करना छोड़ दी थी, मगर इसके बावजूद उनके दिल पर हजरत के बलन्द औसाफ का इस दर्जा असर क़ायम था।

रास्तबाजी (सच्चाई) में दाखिल है अखलाकी जुरअत हुसैन[अ०स०] में अखलाकी जुरअत ऐसी थी कि बचपने में खलीफ़ ए दोम को मिम्बर पर टोक दिया और फरमाया "उन्जिल अन मजलिसे अबी।" उतर पड़ो मेरे बाप की जगह से।' हजरत उमर ने कहा सच कहते हो साहबजादे, तुम्हारे ही बाप का मिम्बर है खुदा की क़सम मेरे बाप का मिम्बर नहीं।

रास्त बाजी व रास्त किरदारी का खुला हुआ नमूना यह था कि आपने मारक ए–करबला के पहले मक्का से रवान्गी के बाद अपनी जमाअत की तादाद को क़ायम रखने के लिए कभी आइन्दा के खतरात को पोशीदा नहीं किया। बल्कि बराबर सूरते हाल से मुत्तेला करते रहे और बार बार आइन्दा के खतरात को यकीनी बना कर साथ वालों की हिफजते जान व माल के लिए अलग हो जाने का मशवरा दिया और यह तरीका उस वक्त तक जारी रखा जब तक कि किसी एक शखस के भी गलत फहमी में मुब्तिला होने का इम्कान समझा जा सकता था।

आप अम्न पसन्द भी ऐसे थे कि आखिर वक्त तक दुश्मन से सुलह करने की खुद अपनी तरफ से कोशिश जारी रखी मगर उसके साथ अजमो इस्तिकलाल और हिम्मत ऐसी रखते थे कि जान दे दी मगर जो रास्ता पहले दिन सही समझ कर इख़्तियार कर लिया था उससे जर्रा भर भी न हटे

उन्होंने बहैसियत एक फरज़न्द के बाप की इताअत की और छोटे भाई हो कर भाई की इताअत की। इस तरह कि उनकी वफादाराना इताअत में कभी कमजोरी नज़र न आई और फिर बहैसियत एक सरदार के करबला के वाकेये

[1] असदुल गाबा जि/3, पेज/235

में एक पूरी जमाअत की कयादत की इस तरह कि उनके नज़्मे कयादत की मिसाल मुशकिल से मिलती है। इसके साथ आपकी निगाह ने मरदुम शनासी (इन्सानो की पहचान) का वह हैरत अगेज़ नमूना पेश किया कि इतने सख्त और दुशवार गुजार रास्ते के लिए जिन साथियों को मुन्तखब करके अपने साथ ले लिया था उनमें से एक ने भी वफ़ादारी और जान निसारी में कमी न की। और सब यक (एक) जान व यक (एक) दिल हो कर मक्सदे हक के लिए कोशाँ रहे। यहाँ तक कि जानें कुर्बान कर दी।

इमाम हुसैन अ०स० के मकूलात

बलन्द मर्तबा अफराद में भी बेश्तर वही अफराद होते हैं जिनके अकवाल को उनके आमाल पर नुमायाँ फ़ौक़ियत हासिल होती है मगर हुसैन अ०स० का किरदार बजाते खुद इतना बलन्द था कि उसने दुनिया की जबान और उसके क़लम की तमाम तर तवज्जाह को अपने लिए मख़सूस कर लिया लिहाजा आपके मकूलात (अकवाल) को यकजा करने की ज्यादा कोशिश नहीं की गई। फिर भी आपके मकूलात मुतफ़र्रिक़ तौर से मुखतलिफ किताबों में कुछ न कुछ मिल ही जाते हैं और वह बड़ी हद तक आपकी जिन्दगी के मुख़तलिफ़ रुख़ों की तरजुमानी करते नजर आते हैं। उनमें नज्म भी हैं और नस्र भी।

चुनानचे आपने फरमाया है कि

1 من جادسادوس بخل دل "जिसने दिया लिया उसने सरदारी पाई और जिसने कन्जूसी की उसने ज़िल्लत उठाई।"

2. احوداباس من اعطی من لایرجوه "सखी वही है जिसने उसको भी दिया जो उससे कोई तवक्को वाबस्ता नहीं रख सकता हो।"

3. من انعم الله منكم فليتعم على غيره ـ "जिसको खुदा ने दिया है वह औरों को भी दे।"

4. حوائج اباس ابيكم من نعم الله عليكم- 'अहले हाजत का तुम्हारे पास आना भी तुम पर ख़ुदा की नेअ्मतों में से है।

5.

غن عن المحلوق بالخالق	نقن عن الكاذب والصادق
واسترزق الرحمٰن من فضله	فليس غيرالله من رازق
من ظنّ ان اىاس يغنونهٗ	فليس بالرحمن بالواثق
وظن انّ الناس يكنونه	ذلّت به النعلان من حالق

"खुदा से लौ लगा कर मखलूक से बेनियाज हो जाओ तो फिर किसी झूटे सच्चे की तुम्हे परवा न रहेगी मॉंगना हो तो खुदा ही से मॉंगो। गैर खुदा रोटी देने वाला नही है। जिसका खयाल हो कि लोग उसको गनी कर देगे उसको खुदा पर एतेमाद नही और जो यह समझता हो कि लोग उसके लिए काफी हैं वह यकीनन बडी पस्ती मे गिरने वाला है।"

6.

كلّما زيد صاحب المال مالا | زيد في همّه وفي الاشغال

"इधर तो माल वालों के माल बढते हैं और उधर उनके अफकार व अशगाल (मसरूफियत) में इजाफा होता है।"

7 من وصل الى الله انقطع عن غيره "जो खुदा से मुत्तसिल (करीब) हुआ उसके गैर से जुदा हो गया।"

इब्ने कसीर ने "बिदायतुन निहाया" में इस्हाक़ बिन इब्राहीम की रिवायत से नक्ल किया है कि इमाम हुसैन[अ०स०] ने जन्नतुल बकी में कुबूरे शोहदा की जियारत की और हस्बे जैल अशआर पढे

ناديت سكان القبور فاسكتو | فاجابني عن صمتهم ترب الهشا
قالت اتدري ماصنعت بساكني | مزقت لحمهم وخرّقت الكساء
وحشوت اعينهم تراباً بعدما | كانت تأذى باليسير من القذا
اماالعظام فانني مزقتها | حتى تباينت المفاصل والشوى
قطعت ذا من ذا ومن هذا كذا | فتركتها مما يطول بها البلي

"मैं ने क़ब्रों के रहने वालों को आवाज दी तो वह ख़ामोश रहे मगर मुझे जवाब दिया उनकी खामोशी पर खाके मरक़द ने कि क्या तुम्हें मालूम है कि मैंने अपने रहने वालों के साथ क्या सूलूक किया है? मैंने उनके गोश्त को टुकडे टुकडे और खाल को पारा पारा कर दिया है और उनकी आँखों के अन्दर मिट्टी भर दी है हालाँकि इसके पहले ज़रा सा तिन्का पड़ जाता था उनकी आँख में तो चैन न आता था। रह गई हड्डियाँ वह जुदा जुदा हो गईं यहाँ तक कि जोड़ बन्द साफ जाहिर हैं। मैं ने इसको उससे और उसको इससे अलग कर दिया है। यहाँ तक कि बोसीदगी व कोहनगी (पुराने पन) के आसार उनसे हुवेदा (जाहिर) हो गए हैं।"

ذهب الذين احبهم وبقيت فيمن لا احبه

فيمن راه يسبني ظهرالمغيب ولا اسبه

يبغي فسادي ما استطاع وامره مما اربه

حنقا يدب الی الضرا و ذاک مما لا ادبه

ویری ذباب الشر من حولی یطن ولا یذبه

واذا خبا وغرالصدر فلا یزال به یشبه

فلا یعیج بعقله افلا یثوب الیه لبه

افلا یری ان فعله مما یسوراليه غبه

حسبي بربي کافیا ماالختشي والبغي حسبه

وقل من یبغي علیه فما کفاه الله ربه

"गुजर गए वह अफ़राद जिनको मैं महबूब रखता था और अब मैं रह गया हूँ ऐसे लोगों मे जो मुझे किसी तरह पसन्द नहीं। उनका किरदार यह है कि मैं उन्हें ज़रा भी बुरा भला नहीं कहता। मगर वह पीठ पीछे मुझे गालियाँ देते रहते हैं और जहाँ तक मुमकिन होता है वह मेरे नुकसान के दरपय रहते हैं दराँहालेकि मै उनको फायदा पहुँचाता रहता हूँ वह गिर्दो पेश शरारतों के मगस (शहद की मक्खी) उड़ते देखते हैं मगर इतना नहीं करते कि उन्हे हटा दें बल्कि जब दिलों में अदावत की आग बुझने लगी है तो वह उसे और हवा दे देते हैं। क्या यह मुमकिन नहीं कि वह अपनी समझ से काम लें? क्या ऐसा न होगा कि उनकी तरफ अक्ल वापस आये? क्या वह यह नहीं समझते कि उनका यह तर्जे अमल नतीजतन खुद उन्हीं के लिए तबाह कुन साबित होगा। मेरे लिये मेरा परवादिगार काफी है जिसके होते हुए मुझको कोई अन्देशा नहीं। नामुमकिन है कि किसी पर जुल्मो सितम किया जाये और खुदा उसकी मदद न करे।"

इब्ने सबाग मालकी ने 'फुसूले मुहिम्मा' में अली बिन ईसा अरबली ने 'कश्फुल गुम्मा' में इब्ने ख़िशाब की रिवायत से हस्बेजैल अशआर नक्ल किये हैं

اذ ماعضک الدهر فلا تجنح لی خلق

ولا تسأل سوی الله تعالیٰ قسم الرزق

فلوعشت وطوّفت | من الغرب الى الشرق
لما صادفت من يقدر | ان يسعد ويشقى

'जब जमाने के दाँत तुम्हें जख्मी करें तो खल्के खुदा की तरफ कभी न झुको और सिवाये खुदाये बरतर के जो रिज़्क़ का तक्सीम करने वाला है किसी से सवाल न करो इसलिए कि मग़रिब से मशरिक़ तक चक्कर लगाने के बाद भी तुम को कोई शख्स ऐसा न मिलगा जो मुक़द्दर को बना बिगाड सकता हो।'

وان تكن الدنيا تعد نفيسة | فدار ثواب الله اعلى وانبل
وان تكن الابدان للموت انشأت | فقتل امرئ بالسيف في الله افضل
وان تكن الارزاق قسما مقدرا | فقلة حرص المرء في الرزق اجمل
وان تكن الاموال للترك جمعها | فما بال متروك به المرء يبخل

'अगर यह फ़र्ज भी कर लिया जाये कि दुनिया कोई अच्छी जगह है तब भी खुदा के अज्रो सवाब का महल ज्यादा बलन्द व बरतर है और जबकि यह सही है कि अजसाम (जिसमो) पर मौत का तारी होना लाज़िम है तो इन्सान का राहे खुदा में तहेतग़ कर दिया जाना ज्यादा बेहतर है और जब कि यह हकीकत है कि रिज्क़ में हर एक का हिस्सा मुऐय्यन है तो उसके बारे मे हवस से काम न लेना ही इन्सान के लिए मुनासिब है। और जब कि यह यकीनी है कि अमवाल जमा होते हैं बाद में छोड़ जाने के लिए तो क्या यह हिमाकत (बेवकूफी) न होगी कि ऐसी चीज के बारे मे इन्सान बुख्ल से काम ले ''

एक शख्स ने हजरत को लिखा कि मुझे दो जुमलों में मौएजा (नसीहत) फरमाइये। आपने तहरीर फ़रमाया'

من حاول امرا بمعصية الله كان افوت لما يرجو و اسرع لمجئ ما يحذر

'जो शख्स अल्लाह की नाफरमानी करके किसी मक्सद को हासिल करना चाहेगा अपने तवक्क़ुआत(उम्मीदों) में नाकाम और खतरात से ज्यादा नजदीक साबित होगा।''

मुनदर्जा बाला (ऊपर लिखे हुए) मक़ालात और अशआर को नजरे गाएर (तवज्जो) से देखने पर हस्बेजैल तालीमात उनमे नुमायाँ तौर पर मौजूद पाये जाते हैं।

1.ज़ाते इलाही पर तवक्कुल यानी हमको किसी नफे की उम्मीद किसी जरर (नुकसान) से तहफ्फुज की तवक्को और किसी ख्वाहिश की तकमील का आसरा अल्लाह के गैर से न रखना चाहिये। यह वह दुशवार मन्जिल है कि कहने को जो भी चाहे कह दे लेकिन हकीक़तन अमली हैसियत से इस राह में जो भी कदम रखे वह मासिवल्लाह (सिवा अल्लाह से) बे नियाजा हो जाये

इन्सान सच्चाई के रास्ते से अलग होता है ज्यादा तर तमा (लालच) माल व जर की बदौलत या फिर खतर ए इमरोज (आज के दिन) और और अन्देश ए फ़र्दा (कल) के सबब से मगर जब यह खयाल पूरे तौर पर किसी के दिल व दिमाग पर छा जाये कि खुदा की मशीयत के खिलाफ न कोई नफा पहुँचा सकता है न नुकसान, तो फिर दुनिया की कोई ताकत उसे राहे हक से मुन्हरिफ नहीं कर सकती।

मलहूज (याद) रहे कि अल्लाह अपने मानने वालो के सही अकीदे के मुताबिक़ वह पाक व मुनज्जा जात है जो सिर्फ़ नेकी को पसन्द करती है और बुराई से नफ़रत रखती है। लिहाजा जब कोई ऐसी बुजर्ग व बरतर जात को अपने तफक्कुरात (फिक्र) व एहसासात का मरकज बना लेगा तो उसके लिए नामुमकिन है कि भूल कर भी वह बुराई या जुल्म के करीब जाये। चुनाँनचे इमाम हुसैन[अ०स०] की जगह अगर कोई ऐसा शख्स होता जो दुनियवी नफा और नुकसान की परवा करता या किसी माद्दी ताक़त (दुनियावी) को किब्ला–ए–हाजात समझता या उसके इकतेदार से मरऊब किया जा सकता तो बिलफ़र्ज वह यजीद की बैयत शुरू में न भी करता तो उस वक्त तो जरूर कर लेता कि जब हुकूमते बातिल का हजारों का लश्कर उसके खिलाफ सफ बस्ता होता और उनके जुल्मो तशद्दुद की बिजलियाँ आँखो के सामने कौंदने लगतीं मगर हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] आप तो दुनिया की किसी ताकत और नेअ्मत को कुछ समझते ही न थे इसलिए राहे हक़ से आपको कोई शै हटा ही नहीं सकती थी

2. खुल्के खुदा की बहरहाल बही ख्वाही(बेहतरी) और फायदा रसानी की फिक्र होना जिसका बलन्द मेयार यह हो कि उस बारे में अपने और पराये, दोस्त और दुश्मन की तफरीक़ को भी काम मे न लाया जाये

यह बात उस सूरत में पैदा ही नहीं हो सकती कि जब हमारे तअल्लुकात दूसरों के साथ माददी बुनियादो पर कायम हो इसलिए कि ऐसी सूरत मे तबई मैलानात (हम मिजाज) व रूजहानात की बिना पर नज़दीक व दूर और

मुवाफिक व मुख़ालिफ के इम्तियाजात का बरूए कार (सामने) आना लाजमी है। अलबत्ता यह बात उस वक्त हो सकती है कि जब हमारा तअल्लुक दूसरों के साथ इस मुशतरक (एक जैसे) रिश्ते की बिना पर हो जो हम सबको एक खालिक के साथ वाबस्ता कर देता है और जिसके लिहाज से तमाम अफरादे इन्सानी एक सिलसिल–ए–वहदत मे मुन्सलिक हो जाते हैं। इस सूरत मे हम इस काबिल हो सकेंगे कि सही माना में गरज़े खिल्कत को समझते हुए उमूमी तौर पर तमाम खल्क (अल्लाह के बन्दों) को अपनी जात से ज्यादा से ज्यादा फायदा पहुँचाने की कोशिश करें और उसको अपने ऊपर खुदा का एक एहसान समझें कि उसने हमारे जरिये से दूसरों को फायदा पहुँचाया इसका नतीजा यह होगा कि ऐसे लोगों पर भी एहसान किया जायेगा जो आम आदात व ख़साएल की बिना पर उससे तवक्को न रखते हो। मसलन एक दुश्मन अपने दुश्मन से कब उसकी उम्मीद कर सकता है कि वह उसके साथ कोई अच्छा सुलूक करेगा मगर बलन्द मेयार फैय्याजी का यही है कि उसको भी अपने इनआम से महरूम न किया जाये।

3. माद्दी ज़िन्दगी के तारीक पहलूओं पर तवज्जोह: उनका लिहाज रखने से तमाम लजाएजे (लज्जते) दुनिया हमारी नजर में हेच (कम) हो जायेंगे और हम अल्लाह के साथ वाबस्तगी पैदा करके नेकी के रास्ते पर कायम रहने ही को अपनी बेहतरीन कामयाबी समझने लगेंगे।

मजमूई हैसियत से मजकूर–ए–बाला तमाम तालीमात मे वजन पैदा हुआ है। हुसैन[अ०स०] के अमल और बलन्दी–ए–किरदार से जिसने उनमे से हर हर मकूला (कौल) और तालीम को चलती फिरती तस्वीर की शक्ल में आँखो के सामने पेश कर दिया। इस तरह कि यह मकूलात सिर्फ आप के खयालात ही के हामिल नहीं रहे कि एक सच्चे अमली इन्सान की तारीखे जिन्दगी बन गए

इमाम हुसैन[अ०स०] के इस तरह के अकवाल आपकी जिन्दगी के किसी हगामी या इत्तफाकी मौके से मुतअल्लिक़ न थ बल्की आपके रोज़मर्रा के निजामे जिन्दगी का एक जुज थे। चुनाँनचे रोज़ाना की नमाजों में जो मुखतलिफ कुनूत आप पढा करते थे वह भी इसी तरह के मजामीन पर मुशतमिल होते थे उनमें से एक कुनूत के अलफाज दर्जजैल हैं

اللهم منک البدء ولک المشیئة ولک الحول ولک القوة . اللهم وانی مع ذلک کله عائذ بک لائذ بحولک وقوتک راض بحکمک الذی سبق الیّ فی علمک جار بحیث جریتنی قاصد ما اممتنی غیر ضنین بنفسی فیما یرضیک عنّی اذ به قد رضیتنی ولا قاصر بجهدی

عما اليه ندبتني مسارع بما عرفتني شارع فيما اشرعتني مستبصر فيما بصرتني مراع ما ارعيتني فلا تخلني من رعايتك ولا تخرجني من عنايتك لاتقعدني عن حولك ولا تخرجني من مقصد انال به ارادتك واجعل على البصيرة مدرجتي وعلى الهداية محجتي وعلى الرشاد مسلكي حتى تنيلني امنيتي وتحلني على

مابه اردتني وله خلقتني واليه اويت بي۔

"खुदा बन्दा तेरी ही तरफ से इनआम व एहसान की इब्तेदा है और जो कुछ मशीयत और ताकत व कुव्वत है वह सिर्फ तेरी है। इस सब के होते हुए मैं तेरी ही तरफ़ पनाह लेता हूँ और तेरी ही कुव्वत व ताकत का सहारा ढूँढता हूँ और तेरे उस फैसले पर राज़ी हूँ जो मेरे बारे मे तू पहले ही कर चुका है। मैं चलने वाला हूँ उसी रास्ते पर जिस पर कि मुझे तूने चलाया है और कस्द रखता हूँ वही जो तेरी मर्ज़ी के मुताबिक हो और उन उमूर के मुतअल्लिक जो तेरी रजा मन्दी का बाइस हो सकते है अपने नफ्स की जरा भी रिआयत नहीं करता न मैं अपनी तरफ़ से तेरे अहकाम की तामील में जिद्दो जोहद (कोशिश) के सिलसिले में कोई कोताही होने देता हूँ, बल्कि तेजी से चलता हूँ उसी रास्ते पर जिसकी तूने मुझे हिदायत की, और ओहदा बरआ (जिम्मेदारी से सुबुकदोश) होता हूँ मैं उन फराएज से जिनका तूने मुझे मुहाफिज करार दिया है। अब तू भी मुझे अपनी हिमायत में रख और अपनी नजरे रहमत से मुझे अलाहिदा (अलग) न कर और अपनी ताकत की इमदाद से मुझे महरूम न कर और उस मकसद से अलग न कर जिसके मातहत मैं तेरी मशीयत को पूरा करना चाहता हूँ, और बसीरत पर करार दे मेरी रफ्तार को और हिदायत पर मेरे मसलक को और सही मन्जिल की सिम्त मेरी रास्ते को, यहाँ तक कि मुझे पहुँचा तू मेरी आरजू तक और मुझे उतार तू उसी मन्जिल पर जिसका तूने मेरे लिए इरादा किया और जिसके लिए तूने मुझे पैदा किया और जिसकी तरफ तूने मुझे मुतवज्जेह किया।"[1]

क्या इस कुनूत के अलफाज जाहिर बजाहिर आपके किसी अज्मे मुस्तकिल (ठोस इरादे) की तरजुमानी नहीं करते? क्या इन से मुजमल तौर पर यह वाजेह नहीं होता कि आप बस किसी खास मकसद की खातिर अपनी जिन्दगी को वक्फ किये हुए थे और यह कि आपकी जिन्दगी का हर लम्हा ख़ालिक़ के इशारों का ताबे था

---

[1] महजुद दवात पंज/70–71

सन 60 हिजरी तक यह अल्फाज कौल थे और सन 61 हिजरी मे वह अमल बनकर आँखों के सामने आगए। यह दुआ भी हजरत इमाम हुसैन अ०स० की है जो आप कुनूत में पढ़ते थे

اللّٰھم من اٰوی الی مـاوی فانت مـاوی ومن لجا الی ملجاً فانت ملجای واحرسنی

فی بلوی من فتن الامتحان ولمة الشیطان بعظمتک لتی لا یشوبھا ولع نفس بتفتین

ولا وارد طیف تفضین ولا یلم بھا فرح حتی تقلبنی الیک بردتک غیر ظنین ولا مظنون

ولا مرب ولا مرتاب

"ख़ुदा वन्दा तेरे सिवा किसी की तरफ अगर कोई पनाह लेता है तो लिया करे। मेरा पनाह देने वाला तो सिर्फ तू है तू अपनी इस अजमत के साथ जिस पर न किसी की नफसानी ख्वाहिश असर अन्दाज हो सकती है और न बद्‌जनी (दूरी) और न उस में बदगुमानी और किसी वक़्ती खुश मिजाजी का दखल है। आजमाइश के मौके पर मुझे महफूज रख, फितने में मुब्तिला होने और शैतानी जमाअत से मरऊब (झूकाओ) हो जाने से। यहाँ तक कि तेरी तरफ मेरी बाजगश्त (वापसी) हो तेरे मन्शा के मुताबिक। इस तरह कि न मेरे दिल में बुरे खयालात हों और न दूसरे मेरी निसबत (मेरे बारे में) बुरे ख़यालात कायम कर सकें न दूसरों के मुतअल्लिक़ मैं किसी शक मे मुब्तिला हूँ और ने मेरे मुतल्लिक़ दूसरों को शक हो सके "[1]

आप सुबह व शाम दोनों वक्त हस्बेजैल दुआ पढ़ा करते थे

اللھم انی اسلمت نفسی الیک ووجھت وجھی الیک وفوضت امری الیک انھم انک تکفینی من کل

احد ولا یکفینی منک احد-

"ख़ुदा वन्दा मैं तेरे सिपुर्द किये हुए हूँ अपने नफ्स को और तेरी तरफ मोडे हुए हूँ अपने रूख को और दिये हुए हूँ अपने को तेरे हाथ मे ख़ुदा वन्दा तू हर दूसरे शख्स के शर से महफूज़ रख सकता है मुझको लेकिन तेरा गैर मुझको तेरे कहर से नहीं बचा सकता।[2]

भला जिस शख़्स का मुस्तकिल अकीदा यह हो और जिसकी जिन्दगी का नस्बुल ऐन (तरीका) यह हो जिसने रात दिन इसी को सोचा हो और उसी को अपनी जबान से दोहराता जा रहा हो वह कहीं मुमकिन है कि किसी तागूती

---

[1]नहजुद दावात पेज 73

[2]महजुद दावात पेज 241

(बातिल) ताक़त से दब जाये और ख़ुदाए क़ादिर व तवाना को भूल कर दुनयवी जबरूत के सामने सरे तस्लीम ख़म कर दे। यज़ीद हुसैन[अ०स०] से इसी का तो तालिब था कि "आप ख़ुदा के रास्ते से हट कर शैतान के रास्ते पर उसके साथ हो जाये।" मगर हुसैन ने जो अपने जान व रूह को कुल्लियतन ख़ुदा के हवाले कर चुके थे उसको ठुकरा दिया।

इसलिए कि आपको यक़ीने कामिल था कि यज़ीद मेरा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। जब तलवारें आपके जिस्मे अतहर के टुकड़े टुकड़े कर रही थीं उस वक़्त भी आप अपने इसी यक़ीन पर क़ायम थे। चुनाँनचे जब मारेक–ए–करबला के नताएज दुनिया की आँखो के सामने आ गए तो आलमे ज़ाहिर में सबको उसका मुशाहिदा हो गया कि हुसैन[अ०स०] का ख़याल हर्फ़ बहर्फ़ सही था। इसलिए कि कहने को खून बहा हुसैन[अ०स०] और अन्सारे हुसैन[अ०स०] की गर्दनों से मगर अस्ल शहरग कता हुई यज़ीद के एक्तिदार की। हुसैन[अ०स०] जिन्द–ए–जावेद हो गए और यज़ीद सही माना में हलाक व फ़ना हुआ जो नतीजा था महज़ हुसैन[अ०स०] की उस क़ुव्वते इरादी का जिसका मुजाहरा आपके अक़वाल बराबर करते रहते थे

लज़्ज़ते हयाते दुनिया से सरशार तुनक ज़रफ़ों (कम ज़रफ़ों) के नज़दीक़ अपने मुख़ालिफ़ को धमकाने का सबसे बड़ा ज़रिया मौत का तसव्वुर पैदा कर देना है मगर वह अफ़राद जो राहे हक़ मे मौत आने को मआले जिन्दगी समझते हों इस धमकाने से कब मुतअस्सिर हो सकते हैं ?

हुसैन[अ०स०] का फ़लसफ़ ए ज़िन्दगी वही था जिसकी इमाम हुसैन[अ०स०] को आपके वालिदे बुज़ुर्गवार हज़रत अली इब्ने अबी तालिब[अ०स०] की तरफ़ से मख़सूस वसीयत हुई थी कि اصبرعلى الحق وان كان مرا सच्चाई कितनी ही तल्ख़ (कड़वा) क्यों न हो उस पर कायम रहो और हर मुशकिल का मुकाबला करो।" यही वसीयत हुसैन[अ०स०] ने अपने फरज़न्द जैनुल आबेदीन[अ०स०] को की और उसी पर वह ख़ुद मुकम्मल तौर से कारबन्द रहे।[1]

---

[1] काफी जि. 1 पेज 42

चौदहवाँ बाब

यज़ीद का बैयत पर इसरार और हुसैन[अ०स०] का इन्कार

तख्ते खिलाफ़त पर बैठने के बाद यजीद के लिए ऐशो आराम की कमी न थी। दुनिया तमाम जेबो जीनत (खूबसूरती) के साथ उसके सामने मौजूद थी और ताज व तख्त माल व दौलत हश्मो खेदम (नौकर चाकर) और ऐश परस्ती व शहवत रानी (बदकारी) के तमाम असबाब पूरी फरावानी के साथ मुहैय्या थे। लेकिन एक खयाल था जो उसके दिल व दिमाग को परेशान किये हुए था और उसकी नजरों में उस तमाम जाहो हश्म को खाक सियाह बनाए हुए था और वह उन चन्द आदमियों का बैयत से इन्कार था कि जिन में अव्वल दर्जा की शखसियत हुसैन इब्ने अली[अ०स०] की थी यजीद के नफसियात उसके किसी तरह मुतहम्मिल (बरदाश्त) हो ही नही सकते थें जवानी का नशा और फिर शराब की तरग, बे मेहनत व मशक्कत के हासिल शुदा सलतनत का गुरूर। अपने बाप की कोशिशों की कामयाबी का घमण्ड और तमाम मुल्क अरब के सरे इताअत खम हो जाने का गुर्रा (घमण्ड)। ना आजमूदा कारी (नातजरबा कारी), ना आकिबत अन्देशी (दूर अन्देशी), सियासियाते हुकूमत से नाशनासी और नज्मे सलतनत से बे खबरी। उसके बाद मरने वाले बाप का मरते मरते उसी बात को करना और नफस के आखिरी आमद व शुद (सास के आखरी लम्हों) तक उसी फ़िक्र व इज्तेराब की कशमकश में मुब्तिला रहना। यह वह बाते थीं कि जिनकी वजह से यजीद को यह कद (दुश्मनी) हो गई थी कि उन उगलियो पर गिने जाने वाले अशखास से जल्द अज जल्द बैयत हासिल कर ली जाये। कोई शक नहीं कि उन सब की और बिलखुसूस इमाम हुसैन[अ०स०] की बैयत से अलाहिदगी और खामोशी मुआविया को भी उतनी ही शाक थी जितनी यजीद को। मगर मुआविया को तशददुद के नतीजे का अन्दाजा था और यजीद को न था।यह कहा जा सकता है कि अगर मुआविया की जिन्दगी और तूलानी भी होती तो उनकी तरफ से ऐसा गैर वाके तर्जे अमल न इख्तियार किया जाता जैसा यजीद की तरफ से इख्तियार किया गया मगर वाक़ेयात यह कहने पर

मजबूर करते हैं कि मुआविया का रवैय्या यजीद के आइन्दा इक़दामात में हिम्मत इफ़ज़ाई का बाइस जरूर हुआ। मिसाल के तौर पर मुआविया का मदीना पहुंचने के वक्त हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] को इन अलफ़ाज़ से मुख़ातब करना कि "तुम एक कुर्बानी का दुम्बा हो जिसका खून जोश खा रहा है। कसम है खुदा की यह खून जरूर गिराया जायेगा।"

यज़ीद अपनी जेहनियत के मुताबिक इससे यही नतीजा निकाल सकता था कि मेरे बाप का इरादा इस दुश्मने सलतनत के साथ इस तरह का था जिसे उन्होंने कसम खा कर जाहिर किया था। और उन्हें उसकी तकमील का मौका नहीं मिला फिर *अगर पिदर नतवानद पिसर तमाम कुनद* यानी अगर बाप न कर सका तो बेटे ने कर दिया। खुसूसन जबकि आखिर वक्त तक मुआविया अपने बाद होने वाले खलीफा को इन ही चन्द मुन्केरीने बैयत (बैयत से इन्कार करने वाले) के खतरे की तरफ बार बार मुतवज्जेह भी करते रहे। यकीनी गुजिश्ता धमकी से जो खयाल यजीद के दिमाग मे पैदा हो चुका था उसके साथ यह आखिरी वक्त की वसीयते यही असर पैदा कर सकती थीं कि यजीद अपना सब से पहला नस्बुल ऐन और मक्सदे जिन्दगी अपने बाप के बाद उसी को करार दे ले कि खतरे को किसी तरह दूर किया जाये और बाप का जो मक्सद था और जिसकी तकमील का उन्हें मौका न मिल सका अब उसको पाये तकमील तक पहुँचाया जाये। चुनाँनचे यजीद ने तख़्ते सलतनत पर कदम रखते ही सबसे पहला जो सियासी काम किया वह यही कि अपने चचाजाद भाई वलीद बिन अतबा बिन अबी सुफियान को जो मरवान की माजूली[1] के बाद उस ज़माने में मदीने का हाकिम था ख़त लिखा कि खलीफ–ए–वक्त यजीद की तरफ से वलीद बिन अतबा को मालूम हो कि मुआविया एक खुदा के बन्दे थे जिन्हें उसने इज्जत दी और सलतनत अता की और अपनी नेअमतों से माला माल किया। वह जब तक मुकद्दर मे था जिन्दा रहे और जब उम्र पूरी हो गई तो दुनिया से रूख़्सत हो गए खुदा उन पर रहमत नाजिल करे कि उन्होने क़ाबिले तारीफ़ जिन्दगी गुज़ारी और परहेजगारी व नेकूकारी के साथ आलमे आखिरत को सिधारे वस्सलाम

---

[1] मरवान एक मर्तबा मुआविया की तरफ से मदीने का हाकिम आठ बरस दो महीने तक रहा और फिर रबीउल अव्वल सन 49 हिजरी में माजूल किया गया और सईद बिन आस को हाकिमे मदीना मुकर्रर किया गया (तबरी जि/ 6, पेज 138, दोबारा सन 54 हिजरी में सईद की माजूली के बाद मरवान को हाकिमे मदीना मुकर्रर किया गया (तबरी जि 6, पेज/ 164) फिर सन 57 हिजरी या एक कौल के मुताबिक सन 58 हिजरी में उसे माजूल किया गया और वलीद बिन अतबा को हाकिमे मदीना बनाया गया।(तबरी जि / 6, पेज / 172,

उस खत में तो सिर्फ मुआविया के वफात की इत्तेला है ऐसे रसमी अलफाज में जो उमूमन ख़बरे वफात के तौर पर लिखे जाया करते थे मगर उसके साथ ही एक और छोटा सा पर्चा भी वलीद को भेजा गया उसका मजमून यह था कि "हुसैन[अ०स०] और अब्दुल्लाह बिन उमर और अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर को बैयत पर सख़्ती से मजबूर करो और बगैर बैयत लिये हुए उन्हें जरा सा भी मौका न दो। वस्सलाम [1]

यह खत है कि जिसमें शुरू ही से सख्तगीरी का उन्सुर (इशारा) नुमायाँ है। और मालूम होता है कि अब सूरते हाल खामोशी के हुदूद पर बाकी नही रह सकती यानी हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] का यह लाएह ए अमल (काम का तरीका) कि हम शरीके जुल्म न हों और यजीद की खिलाफत को तस्लीम करके उसके अफआल व आमाल की जिम्मेदारी अपने ऊपर न लें लेकिन उसके साथ हम अपनी तरफ से कोई ऐसा इकदाम न करे कि मुल्क के अमनो अमान को सदमा पहुँचे और शोरिश व हँगामा बरपा हो यह मन्फ़ी तर्जे अमल (Negative Rde) निभाना नामुमकिन है। अब तो अमल की मन्जिल है। या तो मुखततिम (Final) इक़रार या मुखततिम इन्कार मगर इन्कार ऐसा जिसमें नताएज की एक दुनिया पोशीदा है

यजीद का खत वलीद को पहुँचा वलीद अबू सुफ़ियान का पोता और मुआविया का भतीजा सही लेकिन वह एक हद तक इमाम हुसैन[अ०स०] की अजमत व शखसियत से मुतअस्सिर था उसमें बजाहिर इतनी सफ्फाकी (जालिम) और सितम केशी (सितम ढाने वाला) भी न थी कि एक बेगुनाह का खून बहाते हुए उसको लज्जत महसूस हो। यजीद के फ़रमाने शाही ने उसके बातनी जज्बात में एक तलातुम (हलचल) पैदा कर दिया वह इस शिश व पन्ज (कशमकश) मे पड गया कि यजीद के इस हुक्म को किस तरह अन्जाम दिया जाये लिहाजा उसने मरवान बिन हेकम से जो उस वक्त मदीने में मौजूद था मशवरा किया हालाँकि इससे पहले वलीद के मदीने की हुकूमत पर आने के वक्त से उसमे और मरवान में इस हद तक कशीदगी हो गई थी कि मरवान ने वलीद के यहाँ की आमदो रफ्त (आना जाना) तर्क कर दी मगर इस वक्त वलीद को जरूरत यही मालूम हुई कि मरवान को मशवरा में जरूर शरीक करे शायद इसी लिए कि कही जो तर्जे अमल वह इख्तियार करना चाहता है अमवी सियासत के खिलाफ न हो और मरवान उसके खिलाफ जासूसी या चुगलखोरी

[1] तबरी जि / 6, पेज / 188

का काम अन्जाम न दे। मरवान ने जो रसूल अल्लाह[स०अ०] के जमाने ही में ऐसी शरारतें कर चुका था कि रसूल अल्लाह[स०अ०] ने उसको और उसके बाप को मदीने से बाहर निकाल दिया था कहा कि अब्दुल्लाह बिन उमर और अब्दुर्रहमान बिन अबी बकर की तुम फिक्र न करो। वह तो तालिबे खिलाफ़त होंगे नहीं। हाँ हुसैन बिन अली[अ०स०] और अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर को पाबन्द बनाना ज़रूरी है। लिहाज़ा तुम अभी उन लोगों को बुलवा भेजो और वफ़ाते मुआविया की खबर फैलने के कब्ल ही उनसे बैयते यजीद का मुतालिबा करो और अगर वह बैयत न करे तो कत्ल कर दो। इस लिए कि अगर उन्हें मुआविया के इन्तेकाल की खबर हो गई फिर एक एक तरफ खड़ा हो जायेगा और एलानिया मुखालिफत करना और खुद अपनी तरफ लोगों को दावत देना शुरू कर देगा।[1]

वलीद महसूस करता था कि इस पूरे मशवरे पर वह अमल नहीं कर सकता, ताहम उसने उसी वक्त अब्दुल्लाह बिन उमर बिन उसमान को जो एक कमसिन लड़का था हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] और अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर को बुलाने के लिए भेजा यह दोनों आदमी उस वक्त मस्जिदे नबवी मे बैठे हुए थे और बवक्ते वाहिद दोनों को यह पैगाम पहुँचा कि अमीर ने आपको बुलाया है। यह वक्त ऐसा था कि इस वक्त वलीद कभी बाहर न बैठता था। और लोगों की मुलाकात न होती थी। उन हजरात ने कहा कि तुम चलो हम आते है। आदमी वापस गया अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर ने कहा कि यह वलीद के बैठने का वक्त नहीं है इस वक्त बुलाने का क्या सबब हो सकता है? कुछ आपके खयाल मे आता है यह क्या बात है? इमाम हुसैन[अ०स०] ने फरमाया मेरा खयाल है कि उनका जुल्म का देवता दुनिया से उठ गया है और हमें इस वक्त सिर्फ बैयत के लिए बुलाया गया है कि लोगों में अभी खबर फूटने न पाये और हम लोग पाबन्द कर लिये जाये। अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर ने कहा खयाल तो मेरा भी यही है। फिर अब क्या करना चाहिए? इमाम ने फरमाया मैं तो अभी अपने खानदान के जवाँमर्दों को जमा करता हूँ और उन सब के साथ वहाँ जाता हूँ। उन लोगो को दरवाज़े पर खड़ा कर दूँगा और मैं अन्दर जाऊँगा। अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर ने कहा, मुझे इसमे आपकी जान का अन्देशा है कहीं आप कत्ल न कर दिये जाये आपने फरमाया मैं जाऊँगा तो कुछ समझ के जाऊँगा। इतना सामान कर लूँगा कि मुझे खतरा बाकी न रहे।

---

1 अखबारुत्तवाल, पेज/229

इमाम हुसैन[अ०स०] अपने मकान पर तशरीफ ले गए। और अइज्जा और मख़सूसीन (खास खास लोगों) को जमा कर के उनके साथ वलीद के दरवाजे पर पहुँचे। असहाब से फरमाया कि तुम दरवाजे पर ठहरो और मैं अन्दर जाता हूँ। अगर मैं तुम्हें बुलाऊँ या तुम सुनो कि वलीद की आवाज बलन्द हुई तो सब के सब अन्दर चले आना और अगर ऐसा न हो तो तुम सब ठहरे रहना। यहाँ तक कि मैं वापस आऊँ हजरत अन्दर तशरीफ ले गए। वलीद और मरवान आज खिलाफे मामूल पास पास बैठे हुए थे और एक खामोशी छाई हुई थी। इमाम हुसैन[अ०स०] ने फ़रमाया 'इत्तफाक व इत्तेहाद बनिसबत निजा (झगड़ा) व इखतेलाफ के बेहतर है खुदा तुम दोनों के तअल्लुकात को खुशगवार बनाये।' इसका कोई जवाब नहीं मिला और आप बैठ गए। वलीद ने यजीद का ख़त पढ़ कर सुनाया गालिबन वही हिस्सा जिसमे मुआविया की वफात का तजकिरा था और उसके बाद बैयते यजीद का मुतालिबा किया। इमाम[अ०स०] ने फरमाया 'इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजेऊन।'[1] (यह वह फिकरा है जो हर मुसीबत के मौके पर कहा जाता है।) खुदा तुम लोगो को इस मुसीबत मे सब्र अता करे। बैयत के बारे में यह है कि मेरे ऐसे शख़्स की बैयत को मख्फ़ी तौर (खामोशी से) से तो गालिबन तुम काफी न समझोगे जब तक कि ऐलानिया बैयत न हो और आमतौर से लोगों को इसका इल्म न हो। वलीद ने कहा बेशक आपने फरमाया तो फिर जब मजमये आम में वफ़ाते मुआविया का एलान करो और तमाम लोगो से यजीद की बैयत लो उसी वक्त मुझसे भी कहना ताकि यकसूई (एक होकर) के साथ इस कजिये (झगड़े) का फैसला हो जाये।[2] वलीद शायद अपने मकाम पर यह समझे हुए था कि इमाम हुसैन[अ०स०] यजीद की बैयत का सवाल सुनते ही फौरन मुखालिफत पर तैयार हो जायेंगे और बहुत सख्ती के साथ जवाब देंगे और इस सूरत में उसे फिक्र होगी कि मुझे यजीद के हुक्म की तामील के लिए क्या सूरत इख्तियार करना पड़ेगी। अब उसने जो आपसे इस तरह का मुलाएम अन्दाज का जवाब सुना तो वह उसे गनीमत समझा और खुश हो कर उसने कहा ''बेहतर' आप वापस जाईये। और सब के साथ फिर आइयेगा।' मरवान अभी तक खामोश बैठा सूरते हाल का मुशाहिदा कर रहा था। अब जो उसने वलीद का यह नर्म तर्जे अमल देखा तो बेइख्तियार बोल उठा। 'वलीद क्या ग़जब करते हो। अगर

---

[1] हम अल्लाह के हैं और अल्लाह की तरफ पलट कर जाना है। सूरए बकरा/156)
[2] तबरी जि./6. पेज/184 अख़बारूत्तावाल पेज/229

हुसैन[अ०स०] इस वक्त तुम्हारे हाथ से निकल गए और बैयत न की तो फिर ऐसा मौका हासिल न होगा जब तक कि बहुत से लोग तरफैन (दोनों तरफ) के क़त्ल न हो लें बेहतर है कि अभी इनको गिरफ्तार कर लो और तुम्हारे घर से जाने न पायें जब तक कि बैयत न कर लें या क़त्ल न कर दिये जायें।

यह सुनकर इमाम हुसैन[अ०स०] को गुस्सा आ गया और यह कहते हुए उठ खड़े हुए कि "क्या मजाल है तेरी या वलीद की जो मुझे क़त्ल करे। गलत कहा तूने बखुदा और गुनहगार हुआ यह फरमा कर आप बाहर निकल आये और अपने असहाब की मईयत (साथ) में घर वापस तशरीफ ले गए।[1] मरवान ने वलीद से कहा 'तुमने मेरा कहा न माना अब ऐसा मौका हाथ न आयेगा' मरवान यह किसी और से कहो तुम ने मुझे वह सूरत बताई थी जिस मे मेरे मजहब की मौत थी खुदा की कसम मुझे यह पसन्द नहीं कि तमाम शर्क़ व गर्ब (पूरब पश्चिम) का माल व दौलत मेरे कब्जे में दे दिया जाये फिर भी मैं हुसैन[अ०स०] को क़त्ल करूँ। सुबहानल्लाह। मैं हुसैन को क़त्ल करूँ? सिर्फ़ इतनी बात पर कि वह कहते हैं कि मैं बैयत नहीं करूँगा खुदा की कसम मुझे यकीन है कि जो शख्स हुसैन[अ०स०] के खून का मुजरिम होगा वह खुदा के यहाँ रोजे कयामत मीजाने अमल में इन्तेहाई सुबुक (हलका) होगा।[2]

मरवान ने कहा कि अच्छा यह अकीदा तुम्हारा है तो बेशक तुम ने बहुत अच्छा किया।[3]

बहुत मुमकिन है कि इसके बाद मरवान ने वलीद की शिकायत यजीद को लिख भेजी हो और उसे तमाम रूदाद की इत्तेला दी हो। और उसी का नतीजा हो कि उसके बाद वलीद मदीने की गुवर्नरी से हटा दिया गया हो। और उमर बिन सईदुल अशदक़ को मदीने का गवर्नर मुकर्रर कर दिया गया।

यह इसकी एक दलील है कि खत में बैयत न करने की सूरत में हुसैन[अ०स०] के क़त्ल के मुतअल्लिक जरूर लिखा था। जाहरी असबाब की बिना पर भी कोई शक नहीं हो सकता कि हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने उसी वक्त सूरते हाल की नजाकत का पूरा एहसास कर लिया और यकीनन उसके बाद जो कुछ तय किया वह तमाम नताएज सोच लेने के बाद, आप ने यह तय कर लिया कि मैं यजीद की बैयत हरगिज नहीं करूँगा अभी तक दुनिया नफ़ी

---

[1]तबरी जि/8. पेज/189
[2]अख़बारूत्तूवाल पेज/229
[3]तबरी जि 6 पेज 190

(इन्कार) के मानी नही समझ सकती थी क्योंकि इन्कारे बैयत की सूरत मे उन तशद्दुद के दर्जों का अन्दाजा नही कर सकती थी जो बाद में इमाम हुसैन[अ०स०] के सामने आये लेकिन हुसैन[अ०स०] जिस वक्त कह रहे थे कि मैं बैयत नहीं करूँगा उस वक्त वह बैयत न करने का मुआविजे में जुल्म व तशद्दुद के तमाम इमकानात पर गौर करके और अपने नफ्स की कुव्वते बर्दाश्त का पूरा जाएज़ा लेकर कामिल एतेमाद के साथ बैयत की नफी कर रहे थे और इसी लिए आप देखेंगे कि तशद्दुद अपनी आखिरी हद पर पहुँच गया मगर हुसैन[अ०स०] के सब्र व बर्दाश्त की कुव्वत खत्म न हो सकी वह अपनी बात पर आखिर तक कायम रहे। उसी अज्मो इस्तिक़लाल (हिम्मत व जवाँ मर्दी) के साथ जिसको उन्होंने पहले दिन तय कर लिया था

यहाँ पर यह बहस पूरे तौर पर साफ हो जानी चाहिए कि आखिर यजीद की रसमी बैयत इख़्तियार कर लेना कौन सा ऐसा नाक़ाबिले बर्दाश्त अम्र था जिसे हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] किसी सूरत से गवारा नहीं करते थे। इस के लिए एक नजर हुसैन[अ०स०] की उन जिम्मेदारियों पर डालना होगी जो खानदाने रसूल[स०अ०] के उस वक्त सब से बड़े जिम्मेदार रूक्न होने के एतेबार से उन पर आएद थी और उन कदीम रिवायात को देखना होगा जो इस्लाम की हक्कानियत की हिफाजत के लिए इमाम हुसैन[अ०स०] के आबाओ अजदाद की जात से वाबस्ता रही थीं और जिनके उस वक्त हुसैन[अ०स०] जिम्मेदार थे और फिर यह देखना होगा कि उस वक्त हुसैन[अ०स०] अपने फर्ज़ की तकमील किस तरह कर सकते थे। यह भी समझना होगा कि यजीद को हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] से बैयत लेने के लिए इस कद्र कदो काविश की जरूरत क्या थी? जबकि जमहूरियत के उसूल पर अक्सर अफराद का किसी हुकूमत को कुबूल कर लेना आईनी तौर पर उसके मुसल्लम हो जाने के लिए काफी और अकल्लियत की राय नाकाबिले एतेबार है उसके साथ यह कोई कानून नहीं कि अकल्लियत को जबरी तौर पर अपनी राय बदलने के लिए मजबूर किया जाय जबकि उसकी तरफ से अमली तौर पर कोई शोरिश अगेजी न की जा रही हो खिलाफत के हर दौर में कुछ लोग ऐसे रहे जिन्हों ने बैयत नहीं की थी। खुद हजरत अली इब्ने अबी तालिब[अ०स०] के जमान–ए–खिलाफत में हिसान बिन साबित काब बिन मालिक और जैद बिन साबित वगैरह कई आदमी ऐसे थे जिन्हों ने आपकी बैयत से किनारा कशी की थी। मगर सिर्फ बैयत न करना कोई क़ाबिले सजा जुर्म नहीं समझा गया यह भी अन्दाजा किया जा सकता है

कि मुआविया ने मक्के और मदीने में चाहे कितनी ही बडी कॉनफ्रेस यजीद की बैयत लेने के लिए मुन्अक़िद की हो लेकिन यक़ीनन मक्के और मदीने की मरदुम शुमारी के एतेबार से सैकड़ों हजारो आदमी ऐसे रह गए होंगे जो घरों में बैट होगे और जिन्हों ने यजीद की बैयत नहीं की होगी लेकिन किसी के लिए बैयत की जिद नहीं की गई और सलतनत को उनसे काविश पैदा नहीं हुई। फिर एक हुसैन[अ०स०] मे क्या बात ऐसी थी कि आप से बैयत हासिल कर लेने के लिए सलतनते शाम की पूरी मशीनरी हरकत मे आये और शाही जबरूत (घमण्ड) की तमाम ताक़त सर्फ़ कर दी जाये। मानना पड़ेगा कि हुसैन[अ०स०] से बैयत बहैसियते मुल्के अरब के एक फ़र्द के नही तलब की जा रही थी बल्कि इस बिना पर कि एक फर्द एक जमाअत या क़ौम बन जाती है। नुमाइन्दगी के एतेबार से हकीकत मे हुसैन फकत हुसैन ही न थे वह तो उस वक्त खानदाने रिसालत की बुजुर्ग तरीन हस्ती होने के लिहाज से उस विरसे के हामिल थ जो दीने खुदा की सही मानी में हिफाजत से मुतअल्लिक़ था और जो पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] के बाद उनके अहलेबैत[अ०स०] मे यके बाद दीगरे मुन्तकिल हो रहा था और इसी लिए खानदाने रसूल या खानदाने अली[अ०स०] में मुहम्मद बिन हनफ़ीया भी तो थे अब्दुल्लाह बिन जाफर भी तो थे हजरत अब्बास बिन अली और उनके भाई भी तो थे कोई शक नहीं कि उन में से किसी ने यजीद की बैयत नही की मगर तारीख नही बता सकती कि उनमें से किसी से भी बैयत तलब की गई हो। सिर्फ़ इस लिए कि उन मे से किसी को हुसैन[अ०स०] की मौजूदगी में वह जिम्मेदाराना हैसियत हासिल न थी जो हुसैन[अ०स०] को हासिल थी।

यजीद को हुसैन[अ०स०] से बैयत हासिल करने की कोई जरूरत न होती अगर वह सिर्फ दुनियवी क़िस्म की एक सलतनत का दावेदार होता मगर वह जिस किस्म की सलतनत के मालिक होने का मुद्दई (दावेदार) था वह तो खिलाफते इस्लामिया वाली हुकूमत थी जो रसूल अल्लाह[स०अ०] की जानशीनी की मुरादिफ (जैसी) समझी जाती थी। उसका नुस्बुल ऐन यह था कि बादशाह मजहब के ज़ुज व कुल (हर चीज) का मालिक हो और मजहबी कवानीन बादशाह की ख्वाहिशों के पाबन्द हों। उसके लिए जरूरत थी कि वह पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] के मजहबी वारिस से अपनी हुकूमत तस्लीम कराये और वह खूब जानता था कि उस विरासत के हामिल इस वक्त सिर्फ हुसैन[अ०स०] की जात है इसलिए वह लाजिम समझता था कि आप से अपनी बैयत हासिल करे।

हुसैन समझते थे कि अगर इस वक्त मेरे भाई हजरत इमाम हसन[अ०स०] जिन्दा होते तो बैयत की ख़्वाहिश उन से की जाती मुझ से न की जाती अगर मेरे पिदरे बुजुर्गवार हजरत अली[अ०स०] होते तो झगड़ा उनसे किया जाता, मुझसे न किया जाता और अगर मेरे जद्दे बुजुर्गवार रसूल अल्लाहस[०अ०] होते तो अपनी हुकूमत के जवाज की तस्दीक उनसे हासिल करने की कोशिश होती मुझ से न होती मगर अब तो वह देख रहे थे कि मेरे नाना रसूल अल्लाह[स०अ०] नहीं हैं मेरे बाबा अलीये मुरतज़ा नहीं हैं और मेरे भाई हसने मुजतबा भी नहीं हैं। अब तो मैं हूँ इस लिए मुझ से बैयत तलब की जा रही है। इस सूरत मे अगर मैं ने बैयत कर ली तो वह ऐसा है जैसे मेरे भाई हसन होते और वह बैयत कर लेते, मेरे बाबा अली होते और वह सरे तस्लीम खम कर देते और मेरे नाना रसूल अल्लाह होते और वह इस हुकूमत को जाएज तस्लीम कर लेते उन्होने सख्त एहसासे ज़िम्मेदारी की बिना पर तमाम मुशकिलात को बर्दाश्त करना गवारा कर लिया और यह तय किया कि मैं बैयत नहीं करूँगा

यह इज्जते नफ्स शरफे हक और वकारे दीनी का सवाल था और पहले ही दिन आपने इस मरहले में आख़िर तक साबित क़दम रहने का अज्म कर लिया था जिसका आखिरी नतीजा भी मालूम था इसका आपने कोई बलन्द बाग एलान नहीं किया, तब भी आपकी जबान से निकले हुए अलफाज़ सुनने वालो को इसका पता दे रहे थे चुनानचे अबू सईद मकबरी का बयान है कि मैने इमाम हुसैन[अ०स०] को मदीने की मस्जिद में दाखिल होते हुए देखा। आपके साथ उस वक्त दो आदमी थे जिनके काँधे पर बारी बारी हाथ रख कर चल रहे थे। और आपकी जबान पर इब्ने मुफतरिग़ के यह अशआर थे

لا ذعرت السوام في فلق الصبح　　مغيرا ولا دعيت يزيدا

يوم اعطى من المهابة ضيما　　والمنايا يرصدنني ان احيدا

"इनका मतलब यह हुआ कि ख़ुदा वह दिन न लाये कि मौत की ताकतें कमीनगाहों से हमला करके मुझे मेरे रास्ते से हटाने की कोशिश करें और मैं उनके ख़ौफ से जिल्लत को बर्दाश्त कर लूँ।"

अबू सईद का बयान है कि इन अशआर को सुन कर उसी वक्त मेरी समझ में आया कि आप किसी खास इकदाम का इरादा रखते हैं।

दो ही दिन गुज़रे थे कि मालूम हुआ आप मक्के की तरफ रवाना हो गए[1]

पन्द्रहवाँ बाब

इमाम हसन[अ०स०] की खामोशी और इमाम हुसैन[अ०स०] का एक़दाम

इस मकाम पर अक्सर यह सवाल पेश किया जाता है कि आखिर हजरत इमाम हसन[अ०स०] ने भी तो यजीद के बाप मुआविया से मुसालिहत (सुल्ह) कर ली थी। उसी तरह अगर इमाम हुसैन[अ०स०] सुल्ह कर लेते तो क्या हर्ज था? बजाहिर दोनों भाईयो के तर्जे अमल में इखतिलाफ है और उसी से सलतनते बनी उमैया के हवा ख्वाहो (चापलूसों) ने दोनों भाईयो के इखतिलाफे राय की हिकायतें भी तस्नीफ़ (लिखी) की हैं लेकिन तारीखी वाक़ेयात की रफ़्तार का बगौर मुतालिया इस इखतिलाफे तबियत के सवाल और उस खयाल की कोई गुन्जाइश बाक़ी नहीं रखता

हकीकत यह है कि हालात मुखतलिफ़ होते हैं और उन हालात के लिहाज से फराएज का तकाज़ा भी मुखतलिफ़ हो जाता है। इबनाए जमाना (जमाने के रंग में रंगा हुआ) ज्यादा तर जज्बात के पाबन्द होते हैं और जज्बात अकसर इफरात व तफरीत (हालात के तहत) की बिना पर हद्दे एतेदाल (एतेदाल की हद) से बढ़े हुए होते हैं लेकिन अखलाके इन्सानी में कामिल अशखास हर मौके पर फर्ज का अन्दाजा करते हैं। उन्हें इससे बहेस नहीं होती कि वह इबनाये ज़माना के जज्बात के मुताबिक हैं या मुखालिफ इस लिए उनका तर्जे अमल अक्सर आम अफरादे इन्सानी को मुतजाद (उलटा) नजर आता है और अक्सर उन पर दोनो तरह के मोतरिज (एतेराज) पाये जाते हैं। कभी उन पर इकदाम पसन्द तबाए (जंग पसन्द तबियत) एतेराज करते हैं और कभी रजअत पसन्द (सुलह पसन्द) तबीअतें मोतरिज होती हैं लेकिन वह उन

[1]तबरी जि/6, पेज 191

एतेराजात की कोई परवा नहीं करते और अपने मसलक के पाबन्द रहते है। इस लिए कि वही उनके नजदीक फ़र्ज़ का तक़ाजा होता है

यही सूरत हमको पैगम्बरे इस्लाम के तर्जे अमल के मुतअल्लिक़ मिलती है। यही अलीये मुरतजा[अ०स०] की सीरत और यही उनके बाद हसन और हुसैन[अ०स०] के तर्जे अमल के मुतअल्लिक नजर आती है

वाकेया यह है कि हसने मुजतबा की सुल्ह जिसके वाकेयात का तजकिरा पहले हो चुका है। वही मुजाहिद ए–करबला की तम्हीद थी इस लिए कि हर इकदाम जो अपने वक्त पर हो वह मुफीद, नतीजाखेज, और मुअस्सिर होता है। लेकिन अगर वक्त से पहले अमल में लाया जाये तो वह नतीजतन मुफीद होने के बजाए मुजिर (नुकसान) साबित होता है बल्कि अपने मुरतकिब (अमल में लाने वाले) को अक्सर हमेशा के लिए मूरिदे इलजाम बना देता है।

वाक़ेयात की रफतार यकसाँ हालत पर नहीं रहती बल्कि तदरीजी (धीरे धीरे) हैसियत से तरक्की करती है और उनका तरीक़–ए–इलाज भी उसी एतेबार से मुखतलिफ़ होता है। मिसाल के तौर पर जख्म रसीदा पके हुए जुजवे बदन हाथ या पैर का इलाज करो फाहे लगाओ, मरहम बदलो जरूरत हो तो बार बार नशतर दिलवाओ फिर अगर न अच्छा हो और उसकी सम्मियत (जहर) के जिस्म मे सरायत करने का खौफ हो तो उसे काट कर भी फेंक दो किसी को एतेराज का हक न होगा लेकिन अगर जख्म पैदा होने के साथ ही और कोई इलाज मुआलिजा करने के पहले ही काट डालते तो जरूर मूरिदे इलजाम होते और आम तौर पर बेअक्ल समझे जाते हालाँकि यह तर्जे अमल वही है जो बाद मे इख्तियार किये जाने पर ममदूह (तारीफ़) व मुस्तहसन (अच्छा) क़रार पायेगा।

दुशवार गुजार हालात की इस्लाह के लिए कुर्बानी और वह भी जान की कुर्बानी कामयाब, और मुअस्सिर (असर रखने वाली) तरीन हरबा है लेकिन सब से आखिरी, जब तमाम वसाएल और जराए खत्म हो जाये और कोई तदबीर कारगर न हो उसी वक्त उसका दर्जा है। वह जहाँ तक आखरी रहे वहीं तक मुअस्सिर है और उससे पहले अमल मे आ जाये तो जल्द बाजी गैर मौका शिनासी और नाआकिबत अन्देशी वगैरह का इलजाम आ जाना जरूरी है जिसके बाद उसको हक बजानिब नहीं समझा जा सकता और उसी के साथ उसकी कामयाबी और तासीर रूख्सत

हालात की इस्लाह के लिए एहतिजाज और इस्तेग़ासा (फ़रयादरस) मसालिहत और मुआहिद ए मवददत (मेल मुलाप और मुहब्बत) यह ऐसी चीज़ें हैं जिनका इख्तियार किया जाना इब्तेदाई हुदूद मे जरूरी है बेशक जब यह सब जराएइख्तियार किये जाने पर नाकाम साबित हों तो फिर अरबी मसल 'من جرّب المجرّب حلّت به الندامة' और फार्सी मसल आजमूदा रा आजमूदन जेहल अस्त।' आजमाए हुए को आजमाना जेहालत है। के मुताबिक इन्सान उन जराए का मुतालिबा न हो सकेगा। और उसकी रफ्तार अमल को आगे बढ़कर दूसरे इकदाम तक पहुँचने का हक होगा। यही तदरीजी (रफ्ता रफ्ता) रफ्तारइकदामे अमल में जब तक कायम है कामयाबी की तवक्को है वरना नही। एक बात हो जाने पर पहले ही दिन मरने मारने पर आमादा हो जाने वाला मगज़ूबुल गजब (जो गजब के दबाव में हो) कहा जायेगा वह किसी तारीफ़ का मुस्तहक़ नहीं बरख़िलाफ़ इसके अगर तमाम ज़राए व असबाब से इतमामे हुज्जत के बाद इन्सान किसी अहम मक्सद के लिए जान देने पर तैयार हो जाये तो फिदाकारी व जान निसारी और मुअस्सिर क़ुर्बानी करार पायेगी।एक इन्सान अगर अपने आमाल व अफआल में तवाज़ुन (बराबरी) को मलहूज़ (खयाल) सामने रखता है और अपनी कारगुजारियो मे सिर्फ जजबात का फरमाँबरदार नही बल्कि अक़ली गौर व तदब्बुर का पाबन्द है तो उसे इस निजाम का पाबन्द होना ज़रूरी है। शाम की उमवी सलतनत के हाथो बेशक मजहब खतरे में था और हक व रास्ती (सच्चाई) पामाल हो रही थी जिसकी इस्लाह के लिए क़ुर्बानी दरकार थी लेकिन इस क़ुर्बानी के हक बजानिब करार पाने के लिए दूसरे पुरअमन और सुलह परवर वसाएल व जराए सर्फ किये जाने की जरूरत थी। अगर इमाम हुसैन[अ०स०] बगैर किसी किस्म के साबिका हालात के अचानक यजीद की बैयत से किनारा कशी करके बावजूद फ़ुकदान आवानो व अन्सार (हामी और मददगार) मुख़ालिफत पर जिस का लाजमी नतीजा आप का क़त्ल होना था तैयार हो जाते और ऐसा करते तो उन सवालों का पैदा होना नागुजीर था कि आख़िर इमाम ने इत्तेहादे अमल के साथ हालात की दुरूस्ती की कोशिश क्या न की? मख़सूस शराएत के साथ सुलह करके उन मकासिद को क्यों न हासिल किया? कम से कम उमूरे सलतनत से बे तअल्लुकी इख्तियार कर के मदीन–ए–रसूल[स०अ०] में कयाम पजीर क्यों न रहे और करबला आकर अपने को मुरिज़े खतर मे किस लिए डाला?

इन सवालात के पैदा होने के बाद जिनका कोई सही हल भी बजाहिर मौजूद न होता यकीनी आपका क़त्ल होना सिर्फ़ जज़बात की कारफरमाई का नतीजा करार पाता और इसलिए न काबिले सताइश होता और न मुअस्सर व कामयाब मगर यहाँ सूरते हाल यह थी कि इमाम हुसैन[अ0स0] का इकदाम एक मुकम्मल निज़ाम के तहत में वाके हो रहा था जिसके लिए बरसों की तवील मुद्दत के हालात मौके को करीब ला रहे थे यहाँ तक कि सन 60 हिजरी से लेकर सन 61 हिजरी तक में इसका वक्त आ गया

शुरू शुरू मे जनाबे अमीर[अ0स0] का अपने हुकूक की पामाली के बावजूद 25 साल खामोश रहना उसके बाद लोगों के इन्तेहाई इसरार पर खिलाफ़त कुबूल करना और बनी उमय्या का आपके मुकाबले में बर सरे पैकार हो जाना, आपका शहीद होना और इमाम हसन[अ0स0] का मसनदे खिलाफत में मुतमक्किन होना(बैठना) लेकिन हालात की नासाजगारी की वजह से सुल्ह कर लेना और मखसूस शराएते मुआहिदा के साथ सल्तनत की जिम्मेदारियों से दस्तकश (अलग) हो कर दस बरस खामोशी की जिन्दगी बसर करना और फिर दस ही बरस तक खुद इमाम हुसैन[अ0स0] का भी अमली हैसियत से खामोश रह कर हालात का मुतालेआ करते हुए अक्सर ज़बानी या मक्तूबी (खत के ज़रिये) एहतिजाज करते रहना लेकिन बावजूद इसके हालात का रू ब इस्लाह होने के बदले बद से बद तर होते जाना, शराएते मुआहिदा को ठुकरा दिया जाना, सुलहनामे की दफ़आत (शर्तों) का पामाल हो जाना, जबानी एहतेजाज व इस्तेगासे(फरयाद) पर कोई सुनवाई न होना बल्कि अपने इन्सानियत सोज और इस्लाम कश अफ़आल (इस्लाम मुख़ालिफ़ कामों) पर बीश अज़ बीश (बार बार) इसरार किया जाना और इस सिलसिले मे पानी का सर से ऊँचा हो जाना और मुआमिलात का हद से गुजर जाना वह था जिस ने इमाम हुसैन[अ0स0] के लिए इस अजीम इकदाम का मौक़ा पैदा कर दिया था कि जो उन्होंने करबला की सर जमीन पर अन्जाम दिया

हुसैन[अ0स0] के सामने अब सुलह का सवाल आ ही नहीं सकता था इसलिए कि सुलह की मन्जिल को इमाम हुसैन[अ0स0] तय कर चुके थे और अब शराएते सुलह की मुखालिफत ही वह सूरते हाल थी जो इमाम हुसैन[अ0स0] के सामने थी हालाँकि मुआविया अपने आमाल में बहरहाल कुछ न कुछ पर्दा रखने की कोशिश करते थे। फिर जब मुआविया के साथ मुसालिहत नतीजे मे नाकाम रही तो यजीद के साथ मसालिहत के क्या मानी?

फिर इमाम हसन[अ०स०] ने जो सुलह की उसकी नौइयत तो यह थी कि पहले हजरत इमाम हसन[अ०स०] मसनदे खिलाफ़त पर मुतमक्किन (बैठ) थे सुल्ह के जरिये से आपने हुकूमते जाहरी को छोड़ दिया और मखसूस शराएत के मा तहत मुआविया के सिपुर्द कर दिया मगर इसके मानी यह नहीं थे कि आपने खिलाफते इलाहिया इमामत या तमद्दुने इस्लामी के बारे मे अपने दीनी मसलक और मुआशरती (सोसाईटी) व इज्तेमाई उसूल से दस्तबरदारी (दूरी)इख्तियार कर ली। यह सुलह उसके बाद से सिर्फ एक मुआहिद–ए–अदमे तअर्रूज (बराए नाम) की हैसियत रखती थी जिसकी वजह से रूहानियत का मरकज दुनियवी इकतेदार के मरकज से एक अरसे तक के लिए अलाहिदा हो गया और बस इसी लिए हज़रत इमाम हसन[अ०स०] की जिन्दगी इस मुआहिदा के बाद भी महफूज नही रही। सल्तनते शाम इमाम हुसैन[अ०स०] से इस अदमे तअर्रूज पर इक्तेफा करने वाली होती तो तलबे बैयत की जरूरत न थी क्योंकि अदमे तअर्रूज (बराए नाम) तो उन हजरात की जानिब से क़ायम ही था। दमिश्क की सियासत अब इस पर रज़ा मन्द नही थी कि रूहानियत का मरकज माद्दी (दुनियावी) इकतेदार के मरकज से अलग दुनिया में मौजूद रहे। मुआविया का मुआहिदा वक्ती तौर पर एक मजबूरी का नतीजा था। बगैर इसके हज़रत इमाम हसन[अ०स०] की तस्लीम शुदा हैसियत जो मुसलमानों में बा एतबारे हुकूमत हासिल थी खत्म नहीं हो सकती थी। उसके बाद उनको खुद और उनके बाद यजीद को शिद्दत के साथ इसका एहसास था कि यह काँटा हमेशा के लिए रास्ते से निकल जाये तस्खीरे ममालिक (हुकूमत को राम कर लेना) और तसखीरे कुलूब (दिलों को राम करना) मुख्तलिफ चीजें हैं एक को दूसरे से कोई लगाव नहीं है। फ़ातहे ममालिक को फ़ातहे कुलूब (दिलों को फतह करने वाला) से हर वक्त अन्देशा रहता है। यही खतरा था जिसकी वजह से अहलेबैते रसूल[स०अ०] सलतनते दमिश्क की नजर में बहरहाल काबिले मजाहमत थे ख़्वाह वह मजाहमत (रूकावट) करें या न करें।

इन हालात के होते हुए इमाम हुसैन[अ०स०] के लिए इस तरह की सुल्ह का कोई महल न था जैसी सुल्ह इमाम हसन[अ०स०] कर चुके थे। वह सुल्ह ऐसी थी कि अगर उस वक्त जिम्मेदाराना हैसियत इमाम हुसैन[अ०स०] की होती तब आप भी उस सुल्ह के मसलक को इख्तियार करके मुसलमानो मे अमन कायम कर देते आपके सामने था बैयत का सवाल। इसके मानी थे उस रूहानी मरकज़ की शिकस्त जिसके हुसैन[अ०स०] जिम्मेदार थे। इसके मानी थे उस तमद्दुन और

निज़ामे सियासत को कुबूल कर लेना जो सलातीने (हुकूमते) दमिश्क ने क़ायम किया था। यह ऐसी चीज थी जो आले मुहम्मद[स0अ0] के लिए किसी तरह काबिले कुबूल नही हो सकती थी ख्वाह हुसैन[अ0स0] होते या उनके बजाये उस वक्त इमाम हसन[अ0स0] होते।

फिर साबिक (पहले के) जमाने में तो खुलफ़ा अपने को किताब और सुन्नत का मुहाफिज जाहिर किया करते थे और बैयत भी इसी पर ली जाती थी कि किताब और सुन्नत पर अमल होगा। मगर यजीद के दौर में सलतनत की मुतलकुल एनानी (बे लगामी) और खुद सरी इस दर्जा पर पहुँच गई थी कि बैयत ली जाती थी इस बात पर कि हम खलीफा की मिलकियत हैं वह हमारे जान व माल और औलाद के साथ जो चाहे सुलूक कर सकता है। मदीने में यजीद बिन अब्दुल्लाह बिन रबिया बिन असवद इसी जुर्म पर कत्ल किये गये कि वह किताब और सुन्नत पर बैयत करने के लिए तैयार थे मगर मजकूरा (ऊपर बयान किए हुए) अलफाज मे यजीद की गुलामी का इकरार करने के लिए तैयार न थे।[1]

इन ही बातों का नतीजा था जैसा कि बाद मे मालूम होगा कि इमाम हुसैन[अ0स0] को आपके इस इक़दाम के सिलसिले में मुख़तलिफ़ औकात (अलग अलग वक्त) मे बहुत से मशवरे दिये गए यह कहा गया कि मदीने ही में कयाम कीजिये यह कहा गया कि मक्के को मुस्तकर (ठहरने की जगह) बनाए रखिये यह कहा गया कि ताएफ या यमन की तरफ चले जाईये। यह कहा गया कि "कोहे अजा" (पहाड़ का नाम) मे चल कर पनाह लीजिये। मगर यह किसी अज़ीज या दोस्त ने मशवरा नही दिया कि आप यजीद की बैयत कर लीजिये क्योकि यह एक तस्लीम शुदा बात थी कि यजीद की बैयत इमाम हुसैन[अ0स0] के लिए किसी तरह मुमकिन नहीं।

यजीद की बैयत करने के मानी यह थे कि हुसैन[अ0स0] हर किस्म के शरीफाना शऊर (फिक्र) और मुसलमानों के हर किस्म के हुकूक़ को बेच डालते हुसैन[अ0स0] के लिए मुहाल था कि हुसैन[अ0स0] फ़ज़ीलत और ज़लालत को एक दर्जे में रखते।

अब्दुल्लाह बिन अब्बास अब्दुर्रहमान बिन अबी बकर और अब्दुल्लाह बिन जुबैर वगैरह ने भी यज़ीद की खिलाफ़त को पसन्द नहीं किया। इन सब ने मुआविया के सामने ही यह कह दिया था कि उनका यह तरीक़–ए अमल

---

[1] अख़बारूत्तुवाल पेज/216

किसी तरह जाएज नहीं है। फिर हुसैन[अ०स०] हर दूसरे शख़्स से ज्यादा इस्लाम का दर्द रखते थे

हुसैन[अ०स०] ज्यादा हक़ रखते थे कि वह यज़ीद के मुतालिबात को हिक़ारत की नजर से देखें और हर किस्म की क़ुर्बानी इस्लाम की हिमायत में पेश करे

सोलहवाँ बाब

हुसैनी मुवक्किफ़ (नजरिये) की तशरीह

जब कोइ सूरत समझौते और मसालिहत की थी नहीं तो फिर अब क्या रह जाता है? जग मगर माद्दी तौर पर जग करने का सवाल उस वक्त पैदा ही नहीं हो सकता था। तारीखी सूरते हाल यह है कि उस वक्त हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] की वफात को बीस बरस गुजर चुके थे बनी उमैया की ताकत जो शाम में थी हजरत अली[अ०स०] ही के जमाने में इतनी मजबूत हो गई थी कि हजरत अली[अ०स०] की कुव्वत सिफ्फीन में गोया बराबर की टक्कर ले सकी और हजरत इमाम हसन[अ०स०] को उससे मुकाबले में एक शदीद खूँरेजी के आसार नजर आये। जिसकी वजह से आपने सुलह करना बेहतर समझा हालाँकि उस वक्त शिआ़याने अली[अ०स०] की जमीयत (ग्रूप) मुनज्जम थी मगर अब बीस बरस की तूलानी मुद्दत गुजरने पर वह जत्था प्रागन्दा (तितिर बितिर) हो चुका था हजारों आदमियों के जमीर खरीदे जा चुके थे बहुत से साबित कदम लोगों के सर कलम किये जा चुके थे और बहुत सों को जेलो में भरा जा चुका था बकिया लोग खौफ व दहशत और बद दिली से इधर उधर परेशान व पाशान हो गए थे ऐसी सूरत में दमिश्क के शहनशाही इकतदार के मुकाबले में जग का सवाल ही क्या पैदा हो सकता था? इसके अलावा आपका मकसद जो यजीद के मुकाबले में था वह माद्दी जग से हासिल भी नहीं हो सकता था इसकी तशरीह आइन्दा की जायेगी

उसके बाद हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] बैयत से इन्कार कर रहे थे तो क्या करेंगे? इसे अगर हुसैन[अ०स०] करके न दिखलाते तो हमारी हरगिज समझ में न आता। हुसैन[अ०स०] ने यही तय किया कि वह जग करेंगे मगर जग का तरीका

बदल दिया जितनी लडाईयाँ होती है उन मे ताक़त का मुकाबला ताकत से होता है। हुसैन[अ०स०] ने सबसे पहले यह नमूना पेश करना चाहा कि अब ताक़त का मुकाबला किरदार से करेंगे आप ने यह तय किया कि आप इकतेदार का मुकाबला बेबसी से, कसरत का मुकाबला किल्लत से और ज़ुल्म का मुकाबला मज़लूमियत के साथ करेंगे और यह वह तरीक-ए-जंग था जिसका मुशाहिदा इससे पहले दुनिया ने नहीं किया था

आप महसूस कर रहे थे कि तालीमाते इस्लाम पर ऐसा गिलाफ चढ गया है जिससे अइन्दा सदियों को और कयामत तक आने वाली नसलों को पता भी नहीं चलेगा कि हकीकतन वह तमद्दुन (रहन सहन), वह आईने मुआशिरत (दस्तूरे जिन्दगी) और वह निज़ामे जिन्दगी क्या था जिसे पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] ने दुनिया के सामने पेश किया था

यह ज़ाहिर है कि बाद की आने वाली नसलों के लिए साबिका हालात मालूम करने का जरिया अगर कोई हो सकता है तो वह कुतुबे तवारीख (तारीख की किताबें)। यही तारीख की दूर बीन वह है जिसके जरिये से सदियों और हजारों बरस पहले के हालात का इन्सान मुतालिया (पढना) करता है। इस्लामी दुनिया मे सलातीने इस्लाम (हुकूमते इस्लाम) का शाहनशाही इकतेदार इतना नुमायाँ था कि अगर इस्लामी तमद्दुन व तहज़ीब की जाँच के लिए कोई तालिबे तहकीक (तहकीक करने वाला) तारीख के अवराक पर नजर डालता तो उसको इस्लाम की सर जमीन पर दमिश्क और बगदाद के ऊँचे कस्र नजर आते वह बडे बड़े फाटक दिखाई देते जिन पर जरतार पर्दे पड़े हुए हैं वह ऐवाने (महल) जलवा दिखाते जहाँ दीवारो पर जरो जवाहर का काम बना हुआ है और सोने चाँदी के दरवाजे है और अगर महल के अन्दर बारयाबी (इजाजत) हो जाती तो जरो जवाहर से मुरस्सा (सजा हुआ) तख्त नजर आता और जरीं कमर गुलाम सफ बाँधे ईस्तादा (खडे) मह जबीनों (खूबसूरत कनीजों) का झुरमुट शराब के दौर, मुगन्नी (गाने) की सदा और साजो तर्ब के नगमों की गूँज "पेशवा ए इस्लाम की बारगाह मे नमाज़ का वक्त आता है तो वह भी सलाम करता हुआ चला जाता है मुअज्जिन की सदा आती है। मगर निशात व तर्ब (खुशी व सुरूर) के नक्कार खाने में तूती की आवाज बन कर सुनाई नहीं देती। जब वह नजारा देखता तो क्या यही राय कायम न करता कि इस्लाम का तमद्दुन यही है और यही वह तहजीब है जिस पर मुसलमान नाज़ाँ हैं। यकीनन ऐसा ही होता कि वहाँ का आईन (दस्तूर) व

निजाम बतौरे मिसाल पेश किया जाता। उनके अफआल मुसलमानों के अफआल बताए जाते और उनका किरदार ही एक ऐसा आईना होता जिसमें मुसलमानों की तस्वीर नज़र आती कहाँ नजर आते महल्ल ए बनी हाशिम के वह टूटे फूटे खंडर जिनमें कुछ बूढ़े कुछ जवान और कुछ बच्चे अपने खालिक़ की याद में मसरूफ हैं। वह दरवाजे जहाँ ग़रीब, मोहताज और मिसकीन आते हैं तो अपने सामने का खाना उठा कर दे दिया जाता है और खुद फाक़े से दिन गुजारे जाते हैं। जहाँ गुलाम और कनीज से मसावियाना (बराबरी का) बर्ताव किया जाता है। कहाँ नजर आते वह चेहरे जिन में मेहनत व मशक्कत बर्दाश्त करने से जर्दी छाई हुई होती है। वह होंट जो ज़िक्रे इलाही से खुश्क हो गए हों। वह अफ़राद जिनका नस्बुल ऐन (तरीका) यह है कि किसी ग़रीब को उठाओ, कमजोर की मदद करो, किसी मोहताज व बेकस की दस्तगीरी (ख़बर) करो, किसी मज़लूम को ज़ुल्म से निजात दिलाओ और दुनिया को अपने अख़लाक़ से नमून–ए–जन्नत बनाओ।

बस हुसैन बिन अली[अ०स०] का मकसद यह था और वह यजीद की बैयत का इन्कार करते हुए इसी पर कमर बस्ता (तैयार) हो गए थे कि तो सही वह इन्सानियत की निगाह को उन ऊँचे मनाज़िर से हटा दे। उन कसरो और मीनारों से मोड दें और इस्लामी उसूल की बर्क़ तजल्ली (रौशनी) को अमल की उस मेराज पर आँखों के सामने लायें कि नजर उठते ही सब से पहले उस पर जा पड़े और उसी की चकम दमक में महो होजाये। उन्होंने चाहा कि अपने किरदार को ऐसी बलन्दी पर ले जायें जहाँ वह सितारे की तरह चमक उठे। सलातीने दुनिया के बड़े बड़े महल और मीनार नजर न आयें बल्कि आपका किरदार नजर आये वह चाहते थे कि इन्सानियत के कानों को इस नक्कार खानये साज (रग रेलियाँ) व नगमें से बहरा बना दें और हक्कानियते इस्लाम की इस सुरीली और दिलकश आवाज से शनासा कर दें जो मौजूदा फिज़ा में सुनाई नही देती।

दूसरे लफ़ज़ों में आपका मतलब यह था कि एक मर्तबा दुनिया के सामने इस हक़ीकत को पूरी शिद्दत व कूव्वत से पेश कर दें कि हुकूमत व शहनशाहियत और है और इस्लामी तहज़ीब व तमद्दुन और उसके उसूल और हैं।

हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] जिस मकसद को ले कर उठ रहे थे वह अपनी नौइयत व खुसूसियत मे कोई नया न था। वह तो वही था जिसे तमाम अम्बिया

ले कर आये थे और जिसके लिए तमाम मुसलेहीन (सुलह पसन्द) हमेशा कोशिश करते रहे मगर इसको जिस सूरत से आपने हासिल किया वह एक ऐसी मिसाल है जो न इससे पहले नजर आई और न बाद को।

सियासियाते उमम (उम्मत) के वाकिफ कार खूब जानते हैं कि ज़ुल्म व जौर की ताकत और शहनशाहियत जिस वक्त अफरादे इन्सानी को अपने शिकन्जे में कैद रखना चाहती है तो कुछ जराएइख्तियार करती है और उन तमाम जराए का अस्ली मकसद दो चीजें होती हैं। एक यह कि अवाम से कुव्वते एहसास को सल्ब (छीन) किया जाये। दूसरे जुरअते इजहार (ज़ुल्म के खिलाफ आवाज उठाने) को खत्म किया जाये। शाम की उमवी हुकूमत ने अपने इकतेदार को कायम रखने के लिए इन ही दो बातो पर पूरी ताकत सर्फ कर दी थी वरना मुसलमान जिनको पैगम्बर ने मेहनत व मशक्कत के साथ उसूले इन्सानियत की तलकीन की हो और जिन्हों ने देखा हो कि पगैबर किस तरह माददी साजो सामान (जाहरी चीजों) को हेच (गिरी हुई नजर) समझते थे जिन्हो ने अपनी आँखो से मुशाहिदा किया हो कि पैगम्बर[स0अ0] के दरवाजे पर फटा हुआ पर्दा पड़ा रहता था जिन्हों ने देखा हो कि तीन तीन दिन तक पैगम्बर[स0अ0] के घर से धुवाँ नहीं उठता, जितना रूप्या आता है गरीबों और मिसकीनों को दे दिया जाता था। वही क्यों कर इसको बर्दाश्त कर सकते कि बादशाह के खज़ाने में गरीबो का खून चूस कर रूपया जमा हो और उसको रंग रलियों में सर्फ किया जाय खलीफा की बारगाह में रक्स व सुरूर (नाच गाने) की महफिलें हों और शराब व कबाब के मशगले रहें मुसलमान इसको सिर्फ खामोशी से देखते ही न रहें बल्कि ऐसे शख्स को पेशवा तस्लीम करें। यह फितरत का इन्कलाब मुसलमानों में किस तरह पैदा हो सकता था? सिर्फ कुव्वते एहसास खत्म होने और जुरअते इजहार के सल्ब होने से।

कुव्वते एहसास खत्म करने की सूरतें बहुत सी है हर शख्स समझ सकता है कि अवाम साहबे राय नहीं होते उनके पास दिल होता है मगर दिमाग नहीं होता। दिमाग रखने वाले मुमताज अफ़राद और लीडर होते हैं ख़ास ख़ास लीडरों को अपने हाथ मे ले लिया जाये तो जिधर यह लीडर ले जाना चाहें अवाम बे खबरी के साथ उसी तरफ चले जायेंगे ख्वाह यह रास्ता कितना ही गलत क्यों न हो इसी बिना पर उमूमन जमहूरियतों (Democracy) में जाहरी कसरते राय (Voting) हकीकी राय आम्मा (आम लोगों) की तरजुमान नहीं होती।

उमवी सियासत ने खवास (खास खास लोगों) को अपने कब्जे में किया। इस तरह कि जिसको ज़रा मुख़ालिफाना रूजहान रखते हुए पाया उसकी जेब में अशरफियों की एक थैली पहुँचा दी गई। अगर उसने कुबूल कर ली तो समझ लीजिये कि जितना उन अशरफ़िया का वजन था उतना ही उसकी मुख़ालिफत का सर झुक गया। "फिर छुटती नहीं है मुह से यह काफिर लगी हुई। जहाँ खयाल पैदा हुआ कि अब की दफा दो तोडे मिले हैं इसके बाद बजाए दो के चार मिलेंगे वहीं कुव्वते एहसास खत्म हो गई यानी यह खयाल होने लगा कि दुनिया के लिए चाहे जैसे हो यह हुक्काम हमारे लिए तो बहुत अच्छे हैं। इस तरह बहुत से लोगों का जमीर खरीद लिया गया और बहुत से उसूल के पुख्ता जिनके सर उठे ही रहे उनके सर और जिस्म मे जुदाई पैदा कर दी गई और अगर यह हर्बा खतरनाक मालूम हुआ तो शहद का ऐसा जाम जो लब तक पहुँचते ही मौत की मीठी नींद सुला दे। नतीजा यह हुआ कि अवाम ने यह सोचना मौकूफ़ (छोड़) कर दिया कि हो क्या रहा है और बहुत से लोगों ने जब कुछ सोचा तो उन लोगो के अन्जाम को देखा जो उसके पहले कुछ सोच कर इखतेलाफ का इजहार कर चुके थे कि आज सफह–ए–हस्ती उनके नक्शे वजूद से ख़ाली है इस तरह जुरअते इजहार ख़त्म हुई।

यही दो चीजें ऐसी थीं जिनको अज सरे नौ पैदा करने का बेड़ा उठा कर हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] मैदान मे आये आपने सोचा कि कुव्वते एहसास क्यों कर पैदा की जाये? इसके लिए एक हाजिक (होशियार समझदार) तबीब की तरह मरज के सबब पर गौर करने की जरूरत थी आखिर मुसलमानों की इस बेहिसी का सबब क्या है? क्या यह वाकई मुसलमान नहीं रहे? देखा तो अब भी लोग इस्लाम को मानते है और अपने को मुसलमान कहना फख्र समझते हैं मगर इनके एहसासाते इस्लामी पर गशी छा गई है जैसे कोई आदमी बेहोश हो जाये तो उसमें नफ्स की आमद व शुद (सास का आना जाना) कायम रहती है जो जिन्दगी का पता देती है मगर आसारे जिन्दगी मफकूद (खत्म) होते ही एहसास और हरकते इरादी दोनों चीजें गुम होती हैं। इसी तरह उस वक्त जाम–ए इस्लामिया मे कलम–ए–तौहीद के नफ़्स की आमद व शुद है जो उनके जाहरी तौर पर इस्लाम की दलील है मगर इस्लामी रूह काम कुछ नहीं कर रही है और एहसासाते इस्लामी फना हो गए हैं हर एक को मालूम होगा कि जब किसी को ग़श आ जाता है तो उसके चेहरे पर छींटा दिया जाता है। जितनी गहरी बेहोशी हो उतना ही तेज छींटा दिया जायेगा इमाम हुसैन[अ0स0]

ने बस यही चाहा कि मुसलमानो के बेहोश एहसासात पर एक ऐसा तेज छींटा दे दें जिसके बाद वह फुरैरी लेकर आँख खोल दें और घबरा कर यह देखने लगे कि दुनिया में क्या हो रहा है? यह भी काबिले गौर अम्र था कि इस बेहोशी का सबब क्या है? यक़ीनन इसका सबब यह था कि वह जमाअत जो तालीमात इस्लामी को मिटा रही है अगर साफ साफ़ कोई गैर मुस्लिम जमाअत होती तो मुसलमान जल्दी से चौंक पड़ते लेकिन वह जमाअत जो उस वक़्त तालीमात इस्लाम को बर्बाद कर रही है अपने चेहर पर इस्मी व रस्मी (नाम व रसम) इस्लाम की नक़ाब डाले हुए थी और मुसलमानो की जमाअत में दाखिल थी इसलिए मुसलमान बेदार नहीं होते थे। हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] ने यह इरादा कर लिया कि अपनी मुकाबिल जमाअत के चेहरों से इस्लाम की इस नक़ाब को उतार कर फेंक दें और दुनिया को दिखला दें कि इस नक़ाब के पीछे कैसे लोग छुपे हुए हैं और यह कि उनको इस्लाम से हकीक़तन कोई तअल्लुक नहीं है। इस तरह एक तो मौजूदा मुसलमान उनसे बेजार हो जायेंगे और उनके खिलाफ इन्केलाब पैदा करने के लिए तैयार हो जायंगे। दूसर बाद मे मुसलमानो के लिए उनके अफआल (काम) सनद न रहेंगे जब मुसलमानों को उनके इस्लाम की सही तस्वीर मालूम हो जायगी तो मुसलमान धोखा खा कर उनके दाम (जाल) मे न फस सकेंगे नीज गैर मुस्लिम दुनिया के सामने इस्लाम की जानिब से सफाई पेश हो जाएगी। अगर बनी उमैया के औसाफ व अखलाक को इस्लाम के खिलाफ पेश किया जायेगा तो मुसलमानों की गर्दनें झुकेंगी नहीं बल्कि हुसैन बिन अली[अ0स0] का किरदार मुसलमानों के सर को बलन्द करेगा कि अगर यजीद के अफआल को इस्लाम से कोई तअल्लुक होता तो पैगम्बरे इस्लाम[स0अ0] का नवासा अपने को खतरे मे क्यों डाल देता। यही मकासिद वह थ जो तमाम व कमाल माददी जग से हासिल न हो सकते थ। माददी जग से जो फतह हासिल होती है उससे अफराद अशखास (लोग) कत्ल होते हैं मगर जेहनियत कत्ल नहीं होती सलतनतों मे इन्केलाब हो सकता है मगर अफरादे जामेआ के एहसासात में इन्केलाब नहीं होता हुसैन बिन अली[अ0स0] अशखास को कत्ल करने नहीं उठे थे यजीद को हलाक करना नहीं चाहते थे वह तो यजीदियत को कत्ल करना चाहते थे। हो सकता था कि यजीद ख़त्म हो जाता और उसके तमाम उम्माल (सरकारी अफसरान) और फौजी अफसर भी हलाक हो जाते फिर भी यह नहीं समझा जा सकता था कि यजीदियत खत्म हो गई और यजीदी मसलक फना हो गया जेहनियत दुनिया

की जब माऊफ (बेकार) थी तो अगर असकरी (फौजी) ताकत लेकर जंग करते तो जो उसकी वाक़ई हैसियत थी उसके समझने वाले बहुत कम होते और यह समझने वाले ज्यादा होते कि हुकूमत व सलतनत की गरज़ से दो बादशाहों की जंग है और सियासी हैसियत से यजीद का पल्ला गराँ (भारी) रहता इस लिए कि वह बादशाह तस्लीम किया जा चुका था। इस सूरत में अगर आपको फतह हासिल भी होती जो गुजिश्ता असबाब की बिना पर बज़ाहिर गैर मुमकिन थी तो उसका असर एक वक्ती इन्केलाबे सलतनत की सूरत से होता जिसका नतीजा देरपा (देर तक) न होता और बनी उमैय्या पर जो जाहरी इस्लाम का पर्दा था वह उसी तरह पड़ा रहता और अगर कुछ लोग हुसैन[अ0स0] को हक पर समझते भी होते तो फरीक महारिब (जंग के मद्दे मुकाबिल) को खता-ए-इज्तेहादी की सनद दे देते जैसा कि उससे पहले सिफ्फीन की जंग के मुतअल्लिक़ हो चुका था इस सूरत में बनी उमैय्या के बातनी (अन्दरूनी) हालात का इस दर्जा इन्केशाफ़ कि जो उनसे हमदर्दी का कोई गोशा इन्सानियत के दिल में बाक़ी न रखे हरगिज नहीं हो सकता था और जब तक उनसे नफरत इन्तेहाई दर्जे पर पैदा न होती उस वक्त तक इन इम्तियाजात व इक़दार की मुकम्मल शिकस्त नहीं हो सकती थी जिन्हें बनी उमैय्या ने अमली तौर पर क़ायम करना चाहा था

अगर इमाम हुसैन[अ0स0] ताकत के जरिये से यजीद की ताकत को शिकस्त देते तो फिर भी दुनिया इस चीज को न समझती कि हक्कानियत और हुकूमत दो अलग चीज़ें हैं हुसैन बिन अली[अ0स0] की फतह वैसी फ़तह समझी जाती जो बादशाहों की फ़तह होती है। यानी अगर आप यजीद को शिकस्त देकर सलतनत पर काबू हासिल कर लेते तो आपकी सलतनत को दुनिया सलतनत ही समझती इस्लाम की हकीकत न समझती। हालाँकि तारीखी हालात बतलाते हैं कि इस तरह की मुकम्मल फतह आप को कभी हासिल ही नहीं हो सकती थी। बड़ी से बड़ी माद्दी कामयाबी भी आपकी महदूद हैसियत रखती। यानी इस सूरत में कि जब कूफ़ें में हालात साजगार होते और सब लोग आपकी हुकूमत तस्लीम कर लेते तो ज्यादा से ज्यादा वही होता जो हजरत अली[अ0स0] को वक्त से मजबूर हो कर करना पड़ा था यानी इराक व हिजाज (आज का सऊदी) वगैरह की हुकूमत इमाम हुसैन[अ0स0] के पास और शाम की हुकूमत यजीद के पास होती दोनो तरफ की हुकूमतों में मुकाबला होता और मुसलमानो की ताकतें आपस मे लड़ कर पाश पाश (टुकड़े टुकड़े) होती रहतीं।

मगर इमाम हुसैन[अ०स०] ऐसी कामयाबी हासिल करना चाहते थे जो न बएतेबारे हुदूदे ममलिकत (महदूद) हो और न बएतबारे हुदूदे जमाना महदूद (न एक हुकूमत की हद तक महदूद और न एक जमाने की हद तकमहदूद)

मुमकिन है यह सवाल उठाया जाये कि हुसैन[अ०स०] के वाक़ेय–ए–शहादत के बाद भी तो बहुत से सलातीन (बादशाह) इन्ही अफ़आल के मुरतकिब होते रहे जिनका यजीद इरतेकाब (काम) करता था मगर याद रखना चाहिए कि हुसैनी मुक़ाविमत (उसूलों) ने इस्लाम के तमद्दुन और उसूल को इतना नुमायाँ कर दिया कि अब उसके खिलाफ जो अफ़आल होते हैं वह इन्फेरादी और शख्सी जराएम की हैसियत रखते हैं और उन्हे आईनी और मजहबी दर्जा नहीं हासिल होता यानी यह खतरा अब हमेशा के लिए दूर हो गया है कि उन्ही को इस्लाम का मुस्तकिल उसूल और तरीक़ मुआशिरत (समाज का हिस्सा) समझ लिया जाये क्योकि इमाम हुसैन[अ०स०] ने इस्लाम की आईनी अजमत का न मिटने वाला नक्श क़ायम कर दिया है।

गुजिश्ता बयानात से साफ जाहिर हो गया कि हुसैन इब्ने अली[अ०स०] के लिए अपने मकसद के हुसूल का सिर्फ एक ही ज़रिया था और वही जिसे उन्होंने इख्तियार किया और उसके सिवा कोई दूसरा जरिया न था।

आप उस रास्ते में मौत के इस्तेक़बाल पर हमेशा से तय्यार थे जो आपके अलफाज और मुखातिबात (खुतबों) से जाहिर था

चुनाँनचे मक्का से रवानगी के वक्त अपने खुतबे में आपने इरशाद किया कि "मौत इन्सान की गर्दन से उसी तरह वाबस्ता है जैसे गुलूबन्द जवान औरत की गर्दन से " बादियुन नजर (शुरू) में तो आप को इससे सिर्फ इतना जाहिर करना मकसूद था कि इन्सान के गले में मौत का फन्दा पड़ा हुआ है और बहरहाल इसको एक न एक दिन इस दारे फानी से रूख्सत होना है मगर आपने इस तल्ख हकीकत का कुछ ऐसे दिलकश अन्दाज से तजकिरा फरमाया है जिससे साफ महसूस होता है कि आप के नजदीक मौत कोई नागवार शै नहीं बल्कि हसीन व दीदा जेब चीज है। यह आम कायदा है कि इन्सान की जैसी ज़ेहनियत होती है। वैसे ही अलफ़ाज़ उसकी जबान पर आते हैं चूँकि हुसैन उस घराने के एक फर्द थे जिसके अफ़राद उमूमी हैसियत से मौत को कभी खातिर मे लाते ही नही थे और आपके पेशे नजर बका ए हक्कानियत का अहम तरीन मकसद भी था लिहाजा आपके तअस्सुरात इस बारे में बहुत ज्यादा कवी थे।

चुनाँनचे मक्के से रवानगी के बाद पहली ही मन्ज़िल पर जब आपकी फ़रज़दक शायर से मुलाक़ात हुई और उन्होंने कूफ़े की हालत आप से बयान की कि "लोगों के दिल तो आपकी तरफ़ ज़रूर हैं मगर तलवारें उनकी बनी उमैय्या के साथ होंगी" तो आप ने फ़रमाया "तुम सच कहते हो, लेकिन हर बात ख़ुदा के हाथ में है और वह जो चाहता है करता है और हर दिन वह एक निहायत नया करिश्मा क़ुदरत का दिखाता है ख़ुदा की तक़दीर अगर हमारी ख़्वाहिश के मुताबिक़ हुई तो हम ख़ुदा की हम्द करेंगे और अदाए शुक्र के लिए उसी से मदद के तालिब होंगे और कज़ाए इलाही हमारे सद्दे राह (रूकावट) हुई तो इन्सान के लिए यही क्या कम है कि उसकी नियत मे सच्चाई और उसके ज़मीर में पारसाई (पाकीज़गी) का ख़याल बाक़ी रहे। [1]

इराक़ के रास्ते में हुर के साथ जो आपकी गुफ़्तगू हुई थी वह भी आपके इसी मुस्तक़िल नज़रिये के मातहेत थी यानी यह कि हुर ने कहा कि मैं आपको ख़ुदा का वास्ता देता हूँ आप अपने ऊपर रहम करें इस लिए कि अगर आपने जंग की तो आप यक़ीनन क़त्ल कर दिये जायेंगे और आप तबाह होंगे। तो आप ने जवाब दिया कि तुम मुझे मौत से डराते हो? क्या तुम इससे ज़्यादा कुछ कर सकते हो कि मुझे क़त्ल कर डालो?

उसके बाद आपने क़बील ए औस के एक शायर का यह शेअर पढ़ा कि

س مصی وملبالموت عارعلی الفتی

اذا مںوی حق وجاحدمسلما

"मैं अपने इरादे पर क़ायम रहूँगा और मौत से दोचार होने में जवानमर्दी के लिए कोई आर व नंग नहीं है जबकि उसकी नियत में सच्चाई हो और वह राहे हक़ में जिहाद कर रहा हो"[2]

ब–ज़ाहिर अजीब चीज़ है इन्सानी निगाह में आख़िरी और इन्तेहाई अन्जाम क़त्ल होना है लेकिन हज़रत इमाम हुसैन[अ०स०] फ़रमाते हैं कि "क्या इससे ज़्यादा तुम कुछ कर सकते हो कि मुझे क़त्ल कर डालो।" यानी आप क़त्ल होने को एक दरमियानी मन्ज़िल क़रार देकर आख़िरी मेयार फ़तह व शिकस्त का कुछ और क़रार दे रहे हैं।

---

[1] इरशाद पेज / 228

[2] इरशाद पेज 236–237

"जुहसम" (इराक का शहर) ही के मकाम पर जब हुर का लश्कर इमाम[अ०स०] की मजाहेमत के लिए आचुका है तो हजरत ने अपने असहाब के सामने खुतबा इरशाद किया जिसमें हम्दो सनाए बारी के बाद फरमाया

"सूरते हाल जो पेश आई है वह तुम देख रहे हो और यक़ीनन दुनिया का रग बदल गया है और उसकी नेकी रूख़सत हो चुकी है और उसमें कुछ रह नहीं गया है सिवाए थोड़े हिस्से के जो पानी बहने के बाद बर्तन में बच रहता है और एक पस्त ज़िन्दगी मिस्ल ज़हरीली घास के क्या तुम नहीं देखते कि हक पर अमल नहीं होता और बातिल से अलाहदगी नही इख़्तियार की जाती इस सूरत मे मोमिन यकीनन खुदा की मुलाकात का आरज़ूमन्द होता है। मेरे नजदीक तो मौत की सूरत में शहादत की सी नेअ्मत है और जिन्दा रहना उन जालिमो के साथ वबाले जान है"[1]

इसी के साथ, आपने हुक्काम और अवाम के हुकूक व फराएज के हुदूद क़ायम कर दिये और बताया कि हुकूमत अवाम की जेहनी व अमली तरक्की और दीन के अहकाम नाफिज करने के लिए है और वह उस वक्त तक काबिल एहतेराम है जब तक अवाम की जिन्दगी को उससे फाएदा पहुँच रहा हो एक मौके पर आप ने हाकिम के औसाफ इन अल्फाज में बयान फरमाए "हाकिम के लिए जरूरी है कि इस्लामी दस्तूर पर चलता हो अदल व इन्साफ़ से पेश आता हो। हक का पाबन्द हो और रजाये इलाही में अपने नफ्स को मुकय्यद (बांधे) किये हुए हो।"[2]और जिस हुकूमत के खिलाफ आप एहतेजाज करते रहे उसके तर्जे अमल पर तबसेरा करते हुए कई बार इजहारे खयाल किया। हुर के लश्कर के सामने आपने फरमाया "रसूल अल्लाह[स०अ०] ने फरमाया है कि जो जालिम बादशाह को देखे कि वह अहदे खुदा और सुन्नते रसूल की मुखालिफ़त कर रहा है और बन्दगाने खुदा के साथ जुल्मो तअद्दी (सख्ती) से पेश आता है और वह कौल या फेअ्ल से उस जालिम को न रोके तो खुदा उसे भी उस चीरा दस्त (सरकश) बादशाह के जुमरे (साथ) मे शुमार करेगा। देखो मौजूदा हुकूमत शैतान की हलीफ़ (करीबी) बन गई है और खुदा की फरमाँ बरदारी से रूगर्दानी कर रही है फितना व फसाद बरपा कर रखा है और हुदूद व आईन (दस्तूर) को बेकार बना दिया है। मुल्क के सारे सरमाए (दौलत) को अपनी मिलकियत बना लिया है।"

---

[1]तबरी जि/6, पेज 229
[2]इरशाद पेज/210

उमरे साद के लश्कर से खिताब कर के फरमाया तुम देखते नहीं कि हुकूमत हक पर अमल नहीं कर रही है और बातिल से बाज नहीं आती यह वह वक्त है कि मोमिन को मौत की तमन्ना करना चाहिए। मैं तो इस माहौल मे मौत को अपने लिए आसूदगी और नेक बख्ती और जालिमो के साथ जिन्दगी को सरासर तकलीफ समझता हूँ "

शबे आशूर के खुतबे में आवान व अन्सार (मददगार दोस्त) को मुखातब करके फरमाया "मै बाइज्जत मर जाने को जिन्दगी समझता हूँ, और जिल्लत की जिन्दगी बसर करने को मौत खयाल करता हूँ "

करबला में रोजे आशूरा के खुतबे में आप ने फ़रमाया "खुदा की क़सम मैं जिल्लत के साथ अपने को तुम्हारे कब्जे में न दूँगा और न गुलामों की तरह तुम्हारे सामने से भागूँगा।" यह था बहादुरी और जाँबाजी की मौत का ऐलान।

फिर इरशाद फ़रमाया

"मैं पनाह मागता हूँ ऐसे हर शख्स से जो नुखूवत (घमण्ड) व गुरूर रखता हो और रोजे कयामत पर ईमान न रखता हो [1] मौत इज्जत के साथ बेहतर है उस जिन्दगी से जो जिल्लत के साथ हो " पहले फिकरे में जब्बारो सरकश यजीद के जबरूते सलतनत की तहकीर (जलील) है और दूसरे फिकरे मे इसकी तशरीह है। इसकी तशरीह है कि माद्दी (जाहरी) ताकत के आगे बलन्द मकासिद के खिलाफ सर झुका देना इज्जते इन्सानी के खिलाफ है और उस जिन्दगी से जो इस तरह हो मौत बेहतर है।

[1] इरशाद पेज/248

सत्तरहवाँ बाब

हरमे रसूल[स०अ०] से सफ़र और हरमे ख़ुदा मे पनाह

वलीद से गुफ्तगू के बाद वह वक्त आ गया कि जब इमाम ने मदीने को तर्क करना (छोडना) ही अपने लिए जरूरी समझा।

यह खयाल करना कि आप मदीने ही में कयाम फरमाते तो मदीने वाले आपकी हिफाजत में कोई दकीक़ा (कमी) उठा न रखते, तारीख़ के मुसलसल वाकेयात से बेख़बरी या उनके नताएज से ग़फ़लत का मुज़ाहरा होगा।

वफाते रसूले ख़ुदा[स०अ०] के बाद ही से मदीने पर कुछ ऐसे असरात छाये हुए नजर आते हैं जिनकी बिना पर यह तवक्कुआत गलत साबित होते हैं।

आखिर यह मदीना ही तो था जहाँ वफाते रसूले ख़ुदा[स०अ०] के बाद ही हजरत फातिमा जहरा पर मसाएब की यूरिश थी मगर अहले मदीना की तरफ से उनके साथ हमदर्दी का कोई मुजाहरा कहीं तारीख़ में नजर नहीं आता।

फिर वह मदीना ही था जहाँ हजरत अली[अ०स०] ने गूनागूँ (तरह तरह की) दिल शिकन हालात में पच्चीस बरस तक मुकाबला किया मगर अहले मदीना ने उनके साथ किसी भी मुहब्बत व गम ख्वारी का सुबूत नहीं दिया

उसके बाद उसी मदीने मे वह मौक़ा आँखो के सामने आया कि हजरत इमाम हसन[अ०स०] के जनाजे को रौज-ए-रसूल[स०अ०] पर ले जाने में मज़ाहमत की गई मगर मदीने के लोगों ने जर्रा भर भी उस पर एहतेजाज नहीं किया। क्या यह वाकेया ऐसा अहम न था कि मदीने के जिस्म में अगर रूह होती तो उसमें हरकत पैदा होती और किसी किस्म के एहसास का मुजाहरा किया जाता।?

यह तो करबला के पहले के कुछ नमूने हैं और खुद सन 61 हिजरी में हैरत अगेज मगर नाकाबिले इन्कार सूरत से अहले मदीना की खानदाने रसूल[स०अ०] के बारे में बेहिसी का सुबूत यह है कि हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] जब शहीद हो गए और आपके दर्दनाक मसाएब व मजालिम का बतफसील एहले मदीना को हाल मालूम हो गया तब भी अहले मदीना ने खूने हुसैन[अ०स०] के

इन्तेकाम के लिए किसी बेचैनी का मुजाहरा नही किया और बावजूदेकि इराक में तलातुम हो रहा था हिजाज इस बारे में बिल्कुल खामोश था।

वह तो इमाम हुसैन[अ०स०] की कुर्बानी का तबई (Natural) असर था कि यजीद की बद आमालियों पर निगाहें मुतवज्जेह हो गई और फिर दूसरे साल यजीद के अफआल व आमाल के तफसीली हालात मालूम होने के बाद उन्होंने एलाने मुखालिफत कर दिया जिसके नतीजे में वाकेय ए हर्रा जुहूर पजीर (अमल में आया) हुआ जिसकी इजमाली तफसील अपने महल पर बाद को आयेगी मगर खुद कत्ले हुसैन[अ०स०] का जुर्म उनको इतना अहम मालूम न हुआ कि वह इसकी बिना पर यजीद के मुकाबले के लिए खडे हो जाते।

फिर उसके बाद वाकेआत का एक तवील सिलसिला है जिस में सादाते बनी फातिमा पर बनी उमैया के आखिरी दम तक और फिर बनी अब्बास के दौरे हुकूमत मे कैसे कैसे हौलनाक मजालिम होते रहे मगर अहले मदीना ने कभी उनकी कोई इमदाद नही की। हजरत इमाम जैनुल आबेदीन[अ०स०] से लेकर इमाम अली नकी[अ०स०] तक तमाम वह मुकद्दस हस्तियाँ जो अपने वक्त में खानदाने रसूल[स०अ०] की चश्मो चराग और तालीमाते इस्लाम की मुहाफिज थीं अपने अपने इब्तेदाई दौरे हयात में इसी मदीने में मुकीम थीं फिर यहीं किसी को जहर दिया गया किसी को मुकय्यद कर के जिला वतन किया गया किसी को बजब्र मदीने से बुलाया गया मगर क्या कभी मदीने ने उनकी हिफाजत की कोशिश तो दरकिनार उस पर उफ भी की? कभी नहीं।

क्या इन मा कब्ल (पहले के) और बाद के वाकेआत को पेशे नजर रखने के बाद फिर यह तसव्वुर सही होगा कि इमाम हुसैन[अ०स०] मदीने मे कयाम फरमाते तो मदीने वाले आपकी हिफाजत मे जान लड़ा देते? हरगिज नहीं

आम तौर से अहले जिहाज (सऊदी) के मुतअल्लिक दानिश्मन्दाना अरब की राय यही थी कि वह मुशकिलात में साबित कदम बहुत कम रह सकते हैं। चुनानचे जब मुआविया ने इब्ने अलकवा से मुखतलिफ अरब ममालिक के मुतअल्लिक राये दरयाफ्त की और उसमे अहले हिजाज के मुतअल्लिक पुछा तो उसने कहा "फितना अगेजी (झगडा) में सब से आगे मगर उसके नताएज के बरदाश्त करने मे बहुत कमजोर और मुहिम्मात के सर करने में (तहरीक को कामयाब बनाने में)नाकारा।[1]

[1]किताबुल बुलदान पेज/125

इस सूरत में हालात और बाद के वाकेआत बतलाते हैं कि अगर इमाम हुसैन[अ०स०] आकिबत अन्देशी (अन्जाम से बाखबर) कर के मदीन ए रसूल को खाली न कर देते तो मरवान जिस ने वलीद को कत्ले हुसैन[अ०स०] का मशवरा दिया था और वलीद के इस मशवरे पर अमल न करने से सख्त बरहम हुआ था वही वलीद के मुलाएम तर्जे अमल की इत्तेला यजीद को देता और उस वक्त यजीद का इताब नामा वलीद के पास आता तो या तो खुद वलीद ही को फिर उमरे सअ्द की तरह बावजूद अपने ज़मीर की मुख़ालिफत के माल व जाहे दुनिया की तमा (लालच) और सितवते (सख्ती) हुकूमत के खौफ से हुसैन[अ०स०] के खिलाफ इकदाम करना पड़ता या कूफ़े के नोमान बिन बशीर की तरह उसको माज़ूल करके मरवान बिनुल हकम या उसी के मिस्ल किसी दूसरे सफ्फाक और सख्त तरीन दुश्मने अहलबैत[अ०स०] को मदीने का हाकिम मुकर्रर किया जाता और फरजन्दे रसूल[स०अ०] के खून से मदीन ए रसूल की जमीन को गुलरंग बना दिया जाता

यह खतरा बिल्कुल यकीनी था और उसने फेअ्ली (practicaly) हैसियत इख्तियार कर ली थी। उस खत से जो वलीद ने यजीद के नाम लिखा जिसका मजमून यह था कि "खलीफतुल मुसलिमीन यजीद की खिदमत में वलीद बिन अतबा की जानिब से गुजारिश है कि इमाम हुसैन बिन अली[अ०स०] आपकी खिलाफ़त को तस्लीम नहीं करते और न वह आपकी बैयत पर तैयार हैं। अब आपकी जो राय हो।" इसके जवाब मे यजीद ने लिखा कि 'इस मेरे खत की तामील जल्द करना कि तमाम उन मुमताज (खास) अफराद की जिन्हो ने मेरी बैयत कर ली है और जिन्हो ने बैयत नहीं की है मुकम्मल फेहरिस्त जल्द भेजो। लेकिन इस जवाब के साथ हुसैन बिन अली[अ०स०] का सर मौजूद हो।' इस हुक्म की गर्मी के मुकाबले में वलीद कहाँ ठहर सकता था? वह तो इत्तेफाक़ से उस खत के आने से पहले ही हजरत हुसैन[अ०स०] मदीने से रवाना हो चुके थे इस लिए वलीद तामीले हुक्म से मजबूर रहा। मगर उसके बाद भी वलीद मातूब (सजा पाने से) होने से नही बचा और माहे रमजान में उसे माजूल (हटा) करके अम्र बिन सईद ही को जो अभी तक हाकिमे मक्का था मदीने का भी हाकिम मुकर्रर कर दिया गया।[1]

फिर अगर हजरत हुसैन[अ०स०] मदीने में शहीद होते तो क्या आपकी शहादत इसी नुमायाँ हैसियत के साथ होती जिस तरह करबला जा कर हुई?

---

[1] तबरी जि / 5, पेज / 191

सियासते हुकूमत का यह तकाजा हरगिज न होता बल्कि उसे तरह तरह के लिबास पहनाये जाते या तो इमाम हसन^अ०स० की शहादत की तरह कोई 'जोअदा बिन्ते अशअस'' फराहम की जाती या हजरत अली^अ०स० की तरह कोई 'इब्ने मुलजिम'' की तरह का खार्जी (गुमराह) जिसके बाद भी हुकूमते दमिश्क का दामन इस इलजाम से बरी ही साबित किया जाता। इस सूरत में हुसैन^अ०स० वाकई कत्ल होते यानी वह दुनिया से जाते भी और सल्तनते दमिश्क के चेहरे पर इस्लाम व इन्सानियत की नकाब फिर भी पड़ी रहती

हजरत इमाम हुसैन^अ०स० इसके लिए हरगिज़ तैयार न थे। तदब्बुर का इक्तेजा (समझदारी का तक़ाजा) था कि मदीने में कयाम उसी वक्त किया जाता जब मदीने में कयाम मुमकिन हो और जब बैयत नही करना थी तो अपने उसूल, अपने मकसद और अपनी कुर्बानी को उसी उफुक (बलन्दी) पर ले जा कर पेश करना चाहिए था जिस पर आप करबला के मैदान में उन्हें ले जा सके। बेशक यह सफर कोई मामूली सफ़र न था वह करबला की मन्जिल का पहला मरहला या आखिरत के सफर का पहला कदम था इस लिए वह रात हजरत इमाम हुसैन^अ०स० ने पूरी जाग कर बसर की और उसे अपने नाना (हजरत रसूले खुदा) माँ (हजरत फातिमा जहरा^स०अ० और भाई (हजरत हसने मुजतबा) के मुकद्दस मजारात से रूख्सत होने मे सर्फ किया।

रात खत्म न हुई थी कि आप मदीने से रवाना हो गए। मदीने की सुबह आज बे रौनक थी। इस लिए कि हकीकी आफताब उसकी आँखों से ओझल हो चुका था और रसूल की कब्र बेचिराग थी इस लिए कि रसूल^स०अ० का नूर दीदा आज सहराए गुरबत में गामजन था।

सन 61 हि० माहे रजब की अठ्ठाईस तारीख इतवार की रात थी जब इमाम हुसैन^अ०स० मदीने से रवाना हुए। उस वक्त आपकी जबान पर कुरआन की यह आयत थी।[2] ' فخرج منها خائفا يترقب قال رب نجني من القوم الظالمين '
इस आयत में हजरत मूसा^अ०स० का जिक्र है उस वक्त का जब वह फिरऔन के जुल्म व तशद्दुद से बेजार हो कर मिस्र से बाहर निकले हैं। रवानगी के बाद इमाम हुसैन^अ०स० शाहराहे आम से मक्के की तरफ रवाना हुए। हलाँकि इब्ने जुबैर इसके पहले शाहराहे आम को छोड़ कर गैर मारूफ रास्तों से मक्के की तरफ रवाना हो चुके थे यही मशवरा आपको भी दिया गया मगर आप अपनी

---

[1] तबरी जि/6, पेज/190 व 215. इरशाद पेज/207
[2] तबरी जि/6, पेज/191 126

मदीने से रवानगी को फरार की हैसियत देने पर तैयार नहीं थे। आप ने उस मशवरे पर अमल करने से इन्कार कर दिया और कहा कि नहीं मैं तो उसी रास्ते से जाऊँगा। फिर खुदा को जो मन्जूर हो।[1]

आप ने अपने दादा अबू तालिब[अ०स०] की तमाम औलाद को अपने साथ लिया जिन में आपकी दो बहने हजरत जैनब और उम्मे कुलसूम भी थी। इसके अलावा सब भाई भतीजे और मुतअल्लिक़ीन आपके साथ थे सिवा मुहम्मद बिन हनफिया के [2]जो किसी मजबूरी या मसलहत से मदीने में छोड़ दिये गए और उम्मे हानी बिन्ते अबू तालिब पीराना साली (बुढ़ापे) की वजह से न जा सकी थीं। पस उनके अलावा औलादे अबू तालिब में से कोई भी हुसैन[अ०स०] से जुदा नहीं हुआ और एक तारीखी हकीकत है कि हुसैन[अ०स०] के साथ बनी हाशिम में से सिवा औलाद अबू तालिब के किसी और सिलसिले का एक शख्स भी मैदाने करबला में नजर नहीं आता

इस तर्जे अमल से भी कि आप ने सिर्फ अपने घर वालों को साथ लिया। साफ नुमायाँ था कि आप जंग के इरादे से रवाना नही हो रहे हैं। मदीने से बाहर निकलने के बाद इमाम हुसैन[अ०स०] ने मक्क-ए मुअज्जिमा की तरफ रूख किया। इस लिए कि मक्के में अरब के कदीम रिवायात और नीज इस्लाम के मख़सूस तालीमात की बिना पर किसी जानवर तक का कत्ल बल्कि घास तक का भी उखाड़ना जाएज नहीं [3]इमाम हुसैन[अ०स०] ने यहाँ पहुंच कर अपने को जाहरी तौर से एक महफूज आगोश की पनाह में डाल दिया और यहाँ रह कर आप खामोशी की जिन्दगी गुजारने लगे न उमूरे सलतनत से गरज और न मुहम्माते मुल्की (मुल्क के कामों) से कोई तअल्लुक। आप ने मक्का पहुँच कर भी न कहीं खुतूत व रसाएल रवाना किये और न मुखतलिफ अतराफ व जवानिब (आस पास) के लोगों को अपनी नुसरत की तरफ दावत दी। यह भी आप के मकसद के तऐयुन के लिए आपके किरदार का एक अहम जुज है। आप का मक्के में वुरूद (दाख़िल) शबे जुमा 3/शाबान सन 60 हिजरी को हुआ।[4]उस वक्त आपकी जबान पर कुरआन की यह आयत थी।[5]

---

[1]तबरी जि 6 पेज/196

[2]अख़बारूत तुवाल पेज230, तबरी जि 6, पेज 190

[3]सही बुखारी जि/2, पेज/40, सही मुस्लिम जि/1 पेज/438–439

[4]तबरी जि/6 पेज/218, इरशाद पेज/208

[5]तबरी जि/6 पेज/220

'وَلَمَّا تَوَجَّهَ تِلْقَاءَ مَدْيَنَ قَالَ عَسَىٰ رَبِّي أَن يَهْدِيَنِي سَوَاءَ السَّبِيلِ'' यह भी हजरत मूसा[अ0स0] के वाक़ेये से मुतअल्लिक़ है जब उन्होंने मदायन (इराक का शहर) में पनाह ली थी।

आप ने मक्के में पहुँच कर शेअ्बे अली मे कयाम किया। अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर आपसे दो एक दिन पहले पहुच चुके थे। उनके मक्के मे अचानक पहुँचने के साथ लोग उनके गिर्द जमा हो गए थे और उन्हें एक मरकजियत सी हासिल हो गई थी लेकिन जब हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] के मक्का मे पहुँचने के साथ लोगों ने अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर को छोड़ दिया और अब वह हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] के गिर्दो पेश रहने लगे इस बात से अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर को यकगूने नागवारी पैदा हुई और उन्हें अन्दाजा हो गया कि हुसैन[अ0स0] की मौजूदगी मे उनका कोई असर कायम नहीं हो सकता। मसलहते वक्त की बिना पर वह भी सुबह व शाम दोनो वक्त इमाम हुसैन[अ0स0] के पास आने जाने लगे।[1]

जब मुआविया की वफ़ात हुई है तो मदीने मे वलीद बिन अतबा बिन अबी सुफ़ियान की हुकूमत थी और मक्के में यहिया बिन हकीम बिन सफ़्वान बिन उमय्या और कूफ़े में नोअ्मान बिन बशीर अन्सारी और बसरा में उबैदुल्लाह बिन जियादा गवर्नर था

मालूम होता है कि हुकूमते दमिश्क को यहिया बिन हकीम पर इतमिनान न था चुनाँचे हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] के मक्के में पहुँचने के बाद यहिया बिन हकीम को माजूल (हटा) किया गया और अम्र बिन सईद बिन आस बिन उमय्या को गुवर्नर मुकर्रर किया गया[2] फिर जब वलीद के तर्जे अमल की इत्तेला और शायद मरवान की तरफ से रिपोर्ट यजीद को पहुँची तो वलीद के बजाए भी उसी अम्र बिन सईद को मुक़र्रर किया गया मगर यह बाद की बात है। बाद में यह भी जाहिर होगा कि कूफ़े की गवर्नर की पॉलीसी भी हुकूमते दमिश्क को नागवार साबित हुई और वहाँ भी तब्दीली की जरूरत पेश आई। उसकी वजह सिर्फ यह थी कि इमाम हुसैन[अ0स0] के मुआमिले में यजीद का तर्जे अमल इतना गैर मुन्सिफाना और जारिहाना था कि उसे अपने मक्सद की तकमील के लिए आदमी न मिलते थे और खुद उसके गवर्नर उसके अहकाम की तामील (हुक्म पर अमल) उसकी ख्वाहिश के मुताबिक़ न कर सकते थे।

---

1 अख़बारुत्तवाल पेज / 230
2 अख़बारुत्तवाल पेज / 230

सूरते हाल से जाहिर है कि उम्माले हुकूमत (सरकारी मुलाजिम) मे से जो भी हुसैन[अ०स०] के साथ ज़रा मराआत (नर्मी) बरतने का रूजहान जाहिर करता था वह फौरन हटा दिया जाता था तलाश थी ऐसे लोगों की जो अहलेबैते रसूल[स०अ०] के साथ किसी मराआत (नर्मी) की जगह अपने दिल में न रखते हों। उसके बाद भी क्या कहा जा सकता है कि हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ जो कुछ भी तशद्दुद हुआ उसकी जिम्मेदारी यजीद पर नहीं बल्कि उम्माले हुकूमत पर थी?

उस वक्त इमाम हुसैन[अ०स०] का मक्क–ए–मुअज्जिमा में कयाम एक पनाहगर्जी (Refugee) की हैसियत से था और यही मशवरा था जो आपको मदीने की रवानगी के वक्त आपके भाई मुहम्मदे हनफिया ने दिया था जिसे आपने पसन्द किया था। मक्के में हालात के नासाजगार होने की सूरत में क्या होगा? उस के मुतअल्लिक मुहम्मद बिन हनफिया की राय यह थी कि अगर वहाँ के हालात आपके मुवाफिक न हों तो आप निकल जाईयेगा, रेगिस्तानी सहराओं में और पहाड़ो के दामनों मे, और एक शहर से दूसरे शहर में मुन्तकिल होते रहियेगा। यहाँ तक कि लोगों के हालात का आख़िरी नतीजा सामने आये और उस वक्त कोई कतई राय कायम कीजिये।[1]

आपका कयाम मक्के में जाहरी तौर पर मुस्तकिल हैसियत रखता था और कोई खास मकसद आपके पेश नजर नहीं था। सिवा एक पुर अमन जिन्दगी के जिसे 'जियो और जीने दो' ही के लफ्जों में अदा किया जा सकता है यहाँ आप ने न तो अपनी मुवाफिकत मे कोई अस्करी (फौजी) ताकत फराहम की, और न जमहूर (Public) को यजीद के खिलाफ मुश्तइल किया। तकरीर और तहरीर किसी हैसियत से भी ऐसी कोई कोशिश साबित नहीं की जा सकती।

[1]इरशाद पेज/207-208, तबरी जि/6, पेज/161

अट्ठारहवाँ बाब

दावते अहले कूफ़ा और सिफ़ारते मुस्लिम बिन अक़ील

कूफ़े की दागबेल फुरात और हीरा के बीच में उस वक्त हुई जब सन 14 हिजरी से सन 16 हिजरी तक कादसिया और दूसरे महाजों पर ईरानियो के मुकाबले मे फुतूहात के बाद[1] मुसलमानों की फ़ौज ने इराक़ मे सुकूनत इख्तियार की और मदाएन की आबो हवा उनको रास न आई और सईद बिन अबी विक़ास की हिदायत के मातहत यह जगह तलाश की गई और यहाँ मस्जिद और मुसलमानों के कयाम के लिए मकानात की बुनियाद डाली गई।[2]

सन 17 हिजरी में सअ्द बिन अबी विकास अपनी फौज के साथ मदाएन में मुन्तकिल हुए और इस जगह आकर मुकीम हुए।

कूफ़ा, अरबी जबान मे उस जगह को कहते हैं जहाँ सगरेजे और रेग (बालू) मखलूत (मिली) हों। चूँकि यह जगह इसी किस्म की थी। इस लिए इसका नाम कूफ़ा हुआ।[3]

दूसरी तरफ़ समन्दर के किनारे उस जमीन पर जो "अरज़ुल हिन्द" (हिन्द की जमीन) कहलाती थी एक दूसरे शहर की बिना (बुनियाद) कायम की गई जिस का नाम बसरा हुआ और इस तरह इराक के उन दोनो शहरो कूफ़ा और बसरा की आबादी बिल्कुल एक साथ शुरू हुई।[4]

इब्तिदाअन सलीटों के मकान बनाये गए और छप्पर डाले गए। फिर उसी साल दोनो जगह आतिश जदगी वाके हुई(आग लग गई)। जिस में यह मकानात जल गए। तो ईंटों के मकानात की तामीर हुई।[5]

---

[1] जि/4 पेज/148

[2] तबरी जि/4, पेज/142

[3] तबरी जि/4. पेज/189

[4] तबरी जि/4, पेज/149

[5] तबरी जि/4. पेज/1191

कूफे की आबादी उसी वक्त से कि जब वह आबाद किया गया एक लाख फौजियों की थी।[1]

जब जनाबे अमीर[अ०स०] तख्ते खिलाफत पर मुतमक्किन (बैठे) हुए और तलहा व जुबैर (आएशा के भानजे) ने आयशा को साथ लेकर आपके खिलाफ फौज कशी की तो उन्होंने अपनी सरगरमियो का मरकज इराक को करार दिया इस लिए हजरत अमीर[अ०स०] को उनके तदारूक के लिए इराक आना पड़ा और जंगे जमल वाक़ हुई। इस मुकाबले मे बसरा वालों ने तलहा और जुबैर का साथ दिया था और कूफे के लोग हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के साथ रहे। उसके बाद हजरत अली[अ०स०] ने उसी को अपना पाय-ए-तख्त (राजधानी) रखा।

बारह रजब सन 36 हिजरी का पहला वह दिन था जब आप कूफे में तशरीफ़ लाये। लोगों ने कहा कि कस्र में क़याम फरमाईये जहाँ अब तक हाकिम कयाम किया करते थे आप ने उसे नापसन्द किया और मकामे "रहबा" के एक मकान में सुकूनत इख्तियार फ़रमाई[2]

उसके बाद ज्यादा तर अहले कूफा ही थे जिन्हों ने आपके साथ सिफ्फीन और नहरवान में भी मुखालिफ़ीन का मुकाबला किया इसी लिए वह शिया ए अली' कहलाये। हालाँकि मजहबी तौर पर उन में से अक्सर इस मानी में शिया न थे कि वह हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] को खलीफ़ ए बिला फस्ल जानते हों और आप के कब्ल दूसरे खुलफा को तस्लीम न करते हों। मगर 'शिया-ए-बनी उमय्या' के मुकाबले में वह अपने को शिय-ए-अली कहना फख्र समझते थे।

यह वह वक्त था कि कूफा ऐसे शिअ्याने अहलेबैत से छलक रहा था लेकिन उधर मुआविया का ममालिके इस्लामिया पर तसल्लुत हुआ और कूफे पर जियाद बिन अबीह की हुकूमत हुई। इधर अहले कूफा पर मजालिम के पहाड़ टूट पड़े और इराक की जमीन उनके लिए तंग हो गई जो लोग मुहिब्बे अली[अ०स०] समझे जा सकते थे उनका हर नफ्स आइन्दा आने वाले खतरात की पेशिनगोई करता और हर दक़ीका व सानिया (हर घड़ी) अपने आखिरी होने का पैगाम देता था।

---

[1] तबरी जि/4. पेज/162

[2] अख्बारूत तुवाल. पेज/154

यह सूरते हाल दो एक माह, दो एक साल नहीं बल्कि बीस साल तक क़ायम रही। इस सूरत में नामुमकिन था कि कूफ़े के अन्दर शिय ए–अली के लिए कोई नुमायाँ हैसियत हासिल रहती बल्कि मारे जाने सूली पाने और जिला वतन होने के बाद जो बचे खुचे थोडे से अशखास मौजूद थे वह गोशों के अन्दर और पर्दों के पीछे जिन्दगी बसर करने पर मजबूर थे और दोस्ती-ए–अहलेबैत का नाम भी जबान पर लाना उनके इस्तेहकाके कत्ल (यानी कत्ल किये जाने) की दस्तावेज़ खयाल किया जाता था और इस शिकन्जे के अन्दर शिइय्यत (शियों) एक मख़सूस कलीलुत तादाद (कम) जमाअत में मख़्फ़ी (छुपी हुई) हैसियत से मुकय्यद थी और वह जमाअत इराक़ व हिजाज (सऊदी) वगैरह के मुखतलिफ शहरों में गुमनामी की जिन्दगी बसर कर रही थी। रूउस ए अशायर (कबीले के रईस) और शुयूखे कबाएल(सरदार) जिम्मेदार व बा एतेबार अशखास सब हुकूमते वक्त के साख्ता व परदाख्ता (वफादार) थे। रह गई आम खिलकत जिस पर इन्केलाबात का दारोमदार होता है वह बिला इस्तेसना (बगैर फर्क के) हर मुल्क में "हर कसे सिक्का जनद खुतबा बनामश ख्वानन्द" के मुताबिक हवा के रूख पर उडने वाली और जमाने के गैर मामूली हवादिस से तेजी के साथ रंग बदलने वाली हुआ करती है। उन में एक ऐसा अचानक वाकेया जिस में जोश पैदा करने की सलाहियत हो वह इन्क़ेलाब पैदा कर सकता है। जो बरसों की दावते तबलीग पैदा नहीं करती। उसके नमूने हुकूमतों के तगैय्युर व तबद्दुल (बदलना) और सलातीन (बादशाहों) के अजल (बेकार) व नसब (बुत) की सूरत में हमेशा नजर से गुज़रते रहते हैं और वह अक्सर उसी किस्म की नागहानी सूरतों का नतीजा होते हैं।

बेशक बीस साल तक सूरते हाल एक तरह रहने का सबब यह था कि उस मुद्दत में कोई ताजा हादिसा रूनुमा नहीं हुआ जो रूजहानाते तबई से टकरा कर उनको सैलाब की तरह किसी खास तरफ मुतवज्जेह कर सके

सन 60 हिजरी के रजब का महीना था जब मुआविया ने इन्तेकाल किया और उनका नामजद कर्दा जानशीन उनका बेटा यजीद हुआ। ऐसे ही मवाके वह होते हैं जो पुरसुकून फिजा में तमुव्वुज (हलचल) और मुतमइन सतह में तलातुम (शोर) पैदा कर देते हैं। फ़ितरतन हर शख़्स साबिक फ़रमाँरवा के बाद अपने जदीद वालि–ए–सलतनत के मालिक की साबिका ज़िन्दगी और उसके अखलाक व आदात और ज़ाती खुसूसियात के मुतअल्लिक मालूमात हासिल

करने मे लज्जत महसूस करता है और बयक वक्त मुखतलिफ़ हल्को में यही चर्चे शुरू हो जाते हैं।

यजीद के अख़लाक़ व आदात उसकी मय नोशी (शराब पीना) और शहवत रानी (सक्सी मिजाज) उसकी तिफलाना जवानी (बचपन भरी) और लहव लाअ़ब (नाच गाने) में सरगर्मी अहकामे शरीया से आजादी और नफसानी ख्वाहिशां की परस्तारी ऐसी न थी जो मखफी (छुपी हुई) हैसियत रखती हो।

जानने वालों को याद आ गया और अन्जाम का नक्शा आँखों में फिरने लगा और न जानने वालो को पूछ गछ मे मालूम हो गया कि हमारा होने वाला खलीफा व मालिके सलतनत इन सिफात व आदात का शख्स है

इसका नतीजा यह था कि बिला तख्सीस (फर्क़) फिरका व मजहब एक आम बेचैनी, इज्तेराब और नफरत व बेजारी खल्के खुदा में फैल गई और उसी के साथ आँखें गर्दिश करने लगीं कि कौन है जो इस सख़्त वक्त पर काम आये और वक्त की जिम्मेदारियां को अपने कॉधे पर उठा कर मिल्लते इस्लामिया को इस बदकिरदार ख़लीफा से छुटकारा दिलाये

इसी के साथ यह खबरें भी मुशतहर (फैल) हुई कि हुसैन बिन अली[अ0स0] ने यजीद की खिलाफत तस्लीम करने से इन्कार कर दिया है। और वह इसी लिए मदीने से हिजरत करके मक्क ए मुअज्जिमा आ गए हैं और यह तय कर लिया है कि जो कुछ भी हो यजीद की बैयत न करेंगे उस वक्त दोस्ताने अली[अ0स0] की उस कलील जमाअत को जो बीस बरस की तवील मुद्दत तक तरह तरह के सब्र आज़मा मसाएब बर्दाश्त करते करते आजिज़ आ चुकी थी और हर आन हजरते अहदियत की जानिब से कशाइश (सखतियां से निजात) की मुन्तजिर थी अपनी मायूसियों की मुद्दत से छाई हुई तारीक घटा में उम्मीद की शुआयें नजर आने लगी और उनके जमीर ने आवाज दी कि इस मौके से बेहतर कोई मौका न मिलेगा और इस वक्त का सुकूत (खामोशी) खुद कुशी का मुरादिफ (बराबर) होगा।

यह सोच कर वह सब सुलैमान बिन सुरदे खेज़ाई सहाबिये रसूल[स0अ0] के घर में मुजतमा (जमा) हुए। सिन रसीदा और तजुर्बेकार सुलैमान ने जो पैगम्बरे खुदा की ऑखें देखे हुए और हजरत अली बिन अबी तालिब[अ0स0] के साथ मारके झेले हुए थे मजमे को इन अलफाज में मुखातब किया

"आपको मालूम होना चाहिए कि मुआविया का इन्तेकाल हुआ और इमाम हुसैन[अ0स0] ने यजीद की बैयत से इन्कार किया है और वह मक्क ए मुअज्जिमा

चले गए हैं। आप लोग उनके और उनके पिदरे बुज़ुर्गवार के शिया हैं अगर आप इस बात का यकीन रखते हैं कि उनकी नुसरत व मदद मे और उनके दुश्मनों से जंग मे कोताही न होगी तो बिस्मिल्लाह उनको ख़त लिखये और अगर सुस्ती और कमजोरी का अन्देशा हो तो बराए खुदा एक शख़्स को फरेब देकर उसकी जान को खतरे में न डालिये "[1]

अलफ़ाज से जाहिर है कि सुलैमान एक मुकर्रिर की तरह गरजते बरसते अलफाज से वक्ती जोश को उभार कर अपने मकसद को हासिल करना नहीं चाह रहे हैं बल्कि वह खुद मजमे से उसके मौजूदा जोशो वलवले की आखिरी थाह और मौक़–ए–इकदाम (मौक़ पर कारवाई) पर उसकी इन्तेहाई कारफरमाई का जाएजा लेना और उसी के साथ उनको मौके की नज़ाकत और आइन्दा के खतरात का अन्दाजा करा देना चाहते हैं। मगर यह अम्र फित्री (नेचुरल बात) है कि जज़बात की तुगयानी (बहाव) में इन्सान को अपनी ताकत का अन्दाजा मुशकिल से होता है और वह अक्सर अवाकिब की फिक्र और सख्त मवाके पर अपने सिबात व इस्तेक़लाल (साबित कदमी) की तशख़ीस (जांचन) मे गलती कर जाता है। मजमे के अन्दर उनके बढते हुए जोश में सुलैमान के अल्फाज ने वह काम किया जो पानी का छींटा भडकते हुए आग के शोलो में एक मर्तबा सब बोल उठे, नहीं नहीं हम यकीनन उनके दुश्मनों से जंग करेंगे और अपने को हजरत के कदमों पर निसार कर देंगे।[2]

यह जीमयत कितनी थी? इसका अन्दाजा इस से हो सकता है कि वह किसी मैदान या आली शान कस्र के वसीअ् सहेन में नहीं बल्कि अरबी साख्त के मुखतसर मकानात में से जिनके नमूने आज तक अरबिस्तान में नजर आते हैं एक मकान यानी सुलैमान बिन सुर्द के घर में मुजतमा (जमा) हो गई थी। फिर उन मे भी यह यक़ीन नहीं किया जा सकता कि वह सब सच्चे और रासिखुल (मजबूत) अकीदा हजरत अली[अ०स०] को वसी–ए–रसूल[स०अ०] और इमामे बरहक समझने वाले शिया ही थे।

मजकूर–ए–बाला (ऊपर बयान किए हुए) सवाल व जवाब के अलफ़ाज में बेशक सच्चाई का जौहर नजर आ रहा है और वह यकीनन बोलने वालो के बातनी जमायर (जमीरो) की मुखलिसाना तरजुमानी कर रहे हैं। लेकिन उन में

---

[1]तबरी जि/6, पेज/197 इरशाद पेज/208
[2]तबरी जि 6, पेज/197

से हर शख्स आने वाले नागहानी इन्केलाबात का कहाँ तक मुकाबला कर सकेगा? इसका फैसला मुस्तक्बिल ही के हाथ है

सुलैमान बिन सुरद की हुज्जत तमाम हो चुकी थी। चुनाँनचे इमाम हुसैन अ0 के नाम बाई उनवान लिखा गया।

"यह खत है हुसैन बिन अली[अ0स0] की तरफ सुलैमान बिन सुर्द, मुसय्यब बिन नजबा, रिफाआ बिन शद्दाद, हबीब बिन मजाहिर और दीगर दोस्तो की तरफ से मोमिनीन व मुसलमीन अहले कूफा में से।" उसके बाद मुआविया के इन्तेकाल और यज़ीद की वली अहदी पर अपने ख़यालात का इजहार किया गया था। फिर लिखा था कि हमारे सर पर कोई इमाम नहीं है लिहाजा आप तशरीफ लाईये शायद आपकी वजह से हम हक की नुसरत पर यक दिल हो सके। और दमिश्क का गवर्नर नोमान बिन बशीर दारूल अमारा मे मौजूद है मगर हम उसके साथ नमाजे जुमा में शरीक नही होते। न ईदगाह जाते हैं। अगर हम को खबर मालूम हो जायेगी कि आप तशरीफ ला रहे हैं तो हम उसको यहाँ से लिकाल कर शाम जाने पर मजबूर कर देंगे। वस्सलाम।

इस खत को अब्दुल्लाह बिन सबीअ हमदानी और अब्दुल्लाह बिन वाल के हाथ रवाना किया गया और यह सब से पहला खत था जो इमाम हुसैन[अ0स0] को मक्क ए मुअज्जिमा में दसवीं माहे रजमान को मिला। जीमयत मुन्तशिर (मजमा छटा) हुई और अब उन में से हर एक ने अपने हल्क ए असर में इस तहरीक को फैलाना शुरू किया और दो ही दिन के अरसे मे 53 अर्जदाश्तें (खुतूत) तैयार हो गई जो एक दो तीन चार आदमियों के दस्तखत से थीं और यह सब खुतूत कैस बिन मुस्हर सैदावी और अब्दुर्रहमान बिन अब्दुल्लाह बिन कुदन अरहबी और अम्मार बिन उबैद सलूबी क हाथ रवाना किये गए [1]इसी इजतेराब और रूहानी तलातुम के सबब जो यजीद की खिलाफत के बाइस आम तौर पर पैदा हुआ था और जिस में किसी मजहब व मसलक का इफतेराक़ न था उन हजरात की मजकूर–ए–बाला तजवीज का हर तरफ ख़ैर मकदम किया गया और वह लोग जो शिइय्यत का जज्बा न रखते थे वह भी खास हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] के साथ किसी अकीदत की वजह से नहीं बल्कि इस खयाल से कि यजीद ऐसे शराबख्वार व फासिक से आप यक़ीनन बेहतर हैं इस तजवीज के गर्मजोशी से मुअय्यद (ताईद करने वाले) नज़र आने लगे जिसको देख कर उन अफराद को जो हकीक़तन इस तजवीज के मुहर्रिक

---

[1]तबरी जि/6, पेज/197

(जुडे) थे यह यकीन पैदा हो गया कि राए आम्मा (आम राय) हमारे साथ है लेकिन यह फरेब नजर (आँखों का धोखा) था आम खिलक़त इस तहरीक से हमदर्दी में वैसी ही थी जैसे आँधी के रूख पर उडते हुए परिन्द। इस गलत फहमी का यह नतीजा हुआ कि या तो पहले खत के यह अल्फ़ाज कि "शायद खुदा आपके जरिये से हमारी शीराजा बन्दी करे।' बीम व रजा (ख़ौफ़ व उम्मीद) का इजहार कर रहे थे। या अब दो ही रोज के बाद जो खत लिखा गया उस में पुर जोर अल्फाज सर्फ किये जाने लगे कि "तशरीफ़ लाइये जल्द, इस लिए कि लोग आपके मुन्तज़िर हैं और आपके सिवा किसी की इमामत तस्लीम करने पर आमादा नहीं हैं। लिहाजा जल्दी कीजिये जल्दी। वस्सलाम।" इस खत को हानी बिन हानी सबीई और सईद बन अब्दुल्लाह हनफी के जरिये रवाना किया गया [1]

राय अम्मा की कूव्वत और हवा के मौजूदा रूख़ का इस से अन्दाजा हो जाता है कि वह सरदाराने कबाएल जो यजीद के खास आदमी थे और जिन्हें इस तहरीक के मुहर्रिकीन ने अपने साथ नहीं लिया था उन्होंने भी सियासत का तकाजा यही समझा कि इस आवाज में आवाज मिला दें चुनाँनचे इजतिमाइ कारवाईयो से अलाहिदा और इस खत के बाद जो अपने मजमून के एतेबार से बिल्कुल आखिरी कहा जा सकता है एक खत कूफे से और लिखा गया जिसके अल्फाज यह थे·

'खेतियाँ लहलहा रही हैं, मेवे दरख्तों मे रसीदा हैं और तालाब लबरेज, पस जब आप चाहे तशरीफ लायें। एक ऐसे लशकर की जानिब जो आपकी इमदाद के लिए बिल्कुल आरास्ता मौजूद है। वस्सलाम

इस पर मुन्दर्जा जैल सात आदमियो के दस्तखत थे शबस बिन रबई, हिजार बिन अबजर, यजीद बिन हारिस यजीद बिन रवीम अजरह बिन कैस, अम्र बिन हज्जाज जुबैदी, मुहम्मद बिन उमैर तमीमी [2]

यह खत लबो लहजे के ऐतिबार से गुजिश्ता खुतूत से बिल्कुल मुखतलिफ था इनमें अपनी दोस्ती व इखलास के इजहारात थे और हिदायत की ख्वाहिश थी। यहाँ माद्दी ताकत की पेशकश और मुनाफे दुनिया की नुमाइश थी जो एक तरफ लिखने वालो की माद्दी जहनियत की तरजुमान और दूसरी तरफ मकतूब अलैह (लिखने वाले) के मिजाके तबियत (मिजाज) से अजनबियत और

---

[1] तबरी जि, 6, पेज/197

[2] तबरी जि/6, पेज/197 इरशाद पेज/210

ना शिनासी की दलील है। चुनाँनचे इस आखिरी खत के लिखने वाले तकरीबन सब के सब वाकेय ए करबला में हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] से लड़ने के लिए मौजूद थे। मुमकिन है कि इस आखिरी खत के लिखने में कोई खास साजिश मुजमर (पोशीदा) हो और अगर ऐसा नही तो उससे इस मौके की राय अम्मा (आम राय) का अन्दाजा होता है कि उन लोगों को भी यह जरूरत पड़ गई थी कि हम भी इस तहरीक में शामिल हो कर आइन्दा के लिए अपने मुस्तक्बिल को महफूज बना लें। दीनवरी का बयान है कि यह सब कासिद और उनके साथ के खुतूत ताबड़ तोड़ दो दिन के अन्दर इमाम हुसैन[अ०स०] को पहुँचे और उसके बाद चन्द दिन मे तो खुतूत की तादाद इतनी हो गई कि उन से दो खुरजियाँ भर गईं।[1]

गुजिश्ता तकरीर मे सुलैमान बिन सुर्द की और उसके बाद के वाकेयात उन सब के मुतालिये से हस्बे जैल नताएज साफ तौर पर बरामद होते हैं

1. इमाम हुसैन[अ०स०] की बैयते यजीद से किनारा कशी और मदीने से रवानगी किसी खारजी तहरीक और अहले कूफा के साथ किसी मुतकद्दम–ए–गुफ्त व शुनीद (होने वाली बात चीत) का नतीजा न थी।
2. हजरत को मदीने से रवानगी के मौके पर जाहरी असबाब की बिना पर यह खयाल भी न था कि आप कूफे तशरीफ ले जायेंगे।
3. आप ने मक्के पहुँचने के बाद भी खुद अपनी जानिब से किसी किस्म की तहरीक अहले कूफा से नहीं की और न वहाँ अपने मकासिद की तबलीग के लिए कोई खत भेजा

मगर अब जबकि कूफे से खुद यह आवाजें बलन्द हैं कि आप हमारे यहाँ आइये हम आप की नुसरत व मदद के लिए तय्यार हैं। हम आपको इमाम जानते हैं और आप से हिदायत के तालिब है यह दो एक आवाजे नहीं बल्कि कूफा भर यही चिल्ला रहा है चाहे वह दोस्त हो या दुश्मन

यहाँ तक कि दो खुर्जियाँ (बोरियाँ) खुतूत से भर गईं जिसका जिक्र पहले हो चुका है। अब मौके की हालत का तकाज़ा क्या है? हज़रत इमाम हुसैन को उन खुतूत के बाद क्या करना चाहिए?

सूरते हाल यह है कि आप यजीद से बैयत जैसा कि अब तक नही की आइन्दा भी करना नहीं चाहते मदीने में कयामे यजीद के उस तहदीदी (सख्ती भरे) हुक्म की बिना पर कि आप से बैयत ली जाये या कत्ल कर दिये जायें,

---

[1] अखबारूत तुवाल. पेज/231

नामुमकिन हो चुका है। मक्क–ए मुअज्जिमा मे कयाम वक्ती हैसियत से अमन का ज़रिया सही लेकिन ताबके? जबकि यज़ीद के अख़लाक व आदात और अहकामे मज़हबी के मुकाबले मे खुद सरी से यह तवक्को बईद थी कि वह मक्क–ए–मुअज्जिमा के मजहबी एहतेराम का लिहाज करेगा बल्कि यह खतरा बहुत क़रीब था कि मक्के में आप का कयाम इस का बाइस होगा कि वहीं मक्के मे आप के खिलाफ फौज कशी हो और मक्के में न तो कोई फौजी ताकत ऐसी है जो आपकी हिफाजत कर सके और न आप मक्के में कयाम करके हरमे खुदा के अन्दर खूँरेज़ी होने के खुद बाइस बनना चाहते हैं।

इसके अलावा बावजूदेकि रसूल के नवासे की महाजिरत (सफ़र) मदीन से मशहूर हो चुकी है मगर "ताएफ" हो या "यमन", "बसरा" हो या "यमामा" कहीं से कोई आवाज ऐसी बलन्द नही होती कि हम आपकी मदद के लिए हाजिर हैं और आपकी हिफाजत के लिए आमादा।

ऐसे सख्त और नाजुक मौके पर अरब के आबाद तरीन खित्त–ए मुल्क (इराक) और उसके भी अहम मरकज (कूफे) से यह तहरीक होती है कि आप यहाँ तशरीफ लायें हम आपकी हिफाजत व हिमायत के लिए हर तरह तैयार हैं, और सिर्फ मामूली सी तहरीक नहीं बल्कि पचपन अर्ज़दाश्तें और दो खुरजीन भर के खुतूत और सात कासिद यके बाद दीगरे रवाना किये जाते हैं और लिखने वालों में बहुत ऐसे अशखास भी हैं जिनकी मुहब्बत पर आपको भरोसा है जैसे हबीब इब्ने मजाहिर, सुलैमान बिन सुरदे रिफआ बिन शद्दाद वगैरह। इन हालात में जाहिर है कि इमाम हुसैन[अ०स०] को क्या करना चाहिए था क्या आपके लिए मुनासिब था कि इस दावत को मुस्तरद (ठुकरा) कर देते?

हक़ीकत यह है कि मक्क ए मुअज्जिमा के कयाम की सूरत में भी हजरत का शहीद होना यक़ीनी था जैसे अब्दुल्लाह बिन जुबैर पर इसी मक्के में फौज कशी हुई और वहीं कत्ल किये गए इसी तरह आप पर भी फौज कशी होती और यहीं महसूर हो कर आपको शहीद होना पडता इस सूरत में जबकि अहले कूफा की जानिब से इतने इसरार व ताकीद के साथ आपको दावत दी जा रही थी और आपकी नुसरत का वादा किया जा रहा था, आप इस दावत को ठुकरा कर मक्के मे कयाम करते और शहीद किये जाते तो यही लोग जो आप पर अब एतेराज करते हैं कि आप कूफे क्यों गए? यही कहने उठ खड़े होते कि यह कौन सी अक्ल मन्दी थी कि एक इतने बड़े खित्ते और

वाद ए नुसरत को रद कर दिया जहाँ कि लोग आपके वालिदे बुज़ुर्गवार की भी नुसरत कर चुके थे और खुद आपकी भी मुहब्बत का दम भरते थे।

उस वक्त बजानो दिल (दिलो जान से) आपकी हिमायत का वादा कर रहे थ और सैकड़ों अर्जदाश्तें भेज कर आप से क़यादत व हिदायत के तालिब थे। और नादिर मौके को हाथ से देकर मक्का में कयाम रखा जहाँ कि जमीन बे आबो गियाह (ब पानी व सबजा) जहाँ के रहने वाले पस्त हौसला व बे उमग और जहाँ की फिजा बेमहरो वफा, यहाँ तक कि खुद भी कत्ल हुए और मक्क–ए मुअज्जिमा की हुरमत को भी बरबाद कराया। इन सूरतों में जाहिर है कि अक्ल व तदब्बुर का इकतिजा (तकाजा) यही था कि उन बुलाने वालों की आवज पर लब्बैक कही जाये। उनकी नुसरत के वादों को आज़माया जाये और अगर वह सच्चे न भी साबित हो तब भी उन पर इत्तमामे हुज्जत किया जाये।

बेशक थे ऐसे लोग जो आपको जाने से मना करते थे और उनका खयाल था कि इराक़ वालों के वाद का कोई एतेबार नहीं मगर वह इस पहलू को नजर अन्दाज किये हुए थे कि मक्क–ए–मुअज्जिमा में आपका कयाम आपको कत्ल से बचा न सकता था बल्कि हकीकतन अगर मवाजना (मुकाबला) किया जाता तो मौजूदा हालात के लिहाज से मक्के मे कयाम की सूरत में आपका कत्ल किया जाना यकीनी और कूफे की रवानगी की सूरत में मशकूक था इस लिए कि जाहरी असबाब व इलल (सबब) के मा तहत अहले कूफा के मवाईद (वादों) के गलत होने का कोई सुबूत नही था बल्कि यह खयाल सिर्फ उनकी जाती उफतादे तबा (मिजाज) के मुताअल्लिक एक गैर मुतयक्कन (गैर यकीनी) हुक्म बल्कि बद गुमानी की हैसियत रखता था। इस सूरत में अगर आप मक्के मे शहीद हो जाते तो दुनिया के अन्दर आपकी शहादत से कोई हमदर्दी का जज्बा पैदा न होता लेकिन अब जबकि अहले कूफा की इन तमाम ख्वाहिशों पर लब्बैक कहते हुए नौए इन्सानी के इतने अफराद की दरख्वास्तों को मन्जूर करते हुए रवाना हो रहे हैं तो अब अगर आप शहीद भी हो गए तो एक बडे इन्सानी फर्ज को अदा करते हुए और अखलाक व मुरव्वत की एक आला मिसाल कायम करते हुए और कूफे के लोगो पर हुज्जत भी तमाम फरमाते हुए और हिफाज़ते खुद इख्तियारी के उसूल पर बहद्दे इम्कान अमल करते हुए और फिर अपने को मक्के से एलाहिदा (अलग) करके मक्के के एहतेराम को भी पूरे तौर से महफ़ूज़ करते हुए।

इसी लिए इमाम ने उन लोगों के जवाब मे जो आपको इराक जाने से मना करते थे जैसे अब्दुल्लाह बिन अब्बास वगैरह कभी यह नही फ़रमाया कि मुझे इराक के लोगों पर इतमीनान है और अगर मैं वहाँ जाऊँगा तो जरूर वह मेरी मदद करेंगे, हरगिज नहीं बल्कि आप ने ज्यादा तर अहले इराक के मुतअल्लिक उनकी बेइतमीनानी और अदमे एतेमाद (भरोसा न होना) के बारे में अपनी राय को महफूज रखते हुए अपने इरादा पर मुबहम (पोशीदा) व मुजमल (तफसील) तौर पर कायम रहने का इजहार फरमाया जैसा कि इब्ने अब्बास से गुफ्तगू के मौके पर[1] और कभी साफ कह दिया कि मैं यहाँ रहूँगा तो भी कत्ल हूँगा और खान ए काबा का एहतेराम मेरे सबब से जायल (बरबाद) होगा जैसा कि एक मर्तबा अब्दुल्लाह बिन जुबैर से फ़रमाया मुझे मालूम है कि यहाँ एक शख़्स मेढे (भेड़) की तरह जिबह होगा जिस से यहाँ की हुरमत जायल (बरबाद) होगी। मैं वह मेंढा नहीं बनना चाहता।[2]

दूसरे मौके पर जब इब्ने जुबैर ने आप से चुपके चुपके कान में कुछ कहा तो इब्ने जुबैर के जाने के बाद अपने कुछ मखसूसीन से फरमाया। जानते हो इब्ने जुबैर ने क्या कहा? इब्ने जुबैर ने कहा कि आप मक्के में कयाम फरमाइये और बाहर न जाइये उसके बाद आप ने फरमाया खुदा की कसम मैं एक बालिश्त भर मक्के के हुदूद से बाहर क़त्ल किया जाऊँ मुझे ज्यादा पसन्द है इससे कि एक बालिश्त भर मक्का के हुदूद के अन्दर मारा जाऊँ और क़सम खुदा की अगर मैं किसी जानवर के सूराख मे जा कर रहूँ तब भी यह लोग मुझको वहाँ से बाहर ले आयेंगे। यहाँ तक कि जैसे चाहते हैं मेरे साथ सुलूक करें। खुदा की कसम मुझ पर यह लोग तअद्दी (जुल्मो सितम) करेंगे जैसे यहूद ने रोजे शम्बा के बारे में जुल्म व तअद्दी से काम लिया [3]

इन हालात में जाहरी असबाब की बिना पर आप के लिए कूफे को तशरीफ ले जाना नागुजीर (जरूरी) था और आपके लिए अहले कूफे की दरख़्वास्त को मुस्तरद (नजर अन्दाज) करना मुनासिब न था। फिर भी आप ने बहस्बे जाहिर असबाब (ज़ाहरी हालात की वजह से) एहतयाती तदबीर यह इख्तियार फ़रमाई की अपने चचा जाद भाई मुस्लिम बिन अक़ील को जो

---

[1] अख़बारूत्तुवाल पेज / 243
[2] तबरी जि, 6 पेज / 217
[3] तबरी जि / 6, पेज / 217

मदीनेसे आपके साथ आये थे।[1] अपना नुमाइन्दा बना कर हालात का मुशाहिदा करने के लिए कूफ़े जाने पर मामूर फरमाया।[2] और उसके लिए आप ने एक खत अहले कूफा के नाम लिख कर हानी बिन हानी और सईद बिन अब्दुल्लाह के सिपुर्द किया जो अहले कूफा के आखिरी कासिद थे और उन्हें हुक्म दिया कि वह जनाबे मुस्लिम[अ०स०] के आगे रवाना हो।

इस खत का मतलब यह था कि हानी और सईद तुम्हारे खुतूत लेकर पहुँचे और यह दोनों शख़्स तुम्हारे सब से आख़िरी क़ासिद (Messenger) हैं जो मेरे पास आये हैं। जो कुछ तुम ने लिखा है मैं ने गौर से पढ़ा और समझा तुम में से अक्सर का कौल यह है कि हमारे सर पर कोई इमाम नहीं है। आप आइये। शायद खुदा हम को आपकी बदौलत हक़ पर मुजतमा (इकट्ठा) कर दे। अच्छा तो मैं तुम्हारी जानिब अपने भाई, चचा के बेटे और मखसूस मोतमिद (भरोसे मन्द) को रवाना करता हूँ और उन्हे हुक्म देता हूँ कि वह मुझको तुम्हारे हालात के मुतअल्लिक इत्तेला दें अगर उन्होंने इत्तेला दी कि तुम्हारी जमाअत और अहले हल व अक्द (जिम्मेदार अफराद) इस अम्र पर जिसे तुम ने अपने खुतूत मे जाहिर किया है मुत्तफिक (एक जुट) हैं तो मैं अनकरीब तुम्हारी तरफ आता हूँ और वाज़ेह रहे कि इमाम के मानी नहीं सिवा इसके कि जो किताबे इलाही पर आमिल (अमल करने वाला) अदालत का पाबन्द, हक का मुत्तबेअ (फरमॉबरदार) और अपनी जात को खुदा की मर्जी पर वक्फ़ किये हुए हो। वस्सलाम।[3]

इस खत की इबारत से ज़ाहिर है कि मुस्लिम बिन अकील को जंग पर मामूर नहीं किया गया था और न वह कूफे की तस्खीर (अपनाने) की गरज से भेजे गए थे बल्कि वह सिर्फ एक नुमाइन्दे की हैसियत रखते थे कि कूफे की राय अम्मा और वहाँ के लोगों के हालात व खयालात का हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के मुतअल्लिक अन्दाजा कर के आप को उसकी इत्तेला दें जनाबे मुस्लिम, कैस बिन मुसहर सैदावी और अब्दुर्रहमान बिन अब्दुल्लाह बिन कुदन अरहबी, अहले कूफे के नामा बरो (कासिदो) के साथ[4] हुक्म इमाम की तामील में मक्के से रवाना हुए और पहले मदीन–ए–रसूल गए। वहाँ मस्जिदे पैगम्बर में

---

[1] अख़बारूत तुवाल, पेज 132

[2] तबरी जि 6 पेज / 84 अख़बारूत तुवाल पेज 232

[3] तबरी जि 6 पेज 197- 198, व पेज 210- 211

[4] तबरी जि / 6 पेज / 298

नमाज पढ़ी। फिर अजीज व अकारिब से रूख्सत हुए और कबीला–ए–कैस में से दो अरबों को जो रास्ते से वाकिफ थे अपने साथ लेकर कूफे की तरफ रवाना हुए। अजब इत्तेफाक है कि दोनों रास्ते के माहिर होते हुए जब आप को लेकर चले तो एक दम रास्ता भूल गए। नतीजा यह हुआ कि रेगिस्तान मे पड़ गए। प्यास का गलबा हुआ और इसी आलम में एक ऐसे मकाम पर पहुच कर जहाँ से दूर मुसाफिरों के चलने की सड़क नजर आ रही थी वह दोनों बिल्कुल बेहाल हो गए। उन्होंने हाथ से इशारा कर के सड़क का पता दिया और फिर उन में से एक[1] या दोनों[2] गिर कर हलाक हो गए जनाबे मुस्लिम और उनके साथियों की हालत भी बहुत तबाह हो चुकी थी। मगर यह उनकी गैर मामूली कुव्वते बर्दाश्त थी कि उन्होंने किसी न किसी तरह अपने को शाहराह तक पहुँचा दिया और बतने खब्त (घाटी) के एक चश्मे पर जिसका नाम मुजैइक था कयाम करके वहाँ से इमाम हुसैन[अ०स०] की खिदमत में खत भेजा जिस में आगाजे सफर के इस हादसे पर अपने गैर मामूली तअस्सुरात का इज़हार करते हुए लिखा था कि मेरा दिल कूफे के सफर के लिए किसी तरह आमादा नहीं है मगर दोबारा इमाम के ताकीदी हुक्म ने मजबूर कर दिया और वह कूफे की तरफ रवाना हुए[3] कूफे पहुँच कर हुक्मे इमाम के मुताबिक जनाबे मुस्लिम ने अमन पसन्दी से काम लिया। हाकिम दारुल अमारा (हाकिम का महल) में मौजूद था मगर मुस्लिम ने उससे कोई तअर्रूज़ (छेड़ छाड़) न किया अगर कोई दूसरा शख्स होता जिसे शोरिश अंगेज़ी मन्जूर हो तो उसका पहला काम यह होता कि दारुल अमारा (हाकिम का महल) पर कब्जा करे मगर मुस्लिम ने अपने अमल से ज़ाहिर कर दिया कि हमें तुम्हारी सलतनत से मतलब नही। तुम्हारी हुकूमत से कोई गरज नहीं हमें तो सिर्फ़ तालिबाने हिदायत की तलाश और उनकी मज़हबी व अखलाकी इस्लाह मददे नजर है।

मुस्लिम के वुरूदे (दाखिल) कूफ़ा के मुतअल्लिक़ हालात से अन्दाजा होता है कि सुलैमान बिन सुर्द खेज़ाई उस वक्त कूफे में मौजूद न थे वरना मुस्लिम उन ही के मकान पर कयाम करते इस लिए कि वह उनकी ही तहरीक के रूहे रवाँ (खास) और उस जमाअत में सब से ज्यादा साहिबे वजाहत और जी

---

[1] तबरी जि 6, पेज 194

[2] तबरी जि / 6, पेज / 198 अखबारूत तुवाल पेज 232

[3] अखबारूत तुवाल पेज / 232 तबरी जि / 6 पेज / 198

असर थे मजबूरन मुस्लिम ने मुखतार बिन अबी उबैदा सकफी के घर मे कयाम किया [1]

कूफे में यह खबर तेजी के साथ फैल गई और लोग जूक दर जूक (कसरत से) आप के पास मुलाकात के लिए पहुँचने लगे जब काफी मजमा हो गया तो मुस्लिम ने इमाम हुसैन[अ०स०] का ख़त जो उस जमाअत के नाम था पढ़ कर सुनाया जिसको सुनकर हाज़रीन मे काफी जोश के आसार नमूदार हुए। आबिस बिन अबी शबीब शाकरी ने खड़े हो कर हम्दो सनाए इलाही के बाद अपने जाती खयाल को जाहिर करते हुए कहा "मुझको आम लोगों के मुतअल्लिक किसी इजहारे राय का हक नहीं है और न मुझे यह मालूम है कि उनके दिलो मे क्या है और मैं उनकी तरफ से वकालत करके आपको धोखे में मुबतिला नहीं करना चाहता मगर मैं वह जाहिर करता हूँ जिसे मैं ने अपने दिल में ठान लिया है। ख़ुदा की क़सम मैं जिस वक्त भी आप दावत देगे लब्बैक कहता हुआ हाजिर हूँगा और आपके हमराह दुश्मनों से जग करूंगा और उस वक्त तक शमशीर जनी करूँगा कि इस जिन्दगी को खत्म कर के अपने ख़ुदा से मुलाक़ात करूँ और मेरा मकसद इससे सिवा रजाये परवरदिगार के कुछ न होगा।"

यह तक़रीर ख़त्म होना थी कि हबीब इब्ने मजाहिर खड़े हुए और कहने लगे। 'मरहबा, जजाकल्लाह। कितनी मुखतसर लफजों में तुम ने हकीकते हाल को वाजेह किया है फिर मुस्लिम की तरफ खिताब कर के कहा। ख़ुदा की कसम मेरा भी जाती हैसियत से यही खयाल है जिसको अब्बास बिन अबी शबीब ने अपने लफ़्ज़ों में जाहिर किया। इसी से मिलती जुलती लफजों में सईद बिन अब्दुल्लाह हनफी ने ताईद की जिस के बाद मजमा मुतफर्रिक (छट गया) हुआ।[2] खत के मजमून की बिना पर उस कारवाई का मकसद जाहिर है। यानी यह अहदो पैमान इस गरज से न था कि मुस्लिम कोई जारिहाना इक़दाम करना चाहते थे। और उसके मुतअल्लिक यह लोग नुसरत और मदद का वादा कर रहे थे और न मौजूदा सूरते हाल की बिना पर यह खयाल किसी दिमाग़ में जगह पा सकता था कि चन्द ही रोज में तने तनहा मुस्लिम के मुकाबले में

---

[1] अखबारूत तुवाल पेज/232 तबरी जि 6, पेज 199 व जि/7, पेज/58, इरशाद पेज 211 उस घर के निशानात गालिबन चौथी हिजरी तक बाकी थे चुनान्चे अबू हनीफा दैनवरी ने लिखा है कि अब यह घर 'दारे मुसैय्यब' के नाम से मशहूर है। अखबारूत तवाल पेज 232 तबरी ने लिखा है "दारे मुस्लिम बिन मुसैय्यब' के नाम से मशहूर है तबरी जि/6. पेज/ 99. दूसरी जगह दारे मुस्लिम बिन मुसैयब" दर्ज है तबरी जि/7 पेज/57)

[2] तबरी जि/6, पेज 199

फौज कशी होगी और उसके लिए इस जमाअत को तैयार करना चाहिए। बल्कि यह अहदो पैमान सिर्फ इमाम हुसैन[अ०स०] की तशरीफ आवरी की पेश निहाद (पेश आने वाले) और उस मौके के लिए उन लोगों के अज़ाएम व नीयात (इरादों) के अन्दाजे के तौर पर था।

मुस्लिम बिन अकील के वुरूद की खबर कूफे मे आम तौर पर मशहूर हो ही चुकी थी और उस फ़िज़ा के लिहाज़ से जो इमाम हुसैन[अ०स०] को दावत देने की तहरीक के सिलसिले में इब्तेदा ही से कूफे मे पैदा हो गई थी और जिस के असबाब वज़ाहत के साथ (साफ तौर से) दर्ज किये जा चुके है। हर शख्स ने उस खबर का मसर्रत (खुशी) के साथ इस्तेक़बाल किया।

यजीद की खिलाफत से बसबब उसकी सियाह कारियों के बेजारी एक तरफ, हजरत हुसैन बिन अली[अ०स०] की हर दिलअजीजी न सिर्फ खानदानी वजाहत के बाइस बल्कि अपने अख़लाक व कमालात के लिहाज़ से दूसरी जानिब वह लोग कि जो मुस्लिम बिन अकील की तहरीक के मुबल्लिग व दाई (दावत देने वाले) थे उनकी जाती वजाहत और तअल्लुकात तीसरी तरफ और "कुल्लो जदीदुन लजीज (नई चीज का मजा)' के तबई कानून के मुताबिक हर ताजा तहरीक मे जो लज्जत होती है वह चौथी जानिब इन तमाम असबाब की बिना पर हज़रत मुस्लिम के हाथ पर एक हफ्ते के अन्दर बारह[1] या अठ्ठारह हजार[2] कूफियों ने बैयत की लेकिन क्या यह सब दोस्ताने अली[अ०स०] थे? क्या कूफे मे जियाद व आले जियाद की बीस साल हुकूमत के बाद जिस मे खिंची हुई तलवारें और जल्लादों के हाथ बराबर अपनी सफ्फाकी दिखाते रहे हों और दस्त व पा (हाथ पैर), सर व जबान के कता व बुरीद (काटने) का सिलसिला बराबर जारी रहा हो, कूफे मे इतनी तादाद मे अली[अ०स०] के दोस्त मौजूद हो सकते थे? हरगिज नहीं। सच्चे शिया तो कूफ़े में पहले ही कम थे और जो थे भी वह मुआविया के कत्लो गारत के बाद तकरीबन नीस्तो नाबूद हो चुके थे उसके बाद थोडे से छुपे छुपाए अफराद बाकी हो सकते हैं वरना जितने थे वह वही अफ़राद थे जो हजरत अली[अ०स०] को चौथा खलीफा तस्लीम करके महज साथ होने की वजह से लुगवी मानी (सिर्फ नाम) के एतेबार से शिया कहे जाते थे और वह भी अब ज्यादा तादाद में बाकी न थे। इस सूरत मे यह मानना नागुजीर है कि मजकूर-ए-बाला सतही (सामने के) और आरजी

---

[1]तबरी जि. 6, पेज / 94

[2]तबरी जि./ 6, पेज / 211

(वक्ती) असबाब से जो राय आम्मा हमवार हुई हो उस मे कोई वजन नहीं हो सकता बेशक जब इस तहरीक के इब्तेदाई मुहर्रिकीन (तहरीक से जुड़े हुए) को राय आम्मा की नौइयत समझने मे गलती हुई हालाँकि वह यहीं के रहे सहे परवरदा और तजुर्बा याफ्ता थे तो जनाबे मुस्लिम को जो कि यहाँ परदेसी की हैसियत रखते थे, धोखा होना क़ाबिले तअज्जुब नहीं है।

मुस्लिम की तहरीक को चलाने वाले उनकी सदा पर सब से पहले लब्बैक कहने वाले और सब से पहले जलसे में जाँबाजी का इकरार करने वाले और राय अम्मा को हमवार करके मुस्लिम की नुसरत व हिमायत पर आमादा करने वाले उन में से अक्सर बेशक सच्चे खालिस और मुखलिस हमर्दद और दोस्त थे और उनका काम यही था कि वह शहर की फिजा को मुस्लिम के मुवाफिक बना दें। जिस मे उनको बजाहिर खातिर ख्वाह कामयाबी हुई लेकिन आइन्दा के इन्केलाबात कोई दूसरी सूरत पैदा न करेंगे उसकी जिम्मेदारी किसी पर आएद नहीं हो सकती। बेशक उन कलीलुत तादाद (कम लोग) खालिस दोस्तों ने अपने इकरार और अहदे जाँबाजी पर बेहतरीन तरीके से अमल किया और जो कहा था उसे कर दिखाया जिस के मुशाहदे के लिए मुस्तक़्बिल का इन्तेजार करना चाहिए

जनाबे मुस्लिम बिन अक़ील[अ०स०] को हालात खुशगवार और मुताबिके क़ौलो करार (बात पर डटे) नजर आये। इस लिए इमाम हुसैन[अ०स०] को खत लिख दिया कि जल्द तशरीफ़ लाईये। हालात साजगार हैं और अहले कूफा अपने क़ौल व क़रार पर क़ायम हैं [1] मकामी हुकूमत का तर्ज़े अमल उनकी निस्बत रवादार न था। कूफ़े के हाकिम नोमान बिन बशीर ने मिम्बर पर जा कर एक तक़रीर की जिसका मजमून यह था कि ऐ बन्दगाने खुदा फितना व फसाद और इफ्तेराक़ से परहेज करो। उससे ख्वाह मख्वाह जाने जाईंगी खून बहेंगे और माली तबाहियाँ होंगी जहाँ तक मेरा तअल्लुक है मैं जब तक कोई जारिहाना इक़दाम (सख्त क़दम) मेरे ख़िलाफ़ न हो उस वक्त तक कोई इक़दाम नहीं करूँगा।[2] कूफ़े मे यह ख़बर गर्म थी कि अब बहुत जल्द ही हुसैन बिन अली तशरीफ लाने वाले है और इस वजह से हर तरफ़ एक खास चहल पहल नजर आती थी और हल्का हल्का (Grup.Grup) जमाअत दर जमाअत लोग बैठ कर उस पर इजहारे खयालात करते थे और बेचैनी के साथ दीदा

---

[1] तबरी जि/6, पेज/211, अख़बारूत तुवाल पेज/243

[2] तबरी जि/6, पेज/199

बराह (रास्ता देखना) थे मगर कूफ़े के अन्दर एक ऐसी जमाअत मौजूद थी जो इन तमाम मन्सूबों को खास सियाह बना देने पर तुली हुई थी और यह उमवी हुकूमत के ख़ैरख्वाह वह लोग थे जिन्हें अन्देशा हुआ होगा कि हुसैन बिन अली अ0 के इक़तेदार के बाद उन्हें अमवाले खल्क (लोगों के माल) पर बे जा तसर्रूफ (खर्च) का मौका बाकी न रहेगा चुनाँनचे उन में से एक शख्स बनी उमय्या के हलीफ (तरफदार) अब्दुल्लाह बिन मुस्लिम हजरमी ने तो नोमान बिन बशीर की मजकूरा बाला रवादाराना (नर्म) तकरीर के बाद ही खड़े हो कर कह दिया कि यह आप का तरीक़–ए कार सही नहीं है और आप कमजोरी दिखा रहे हैं जिस पर नोमान ने कहा कि "मैं अल्लाह की इताअत के लिए कमजोर साबित हूँ यह बेहतर है इससे कि मासियते इलाही करके जोर आवर साबित हूँ।"[1] यह जवाब नोमान के जमीर की साफ तरजुमानी कर रहा था जिस के बाद फसादी अशखास को कुछ कहने का मौका न था। इस लिए यहाँ से जाकर फौरन अब्दुल्लाह बिन मुस्लिम ने [2] यजीद के नाम खत लिखा कि मुस्लिम बिन अकील कूफे आये हैं और उनके तरफदारो ने उनके हाथ पर हुसैन[अ0स0] की बैयत कर ली है अगर आप को कूफ़ा अपने हाथ में रखना है तो यहाँ कोई मजबूत आदमी भेजिये जो आपके फरमान के मुताबिक अमल कर सके। इस लिए कि नोमान बिन बशीर कमजोर शख्स हैं या वह जान बूझ कर कमजोरी दिखा रहे हैं "

अम्मारा बिन अकबा और अमर बिन सअद ने भी ऐसे ही मजमून के खुतूत रवाना किये।[3]इन खुतूत के पहुँचने पर यज़ीद ने सरजौन बिन मन्सूर रूमी से मशवरा लिया यह शख्स ईसाई था जो मुआविया के जमाने से मोहकम–ए–खिराज (Foreign ministry) में कातिब था।[4] यज़ीद उस वक्त

---

[1]तबरी जि 6, पेज 199

[2]देनवरी ने इस ख़त लिखने की निसबत मुस्लिम बिन सईद हजरमी और अम्मारा बिन अकबा की तरफ दी है और कहा है कि यह दोनों यजीद बिन मुआविया के जासूस थे अख़बारूत तुवाल, पेज/233

[3]तबरी जि/6, पेज/199, इरशाद पेज/211-212

[4]अलविजरा वल किताब पेज 15, चूँकि उस जमाने में कूफ़ा व बसरा और दमिश्क दोनों मरकज़ों में मालियात के मुतअल्लिक दो दफ्तर थे, एक रिआया की मर्दुम शुमारी (Senses का और उनके वज़ाएफ़ व इनआमात का, यहाँ काम अरबी में होता था और दूसरा आमदनी व खर्च के हिसाबात का। यह काम कूफ़ा व बसरा में अब तक फारसी जबान मे होता था और शाम में यह रूमी जबान मे लिखा जाता था इस लिए इराक में यह दफ्तर मुजूसियो (यहूदियों) और शाम मे ईसाईयों के हाथ में था। चुनांनचे उस दफ्तर का मोहतमिमे आला (इन्चार्ज) दमिश्क में सरजौन था जो मुआविया के वक्त से अब्दुल मलिक बिन मरवान के अहेद तक बराबर इस शोबे का जिम्मेदार रहा और उस गुरोह (डिपार्टमेन्ट) में कि यह काम बगैर हमारे हो ही नहीं सकता ऐसा महसूस होने लगा कि वह खलीफा तक को खातिर मे नहीं लाता इसी वजह से अब्दुल मलिक के जमाने में इराक और दमिश्क के इन दोनो दफ्तरो को भी अरबी में

तक इब्ने जियाद से खफा था क्योंकि उसका खयाल था कि उसी की वजह से जियाद ने मेरी वलीअहदी से इख्तेलाफ किया था और यह कि शायद मुआविया के बजाए मेरे यह खुद खिलाफत का उम्मीदवार था इस लिए उसका अब तक यह इरादा था कि वह बसरा की हुकूमत से भी इब्ने जियाद को माजूल कर देगा।[1] चुनानचे इब्ने जियाद का नाम सुनते ही यजीद ने इन्कार किया और कहा नही। वह ठीक नहीं है किसी और का नाम लो। सरजौन ने कहा। यह बताइये कि अगर मुआविया इस वक्त जिन्दा होते और वह इस वक्त आप को यही राय देते तो आप कुबूल करते? यजीद ने कहा बेशक उनके कहने को जरूर कुबूल करता। यह सुन कर सरजौन ने एक तहरीर निकाली और कहा कि यह मुआविया का फरमान है जिस में इब्ने जियाद को कूफे का हाकिम मुकर्रर किया है। वह उसे भेजने न पाये कि इन्तेकाल हो गया। अब आप बसरा और कूफा दोनों जगह की हुकूमत उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद के लिए क़रार दे दीजिये।

यजीद ने मुआविया की इस तहरीर के मुताबिक इब्ने जियाद के नाम ख़त लिखा कि मुझे मेरे शियों ने कूफे से खुतूत लिखे हैं कि वहाँ पिसरे अकील ने आ कर लशकर जमा करना शुरू कर दिया है ताकि मुसलमानो मे तफ़रेक़ा और फसाद पैदा हो। तुम इस खत के पहुँचने के साथ ही उधर रवाना हो और मुस्लिम को कब्जे में ला कर कैद करो कत्ल करो या निकाल दो। वस्सलाम।'[2]

कदीम मुअर्रिख़ (पुराने हिस्टोरियन) ''जहशियारी' ने इस ख़त का मजमून हस्बे जैल लिखा है जिस के पस मन्जर में यजीद की इब्न जियाद से नाराजगी को मलहूज़ (सामने) रखते हुए उस में तहदीदी (सख्ती भरा) अन्दाज़ ज्यादा नुमायाँ है

'मालूम होना चाहिए कि जिस की एक वक्त तारीफें होती है वही दूसरे वक्त सब्बो शत्म (बुरे अल्फाज) से याद किया जाता है और जिसे सब्बो शत्म

मुन्तकिल किया गया, चुनानचे 78 हिजरी मे हज्जाज बिन यूसुफ ने इराक के दफ्तरों से मुजूसियों को निकाल कर उनको अरबी की तरफ मुन्तकिल किया और तकरीबन उसी ज़माने में अब्दुल मलिक के हुक्म से दमिश्क के दफ्तर की ज़बान अरबी बनाई गई और सरजौन को ओहदे से बरतरफ कर दिया गया (अलविज़रा वल किताब पेज, 23-24) सरजौन ने उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद का नाम लिया सबसे पहले ज़ियाद के मरने के बाद सन 54 हिजरी में उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद को मुआविया ने खुरासान का हाकिम करार दिया उस वक्त उसकी उम्र 25 बरस की थी (तबरी जि 6, पेज, 66) फिर सन 55 हिजरी में उसे बसरा का हाकिम क़रार दिया पेज/168

[1] तबरी जि/6, पेज 194

[2] इरशाद पेज/212 तबरी जि/6, पेज, 200

से याद किया जाता है वही एक दम महल्ले तारीफ बन जाता है इस वक्त एक बड़ा मन्सब तुम्हारे सिपुर्द किया जा रहा है जिस से बढ़ कर तुम्हारे लिए कोई एजाज नहीं हो सकता और इत्तेफाक से हुसैन[अ०स०] की मुहिम तुम्हारे ही दौर और तुम्हारे ही कलमरूवे (गवर्नरी) ममलिकत के नसीब में आई है और तमाम उम्माले हुकूमत (कार फरमाओं) में तुम ही वह हो जो उस महल्ले आजमाइश में पड़े हो। अब या तो तुम्हारी शराफत पाय-ए सुबूत तक पहुँच जायेगी और या जैसे कभी थे वैसे ही गुलाम के गुलाम करार पा जाओगे। वस्सलाम।"[1]

इसके आखिरी फिकरे में तलमीह (सबक) वही जियाद के मजहूलुन नसब(ना मालूम) होने और फिर मुआविया की नजरे इनायत से फरजन्दे अबू सुफियान करार दिये जाने की तरफ है। इस खत के मजमून से यह भी जाहिर है कि वह सिर्फ मुस्लिम ही के बारे में इब्ने जियाद को सरगर्मी की तहरीक नहीं कर रहा है बल्कि सख्त व दुरशत (सख्ती भरा) और गैरत अगेज अलफाज मे खुद हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के मुआमिले मे इब्ने जियाद को मज़बूत इकदामात की तहरीक कर रहा है। जिस में ज़रा भी कोताही उसके सामने उसके तमाम मुस्तक्बिल के तारीक बनाने की धमकियों का मरकज बना दी गई है

बहरहाल इस खत को कूफे की हुकूमत के परवाने के साथ मुस्लिम बिन अम्र बाहली (कुतैबा बिन मुस्लिम की शखसियत तारीख में मशहूर है। यह मुस्लिम बिन अम्र उसी का बाप था।[2] के हाथ इब्ने जियाद के पास रवाना किया जिसको देखते ही उसने बसरा मे अपने भाई उसमान बिन जियाद को कायम मकाम बना कर खुद कूफा जाने की तैयारी कर दी और मस्जिदे जामे में एक तहदीद आमेज (धमकी भरे) तकरीर करने के बाद जिसमें ऐलान किया था कि अगर तुम में से किसी ने ज़रा भी मुखालिफ़त की तो मैं उसी को नहीं बल्कि उसके वुरसा (खानदान वाले) को भी क़त्ल करा दूँगा और आस पास के आदमियों और ख़ता कार के साथ बे ख़ता को भी सजा देने मे कमी न करूँगा।[3]

---

[1]अल- वज़रा वल किताब पेज/ 19

[2]अखबारूल तुवाल. पेज/ 33

[3]अखबारूल तुवाल. पेज/ 234

दूसरे दिन रवाना हो गया [1]वह कोई और नहीं जियाद बिन अबीह का बेटा और मुआविया का उनके इदआ (दावा) के मुताबिक भतीजा था और यह पूरा खानदान ही वह था जिस पर हीला (मक्कारी) व फरेब का ख़ातिमा था। चुनाँनचे सब से पहली बात इब्ने जियाद ने यह की कि उसने अपनी नक्लो हरकत को बिल्कुल सीग–ए–राज़ में रखा ताकि उसका वरूद कूफ़े मे अचानक हैसियत से हो और फिर जब कूफा नजदीक रह गया तो उसने अपनी वजा में तग़ैयुर पैदा (लिबास बदल) कर के एक सियाह अम्मामा सर पर बाँधा और चेहरे पर उसी तरीक़े से जो अरब क़ौम के बहादुरों का जंग वग़ैरह के मौक़ों पर दस्तूर था एक ढाठा बाँध लिया जिसकी बिना पर शनाख्त नामुमकिन हो गई। एक मर्तबा शहर पनाह कूफे के अन्दर यह नक़शा नजर आया कि आगे आगे अरबी घोड़े पर सवार एक रईस कौम पूरे वक़ार व तमकनत (जाहो जलाल) के साथ सियाह अम्मामा सर पर बाँधे जो अशराफे अरब का इम्तियाजी निशान था और उसके पीछे एक शानदार काफिला जीन व लजाम, साजो सामान से आरास्ता आ रहा है इस हशम व खदम (शानो शौकत) को देख कर उन तवक्कुआत की बिना पर जो पहले से कायम थे वही होना चाहिए था जो हुआ। यानी हर शख़्स यही समझा कि हजरत हुसैन बिन अली[अ0स0] तशरीफ़ लाये हैं और इस कायम शुदा असर की बिना पर या मुतवक्के जदीद (मुमकिना नये) इन्केलाब से नफाए दुनियवी हासिल करने की तमन्ना में जिस जमाअत की तरफ से उबैदुल्लाह का गुजर होता वह बनजरे ताजीम खड़े हो कर आदाब बजा लाती और खुश आमदीद के मानी में यह अलफाज जबान पर जारी करती। مرحبابک یابن رسول اللہ قدمت خیرمقدم इब्ने जियाद किसी को कुछ जवाब न देता बल्कि आवाजो को सुनता चेहरों को बग़ौर देखता, शक्लो शुमाएल (सूरतों) को पहचानता चला जा रहा था। यहाँ तक कि मजमा ज्यादा हो गया और लोग इश्तियाक से घरों से निकल आये और हर शख़्स फरजन्दे रसूल[स0अ0] समझ कर आगे बढने लगा और नौबत यह पहुँची कि राह चलने में रूकावट पैदा होने लगी। उस वक्त मुस्लिम बिन अम्र बाहली ने जो इब्ने ज़ियाद के साथ था पुकार कर कहा "रास्ता छोड़ दो यह अमीर उबैदुल्लाह बिन जियाद हैं"[2]

---

[1]तबरी जि, 6. पेज / 201. इरशाद पेज / 212–213
[2]अख़बारूत तुवाल पेज / 234 तबरी जि / 6, पेज / 201

न मालूम इन अलफाज मे कौन सा असर था कि बढते हुए कदम और उठते हुए हाथ और मसर्रत आमेज तराने सब मौकूफ़ (ठहेर) हो गए। एक सन्नाटा था जो छा गया और सारा मजमा तितर बितर हो गया। यहाँ तक कि जब इब्ने जियाद दारुल अमारा मे पहुँचा तो दस आदमियो से ज्यादा उसके साथ न थे [1]

इस मौके पर अहले कूफा के फित्री रुजहानात पर गौर करने के बाद उनके बातनी इज़्तेराब का अन्दाजा करना चन्दाँ (कोई) दुश्वार नहीं इस लिए कि हालात का गैर मुतवक्क़ा सूरत से ज़ुहूर पज़ीर (ज़ाहिर होना) होना बजाए ख़ुद सन्सनी पैदा कर देता है चेजाएकि सूरते हाल यह हो कि उन में से हर एक ने अपने ख़िलाफ़ ख़ुद जासूसी के काम को अन्जाम दिया यानी अपनी बातनी खयालात और हुसैन इब्ने अली[अ०स०] के साथ खुलूस व अकीदत की ख़ुद इब्ने ज़ियाद के सामने बवक़्ते वुरूद (दाख़िल होते वक्त) तरजुमानी कर दी और इब्ने जियाद ने एक एक चेहरे और आवाज को पहचान लिया और फिर इब्ने जियाद वही था जिस की और जिस के बाप की तलवार के नीचे बीस बरस तक इस तमाम ख़िलकत की गर्दनें इस तरह खम रही हैं कि जिसको चाहा गिरफतार किया सूली पर लटकाया, जल्लाद के हाथ से सर को कलम करा दिया और ऐसे हैबत नाक मनाज़िर उन ही हाथों से आँखो के सामने आ चुके हैं जिनको सोच कर अब तक रोंगटे खड़े हो जाते और दिल हिल जाते होंगे और अब वही सूरतें अपने और अपनी औलाद और अइज्जा व अकारिब के लिए पेश नजर हैं क्या वह वजूह (सबब) ऐसे न थे जिनकी बिना पर दिल व दिमाग मुअत्तल (सुन) ताकतें मुजमहिल और हिम्मतें पस्त हो जातीं और उन पर अजीम खौफ व हिरास का गलबा हो जाता खुसूसन जबकि ज्यादा तर तादाद अवाम की थी जो वाकेआत व हालात को समझे बगैर हर नई आवाज़ पर लब्बैक कहने के शौक में शरीक हो गए थे।

इब्ने जियाद ने मस्जिदे जामे में एक तहदीदी तकरीर के साथ अपनी हुकूमत का ऐलान करने के बाद कस्र में जा कर कयाम किया और नोमान बिन बशीर ने फौरन कस्र का तखलिया (खाली) करके कूफे से अपने वतन शाम की तरफ रवानगी इख़्तियार की।[2] इब्ने जियाद ने उसके बाद तमाम महल्लाते

---

[1] तबरी जि/6 पेज/301

[2] अख़बारुत तुवाल पेज/234

(महल्लों) कूफ़ा के ज़िम्मेदार अशखास को जिन से अराफ़त का[1] मन्सब तअल्लुक रखता था बुला कर यह फरमान जारी किया कि जल्द से जल्द हर महल्ले की मरदुम शुमारी और जो लोग नौवारिद (नए आने वाले) हैं उनकी फ़ेहरिस्त और जिन लोगो से हुकूमते शाम को खतरा है उनके नाम इदारा–ए–हुकूमते महल्लिया मे पेश कर दिये जाय और अगर वह किसी वजह से उन फ़ेहरिस्तों के तफसील वार तरतीब देने से माजूर हो तो जमानत दाखिल करे उनके मोहल्ले मे कोई मुतनफ़्फ़ुस (शख्स) भी हाकिमे शाम की मुखालिफ़त पर आमादा न होगा और उसके खिलाफ़ जाहिर हुआ तो उस मुखतारे मुहल्ला को फौरन उसके घर के दरवाजे पर सूली दी जायेगी और उसके खानदान से हमेशा के लिए इस मन्सब को अलाहिदा कर लिया जायेगा।[2]

यह मजबूत तदबीर ऐसी न थी जिस की कामयाबी मुशतबह (जिस पर शक) हो। कूफ़े का चप्पा चप्पा जवासीस व मुखबेरीन की कसरत से गैर महफूज नजर आने लगा। अब हर शख्स खास अपने महल्ले में एक घर से दूसरे घर पर जाते डरता था और इस तरह दस पाच आदमियो का भी एक जगह जमा हो कर किसी अम्र पर गुफ्तगू करना और कोई करार दाद उस्तवार करना नामुमकिन हो गया।

यह पहला मौका वह हो सकता था कि जब मुस्लिम बिन अक़ील को जान का अन्देशा और मकसद की पामाली का एहसास हो जाता। अब आप का सिर्फ एक फर्ज रह गया था कि आप हिफाजते खुद इख्तियारी के फरीजे के मातहत जहाँ तक मुमकिन हो अपने तहफ्फ़ुज के लिए एहतियाती तदाबीर अमल मे लाये। उसके लिए आप को मुखतार बिन अबी उबैदा का मकान जिस में आप अब तक मुकीम थे गैर महफूज मालूम हुआ। इस लिए कि आप का क़याम वहाँ मुशतहर (मशहूर) हो चुका था और फिर अगर कोई वक्त आता तो वहाँ आपकी हिमायत करने वाला भी कोई न होता। मुखतार बिन अबी उबैदा शरीफ कौम सही लेकिन सिर्फ एक जमींदार की हैसियत रखते थे वह किसी

---

[1] मुल्के अरब में यह तरीका अब तक राएज है कि बड़े शहरों में हर महल्ले में एक मुखतारे महल्ला होता है जो उस मुहल्ले की मरदुम शुमारी दारद व सादिर (आने जाने वाले) जाईदा (जिन्दा) व मुर्दा, शादी शुदा व गैर शादी शुदा वगैरह उमूर की तशरीह का मकामी हुकूमत की तरफ से ज़िम्मेदार होता है। उसी मन्सब को उस ज़माने में अराफत कहते थे)

[2] तबरी जि/6. पेज/201 इरशाद पेज/214

बड़े कबीले के सरदार न थे इस के अलावा उस ख़ास मौक़े पर वह कूफ़े में मौजूद भी न थे [1]

लिहाजा मुस्लिम ने अपने लिए इससे बेहतर कोई सूरत न देखी कि आप तारीकिए शब में हानी बिन उरवह के घर में मुन्तकिल हो जाये [2] यह कबील ए मुराद व मुजहज के सरदार थे और जब निकलते थे तो बारह हजार आहन (लोहा) पोश सवार उनके हमरकाब होते थे।

मुस्लिम ने हानी के घर में पनाह ले कर जाहरी असबाब की बिना पर अपने को बारह हजार शमशीर जन बहादुरों के हलके में पहुँचा दिया जो बजाहिर आपकी हिफाजत का फर्ज़ बेहतरीन तरीके पर अदा कर सकते थे। हानी ने मुस्लिम को मखफी तौर पर अपने यहाँ रखा और सिवा मखसूस अफराद जो महल्ले एतेमाद (भरोसा) थे किसी को इस राज की इत्तेला न दी। अब उन क़लीलुत तादाद दोस्ताने अहलेबैत[अ०स०] को जो इस तहरीक के दाई (जुड़े हुए) थे फिजा की नासाजगारी का पूरा पूरा एहसास हो गया था मगर वह मुस्तकिल मिजाजी के साथ सूरते हाल के मुकाबले पर आमादा हो गए और अब लाजमी तौर पर नुकत–ए–नजर में तब्दीली हो गई इसके पहले इमाम हुसैन[अ०स०] के खत के मुताबिक मुस्लिम की हैसियत सिर्फ एक पुरअमन नुमाइन्दे की थी जिस का मकसद फकत कूफे के लोगो से इमाम हुसैन[अ०स०] के लिए अहदे वफ़ादारी का उस्तवार करना था चुनाँनचे इसके पहले हरगिज यह पता नहीं चलता कि कोई असलहे की फराहमी की कोशिश हो रही हो या जंग की तैयारी हो मगर अब नौइयत यह है कि यह यकीनी है कि अनकरीब मुस्लिम के खिलाफ हुकूमत की तरफ से जारिहाना इकदाम होगा और अब उस जमाअत को जो मुस्लिम के बुलाने की जिम्मेदार है उसके मुकाबले के लिए तैयार होना चाहिए इससे यह नतीजा निकलता है अब यह जो कुछ हो रहा है वह उस हिदायत नामे के हुदूद से आगे जो मुस्लिम को इमाम हुसैन[अ०स०] की जानिब से दिया गया था। यह अब एक हँगामी सूरते हाल है जिसके लिए मुस्लिम और जमाअते कूफा को बहरहाल मुनासिब तर्जे अमल इख्तियार करना लाजिम है चुनाँनचे मुस्लिम बिन औसजा असदी ने हजरत मुस्लिम की तरफ से अब लोगो से हिफाजत व नुसरत का वादा लेना शुरू किया और अबू सुमामा

---

[1] तबरी जि/7 पेज/58

[2] अखबारूत तुवाल पेज/235. तबरी जि/6. पेज/195–203. इरशाद पेज/213

साएदी फराहमिए सरमाया (रकम) और जमा आवरी असलहा के जिम्मादार हुए।[1]

इब्ने जियाद को जनाबे मुस्लिम की जाए क़याम का पता लगाने की बड़ी फ़िक्र थी। उसने मुस्लिम की सुराग़ रसानी के लिए अपने शामी गुलाम 'मुआकिल' को तीन हजार दिरहम दे कर मुक़र्रर किया कि वह खुफिया तरीके पर किसी न किसी तरह मुस्लिम का पता चलाये। मुआक़िल इस फ़िक्र में मस्जिदे आमे में आया इत्तेफाक से उस वक्त मुस्लिम बिन औसजा एक रुक्ने मस्जिद के पास नमाज में मसरूफ थे। वह देर तक उनको देखता रहा और उसने अपने दिल में कहा (जिसे खुद उसने बाद में बयान किया) कि यह शिया लोग नमाज़ें बकसरत पढ़ते हैं इस लिए हो न हो यह उन्हीं में से होगे लिहाजा वह इन्तेजार मे बैठा रहा [2] जब मुस्लिम नमाज़ से फारिग हुए तो वह उनके पास आ कर बैठा और कहा कि 'मैं शाम का रहने वाला ज़ुल कलाअ् का ग़ुलाम खुदा के फज्ल से अहलेबैते रसूल का दोस्त हूँ। मुझे मालूम हुआ है कि उस खानदान में से कोई बुज़ुर्ग आज कल कूफे में आये हुए हैं और लोगों से रसूले खुदा[स0अ0] के नवासे की बैयत ले रहे हैं और यह तीन हजार दिरहम मेरे पास हैं। तो क्या आप मुझे उनका पता बता सकते हैं कि यह रक़म मैं उनकी खिदमत मे हाज़िर कर दूँ जिसे वह अपनी मुहिम मे सर्फ करे

मुस्लिम ने कहा कि आखिर मस्जिद में दूसरे लोग भी हैं तुम मेरे ही पास उसके दरयाफ्त करने को क्यों आये हो? उसने कहा कि सबब यह है कि मैंने आप में नेकूकारी और परहेजगारी के आसार देखे तो यकीन हुआ कि आप जरूर दोस्ताने अहलेबैते रसूल[स0अ0] में से हैं जनाबे मुस्लिम उसके फरेब में आ गए और कहा तुम ने खूब पहचाना। मैं तुम्हारे ही भाईयों में से हूँ मेरा नाम मुस्लिम बिन औसजा है मुझे तुम्हारी मुलाक़ात से बहुत खुशी हुई और इस बात से और ज्यादा मसर्रत हासिल हुई कि तुम अपनी ख्वाहिश में कामयाब हुए और तुम्हारे जरिये से अहलेबैते रसूल[स0अ0] को कुछ तकवियत पहुँचेगी। बेशक यह अन्देशा होता है कि कहीं जालिम इब्ने जियाद को भी इसकी इत्तेला न हो जाये लिहाजा तुम मुझ से अहेद करो कि किसी से इसका इजहार न करोगे।

---

[1]तबरी जि/5, पेज/204 इरशाद पेज/215
[2]अख़बारुत तुवाल पेज/236

चुनाँनचे काफी इतमीनान और अहदो पैमान और राजदारी के वादों के साथ मुस्लिम बिन औसजा ने इकरार किया कि मैं कल तुम्हें जनाबे मुस्लिम बिन अकील की खिदमत में ले चलूँगा

मआकि़ल दूसरे दिन जनाबे मुस्लिम बिन औसजा के मकान पर आया और वह उसे हजरत मुस्लिम बिन अकील के पास ले गए उसने आपकी बैयत की और तीन हजार दिरहम जो लाया था आपकी खिदमत में पेश किये। उसके बाद मआकि़ल की यह सूरत थी कि वह दिन भर जनाबे मुस्लिम के पास रहता और तमाम हालात मालूम करता था और रात को हर बात की इत्तेला इब्ने जियाद को पहुंचा देता था।[1]

हानी के इब्ने जियाद से बहुत क़दीम तअल्लुकात थे मगर सिर्फ़ अन्देशे पर कि कही इब्ने जियाद को मुस्लिम के मेरे यहाँ कयाम की भनक न मिल गई हो वह आज कल इब्ने जियाद की मुलाकात को जाने से परहेज करते थे और बीमारी के उज्र के साथ खाना नशीन हो गए थे।

इब्ने जियाद को यह फ़िक्र हुई कि किसी तरह हानी को बुलाना चाहिए। चुनॉनचे उसने हानी बिन उरवा के पास मुलाकात का पैगाम भेजा [2]हानी को उस वक्त किसी वक्ती ख़तरे का एहसास नहीं हुआ और उसी का नतीजा है कि इब्ने जियाद के दावती पैगाम पर उन्होने अपने बारह हजार जवानों में से किसी एक को भी वाकेये से इत्तेला देने की जरूरत महसूस नही की बल्कि खुद तने तनहा इब्ने जियाद के पास चले गए। वहाँ पहुँचे तो पहले ही से इब्ने जियाद का रंग बदला हुआ पाया। पहले तो सूरत देखते ही उसने अरब की एक मसल जबान पर जारी की कि 'اتتک بحائن رجلاہ' जिसका मतलब यह हुआ कि हानी अपने पैरों से मौत की तरफ आ रहे हैं। फिर उसने शुरैह काजी की तरफ़ रूख कर के यह शेअ्र पढ़ा

عذیرک من خلیلک من مراد

رید حیوتہ ویرید قتلی

''यानी मैं तो उसकी जिन्दगी चाहता हूँ और वह मेरी जान लेने का दरपै है। खुदा ही समझे उस कबील ए मुराद वाले तुम्हारे दोस्त से''

इस से हानी समझ गए कि बजाहिर राज अफशा हो चुका है मगर उन्होंने कहा ''क्यों अमीर क्या मुआमिला है?'' उसने बड़े गुस्से से कहा कि

[1]अख़बारूत तुवाल पेज/237

[2]अख़बारूत तुवाल पेज/238, तबरी जि/6, पेज/204

"अरे कितने गजब की बात है कि तुम ने अपने घर को खलीफ ए वक्त और तमाम मुसलमानों के खिलाफ साजिशो का अड्डा बनाया है तुम ने मुस्लिम बिन अकील को बुला कर अपने घर में रखा है। उनके लिए असलहा जमा कर रहे हो अपने गर्दो पेश के घरों म उनकी मदद के लिए आदमी जमा कर रहे हो और समझते हो कि यह बातें सब मुझसे छिपी रहेगी।"

हानी ने पहले इन बातो की सेहत से इन्कार किया मगर जब उसने मआकिल को बुला कर सामने खड़ा कर दिया और हानी को मालूम हुआ कि यह शख्स जासूस है तो अब उनके पास कोई जवाब न था और थोड़ी देर के लिए वह मदहोश से हो गए। फिर उन्होंने अपने होश व हवास को जमा करके कहा। अब मुझसे अस्ल हकीकत सुनिये। बावर कीजिये बखुदा एक लफ्ज भी गलत न कहूँगा। वाकेया यह है कि मै ने मुस्लिम को न खुद बुलाया और न मुझे उनकी तहरीक के मुतअल्लिक कोई इल्म था मगर वह खुद मेरे पास आ गए और मेरे मकान पर कयाम के ख्वाहिश मन्द हुए अब मुझे शर्म दामनगीर हुई और इन्कार न बन पडा। इस तरह मैं ने उन्हे मेहमान कर लिया और पनाह दे दी ताहम मैं आप से यह अहद करता हूँ मैं आपके खिलाफ कोई जारिहाना इकदाम नहीं करूँगा और अभी आ कर अपने को आपके हवाले कर दूँगा। मगर इतनी इजाजत दे दीजिये कि मैं जा कर मुस्लिम से कह दूँ कि मेरे घर से निकल कर जहाँ चाहें चले जाये ताकि उनके पनाह देने की जिम्मेदारी से सुबुकदोश हो जाऊँ। फिर मुझे उनसे कोई मतलब न रहेगा।

इब्ने जियाद ने कहा "नहीं जब तक उन्हें खुद मेरे पास हाजिर न करो तुम नहीं जा सकते" हानी ने कहा यह तो नहीं हो सकता कि मैं अपने मेहमान को बुला कर आपके सिपुर्द करूँ कि आप कत्ल कर दे।"[1]

बात इतनी बढ़ी कि इब्ने जियाद ने कहा "तुम को उन्हें लाना होगा" नहीं तो मैं तुम्हारा सर कलम करा दूँगा।

हानी ने कहा ऐसा हुआ तो आपके मकान के गिर्द बिजलियाँ कौंदती होंगी। उनका खयाल था कि उनका कबीला उनकी मदद करेगा यह सुनना था कि इब्ने जियाद को गुस्सा आया और कहा "अच्छा तुम बिजलियो से मुझे डराते हो। लाओ उसे मेरे करीब लाओ। सिपाही दोड़ पड़े। हानी को ज़ालिम इब्ने ज़ियाद के क़रीब लाये। नतीजा यह था कि बूढ़े लेकिन बात के पक्के हानी का सर्द चेहरा छड़ी की जर्ब से खून में रंगीन हो गया। हानी बिल्कुल

---

[1] तबरी जि/2 पेज/205, इरशाद पेज/216 अल अखबारुत तवाल पेज/238

निहत्ते थे उन्होने एक सिपाही की तलवार पर जो उनके पास खडा था हाथ डाला कि उससे छीन लें। इब्ने ज़ियाद ने कहा अच्छा अब तो तुम खारजी करार पा गए तुम्हारा खून हमारे लिए हलाल है।" जल्लाद बे दर्दी से उन्हें खींच कर ले गए और क़ैद खाने मे डाल दिया[1]

बनी ज़ुबैदा का सरदार अम्र बिन हुज्जाज, हानी बिने उरवा का बरादरे निस्बती (ससुराली अजीज बहनोई) था।[2]

उसे इत्तेला हुई कि हानी क़त्ल कर डाले गए तो वह मुजहज के बहुत से जिरह पोश सवार ले कर दारूल अमारा पर चढ दौड़ा और तलवारों की झकार, घोड़ों की टापों की आवाज ने हानी के दिल में रिहाई की तवक्कुआत पैदा कर दिये लेकिन अफ़सोस की शुरैह क़ाजी की फहमाइश और उसके कहने से हानी क़त्ल नहीं हुए हैं बल्कि बाज मसालेह (मसलहतों) से एक महदूद जमाने तक नजर बन्द कर दिये गए हैं। वह सब मुतमइन हो कर वापस गए।[3]

हजरत मुस्लिम के लिए यह मौका बहुत सख्त था। उनका पनाह देने वाला, वफादार और मुस्तकिल मिजाज बहादुर हानी बिन उरवा उनकी वजह से जदो व कूब (पिटाई) की तौहीन आमेज तकलीफ़ बर्दाश्त करके दुश्मन के कैद खाने में था और मुस्लिम के गिर्द घर में खानदाने मुराद की औरतें नाला व शेवन (रोना पीटना) कर रही थीं[4] क्या अब भी मुस्लिम बिन अक़ील छुपे बैठे रहते या इस वजह से कि यहाँ उनका कयाम मालूम हो गया है किसी दूसरे क़ाबिले एतेमाद शख्स के यहाँ जा कर मख़्फ़ी (छुप) हो जाते? हरगिज नहीं। गैरते बनी हाशिम का यह तकाजा न था। उन्होंने यह तय कर लिया कि हानी नहीं तो फिर मैं भी नहीं। तबरी ने साफ तौर पर तसरीह (बयान) की है कि मुस्लिम का जग के लिए निकलना अपने साथियों की इत्तेला के बगैर था और कोई करारदाद उस दिन के मुतअल्लिक न हुई थी वह एक मर्तबा उस वक्त खड़े हो गए जब कि उनको मालूम हुआ कि हानी बिन उरवा मुरादी जदो कूब के बाद कैद किये गए हैं।[5]

---

[1] तबरी जि/6. पेज, 206 इरशाद पेज/217
[2] तबरी जि/6. पेज/205
[3] तबरी जि/6. पेज/195–206–207 इरशाद पेज/217–218
[4] तबरी जि/6. पेज/207 इरशाद पेज/218
[5] तबरी जि/6. पेज/58

देनवरी का बयान है कि जनाबे हानी क़त्ल कर दिये गए और उनकी शहादत का हाल सुन कर जनाब मुस्लिम बाहर निकले।[1] इब्ने जियाद ने मस्जिद में आ कर फिर एक तहदीदी तकरीर की अभी वह मिम्बर से उतरा न था कि लोग दौड़ते हुए ''बाबुत तमारीन' (मस्जिद का एक दरवाज़ा) से मस्जिद में दाखिल हुए यह कहते हुए कि इब्न अकील आ गए। इब्ने जियाद घबरा कर मिम्बर से उतरा और तेजी के साथ कस्र के अन्दर जा कर दरवाजे कस्र के बन्द कर लिये।[2]

वाकये की नागहानी हैसियत को देखते हुए अब यह तवक्को तो की ही नहीं जा सकती थी कि वह 18 हज़ार बैयत करने वाले सब मुस्लिम के गिर्द जमा हो जायेंगे और जंग में उनके साथ शिरकत करेंगे और फिर जबकि कूफ़े के महल्ले भी एक दूसरे से मुत्तसिल नही थे बल्कि काफी फासला रखते थे। हाँ यह मुहल्ला कि जिस मे मुस्लिम का कयाम था। काफी वुसअत रखता था और उसी के अतराफ में मुस्लिम के गिर्दा गिर्द चार हजार आदमी मौजूद थे और मुस्लिम की तरफ से जूँही 'या मन्सूरे उम्मत' का नारा बलन्द किया गया जो उनका शेआर यानी इम्तेयाजी नार-ए-जंग था तो शर्मा शर्मी में वह चार हजार आदमी जमा हो गए लेकिन जाहिर है कि इस महदूद वक्त में जबकि जंग के पहले से कुछ आसार न थे वह शाही मुनज्जम फ़ौज से कहाँ तक मुकाबले के लिए तैयारी कर सके होंगे। खुसूसन जबकि उन चार हजार में भी अक्सर ऐसे ही अवाम थे जो नताएज पर गौर किये बगैर वक्ती इकदामात पर आमादा हो जाते हैं और जिनका हकीकी शिया-ए आले रसूल[स0अ0] होना हरगिज़ साबित नहीं

बहरहाल जनाबे मुस्लिम ने इस मुखतसर लशकर को तरतीब दिया और पेश कदमी शुरू की मगर जनाबे मुस्लिम दारूल अमारा तक पहुँचने भी न पाये थे कि वह लोग वापस जाना शुरू हो गए और पहुँचते पहुँचते सिर्फ तीन सौ रह गए।[3] लेकिन इब्ने जियाद इस ख़याल से कि मुस्लिम के साथ कोई बड़ी जीमयत है कस्र के अन्दर किला बन्द हो गया और मुस्लिम ने बनी मुराद की एक जमाअत को लिए हुए कस्र का मुहासिरा कर लिया। रफ्ता रफ्ता दूसरे

---

[1] अख़बारूत तुवाल पेज / 239

[2] तबरी जि / 6, पेज / 207 इरशाद पेज / 218

[3] तबरी जि / 6, पेज / 207

लोग भी आते गए यहाँ तक कि मुस्लिम के पास काफी जीमयत हो गई और जोहर से शाम तक बराबर लड़ाई होती रही।[1]

मौजूदा जमियत को जो मुस्लिम के साथ मुहासरे में शरीक थी मुखतलिफ कबाएल (कबीले की जमा) के मखलूत (मिले जुले) मजमे पर मुशतमिल समझना चाहिए और क़बाएल के रूहे रवाँ शुयूख (सरदार) व अशराफ़ (खास खास) कबाएल होते हैं जो हुकूमत के हवा ख्वाह (चापलूस) और पाबन्दे फ़रमान थे और इब्ने जियाद ने बर वक्त पेश बन्दी यह की थी कि आज सुबह से शुयूख व अशराफ को बुला कर अपने पास जेरे हिरासत रख लिया ताकि उनसे हस्बे मौका काम निकाला जा सके बावजूदये कि इब्ने जियाद के पास महल मे उस वक्त कोई फ़ौज नहीं थी बल्कि कस्ने हुकूमत मे सिर्फ तीस पूलिस के सिपाही थे और बीस आदमी उसके मखसूसीन और रूअसाए कबाएल मे से [2]या ज्यादा से ज्यादा दो सौ आदमी मौजूद थे [3] इस लिए वह कोई मुक़ाबला नहीं कर सकता था। लेकिन एक तरफ उसने यह कोशिश की कि कस्र का दरवाजा खुलने न पाये।[4]दूसरे कुछ आदमी इधर उधर भेज कर बाहर से सिपाही इकट्‌ठा करके यह इन्तेजाम किया कि शहर की नाका बन्दी की जाये यानी चौराहों और आम रास्तों पर पहरे बैठ जायें कि कोई शख्स मुस्लिम की मदद को न आ सके और सूरते वाकेया की बिना पर यह अम्र लाजिम था कि मुस्लिम की मदद को आने वाले मुजतमा हैसियत से किसी लशकर के साथ न आते बल्कि इक्का दुक्का जिस को खबर होती जाती वह तने तनहा या अपने भाई बन्दों के साथ मुस्लिम की शिरकत के लिए आता और वह फ़ौरन गिरफ्तार हो जाता था। चुनाँन्चे अब्दुल आला बिन यजीद कलबी अपने घराने के कुछ नौजवानों को साथ लिये आ रहे थे जिनको कसीर बिन शहाब ने गिरफ्तार कर लिया और मुहल्ला बिनी अम्मारा की तरफ से अम्मारा बिन सलखब अजदी ने हथियार जिस्म पर आरास्ता करके चाहा था कि मुस्लिम के पास आयें लेकिन मुहम्मद बिन अशअस ने गिरफ्तार कर लिया।[5]यह दोनों जाँबाज मुस्लिम व हानी की शहादत के बाद पिसरे जियाद के

---

[1]तबरी जि/6, पेज, 207 इरशाद पेज/218
[2]तबरी जि/6, पेज 207 इरशाद पेज 219
[3]अख़बारूत तुवाल पेज/239
[4]तबरी जि/6, पेज/208
[5]तबरी जि/6, पेज/208

हुक्म से कत्ल कर डाले गए।[1] इस तरह मुस्लिम से मुख़्तलिफ अतराफ़ व जवानिब की मदद कता हो गई चुनाँनचे हबीब इब्ने मुज़ाहिर मुस्लिम बिन औसजा और अबू सुमामा साएदी ऐसे खास लोग जो जनाबे मुस्लिम के पास पहुचने से कासिर रह गए इसके अलावा अशराफ़ कबाएल को मजमा के मुन्तशिर करने का हुक्म दिया गया वह लोग दारूल अमारा के बाला खाने पर चढ़ गए और उन्होने अपने कबीले वालो को पुकार पुकार कर हमदर्दाना अन्दाज़ में कसमें खा खा कर यकीन दिलाया कि अनकरीब मरकज़ी हुकूमत शाम की जानिब से बहुत बड़ी फौजे आने वाली हैं और इस सूरत मे तुम्हारे जान व माल व औलाद सब तल्फ़ (बरबाद) हो जायेंगे। दमिश्क से फौजें आने की ख़बर हर तरफ फैला दी गई जिसके बाद यह आलम हुआ कि औरते अपने घरों से निकल निकल कर अपने बाप भाई के पास आतीं और कहती थीं कि चलो वापस चलो। दूसरे लोग काफी हैं बाप या भाई अपने बेटे या भाई के पास आता और कहता था कि अरे कल दमिश्क से लशकर आ जायेगा तो फिर तुम क्या करोगे। चलो लड़ाई से हाथ उठाओ और मजबूर करके उसे अपने साथ ले जाता था। उसका नतीजा यह हुआ कि शाम होते होते सिर्फ तीस आदमी हजरत मुस्लिम के पास रह गए आप ने मस्जिद में जाकर नमाजे मग़रिब पढ़ी। नमाज खत्म होने के बाद जब आप बाहर निकले तो रफ्ता रफ्ता वह बकिया तीस भी चले गए।[2] अब मुस्लिम तनहा बाजारो मे फिरने लगे और कोई इतना तक न था कि आपको रास्ता बता दे। आप तारीकिये शब में यूँही चले जा रहे थे यहाँ तक कि कबीले ए कन्दा मे पहुँच गए [3] उस क़बीले की औरत तौआ जो पहले मुहम्मद बिन अशअस की कनीज थी और उसके आजाद करने के बाद उसैद हजरमी के निकाह में आई जिस से एक लड़का बिलाल पैदा हुआ। यह कहीं गया हुआ था और तौआ घर के दरवाज़े पर खड़ी उसका इन्तेजार कर रही थी जनाबे मुस्लिम ने उसे देख कर बाद सलाम पानी पीने को माँगा। औरत खुदा तरस थी वह गई और पानी लाई जनाबे मुस्लिम बैठ गए और पानी पिया वह बर्तन रखने घर में गई। आई तो देखा कि यह फिर भी बैठे हैं। उसने कहा आप पानी पी चुके अब अपने घर जाइये मुस्लिम खामोश रहे उसने जब दोबारा और सह (तीसरी) बारा कहा तो मुस्लिम ने

---

[1] तबरी जि/6, पेज/214

[2] अख़बारूत तुवाल पेज/240

[3] अख़बारूत तुवाल पेज/140

जवाब दिया कि "ऐ कनीजे खुदा। मेरा इस शहर में कोई घर नहीं है। क्या तुम मुझे पनाह दे कर सवाब हासिल कर सकती हो मुमकिन है कि इसके बाद मैं कभी इसका मुआवजा तुम्हारे साथ कर सकूँ। उसने हैरान हो कर पूछा 'आप हैं कौन? और वाकेया क्या है? फरमाया मैं मुस्लिम बिन अकील हूँ यहाँ के लोगो ने मेरे साथ गद्दारी की। मुझसे नुसरत के वादे किये और अब मेरा साथ छोड़ दिया ' उस ने कहा अच्छा आप मुस्लिम हैं? कहा "हाँ" मैं वही हूँ। यह सुनना था कि वह आपको अपने घर में ले गई और मकान के एक मख़सूस कमरे में आपके लिए फर्श बिछा दिया और खाना हाजिर किया मगर आपने खाना नाश नहीं किया थोड़ी देर में उसका लड़का आया और उसने माँ को एक कमरे में बार बार आते जाते देख कर सबब दरयाफ़्त किया और इख़फा (छुपाने) की कोशिश महसूस करके ज्यादा कद करने लगा यहाँ तक कि तौआ को वाकये का इजहार करना पड़ा इस ताकीद के साथ कि इसका किसी से इजहार न करना। वह सुन कर खामोश हो गया और रात गुजरने का इन्तेजार करने लगा।[1]

इधर इब्ने जियाद ने जब देखा कि खतरा बजाहिर बिल्कुल नहीं रहा तो अपने आदमियों को हुक्म दिया, कि साएबानों मे देखें, कही इब्ने अकील साथ वाले साएबानों में छुपे न हों। पूरे तौर पर इतमीनान कर लेने के बाद इब्ने ज़ियाद ने अम्र बिन नाफे को हुक्म दिया कि शहर में ऐलान कर दे कि आज इशा की नमाज के लिए हर शख़्स को मस्जिद मे आना जरूरी है कोई शख़्स नमाज के वक्त अपने घर में न रहे। वरना उसके जान व माल की जिम्मेदारी अमीर के सर न होगी। थोड़ी देर में मस्जिद के अन्दर लोगों का हुजूम हो गया। इक़ामत कही गई और पिसरे ज़ियाद ने अपने दायें बायें मुहाफ़िज खड़े कर दिये। उस के बाद नमाज पढाई नमाज के बाद मिम्बर पर जा कर तकरीर की कि इब्ने अकील ने जो मुखालिफत का हंगामा उठा रखा है तुम ने देखा जिसके घर मे इब्ने अकील को पायेंगे उसके जान व माल की जिम्मेदारी हम पर नहीं और जो उन्हें हमारे पास लायेगा उसको उनकी दियत (खून बहा) दी जायेगी। उसके बाद हसीन बिन तमीम को हुक्म दिया कि तमाम शहर की खाना तलाशी करे और इब्ने अकील का पता लगाये। और लोगों को अम्र बिन हरीस की जिम्मेदारी पर छोड़ कर ख्वाब गाह मे दाखिल हो गया[2]

---

[1] तबरी जि/6, पेज/208-210

[2] अखबारुत तुवाल पेज/40

तौआ का लड़का बिलाल सुबह होते ही मुहम्मद बिन अशअस के नौ उम्र लड़के अब्दुर्रहमान के पास गया और उसे मुस्लिम के अपने घर में होने की इत्तेला दी और वह फौरन अपने बाप के पास जो इब्ने जियाद के दरबार में जा चुका था, पहुचा और उसके जरिये इब्ने जियाद को मुत्तेला किया [1] इब्ने जियाद ने मुहम्मद बिन अशअस की सरकरदगी में मुस्लिम की गिरफ्तारी के लिए फौज रवाना कर दी हजरत मुस्लिम ने जो घोड़ों की टापों की आवाज़ सुनी समझ गए कि फौज मेरी गिरफ्तारी के लिए आई है। तलवार ले कर हुजरे से बाहर निकले। इतनी देर मे फ़ौजी घर के अन्दर दाखिल हो गए। आप ने हमला किया और ऐसा सख्त कि दुश्मनों को घर से बाहर निकाल दिया वह दोबारा हुजूम करके अन्दर घुसे और आप ने दोबारा उन्हें बाहर कर दिया बेशक उस हमले में बकर बिन हमरान अहमरी की तलवार से उन के ऊपर का लब क़ता (काट) हो गया और नीचे के लब पर भी ज़ख्म आ गया और दो दाँत शिकस्ता हो गए फिर भी दुश्मनों को यह यकीन हो गया कि मुस्लिम पर यूँ फतह पाना मुशकिल है। लिहाज़ा वह मकान की छत पर चढ़ गए और पत्थर मारने लगे इसके अलावा सेठों के मुठ्ठे आग से जला कर ऊपर से फेंकने लगे। जनाबे मुस्लिम ने यह बुजदिलाना तरीक ए जग देखा तो आप तलवार खींचे हुए मकान से बाहर कूचे में आ गए मुहम्मद बिन अशअस ने पुकार कर कहा कि आप के लिए अमान है। ख्वाह मख्वाह तलवार न चलाइये। आप ने जंग जारी रखी और रजज पढ़ने लगे जिसका मजमून यह था कि "मैं ने कसम खाई है न कत्ल हूँगा मगर आज़ादी की हालत में अगरचे मौत नागवार चीज है मगर बहरहाल वह एक न एक दिन तो हर शख्स के लिए जरूरी है मुझे तो यह अन्देशा है कि कहीं मुझ से झूठ न बोला जाये और धोखा न दिया जाये मुहम्मद बिन अशअस ने कहा कि "नहीं आप से झूठ नहीं कहा जायेगा और न धोखा दिया जायेगा। इतमीनान रखिये।" [2]मुस्लिम जग करके थक चुके थे और जख्मो से चूर थे उन्होने पूछा क्या वाकई मुझे अमान है? उसने कहा "हाँ आप अमान में हैं" जितने मुहम्मद बिन अशअस के साथी थे उन सब ने भी अमान का वादा किया सिवा एक अम्र बिन उबैदुल्लाह बिन अब्बास सलमी के जिस ने कहा, मैं इस बारे मे कुछ नहीं जानता और यह कह कर वह अलग हट गया। मुस्लिम ने कहा। देखो तुम ने मुझे अमान दी

---

[1] अखबारूत तुवाल पेज, 241

[2] तबरी जि/6, पेज/210, इरशाद पेज, 222

है। इस लिए मैं तलवार अपनी नियाम मे रखता हूँ और अगर तुम अमान न देते तो मैं कभी अपने को तुम्हारे हवाले न करता। इतनी देर में एक मरकब लाया गया जिस पर मुस्लिम को सवार किया और सिपाहियों ने गिर्द हलका करके आपकी तलवार कमर से निकाल ली। यह होना था कि मुस्लिम का दिल टूट गया और कहा। यह पहली गद्दारी है। मुहम्मद बिन अशअस ने कहा 'मुझे उम्मीद है कि तुम्हे कोई ख़तरा पेश न आयेगा ' मुस्लिम ने कहा "अच्छा तो बस एक उम्मीद ही है और अमान का वादा तुम्हारा क्या हुआ? 'इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजेऊन' 'إنا لله وإنا إليه راجعون' यह कह कर रोने लगे। उम्र बिन अब्दुल्लाह बिन अब्बास सलमी जिस ने पहले ही वाद–ए–अमान से इन्कार किया था कहने लगा।

"जो ऐसी मुहिम के लिए खड़ा हुआ हो जिसके लिए तुम खड़े हुए थे उसे खतरा देख कर रोना तो नहीं चाहिए ' मुस्लिम ने कहा 'वल्लाह मैं अपने लिये नहीं रोता मैं तो हुसैन[अ०स०] और उनके साथियो के लिए रोता हूँ जो मेरे खत को देख कर कूफ़े की तरफ रवाना हो चुके होंगे।' फिर आप मुहम्मद बिन अशअस की तरफ मुतवज्जेह हुए। कहा। "ऐ अल्लाह के बन्दे! मुझे यक़ीन है कि तुम मुझे इज्न दिलवाने से क़ासिर रहोगे। अब तुम इतना करना कि एक क़ासिद हुसैन[अ०स०] के पास भेज देना जो मेरी तरफ से उन से जा कर कह दे कि मैं तो दुश्मनों के हाथों गिरफ्तार हूँ और यकीन है कि शाम होने के पहले तक क़त्ल हो चुकूँगा। मगर आप इधर आने का कस्द न कीजिये। और अहले कूफ़ा के फरेब में न आइये उनके तमाम वादे बिल्कुल गलत और क़ौल व करार झूठे हैं।' इब्ने अशअस ने वादा किया कि मैं जरूर कासिद रवाना करूँगा ' उसके बाद मुहम्मद बिन अशअस जनाबे मुस्लिम को ले कर दारूल अमारा के दरवाज़े पर पहुँचा और पहले खुद इजाज़त ले कर इब्ने जियाद के पास गया। उससे तमाम जग की कैफियत और फिर वाद–ए–अमान पर मुस्लिम को साथ लाने का तजकिरा किया इब्ने जियाद ने कहा। अमान देने वाले तुम कौन थे? हम ने तुम्हें क्या इस लिए भेजा था कि तुम उन्हें अमान दो? हम ने तो इस लिए भेजा था कि उन्हे हमारे पास ले आओ '

इब्ने अशअस में अब कहाँ जुरअत थी कि वह उसके बाद कुछ कहता, खामोश रहा [1]उस वक्त दारूल अमारा के दरवाजे पर बहुत से लोग इजाजते हुज़ूरी के इन्तेजार मे मौजूद थे जिन में अम्मारा बिन अक़बा, अम्र बिन हरीस,

---

[1]तबरी जि/6, पेज/211

मुस्लिम बिन अम्र बाहली और कसीर बिन शहाब मखसूस लोग थे। और एक सुराही ठंडे पानी से भरी हुई दरवाजे के करीब रखी हुई थी। जनाबे मुस्लिम बहुत प्यासे थे। उन्होंने कहा थोड़ा सा पानी मुझे पिला दो।' मुस्लिम बिन अम्र ने बड़े सख्त अलफाज में पानी पिलाने से इन्कार किया। मगर अम्र बिन हरीस ने अपने गुलाम को हुक्म दिया कि वह मुस्लिम को पानी पिला दे। उसने गिलास पानी से भर कर मुस्लिम के सामने पेश किया मगर जनाबे मुस्लिम ने जब पानी पीना चाहा तो मुँह से खून बहने लगा और पानी को रंगीन कर दिया। दो मर्तबा ऐसा ही हुआ। तीसरी दफा दो दाँत टूट कर गिलास में गिर पड़े। जनाबे मुस्लिम ने मायूस हो कर गिलास हाथ से दे दिया और कहा "मालूम होता है पानी मेरी किसमत से उठ चुका है।" इतनी देर में इब्ने जियाद का आदमी आया और मुस्लिम को अन्दर जाने के लिए कहा जब आप इब्ने जियाद के पास पहुचे तो अमीर कह कर उसे सलाम नहीं किया। इब्ने ज़ियाद ने कहा 'मुस्लिम अब तुम बच नहीं सकते। अभी कत्ल किये जाओगे। जनाबे मुस्लिम ने कहा 'मैं इसके लिए तो तैयार ही हूँ मगर मुझे इतना मौका दिया जाये कि मै किसी अपने शनासा से जो यहां हो कुछ वसीयत कर लूँ।' उसने कहा "अच्छा जिस से चाहो वसीयत कर दो ' मुस्लिम ने गिर्दो पेश नजर डाली तो उमर बिन सअद को पहचाना। आप ने उस से कहा कि तुम कुरैश के खानदान से हो मुझे इस वक्त तुम से कुछ राज की बातें कहना हैं जरा उन्हें सुन लो हुकूमते वक्त का खुशामदी सुनने के लिए तैयार न हुआ जिस पर खुद इब्ने जियाद ने कहा "आखिर सुन लेने में तुम्हारा क्या हर्ज है। उस पर उमर सअद उठा और मुस्लिम के साथ थोडी दूर आगे बढ़ कर एक ऐसी जगह बैठ गया जहाँ इब्ने जियाद की नज़र दोनों पर पड़ रही हो। जनाबे मुस्लिम ने कहा "मुझे एक बात यह कहना है कि मैं जब से कूफे में आया हूँ सात सौ दिरहम का मक़रूज हो गया हूँ। तुम मेरे बाद मेरी तलवार और जिरह फ़रोख्त करके यह कर्जा अदा कर देना। दूसरी बात यह है कि मेरे कत्ल होने के बाद मेरी लाश इब्ने जियाद से माग लेना और उसे दफन कर देना तीसरे यह कि इमाम हुसैन[अ०स०] के पास किसी को भेज कर उसके जरिये से मेरे वाकेये की इत्तेला करा देना ताकि वह वापस चले जायें और अहले कूफ़ा के फरेब में मुबतिला न हों।"

मुस्लिम ने बतौर राज यह बातें कहीं थी मगर बद अहेद उमरे सअद ने इब्ने जियाद के पास आ कर कहा आप जानते हैं मुस्लिम ने मुझ से क्या

कहा? यह यह बातें उन्होंने मुझ से की हैं यह ऐसा शर्मनाक रवैया था जिसे इब्ने ज़ियाद ने भी बुरा जाना और अरब की यह मसल जबान पर जारी की कि *ला यखूनकल अमीन व ला किन कद यूतमिनुल खाएन।* इमानतदार आदमी कभी खयानत नहीं करता मगर कभी कभी गलती से खाएन को अमानतदार बना दिया जाता है।[1] उसके बाद उस ने हर वसीयत के बारे में अपना फैसला सुनाया। कहा "तुम्हारे माल से हमे मतलब नहीं वह फ़रोख्त हो कर तुम्हारा कर्जा अदा कर दिया जाये और हुसैन[अ0स0] के बारे में यह है कि अगर वह हमारी तरफ न आये तो हमें उनसे कोई मतलब नही है मगर लाश, उसके बारे मे हम कोई वादा करने के लिए तैयार नहीं क्योंकि तुम ने हमारी मुख़ालिफत की और रिआया में इन्तशार पैदा किया लिहाज़ा हम तुम्हारी लाश के मुतअल्लिक़ किसी एहतेराम के जिम्मेदार नहीं हैं।[2]

इस वसीयत और उसके जवाब के बाद जो गुफ्तगू जनाबे मुस्लिम और इब्ने जियाद में हुई है वह खास तौर पर देखने के काबिल है देखना चाहिए कि मुस्लिम पर जो बगावत का इलजाम आएद किया जाता है उसके बारे में मुस्लिम क्या जवाब देते हैं और अपने कूफे आने की नौइयत क्या बतलाते हैं।

इब्ने ज़ियाद ने कहा। इब्ने अक़ील! तुम यहाँ आये थे लोगों में तफरक़ा डालने और आपस मे फसाद कराने कि एक जमाअत दूसरी जमाअत पर हमले करे और खाना जगी हो। मुस्लिम ने जवाब दिया और वह जवाब जिस ने आखिर तक हुसैनी मुक़ावमत (Mission) की नौइयत को जाहिर कर दिया। आप ने फरमाया कि नहीं। मैं इस लिए नहीं आया था बल्कि इस मुल्क वालों ने यह जाहिर किया कि तुम्हारे बाप ने उनके नेक आदमियों को कत्ल किया और उनके खून बहाये और उन मे (इस्लाम की सादगी को मिटा कर) वह अफआल व अमाल राएज किये जो किसरा व कैसर (बादशाहों) की सुन्नत में दाखिल थे तो हम आये। इस लिए कि उनके अखलाक व आदात की इस्लाह करें और उनको अदालत व इन्साफ और तालीमाते कुरआन पर अमल पैरा होने की दावत दें।[3]

वाक़ेयतन चूँकि मुस्लिम का कोई तर्जे अमल उनके इस बयान के खिलाफ़ जाहिर भी नहीं हुआ था। लिहाज़ा यह सफाई बगावत के इलज़ाम से उनके

---

[1] अख्बारुत तुवाल पेज 241–242

[2] तबरी जि/6 पेज/212

[3] तबरी जि/6 पेज/212 इरशाद पेज/226

बरी होने के लिए काफी थी मगर इस्तिबदाद (ज़ुल्म) के सामने दलील व बुरहान काम नहीं दिया करता इब्ने ज़ियाद ने हुक्म दिया कि उन्हें कस्र के बाला खाने पर ले जाया जाये वहाँ उनकी गर्दन कलम की जाये और फिर सर के साथ ही जिस्म को नीचे गिरा दिया जाये और इसके लिए वही बकर बिन हमरान अहमरी[1] जिसकी तलवार से जनाबे मुस्लिम के लब व दहन पर जख्म आया था नामजद किया गया।

जनाबे मुस्लिम इन्तेहाई सब्र व सुकून से तक्बीरो इस्तेगफार और सलवात के अवराद के साथ दारूल अमारा के कोठे पर तशरीफ़ ले गए और उनके सर को जुदा करके जिस्म को कस्र से नीचे फेंक दिया गया [2] रोजे सह शम्बा (मंगल) 8/ जिलहिज्जा सन 60 हिजरी जनाबे मुस्लिम ने जंग शुरू की।[3] और रोजे चहार शम्बा (बुध) 9/ज़िलहिज्जा को शहादत पाई।[4]

उसके बाद से शहर में खौफ व दहशत की अमलदारी और रोब व हैबत का पूरा दौर दौरा था लोग घरों से निकलना खतरनाक समझते थे इस लिए हर तरफ़ सन्नाटा था और एक को एक की खबर न थी।

इन्तेहा यह थी कि वही हानी बिन उरवा जिनके हमरिकाब 12 हजार मुसल्लह सवार होते थे और जिनके कत्ल कर दिये जाने की गलत ख़बर पर दारूल अमारा खिंची हुई तलवारों के हलके में आ गया था रस्सियों में जकड़ कर बाजार में लाये जा रहे थे और वहाँ आवाज़ दे रहे थे कि "कहाँ हैं मेरे कबीले बनी मुजहज के बहादुर! हाए अफसोस कि इस वक्त बनी मुजहज मुझे नजर नहीं आते " लेकिन अफ़सोस कोई मुतनफ्फ़िस (शख़्स) भी उनकी तरफ़ रुख करता नजर न आता था।

यहाँ तक कि इब्ने ज़ियाद के तुर्की ग़ुलाम ने अपनी तलवार से उनके सर व तन में जुदाई कर दी।[5]

इब्ने जियाद ने मुस्लिम व हानी के सरहाए बुरीदा हानी बिन अबी हबा हमदानी और ज़ुबैर बिन अरवह तमीमी के हाथ वाकये की मुख्तसर रूदाद के साथ रवाना किये और उन दोनों ने तफ़सीलात जा कर ज़बानी भी बयान

[1] दैनवरी ने उसका नाम अहमर बिन बकीर लिखा है। अखबारुत्तुवाल पेज/242

[2] तबरी जि/6, पेज/213, इरशाद पेज/226

[3] तबरी जि/6, पेज/215

[4] इरशाद दैनवरी ने शहादते जनाबे मुस्लिम की तारीख सह शम्बा 1, जिलहिज्जा सन 60 हिजरी दर्ज की है (अखबारुत्तुवाल पेज/242 यह दुरुस्त नहीं मालूम होती।)

[5] तबरी जि/6, पेज/213-214, इरशाद पेज/226

किये। यजीद ने जवाबन इस कारनामे पर बड़ी शाबाशी दी और लिखा कि तुम ने वही किया जिस की हमें तुम से उम्मीद थी। अब खुद हुसैन बिन अली[अ०स०] के बारे में तुम्हारी कारगुजारी देखना है।[1]

[1] अख़बारूत्तुवाल पेज / 242

उन्नीसवाँ बाब

मक्के से करबला तक

सफ़रे इमाम हुसैन[अ०स०] मनाज़िले सफ़र और करबला में वुरूद

कूफ़े में इन्केलाब, मुस्लिम व हानी की शहादत, यह सब कुछ हो गया मगर जाहिर है कि इस सब की इत्तेला बर वक्त मक्के मे क्यों कर पहुँच सकती थी। हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] को मुस्लिम का खत पहुँच चुका था कि यहाँ तशरीफ लाइये। सब आपकी इताअत के लिए तैयार हैं। यह खत जनाबे मुस्लिम ने आबिस बिन अबी शबीब शाकरी के हाथ [1]अपनी शहादत से सत्ताईस दिन पहले 12/जीकादा को लिखा था।[2] इस खत के पहुँचने के बाद आप के लिए कूफ़े का सफ़र इख्तियार करना जरूरी हो गया था। फिर भी आम हालात मे इतनी जल्दी की जरुरत नहीं थी कि आप हज के दो एक दिन बाकी रहने के बावजूद हज को तर्क फरमा दे। और मक्के से निकल खडे हों यह गैर मुतवक्का सूरत यकीनी तौर पर निहायत अहम हंगामी असबाब का पता देती है

आपकी उफ़ताद तबियत (पुर सुकून) और जौके इबादत का लाजमी तकाजा भी यह था कि आप इस साल के हज को जो आपकी जिन्दगी में आखिरी था मुकम्मल फरमा कर रवानगी का इरादा करते लेकिन एक दम हुआ यह कि हज की तकमील में दो दिन बाकी थे कि आप ने हज को उमरे से बदल कर मक्क ए मुअज्जिमा से रवानगी इख्तियार फरमा ली।

इसके असबाब आम तौर पर लोगों के सामने कुछ न थे क्योंकि हरमे इलाही के अन्दर कोई फौज व लशकर न था जिसे सब देखते मगर हाजियों के लिबास मे फौज के सिपाही आये हुए थे और उन्हें यह हिदायत थी कि हुसैन[अ०स०] जिस हाल मे भी हों उनको गिरफ्तार कर लो यह राज उस वक्त

---

[1]तबरी जि/6. पेज/211

[2]इरशाद पेज/230

खुला जब आप मक्के से बाहर आ चुके थे और फ़रजदक शायर ने आप से रास्ते में मुलाक़ात की और पूछा कि फरजन्द रसूल इतनी जल्दी किस लिए कि हज भी न हो सका? इमाम[अ०स०] ने जवाब दिया कि "अगर मैं इतनी जल्दी न करता तो वहीं गिरफ्तार कर लिया गया होता।"[1]बस यह चीज़ वह थी जिस ने इमाम हुसैन[अ०स०] को इराक़ की तरफ इस कद्र ताजील (जल्दी) के साथ रवानगी पर मजबूर कर दिया

नतीज-ए-आखिर इमाम के पेशे नजर था यानी शहादत, जिस पर आपकी वह तक़रीर गवाह है जो आप ने मक्क-ए-मुअज्जिमा से रवानगी के वक्त फरमाई थी आप ने कहा था कि 'मौत फरजन्दे आदम के गले का हार है और मुझे अपने असलाफ की मुलाकात का इश्तियाक है, उतना ही जितना याकूब[अ०स०] को यूसुफ[अ०स०] से मिलने का इश्तियाक था और मेरे लिए बहुत अच्छी है वह जगह जहाँ मैं कुश्ता हो कर गिरूँगा गोया मेरी आँखों में फिर रहा है वह समाँ कि मेरे जोड़ बन्द को सहराई दरिन्दे जुदा कर रहे हैं कोई चार-ए कार नहीं उस दिन से जो ख़ते तकदीर में गुजर चुका खुदा की मर्जी मे हम अहलेबैत[अ०स०] की मर्जी है। हम उसके इम्तिहान पर सब्र करते हैं और साबिरों के अज्र को हासिल करते हैं। रसूल[स०अ०] से उनके जिस्म के टुकड़े अलग नहीं हो सकते। जो शख्स हमारे साथ अपनी जान की कुर्बानी पर आमादा और खुदा से मुलाकात पर तैयार हो वह हमारे साथ सफर करे। मैं कल सुबह को इन्शाअल्लाह रवाना हो जाऊँगा यह थी वह तक़रीर जो आप ने गिर्दो पेश के लोगों के सामने की थी उस रात को जिसकी सुबह होते होते आप मक्के से रवाना हो गए इसके अलावा एक वाकेया यह है कि असनाए सफ़र (सफर के दौरान) में आप हर मन्जिल पर जनाब यहिया और उनकी शहादत को याद करते थे और फरमाते थे कि दुनिया की बे क़द्री के लिए अल्लाह के नजदीक यह काफी है कि इस दनिया में यहिया बिन जकरिया का सर कलम हो कर बनी इस्राईल के जिना कार के सामने बतौरे तोहफा भेजा गया।[2]

यह भी हकीकत में अपने मुस्तक्बिल की तरफ एक इशारा ही था जो आप बार बार फरमा रहे थे। फिर भी आप के लिए अपने अमल को इम्कानी तहफ्फुजात के हुदूद से आगे बढ़ने देना रवा नहीं था। आपके लिए मक्के से

[1]तबरी जि 6 पेज, 218
[2]इरशाद पेज 268

फौरन अलाहिदगी इख़्तियार करना उन खतरात की बिना पर जो उस वक़्त वहाँ पैदा हो गए थे लाजमी क़रार पा चुका था। उसके बाद आप कहाँ जाते? अकलन उसी जगह कि जहाँ के लोग इन्तेहाई इसरार के साथ आपको बुला रहे थे।

इस सूरत मे किसी शख़्स का यह पहलू आपके सामने लाना कि इस में जान का ख़तरा है तहसीले हासिल और फ़ुज़ूल था।

जान का खतरा तो था ही मगर इस खतरे के होते हुए किसी ऐसी तरफ जाना करीने (मुनासिब) मसलहत हो सकता था जहाँ जाना "नाख़्वान्दा (बिन बुलाए) मेहमान" की हैसियत रखता हो या ऐसी जगह जहाँ के लोग इलहाह (मिन्नतें) व जारी के साथ दावत दे रहे थे।

खतरे के मानी क्या हो सकते थे? यही कि जान जायेगी मगर जान जाना तो नागुजीर (यकीनी) थी, फिर यह जान एक इन्सानी और मजहबी फर्ज की अदाएगी के सिलसिले मे क्यो न जाये जिसका नाम है वादा वफाई। तालिबाने हिदायत पर इतमामे हुज्जत और खल्के खुदा की फरयाद रसी। इसी लिए जैसा कि पहले कहा जा चुका है हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] ने उन लोगों के खयाल की कभी रद नहीं की जो अहले कूफ़ा पर बे एतेमादी का इजहार करते थे और यह नहीं कहा कि मुझे उनसे उम्मीद है कि वह अब की अपनी बात पर क़ायम रहेंगे मगर उसी के साथ आप ने हमेशा अपनी रवानगी को उनकी तरफ जरूरी बतलाया। जैसाकि फरजदक से गुफ्तगू में जिस का तजकिरा अभी आयेगा आप ने फरमाया खान ए-काबा में गिरफ्तारी का जो खतरा था। उसका एक हद तक यकीनी करीना सामने आ गया उस वक़्त जब आपकी मक्के से रवानगी के मौके पर हाकिमे मक्का अम्र बिन सईद बिन आस की तरफ से एक फ़ौजी दस्ते ने यहिया इब्ने सईद की कयादत में बैरूने शहर आ कर आप से मजाहमत की और आपको वापस ले जाना चाहा हजरत ने वापस जाने से इन्कार किया और नतीजा यह हुआ कि तरफैन में थोडी देरे आवेजिश (बहसो तकरार) भी हुई मगर इमाम हुसैन[अ0स0] के साथ वाले पूरी बहादुरी के साथ मुकबिल जमाअत की मजाहमत को रोकने पर तैयार थे इस लिए उन लोगो को हटने पर मजबूर होना पड़ा और काफिला रवाना हो गया [1]देनवरी ने लिखा है कि खुद अम्र बिन सईद ने इस अन्देशे से कि सूरते हाल कुछ नाजुक न हो जाये अपने पुलिस ऑफीसर को वापस आने की

---

[1]तबरी जि 6 पेज/217-218, इरशाद पेज/220

हिदायत भेज दी यह सह शम्बा (मगल) 8/जिलहिज्जा सन 60 हिजरी का वाकेया है और उसी रोज़ कूफ़े में इब्ने ज़ियाद की फौज से जनाबे मुस्लिम बिन अकील का मुकाबला हो रहा था और दूसरे दिन जबकि वह शहीद हुए हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] मक्के से निकल कर वादिय–ए–गुरबत (मुसाफिरत) में रास्ता तय फरमा रहे थे।[2]

आपके कयामे मक्का के दौरान में अलावा आपके खास खास अजीजो के जो मदीने से साथ आये थ कुछ मखसूस अफराद अहले हिजाज़ में से और कुछ अहले बसरा में से आपकी खिदमत में पहुँच गए थे। अब यह सब आपके साथ साथ रवाना हुए।[3]

मक्के से करबला तक के सफर में हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने जिन मन्जिलों में कयाम किया था उन की तफसील के मुतअल्लिक मुअररेखीन (इतिहास कारों) में इख्तेलाफ है। जहाँ तक तारीखी वाकेयात की मदद से साबित होता है। उनकी तरतीब वाकेयात के साथ साथ हस्बे जैल है

1. सफ़्फ़ाह: यह मक्क–ए–मुअज्जिमा से रवानगी के बाद पहली वह जगह है जिस का नाम मिलता है यहाँ कयाम नहीं हुआ बल्कि रह गुजर ही मे फ़रजदक बिन गालिब शाएर से मुलाकात हुई।[4] और फ़रजदक ने कूफ़े की हालत बयान की कि लोगों के दिल अपकी तरफ मगर तलवारें उनकी बनी उमैया के साथ होंगी। आप ने फरमाया "तुम सच कहते हो लेकिन हर बात अल्लाह के हाथ में है। वह जो चाहता है करता है और हर दिन वह एक नया करिश्मा कुदरत का दिखाता है। अल्लाह की तकदीर अगर हमारी दिली ख्वाहिशों के मुताबिक हो तो हम उसका शुक्र करेंगे और अदा ए शुक्र के लिए उसी से मदद के तालिब होंगे और अगर कज़ा–ए–इलाही (मौत) हमारे मतलब मे सद्दे राह (रूकावट) हुई तो इन्सान के लिए यही क्या कम है कि उसकी नियत में सच्चाई और उसके जमीर में पारसाई हो।[5]

इसके माना यह हुए कि मकसद नेक हो और नियत बखैर, उसके बाद "हरचे बादा बाद" (जो भी हो) इस से साफ जाहिर है कि इमाम

---

[1] अखबारूत तुवाल पेज 244

[2] इरशाद पेज 228, दैनवरी का बयान है कि जिस दिन जनाबे मुस्लिम की शहादत हुई उसी दिन इमाम हुसैन[अ०स०] मक्का से रवाना हुए (अखबारूत तुवाल पेज/243

[3] इरशाद पेज/228

[4] अखबारूत तुवाल पेज/245

[5] तबरी जि/6, पेज/218, इरशाद पेज/228

हुसैन[अ०स०] किसी के वादों पर एतेमाद करके मन्जिले अमल में गामजन नहीं हुए थे बल्कि महज अल्लाह के भरोसे पर उसके आयद कर्दा फर्ज की तकमील के लिए इम्तिहान गाहे अमल में आ गए थे

2 तनईम इस जगह यमन का एक काफिला आता नजर आया, जिस से हजरत ने कुछ ऊँट अपने असबाब (सामान) और साथियो की सवारी के लिए किराए पर लिये और उनके मालिकों से फ़रमाया कि तुम में से जो इराक तक जाना चाहे उसे हम पूरा किराया देंगे और फिर कुछ इनआम भी अता करेंगे और जो रास्ते से वापस जाना चाहेगा उसे हम उतनी दूर का किराया दे कर वापस कर देंगे चुनाँनचे कुछ लोग उन में से हजरत के साथ इराक तक जाने के लिए तैयार हुए।[1]

इस से साबित होता है कि मक्क ए मुअज्जिमा से आपकी रवानगी अचानक बगैर किसी तैयारी के हुई थी इस लिए आप अपने साथियों के लिए मक्क–ए–मुअज्जिमा से बार बरादरी (बोझ उठाना) और सवारी का सामान भी पूरा मुहय्या नहीं फ़रमा सके थे

इसी मन्जिल पर अब्दुल्लाह बिन जाफर और यहिया बिन सईद बिनुल आस ने इमाम से आकर मुलाकात की। वाक़ेया यह था कि जब इमाम हुसैन[अ०स०] मक्क ए मुअज्जिमा से रवाना हो रहे थे उस वक्त अब्दुल्लाह बिन जाफ़र मदीने में थे जाहरी हालात की बिना पर इमाम का मदीने से आना उस खतरे के मातहत हुआ था कि वहाँ के हाकिम को यजीद का यह फरमान पहुँच चुका था कि अगर हुसैन[अ०स०] बैयत न करें तो उनका सर रवाना किया जाये और अब मक्के से रवानगी इस अन्देशे की वजह से हो रही थी कि वहाँ कुछ लोग हाजियो के लिबास मे भेज दिये गए थे ताकि जिस तरह मुमकिन हो हुसैन[अ०स०] को कत्ल कर डालें या गिरफ्तार करके शाम की सम्त भेज दें। इस मौके पर अब्दुल्लाह बिन जाफर ने औन व मुहम्मद अपने दोनों फरजन्दो के हाथ इमाम के नाम यह ख़त भेजा कि मैं आपको ख़ुदा का वासता देता हूँ कि आप मेरा खत देखते ही वहाँ से वापस आईये क्योंकि उस तरफ जिधर आप का कस्द है मुझे आपकी हलाकत और आपके अहलेबैत के तबाह होने का अन्देशा है और अगर आप दुनिया से उठ गये तो जमीन की रौशनी रूख़सत हो गई क्योंकि आप तालिबाने हिदायत के लिए निशाने राह और मोमिनीन की उम्मीदों का मरकज हैं सफर में जल्दी न कीजिये। मैं ख़ुद इस खत के पीछे

---

[1]इरशाद पेज 249

आ रहा हूँ औन व मुहम्मद यह खत ले कर इमाम के काफ़िले से रास्ते में जाकर मुलहक़ (मिले) हुए। उसके बाद अब्दुल्लाह बिन जाफर हाकिमे मदीना अम्र बिन सईद बिन आस के पास गए और उस से गुफ्तगू करके एक अमान का परवाना इमाम हुसैन[अ०स०] के लिए हासिल करने में कामयाब हुए।[1] अब्दुल्लाह की ख्वाहिश के मुताबिक अम्र बिन सईद ने उस पर मोहर की और अपने भाई यहिया बिन सईद को अब्दुल्लाह के साथ किया

अब्दुल्लाह, यहिया के साथ उस तहरीर को लिये हुए मदीने से रवाना हुए और रास्ते में इमाम से मुलहक़ हो कर तहरीर आपके सामने पेश की। आप खूब जानते थे कि मरकजी हुकूमत की पॉलीसी के खिलाफ एक मकामी हाकिम के अमान नामे की क्या वुकअत (हैसियत) है आपने अब्दुल्लाह बिन ज़ाफर की राय से इख्तिलाफ किया और फरमाया कि मुझे अब यहाँ कयाम करना मुनासिब नहीं है और अम्र बिन सईद के नाम उस तहरीर का जवाब लिख कर उनके सिपुर्द किया।[2] अब्दुल्लाह कुछ मजबूरियों की वजह से उस सफर मे साथ न जा सकते थे। उन्होने औन व मुहम्मद को हजरत के साथ रहने की हिदायत की और खुद मदीने वापस हुए।[3]

3. **ज़ाते इराक़**. शैख मुफीद[र०ह०] ने अब्दुल्लाह बिन ज़ाफर और यहिया बिन सईद की वापसी का जिक्र करने के बाद लिखा है कि हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] तेजी के साथ इराक की सम्त राह कता (रास्ता तय) करते रहे यहाँ तक कि ज़ाते इराक में पहुँच कर क़याम फरमाया।[4]

4. **बत्नुर्रमा और हाजिर**: "बतनुर्रमा" एक वादी का नाम था जिसके एक मकाम का नाम "हाजिर" है। उस मन्जिल से आप ने क़ैस बिन मुसहर को जो अहले कूफा के फरस्तादा आप के साथ साथ थे। अहले कूफा के नाम खत दे कर रवाना फ़रमाया।[5] उस ख़त का मजमून यह था

---

[1] अम्र बिन सईद मक्का और मदीने का मुशतरिका हाकिम था बजाहिर जिस वक्त इमाम रवाना हुए उस वक्त अम्र बिन सईद और उसका भाई यहिया बिन सईद दोनों मक्का में मौजूद थे और यहिया की कयादत मे एक दस्ते ने आ कर इमाम[अ०स०] का रास्ता रोका उसके बाद इमाम इराक के रास्ते पर रवाना हुए और यह दोनों मदीना चले गए वहीं अब्दुल्लाह बिन ज़ाफर ने अम्र बिन सईद से मुलाकात करके यह खत हासिल किया और यहिया बिन सईद के साथ इमाम से मन्जिले तनईम पर आकर मुलाकात की।)

[2] तबरी जि/6 पेज/219 इरशाद पेज/230

[3] इरशाद पेज/229

[4] इरशाद पेज/229

[5] अख़बारुत्तुवाल पेज/245

"यह खत हुसैन इब्ने अली[अ०स०] का बरादराने ईमानी व इस्लामी के नाम। बादे सलाम और हम्दे इलाही के मालूम हो कि मुस्लिम बिन अकील के ख़त से मुझे तुम्हारे हालात और दुरूस्ती और मेरी नुसरत पर तुम लोगों की हम आहगी (एक जुट) का इल्म हुआ जिस पर मैं ने खुदा से दुआ की कि वह हमारे मुआमले को बेहतरीन सूरत पर अन्जाम तक पहुँचाये और तुम को उसके मुतअल्लिक बेहतरीन अज्र अता फ़रमाये। मैं मक्क ए मुअज्जिमा से रोजे शम्बा (हफ्ता) 8/जिलहिज्जा को रवाना हो गया हूँ। जब मेरा खत तुम्हें पहुँचे तो इन्तेजामात मुकम्मल और तेज़ी से अपना निज़ाम दुरूस्त कर लेना क्योंकि चन्द ही रोज में मैं तुम्हारे यहाँ पहुचने वाला हूँ इन्शाअल्लाह। वस्सलाम "[1]

बाज का कौल है कि उस ख़त को अब्दुल्लाह बिन यकतीर के हाथ भेजा था।[2] इस खत के मजमून और नौइयत से साफ़ जाहिर है कि मक्के से निकलने के बाद यह सब से पहली मन्जिल ऐसी मन्जिल थी जहाँ इतमीनान की साँस ली जा सकती थी वरना उस खत को पहले ही रवाना कर दिया जाता।

कैस उस खत को लेकर कूफे की तरफ रवाना हुए मगर जब कादसिया पहुँचे तो हसीन की फ़ौज ने गिरफ्तार कर लिया और उन्हे इब्ने जियाद के पास भेज दिया इब्ने जियाद ने कहा कि अगर जान बचाना चाहते हो तो मिम्बर पर जा कर हुसैन बिन अली[अ०स०] के खिलाफ़ तक़रीर करो और उनकी मजम्मत बयान करो। कैस यह सुनकर मिम्बर पर चले गए मजमा हमा तन गोश (सुनने के लिए बेकरार) था कि देखें हुसैन[अ०स०] का कासिद हुसैन के खिलाफ क्या कहता है मगर उन्होंने मकसदे इमाम की इशाअत का यह एक मौका पैदा किया था। हम्दो सनाए इलाही के बाद मजमे को मुखातिब किया और कहा

"ऐयुहन्नास! (ऐ लोगो!) इस वक्त खल्के खुदा मे बेहतरीन शख्स हुसैन बिन अली[अ०स०] हैं जो रसूल की बेटी हजरत फातिमा जहरा[स०अ०] के फरजन्द हैं। मैं उन्ही का भेजा हुआ तुम्हारे पास आया हूँ। तुम्हारा फर्ज है कि उनकी नुसरत के लिए कदम आगे बढ़ाओ और उनकी आवाज पर लब्बैक कहो "

---

[1]अखबारूत तुवाल पेज/247 तबरी जि/5, पेज/223, इरशाद पेज/230

[2]इरशाद पेज/230

इब्ने ज़ियाद गज़बनाक हुआ और उस ने हुक्म दिया कि उन्हे कस्र के दरवाज़े से ज़मीन पर गिरा दो। बेरहमों ने उन्हें नीचे गिरा दिया जिस से उनके आज़ा चकना चूर हो गए।[1]

जब आप मन्ज़िल से आगे बढ़े तो एक चश्मे पर अब्दुल्लाह बिन मुतीअ् से मुलाक़ात हुई जो इराक़ से वापस हो रहे थे। उन्होने भी आप से मक्का छोड़ने का सबब दरयाफ्त किया और अहले कूफ़ा की दावत का हाल सुनकर दूसरे तमाम मशवरा देने वालो की तरह आपके कूफ़े जाने से इख़्तिलाफ़ किया।[2]

5. ज़रूद इस मन्ज़िल के क़रीब जो चश्मा था उस पर ज़ुहैर बिनुल क़ैन का ख़ैमा नस्ब था। यह हज करके मक्के से वापस हुए थे और कूफ़े जा रहे थे[3] शुरू में उनको ख़ानदाने रसूल से कोई अक़ीदत न थी बल्कि आम तौर पर वह अहले शाम के हम अक़ीदा समझे जाते थे जिसको उस ज़माने में 'उस्मानी' मस्लक कहा जाता था। मगर इमाम हुसैन अ०स० की नब्बाज़ फ़ितरत (परखने की सलाहियत) व बसीरत उनकी बातनी इस्तेअ्दाद (अन्दरूनी सलाहियत) को देख रही थी। आप ने उनके पास पैग़ाम भेजा कि मैं तुम से मिलना चाहता हूँ ख़ानदाने रसूल से जो वहशत आम तौर से उस गिरोह में पैदा कर दी गई थी उसकी बिना पर उन्होंने मिलने से इन्कार कर देना चाहा मगर उनकी बीवी ने जो उनके साथ थीं कहा कि वाह क्या ग़ज़ब की बात है कि रसूल का फ़रज़न्द तुम्हारे पास पैग़ामे मुलाक़ात भेजे और तुम मुस्तरद कर दो इस बात से मुतअस्सिर हो कर यह इमाम हुसैन अ०स० के पास गए और कुछ इस तरह सफ़ाई से उनके सामने इमाम हुसैन अ०स० ने अपने मुआमिले को पेश किया कि वह हमा तन (दिल व जान से) आपके मुवाफ़िक हो गए और बड़े ख़ुश ख़ुश अपनी क़यामगाह पर पहुँच कर उन्होंने हुक्म दिया कि हमारा ख़ैमा यहाँ से उखाड़ कर असहाबे हुसैन अ०स० के ख़ैमों के पास लगा दिया जाये। उसके बाद उन्होंने अपनी बीवी को तलाक़ दे दी और उनसे कहा कि वह अपने भाई के साथ मैके चली जायें फिर साथियों से मुख़ातिब हो कर कहा कि 'मैं ने इमाम हुसैन अ०स० के साथ मरने का मज़बूत इरादा कर लिया है जो शख़्स तुम में से हमारे साथ शहीद होना चाहे वह मेरे साथ रहे और जो न

---

[1] अख़बारुत तुवाल पेज/245, इरशाद पेज/230

[2] अख़बारुत तुवाल पेज/246, तबरी जि/6, पेज/224

[3] अख़बारुत तुवाल पेज/246 तबरी जि/6, पेज/224

चाहे वह यहीं से एलाहिदा हो जाये।[1] चुनानचे साथ वाले सब एलाहिदा हो गए

सूरते हाल से साफ जाहिर है कि इमाम की गुफ्तगू जुहैर से कुछ खुश आइन्द तवक्कुआत या उम्मीद अफजा तसव्वुरात पर मबनी न थी बल्कि सफाई के साथ उस अन्जाम कार को इन्केशाफ कर दिया गया था जिस पर अभी तक आम निगाहों में तवक्कुआत के पर्दे पड़े हुए थे। क्या इसके बाद भी यह समझा जा सकता है कि हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] किसी ग़लत फहमी में मुबतिला हो कर मन्जिले अमल में गामजन हो रहे थे

फिर भी चूँकि अवाम बिल्कुल जाहिर बीन (जो जाहिर है वही देखते हैं) होते हैं लिहाजा उन के तवक्कुआत इमाम की निसबत बहुत खुश आइन्द थे। वह समझते थे कि फरजन्दे रसूल अपने बाप भाई के पाय–ए–तख़्त और इराक़ ऐसे मर्दुम खेज (आबादी वाले) सूबे के सद्रे मरकज (Capital) कूफे की तरफ खुद वहीं के बाशिन्दो के इसरार व तलब पर जा रहे हैं वहाँ पहुँच कर तख़्त व ताज फ़ौज व लशकर और हशम व खेदम (नौकर चाकर गुलाम) सब कुछ मुहैया होगा। हजरत शाहे इराक तस्लीम किये जायंगे और आपकी जात में इमामत व सलतनत दोश ब–दोश जमा होगी। इन खयालात को पेशे नजर रख कर दुनिया के लालची लोग भी जुक दर जुक (गौल के गौल) आपके साथ शामिल हो रहे थे और रास्ते मे आपको वह मुखतसर काफ़िला जो मक्के से निकलते वक्त खास खास लोगों पर मुशतमिल था अब एक मुखतसर लशकर की सूरत इख्तियार कर चुका था और ऐसा मालूम होता था कि बेशक कोई बादशाह है जो अपने मरकज सलतनत की तरफ जा रहा है। लेकिन ज़ुरूद सब से पहला वह मकाम था जहाँ से रवाना होने पर परेशानी का आगाज हुआ जबकि अब्दुल्लाह बिन सुलैम और नदरी बिन मशमअल दोनों असदी शख़्सों ने जो मक्क–ए–मुअज्जिमा से फरागते हज के बाद बहुत तेजी से रवाना हो कर ज़ुरूद में हजरत से मुलहक़ (मिल गए) हो गए थे एक शख़्स को कूफ़े की तरफ से आते देखा। इमाम उसको देखते ही ठहर गए थे कि कुछ हालात कूफे का मालूम करें लेकिन उसने हुसैनी काफिले को देख कर रूख दूसरी जानिब कर दिया। लिहाजा इमाम आगे बढ़ गए। उन दोनों असदी शख़्सों ने आपस में मशवरा किया कि उससे कुछ कूफे के हालात दरयाफ्त करना चाहिये। चुनाँनचे यह दोनों क़ाफिले से जुदा हो कर इन्तेहाई

---

[1] तबरी जि/6. पेज/224 इरशाद पेज/231–232 अख़बारुत तुवाल पेज/246

तेज रफ्तारी से उस जाने वाले तक पहुँच गए, और साहिब सलामत के बाद उसका कौम व कबीला और नामो नसब दरयाफ्त किया मालूम हुआ कि बकीर बिन मशअबा असदी है तो उन्होंने भी अपना तआरूफ़ कराया और कहा कि हम भी कबील–ए–बनी असद में से है। जरा तुम से अपने शहर की हालत दरयाफ्त करना चाहते हैं उसने कहा ''हाँ सुनो मैं कूफ़े से बाहर नहीं आया था कि मुस्लिम बिन अकील और हानी बिन उरवा कत्ल किये गए और मैंने न अपनी आँखों से देखा कि उनकी लाश के पावँ में रस्सी बाँध कर बाजार में घसीटा जा रहा है [1]बड़ी वहशत नाक ख़बर थी दोनों आदमियों ने सुन लिया और मौका शनासी से काम ले कर उस वक्त उसे दिल में रख लिया। यहाँ तक कि वक्त उसके इजहार की इजाजत दे।

6. सअ्ल्बिया: इस मन्जिल पर दूसरे दिन शाम के वक्त जब इमाम हुसैन[अ०स०] ने क़याम किया तो दोनो असदी आपकी खिदमत में हाज़िर हुए और तस्लीम बजा लाये। हजरत ने सलाम का जवाब दिया। उन्होंने अर्ज किया कि हमें एक इत्तेला देना है। हुजूर फरमायें तो सब के सामने अर्ज करें। और अगर इरशाद हो तो इलाहिदा तखलिय (अकेले) में कहें? हजरत ने एक नजर हाजिरूल वक्त अशखास पर डाली और फरमाया ''इन लोगो से किसी राजदारी की जरूरत नही।'' उन्होने कहा ''कि आप ने उस सवार को देखा था जो कल शाम के वक्त आ रहा था?'' फ़रमाया 'हाँ। और मैं ने उससे कुछ हालात भी दरयाफ्त करना चाहे थे।' उन्होंने कहा ' कि हम ने हुजूर की मन्शा के मुताबिक़ उससे हालात दरयाफ्त किये और वह हमारे ही कबीले का आदमी है और बहुत समझदार, सच्चा और दानिशमन्द शख्स है उसने हम से बयान किया है कि वह कूफ़े से बाहर नहीं आया था कि मुस्लिम बिन अक़ील और हानी बिन उरवह दोनों शहीद कर दिये गए और उनकी लाशें बाजारो में फिराई गईं।'

'बिला शुबहा यह खबर इमाम हुसैन[अ०स०] के लिए बहुत अन्दोहनाक थी एक तरफ मुस्लिम की जुदाई का सदमा जो आपके चचाजाद भाई और मोअतमिदे (भरोसे मन्द) खास थे दूसरी तरफ अपने मुस्तकबिल के मुतअल्लिक जाहरी तमाम उम्मीदों का खत्म हो जाना लेकिन एक रईसे कौम और सरदार की हैसियत सख्त मौके पर बहुत जिम्मेदाराना होती है इस लिए कि तमाम लोगों की नजरें उसी पर होती हैं। अगर कहीं उसको इजतेराब हुआ तो फिर

---

[1]तबरी जि/6, पेज/225, इरशाद पेज/232

तमाम रूफका और साथियों पर मायूसी का छा जाना और इजतराब का पैदा हो जाना लाजमी अम्र है। इसी लिए उस मौके पर जब यह अचानक खबर इमाम हुसैन[अ0स0] को पहुँची तो आप ने सिर्फ इतना किया कि चन्द बार कहा "رحمۃ اللہ علیہما اِنّا لِلّٰہ وَاِنَّا اِلَیْہِ رَاجِعُوْن" और बस खामोश हो गए।[1] मतलब इसका यह हुआ कि उसी की राह मे हम अपनी जानों को निसार करते हैं और वही मुआवेजा देने वाला है।

असदी जो एक रात तक इस वहशत नाक खबर को अपने दिल मे रख कर उससे पूरा पूरा असर ले चुके थे और नताएज को हर तरह सोच कर दिल ही दिल में राय क़ायम कर चुके थे उन से अपने दिल की बात छुपाई न गई और वह बेसाख़्ता बोल उठे कि "खुदा का वास्ता अपनी और अपने घर भर की जान को खतरे में न डालिये यहीं से वापस हो जाईये क्योंकि कूफ़ में आपका न कोई मददगार है न दोस्त बल्कि हमें ख़ौफ है कि पूरा कूफ़ा आपके खिलाफ ही होगा।" हर शख़्स समझ सकता है कि एक हंगामी इज़तेराब और तअस्सुर के जजबे से जो हमदर्दी का मशवरा दिया जाये उसका जवाब ज्यादा सन्जीदा दलाएल का मुतहम्मिल नहीं हो सकता अगरचे हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] खुद पहले ही से अन्जाम पर मुत्तेला थे और आपका सफर जिन नताएज को पेशे नजर रख कर था उन मे इस खबर के आने से कोई तब्दीली नहीं हुई थी। लेकिन दूसरे अफराद के लिए वक़्ती जजबात के मुक़ाबिल मे अक़ली दलाएल के पेश करने का महल नहीं हुआ करता। इस लिए हजरत ने उस हंगामी जजबे के मातहत मशवरे का जवाब बिल्कुल मुलजाद एक फित्री जज्बे के एहसास से देना चाहा, और उसके लिए एक नजर औलादे अकील पर डाली फरमाया तुम्हारी क्या राय है। मुस्लिम तो शहीद हो गये तमाम अकीली जवान खड़े हो गये और कहा खुदा की कसम हम तो वापस न होंगे जब तक मुस्लिम के खून का बदला न ले लें या वहीं मौत का सागर हम भी न चख लें जो मुस्लिम ने चखा।" हजरत मुतवज्जेह हुए दोनों असदियों की तरफ और फरमाया "जब यह न हुए तो हम जिन्दा रह कर क्या करेंगे"[2] हाजेरीन में से एक शख़्स ने यह भी कहा कि "आप की और मुस्लिम की बराबरी नहीं। आप

[1]देनवरी ने कलम-ए इस्तेरजा के बाद इन अलफाज़ का इज़ाफा किया है कि "اِنَّ لِلّٰہِ نَحْتَسِبُ اَنْفُسَنَا" यानी हम अल्लाह के यहाँ हिसाब करते हैं अपनी जानों का. इरशाद पेज/232

[2]अख़बारूत तुवाल पेज/248, तबरी जि/6. पेज 225. इरशाद पेज/223

कूफे में पहुँच जायेतो कूफे के लोग आपकी मदद के लिए दौड पडेंगे।" हजरत ने उस ख़याल की कोई ताईद नहीं की और ख़ामोशी इख़्तियार फरमाई।[1]

रात यहीं गुजारी गई। सहर के वक्त आइन्दा की मन्जिलों के लिए काफी पानी साथ लेने के बाद आगे रवाना हुए यहाँ तक कि जबाला पहुच।[2]

7 **जब्राला:** इस मन्जिल पर अयास बिन असल ताई जो शोअरा में से था मुहम्मद बिन अशअस का भेजा हुआ ख़त ले कर इमाम के पास पहुँचा। चूँकि जनाबे मुस्लिम ने दुश्मन के हाथों गिरफ्तार होने और अपनी शहादत का यकीन हो चुकने के बाद यह वसीयत की थी कि मेरे बाद हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] को इत्तेला दे दी जाय कि कूफे की यह हालत है और आपके मददगार अब कूफे मे मौजूद नहीं हैं। इस लिए आप अब यहाँ आने का इरादा न कीजिये चुनाँनचे यह ख़त भेजा गया और मन्जिले जबाला पर इमाम[अ०स०] के पास पहुचा।[3]

उस क़ासिद ने यह भी इत्तेला दी की क़ैस बिन मुसहर क़त्ल कर दिये गए।[4]

क़राइन बतलाते हैं कि वह अफराद जिनकी मौजूदगी में जनाबे मुस्लिम की खबरे शहादत बयान की गई थी वाकई निहायत मखसूस राजदार हस्तियाँ थीं। इस लिए उस मजमे के रूबरू मुस्लिम की ख़बरे शहादत जाहिर होने के बाद फिर भी आम अहले क़ाफ़िला से वह राज ही की हैसियत से मख़फ़ी रही मगर हजरत ने अब इन वाकेयात को अहले काफिला से मख़्फ़ी रखना मुनासिब नहीं समझा क्योकि आप जानते थे कि रास्ते के बहुत से अरब आपके साथ इस गलत खयाल के मातहत हो गए हैं कि आप एक ऐसे मुल्क की तरफ़ जा रहे हैं जहाँ लोग आप की सलतनत तस्लीम कर चुके हैं लिहाजा आपको यह मन्जूर न हुआ कि वह लोग गलत फहमी में मुबतिला रहें और हकीकते हाल से तारीकी में रहने की वजह से आप का साथ दें आपको यकीन था कि जब आप सूरते हाल का इजहार कर देगे तो बस वही जाँ निसार आपके साथ रह जायेंगे जो हक़ीकतन आपके मकसद के साथ हमदर्दी रखते और आपकी

---

[1]तबरी जि/6, पेज/235. इरशाद पेज/233
[2]तबरी जि/6, पेज/211
[3]तबरी जि/6, पेज/203
[4]अख़बारुत्त तुवाल पेज/247

नुसरत मे जान तक से हाथ धोना पसन्द करते हैं। चुनाँनचे आप ने हस्बे जैल बयान के जरिये से तमाम अहले काफिला को सूरत हाल से मुत्तेला फरमाया

'हमें यह दर्दनाक खबर मालूम हुई है कि मुस्लिम बिन अकील और हानी बिन उरवा कत्ल कर डाले गए और हमारी इताअत के दावेदारों ने हमारी नुसरत से हाथ उठा लिया इस लिए जो शख्स तुम मे से वापस जाना चाहे वह वापस चला जाये हमारी तरफ से उस पर कोई जिम्मेदारी नहीं है। वस्सलाम।'

नतीजा वही हुआ जो मालूम था कि इस ऐलान के साथ ही लोग मुतफर्रिक होना शुरू हुए और तकरीबन सब दायें बायें रवाना हो गए। यहाँ तक कि ज्यादा तर वही लोग जो मदीने से आपके साथ आये थे बाकी रह गए।[1]

8 **बत्ने अक़ीक़**[2] इस मन्ज़िल पर कबील-ए-अकरमा का एक शख्स[3] अम्र बिन लौजान[4] मिला और उसने बताया कि इब्ने जियाद की तरफ़ से "क़ादसिया" और "अजीब" के दरमियान नाका बन्दी हो गई है और उसने कहा कि बराए खुदा वापस जाइये। आप के सामने सिवा तलवार और नैजो के कोई चीज आने वाली नही है, और खुतूत लिखने वालो पर भरोसा न कीजिये। वही लोग सब से पहले आप से लड़ने के लिए आयेंगे इमाम हुसैन[अ०स०] ने उसकी खैर ख्वाही पर उसे दुआये खैर दी और आगे रवाना हुए।[5]

बजाहिर यह सुनने के बाद कि क़ादसिया के नाके पर फौजों का पहरा है और वहाँ पहुचना अपने को यकीनी तौर पर दुश्मन के हाथों में गिरफ्तार करा देना है आप ने सिम्ते सफर में जरा तब्दीली फरमाई और इसी लिए कादसिया कि जिसका हर कूफे जाने वाले के महल्ले गुजर में वाके (रास्ते में पड़ना) होना जरूरी था और जहाँ कैस बिन मुसहहर गिरफ्तार किये गए थे आपके मनाजिले सफ़र में वाक़े (सफर के रास्ते में नहीं पड़ा) नहीं हुआ और आपका उस फौज से तसादुम नहीं हुआ जो हसीन की सरगर्दगी मे कादसिया के हुदूद मे मुकीम थी।

---

[1] अख़बारूत तुवाल पेज/247 तबरी जि/6 पेज/246, इरशाद पेज/233

[2] शैख़ मुफीद ने इस मन्ज़िल का नाम बत्ने अकबा लिखा है., इरशाद पेज/233

[3] अख़बारूत तुवाल पेज/247

[4] इरशाद पेज/233

[5] अख़बारूत तुवाल पेज/247 इरशाद पेज/233-234

9 सरात, बतने अकीक से रवाना हो कर इमाम ने यहाँ रात बसर की।[1]

10 शिराफ़ तबरी और शैख मुफीद की तसरीह के मुताबिक सअलबिया व जबाला के बाद उस मन्जिल पर इमाम ने हुक्म दिया की पानी भर लो और मश्कें और छागलें पुर कर लो।[2]इस मन्जिल से आगे बढे और अब गालिबन मुहर्रम सन 61 हिजरी का चाँद फलक पर नमूदार हो चुका है

पहली तारीख दोपहर को इमाम हुसैन[अ०स०] का काफिला मन्जिले शिराफ के हुदूद से आगे बढा था और कादसिया से तीन मील के फासले पर[3] कि आप के असहाब में किसी ने कहा 'अल्लाहो अकबर' इमाम[अ०स०]ने फरमाया बेशक अल्लाह सब से बड़ा है मगर इस वक्त तकबीर करने की वजह? उसने कहा, मुझे खुर्मे (खजूर) के दरख्त दिखाई दे रहे हैं। इसके यह मानी है कि कोई आबादी नजदीक है। असहाब में से कुछ लोगों ने कहा कि इस जगह तो कभी हम ने दरख्ते खुर्मा देखे नहीं हजरत ने फरमाया फिर तुम ही देखो क्या दिखाई देता है? उन्होंने कहा हम को तो घोड़ों की गर्दनें या कनोतियाँ (आँखें)[5] (आँखे)[5] नजर आती हैं। हजरत ने फरमाया मैं भी यही देखता हूँ।

11 जूहसम, मुखालिफ फौज को इधर मुतवज्जेह पाकर इमाम हुसैन[अ०स०] ने अपने असहाब से पूछा कि यहाँ कोई ऐसी महफूज जगह है जिसे हम अपनी पुश्त पर करार दे कर दुश्मन से सामने की जानिब से मुकाबला करें। मतलब यह था कि चारों तरफ से घिरने का इमकान बाकी न रहे। लोगों ने कहा यह जूहसम[6] पहाड़ मौजूद है जो आपके बायें पहलू की तरफ है। आप उसकी तरफ मुतवज्जेह हो जाइये। अगर हम दुश्मन के पहले उस हद तक पहुँच गए तो मकसद हासिल हो जायगा हजरत ने उस राये को पसन्द फरमाया और बाईं तरफ का रूख किया आने वाली सिपाह ने जो यह देखा तो उसने भी उसी तरफ का रूख कर दिया मगर इमाम वहाँ पहले पहुँच गए थे असहाब को हुक्म दिया कि खैमे नस्ब कर दिये जाये। फौरन तामील की गई। इतनी देर में वह फौज भी करीब पहुँच गयी मालूम हुआ कि हुर बिन यज़ीद रियाही

---

[1]अख़बारूत तुवाल पेज, 247

[2]तबरी जि/6, पेज/227 इरशाद पेज/233-234

[3]तबरी जि/6, पेज 220

[4]तबरी जि 6, पेज/227

[5]इरशाद पेज 234

[6]देनवरी ने जूजशम लिखा है अख़बारूत तुवाल पेज/247

एक हजार की फौज के साथ सददे राह होने के लिए आया है [1]चूँकि इमाम कूफे के आम रास्ते पर नहीं जा रहे थे जो कादसिया से हो कर गुजरता था इस लिए हसीन की फौज से तसादुम न हुआ जो क़ादसिया में पड़ी हुई थी मगर जासूसों ने हसीन को आपके इस तरह बच कर आगे बढ जाने की इत्तेला दे दी थी इस लिए हसीन ने हुर को इस एक हजार फौज के साथ आपका रास्ता रोकने के लिए आगे रवाना किया।[2] दोपहर का वक्त और गर्मी का मौसम[3] इसके अलावा यह भी मालूम होता है कि आप नाका बन्दी पर मुऐय्यन फ़ौज के हलक़े से बहुत दूर दूर आ रहे थे इस लिए हुर को आप तक पहुचने के लिए गैर मामूली तगवुदू (मेहनत) करना पडी और रेगिस्तान मे बगैर पानी साथ लिए हुए बहुत तेज चलना पड़ा इस लिए यहाँ पहुँचते पहुँचते फौज के सवार और घोड़े सब ही की प्यास के मारे हालत तबाह थी।

इमाम अपने असहाब समेत अम्मामे सरों पर रखे तलवारें हमाएल (लगाये) किये खड़े थे कि दुश्मन के हापते काँपते हुए घोड़े और सवार सामने आ कर खड़े हो गए। आसार प्यास की शिद्दत के गवाह थे और सूरते सवाल। हुसैन अ0 एक हस्सास दिल रखते थे जिस मे इन्सानी हमदर्दी कूट कूट कर भरी थी। आपके लिए दुश्मन की मौजूदा हालत नाकाबिले बर्दाश्त थी। आप ने अपने जवानों को हुक्म दिया कि उनको पानी पिलाओ और तमाम फौज को पूरी तरह सेराब कर दो हुक्म की देर थी इताअते इमाम पर कमर बस्ता जवान खड़े हो गए और सबको सेराब किया [4]हालत यह थी कि प्याले, लगनं, तश्त पानी से भरते थे और घोडों के पास ले जाते थे। जब हर घोडा तीन, चार, पाँच दफा पी कर मुँह हटा लेता था तब दूसरे घोड़े के पास ले जाते थे। यहाँ तक कि राबिक व मरकब (सवार और घोड़) सब सेराब हो गए अली बिन तआन महारबी हुर का एक साथी था वह कहता है कि मेरी हालत प्यास से बहुत तबाह थी और सब से आखिर में मैं पहुँचा जब इमाम हुसैन[अ0स0] ने मेरी और घोड़े की प्यास को देखा, फरमाया "राविया यानी शुतरे आबकश को बिठा लो (ऊँट पर पानी का ज़खीरा)।" मेरी जबान में राविया मश्क को कहते थे इस लिए मैं उसके मानी न समझा हजरत ने फरमाया 'जमल यानी ऊँट

---

[1]अखबारूत तुवाल पेज/247 तबरी जि/6, पेज/227
[2]तबरी जि/6, पेज, 227- 228
[3]अखबारूत तुवाल पेज, 247
[4]अखबारूत तुवाल पेज/247 तबरी जि/6 पेज/227

को बिठा लो मैं ने ऊँट को बिठाया। हजरत ने फरमाया अब पानी पियो। मगर मैं इतना बदहवास था कि जितना पीने की कोशिश करता पानी ज़मीन पर बहता और मुझ तक न पहुँचता इमाम ने कहा मश्क के दहाने को अपनी तरफ मोड़ लो। फिर भी मेरी समझ मे न आया तब हजरत खुद उठे और मश्क के दहाने को ठीक करके मुझे दिया। मैं ने खुद भी पानी पिया और अपने घोड़े को सेराब किया[1]

इमाम हुसैन[अ०स०] की इस बलन्द जरफी का जो असर मुखालिफ सरदार यानी हुर के दिल पर क़ायम हुआ उसके जाहिर होने का अभी वक्त न आया था लेकिन कम अज कम वह शशदर रह गया होगा कि इस एहसान के बाद अब उस बुज़ुर्ग फितरत इन्सान से किस तरह गुफ्तगू करूँ। इमाम ने भी अपने फित्री इस्तेकलाल (साबित कदमी) व इतमीनान की वजह से उस वक्त कुछ न पूछा कि तुम क्यो आये हो और क्या मतलब है? फौजे हुर के सिपाही अपने घोड़ो के साय में बागे हाथों से पकड़े हुए बैठ गए।[2] यहाँ तक कि ज़ोहर की नमाज का वक्त आया और इमाम हुसैन[अ०स०] ने हज्जाज बिन मसरूक जअफी को अजान का हुक्म दिया और उन्होने अजान कही। जब नमाजे जमाअत की सफें तैयार हो गई तो इमाम अपने नमाज के लिबास में खैमे से बरामद हुए और इकामत का हुक्म दिया। उसके बाद आप ने हुर से फरमाया कि तुम हमारे साथ नमाज पढ़ोगे या अपने साथियो को अलग नमाज पढ़ाना चाहते हो? हुर ने कहा नहीं आप नमाज पढाईये और हम सब आपके पीछे नमाज पढ़ेंगे। चुनाँनचे ऐसा ही हुआ और दोनो जमाअतो ने इमाम[अ०स०] के पीछे नमाज अदा की[3]

नमाज के बाद हजरत ने उस जमाअत की तरफ रूख किया और हम्दो सनाए इलाही के बाद हुर और उसकी फौज को मुखातब करते हुए इरशाद किया ऐ गिरोहे मरदुम मै खुदा की बारगाह मे और तुम्हारे सामने अपनी सफाई पेश करता हूँ मै तुम्हारी तरफ उस वक्त तक नहीं आया जब तक कि तुम्हारे खुतूत मेरे पास नहीं गए कि आप हमारी तरफ आइये हमारा कोई इमाम नहीं है, शायद खुदा आप के ज़रिये से हमें हिदायत पर मुजतमा (इकटठा) कर दे अब अगर तुम अपनी बात पर कायम हो तो मैं आ ही गया

---

[1] तबरी जि/6. पेज/247 इरशाद पेज/234

[2] अख़बारूत तुवाल पेज/247

[3] अख़बारूत तुवाल पेज/247 तबरी जि/6 पेज, 228

हूँ। अपने इरादे पर कायम रहूँ और अगर तुम मेरे आने से नाराज़ हो तो मैं वापस चला जाऊँ वहीं जहाँ से आया हूँ।" इस तकरीर के बाद खामोशी छाई और कोई जवाब नही मिला। आखिर हजरत अपने खैमे में तशरीफ ले गए और आपके असहाब आपके खैमे में मुजतमा हो गए हुर उस खैमे में जो उसके लिए लगाया गया था दाखिल हुआ और उसके कुछ साथी उसके पास जा कर बैठ गए दूसरे लोग मुतफर्रिक तौर पर उसी मैदान में उसी शान से कि सिपाहियो ने अपने घोड़ों की बागे हाथो में ले ली उन्हीं के साये में दोपहर का वक्त गुजरने तक बैठे रहे।[2] अस्र का वक्त हुआ तो हजरत ने अपने असहाब को हुक्म दिया कि रवानगी की तैयारी करो फिर आप ने बाहर आकर अस्र की नमाज का ऐलान किया और इसी सूरत से हजरत की इकतेदा में दोनो गिरोहों ने नमाज़ पढ़ी नमाज के बाद आपने फिर मजमे की तरफ़ रूख किया और हम्दो सनाए इलाही के बाद फरमाया अगर तक़वा इख्तियार करो और हकदार का हक पहचानों तो खुदा की रज़ा मन्दी हासिल करोगे। हकीकतन हम अहलेबैत उम्मते इसलामिया की फ़रमाँरवाई के उन लोगो से ज्यादा मुस्तहक़ हैं जो आज उस मन्सब के गलत दावेदार हैं और मुसलमानों पर सितम ढाते हैं लेकिन अगर तुम हम को नापसन्द करते हो और हमारे हक़ का इकरार नहीं रखते हो और उस राय के खिलाफ़ हो जो तुम्हारे खुतूत और कासिदो के बयानात से जाहिर हो रही थी तो मैं वापस चला जाऊँगा।[3]

हुर की मोहरे खामोशी टूटी और उस ने कहा "हमे तो बखुदा खबर भी नहीं कि यह खुतूत कैसे हैं? जिनका आप हवाला दे रहे हैं।

इमाम ने अक़बा बिन समआन से फ़रमाया लाओ वह थैले जिन मे उन लोगो के खुतूत भरे हुए हैं अक़बा ने दो थैले खुतूत से भरे हुए लाकर सामने रखे और उन में से खुतूत निकाल कर फैला दिये। हुर ने कहा कि हम तो उन लोगो मे से नहीं हैं जिन्हों ने आपको खुतूत लिखे हैं। हम तो मामूर किये गए हैं। इस पर कि जहाँ भी आप मिल जायें फिर हम आपका साथ न छोड़ें। यहाँ तक कि आपको इब्ने ज़ियाद के पास पहुँचा दे। यह सुनना था कि इमाम ने जोर से कहा कि "मौत तुम्हारे लिए उससे करीब तर साबित होगी।[4]

---

[1]अखबारूत तुवाल पेज/248. तबरी जि/6, पेज/228
[2]तबरी जि/6, पेज/228
[3]तबरी जि/6, पेज, 228, इरशाद पेज/235–236
[4]अख़बारूत तुवाल पेज/248, तबरी जि/6, पेज/228, इरशाद पेज/246

और उसके बाद आप ने कूफ़े जाने का इरादा कुल्लियतन (सिरे से) तर्क कर दिया यानी इसके पहले रास्ता बदलने के बाद भी आपका रुख कूफ़े ही की तरफ था। लेकिन अब कूफा जाने के खयाल ही को ज़हन से निकाल दिया उसके बाद आपने अपने असहाब के सामने एक खुतबा इरशाद फ़रमाया: जिस मे हम्दो सनाए बारी के बाद फ़रमाया "सूरते हाल जो पेश आई है वह तुम देख रहे हो यकीनन दुनिया का रंग बदल गया है और उसकी नेकी रुख्सत हो चुकी है और उस में कुछ नहीं रह गया है सिवा ऐसे थोड़े हिस्से के जो पानी के बहने के बाद किसी जर्फ़ में बच रहता है और एक पस्त ज़िन्दगी जो मिस्ल ज़हरीली घास के है क्या तुम नहीं देखते कि हक पर अमल नही होता और बातिल से अलाहिदगी नहीं इख्तियार की जाती। इस सूरत मे मोमिन यकीनन खुदा की मुलाक़ात का आरज़ूमंद होता है। मेरे नजदीक तो मौत की सूरत मे शहादत की सी नेअमत है और ज़िन्दा रहना उन जालिमों के दरमियान वबाले जान है।" इस खुतबे का मकसद सिर्फ असहाब को अन्जामकार की तरफ एक मरतबा फिर मुतवज्जह करना और इस तरह उनको अपने अजाएम की पुख्तगी का दोबारा जाएज़ा लेने की दावत देना ही करार दिया जा सकता था और इस लिए जरूरत थी कि इस तकरीर को सुनकर असहाब की जानिब से खुलूसे नियत और पुख्तगीए अज़्म का करार वाकई इजहार कर दिया जाता। चुनाँनचे इमाम की तकरीर खत्म होते ही जुहैर बिन कैन खड़े हो गए और इस एहसास की बिना पर कि मैं इस जमाअत में ताज़ा शरीक हुआ हूँ इस लिए मुझे ऐसे मवाक़े पर सबकत करने का हक़ हासिल नहीं है। दूसरे असहाब से इन अलफाज़ में तक़रीर की इजाजत चाही कि आप लोग पहले तकरीर करेंगे या मैं कुछ कहूँ? सब ने कहा कि नही तुम तकरीर करो जुहैर ने हम्दो सनाए इलाही के बाद कहा

'अल्लाह आपको मकसद तक पहुँचाये ऐ फरज़न्दे रसूल' हम ने आपके इरशाद को सुना बखुदा दुनिया अगर हमारे लिए हमेशा बाकी रहने वाली होती मगर जुदा होना उससे महज़ आपकी नुसरत और हमदर्दी की बिना पर होता तो भी हम आपका साथ देने को दुनिया में हमेशा कयाम पर तरजीह देते।"

यह सुनकर इमाम ने जुहैर को दुआए खैर दी और उनके खुलूस की तारीफ की।[1] उसके बाद नाफेअ् बिन हिलाल जमली खडे हुए और उन्होंने हस्बे जैल पुर जोर तकरीर की:

[1] तबरी जि/6, पेज/229

'फरजन्दे रसूल! आप को मालूम है कि आप के जद्दे बुज़ुर्गवार के लिए भी यह मुमकिन नहीं हुआ कि लोगों को अपनी मुहब्बत घोल कर पिला दे और लोग हजरत की इस तरह इताअत करने लगें जिस तरह कि हजरत चाहते थे और हजरत के साथ वालो में बहुत से मुनाफ़िक़ थे जो हजरत से नुसरत का वादा करते थे मगर दिमाग में गद्दारी का खयाल मुज़मर (पोशीदा) रखते थे। वह बाते तो ऐसी बनाते थे जो शहद से ज्यादा शीरीं होतीं मगर किरदार से मुखालिफत करते ऐसी जो इन्तेहाई तल्ख साबित होती यहाँ तक कि रसूल अल्लाह[स०अ०] का इन्तेकाल हो गया उसके बाद आपके वालिदे बुज़ुर्गवार हजरत अली[अ०स०] को भी इसी सूरत से दो चार होना पड़ा। कुछ लोग उनकी नुसरत पर मुत्तफिक हुए और उन्होंने उनका साथ देते हुए नाकिसीन (नालाएक) व क़ासितीन (वादा तोड़ने वाले) व मारिक़ीन (गुमराह) (जमल, सिफ्फीन और नहरवान वालो) से जग की और कुछ लोगो ने मुखालिफ़त की यहाँ तक कि हजरत की वफात हो गई और आज हमारे सामने आपके लिए वही सूरत दरपेश है लिहाजा जो शख्स अपने अहद को तोड़ेगा और नीयत को खराब करेगा वह खुद अपना बुरा करेगा और खुदा आपको उससे लापरवा कर देगा। बिस्मिल्लाह चलिये हम को लेकर खैर व सलामती के साथ चाहे मशरिक की तरफ और चाहे मगरिब की जानिब हम बखुदा खुदा के मुकर्रर फैसले से खौफ जदा नहीं हैं और न अपने रब की मुलाकात (मौत) से कराहत (पीछे हटते) रखते हैं। हम अपनी नियतों और एतेकादों पर कायम हैं। मवालात (दोस्ती) रखते हैं। उस शख्स से जो आपके साथ मवालात (दोस्ती) रखे और दुश्मन हैं उसके जो आपसे दुश्मनी करे।'

फिर बुरैर बिन खुजैर हमदानी ने तक़रीर की

'खुदा की क़सम ऐ फरजन्दे रसूल! यह खुदा का हम पर एहसान है कि उसने हम को मौका दिया इस बात का कि हम आपके सामने जग करे और आपकी नुसरत के सिलसिले में हमारे आजा व जवारेह कता (जिस्म के टुकड़े) किये जाये यहाँ तक कि आपके जद्दे बुज़ुर्गवार रोजे कयामत हमारे शिफाअत ख्वाह हो क्योकि वह जमाअत कभी नजात नहीं पा सकती जिस ने अपने नबी के नवासे को तहे तेग किया हो और वाए हो उन के लिए वह खुदा को क्या मुँह दिखायेंगे और उनका क्या हाल होगा उस दिन जब वह आतिशे जहन्नम मे नाला व फरयाद करते होंगे।'[1]

---

[1] तबरी जि/6, पेज, 269

इस गुफ्तगू के बाद इमाम ने अपने असहाब से फरमाया कि अपनी सवारियों पर सवार हो जाओ और सब लोग यहाँ तक कि खवातीन भी अपनी अमारियों मे सवार हो गई। आप ने हुक्म दिया कि चलो जिस रास्ते से आये हैं उसी रास्ते पर वापस चलो। जब असहाब ने इरादा पलटने का किया हुर की सिपाह सामने आ कर सद्दे राह हुई। उस पर इमाम ने दरयाफ्त किया कि "तुम्हारा मतलब क्या है?" हुर ने कहा "मैं चाहता हूँ कि आप को इब्ने जियाद के पास ले जाऊँ।" हज़रत ने फरमाया "खुदा की क़सम यह नहीं होगा।" हुर ने कहा "फिर मैं बखुदा आपको छोड़ूँगा भी नहीं।" यूँ ही तीन मर्तबा रद्दो बदल हुई।

आखिर में हुर ने कहा "मैं आप से जग करने पर मामूर नहीं हुआ हूँ। मुझे तो बस यह हुक्म हुआ है कि आपके साथ साथ रहूँ यहाँ तक कि आप कूफे पहुचें। अब इस सूरत में कि आप कूफ़े जाने से ही इन्कार करते हैं तो एक ऐसा रास्ता इख्तियार कीजिये जो न कूफे की तरफ जाता हो और न मदीने की तरफ। बस मेरे और आपके दरमियान इन्साफ का यही एक तरीका है। उस वक्त तक कि जब तक मुझे हाकिम की राए मालूम हो।" हजरत को हुर की यह बात माकूल मालूम हुई, और आप कादसिया व अजीब के रास्ते से बाईं सम्त की तरफ मुतवज्जेह हो गए और हुर भी आपके साथ साथ चला। तारीख में सराहत (साफ) है कि यहाँ से अजीब तक 38 मील का फ़ासला था।[1]

रास्ते में इमाम हुसैन[अ०स०] और हुर के दरमियान जो गुफ्तगू होती जाती थी वह भी बड़ी मानी खेज़ थी। हुर ने कहा "मैं आपको खुदा का वास्ता देता हूँ कि आप अपने ऊपर रहम करें इस लिए कि अगर आप ने जग की तो यकीनन आप क़त्ल कर दिये जायेंगे और तबाह होगे।" हजरत ने जवाब दिया "क्या तुम मुझे मौत से डराते हो? क्या तुम इस से ज्यादा कुछ कर सकते हो कि मुझे कत्ल कर डालो?" उसके बाद हजरत ने कबील–ए ओस के एक शायर का वह शेअ्र पढा जिसका मज़मून यह था कि मैं अपने इरादे पर क़ायम रहूँगा और मौत से दोचार होने मे जवाँमर्दी के लिए कोई आर व नन्ग (शर्म) नही है जबकि उसकी नियत में सच्चाई हो और वह राह हक़ मे जिहाद कर रहा हो।"

---

[1] अख़बारुत तुवाल पेज 248–249, तबरी जि/6, पेज/228–229, इरशाद पेज/236

हुर इस इन्तेहाई अज्मो इस्तेकलाल का इज़हार सुनकर हुसैनी काफ़िला से कुछ दूर साथ साथ हो कर रास्ता तय करने लगा [1]

12. बैज़ा. इस मकाम पर इमाम हुसैन[अ0स0] ने फौजे हुर और अपने असहाब के सामने एक तकरीर फ़रमाई जिस मे इस्लाम के तालीमात के हवाले से अपने फराएज पर रौशनी डालते हुए फरमाया: "ऐयुहन्नास (ऐ लोगो!) पैगम्बर इस्लाम ने फरमाया है कि जो शख्स किसी बादशाह को देखे कि वह जुल्मो जौर करता है मुहर्रमाते (हराम) इलाहिया को हलाल बनाये हुए है ख़ुदाई अहदो पैमान को तोड देता है सुन्नते रसूल की मुखालिफत करता है और बन्दगाने ख़ुदा में मासियत (गुनाहों) का तर्ज इख्तियार किये हुए है और यह शख्स उन बातो को गवारा करे और इस्लाह की कोशिश न करे अपने कौल और अपने अमल से तो वह मुस्तहक होगा इसका कि अल्लाह उसको भी उसी बादशाह के दर्जे मे महसूब (शुमार) करे "

उसके बाद मौजूदा सूरते हाल पर तब्सेरे की हैसियत से फरमाया:

"तुम्हें मालूम होगा कि इन बनी उमैया ने इताअते शैतान को अपना रास्ता बना लिया और अल्लाह की इताअत से रूगर्दानी की है मुसलमानों के अमवाल को अपना लिया है और हरामे ख़ुदा को हलाल और हलाले ख़ुदा को हराम करार दे लिया है इस सूरत में मुझ से ज्यादा किस पर यह फर्ज आयद होता है कि वह इस्लाह की कोशिश करे।"[2]

12. अजीबुल हजानात.[3] इस मन्जिल पर इमाम हुसैन[अ0स0] और हुर के लशकर ने एक तीर की मसाफत का फासला दरमियान में छोड कर अलग अलग कयाम किया।[4] इसी असना मे कूफे के पाँच आदमी अपने मरकबों पर सवार वारिद हुए जिन के साथ एक कोतल (खास नाम) घोड़ा था उनके रास्ता बताने वाले तिरिम्माह बिन अदी साथ थे

यह पाँच आदमी अम्र बिन खालिद असदी सैदावी, उनके गुलाम सअद, मजमा बिन अब्दुल्लाह आएजी, उनके फरजन्द आएज बिन मजमा, और जनादा बिन हारिस सलमानी थे। हुर ने जो इमाम की नकलो हरकत का निगराँ था बढ कर कहा कि यह कूफे के लोग हैं और आपके साथ आने वालों मे से नहीं

---

[1] तबरी जि/6, पेज/229. इरशाद पेज/236–237

[2] तबरी जि/6, पेज, 229

[3] यह नाम इस मकाम का इस लिए हुआ कि नोमान बिन मुन्जिर बादशाह हीरा की हजाईन यानी ऊँटनियाँ इस मकाम पर चरा करती थीं। तबरी जि/6. पेज, 230

[4] तबरी जि/6, पेज/230

है। लिहाजा मै उन्हे कैद करूँगा। या कूफे वापस कर दूँगा'' इमाम ने फरमाया 'अब जब यह मेरे पास पहुच गए हैं तो उनकी हिफ़ाज़त मेरे जिम्मे है और अब वह मेरे अन्सार व आवान (हामी) की जमाअत मे दाखिल हो गए हैं।' हुर खामोश हो गया।

हजरत ने उनसे अहल कूफा की कैफियत दरयाफ्त की। मजमा बिन अब्दुल्लाह आएजी ने कहा कि बडे आदमियों को रिशवतें दी गई हैं और माल व दौलत से पुर कर दिया गया है। इस लिए वह सब आपके खिलाफ मुत्तफिक हैं। रह गए दूसरे लोग, उनके दिल आपकी तरफ मगर तलवारें उनकी आपके खिलाफ ही बलन्द होंगी। उन्होंने कैस बिन मुसहर की शहादत के हालात भी बयान किये जिस पर इमाम की आँखों में आँसू डबडबाने लगे और आपने कुरआन की आयत पढ़ी 'فمنهم من قضى نحبه ومنهم من ينتظر وما بدلوا تبديلا' मतलब यह हुआ कि वह उस रास्ते पर चले गए और हमें भी उसी रास्ते पर जाना है तिरमाह ने इमाम से इब्ने जियाद की अफवाज की कसरत बयान की और कहा ''कूफे से बाहर निकलने के पहले में ने पुश्ते कूफा पर इतना अजीम लशकर देखा है जितना आज तक तो मेरी नजरों से नहीं गुजरा था और मैं ने दरयाफ्त किया तो बतलाया गया कि यह सब इस लिए इकट्ठे है कि उनका जाएजा लिया जायेगा और फिर यह हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] से मुकाबले के लिए रवाना होंगे।'

यह बयान करने के बाद उन्होंने कहा कि 'उस जमाअत से मुकाबला आपके लिए मुमकिन नहीं लिहाजा आप मेरे साथ कोहे अजा पर चलये जहाँ शाहाने गस्सान व हमीर और नोमान बिन मुन्जिर ऐसे जबरदस्त बादशाह तक हम पर काबू नहीं पा सके, वहाँ मैं जिम्मेदारी लेता हूँ कि कबील ए तय के बीस हजार सिपाही आपकी मदद के लिए तैयार होंगे'

इमाम ने तिरमाह की मुखलिसाना पेशकश पर उन्हें दुआए खैर दी लेकिन उनके मशवरे पर अमल करने से माजूरी ज़ाहिर फरमाई[1]

13. कस्रे बनी मक़ातिल: अजीबुल हजनात से इमाम हुसैन[अ०स०] कूफे के रास्ते को छोड़ कर दाहने हाथ की सम्त रवाना हुए यहाँ तक कि कस्रे बनी मकातिल पहुचे। यहाँ पहुच कर आप ने और साथ ही साथ हुर ने भी कयाम किया।[2]

---

[1]तबरी जि, 6 पेज/22-23
[2]अख़बारूत तुवाल पेज/249

इसी मन्जिल पर कूफे के बहादुरो और शाहसवारों में से एक शख्स उबैदुल्लाह बिन हुर जॉफी कयाम पजीर था। हजरत ने इतमामे हुज्जत के लिए उसे नुसरत की दावत दी। मगर उसकी किसमत में यह सआदत न थी और उसकी कुव्वते इरादी भी इस पुख्तगी तक पहुँची हुई न थी इस लिए हीला हवाला करके इस मौके को हाथ से दे दिया।[1] जिस पर उसे उम्र भर अफसोस रहा और बाद में खूने इमाम के इन्तेकाम लेने में शरीक हुआ।

यहाँ से रवानगी के क़ब्ल रात के आख़िरी हिस्से में हजरत ने अपने काफिले के जवानों को पानी भर कर साथ लेने का हुक्म दिया जिस की तामील हुई। फिर सब आगे रवाना हुए।[2] अभी थोड़ा रास्ता तय हुआ था कि इमाम पर कुछ गुनूदगी सी तारी हुई। ऑख खुली तो आप फरमा रहे थे "इन्ना लिल्लाहि व इन्ना इलैहि राजेऊन वल–हम्दो लिल्लाहि रब्बिल आलमीन" दो तीन मर्तबा आप ने यही कलेमात जबाने मुबारक पर जारी फरमाये।

उस वक्त आपके फरजन्द अली अकबर घोड़ा बढ़ा कर आपके करीब आये और उस वक्त इन कलेमात के जबान पर जारी करने का सबब दरयाफ्त किया हजरत ने फरमाया "अभी मेरी आँख लग गई थी मैं ने एक सवार को देखा जो कह रहा था कि 'यह लोग तो रास्ते पर जा रहे हैं और मौत उनकी तरफ आ रही है।" मैं समझता हूँ कि इस तरह हमारी मौत की इत्तेला दी गई है।" अली अकबर ने अर्ज़ किया कि बाबा 'ख़ुदा आपको रंज की सूरत न दिखलाये, क्या हम हक पर नहीं हैं?' इमाम ने फरमाया क्यो नही कसम उस खुदा की जिस की जानिब तमाम खल्क़ की बाजगश्त है, हम हक पर हैं।' अली अकबर ने कहा 'जब हम हक पर हैं तो फिर हमें मौत की क्या परवा है?" इमाम ने फरमाया: "बेटा तुम्हें खुदा जजा–ए–खैर दे बेहतरीन जजा जो किसी बेटे को उसके बाप की तरफ से मिल सकती हो।[3] यह इज्जतें नफ्स, इतमीनाने कल्ब और सिबाते जमीर का अजब मुरक्का था।

13 नैनवा काफिला रास्ता कता (तय) कर रहा है। इमाम आगे बढते जा रहे हैं और हुर की तरफ से भी कोई मजाहमत (रोक टोक) नहीं की जा रही है। यहाँ तक कि नैनवा की जमीन तक पहुँचना हुआ। यहाँ पर सवार मुसल्लेह (हथियार समेत) कूफे की तरफ से आता दिखाई दिया और सब ठहर कर

[1] तबरी जि, 6, पेज/231 अखारुत तुवाल पेज/249
[2] तबरी जि, 6, पेज/231
[3] तबरी जि/6, पेज, 231- 232 इरशाद पेज/237

उसका इन्तेजार करने लगे। जब करीब पहुँचा तो उसने हुर और उसके असहाब को सलाम किया लेकिन हुसैन[अ०स०] और असहाबे हुसैन[अ०स०] को सलाम करना जरूरी नहीं समझा यह इब्ने जियाद का क़ासिद था जो हुर के नाम खत लाया था उस खत में लिखा था कि तुम को लाजिम है कि जहाँ पर तुम को यह खत पहुचे वहाँ पर हुसैन को आगे बढने से रोक दो और उन्हें ऐसी जगह कयाम करने पर मजबूर करो जहाँ आबो गियाह मौजूद न हो और न कोई किला या जाये पनाह हो। और मैंने अपने फ़रस्तादा (भेजने वालो) को हुक्म दे दिया है कि वह तुम्हारे साथ साथ रहे और तुम्हारी कारगुजारी की मुझे इत्तेला दे [1] और तुम से जुदा न हो जब तक कि मेरे हुक्म की तामील न हो जाये वस्सलाम।[2] इस से मालूम होता है कि इमाम के साथ हुर के रवादाराना बर्ताव की इत्तेला इब्ने जियाद को हो गई। उसका इमाम के पीछे अपनी फौज समेत नमाज़ पढ़ना और फिर कूफ़े ले जाने के मुतालबे से दस्त बरदार हो कर यह सूरत तजवीज करना कि मदीना और कूफे के अलावा दूसरा कोई रास्ता इख्तियार किया जाये यह बातें वह हो सकती हैं जिन से हुर की वफादारी इब्ने जियाद की निगाह में मशकूक बन जाये और शायद इसी बिना पर उसे जरूरत महसूस हुई कि वह अपने हुक्म की तामील मे हुर की निगरानी अपने कासिद से कराये। हुर जो कुछ भी हो अभी तक दुनिया का बन्दा था इस लिए हजार नाचारी व मजबूरी और ना ख्वास्तगी–ए–तबा (तबियत न चाहते हुए भी) के साथ सही मगर उसने इमाम और आपके असहाब के रूबरू आकर यह ऐलान किया कि यह अमीर इब्ने जियाद का खत है। इस में मुझे हुक्म दिया गया है कि जहाँ भी मुझे यह खत पहुँचे वहीं पर मैं आपको उतरने पर मजबूर करूँ। और यह इब्ने जियाद का कासिद है जिसे हुक्म है कि वह मुझ से बग़ैर इस हुक्म की तामील कराये हुए अलग ही न हो। इस तरह हुर ने वाकई सूरते हाल को सफ़ाई के साथ पेश कर दिया उसके बाद इमाम ने न चाहा कि उसके ज़मीर की ताकत का ज्यादा इम्तिहान लिया जाये। आपने इतना कहा कि अच्छा हम को ज़रा आगे बढ़कर इस करिये (देहात, जगह) में कयाम करने दो जिस का नाम गाजरिया है या उस दूसरे करिये में जिस का नाम शफीय्या है।[3] मगर हुर ने कहा कि मुझे इस का इख्तियार नहीं है। मुझे

---

[1] अख़बारूत तुवाल, पेज / 249–250

[2] तबरी जि / 6 पेज / 232, इरशाद पेज / 236

[3] देनवरी ने सकीया लिखा है। अख़बारूत तुवाल पेज / 250

तो हुक्म है कि मैं आपको खुश्क सहरा में उतारूँ जहाँ आबो गियाह न हो और यह शख्स मुझ पर निगरान मुकर्रर किया गया है कि यह मेरे तर्जे अमल की जा कर इत्तेला दे इस जवाब पर असहाबे इमाम में जोश पैदा हो गया और ज़ुहैर बिन कैन ने कहा कि "फरजन्दे रसूल! इनसे जग कर लेना हमारे लिए आसान है बनिसबत उन लोगो से जग करने के जो इनके बाद आयेंगे क्योंकि उसके बाद इतनी फौजें आयेंगी कि उनके मुकाबले की हम में ताकत न होगी।" मगर इमाम ने फरमाया कि नहीं, मैं जग में इब्तेदा करना नहीं चहता ।[1]

आखिर इमाम हुसैन[अ०स०] ने हुर से फरमाया कि अच्छा कुछ तो चलने दो, और हुर ख़ामोश हो गया।

14 करबला. इमाम जरा बाई तरफ मुड कर थोडा सा चले थे कि सिपाहे हुर सामने आकर सद्दे राह हो गई और कहा कि बस यहीं उतर पड़िये। फ़ुरात यहाँ से दूर नहीं है। इमाम ने नाम पूछा, मालूम हुआ करबला। फरमाया 'अच्छा कर्बो बला की यही मन्जिल है। यह कह कर घोड़े से उतर पडे[2] यह दूसरी मोहर्रम सन 61 हिजरी पन्जशम्बा (जुमरात) का दिन था।[3]

अब जबकि इमाम का सफर मन्जिले आख़िर तक पहुच गया तो जरूरी मालूम होता है कि इस सफ़र के मुख़तलिफ पहलूओं पर एक सैर हासिल तबसेरा कर दिया जाये ताकि उसकी अहमियत और जरूरत कुछ और वाजेह हो जाये।

यह तो पहले बयान हो चुका है कि इमाम का मकसद यजीद से इस तरह की जग करना न था जैसी दुनिया में हुआ करती हैं। आपको न सलतनत का हासिल करना मकसूद था, न बराहे रास्त यजीद की सलतनत का खत्म करना बल्कि आप का मकसद यह था कि मुसलमानों को ख्वाबे गफलत से बेदार कर दे और उन में एक ऐसा इन्केलाबे जेहनी पैदा कर दें कि वह यजीदी किरदार को उसी अस्ली शक्ल में देखने लगें और उसके जाहरी दावाये इस्लाम से धोखा न खायें। इसके लिए आप ने मदीने से रवानगी इख़्तियार की। जहाँ तक मदीने से निकलने का तअल्लुक है पूरे तौर से उस पर तबसेरा किया जा चुका है। अगर आप मदीने में कयाम करके और वहाँ रह

[1]अख़बारूत तुवाल पेज/250, तबरी जि/6, पेज/232, इरशाद पेज 238-239

[2]तबरी जि/6, पेज/232 इरशाद पेज, 239

[3]दैनवरी ने चहारशम्बा (बुध) यकुम मोहर्रम लिखा है अख़बारूत तुवाल पेज/251

कर यजीद के मुकाबले मे जग करते या कुर्बानी पेश करते तो उससे वह नौइयत पैदा न होती जो आपके मद्दे नजर थी। या जहर काम करता और या तलवार, मगर तलवार कैसी जिस की जिम्मेदारी किसी सूरत से सलतनते शाम पर आएद न हो सकती बल्कि कोई खारजी निकलता इब्ने मुलजिम का सा जिस ने अली[अ०स०] को शहीद किया था या कोई तीर आता आदमी नहीं बल्कि जिन्नो की तरफ़ से जैसा कि इस्लामी तारीख़ मे सअद बिन उबादा का शाम में खातिमा हुआ था। यही होती हैं आम हुकूमतों की शोबदा कारियाँ (मक्कारियाँ) जिनका नाम दुनिया ने "सियासत" रखा है। हजरत इमाम इस तरह की सियासत के गुरों को खूब समझते थे चाहे खुद अखलाकी व इस्लामी पाबन्दियों की वजह से इख्तियार न करें। उन्होने मदीना इस लिए छोड़ा कि उनका वाकेय–ए–शहादत कोई अचानक और बे सान व गुमान का हादिसा न समझा जाये। जाकर क़याम किया, कहाँ? मक्क–ए–मुअज्जिमा में जो कल्बे जजीरतुल अरब (अरब का दिल) था और जहाँ हज के लिए बहर हाल हर तरफ से खिंच खिंच कर मुसलमान जमा होते थे। अलावह फरीज–ए–हज के जो इस्लामी शरीयत की रू से हर मुस्ततीअ् (साहिबे हैसियत) मुसलमान पर वाजिब है। खुद अरब के कदीम रिवायात और साबिका अमल दर आमद की वजह से सदियो से कायम था अरब के इस खित्ते को तमाम मुखतलिफ़ुल ख़याल कबाएल (अलग अलग खयाल के कबीले) अरब का महल्ले इज्तेमा (जमा होने की जगह) होना जरूरी था वह मशहूर कॉन्फ्रेंसें जो शेअ्रो सुखन और खरीदो फ़रोख़्त के लिए क़ायम होती थीं जिनको "असवाकुल अरब" (अरब के बाजार) कहा जाता था। जीकादा से लेकर मोहर्रम तक मक्के व ताएफ और मदीने के दरमियान ही क़ायम होती थीं। इमाम हुसैन[अ०स०] की शख़सियत दुनियाए अरब में कोई अजनबियत न रखती थी अगरचे मजहबी एहसासात मुर्दा हो गए थे और हजरत को आपके पूरे मरातिब के साथ लोग न पहचानते थे लेकिन रसूल[स०अ०] के नवासे सुलताने हिजाज (आज का सऊदी) व इराक़ के फ़रजन्द, मुल्के अरब के सब से बड़े सख़ी जिसके दर से कोई साएल महरूम नहीं फिरा बनी हाशिम के बुजुर्ग खानदान और इस्लाम के सब से बड़े आलिम, यह उनवान वह थे जिनसे कोई भी नावाकिफ़ नहीं था हुसैन[अ०स०] ने यही खास जमाना कि जो तमाम कबाएले अरब के इज्तेमा का था मक्का में अपने कयाम के लिए तजवीज किया। इमाम हुसैन[अ०स०] का यहाँ खामोशी के साथ कयाम भी तमाम अतराफ़े मुल्क में आपकी बैयते यजीद से किनारा कशी के एलान के

लिए काफी था और यही सब से बडी वह वजह थी जिसकी बिना पर आपकी जिन्दगी सियासते वक्त के लिए यहाँ भी नाकाबिले बर्दाश्त साबित हुई। चुनानचे यजीद की तरफ से हाजियों के भेस में आदमी भेजे गए ताकि वह आपको गिरफ्तार कर लें या कत्ल कर दें।

इमाम हुसैन[अ०स०] जैसा कि आप ने मक्के से रवानगी के वक्त फरमा दिया था यह न चाहते थे कि आप मक्के के अन्दर शहीद किये जायें जिसकी बिना पर खान ए काबा की हुरमत जाएल हो फिर यह भी जाहिर है कि खान ए काबा के गिर्दो पेश हज के जमाने में हर किस्म के लोग हर तरफ से आये हुए होते हैं और इमाम हुसैन[अ०स०] के लिए यह गैर मुमकिन था कि आप अरफात, मिना, मशअ्र, मकाम हर जगह अपने साथ मुहाफिज रखते ऐसी सूरत में बहुत आसान था कि हज्रे असवद के इस्तीलाम (चूमने) के वक्त, अरफात में वक़ूफ़ (ठहरने) की हालत में, मशअ्र की तरफ़ वापसी के दौरान में मिना में क़ुर्बानी के मौक़े पर, मक़ामे इब्राहीम[अ०स०] में नमाज पढने की हालत में किसी वक्त आप पर क़ातिलाना हमला हो जाता और क़ातिल मौजूदा हंगाम व अजदहाम के अन्दर गुम हो जाते। उसके बाद कौन कह सकता था कि हुसैन[अ०स०] का कातिल हकीकतन यजीद या उसका कोई फरस्तादा है

इस शदीद खतरे की बिना पर इमाम हुसैन[अ०स०] ने मक्के को छोडा इस तरह कि हज को भी मुकम्मल न किया जिसका सबब वही हंगामी सूरते हाल थी जो पैदा हो गई थी मगर जैसा कि अल्लामा सैयद हैबतुद दीन शहरिस्तानी ने "नहजतुल (इरादा) हुसैन" में लिखा है इस तरह दफ़अतन ऐसे मौके पर इमाम की रवानगी ने तमाम क़बाएले अरब के नुमाइन्दों में एक बिजली की सी लहर दौड़ा दी। और अगर कोई तारीख इस मौक़े की मुकम्मल उसी वक्त क़लम्बन्द की गई होती तो उस मे जरूर नजर आता कि उस मौक़े पर किन खयालात का इजहार किया जाता था। हुसैन बिन अली[अ०स०] कहाँ चले गए? हज भी न किया? आखिर तमाम अहलो एयाल व अकरबा के साथ अपने नाना की कब्र के जवार को क्यों छोड दिया?

"यजीद के खौफ से।"

"क्यों? यजीद क्या चाहता है?"

"हुसैन[अ०स०] से बैयत का तालिब है।"

लाहौला वला कुव्वता भला ऐसा क्यों कर हो सकता है? फ़रजन्दे रसूल सा हक आशना यज़ीद ऐसे शराबख्वार और जिना कार की बैयत करे। अच्छा

फिर मक्क ए मुअज्जिमा मे क्यों क़याम न किया किस लिए हज को भी मुकम्मल न किया?

जान का खतरा था। शायद मक्के में हुसैन[अ०स०] को कत्ल करने के लिए शाम से कुछ लोग भेजे गए थे ' तौबा तौबा इस से बढ़कर सफ्फाकी और ज़ुल्म क्या होगा? अरे फरजन्दे रसूल को हरम में भी चैन न लेने दिया। कम व बेश इस क़िस्म के तज़किरे होंगे जो मक्क–ए–मुअज्ज़िमा और उसके अतराफ़ व जवानिब मे अक्सर बाखबर हलको मे बड़ी क़ूव्वत के साथ हो रहे होंगे उस जमाने में जब मुरासिलत (पैगाम) व मुखबिरत (खबरों) के तरीके महदूद थे और तार, टेलीफोन, रेडियों वगैरह खबर रसानी के जराए नायाब, (न थे) इस से बेहतर कोई सूरत वाकेआत की इशाअत के लिए नहीं हो सकती थी इसलिए कि बाद इखेतामे हज जो शख्स भी अपने शहर में वापस आता उसको ताजा वाकेआत के जिम्न में हुसैन[अ०स०] की नक्लो हरकत और उसके असबाब व इलल (सबब) का बयान करना जरूरी था।

इसका मतलब यह नहीं कि इमाम की मुवाफ़िकत मे किसी लशकर के जमा होने का इम्कान पैदा हो गया था। बल्कि यह कि पहले से उन हालात की इशाअत हो जाने की वजह से आपकी शहादत ना मालूम असबाब व इलल (सबब) का नतीजा करार नहीं दी जा सकती और हुकूमते शाम को इसके मुतअल्लिक अपने सियासी मफाद के लिहाज से मखसूस वजूह (वजह) तराशने का मौका नहीं मिल सका और इमाम हुसैन[अ०स०] की मजलूमियत व हक्कानियत पर पर्दा न डाला जा सका। लेकिन अगर ऐसा न होता तो सलतनते यजीद की तरफ़ से इमाम की शहादत को तरह तरह के लिबास पहनाये जाते और आईन (क़ानून) व शआएर (तरीके) इस्लाम के तहफ्फुज का वह बलन्द मकाम जो इमाम के पेशे नजर था इतने कामयाब तरीके पर हासिल न होता। मगर यह इमाम के इन्तेहाई मुदब्बिराना तरीक–ए–कार का नतीजा था कि इधर इमाम शहीद हुए और उधर तमाम दुनिया ने इस बात को तस्लीम कर लिया कि आप नाहक़ क़त्ल किये गए शाम का हाकिम और उसके वुज़रा और हवा ख्वाह (चापलूस) किसी तोहमत के तराशने का मौका न पा सके। इस लिए कि इमाम हुसैन[अ०स०] ने अपनी नक्लो हरकत के असबाब को अपनी शहादत के पहले ही आलमे इस्लाम में शाये करके दुश्मनों की जबाने बन्द कर दी और अपनी हक्कानियत के सामने दुनिया का सर ख़म करा लिया।

नतीजे के एतेबार से कहा जा सकता है कि हुसैन[अ०स०] का काफिला जो मक्के से निकल कर जा रहा था एक ख़ामोश मुबल्लिग था। इस लिए कि हज की वजह से इराक़ यमन ताएफ वगैरह सब तरफ से कबाएल मक्के मे आ रहे थे और इधर इमाम हुसैन[अ०स०] अपने अहले (फैमली) अकरबा (अजीज) अन्सार व असहाब की जमाअत के साथ खैमा व खरगाह (बड़ा खैमा) तमाम असबाब साथ लिये एक क़ाफिले की सूरत में मक्के से जा रहे थे। आलमे मुसाफ़िरत में जिन्दगी गुजारने वाले वाकिफ हैं कि रास्ते मे चार पाँच आदमियों का भी काफिला नजर आये तो खोज पैदा हो जाती है कि यह कौन लोग हैं? कहाँ से आते हैं? और क्यों? फिर कहाँ इमाम हुसैन[अ०स०] और आपके असहाब व अन्सार का शानदार काफ़िला हज के सिर्फ दो दिन बाकी रहते हुए मक्क–ए मुअज़्ज़िमा की तरफ़ से आ रहा हो जबकि दुनिया मक्क–ए–मुअज़्ज़िमा की तरफ हज के लिए जा रही हो। यह वजूह यक़ीनन जाजिबे नजर (क़ाबिले गौर) और बाइसे तवज्जोह थे और एक अजनबी शख़्स को यह पूछना नागुजीर (यकीनन) था कि यह कौन जमाअत है? और कहाँ जा रही है? और इमाम हुसैन[अ०स०] का नाम मालूम होने पर इसी किस्म का मुकालमा जैसा ऊपर दर्ज हो चुका है उनके दरमियान लाजमी तौर पर शुरू हो जाता होगा चुनानचे तारीखें शाहिद हैं कि फरजदक़ की मुलाकात इमाम से यूही हुई और अब्दुल्लाह बिन मुतीअ़ और उमर बिन अब्दुर्ररहमान मख़जूमी की भी कि वह मक्के की तरफ जा रहे थे और इमाम मक्के की तरफ़ से आ रहे थे इस से जाहिर है कि हुसैन बिन अली[अ०स०] और हाशिमी जवानो का शानदार काफिला जो खान ए काबा को बमजबूरी छोड़ कर दश्ते गुरबत में राह पैमा था दूर दूर के लोगों को हालात की तहकीक और हकीक़त समझने पर मजबूर कर देता था।

मक्के से निकलने के बाद आप ने कूफे का रूख किया। इस लिए कि अहले कूफ़ा के इन्तेहाई इसरार को अदमे एतेमाद (भरोसा न करने) की बिना पर मुस्तरद कर देना अख़लाकी व मजहबी हैसियत से किसी तरह आपके नजदीक मुनासिब न था ख़ुसूसन जबकि आप के मोतमद (भरोसे मन्द ख़ास) सफीर (मुस्लिम बिन अकील) ने वहाँ के हालात को कौल व करार के मुवाफिक पा कर आपको इसकी इत्तेलाअ् भी दे दी थी जिसके बाद इमाम के लिए उनके मुतालिब ए हिदायत की आवाज पर लब्बैक कहते हुए इतमामे हुज्जत करना एक फरीजा था मगर इस जिम्न (सिलसिले) में उस इन्केलाब के लिए

जो हजरत की शहादत से पैदा होने वाला था कुछ मजीद असबाब का इजाफा हो गया। जाहिर है कि हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] वतन से बेबसी और बेकसी के साथ निकले थे। मक्के में भी कोई क़ाबिले इतमीनान हालत न थी मगर मक्के से आपका सफ़र इख़्तियार करना अहले कूफ़ा के मेहमान की हैसियत से था और अरब की गैरत व हमियत का तकाजा मेहमान के बारे में जरबुल मसल (अरब की मेहमान नवाजी की मिसालें दी जाती हैं) की हैसियत रखता है यह बिल्कुल सही है कि ऐन मौके पर अहले कूफा कसरत के साथ इमाम हुसैन[अ०स०] की नुसरत के लिए नहीं पहुँच सके या नहीं पहुचे मगर इन्सानी और अरबी फितरत के लाजमी नतीजे के तौर पर यह यकीनी था कि बाद को अहले कूफ़ा के दिल में एक अजीब बेकरार एहसास पैदा होगा इसका कि हम ने बुलाया था और मदद न की और यही एहसास आगे बढ कर और परवरिश पाकर एक अजीम सैलाब की सूरत मे उमडेगा जो उस सलतनत के बेडे को हमेशा के लिए डुबो कर छोड़ेगा जिस का नतीजा होगा इमाम की फतह और दुश्मन की शिकस्त। बनी उमैया की अदावत और उनके वसी जराये हुकूमत को देखते हुए यह मानना पडेगा कि इमाम हुसैन[अ०स०] तो मुल्के अरब में जहाँ जाते आखिर में शहीद होते लेकिन जाहरी हैसियत से यह नतीजा मुरत्तब न होता जो कूफे की तरफ आने की सूरत में हुआ। वह लोग जो मुस्लिम की शहादत के बाद आपको वापसी का मशवरा दे रहे थे यकीनन नेक नीयत और अपने नुकत–ए खयाल के लिहाज से हक़ बजानिब भी होंगे मगर उन्हें हुसैनी इकदाम की नौइयत का अन्दाजा न था। इराक़ का सफर इख़्तियार करना अगर कुछ खुशगवार तवक्कुआत पर मबनी होता तो बेशक अब इस इरादे को बदल जाना चाहिए था इस लिए कि वह तवक्कुआत अब मायूसी से बदल गये थे लेकिन जबकि इमाम के सामने कोई उम्मीदों का सब्ज बाग नहीं था बल्कि इस हद से बढे हुए इसरार की पजीराई (तारीफ) और गैर मामूली तलब व दावत की कुबूलियत थी जिस से इतमामे हुज्जत का मक़सद पूरा होता था तो इस इरादे को इतने पर कि आपको मुस्लिम की खबरे शहादत मिल गई मुतजलजल (डगमगाना) न होना चाहिए था बल्कि इस्तेक़लाल व सिबाते कदम, कोह आसा (मिस्ल पहाड के) अज्म और पुख़्तगि–ए–इरादा वादे की पाबन्दी और उसूल के तहफ्फुज का तकाजा यह था कि आप अमलन इसका सुबूत पेश कर देते कि आप अपने वादे पर क़ायम रहे यहाँ तक कि आगे बढ़ने में खूँरेजी और नक्जे अम्ने आम्मा (अम्न के ख़तरे) के बाइस होने का

अन्देशा हो गया। इसके अलावा अभी मुस्लिम की शहादत के तफसीली हालात भी तो आम तौर पर लोगो को मालूम न थे और जाहरी असबाब की बिना पर यह मुमकिन था कि वह बडी खूँरेज लडाई के बाद शहीद हुए हों जिस में अहले कूफा ने पूरे तौर पर दादे शजाअत दी हो लेकिन सरकारी फौज के मुकाबले में सर बर (सामने न आये) न हुए हों और मुमकिन है उनके दिल में यह अरमान होता या बाद में कहने का मौका मिलता कि अगर इमाम हुसैन[अ०स०] आ जाते तो हमें ताजा कूव्वत हासिल हो जाती और हालात का वरक़ बिल्कुल पलट जाता। इस सूरत मे आपका यहीं से वापस हो जाना जबकि कूफे के बहुत से लोग गोया आप ही की खातिर से एक बड़ी मुसीबत और कशमकश में मुबतिला हो चुके बड़ी कमजोरी और कम हिम्मती का नमूना समझा जा सकता था आपने इरादे में तबदीली की बस उस वक्त जब हुर का लशकर आप से दो चार हुआ और यह मालूम हुआ कि वह आपको इब्ने जियाद के पास ले जाने पर मामूर है अब इमाम[अ०स०] ने अपना इरादा बदल दिया इस लिए कि अब आपका आगे बढना दो ही सूरतो से हो सकता था। एक तो यह कि आप जग आजमायाना (मुकम्मल जंग की) सूरत से फौजों को दरहम बरहम और रास्ते को साफ करते हुए कूफे पर हमला आवर होते और इब्ने जियाद को कूफे से निकाल कर वहाँ अपनी अलमदारी कायम करते, दूसरे यह कि आप सब्र व खामोशी के साथ जिस तरह अब तक आ रहे थे उसी तरह कूफे की तरफ अपनी रफ्तार को जारी रखते।

दूसरी सूरत मौजूदा हालात मे गैर मुमकिन थी क्योंकि अब तक आपका आगे बढना खुद मुखताराना हैसियत से और खुद अपने इरादे से था मगर हुर की फौज के इस कस्द से आने के बाद कि वह आपको कूफा इब्ने जियाद के पास ले जाये आपका खामोशी के साथ आगे बढना उस फौज के हाथ में असीर होने और इब्ने जियाद का कैदी बन जाने का मुरादिफ (जैसा) होता क्योंकि अभी यह हुर की सिपाह है और आगे बढ कर हसीन का फौजी मरकज है और वहाँ से फिर अफवाज के मुहासरे (फौजों के घिराव में) में इब्ने जियाद के पास ले जाया जाना है जिसके बाद आपका मुआमला इब्ने जियाद के हाथ में है

इसी लिए आपने हुर के इस इजहार का कि हम आपको इब्ने जियाद के पास ले जाने के लिए आये हैं इन्तेहाई तुर्श जवाब दिया कि मौत तुम्हारे लिए उससे क़रीब तर साबित होगी।

बेशक पहली सूरत बाकी थी और वह यह कि आप कूफे पर हमला आवर होते और गनीम (दुश्मन) की फौज को पसपा करके वहाँ अपना क़ब्जा जमाते मगर एक तो जाहरी असबाब की बिना पर आपके साथ मौजूदा फौजी ताकत ऐसी नही थी कि वह यजीद की मुनज्जम अफवाज का मुकाबला कर सकती और बगैर ऐसी ताकत के मौजूद हुए एक जगह घेर लिये जाने के बाद दिफाई हैसियत से बहत्तर नुफूस को साथ ले कर तीस हजार का मुक़ाबला कर लेना तो ऐन शजाअत व हिम्मत और क़ाबिले सताइश तरीक़–ए–कार है मगर इस कलील तादाद के साथ गनीम (दुश्मन) पर जारिहाना तर्ज पर हमला आवर होना सिवाए तहव्वुर (बगैर सोचे समझे फट पड़ना) और ना आकिबत अन्देशी (अन्जाम से बेखबर) के और कुछ करार नही दिया जा सकता था। दूसरे यह आपके उस मसलक के ख़िलाफ है जो आप ने इख्तियार कर रखा था कि आपकी इस मुकाविमत (अमल) में अवामी मुहाविरे (लोगों के कहने के मुताबिक) के लिहाज से बगावत और शोरिश अगेजी की सूरत पैदा न होने पाये। इसी लिए आप ने अपनी गुफ्तगू मे जो हुर के साथ हुई थी अपने इस नुकत ए नजर को वाजेह कर दिया था कि मैं बुलाया हुआ आया हूँ। अगर मेरा आना ना पसन्द है तो मैं वापस जाता हूँ।

चुनाँनचे फ़ौजे हुर की इस मजाहमत (रूकावट) के बाद आपने कूफ़े का खयाल तर्क कर दिया और हुर की माकूल तजवीज के मुताबिक़ एक दूसरा रास्ता इख्तियार फरमाया जिसने आगे बढ कर आपको मैदाने करबला में पहुचा दिया।

और यही आप का अपनी तरफ से जग की इबतिदा न करने का उसूल इसका भी बाइस हुआ कि जब करबला की सर जमीन पर पहुच कर फौजे हुर ने सख्ती के साथ आगे बढ़ने से रोका तो आप ने वहीं पर खैम नस्ब करा लिये क्योंकि अब बगैर जग किये हुए आगे बढ़ना मुमकिन न था फिर आगे बढ़ने की सूरत मे अगर कोई अहम मरकज आपके पेशे नजर होता जहाँ आप इतमीनान के साथ जिन्दगी बसर करें तो उन लोगों से अपने मक़सद में सद्दे राह होने की बिना पर जग भी कर ली जाती लेकिन जब आपके पेशे नजर ऐसा कोई खास मरकज नहीं था तो सिर्फ इस बात पर जग करना कि हम यहाँ नहीं ठहरेगे बल्कि कुछ आगे जा कर ठहरेगे एक ला हासिल सी बात होती।

चुनाँनचे फौजे मुखालिफ के मुतालबे पर आप ने करबला की सर जमीन पर फुरात के किनारे से हट कर खैमे नस्ब कर लिये। जिस जमीन को अब करबला कहा जाता है। यह हकीकतन मजमूआ है चन्द जमीनों और करियों (कसबों) का जो उस जमाने में बिल्कुल पास पास वाके थे। उसकी मिसाल जमीदारियों और जागीरो और मवाजआत (गाँव) की हैसियत से हर मुल्क में मौजूद है और खुसूसियत से अरब मे ऐसा पाया जाता था कि छोटे छोटे कतआते अर्ज (जमीन के हिस्से) के मुस्तकिल नाम होते थे जिन्हें अगर एक की खुसूसियत के लिहाज से देखा जाता तो वह कई मकाम मुतसव्वुर (खयाल किये जाते थे) होते थे और अगर उनके बाहमी कुर्ब (एक दूसरे से करीब) पर नजर की जाती तो वह सब एक करार पाते थे और इस तरह एक जगह का वाकेया दूसरी जगह की तरफ मन्सूब किया जा सकता था।

जैसा कि अल्लामा सैयद हैबतुद दीन शहरिस्तानी ने नहजतुल हुसैन में लिखा है वाकेय–ए–करबला के महल्ले वुकूअ् (जिस जगह वाकेआ रूनुमा हो) के मा तहत जो बहुत से नाम गोश जद (कानों में रचे बसे) हैं, करबला, नैनवा, गाजरिया, शत्ते फुरात उन्हें एक ही जगह के मुतअद्दिद नाम नहीं समझना चाहिए बल्कि वह मुतअद्दिद जगहे थीं जो बाहमी कुर्ब (एक दूसरे से करीब) की वजह से एक ही समझी जा सकती थीं और इस लिए महल्ले वकू वाकेये के एतेबार से हर एक का नाम तआरुफ के मौके पर जिक्र किया जाना सही करार पाता था।

नैनवा [1] यह एक करिया (गाँव) था जिसे मौजूदा जमाने के सदद ए हिन्दिया के करीब समझना चहिए इसके पहलू मे गाजरिया था यह कबील ए बनी असद की एक शाख बनी गाजरिया की तरफ निसबत रखता था और उन ही का मुहल्ले सुकूनत (रहने की जगह) था। यह गालिबन वह जमीन है जो अब हुसैनिया के नाम से मशहूर है। उसी जगह एक करिया शफिया था और यहीं पर एक कतए जमीन "कर्बला" (तशदीदे लाम के साथ) पाया जाता था वह अब मौजूदा शहर करबला के मशरकी (पूरबी) हिस्से में जुनूब की तरफ वाके है। इसके मुत्तसिल 'अक्रबाबिल' नाम का करिया था जो गाजरिया के शुमाल मगरिब में वाके था। वहाँ अब खन्डर हैं जिन मे बहुत अहम आसारे कदीमा के इन्केशाफ की उम्मीद की जाती है और यह बिल्कुल दरिया–ए–फुरात के किनारे पर था और अपने कुदरती महल्ले वुकूअ् यानी

[1] -(नून के कसरे के साथ)

टीला मे घिरे होने की वजह से एक किले की हैसियत रखता है उसके मुकाबिल गाजरिया के दूसरी जानिब "नवादीस" का मक़ाम था जो मुसलमानों के फुतूहात के कब्ल एक उमूमी कब्रिस्तान की हैसियत रखता था उसके वसत (बीच) में जमीन 'हीर" थी जो अब हायर के नाम से मारूफ है और जहाँ हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की क़ब्रे मुबारक है। हीर एक वसी मैदान की हैसियत रखता था जो तीन तरफ से मुत्तसिल और पहलू ब पहलू टीलो से घिरा हुआ है। उन टीलो का सिलसिला शिमाल मशरिक़ (पूरब में बायीं तरफ़) की तरफ़ से जिधर हरमे हुसैनी का "बाबुस सद्र (Main Gate)" और मनार–ए–अब्द' है शुरू होकर गर्ब (पश्छिम) की जानिब "बाबे जैनबिया" के हुदूद तक पहुचता था और वहाँ से पेचीदा होकर जुनूब (दक्खिन) की तरफ दरे क़िब्ला के मक़ाम तक आ कर ख़त्म होता था उन मुत्तसिल (मिले) टीलों के इजतमा से एक निस्फ दायरे (Half Sarcle) की शक्ल बनती थी जो "नून' की सूरत समझी जा सकती है। इस दायरे में दाखिल होने का रास्ता मशरेकी (पूरबी) जिहत (सिम्त) में उस जानिब था जिधर रौज–ए–हजरत अब्बास[अ०स०] मे जाने का रास्ता है

तहकीक़ाती इन्कशाफ से अब तक यह बात पाई जाती है कि उन मकानात के आसार जो क़ब्रे इमाम हुसैन[अ०स०] के गिर्द हैं शिमाली (उत्तरी) और मगरिबी (पश्चिमी) जानिब जमीन की क़दीमी बलन्दी के क़रीने मौजूद हैं और मशरक़ी जानिब सिवा नर्म मिट्टी के जो पस्ती की तरफ मायल (नीचाई पर है) है। कुछ नजर नहीं आता। इस से मालूम होता है कि उस मकाम की कदीमी सूरत ऐसी ही थी कि शर्क (पूरब) की जानिब से हमवार और शिमाल और मगरिब की जानिब हिलाली (चाँद की) शक्ल के तौर पर बलन्द थी। यही हिलाली दायरा वह था जिस में इमाम हुसैन[अ०स०] को घेर कर शहीद किया गया था। फुरात की असली नहर जिसे हमारी जबान के एतेबार से दरिया–ए–फुरात कहा जाता है उसका बराहे रास्त कोई तअल्लुक करबला की जमीन से न था। इस का खते सैर (रास्ता) हिल्लाह, मुसैयब वगैरह मकामात से होता हुआ कूफे के बैरूनी हिस्सो की जानिब जाता था करबला और उसके दरमियान बड़ा फ़ासला था लेकिन इस नहर या दरया ए फुरात की एक छोटी शाख मकामे रिजवानिया के पास से निकल कर जुदा होती थी जो करबला के शिमाल मशरिक़ की जानिब के रेगिस्तानों और नशेबों से होती हुई उस मकाम से हो कर गुजरती थी जहाँ अलमदारे हुसैन अबुल फ़जलिल अब्बास की क़ब्र है।

और उसके बाद मौजूदा मकाम हिन्दिया की तरफ़ से होती हुई उस मकाम के शिमाल मगरबी जानिब जिसका नाम "करिय-ए-जुलकिफ्ल" है अस्ल दरया-ए-फुरात से मिल जाती थी यह छोटी नहर 'अलकमा' के नाम से मौसूम थी और उसे अपनी अस्ल के एतेबार से फुरात भी कह दिया जाता था। 'तिफ' के माना हैं "नहर का किनारा" खुसूसियत से दरया-ए-फुरात के उस किनारे को जो जुनूबी पहलू में बसरा से हबत तक था तिफ कहा जाता था और उसी मुनासिबत से "फुराते सगीर" यानी नहरे अलकमा के उस किनारे को जिस में करबला वाके था तिफ़ कहा जाने लगा। और इसी वजह से वाक-ए-करबला को "वाकेयतुत तिफ" कहा जाता है। और करबला को शत्ते फुरात के नाम से भी इसी वजह से याद किया जाता है

बीसवाँ बाब

यज़ीदी हुकूमत की सरगर्मी और करबला में फ़ौजों की आमद

मुस्लिम बिन अकील की शहादत के बाद कूफे मे सख्त गीरी इन्तेहा को पहुँच गई। इब्ने जियादा को अन्देशा था कि कहीं ऐसा न हो कि मुस्लिम की बैयत करने वाले जो उनकी इमदाद से कासिर रहे वह अब अपनी कुव्वतों को मुजतमा करके कोई इन्केलाब पैदा करें लिहाजा उस ने तलाश करके जिन जिन अशखास को हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] का हमदर्द समझा जा सकता था या उन पर ऐसा शुबहा भी हो सकता था उन्हे कत्ल या कैद करना शुरू कर दिया।

मीसमे तम्मार और रशीद हुजरी उसी दौरान शहीद किये गए।

मुखतार बिन अबू उबैदा जो मुस्लिम के जिहाद के जमाने में कूफे के अन्दर मौजूद न थे और उसी दिन इत्तेला पा कर आये लेकिन ऐसे वक्त पहुँचे कि मुस्लिम शहीद हो चुके थे और उम्र बिन हरीस ने रायते अमान बलन्द (अमान देने का वादा) किया था कि जो शख्स उसके नीचे चला आयेगा उसका जान व माल महफूज रहेगा। चुनॉनचे मुखतार मौके की नजाकत को महसूस करते हुए उस झण्डे के नीचे चले गए मगर उन्हे उस पर भी अमान न मिल सकी और वह पा ब जंजीर करके कैद खाने भेज दिये गए। इसी तरह अब्दुल्लाह बिन हारिस बिन नौफिल और दीगर अशखास।

उधर यजीद को दमिश्क में जनाबे मुस्लिम के कत्ल की खबर के साथ ही हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की मक्के से रवानगी की इत्तेला पहुँची तो उसने इब्ने जियाद को खत लिखा

'मुझे खबर मिली है कि हुसैन बिन अली इराक की तरफ मुतवज्जेह हो चुके हैं लिहाजा तुम को लाजिम है कि होशियारी के साथ जासूस मुकर्रर करो, मोर्चे मजबूत करो और किसी शख्स पर वहमो गुमान भी हो तो उसका तदारूक (तोड) करो और फ़ौरन गिरफ्तार कर लो।''

अब क्या था, जेल खाने कैदियो से छलकने लगे जिसका इजहार खुद इब्ने ज़ियाद ने उसके बाद इन अलफ़ाज में किया कि 'कोई ऐसा शख्स नहीं जिस पर गुमान हो सकता था कि वह हुकूमत की मुखालिफत करेगा मगर यह कि वह कैद खाने के अन्दर है।'[1]

शहर के अन्दरूनी हालात पर इस तरह काबू पाने के बाद उसने बाहर की तरफ तवज्जो की इस लिए कि उसे अन्देशा था कि कहीं बसरा व मदाएन और दीगर अतराफ के लोग इमाम हुसैन[अ०स०] की मदद के लिए न आ जायें। उसके लिए हुदूद (सरहदो) की नाका बन्दी हुई और क़ादसिया मे जो हिजाज़ व इराक व शाम के खुतूत सेर (एक जगह) का महल्ले इजतेमा था चार हजार सवारों के साथ हसीन बिन तमीम को जो अब तक कोतवाले शहेर की हैसियत रखता था मुकर्रर किया गया और वाकेसा से लेकर कतकताना लअलअ और ख़ुफान और अतराफ व जवानिब (दोनो तरफ) में जो शाम व बसरा के रास्ते थे सब पर लशकर फैला दिया गया। यहाँ तक कि न कोई शख्स आ सकता था और न जा सकता था। चुनाँनचे कैस बिन मुसहर सैदावी जो इमाम हुसैन[अ०स०] का फरस्तादा (कासिद) खत अहले कूफ़ा के नाम ले जा रहे थे उसी कादसिया में पहुँच कर हसीन के हाथों शहीद हुए और जब इमाम ने बतने अकीक के बाद यह सुन कर कि फौज सद्दे राह है सम्ते सफर में तब्दीली फ़रमाई तो हुरएक हजार के लशकर के साथ उसी फौज मे से भेजा गया जो क़ादसिया में हसीन की सरकर्दगी में मौजूद थी जब हुर ने इब्ने जियाद के खत की तामील करते हुए हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] को करबला में उतरने पर मजबूर कर दिया तो उसने इब्ने ज़ियाद को इसकी इत्तेला दी। यह वक्त वह था कि मुल्के अजम (ईरान) मे बगावत हो गई थी और "दस्तबा"[2] के मकाम पर क़बील–ए दैलम ने कबजा कर लिया था उस बग़ावत को फरू (खत्म) करने के लिए मशहूर फातहे इराक साद बिन अबी वकास के बेटे उम्र बिन सअ्द को चार हजार फौज का सरदार बनाया गया था और उसके लिए रय (तेहरान)और

---

[1] तबरी जि / 6. पेज / 222- 223, अख़बारूत तुवाल पेज / 243

[2] दस्तबा का नाम तारीख़ में हमादान और रय (तेहरान) की फतह के साथ साथ आता है नईम बिन मकरन ने उन मकामात को सन 22 हिजरी या 23 हिजरी में फतह किया दस्तबा चन्द अहले कूफा में तकसीम कर दिया गया जिनके नाम यह हैं इसमतह बिन अब्दुल्लाह जबी. मोहलल बिन जैद ताई. सम्माक बिन अब्द अबी सम्माक बिन मख़रमा असदी और सम्माक बिन ख़रशा अन्सारी यह लोग मुसलमानो में सबसे पहले दस्तबा की छावनियो के वाली हुए और उन्होने दैलम से जंग की एक कौल यह है कि रय को कर्जा बिन काब ने फतह किया (तबरी जि 4. पेज 251 दस्तबा हमादान का जुज था और वहाँ की छावनियाँ हमादान तक फैली हुई थीं (तबरी जि, 4, पेज / 252, नईम ने फतह करने के बाद रय का कदीम शहर बरबाद कर दिया और उससे हट कर नये शहर की बुनियाद कायम हुई (पेज, 253)

सरहदे दस्तबा व दैलम की हुकूमत का परवाना लिख दिया गया था। चुनाँनचे यह फ़ौज ईरान जाने के लिए बाहर निकल भी चुकी थी।[1] और उम्र बिन सअ्द उस फौज को साथ लिये कूफे के बाहर मकाम 'हम्माम आईन' पर खैमा जन था और अनकरीब आगे बढ़ने वाला था [2] अब इमाम हुसैन[अ०स०] की मोहिम जो दरपेश हुई तो इब्ने जियाद ने उम्र बिन सअ्द को हुक्म दिया कि पहल इस मोहिम को सर करे और फिर उन की तरफ़ रवाना हो [3]

उमरे सअ्द सहाबी तो नहीं मगर आम मुसलमानो की इस्तेलाह के मुताबिक ताबेई (हदीसें कोड करने वाला) जरूर था ऐन खलीफ़–ए दोम उमर बिन खत्ताब के इन्तेकाल के दिन उसकी पैदाइश हुई थी।[4]और उसके सिने तमीज तक पहुँचने तक बहुत से सहाब ए रसूल मौजूद थे यकीनी उनकी जबानी उसने वह अहादीस भी सुने होंगे जो पैगम्बरे इस्लाम [स०] ने हुसैन [अ०] के बारे मे फरमाए थे। नीज इमाम हुसैन [अ०] के साथ रसूल [स०] की इन्तेहाई मुहब्बत के वाकेआत उसके गोश जद (सुने होंगे) हुए होगे। फिर हजरत अली बिन अबी तालिब [अ०] के जमान–ए–खिलाफत में जब कि इमाम हुसैन[अ०स०] भी कूफे में मौजूद थे उमर बिन सअ्द का कुछ ऐसा कमसिनी और बे शऊरी का दौर न था। उसे यकीनी करीब से हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के महासिने जात (जाती खूबियाँ) और बलन्द औसाफ व अखलाक के मुशाहिदे का मौका मिला होगा और जब से आप मदीने तशरीफ ले गए थे तो अब तक बीस बरस की मुद्दत में आने जाने वालों की जबान से उसने इमाम के जोहदो तकवा, इबादत व रियाजत और खुश अखलाकी व सखावत के कितने ही वाकेयात जरूर सुने होंगे।

शायद इन्ही उमूर का नतीजा था कि वह हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] से जग को पसन्द न करता था और उसे एक गुनाह खयाल करता था। चुनाँनचे उसने इन्कार किया और कहा कि मुझे माफ़ कर दीजिये तो बेहतर है। इब्ने जियाद ने जवाब दिया कि अच्छा तो हमारा परवान–ए हुकूमते रय का वापस कर दो। यह मुआमिला सख्त था उमरे सअ्द को रय की हुकूमत दिल से अजीज थी। जाह (हुकूमत) तलबी और हक़ शनासी के जजबों मे कशमकश हुई। यहाँ तक

---

[1]अखबारूत तुवाल पेज/251

[2]तबरी जि/6, पेज/232

[3]तबरी जि/6, पेज/233

[4]तकरीबुत तहजीब पेज/190

कि उसे यकसूई (राय) हासिल करने के लिए एक दिन की मोहलत मागना पड़ी मोहलत मिली और उमरे सअ्द ने अपने मखसूस अहबाब व अइज्जा से मशवरा किया। सब ने मुखालिफत की और इस मुहिम के लिए जाने से मना किया हमजा बिन मुगीरा शैबा ने जो उसका भान्जा था हस्बे जैल तकरीर की "आप हुसैन[अ0स0] से जग करने को न जाइये और गुनहगार होने के साथ साथ रिश्त ए क़राबत को क़ता (करीबी रिश्तो को तोड़ने) करने के मुरतकिब न होइये ख़ुदा की कसम अगर तमाम दुनिया का माल व दौलत और आलम भर की सलतनत आपके क़ब्जे में हो और फिर वह निकल जाये तो बेहतर है इससे कि आप हुसैन[अ0स0] के खून का बार अपनी गर्दन पर ले।[1]

यह वह पहलू था जिसे उसके सच्चे मुशीर कार पेश कर रहे थे लेकिन दूसरी तरफ उसका जाह तलबी का जजबा रह रह कर रय की हुकूमत का खयाल दिला रहा था। वह एक दिमागी कशमकश में मुबतिला था जिसे शब के तारीक पर्दे में उसके यह अशआर जाहिर कर रहे थे।

"اترک ملک الری والرّی رغبتہ　　　　م ارجع مذموما بقتل حسین

وفی قتلہ النار التی لیس د ونہا　　　　حجاب وملک الری قرۃ عینی

(यानी) क्या मैं रय की हुकूमत छोड दूँ दराँहालेकि वह मुझे दिल से पसन्द है। या मैं हुसैन[अ0स0] को कत्ल करके तौके मजम्मत में गिरफतार हूँ? उनको क़त्ल करने में दोजख की आग है जिसके मुतअल्लिक शक व शुबहे की गुन्जाइश नहीं और रय का मुल्क मेरी आँखों की ठडक है।[2]

बाज मुअर्रिखीन इसके साथ मजीद अशआर और नक्ल करते हैं जिनका मजमून यह है कि हुसैन[अ0स0] के क़त्ल का जो कुछ जुर्म है उसका नतीजा मरने के बाद नुमायाँ होगा जो मालूम नहीं सही भी है या नहीं। फिर रय की नक्द हुकूमत को छोड कर आखिरत के राहत व आराम की उम्मीद बाँधना किस समझदार आदमी का काम हो सकता है

गालिबन इन अशआर की रिवायत सही है इस लिए कि नतीजतन उमर बिन सअ्द के अमल से उसकी तस्दीक़ होती है नतीजा यही था कि दुनिया की वक्ती दिल फरेबी ग़ालिब आई और उसने फ़रजन्दे रसूल से जग करने पर कमर बाँध ली मगर एक आखिरी बार जमीर की चुटकियों ने उसे फिर आमादा किया कि वह इब्ने जियाद से कमजोर अलफ़ाज मे सही माजिरत कर ले।

[1] तबरी जि 6 पेज, 33

[2] किताबुल बिलदान, पेज / 271

चुनाँनचे उसने आकर कहा कि आप मुझको दस्तबा और दैलम के हुदूद की तरफ जाने पर मामूर कर चुके हैं। लोगों को इसका इल्म भी हो गया है और मेरी फौज वालों ने भी वहीं जाने की तैयारी की है। बेहतर है कि आप मुझको उधर ही रवाना कीजिये और हुसैन इब्ने अली[अ0स0] के साथ जग करने के लिए किसी और को अशराफे अहले कूफ़ा में से जो किसी तरह शखसियत व शोहरत और फन्ने सिपहगिरी व महारते जग में मुझसे कम नहीं रवाना कर दीजिये चुनाँनचे उसने चन्द आदमियों के सरदाराने अहले कूफ़ा में से नाम भी ले दिये मगर इब्ने जियाद बरहम हो गया और उसने कहा कि तुम्हें सरदाराने कूफ़ा के नाम मुझे गिनवाने की जरूरत नहीं है। मुझे अगर किसी को भेजना होगा तो तुम से मशवरा ले कर नहीं भेजूँगा। तुम तो अपने मुतअल्लिक कहो कि तुम्हें जाना है या नहीं? अगर नही जाना है तो हमारा परवान–ए–हुकूमत रय का वापस करो। उमरे सअ्द ने समझ लिया कि बगैर कुर्बानी के इस जुर्म से छुटकारा मिलना मुमकिन नही और कुर्बानी के लिए उसका नफ्स तैयार नहीं होता था। आखिर उसने इकरार कर लिया कि अच्छा मैं ही जाऊँगा। चुनाँनचे वही चार हजार की फौज जो मुल्के ईरान जाने पर कमर बस्ता थी करबला की तरफ रवाना हो गई और उमरे सअ्द उस फौज के साथ इमाम हुसैन[अ0स0] के वरूदे करबला के दूसरे ही दिन[1] यानी तीसरी मुहर्रम को यहाँ पहुँच गया।

करबला में हुर के साथ एक हजार की फौज पहले ही से मौजूद थी। अब उमरे सअ्द की फौज मिला कर पाँच हजार हुई। इमाम हुसैन[अ0स0] और उनकी मुखतसर जमाअत के लिए जाहरी हैसियत में इतना लशकर बहुत था मगर इमाम हुसैन[अ0स0] की ख़ानदानी शजाअत और उनकी सच्चाई की ताकत का इब्ने जियाद के दिल पर इतना रोब था कि वह फौज की ज्यादा से ज्यादा मिकदार को भी कम समझता रहा। चुनाँनचे हसीन बिन तमीम कोतवाल शहरे कूफ़ा की सरदारी में कादसिया के नाके पर जो बाकी तीन हजार फौज थी वह पूरी की पूरी करबला की तरफ़ मुन्तकिल कर दी गई। उसके बाद कूफ़े में आम भर्ती का एलान कर दिया गया और इब्ने ज़ियाद खुद कूफे से बाहर निकल कर 'नखीला' में जो करबला के रास्ते पर था आ कर खैमा जन हो गया ताकि अपने सामने अफवाज का मुआएना करके पै दर पै करबला की जानिब रवाना करे और बड़े बड़े सरदाराने कूफ़ा हिजार बिन अबहर शबस बिन रबई, अम्र बिन हज्जाज वगैरह को मामूर किया गया कि वह अपनी अपनी

[1]अख़बारूत तुवाल पेज/251 तबरी जि/6, पेज/233

जमाअत के साथ करबला रवाना हों। उनमें से हर एक कसीर फौज के साथ रवाना होता था उनमें से किसी एक का कोई उज्र भी सुना नहीं जाता था। चुनाँनचे शबस ने बीमारी का उज़्र किया था लेकिन इब्ने जियाद ने कहा तुम बीमार बन रहे हो, अगर तुम हमारी इताअत में हो तो हमारे दुश्मन से जग के लिए रवाना हो। मजबूरन शबस भी रवाना हुआ बाज अशखास ऐसे थे कि इब्ने जियाद को अपनी सूरत दिखा कर फिर कूफे वापस चले जाते थे। जब इब्ने जियाद को इसका इल्म हुआ तो उसने सवेद बिन अब्दुर्रहमान मन्करी को कुछ सवारो के साथ कूफे रवाना किया कि जो शख्स कूफे मे नजर आये और वह अभी तक हुसैन[अ०स०] से जग करने को नहीं रवाना हुआ उसे गिरफ्तार करके मेरे पास लाओ। चुनाँनचे सवेद ने कूफे के कबीलों में गर्दिश की। इत्तेफाक से एक शख्स शाम का रहने वाला अपने किसी मतरूका (जाएदाद) के झगड़े में कूफे आया था। सवेद ने उसे पकड़ कर इब्ने जियाद के पास भेज दिया उसकी गर्दन मार दी गई इस वाकेये से तमाम लोगो पर दहशत तारी हो गई और सब इमाम हुसैन[अ०स०] से जग के लिए निकल खड़े हुए। [1]उसके बाद तारीख के लिहाज से मरदुम शुमारी की जरूरत नहीं और न उलमा के अकवाल देखने की हाजत कि बीस हजार थे जिसे इब्ने ताऊस ने तरजीह दी है या तीस हजार जिसको अल्लामा मजलिसी ने माना है या पैंतीस हजार जैसा कि इब्ने शहर आशोब ने लिखा है, या एक लाख तक मुताबिक बाज अहले मकातिल की तहरीर के बल्कि गुजिश्ता इन्तेजामात ही से जाहिर है कि कूफे की तमाम काबिले जग आबादी करबला में उडेल दी गई थी जिसके बाद करबला की जमीन फौजों की कसरत से मौजें मारने लगी थी

---

[1] अखबारूत तुवाल पेज/252

इक्कीसवाँ बाब

अन्सारे हुसैन[अ०स०], उनकी क़िल्लते तादाद और उसके असबाब

साबिका अबवाब (पिछले हिस्से) मे उन वाकेयात व हालात का तजकिरा हो चुका है जिन से मालूम होता है कि कूफे की उस जमाअत में से जो हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की हमदर्द थी और जिन्हें आपकी नुसरत का फरीजा महसूस हो सकता था एक कसीर तादाद पा बजजीर कर ली गई थी नीज हुदूद (उस पर से सरहदों) की नाका बन्दी[1] ने अतराफ़ व जवानिब के रहे सहे अशखास के लिए हजरत तक पहुँचना दुशवार से दुशवार तर बना दिया था और कूफ़ से अगर कोई आने का कस्द करता तो नखीला मे जहाँ इब्ने जियाद ने अपना पड़ाव डाला था गिरफ्तार कर लिया जाता और किसी दूसरी तरफ से आना चाहता तो कादसिया व खुफान व क़तकताना, लअलअ् (यह सब कूफ़े के आस पास की जगहों के नाम हैं) वगैरह की किसी न किसी मन्ज़िल पर वह मुकैय्यद हो जाता

इसके अलावा करबला मे आपका वरूद अचानक तौर पर था इस लिए अतराफ व जवानिब में इसकी इत्तेला तक मुमकिन न थी जबकि बाद के वाक़ेयात बताते हैं कि उस वक्त तक भी कि जब इमाम हुसैन[अ०स०] शहीद हो चुके हैं और असीरो को कूफ़े ले जाया गया है बहुत से अशखास इन वाकेआत से बे खबर थे ऐसी सूरत में यह मुमकिन ही न था कि आपके पास कोई बडी जमियत नुसरत के लिए पहुँच जाती। खुसूसन जबकि आप ने पहले ही से अपने साथ तादाद बढ़ाने की कोई कोशिश भी न फरमाई थी। फिर भी मजकूरा बाला तमाम मुशकिलात के बावजूद शिअयाने कूफ़ा की वफ़ादारी और उलुलअजमी (पुख्ता इरादे) का एक बडा तारीखी कारनामा यह है कि वह अफराद जो इमाम हुसैन[अ०स०] के कूफे की तरफ तशरीफ लाने की तहरीक के

---

[1] तबरी जि/6. पेज/222

जिम्मेदार थे जिन्हो ने हजरत मुस्लिम बिन अकील से उनके वरूद (आने) के मौक़े पर पहले जलसे में वफ़ादारी का इक़रार व जाँबाज़ी का अहद किया था वह किसी न किसी तरह हुसैन बिन अली[अ०स०] तक पहुँच गए और अपनी जानें आपके क़दमों पर निसार कर दीं। और जो लोग उस जमाअत में से इमाम हुसैन[अ०स०] की नुसरत के लिए न पहुँचे या न पहुँच सके उन में से भी किसी मुतनफ्फिस (शख्स) की इमाम हुसैन[अ०स०] के खिलाफ मारिक–ए–करबला में मौजूदगी हरगिज पाई नहीं जाती। बल्कि कुछ कमजोर अज्म व ईमान रखने वाले अशखास जो बजाहिर जईफुल उम्र भी थे इस लिए इब्ने ज़ियाद की फौज में जाने से भी मुसतस्ना (अलग) हो सके थे उस वक्त जब करबला में जिहाद हो रहा था, बैरूने कूफा टीले पर खड़े हुए आँसू बहा रहे थे और दुआयें माग रहे थे कि खुदा वन्दा अपनी नुसरत नाजिल फ़रमा अहले बैते रसूल[स०अ०] और उनके अन्सार पर जिन्हें इस तरह देख कर रावी को गुस्सा आया और कहा कि ऐ कम बख्तो तुम्हारे जजबात यह हैं तो आखिर खुद जा कर नुसरत क्यों नहीं करते?[1]

मगर यह तवक्को हर शख्स से करना कि वह अज्मो हिम्मत में मुस्लिम बिन औसजा और हबीब इब्ने मजाहिर ही साबित हो एक दूर अज कार (नामुमकिन) बात है। बहरहाल उन कमजोर नुफ़ूस वाले अफ़राद के बिल मुकाबिल उन पुर जिगर और बावफा अफराद की तादाद जिन्हों ने इमाम हुसैन[अ०स०] का इस नाजुक मुवक्किफ (हालात) में साथ दिया, और वह कूफे ही के बाशिन्दे थे बजाये खुद कलील होने के बावजूद तारीखे आलम के तजरेबात को सामने रखते हुए हरगिज़ कम नहीं है

यही वह पहलू है जिसे अहले कूफ़ा की हिमायत में पेश किया गया। उस वक्त जब अबुल अब्बास सुफ्फ़ाह के सामने अबू बकर हजली बसरी और इब्ने एयाश मे बसरा और कूफे की बाहमी (आपसी) फजीलत के बारे में मुनाजेरा हुआ और इब्ने एयाश ने शजाअत के तजकिरे में कुछ शहसवाराने कूफा के नाम लिए और अबू बकर हजली ने दुखती हुई रग को दबाते हुए कहा कि 'कूफ़े वालों कि बहादुरी का क्या कहना कि उन मे जितने भी थे वह या इमाम हुसैन[अ०स०] और उनके अकरबा व अन्सार के क़ातिल थे या अदमे तआउन (साथ न देने)करने वाले या उनका माल व असबाब लूटने वाले या उनकी लाशों को पामाल करने वाले।' यह सुनकर इब्ने एयाश ने कहा कि जो फख्र का पहलू है

---

[1]तारीखे तबरी जि/6, पेज/222

वह तुम ने छोड़ दिया और ताने देने पर उतर आये। तुम ने इमाम हुसैन[अ0स0] के वालिद बुजुर्गवार हजरत अली इब्ने अबी तालिब[अ0स0] को क़त्ल किया (इब्ने मुलजिम बसरा का रहने वाला था) रह गए अहले कूफा उनमें से हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] के साथ रोज़े शहादत चालीस आदमी थे जबकि आपके सिपाहियों की मजमूई तादाद तकरीबन सत्तर थी और कूफे के यह जितने आदमी थे उन में से कोई एक भी जिन्दा वापस नहीं गया बल्कि सब ने इमाम पर अपनी जान निसार की और हर एक ने कत्ल होने से पहले कुछ न कुछ अपने दुश्मनों को कत्ल भी किया[1]

हकीकत यह है कि फौजे उमरे सअ्द मे कूफ़े के अवाम थे और अतराफ व जवानिब के कबाएल (आस पास के इलाके के लोग) जिनका मसलक सिर्फ़ इताअते शुयूख (हजरत अबू बकर और हजरत उमर के मानने वाले) से था और कुछ नहीं। उन मे से अक्सर का नस्बुल ऐन कत्ले इमाम हुसैन[अ0स0] में सिर्फ़ हुक्म हाकिम की तामील और अपनी फ़ौजी ज़िम्मेदारी का पूरा करना और जाएजा व इनआम की हवस थी और कुछ ऐसे भी थे जो हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] से जग करने पर खुशी से रजामन्द न थे मगर उन में इतनी कुव्वते इरादी न थी कि वह हुकूमत के खिलाफ अपने इख्तियार से काम लें। नीज यह भी मुमकिन है कि उन मे बहुत से ऐसे जवान और नौ उम्र भी हों जो हुसैन[अ0स0] की शख्सियत से आगाह ही न हों। और वह सिर्फ़ समझते हों कि हम को हाकिम की तरफ से एक बागी से मुकाबला करने के लिए रवाना किया गया है इस के बरखिलाफ हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] के साथ कूफे के जितने आदमी थे वह वहाँ की ख़िलकत (लोगों) के दिल व दिमाग़ थे। वह वह थे जो दुनिया के तमाम मुहर्रिकात (तहरीकों) के मुकाबिल में अपने शऊर और इरादे के मालिक साबित हुए और यह बहुत बड़ी बात है। उन में से बहुत सों से कूफे के अवाम वाकिफ भी थे और उनकी शख्सियत से मुतअस्सिर होते थे और उनके लिए यह अजीब मुअम्मा बन गया था कि ऐसे आबिद व जाहिद और परहेजगार लोग आज किस तरह मैदाने जग में आ गए है।? उन शख्सियतों का फौजे मुख़ालिफ के अफराद पर इतना जबरदस्त असर पड़ रहा था कि उनके दिलो की ताकत ने जवाब दे दिया था। वाक–ए करबला की जग मे बारहा (कई बार) तारीख के अवराक़ पर नजर आता है कि फौजे मुख़ालिफ़ ने हुसैनी मुजाहदीन के सामने से फ़रार किया। हकीक़तन यह फ़रार

[1] किताबुल बिलदान पेज / 172

माद्दी कूव्वत की कमी का नतीजा नही बल्कि उन में सबसे ज्यादा जमीर की कमजोरी का दख़ल था।

दर हक़ीकत यह एक मारे बाँधे का सौदा था जो किया जा रहा था, जिसके लिए आखिर वक्त तक फौज की अकसरियत सिपरअन्दाख्ता (हारी हुई) साबित हो रही थी और कुछ अफसराने फौज की जबरदस्तियाँ और जाएजा व इन्आम वगैरह के तरगीबात (लालच) और इताबे हुकूमत के ताजियाने ही थे जो उनके जज़्बाते सिदाकत की कमज़ोरी के बाइस उनके रूकते हुए कदमों को बार बार आगे बढ़ाते थे उसके बरखिलाफ हुसैनी सिपाहियों का जब्त व निजाम एक बे मिसाल नमूना है। यहाँ न बढने के मौके पर कदम पीछे हटने का इमकान था न बे मौका कदम आगे बढ़ने का सवाल। उनका कोई इकदाम जोश के मातहत नहीं होता था बल्कि वह बराबर अपने सालार के इशारे के मुन्तज़िर रहते थे और जिस वक्त तक इमाम इतमामे हुज्जत की मन्ज़िलो को खत्म करके जग के इक़दाम को हक बजानिब न समझ ले। उस वक्त तक एक सिपाही भी ऐसा न था जो हुसैनी निजाम के ख़ेलाफ़ खुदराई (अपनी राय) या खुदसरी (अपनी मर्जी) से काम ले यह बात सिर्फ इस लिए थी कि यह जितने अफराद थे सब आरिफे हक (हक को पहचानने वाले) इमाम के तरबियत याफ़्ता और साहिबे अख़्लाक थे।

बाईसवाँ बाब

सुलह की बातें

उमरे सअद चाहता तो था ही कि किसी तरह इस जुर्मे अजीम से जिस में वह हिर्से दुनिया की बदौलत अपने हाथों गिरफ्तार होने जा रहा है छुटकारा हासिल करे चुनॉन्चे उसने करबला आकर एक कोशिश मुआमिलात के सुलझाने की शुरू की। इस तरह कि अजरा बिन कैस अहमसी को बुला कर यह चाहा कि वह इमाम हुसैन[अ०स०] के पास जा कर आपके मकसदे तशरीफ आवरी को मालूम करे मगर अजरा यह उन सात आदमियों मे से था जिन्हों ने वक्ती सियासत से मुतअस्सिर हो कर जमाअते शिया के खुतूत जाने के बाद अपनी जानिब से इमाम हुसैन[अ०स०] को एक दावती खत लिख दिया था। इसलिए उसको आपके पास जाने और इस किस्म की गुफ्तगू करने से हिजाब दामनगीर हुआ और उसने इन्कार कर दिया कि मैं नहीं जाऊँगा। दूसरे ऐसे अशखास को भी जो खुतूत लिख चुके थे जाने में इसी सूरत से तवक्कुफ़ (हिचकिचाहट) हुआ और आखिर कसीर बिन अब्दुल्लाह शअ्बी एक दुरूश्त खू और सख्त आदमी यह कहता हुआ सामने आया कि मैं जाने के लिए तैयार हूँ बल्कि मुझे हुसैन[अ०स०] के क़त्ल करने के लिए कहा जाये तो उस में भी उज़्र नहीं है। उमरे सअ्द ने कहा नहीं, यह मतलब नहीं है तुम बस जाकर इतना दरयाफ्त कर लो कि आप इस मुल्क मे किस लिए आये हैं? कसीर खैमागाहे हुसैनी की तरफ रवाना हुआ। बहादुर अबू सुमामा साएदी ने जो शायद उस वक्त खैम–ए–इमाम हुसैन[अ०स०] पर पहरा दे रहे थे उसे दूर से देख लिया और इमाम[अ०स०] से अर्ज किया कि आपकी तरफ बदतरीन खल्क (इन्सान) और इन्तेहाई सफ्फ़ाक (जालिम) व खूँरेज शख्स आ रहा है। उसके बाद वह खुद आगे बढ गए और उन्होने कसीर को रोक कर हथियार खोल कर रख देने का मुतालबा किया। उसने कहा नही, यह नहीं हो सकता। मै पैगाम लेकर आया हूँ अगर मुझे मौका दो तो मैं पैगाम पहुँचा दूँ। नहींतो वापस जाऊँ। अबू सुमामा ने कहा अच्छा मैं तुम्हारी तलवार के क़ब्जे पर हाथ रखे रहूगा और

इस तरह तुमको इमाम की खिदमत में ले जाऊँगा। कसीर ने उसे भी मन्जूर न किया और कहा, मेरी तलवार को तो तुम हाथ भी नहीं लगा सकते अबू सुमामा ने कहा कि अच्छा फिर अपना पैगाम तुम मुझसे कह दो। मैं उसका जवाब इमाम से ला दूँगा। इस तरह गुफ्तगू बढ़ते बढ़ते बिल आखिर सख्त कलामी की नौबत आगई और कसीर ने वापस जा कर उमरे सअ्द को अपनी सरगुजश्त (हालात) से मुत्तेला कर दिया।

अब उसने कुर्रा बिन कैस हन्जली को बुलाया और उससे कहा कि तुम जाकर हुसैन[अ0स0] से दरयाफ़्त करो कि वह इस सरजमीन पर किस लिए आये हैं [1] चुनाँनचे कुर्रा बिन कैस रवाना हुआ। इमाम ने जो उसे आते देखा तो दरयाफ्त फरमाया कि तुम लोग इसे पहचानते हो? हबीब बिन मजाहिर ने कहा, जी हाँ। यह कबील ए हन्जला का एक शख्स है। बनी तमीम में से और ननिहाल की तरफ़ से हमारा अजीज होता है। मैं एक अरसे से इसको जानता हूँ और मेरे खयाल में यह सन्जीदा व फरजाना (अक्लमन्द) शख्स था। मुझे यह खयाल न था कि यह इस मौके पर जग के लिए हमारे मुकाबिल मे आयेगा। इतनी देरे में वह आगया और इमाम की खिदमत में तस्लीम बजा लाते हुए उसने उमरे सअ्द का पैगाम पहुँचाया। वही कि आपकी तशरीफ आवरी का मक़सद क्या है? हजरत ने फ़रमाया "मुझको तुम्हारे शहर के लोगो ने लिखा था कि मैं आऊँ। लेकिन अब जबकि वह मेरा आना नापसन्द करते हैं तो मैं वापस चला जाऊँगा।" जवाब इतमामे हुज्जत के मकसद का हामिल और सुलह पसन्दी के मुताबिक होने के साथ साथ बिल्कुल साफ था। कासिद वापस जाने लगा। हबीब इब्ने मुजाहिर को मौका तबलीग का मिल गया। कहने लगे 'ऐ कुर्रा बिन कैस जालिम जमाअत की तरफ कहाँ जाते हो आओ और इस मजलूम की मदद करो जिसके बुजुर्गों की बदौलत तुम्हारी और हमारी हिदायत हुई है।' कुर्रा ने कहा, मैं जो पैगाम लाया था उसका जवाब पहुँचा दूँ, फिर गौर करूँगा कि मुझे क्या करना चाहिए। उसने जाकर उमरे सअ्द से जवाब इमाम हुसैन[अ0स0] का बयान किया। उस जवाब से उसे तवक्को पैदा हुई कि अब सुलह हो जायेगी लिहाजा उसने उबैदुल्लाह बिन जियाद के नाम खत लिखा कि "मैंने यहाँ पहुँचकर हुसैन[अ0स0] के पास अपना नुमाइन्दा भेजा और उसके जरिये से दरयाफ्त किया कि वह इधर क्यो आये हैं? क्या चाहते हैं और क्या मुतालबा रखते हैं? उन्होने कहा कि इस मुल्क के लोगों ने मुझको लिखा

---

[1] तबरी जि, 6. पेज / 233, देनवरी ने कुर्रा बिन सुफ़यान हन्जली दर्ज किया है अखबारुत्तुवाल पेज 25

था और मेरे पास उनके क़ासिद (Messenger) गए थे और मुझे इधर आने की दावत दी थी। लेकिन अब जबकि वह मेरा आना ना पसन्द करते हैं और उनके खयालात मे तबदीली हो गई है तो मैं जहाँ से आया हूँ उधर ही वापस चला जाऊँगा "

ख़त पहुँचा इब्ने जियाद ने पढ़ा और ग़ुरूर व तकब्बुर फ़िरऔनियत और जुल्म व सफ्फाकी के जज्बे के मातहत उसने यह शेअ्र पढकर अपनी तारीक जहनियत का सुबूत दिया।

يرجو النجاة ولات حين مناص

الآن اذ علقت مخالبنا به

(यानी) अब जबकि हमारे चुगल उन तक पहुँच गए हैं तो वह नजात के तालिब है। हरगिज नही अब वह हमसे बच कर कहाँ जायेंगे।"

उसने उमरे सअ्द को लिखा ख़त पहुँचा और हाल मालूम हुआ। तुम हुसैन[अ०स०] के सामने यह सवाल पेश करो कि वह और उनके तमाम असहाब यजीद बिन मुआविया की बैयत कर लें जब वह ऐसा कर चुकेंगे तो फिर हम राय कायम करेंगे "[1]

इस ख़त से उमरे सअ्द की उम्मीदों की दुनिया में एक दफा फिर तारीकी छा गई। उस खत के उनवान में इब्ने जियाद की मुफसिद (फसादी) और फितना पसन्द जहनियत का पूरा पूरा सुबूत मौजूद था अव्वल बैयत यजीद का इमाम हुसैन[अ०स०] से मुतालिबा ही ऐसा था जिसका असर क़ुबूल करना आपके लिए नामुमकिन था फिर उस पर तुर्रा यह कि बफ़रज़े मुहाल बैयत कर लेने की सूरत मे भी हुकूमत की तरफ से किसी खुशगवार नतीजे का वादा न था बल्कि यह कहा जा रहा था कि हम फिर राय कायम करेगे। इसके यही माना हो सकते थे कि उसके बाद भी हुकूमत इमाम हुसैन[अ०स०] के गुजिश्ता इन्कारे बैयत की बिना पर आपके लिए कुछ सजा तजवीज करने का हक़ रखेगी।

खत का अन्दाज बताता है कि इब्ने जियाद हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के इतमामे हुज्जत पर मबनी जवाब की सही नौइयत को नहीं समझा और उसने खयाल किया कि फ़ौज की कसरत को देख कर आप डर गए हैं इसलिए कि मैं जहाँ से आया हूँ वहीं वापस चला जाऊँगा। मगर उमरे सअ्द हुसैन[अ०स०]और

[1]अख़बारुत तुवाल पेज / 252

उनके असहाब के तेवरों को करीब से देख रहा था और समझता था कि आपका जवाब सिर्फ अमन पसन्दी और सलामत रवी का नतीजा है किसी हैबत और खौफ पर मबनी नहीं है इसलिए उसने इब्ने जियाद के इस खत को बिल्कुल नामाकूल समझते हुए कहाः 'मुझे पहले ही अन्देशा था कि अमीर इब्ने जियाद अमन व सुकून के ख्वाहाँ नही हैं'[1]

फिर भी उसने यह किया कि इब्ने जियाद का खत इमाम हुसैन[अ०स०] के पास भेज दिया। इमाम हुसैन[अ०स०] ने वही कहा जो उमरे सअ्द समझ चुका था। यानी 'यह हरगिज नहीं हो सकता।' ज्यादा से ज्यादा मौत ही तो है मैं उसका खैर मकदम करने के लिए तैयार हूँ।[2] उमरे सअ्द ने यह जवाब इमाम हुसैन[अ०स०] का इब्ने जियाद के पास भेज दिया

[1] तबरी जि/6, पेज/234 इरशाद पेज/239–240, अखबारुत तुवाल पेज/251
[2] अखबारुत तुवाल पेज/252

तेईसवाँ बाब

बन्दिशे आब और ग़लब—ए—तशनगी

हकीक़ते अम्र यह है कि इमाम हुसैन[अ०स०] और आपके असहाब व अकरूबा यहाँ तक कि अतफाले खुर्द साल (कमसिन बच्चों) पर पानी बन्द करने का इन्तेजाम दूसरी मुहर्रम ही को हो गया था उस खत के जरिये से जो इब्ने जियाद ने हुर बिन यजीद रियाही के पास भेजा था और जिसमें साफ साफ लिखा था कि हुसैन[अ०स०] के साथ सख्ती से पेश आओ। और उन्हें एक ऐसी जगह कयाम करने पर मजबूर करो जहाँ पानी मौजूद न हो। उस हुक्म के निफाज में इतना एहतिमाम था कि कासिद (दूत) को यह हिदायत कर दी गई थी कि वह हुर से उस वक्त तक जुदा न हो जब तक कि उस हुक्म की तामील न हो जाये। चुनाँचे हुर ने इमाम के सामने अपनी मजबूरी का इजहार करके हजरत को करबला में ऐसे ही बेआब मकाम पर क़याम के लिए मजबूर किया [1] इसका तजकिरा तफसील के साथ पहले हो चुका है।

उसके बाद अब सूरते हाल यह थी कि इमाम हुसैन[अ०स०] आपके असहाब व अइज्जा, मुखद्दिराते इस्मत (औरतें) और अतफाल (बच्चे) उन सबके खैमे नहर से दूर जलती हुई रेत पर थे सहरा ए अरब का सूरज दिन भर अपनी पूरी कुव्वत से उन खयाम पर चमकता था जिसके अन्दर रहने वाले यकीनन तमाजते अफ्ताब शिद्दत के साथ महसूस कर सकते थे नहरे फुरात फासले पर रवाँ थी और वहाँ दुश्मन फौज का कयाम था।

कोई नहीं कह सकता कि इब्ने जियाद के खत के जिस जुज्व (हिस्से) पर हर देखने वाले की नजर सबसे पहले पडती है और जिसे हुर ने भी खास अहमियत दी "बे आब मकाम" (जहाँ पानी न हो) उसके मकसद की तरफ खुद इब्ने जियाद की फौज के सिपाहियों की नजर न गई होगी जबकि हमारा

---

[1] अखबारूत्त तुवाल पेज/249-250, तबरी जि/6 पेज/232 इरशाद पेज/213 कामिल इब्ने असीर जि/4, पेज/28 अबुल फिदा जि/1 पेज/190

मुशहिदा यह है कि हुकूमत के इक़्तेदारे आला वाले अफ़राद फ़रीक़े (गिरोह) मुख़ालिफ़ के साथ जिस सख़्तगीरी का हुक्म नहीं भी देते छोटे दर्जे के उम्माल (सरकारी लोग) और सिपाही बर बिनाये तअस्सुब और नीज अपने बड़ों को उनके मुख़ालिफ़ के साथ सख़्ती करके ख़ुश करने के लिए उसके लिए भी तैयार हो जाते हैं चेजाएकि हाकिम की तरफ़ से शिद्‌दत के साथ सख़्ती करने का हुक्म और फिर साफ़ साफ़ पानी से दूर रखने का फ़रमान भी हो गया हो। उसके बाद यह किसी तरह समझा ही नहीं जा सकता कि अब हुसैन[अ०स०] और असहाबे हुसैन[अ०स०] के लिए पानी बा–इतमीनान व सुकून और बिल्कुल बा–आसानी बग़ैर किसी रूकावट के हासिल हो जाता होगा।

हाँ मुमकिन है हुर अपनी जात से सख़्ती न करता हो चूंकि वह पहले ही इमाम की हक्क़ानियत से कुछ मुतअस्सिर जरूर था मगर जब अभी वह 'बाजमाना बसाज" पर आमिल (हाकिम के हुक्म पर अमल करने वाला) था और हुकूमते वक़्त की मुख़ालिफ़त पर खुल कर आमादा न था तो दूसरे सिपाहियों को वह साफ़ साफ़ सख़्ती व दरूशती से बाज भी न रख सकता था फिर यह तो दो एक दिन की बात थी कि हुर सालारे फ़ौज था उसके बाद उमरे सअ्द आ गया और मजीद फ़ौजें करबला में जमा हो गईं जिसके बाद हुर की कोई अहम हैसियत बाक़ी नहीं रही थी और न उसकी आवाज कोई आवाज समझी जा सकती थी इसलिए यक़ीनन उन दिनों में असहाबे इमाम के लिए पानी तक पहुँचना और पानी भर कर लाना हर मर्तबा एक ख़तरा और कशमकश का मुक़ाबला करना था जिसे उसी वक़्त इख़्तियार किया जाता होगा जब बच्चों की प्यास बहुत बढ़ जाये या पूरी जमाअत पर प्यास का शदीद ग़लबा हो चुनाँनचे इस सिलसिले में बाज वक़्त जंग भी हो गई है और जंग करके पानी हासिल किया गया है।[1]

सातवीं मुहर्रम को वह ख़ास तारीख़ थी जब इब्ने जियाद का दूसरा ख़त उमरे सअ्द के पास पहुँचा। उसका मजमून यह था कि.

'हुसैन और उनके असहाब पर पानी बन्द कर दो इस तरह कि उन्हें एक क़तरा भी पानी मिलने न पाये जैसा कि उस्मान बिन अफ़्फ़ान के साथ सुलूक किया गया था।[2]

---

[1]अल–इमामत वल–सियासत इब्ने क़तीबा पेज/187

[2]अख़बारूत तुवाल पेज/252 तबरी जि/6, पेज/234. इरशाद पेज/216

उमरे सअ्द ने उस खत को देखते ही अम्र बिन हज्जा ज़ुबैदी को पाँच सौ सवारों की फ़ौज के साथ घाट पर मुक़र्रर कर दिया। और यह ताकीद कर दी कि एक क़तरा खयामे हुसैनी की तरफ जाने न पाए।

तारीख मे तसरीह है कि यह इमाम हुसैन[अ०स०] की शहादत से तीन रोज क़ब्ल का वाकेया है[1]

पानी की इस बन्दिश के बाद जमाअते हुसैनी के तमाम अफ़राद और बिल खुसूसन सग़ीर अतफाल (छोटे बच्चों) पर प्यास का शदीद गल्बा हो गया[2]

फिर दुश्मन की यह तग जरफी थी कि इस ज़ुल्मो तशद्दुद के साथ जख्मे जबान भी लगाए जा रहे थे। जैसे यह फिक़रा कि "हुसैन[अ०स०]! देखते हो यह पानी नीला नीला आसमानी रगत का किस तरह बह रहा है मगर तुम मरते दम तक उसमें से एक कतरा भी नहीं पा सकते"[3]

और यह कि "ऐ हुसैन! यह पानी मौजूद है जिसमें कुत्ते तक मुँह डालते हैं और इराक के सुवर गधे भेड़िये तक इसमें से पीते हैं। मगर तुम इसमें से बखुदा एक कतरा चख भी नहीं सकते।[4]

बईद नहीं है कि फौजे यजीदी का खयाल यह हो कि जमाअते हुसैनी से किसी जंग की जरूरत ही न पड़ेगी। प्यास की शिद्दत ही उनके खत्म करने के लिए काफी होगी चुनाँन्चे एक मौके पर जब हजरत ने इतमाम हुज्जत के लिए खुतबा पढ़ा और पैगम्बरे इस्लाम के साथ अपने ख़ुसूसी तअल्लुक़ का इजहार करके उन नाम निहाद मुसलमानो में एहसासे फ़र्ज़ पैदा करने की कोशिश फरमाई तो उसके जवाब में कहा गया कि "हम यह सब जानते हैं मगर उसके बावजूद तुम को छोड़ेंगे नहीं यहाँ तक कि प्यास की शिद्दत की वजह से ही तुम दुनिया से रूख़सत हो जाओ।[5]

हालाँकि हुसैनी असहाब ने अपनी शजाअत से यह सुबूत दे दिया कि हम अब भी जब चाहें तुम्हे घाट से हटा कर पानी हासिल कर लें। चुनाँनचे हजरत

---

[1] अखबारूत तुवाल पेज/252, तबरी जि/6, पेज/234 इरशाद कामिल इब्ने असीर जि/4, पेज/27 तजकिरा–ए–खवासुल उम्मा सिब्ते इब्ने जूजी पेज/140

[2] लुहूफ सैयद इब्ने ताऊस

[3] तबरी जि/4, पेज/234 इब्ने असीर जि/4, पेज/27 इरशाद तज़किरा सिब्ते इब्ने जूज़ी पेज/42

[4] तजकिरा पेज/141

[5] लुहूफ इब्ने ताऊस)

अबुल फजलिल अब्बास के सातवीं के बाद भी जिहाद करके पानी लाने का तजकिरा तारीख में मिलता है [1]

ग़ालिबन आठवीं शब का वाकेया है उसके बाद आठवीं नवीं और दसवीं तीन दिन की मुसलसल प्यास फिर भी मुसल्लम तौर पर कायम रहती है।

यह अकरबा व अन्सारे हुसैनी की यादगार वफ़ादारी है कि बग़ैर इमाम के उनमें से एक ने भी बावजूद नहर तक पहुँच जाने के लब तर नहीं किये और साफ़ कह दिया कि यह नामुमकिन है कि हम पानी पिये और हज़रत इमाम हुसैन^अ०स० प्यासे रहें।[2] और यह इमाम की बलन्द नजरी थी कि पानी के हासिल करने पर अपनी ताक़त सर्फ़ नहीं की बल्कि तीन दिन तक सिर्फ इतमामे हुज्जत के तौर पर उनके जमीर के बेदार करने की कोशिश "सवाले आब" की सूरत में करते रहे और असहाब को भी इसकी इजाजत अता फ़रमाई। चुनाँनचे शिद्दते अतश का आलम देखते हुए बुरैर हमदानी ने इजाजत चाही कि मैं इब्ने सअ्द के पास जाकर पानी के बाब में गुफ्तगू करूँ मुमकिन है कि उस पर कुछ असर हो हजरत ने फरमाया तुम्हें इख्तियार है। बुरैर, उमरे सअ्द के पास गए और कहा 'तुम कैसे मुसलमान हो कि आले रसूल के कत्ल पर तैयार होकर आये हो। फिर उस पर तुर्रा यह है कि यह आबे फ़ुरात है जिसमें से इराक के कुत्ते और सुवर तक पानी पीते हैं मगर यह हुसैन हैं और उनके अहले हरम और अइज्जा और अक़ारिब कि प्यास से हलाक हो रहे हैं और उन्हें फ़ुरात के पानी तक पहुँचने नहीं दिया जाता

उमरे सअ्द ने जवाब में गोया इकरारे जुर्म करते हुए यह उज्र पेश किया कि "क्या करूँ, रय की हुकमूत मुझसे जाती रहेगी अगर इब्ने जियाद के खिलाफ़ करूँ और रय की हुकूमत का तर्क करना मेरे लिए किसी तरह मुमकिन नहीं है।"[3]

सुबहे आशूर जब हुर बिन यजीद लशकरे शाम से जुदा होकर जमाअते हुसैनी की तरफ़ गए तो उन्हें सबसे ज्यादा फ़ौजे यजीदी के जिस ज़ुल्म व तअद्दी का एहसास हुआ वह पानी का बन्द करना था और होना भी चाहिए था इस लिए कि इमाम हुसैन^अ०स० ने इसके पहले हुर और उसकी जमाअत को इन्तेहाई तशनगी के आलम में सेराब किया था। फिर यह कि उसी ने इब्ने

---

[1] अख़बारूत तुवाल पेज/262 तबरी जि/6. पेज/224

[2] तबरी जि/6 पेज/234

[3] कशफ़ुल ग़ुम्मा पेज/189

जियाद के हुक्म से ख्यामे हुसैनी को नहर के किनारे बरपा न होने दिया इसलिए कि एक तरह बन्दिशे आब का वह अपने को जिम्मदार समझते थे। चुनाँनचे उन्होने इमाम हुसैन[अ०स०] से अफ़ुव (माफी) कुसूर कराने के बाद फौजे मुखलिफ के सामने जो तकरीर की उसमें इन्तेहाई पुर असर अन्दाज़ में जमाअत हुसैनी और बिल खुसूस ख्वातीन व अतफाल की अतश का बयान और बन्दिशे आब पर एतेराज़ किया है

उसका तफसीली तजकिरा आइन्दा आयेगा

जब इस इतमामे हुज्जत और मौएजा (तब्लीग) व नसीहत का उस सितमगार और कसीयुल कल्ब (सख्त दिल) फौज पर कोई असर न हुआ तो इमाम हुसैन[अ०स०] और आपके साथ के हर बच्चे ने अपने अमल से साबित कर दिया कि राहे हक पर उनके क़याम और सिबात व इस्तेकलाल (हिम्मत) में किसी तशद्दुद और ईजा रसानी से जर्रा भर कमी नही हो सकती। उन्होंने शिद्दते तशनगी की तकलीफ को बर्दाश्त किया और तीन दिन की प्यास के आलम में फरीज–ए–जिहाद को पूरे तौर से अदा करने के साथ शहादत का खैर मकदम किया

चौबीसवाँ बाब

सुल्ह की आख़री कोशिश और उसका अन्जाम

हुसैन[अ०स०] अपने दामन पर यह धब्बा लेना नहीं चाहते थे कि आप मुसलमानों के दरमियान खूँरेजी को पसन्द करते हैं। इसलिए आपने इतमामे हुज्जत के लिए दोबारा खुद अपनी जानिब से सुलह की गुफ्तगू का आग़ाज़ फ़रमाया। इस तरह कि अम्र बिन क़र्जाह बिन कअ्ब अन्सारी को उमर बिन सअ्द के पास भेजा कि आज शब को मुझसे दोनो तरफ़ के लशकरो के दरमियान मिल लेना है। चुनाँनचे उमरे सअ्द कोई बीस सवार अपने साथ लेकर निकला और इमाम भी उतने ही साथियों के साथ तशरीफ ले गए मगर जब करीब पहुँचे तो आप ने अपने साथियों को हटा दिया जिसके बाद इब्ने सअ्द ने भी अपने साथियों से अलाहिदगी इख़्तियार की। यह मुकालिमा (बात चीत) बडी रात गए तक जारी रहा जिसके बाद इमाम अपने खयाम की तरफ वापस हुए और इब्ने सअद अपने लशकर गाह की तरफ चला गया।[1]

यह तमाम गुफ्तगू सरी–ए–राज में थी मुखतसर तौर पर इतना मालूम हो सका कि इमाम हुसैन[अ०स०] इस पर आमादा थे कि इराक मे क़याम के खयाल को तर्क कर देंगे और अगर जरुरत समझी जाए तो अरब का मुल्क भी छोड देंगे और किसी दूर दराज मकाम पर चले जायेगे।[2]

हकीक़त के लिहाज से इस सूरत में भी इमाम हुसैन[अ०स०] की फतह थी यानी आपका मुल्क तर्क करना भी उस मकसद का एक एलान था जिसकी ख़ातिर आपको जान देना पड़ी फिर भी आपका रवैया इतना नर्म और सुलझा हुआ था कि यजीदी फौज के अफसर उमरे सअद ने साफ एतराफ़ कर लिया कि आप सुलह के रास्ते पर गामजन हैं और उसने बहुत खुश होकर इब्ने जियाद को खत लिखा और हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की इस शर्ते मुसालिहत

---

[1] तबरी जि/6. पेज/235

[2] तबरी जि/6. पेज/235

(सुल्ह) से इत्तेला दी। इन अलफ़ाज के साथ कि अलहम्दु लिल्लाह फितने की आग सर्द हो गई और मुसलमानो का शीराज़ा मुजतमा रहने की सूरत पैदा हो गई (यानी बिखरने से बच गया) और उम्मते इस्लामी का मुआमिला रू–ब–इस्लाह (हल) हो गया। आखिर में उसने अपनी राय भी लिखी कि मेरे नजदीक अब मुखासिमत (लड़ाई) की कोई वजह नहीं है और अब इस मुआमिला को खत्म होना चाहिए।"[1]

कहा जाता है कि इब्ने जियाद ने भी इस राय को मन्जूर करना चाहा कि उमरे सअ्द का यह खत बहुत ख़ैर ख़्वाहाना है। मगर शिम्र[2] बिगड़ गया और कहने लगा। "भला ऐसा मौका जिसके हाथ आये वह उसे छोड़ दे हुसैन[अ०स०] आपके पास पहलू में आ गए हैं अगर आज वह चले गए और उन्होंने आपकी इताअत इख्तियार न की तो फिर याद रखिये कि कूव्वत व इज्जत उन ही का हक़ होगा और कमजोरी व आजजी आपका हिस्सा मेरी राय में उनकी यह ख्वाहिश कभी मन्जूर न करना चाहिए क्योंकि यह बडी जिल्लत की बात और कमजोरी की निशानी है। बेशक उन्हें गैर मशरूत (बगैर शर्त के) तौर पर हथियार डाल देना और आपके सामने सरे तस्लीम खम कर देना चाहिए फिर अगर आप उन्हें उनके जुर्म की सजा में कत्ल करना चाहें तो आपको हक़ इसका है और अगर माफ कर दे तो इसका भी इख्तियार है रह गया उमरे सअ्द, उसका क्या जिक्र मैं ने तो सुना है कि पूरी पूरी रातें वह हुसैन[अ०स०] के साथ बातों में गुजार देता है।[3]

यह खुशामद आमेज, गैरत अगेज, मुफसिदा परदाज (भडकाऊ अन्दाज) और फितना परवर तकरीर वह थी जिससे एक तरफ़ तो तफव्वुक तलबी (खुद को बलन्द समझना) और जफर अन्जामी (फतह का ख्वाब) के जजबे में हरकत पैदा हुई। दूसरी तरफ़ अनानियत गुरूर और खुद बीनी (सुलह नामा रद करने का इरादा) की रग में जुम्बिश हुई और तीसरी तरफ इब्ने सअ्द की तरफ से बदगुमानी हो गई और वह खुलूस और खैर ख्वाही का करीना जो उसकी तहरीर मे पाया जाता था नीस्तो नाबूद हो गया। शिम्र बडा खैर ख्वाह दोस्त और सच्चा मुशीरे कार शुमार किया जाने लगा और उमरे सअ्द पर गुस्सा

---

[1]तबरी जि/6. पेज, 235–236. इरशाद पेज/241

[2]शिम्र का असली नाम शरजील बिन अम्र बिन मुआविया. वह बनी आमिर बिन सअसा में आले वहीद कलाबी में से था अख़्बारूत तुवाल. पेज/233–253

[3]तबरी जि/6. पेज/236

आने लगा कि वह लड़ने गया था और रात रात भर बैठकर दुश्मन से बातें करता है, हुसैन[अ०स०] से मिल गया है और हमको ख्वाह मख्वाह धोखा देता है। फिर ऐसे मुशतबह (शक वाला) शख्स का सरदारे लशकर बाकी रखना कैसा? यकीनन शिम्र को भेजा जाए ताकि इब्ने सअ्द के तर्जे अमल का तदारूक और हुसैन[अ०स०] के साथ हर क़िस्म की मुसालिहाना गुफ्तगू का सद्दे बाब (सुलह की बात बन्द हो सके) कर सके। चुनाँनचे इब्ने जियाद ने उसी दिमागी उलझन के आलम मे उमरे सअ्द के नाम ख़त लिखा। 'मैंने तुमको हुसैन की जानिब इसलिए नहीं भेजा है कि तुम उनके साथ मुराआत (नर्मी) करो या उनके साथ मुआमलात को तूल दो या उनको जिन्दगी की उम्मीद दिलाओ या मेरे पास उनकी सिफारिश करने बैठो देखो अगर हुसैन[अ०स०] और उनके असहाब मेरे हुक्म के सामने सरे तस्लीम खत करें और अपने को मेरे रहमो करम पर छोड़ दें तो उनको खामोशी के साथ मेरे पास भेज दो और अगर वह इन्कार करें तो उन पर हमला करो[1] उन्हें कत्ल कर दो और उनके आजा व जवारेह को कता (जिस्म के टुकडे टुकडे करो) करो क्योंकि वह इसी के मुस्तहक हैं।' इतना ही नहीं बल्कि इस्लाम के नाम को बदनाम इन्सानियत की पेशानी को अरकं इन्फ़आल (शर्म के पसीने) से तर और तारीख को हमेशा के लिए अगुश्त बदन्दान (हसरत व अफसोस) करने वाले यह अलफाज थे जो किसी और की निसबत नहीं रसूले इस्लाम के सबसे प्यारे रास्तबाज (सच्चे) नवासे हुसैन[अ०] की निसबत लिखे जा रहे थे कि अगर हुसैन कत्ल हो जायें तो उनके सीने और पुश्त को घोड़ों की टापों से पामाल कराना क्योकि वह सलतनत के बागी, मुखालिफ और हरीफ हैं। मेरा यह मकसद नहीं है कि इससे मौत के बाद उनको कोई नुकसान पहुँचेगा। लेकिन यह जबान से कह चुका हूँ कि अगर हुसैन[अ०स०] को कत्ल किया तो उनके साथ यह सुलूक करूँगा अगर तुमने इन अहकाम का इजरा (अमल) किया तो खैर तुम्हें मुआवजा मिलेगा जो एक वफादार फरमाँबरदार को मिलना चाहिए और अगर तुम्हें यह मन्जूर न हो तो लशकर की सरदारी से अलाहिदा हो जाओ और इस मन्सब को शिम्र के सिपुर्द कर दो। जिसे हमने पूरे तौर से मुनासिब हिदायतें कर दी हैं ' इसलिए यह खत शिम्र के सिपुर्द किया और जबानी भी उससे कह दिया कि अगर उमरे सअद इस हुक्म की तामील न करे तो माजूल (हटा दिया जायगा) तसव्वुर होगा और तुम उसकी जगह सरदारे लशकर करार पाओगे। तुम

[1]अख़बारूत तुवाल, पेज/253

हुसैन[अ०स०] से जंग करना और उमरे सअ्द को भी कत्ल करके उसका सर मेरे पास भेज देना [1]

यह ताजीली (जल्द बाजी) और तम्बीही (सख्ती भरा) हुक्म नामा शिम्र के हाथ उमरे सअ्द के पास भेज दिया गया। अब जंग का इलतवा (टालना) गैर मुमकिन सा हो गया। खुद उमरे सअ्द को इसका खूब अन्दाजा था कि हुसैन[अ०स०] यजीद की बैयत या इब्ने जियाद की गैर मशरूत (बगैर शर्त) इताअत पर हरगिज़ आमादा न होंगे। इसलिए जूँही उसे इब्ने ज़ियाद का ख़त शिम्र के हाथ पहुँचा और उसने खोल कर उसे पढ़ा फ़ौरन शिम्र से कहने लगा "कम बख्त यह तूने क्या किया? खुदा तुझसे समझे खुदा तुझे ग़ारत करे और इस पैगाम को गारत करे जो तू मेरे पास लाया है। बखुदा मैं समझता हूँ कि तूने ही इब्ने जियाद को मेरे मशवरे पर अमल करने से रोक दिया और इस बात को बिगाड़ दिया जिसके बन जाने की उम्मीद थी। खुदा की कसम हुसैन कभी अपने को इब्ने जियाद के रहमो करम पर छोड़ना पसन्द न करेंगे। यकीनन हुसैन[अ०स०] अपने बाप का दिल अपने सीने में रखते हैं [2] शिम्र ने कहा "इन बातों को जाने दो यह बताओ कि अब क्या करोगे? अपने अमीर के हुक्म पर अमल या सरदारी को मेरे सिपुर्द करोगे।?"

कमजोर दिल और दुनिया पर जान देने वाला उमरे सअ्द अपनी तमाम कल्बी कैफियतों और जमीर की हिदायतों को उस वक्त भूल जाता था जब दुनिया के वकती ऐजाज (मन्सब) और जाह व सरवत (शान व दौलत) के उसके हाथ से जाने का सवाल पेश होता था और इस तरह वह दुनिया के इश्क मे अपनी तमाम विजदानी कैफियतों (ज़मीर) के पामाल कर देने पर इस हद तक तैयार हो जाता था कि उसके जैल में उसको बड़े से बड़े जुर्म का इरतिकाब भी गवारा हो जाता था। खतरा बिल्कुल करीब और उसका रकीबे सरदार शिम्र सामने मौजूद था और सिर्फ एक हाँ या नहीं का जवाब वह था कि जिस पर तमाम उसकी आइन्दा जिन्दगी का दारो मदार था जिसमें फकत सरदारी रहने या न रहने का सवाल ही न था बल्कि इब्ने जियाद के सरीही (खुला हुआ) हुक्म के मुताबिक जान जाने का अन्देशा भी था इसके लिए तो वैसे ही जजबा-ए-हक पसन्दी की जरूरत थी जो राहे हक के फिदाकारों में हुआ करता है मगर उमरे सअ्द इस जज्बे से आरी (खाली) और सिबात व

---

[1] तबरी जि, 6. पेज/236. इरशाद पेज/241 242

[2] इरशाद पेज/242

इस्तेकलाल (साबित कदमी, मजबूत इरादे) से खाली था लिहाजा शिम्र के इस सवाल पर उसे कह देना पड़ा कि नहीं मैं ही इस मुहिम को सर करूँगा[1] हाँ तुम्हें प्यादों का अफसर बनाए देता हूँ।[2] उसके बाद से शिम्र का वजूद इसके लिए सूहाने रूह (तकलीफ देह) साबित हो रहा था। इब्ने जियाद की बदगुमानी उसकी निसबत जाहिर हो चुकी थी लिहाज़ा उसे अपनी वफादारी और ख़ैर ख्वाही का सुबूत फराहम करना था। उसके लिए जंग में ज़रा भी ताखीर उसके नजदीक मुनासिब न थी।

चुनाँनचे उसने उसी वक्त हमले की तैयारी का हुक्म जारी कर दिया और रोज़े पंजशम्बा (जुमेरात) नवीं तारीख की शाम होने नहीं पाई थी कि इमाम हुसैन[अ०स०] पर हमला कर दिया। यह हमला बिल्कुल बगैर इत्तेला था। इमाम हुसैन[अ०स०] अस्र की नमाज के बाद खैमे के दरवाजे पर तलवार का सहारा लिए घुटनों पर सर रखे बैठे थे और आपकी आँख लग गई थी कि एक मर्तबा घोड़ों की टापों और फौज के गुल की आवाज जनाबे जैनब के कान में गई आप घबरा कर पर्दे के पास आईं और इमाम हुसैन[अ०स०] को मुखातब किया कि देखिये फौजे दुश्मन की आवाजे बहुत नजदीक से आ रही हैं। आप ने सर उठाया और फरमाया मैंने अभी ख्वाब में देखा रसूल अल्लाह को, हजरत ने मुझसे फरमाया कि तुम अनकरीब हमारे पास आया चाहते हो इधर अचानक दुश्मनों के हमले से जैनब का दिल परेशान था ही। इधर जो इमाम ने यह ख्वाब बयान किया तो जनाबे जैनब मुजतरिब हो गई दोनों हाथों से मुँह पीट लिया और कहा "अरे गजब!" इमाम ने बहन को तस्कीन दी फरमाया: "ऐ बहन गजब तुम्हारे दुश्मनों के लिए। ख़ामोश रहो। खुदा मालिक है।" अभी यह गुफ्तगू हो रही थी कि अबुल फजलिल अब्बास ने आकर इत्तेला दी कि फौजे आदा ने चढ़ाई कर दी है। हजरत यह सुनकर अपनी जगह से उठ खड़े हुए और फरमाया कि अब्बास सवार हो जाओ और उनसे पूछो कि इस वक्त हमले का सबब क्या है? जनाबे अब्बास[अ०स०] बीस सवारों के साथ तशरीफ़ ले गए और आपने फौजे मुख़ालिफ से खिताब करते हुए दरयाफ्त किया कि तुम्हारी राय में क्यों तब्दीली हुई और अब तुम क्या चाहते हो? जवाब मिला कि "अमीर इब्ने जियाद का हुक्म आया है कि तुम लोगों से अमीर की इताअत कुबूल करने का मुतालिबा किया जाए और नहीं तो फिर जंग शुरू कर दी जाए।"

---

[1] अख़बारुत तुवाल पेज / 253

[2] तबरी जि / 6, पेज / 236–237

आपने फ़रमाया कि अच्छा फिर जल्दी न करो। मैं इमाम के पास जाकर तुम्हारा मुतालबा पेश करता हूँ। उसके बाद जैसा कुछ इमाम फरमायेंगे उससे तुमको मुत्तेला कर दूँगा। जनाबे अब्बास घोड़े को सरपट दौड़ाते हुए इमाम हुसैन^अ०स० की खिदमत में वापस गए और आपको वाक़ेए की इत्तेला दी[1] हज़रत ने फ़रमाया अगर मुमकिन हो तो आजकी शब की उनसे मोहलत हासिल कर लो ताकि आज रात भर हम इबादते इलाही और दुआ व इस्तेगफार में बसर कर लें अल्लाह ही वाकिफ है कि मैं उसकी नमाज़ व इबादत, तिलावते कुरआन और दुआ व इस्तेगफार से कितनी मुहब्बत रखता हूँ।[2] इधर इस दौरान में हबीब बिन मज़ाहिर और ज़ुहैर बिन कैन फौजे मुखलिफ से गुफ्तगू और हजरत इमाम हुसैन^अ०स० पर बिला वजह ज़ुल्मो सितम करने पर उनको काएल माकूल करते रहे यहाँ तक कि जनाबे अब्बास वापस आए और इमाम के इरशाद के मुताबिक़ उनसे एक रात की मोहलत तलब की।[3] उमरे सअ्द गुज़िश्ता वाकेआत की बिना पर शिम्र की मौजूदगी को अपने लिए इन्तेहाई खतरनाक समझता था। इसलिए अब वह इमाम हुसैन^अ०स० के मुतअल्लिक़ ख्वाह मख्वाह भी तशद्दुद से काम लेना चहाता था। लिहाजा वह शिम्र की तरफ मुतवज्जेह हुआ और कहा तुम्हारी इस बार में क्या राय है? शिम्र ने जवाब दिया कि जैसा आप मुनासिब समझें। इसलिए कि आप अफ़सर हैं और आपकी राय मोतबर है

उमरे सअ्द ने समझ लिया कि शिम्र का यह जवाब तन्जिया अन्दाज का हामिल है उसने कहा "मैं चाहता हूँ कि मोहलत न दी जाए।' मगर चूँकि दर अस्ल उसका ज़मीर उसके खिलाफ़ था इसलिए अब वह मुतवज्जा हुआ दूसरे सरदारों की तरफ़ और उनसे दरयाफ्त किया कि क्यों तुम्हारी क्या राय है। अम्र बिन हज्जाज ज़ुबैदी, हानी बिन उरवा के बरादरे निस्बती (ससुराली रिश्तेदार साढ़ू) ने जो उनके कत्ल की खबर सुनकर फौज लेकर दारूल अमारा पर चढ़ दौड़ा था कहा "सुबहानल्लाह' अगर यह लोग क़बील–ए–तुर्क व दैलम से भी होते और इतनी मुराआत (मोहलत) के तालिब होते तो तुम्हें उनके साथ यह मुराआत लाज़िम थी।' कैस बिन अशअस ने भी यही मशवरा

---

[1] तबरी जि 6, पेज/238
[2] तबरी जि/6, पेज/237-238, इरशाद पेज, 242-243
[3] तबरी जि/6, पेज/238

दिया कि मोहलत देनी चाहिए।[1] हजरत अब्बास[अ०स०] के जब्तो सब्र का बे नजीर नमूना था कि यह तमाम गुफ्तगूए आपस में होती रहीं और आप ख़ामोश नतीजे के मुन्तज़िर खड़े रहे आखिर को मोहलत का मसअला तय पाया और जनाबे अब्बास वापस हुए। इस तरह कि आपके साथ उमरे सअ्द की तरफ का एक नुमाइन्दा भी था और उसने आकर कहा कि हम आपको कल तक की मोहलत देते हैं। अगर कल आपने हथियार डाल दिए तो हम आपको अपने अमीर उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद के पास भेज देंगे और आपने इन्कार किया तो फिर जंग यकीनी होगी।"[2]

[1]तबरी जि/6, पेज/238, इरशाद पेज/143
[2]इरशाद पेज 143

पच्चीसवाँ बाब

शबेआशूर यानी मुहर्रम की दसवीं रात

कोशिश के साथ इस रात की मोहलत इसलिए नहीं ली गई थी कि जंग की कोई खास तैयारी कर ली जाए न यह कि कहीं से किसी इमदाद के आने की कल तक उम्मीद हो और न यह कि इमाम चाहते थे कि अपने अहलेबैत और पसमान्दगान (अजीजों) को आइन्दा के लिए कुछ वसीयतें फरमा दें और उन्हें आइन्दा के लिए तैयार कर दें। या अपने बाद उनकी हिफ़ाजत का कोई सामन करना मन्जूर था उनमें से कोई बात न थी। बल्कि एक तो मकसद इस मोहलत का वही था जो खुद आपने जनाबे अब्बास[अ०स०] से जाहिर फरमा दिया था उस वक्त जब उन्हें मोहलत के लिए भेजा है, वह यह था कि हम आज की रात अपने परवरदिगार की खूब इबादत कर ले और दुआ व इस्तेगफ़ार मे मसरूफ रहें चुनाँनचे आपने और आपके असहाब ने तमाम शब इस आलम में गुजारी कि वह मुसलसल नमाज और दुआ और इस्तेगफार और बारगाहे इलाही मे तजर्रो व जारी (गिरया) में मसरूफ थे।[1]

दूसरी बडी मसलहत इस एक शब की मोहलत में यह मुजमर (पोशीदा) थी कि आप खतरे के यकीनी होने के बाद अपने साथियों को अपनी अपनी तबियतों के तौल लेने का मौका देना चाहते थे और एक बार और यह कह देना चाहते थे कि जो आपका साथ छोड़ कर जाना चाहता हो वह चला जाए। ताकि ऐन मौके पर कोई एक मुतनफ्फिस (शख्स) भी ऐसा बाकी न रहने पाए जो खतरे के हँगामी होने की वजह से बादिले नाख्वास्ता (न चाहते हुए) आपका साथ देने पर मजबूर हुआ हो। चुनाँनचे आपने शाम होते होते अपने साथियों को मुजतमा (जमा) करके यह खुतबा इरशाद फरमाया "तमाम तारीफें खुदा के लिए हैं। राहत व तकलीफ़ हर हाल में उसका शुक्र है। बारे इलाहा तेरा शुक्र है कि तूने हमको नुबूवत की इज्जत अता की। कुरआन का इल्म

[1] तबरी जि 6, पेज / 240

दिया दीनी मालूमात का खजाना मरहमत फरमाया और हमे गोश शुनुअ् (बेहतरीन सुनने वाला) चश्मे बीना (बेहतरीन देखने वाला) और दिले दाना (समझदार) की नेअ्मतों से माला माल किया।"

उसके बाद हजरत ने फरमाया "मालूम होना चाहिए कि मैं दुनिया में किसी के साथियों को अपने साथियों से ज्यादा बावफ़ा और उनसे बेहतर नहीं जानता और न अपने अइज्जा से ज्यादा नेकूकार और अदाए हक करने वाले अइज्जा किसी के मुझे मालूम हैं खुदा तुम सबको मेरी तरफ़ से जजाए खै़र दे। आगाह हो कि दुश्मन कल जरूर जंग करेगा। मैं बखुशी इजाजत देता हूँ कि जहाँ तुम्हारा जी चाहे चले जाओ मैं बैयत की जिम्मेदारी तुम से हटाता हूँ रात का पर्दा पड़ा चाहता है उसी को अपना मरकब बना कर रवाना हो जाओ तुम ही को मैं जाने के लिए नही कहता बल्कि हर एक तुम में से मेरे अजीजों में से भी एक एक शख़्स का हाथ पकड़ ले और अपने साथ लेता जाए इसलिए कि यह लोग सिर्फ मेरे तालिब हैं अगर मुझे कत्ल कर डालें तो फिर किसी दूसरे की तरफ मुतवज्जेह नही होंगे।"[1]

इस तकरीर को सुनकर सबसे पहले हजरत अबुल फजलिल अब्बास खड़े हुए और कहा "किस लिए हम ऐसा करें? क्या इस लिए कि आपके बाद हम जिन्दा रहें? हरगिज नही खुदा हमको यह रोजे बद नसीब न करे।" दूसरे तमाम अइज्जा भी हजरत अब्बास के साथ हम आवाज (एक आवाज) हुए और मुत्तफिकुल लहजा होकर यही अलफाज़ जबान पर जारी किए जिसके बाद इमाम ने खास तौर से औलादे अकील की तरफ़ मुतवज्जेह होकर फरमाया तुम्हारे लिए तो मुस्लिम का कत्ल हो चुकना बहुत काफी है। तुम चले जाओ मैं तुम्हें इजाजत देता हूँ" उन सब ने मुत्तफिकुल लहजा हो कर कहा। "हम ऐसा नहीं करेंगे। आपके बाद जिन्दा रहने का कोई मजा नहीं।"

उसके बाद असहाब में से मुस्लिम बिन औसजा खड़े हुए, कहा कि "हम आपको छोड दें? यह नही हो सकता। खुदा की कसम मैं इन दुश्मनो से नैजे के साथ जंग करूँगा यहाँ तक कि मेरा नैजा उनके सीनों में टूट जाए और तलवार चलाऊँगा जब तक कि उसका कब्जा मेरे हाथ में ठहर सके और मैं आप से किसी तरह जुदा न हूँगा। अगर हथियार न होंगे कि जिनसे जंग करूँ तो मैं उन्हें पत्थर मारूँगा और आपकी हिमायत करूँगा यहाँ तक कि आपके कदमो पर इस जान को निसार कर दूँ।" उसके बाद सईद बिन अब्दुल्लाह

---

[1] इरशाद पेज/ 243–244 तबरी जि/6 पेज/238

बिन हनफी ने कहा "बखुदा हम आपका साथ नही छोडेगे जब तक कि खुदा की बारगाह में यह साबित न कर लें कि हम ने रिसालतमाब[स०अ०] के गाएबाना (गैर मौजूदा) हक़ को आपके बारे में अदा कर दिया

बखुदा अगर मुझे यह मालूम हो कि मैं क़त्ल हूँगा फिर जिन्दा किया जाऊँगा फिर जीते जी जला दिया जाऊँगा, फिर मेरी ख़ाक हवा मे मुन्तशिर की जाएगी और ऐसा ही मेरे साथ सत्तर मर्तबा होगा तब भी मैं आपका साथ न छोड़ूँगा जब तक कि आखरी मर्तबा भी आपके कदमों पर मौत न आ जाए। चेजाएकि यह तो एक मर्तबा का कत्ल होना है और उसके बाद वह दाईमी इज्जत है जो कभी खत्म होने वाली नहीं।" ज़ुहैर बिन कैन ने कहा "बखुदा मेरी तो आरजू यह है कि मैं क़त्ल किया जाऊँ फिर जिन्दा हूँ और फिर क़त्ल किया जाऊँ, ऐसा ही हजार मर्तबा हो मगर किसी तरह आपसे और आपके खानदान के नौजवानों से यह मुसीबत दफा हो जाए " दीगर असहाब ने भी मिलते जुलते अलफाज में इसी किस्म के जज्बात का इज़हार किया और सबका मुत्तफिकुल लहजा (एक आवाज मे) मतलब यही था कि यह गैर मुमकिन है कि हम आपसे जुदा हो जाये बल्कि अपनी जाने आप पर फिदा कर देंगे। हाँ जब हम मर जाये तो फिर चाहे जो हो हम तो अपना फ़र्ज़ अदा कर चुके होगे [1] इमाम ने दुआये खैर दी और अपने खैमे मे वापस तशरीफ ले गए।[2]

यह था मुजाहिद करबला की हक्कानियत का एक बेमिसाल मुजाहरा। आप जोरे तकरीर से जोशो खरोश पैदा करने वाले बयानात और खुश आइन्द (अच्छे दिनों) व दिल फ़रेब तवक़्कुआत (उम्मीदो) से अपने साथ वालों को साथ रखना नहीं चाह रहे थे बल्कि उनके सामने हक़ीक़ते हाल को वाजेह करके गलत फहमियों को दूर कर रहे थे। यह कोशिश शबे आशूर ही तक नहीं रही बल्कि इसका आपकी जानिब से मुजाहरा रोजे आशूर भी हुआ। इस तरह कि जब बशर बिन अम्र हजरमी को जो अन्सारे इमाम मे से एक थे। यह खबर पहुँची कि उनका फरजन्द "अम्र" रय (तेहरान) की सरहद पर कैद हो गया है उन्होने कहा कि खुदा पर छोड़ता हूँ उसको भी और अपने आपको भी। बेशक अगर मुझे जिन्दा रहना होता तो यह पसन्द न करता कि वह क़ैद में रहे " इमाम को इसकी खबर हुई तो आपने फ़रमाया कि तुम मेरी बैयत से आजाद

---

[1]तबरी जि 6, पेज / 239

[2]इरशाद पेज / 244

हो, जाओ और अपने फरजन्द की रिहाई की फिक्र करो वफादार मुजाहिद ने जवाब दिया कि "मुझे जीते जी दरिन्दे खा जाये अगर मैं आपसे जुदा हूँ।" यह भला क्योंकर हो सकता है" हजरत ने फरमाया "अच्छा अपने फरजन्द मुहम्मद को भेज दो और यह कपड़े उसको दे दो कि उनकी कीमत से अपने भाई की रिहाई का सामान कर सके" आपने पाँच कपड़े मरहमत किए जिनकी कीमत हज़ार अशरफी के करीब थी उसके बाद जितने जॉनिसार इमाम के साथ रह गए थे वह वही हो सकते थे जो मौत को अपने लिए यकीनी समझते हुए दिल व जान से मक़सदे हुसैन[अ०स०] की हिमायत के लिए आमादा थे और उनके किरदार में कमजोरी के शाएबे का इम्कान भी न था।

तीसरी मसलहत इस एक रात की मोहलत की यह हो सकती थी कि आप दुश्मन को एक मौका और अपने किरदार के जाएज़ा लेने का देना चाहते थे ताकि अगर किसी में सलाहियत राहे रास्त पर आने की हो तो वह आ जाए। चुनाँनचे उमरे सअ्द की फौज का एक बड़ा अफसर हुर बिन यजीद रियाही जो सबसे पहले हुसैन[अ०स०] को घेर कर करबला में लाने का जिम्मेदार था अपने जमीर की हिदायत की बिना पर फौजे मुखालिफ से अलाहिदा हो कर असहाबे हुसैन[अ०स०] मे दाखिल हो गया और उसने भी आपकी नुसरत में अपनी जान दी। इस तरह और भी चन्द सिपाही नुसरते बातिल को छोड़ कर नुसरते हक़ पर आमादा हो गए।

हकीकत में एक दाई ए–हक (हक की दावत देने वाला) की बड़ी कामयाबी यही क़रार पा सकती है कि वह किसी एक मुतनफ्फिस (शख्स) को ही सही हक़ीक़ी मानी में राहे हिदायत दिखा सके और हज़रत इमाम हुसैन[अ०स०] की यह एक बड़ी कामयाबी इस रात की मोहलत का नतीजा थी जो आपने दुश्मन से माँग कर हासिल की थी

गुजिश्ता खुतबे के बाद तमाम रात इमाम और असहाबे इमाम ने इबादते खालिक़ में बसर की। उसके साथ आपने जग के हगाम के लिए इम्कानी हद तक तहफ्फुजी तदाबीर भी किए आपने अपने असहाब को हुक्म दिया कि वह खैमों को बिल्कुल एक दूसरे के साथ मिला दें और हर खैमे की तनाब को दूसरे खैमे से बाँध दें।[1]

इसके अलावा आपने पुश्त (पीछे) की जानिब एक ऐसे नशेब को जो एक नाली की तरह से था खुदवा कर खन्दक (गढा) तैयार करा दी और उसमें

---

[1]इरशाद पेज/245

लकड़ियाँ जमा करा दीं कि जब उनमे आग दी जाए तो उस तरफ़ से दुश्मन के हमले का अन्देशा न रहे

यह तैयारियाँ शबे आशूर मुकम्मल हो गईं और सुबह को उस खन्दक़ में आग रौशन कर दी गई इस तरह फ़ौजे दुश्मन को बिल्कुल घेर कर चारों तरफ़ से हमला करने का मौक़ा बाक़ी न रहा।

छब्बीसवाँ बाब

दवसीं मुहर्रम सन 61 हिजरी
इतमामे हुज्जत और आग़ाज़े हर्ब (जंग)

आशूर की रात अपनी तमाम कैफियतों समेत खत्म हुई। यकीन करना चाहिए कि इस शब करबला के मैदान में किसी की आँख लगने न पाई होगी। इस तरफ इबादते खुदा इशतियाके शहादत, बीबियों मे बेताबी बच्चों मे परेशानी और सबसे बढकर प्यास का ग़लबा और उस तरफ़ जग की तैयारी, असलहों की दुरूस्ती तदाबीरे जग के मुतअल्लिक़ मशवरे और अपने जालिमाना इरादों की तकमील के लिए सुबह का इन्तेज़ार।

बहरहाल रात खत्म हुई और सपेद–ए–सहरी (सुबह) नमूदार हुआ। हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने असहाब व अकरबा के साथ नमाजे सुबह बाजमाअत अदा की, वह नमाज जिसके ताकीबात में करबला का जिहाद था।

आलमे इन्सानी दिल व जिगर के मेयार को पेशे निगाह रखते हुए जाहिरबीं (जाहिरी नजर रखने वाले) अफराद खयाल कर सकते हैं कि उस वक्त असहाबे हुसैन[अ०स०] पर अजीब हिरास का आलम तारी होगा। सामने नजर जाती होगी तो उनको दुश्मन की फौज का अजीम समन्दर मौजे लेता नजर आता होगा और अपनी हस्ती उसमें हुबाब (पानी का बुलबुला) की सी नजर आ रही होगी मगर नहीं हकीकतन ऐसा नहीं था। उनके दिल इतमीनान से मामूर थे उनके सीनों मे खुशी और मसर्रत की लहरें थी और उनके चेहरों पर फ़रहत व इम्बिसात (चेहरे खिले हुए) की सुर्खी थी। वह जैसे कभी खुश नहीं थे वैसे आज खुश नजर आ रहे थे जैसे पुर मज़ाक़ बातें कभी न करते थे वैसी आज कर रहे थे।

चुनाँनचे अब्दुर्रहमान बिन अब्देअब्बा अन्सारी और बुरैर बिन ख़जीर हमदानी का वाक़ेया है कि बुरैर ने अब्दुर्रहमान से मजाक किया तो अब्दुर्रहमान ने कहा 'छोड़ो इन बातों को। यह वक्त ऐसी बातों का नहीं है। बुरैर ने जवाब

दिया कि "खुदा की कसम मेरे कौम व कबीले वाले अच्छी तरह वाकिफ हैं कि मुझे जवानी से लेकर इस उम्र तक कभी मज़ाक से दिलचस्पी नहीं रही। मगर मेरा दिल इस वक्त मुस्तक़बिल के तसव्वुर से महज़ूज़ (खुश) हो रहा है खुदा की कसम हमारे और सआदते अबदी (आखिरत) के दरमियान बस अब इतना फासिला है कि यह दुश्मनाने दीन तलवारें लेकर हम पर टूट पड़ें और मुझे तो तमन्ना है कि किसी तरह वह वक्त जल्द आए कि उनकी तलवारें हम पर पड़ने लगें "[1]

बेशक यह हक्क़ानियत पर ऐतेमाद और उख़रवी (आख़िरत) कामयाबी के कामिल यकीन ही का नतीजा हो सकता है।

यही चीज़ कमजोर दिल में ताक़त पैदा करती और मायूसियों की ज़ुलमत (अन्धेरे) में उम्मीद की शमा रौशन करती है।

इतनी देर में फौजे मुखालिफ मैदाने जंग में आ गई परे जमाए गए और लशकर की तरतीब हुई मैमना पर अम्र बिन हज्जा ज़ुबैदी, मैसरा पर शिम्र बिन जिल जौशन, सवारों का सरदार अज़रा बिन कैस अहमसी और प्यादों का अफसर शबस बिन रबई यरबूई और अलम उमरे सअ्द ने अपने गुलाम वरीद के सिपुर्द किया।[2]

इमाम हुसैन[अ०स०] भी मैदाने जिहाद में आ गए। यक़ीनन तारीख एक ऐसे सिपह सालार की मिसाल पेश करने से कासिर है जिसने ऐसी छोटी सी जमाअत को कम अज कम बीस तीस हजार फौज के मुकाबले में जंग के लिए खड़ा किया हो।

एक तारीखी सराहत के मुताबिक़ यह बत्तीस (घोड़ सवार) सवार और चालीस प्यादों (पैदल) से ज्यादा नहीं थे।[3]

और इसी लिए शोहदा ए करबला के लिए बहत्तर की लफ्ज जबान जद खलाएक (लोगों की जबान पर है) है

मगर करबला के हालाते जंग और मुजाहदीन के नामों की तफसील और दूसरे मुतअल्लिका वाकेयात से यह समझा जा सकता है कि यह तादाद सौ से ज्यादा और दो सौ से कम थी [4] मुमकिन है कि आम तौर पर तारीख़ में जो

---

[1] तबरी जि / 6. पेज / 241

[2] अखबारूत तुवाल पेज / 254. तबरी जि 6. पेज 241 इरशाद पेज / 246

[3] अखबारूत तुवाल पेज 254. तबरी जि 6. पेज 241 इरशाद पेज 246

[4] (अम्मार दहनी की रिवायत अबू जाफर से इसके मुताबिक है उसमें है कि जमाअते हुसैनी 40 सवारों और सौ प्यादों पर मुश्तमिल थी (तबरी जि / 6. पेज / 220

तादाद दर्ज और उमूमन जाबने जदे खल्क (लोगो की जबान पर) है और जो इस किताब में भी बाज जगह नजर आएगी उन जाँबाजों की हा जो फौजी अन्दाज पर तरबियत याफ्ता थे लेकिन सिलसिल ए जिहाद में बहुत से ऐसे अफराद भी मैदान में आ गए जो फौजी हैसियत से सिपाही न समझ जा सकते थे।

मैदाने जग में आने के बाद पहले इमाम ने अपने हाथ दरगाहे अहदियत में बलन्द किए और यह मुनाजात जबान पर जारी की क्या निसबत दी जा सकती है नबीए खुदा हजरत ईसा[अ0स0] की आवाज को जो बाईबिल (अहदे जदीद) की नक्ल के मुताबिक सलीब पर बलन्द हुई थी। इस अन्दाज से कि ایلی ایلی ما سبقتنی 'ऐ खुदा तूने मुझे क्या छोड दिया।' फरजन्दे रसूल[स0अ0] इमाम हुसैन[अ0स0] की उस मुनाजात के साथ जो इस सैलाबे मुसीबत के अन्दर आपके लबों पर जारी हो रही थी।

खुदा वन्दा तू मेरा सहारा है हर तकलीफ मे और मेरा क़िब्ल–ए–उम्मीद है हर सख्ती में और तुझ पर मुझे हर मुहिम में जो दरपेश हो भरोसा है। कितने ही सदमे ऐसे हैं जिनके बर्दाश्त करने से दिल कमजोर साबित होता है और हीला (बहाने) व तदबीर की राहें बन्द नजर आती हैं। दोस्त उनमे साथ छोड़ देते और दुश्मन उनमे तानाजनी करने लगते हैं। मैं उनको तेरे हुजूर में पेश करता और तेरी बारगाह मे अर्जे मारूज (पेश) करता हूँ इसलिए कि मैं तुझे छोड़ कर किसी और से लौ लगाना ही नहीं जानता तू इस तकलीफ को दूर करता और उसका तदारूक करता है। यक़ीनन तू ही हर नेअ्मत का मालिक और एहसान का मरकज और हर मतलब के लिए आख़री जाएपनाह है"[1]

उसके बाद आपने अपने छोटे से लश्कर को तरतीब दिया। मैमने पर ज़ुहैर बिन कैन, मैसरे पर हबीब इब्ने मुजाहिर और अलमदार अब्बास बिन अली[अ0स0] करार दिए गए।[2]

चूँकि इमाम हुसैन[अ0स0] की जद्दो जेहद का मकसद यह था कि दीन व आईने शरीअत की हक्कानियत को जाहिर करते हुए अपने दुश्मन की सीरत व किरदार के मुतअल्लिक दुनिया के सामने इस हकीकत को साबित कर दे कि उसे इस्लाम से दूर का भी कोई तअल्लुक नही है इस के लिए जरूरत थी कि

[1]तबरी जि/6, पेज/241 इरशाद पेज/246

[2]तबरी जि/6, पेज/241 इरशाद पेज/248 अख़ाबरूत तुवाल पेज/253

एक तो आपके किरदार में कोई ऐसा शाएबा भी न आने पाए जो आपके ख़िलाफ़ तशद्दुद के जवाज की दलील बन सके इसी लिए आपने मुसालिहत (सुल्ह) की गुफ्तगूए कीं मुल्के अरब को छोड़ने और दरबदरी की जिन्दगी बसर करने पर आमादगी ज़ाहिर की और असबाबे इश्तआल (भड़काने वाली हरकतों) पैदा किए जाने के बावजूद भी अपने साथियों को जंग में सबक़त (पहल) से रोके रखा और लड़ाई की मुकम्मल तैयारी हो चुकने के बाद भी अपनी तरफ से पहल न होने दी। चुनाँनचे सुब्हे आशूर अभी जब ख़यामे इमाम के साथ खन्दक में आग भड़क रही थी तो उधर का एक सवार सर से पैर तक लोहे में गर्क इस तरफ से गुजरा और उस खन्दक की आग को शोलावर देखकर एक इन्तेहाई इश्तेआल अंगेज जुमला कहा। मालूम हुआ कि शिम्र बिन जिल जौशन है। मुस्लिम बिन औसजा ने इमाम से अर्ज किया कि इजाजत हो तो उसको तीर का निशाना बना लूँ क्योंकि यह बड़ा फासिक व फ़ाजिर शख़्स है और इस वक्त बिल्कुल तीर की जद पर है। हजरत ने फ़रमाया "नहीं ऐसा न करो मैं जंग में पहल नहीं करना चाहता।"[1]

याद रखना चाहिए कि यह एक तीर जो उस वक्त कमान से रिहा हो जाता नौईयते जंग को तब्दील कर देता। इमाम [अ0] ने इसका सख्ती के साथ लिहाज रखा

दूसरे इसकी जरूरत थी कि आपके खिलाफ़ दुश्मन के तर्जे अमल में तावील (बहाने) की कोई गुन्जाइश बाकी न रह जाये। सबसे बड़ी तावील किसी नारवा (गैर मुनासिब) अमल के मुतअल्लिक उसका बेख़बरी और नावाकफ़ियत (ना मालूमी) पर महमूल (तसव्वुर) किया जाना है। बनी उमैया ने अपने हुदूदे ममलिकत में यह प्रापिगन्डा किया था कि पैगम्बरे इस्लाम[स0अ0] ने अपने बाद कोई औलाद नहीं छोड़ी और हम उनके वारिसे जाएज़ हैं इसके लिए जरूरत थी कि इमाम हुसैन[अ0स0] अपने नामो नसब और ख़ानदानी खुसूसियात नीज अपने बारे में इस्लामी रिवायात को फौजे मुख़ालिफ़ पर इस तरह वाजेह कर दें कि उनमें से किसी एक फर्द के लिए भी ना वाकफ़ियत के उज्र (बहाने) की गुन्जाइश बाकी न रह जाए और आपके खिलाफ जो जुल्म हो रहा है उसके जुर्म की अहमियत हर एक पर बिल्कुल रौशन हो जाए और उनमें से हर एक न खुद अपने नफ्स को धोखा दे सके और न दूसरों को उनकी निसबत किसी हुस्ने जन (अच्छा गुमान) "या अमल बर सेहत (यजीद के मुतअल्लिक अच्छे

---

[1]तबरी जि/6, पेज, 242

गुमान या हुसैन[अ0] से जंग को जाएज समझे)' का रास्ता मिल सके। इमाम हुसैन[अ0] देख चुके थे कि उनसे पहले उनके वालिद हज़रत अली[अ0] का मुक़ाबला किया गया और उस मुक़ाबले को 'ख़ताए इज्तेहादी (मामूली गलती)' का पर्दा डाल कर काबिले मुआफ़ी समझ लिया गया। हुसैन[अ0स0] के ख़िलाफ़ तलवार उठाने वालों के अमल में अगर कहीं से इस तरह की गुन्जाइश होती तो सादा लौह अफराद या हवा ख्वाहाने (चापलूस) बनी उमैया इससे फ़ाएदा उठाने से चूकते थोड़े ही और इस मकसद और मफ़ाद दीनी को सख्त नुक़सान पहुँच जाता। इससे तहफ्फुज (बचाओ) के लिए इमाम हुसैन[अ0स0] ने वह सब कुछ किया जिसे "इतमामे हुज्जत" के नाम से ताबीर किया जाता है। जिसके बाद दुश्मन के 'इसरारे गुनाह' या बातिल पर जिद की हैसियत इतनी नुमायाँ हो गई कि किसी तावील या हिमायत का मौका बाक़ी न रहा

तारीख़ी बयानात से जाहिर होता है कि सुब्हे आशूर दोनों तरफ़ की सफ़ बन्दी हो चुकने के बाद काफी वक्त तक आगाजे जंग नहीं हुआ इसका सबब यही मालूम होता है कि दुश्मन इसका मौका ढूँढ रहा था कि किसी सूरत से हुसैनी जमाअत की तरफ़ से कोई ऐसा इकदाम हो जो बिनाए जंग (जंग का बहाना) बन सके और इमाम हुसैन[अ0स0] का मन्शा यह था कि मेरी तरफ से आगाज़े जंग होने न पाए बल्कि उसके बर ख़िलाफ़ आपने दुश्मन को राहे रास्त पर लाने की पुर अम्न कोशिश करके चाहा कि इतमामे हुज्जत फरमायें इस लिए आपने नाका (ऊँट) तलब फ़रमाया और उस पर सवार हुए। कुरआन अपने सामने रखा[1]

फिर सुफ़ूफ़े (सफ़ों) दुश्मन के करीब आकर बलन्द आवाज से इरशाद फरमाया: 'ऐ गिरोहे मरदुम (लोगो) मेरी बात सुनो जल्दी से काम न लो। यहाँ तक कि मुझ पर जो तुम्हारा हक है उसके मातहेत तुमको नसीहत व हिदायत का फ़र्ज अदा कर दूँ और तुम्हारे सामने यह हकीकते हाल बयान कर दूँ कि मैं तुम्हारी जानिब क्यो आया? अगर तुम ने मेरे बयान को सही समझते हुए तस्लीम कर लिया और मेरे साथ इन्साफ से काम लिया तो यह तुम्हारी खुश किस्मती होगी और तुम्हे मालूम होगा कि तुम्हें मेरी मुख़ालिफ़त की कोई वजह हो ही नही सकती और अगर तुमने मेरे बयान को क़ुबूल न किया और इन्साफ़ से काम न लिया तो शौक से मुजतमा (जमा) कर लो अपनी ताकतों को और इकट्ठा करलो जिस जिस को चाहो अपने हम खयालों में से और कोई

---

[1] तबरी जि / 6, पेज / 241

कोशिश उठा न रखो, फिर पूरी ताकत से बगैर एक दम की भी मोहलत दिए हुए मेरा ख़ात्मा कर दो मेरे लिए वह परवरदिगार काफी है जिसने कुरआन को नाजिल किया और वही अपने नेक आमाल बन्दों का मददगार है" इमाम हुसैन[अ०स०] की आवाज खैमे में पहुँचना थी कि अहले हरम में गिरया व बुका का शोर बलन्द हुआ हजरत ने अब्बास[अ०स०] व अली अकबर[अ०स०] को भेजा कि उन्हें खामोश करो रोने का वक्त बाद को आएगा। जब आवाज गिरया की मौकूफ (रूक) हो गई तो हजरत ने हम्द इलाही अदा फरमाई और खुदा के औसाफ जिक्र फरमाए फिर जनाबे रिसालतमाब[स०अ०] पर दुरूद भेजा और ऑहजरत के औसाफ व फजाएल देर तक बयान फरमाते रहे। रावी का बयान है कि मैंने हुसैन[अ०स०] के पहले और हुसैन[अ०स०] के बाद कोई मुतकल्लिम (बोलने वाला) नहीं देखा जो फसाहत व बलागत मे आपसे बढा हुआ हो हम्द व सलवात अदा करने के बाद हजरत ने फरमाया "ज़रा मेरे नाम व नसब पर गौर करो और देखो तो मैं कौन हूँ फिर अपने गरीबानों में मुँह डालो। गौर करो कि तुम्हारे लिए मेरे खून का बहाना और मेरी हतके हुरमत (बेइज्जती) करना जाएज है? क्या मैं तुम्हारे नबी का नवासा नहीं हूँ और उनके वसी उनके चचाजाद भाई और उन पर सबसे पहले ईमान लाने वाले और उनकी तस्दीक करने वाले का फरजन्द? क्या हमजा सय्यदुश शोहदा मेरे बाप के चचा और जाफरे तैयार खुद मेरे ही चचा नही थे? क्या यह हदीस जो जबान जदे खलाएक (हर एक की जबान पर है) है तुम्हारे गोश जद (तुम ने नहीं सुनी) नहीं हुई कि हजरत रसूले खुदा[स०अ०] ने मेरे और मेरे भाई के बारे में फरमाया था कि यह दोनों जवानाने अहले जन्नत के सरदार हैं? अगर तुम मेरी बात को सच समझते हो और हकीकतन वह सच ही है, इसलिए कि कभी मैंने गलत बात नहीं कही, फिर तो कोई बात नहीं और अगर तुम मेरी बात को गलत समझो तो इस्लामी दुनिया में अभी हैं ऐसे अशखास जिनसे अगर तुम पूछो तो वह बतला देंगे। पूछ लो जाबिर बिन अब्दुल्लाह अन्सारी से अबू सईद खदरी से, सहल बिन सअ्द साएदी से, जैद बिन अरकम से, अनस बिन मालिक से। वह तुम्हें बताएगे कि उन्होंने रिसालतमाब[स०अ०] से अपने कानों से इस हदीस को सुना है। फिर क्या यह तुम्हे मेरी खूँरेजी से रोकने के लिए काफी नहीं है।[1] इस मौके पर शिम्र आपका कलाम कता करते हुए बोल उठा कि "मैं अल्लाह की इबादत एक हर्फ पर करता हूँ। अगर मेरी समझ में आता हो कि तुम क्या कह रहे

---

[1] तबरी जि/6, पेज, 242

हो " (कुरआन मे मुनाफकीन की निसबत आया है ومن الناس من يعبد الله على حرف लिहाजा उसका मक्सूद था कि मैं मुसलमान नहीं, मुनाफ़िक हूँ अगर कुछ समझता हूँ कि आप क्या कह रहे हैं।)

असहाब खामोश खडे हुए इमाम की तकरीर सुन रहे थे उन्हें शिम्र की यह बदतमीजी और हजरत के खुतबे मे मुदाखिलत सख्त नागवार हुई। हबीब बिन मजाहिर ने पुकार कर जवाब दिया "बखुदा मैं जानता हूँ कि तू खुदा की इबादत सत्तर हरफो पर करता है। (यानी इन्तेहाई मक्कार और इबादत के मुआमले मे फरेबी है) और मैं गवाही इसकी भी देता हूँ कि तू सच कहता है तेरी कुछ समझ में नहीं आता कि हजरत क्या कह रहे है। खुदा ने तेरे दिल पर मोहर लगा दी है। इमाम ने फिर सिलसिल–ए–तकरीर जारी फरमाया। अगर तुम्हें इस हदीस की सेहत में फिर भी शक है तो क्या इसमे भी शक है कि मैं तुम्हारे रसूल का नवासा हूँ। खुदा की कसम मशरिक व मगरिब के आलम में कोई भी नबी का नवासा मेरे सिवा मौजूद नहीं है न तुम में और न तुम्हारे सिवा दूसरे अकवाम में और मैं तो खुद तुम्हारे ही नबी का नवासा हूँ। जरा बताओ तो सही कि मेरे कत्ल पर तुम किस लिए आमादा हुए हो? क्या किसी अपने मकतूल का किसास लेना चाहते हो जिसे मैं ने कत्ल कर दिया हो? या किसी अपने माल का मुतालबा रखते हो जिसे मैंने तल्फ़ (ले लिया) किया हो? या किसी जख्म का बदला चाहते हो जो मेरे हाथ से किसी को लगा हो?" एक खामोशी सी छाई रही और उनमें से किसी से कुछ जवाब देते न बन पड़ा।[1]देखिए तो कि एक इन्सान एक तरफ और हजारो जबानें दूसरी तरफ, बेशक हक में ऐसी ताकत होना चाहिए और एक इन्सान अपनी सच्चाई और हुस्ने अमल पर इतना एतेमाद रखता हो। हुसैन[अ०स०] उस वक्त जबकि अपना कोई गवाह न था और मजमा दुश्मन था मजमे से अपनी बे जुर्मी का इकरार ले रहे थे। तमाम लशकर को दावत दी जा रही थी कि कोई शख्स किसी जुर्म का पता दे दे। होता कोई जुर्म किसी की निगाह में तो उस तीस हज़ार के मजमे में कोई जबान खोलता क्या दुनिया की कोई माद्दी ताकत जबानों को रोकने वाली थी? मगर मालूम होता है कि सच्चाई की ताकत थी जो दहनो पर कुफ्ल (ताला) और जबानों पर गिरह लगाए हुए थी जिसका नतीजा यह था कि एक यको तन्हा इन्सान हजारो आदमियों को मुखातब कर रहा था और किसी को उसके ख़िलाफ़ ज़बान कुशाई की जुरअत न थी।

[1]तबरी जि/6. पेज/244 इरशाद पेज/248

फौजे मुखालिफ के सुकूत को मुलाहिजा फरमाने के बाद आपने नाम बनाम उन लोगों को पुकारा जिनके इस खत पर दस्तखत मौजूद थे और यह लोग मामूली दर्जे के सिपाही भी न थे बल्कि उनमें से हर एक कम अज कम हजार पाँच सौ आदमियों का सरदार था आपने फरमाया "ऐ शब्स बिन रबई, ऐ हिजार बिन अबजर, ऐ कैस बिन अशअस ऐ यजीद बिन हारिस क्या तुमने मुझे नही लिखा था कि खेतियाँ लहलहा रही हैं चश्मे पानी से छलक रहे हैं। आइये लशकर आपकी मदद के लिए तैयार हैं।"[1] अब मुआमला उन अशखास के लिए इन्तेहाई नाजुक था। चार आदमियों की बाबत नाम ले ले कर यह इन्केशाफ (जाहिर) किया जा रहा था कि उन्होने भी आपको खत भेजा था। गोया यजीदी अफवाज और उनके सालार उमरे सअद के सामने उन लोगो की साजिश, दो रगी और हुकूमत से एक तरह की बगावत का सुबूत मुहैया किया जा रहा था हालाँकि वह कूफे के सर बर आवुर्दा (नामवर) अशख़ास थे और इब्ने जियाद की तरफ़ से बड़े बडे मुअज्जि (इज्जतदार) ओहदा पर फाएज थे। उन्होने तो वह खत जैसा पहले बताया जा चुका है महज साजिशी अन्दाज में हवा के रूख को देख कर लिखा था। इस ख़याल से कि हुसैन[अ०स०] के नाम इतनी कसरत से खुतूत आ रहे हैं और बुलाया जा रहा है। अगर कहीं हुसैन[अ०स०] आ गए और फिजा उनके मुवाफिक रही तो हमारे लिए भी जगह बाकी रहना चाहिए इसलिए उन्होंने यह खत लिखा मगर उस वक्त इतने गवाहों के सामने उनकी साजिश मुन्कशिफ़ (खुल) हो रही थी और अन्देशा था कि वाक़–ए–करबला के बाद इब्ने जियाद के हाथ से उन लोगों का फैसला हो जाए और सलतनते बनी उमैया की जानिब से रान्द ए दरगाह (निकाल दिये) करार पा जायें इसलिए बरबिनाए जरूरत उनका इस मौक़े पर बेगैरती के साथ बोलना नागुजीर था। चुनाँनचे उन्होंने अपनी तहरीरों से इन्कार किया और कहा "हम ने इस तरह के खुतूत नहीं लिखे थे" इमाम ने फ़रमाया "अल्लाहो अकबर इतना खुला हुआ हकीकत से इन्कार' तुमने ख़त लिखा था और जरूर लिखा था। अच्छा बफर्जे मुहाल नहीं भी लिखा था और तुम लोग मेरा आना हकीकतन नही भी चाहते थे तो मुझे वापस चला जाने दो किसी ऐसी जगह जहाँ मैं अमनो अमान की जिन्दगी गुजार सकूँ।" कैस बिन अशअस ने (जिसकी बहन जोअ्दा बिन्ते अशअस ने हुकूमते शाम के साथ साजिश में शरीक हो कर इमाम हसन[अ०स०] को जहर दिया था और जिसका भाई मुहम्मद

---

[1]तबरी जि/6 पेज/243, इरशाद पेज/248

बिन अशअस हजरत मुस्लिम के कत्ल का जिम्मादार था) पुकार कर कहा "आप यजीद की बैयत क्यों नहीं कर लेते?" हजरत ने फ़रमाया "तुम ऐसा क्यो न कहोगे तुम मुहम्मद बिन अशअस ही के तो भाई हो। क्या तुम इतने को काफी नहीं समझते कि मुस्लिम बिन अकील के खून की जिम्मेदारी तुम पर है। खुदा की कसम मैं जिल्लत के साथ अपना हाथ तुम्हारे हाथ में न दूँगा और न गुलामों की तरह ख़तरे से अपनी जान बचा कर भागूगा।"

फौजे मुखालिफ के मुतअस्सिर होने की पहले ही से उम्मीद न थी अपना फ़र्ज पूरा करना था वह पूरा हो गया। हजरत ने नाक़ा (ऊँट) को बिठा दिया। उतर पड़े और उकबा बिन समआन को हुक्म दिया कि उसे बाँध दें।[1]

चूँकि असहाबे हुसैन[अ०स०] आपके मकसद से वाकफियत हासिल कर चुके थे इसलिए वह भी मसलके हुसैनी ही को पेशे नजर रखने की कोशिश करते थे और अफवाजे यजीद की अकसरियत अवाम अहले कूफा के मुमताज़ अफ़राद की तकरीरों का उन पर काफी असर हो सकता था। फिर उनमें भी हबीब बिन मजाहिर वगैरह जो हमेशा से शिय–ए–अली होने की हैसियत से मशहूर थे और हजरत को कूफे की जानिब दावत देने वालो में से थे। हवाख़्वाहाने (दोस्त) बनी उमय्या के लिए उनकी तक़रीर ऐसी मुअस्सिर न हो सकती थी जैसी जुहैर बिन कैन की जो कि अभी करीबी जमाने तक "उसमानी" गिरोह में शुमार होते थे और अब मक्के व करबला के रास्ते ही में इमाम के पास आकर शरीक हुए थे इसलिए फौजे मुखालिफ के सामने सबसे ज्यादा तकरीरें उन्होंने की हैं जिनका जाहरी हैसियत से उस वक्त कोई नतीजा मुरत्तब हुआ हो या नहीं लेकिन यही नतीजा क्या कम है कि अफवाजे मुखालिफ पर हर मुमकिन जरिये से इतमामे हुज्जत हो गया चुनाँनचे इमाम हुसैन[अ०स०] के मजकूर ए बाला खुतबे के बाद जुहैर बिन कैन घोड़े पर सवार, सर से पावँ तक लोहे में गर्क सफ से बाहर निकले। पुकार कर कहा "कूफे वालो खुदा के अजाब से डरो। एक मुसलमान की गर्दन पर उसके इस्लामी भाई का यह हक़ है कि वह उसे ख़ैर ख़्वाहाना (अच्छी) नसीहत करे और हम आपस में भाई भाई उस वक्त तक हैं और एक ही मिल्लत के ताबअ् की हैसियत रखते हैं जब तक कि हमारे दरमियान तलवार चलने नहीं लगी है। यानी जब तक बाकाएदा जंग शुरू नही हो जाती हम में और तुम में रिश्त–ए–उख़ूवत (भाई चारगी) कायम है और तुम अभी हमारी तरफ से

[1] तबरी जि/6, पेज/243 इरशाद पेज 248

नसीहत के मुस्तहक हो। बेशक जब तलवार चलने लगेगी तो यह रिश्ता खुद बखुद टूट जाएगा और हम अलाहिदा अलाहिदा मिल्लतों के ताबेअ (मानने वाले) करार पा जायेगे। यक़ीनन अल्लाह ने हमारी और तुम्हारी आजमाइश की है अपने नबी मुहम्मद मुस्तफा[स0अ0] की औलाद के जरिए से ताकि वह देखें कि हम उनके साथ क्या करते हैं और तुम क्या सुलूक करते हो हम तुम सबको दावत देते हैं कि उनकी मदद करो और उबैदुल्लाह बिन जियाद का साथ छोड़ो। यजीद और इब्ने जियाद से तुमको उनकी हुकूमत के तमाम दौर मे भी सिवा बुराई के कोई अच्छा सुलूक नजर न आयेगा। वह तुम्हारी आँखों में सलाईयाँ फिरवाते तुम्हारे हाथ पावँ कता कराते। तुमको सूलियाँ दिलवाते और तुम्हारे नेक अमाल हुफ्फाजे (हाफिज) कुरआन मसलन हुज्र बिन अदी और उनके हमराहियों और हानी बिन उरवा वग़ैरह के ऐसे अशखास को क़त्ल करते रहे हैं [1]

मजमून के लिहाज से इमाम हुसैन[अ0स0] के खुतब और ज़ुहैर बिन कैन की तकरीर में बहुत नुमायाँ फर्क है। इसका अन्दाजा खास तौर पर इन्फेरादी हैसियत (अपनी तरफ से) से हक़ीकते हाल को वाजेह करने और अपनी शख़सियत के तआरुफ पर मबनी मालूम होता है और उसमें मौजूदा हुकूमत के मुतअल्लिक एक सियासी तबसेरा है जिसमें यजीद से ज्यादा इब्ने जियाद की हुकूमत के किरदार पर तबसेरा किया गया। इस मसलहत से कि मुखातब कूफा के बाशिन्द थे और उनको बराहे रास्त इब्ने जियाद के मजालिम से साबिका पड रहा था। गालिबन यही वजह थी कि ज़ुहैर बिन कैन को अपनी तक़रीर के सिलसिले में सख्त मजाहमत से दो चार होना पड़ा। इस तरह कि इब्ने जियाद के हवाख्वाहों (दोस्तों) और खुशामदियों ने खुद ज़ुहैर की मजम्मत और इब्ने जियाद की मदह शुरू कर दी और कहा हम उस वक्त तक दम न लेंगे जब तक तुम्हारे सरदार और उनके साथियो को क़त्ल न कर ले। या गिरफ्तार करके उनको इब्ने जियाद के पास न ले जायें। ज़ुहैर उसके बाद भी खामोश न हुए और उनको हिदायत करते रहे। यहाँ तक कि शिम्र ने तीर लगाया और कहा "बस खामोश। खुदा तेरी जबान को चुप करे।" मगर ज़ुहैर ने तीर की भी कोई परवाह नहीं की और वह शिम्र से मसरूफे कलाम हो गए। शिम्र के उस कहने पर कि "देखो थोडी देर मे तुम और तुम्हारे सरदार सब क़त्ल हुआ चाहते हैं" ज़ुहैर ने बड़ी जिगर दारी और कुव्वते ईमानी के साथ

[1] तबरी जि / 6, पेज / 243

जवाब दिया "तू मुझे मौत से खौफ दिलाता है? खुदा की क़सम उनके साथ मरना मुझे तुम लोगों के साथ जिन्दगी ए जावेद हासिल करने से ज्यादा महबूब है।" उसके बाद फिर वह लशकरे मुखालिफ़ की तरफ़ मुखातब हुए और कहा "ऐ अल्लाह के बन्दो! ऐसे बन्दगाने जर (दौलत के पुजारी) के कहने में न आओ खुदा की क़सम पैगम्बरे खुदा की शिफाअत उन लोगों को कभी नसीब नहीं हो सकती जिन्हो ने पैगम्बरे खुदा की औलाद का खून बहाया हो और उनके मददगारों को क़त्ल किया हो।" इमाम हुसैन[अ०स०] ने यह देख कर कि बातो का जवाब तीर से दिया जा रहा है और इतमामे हुज्जत का फर्ज अदा हो चुका है किसी से पुकार कर कहलाया कि जुहैर वापस चले आओ, अगर मोमिने आले फ़िरऔन ने अपनी क़ौम को नसीहत करके अपने फ़र्ज को अदा कर दिया था तो यकीनन तुम भी अपना फर्ज पूरा कर चुके और नसीहत का हक अदा कर दिया। मगर नसीहत व तबलीग का कोई फ़ाएदा भी तो हो [1]इस आवाज को सुनकर जुहैर वापस चले आये

इन मुसलेहाना (सुलह) रूजहानात, इन हकीकत रेज बयानात और बसीरत अफरोज नसाएह (नसीहते) व इजहारात का कोई असर हो रहा था या नहीं। यह अम्र बिल्कुल तारीकी मे था, जब तक कि हुर के बातिन ने पर्दा उलट कर अपने को ज़ाहिर नहीं किया हमारी किताब के नाज़रीन के लिए यह नाम कोई अजनबी हैसियत नहीं रखता यही हुर वह था जिसने एक हजार फौज की जमीयत के साथ आकर कूफे के रास्ते में इमाम हुसैन[अ०स०] को रोका था जो आपको घेर कर करबला लाया था और जिसने इब्ने जियाद का खत आने के बाद इतनी सख्ती बरती थी कि ख़्यामे हुसैनी को दरया के किनारे बरपा न होने दिया था। उसके बाद मुहर्रम की दूसरी तारीख से दसवीं तक उसकी क्या हालत रही थी इसका बाद की सूरते हाल और खुद हुर के अकवाल से पता चलता है कि जिस वक्त से वह इमाम हुसैन[अ०स०] को करबला में पहुँचा कर इब्ने ज़ियाद को मुत्तेला कर चुका उस वक्त से बराबर खामोशी के आलम में मगर बेचैनी के साथ हालात का बगौर मुशाहिदा कर रहा था।

इसके क़ब्ल उसने रास्ते ही में इस तरह की सिलसिला जुम्बानी (कोशिश) करना चाही थी कि किसी तरह इमाम हुसैन[अ०स०] और यजीद या इब्ने जियाद के दरमियान कुछ खत व किताबत हो और मुआमिलात रू बइस्लाह हो जायें। उसके बाद मैदाने करबला में पहुँचने के बाद भी उसे यह तवक्को (उम्मीद) थी

[1]तबरी जि/6, पेज/243-244

कि बीच मे कोई ऐसा मुशतरिका (आपस में) नुकता पैदा हो जायेगा जहाँ इमाम और उनके मुखालिफ मुजतमा हो जाये और जग की सूरत पेश न आये। उस कूफे से मुतवातिर फौजें आने से इन्तेशार जरूर पैदा होता होगा। मगर उमर बिन सअ्द का तर्जे अमल उसके लिए उम्मीद अफ्ज़ा था जो खुद सुलह की गुफ्तगूए कर रहा था और यह चाहता था कि किसी तरह जग न हो। ऐसा भी वक्त आया जब सिलसिल–ए–गुफ्तगू ऐसे नुकते पर पहुचा जहाँ उमरे सअ्द तक ने यह तय कर लिया कि अब मुआमला यकसू (सुलझ) हो गया और मुकाबले की जरूरत बाकी नही रही फिर ऐसी सूरत मे हुर को यह समझने की क्या वजह थी कि जग जरूर होगी। वह देख रहा था कि इमाम का तर्जे अमल रवादाराना है। आप अपनी जानिब से माकूल शराएत पेश कर रहे हैं जिन पर सुलह न होने की कोई वजह नहीं। यह तवक्कुआत थे जो उसके दिल व दिमाग पर नवी मुहर्रम की सह पहर तक छाये रहे होगे मगर 9 मुहर्रम की शाम को यह सब उम्मीदें मुन्कता हो गईं। इब्ने जियाद के उस खत से जो शिम्र बिन जील जौशन के हाथ उमरे सअ्द के पास पहुँचा जिसके बाद उमरे सअ्द मजबूर था कि वह उसी वक्त हुसैनी जमाअत पर हमला आवर हो और बदिक्कत तमाम हुसैन[अ०स०] और असहाबे हुसैन[अ०स०] को सिर्फ एक शब की मोहलत इबाते खुदा के लिए देना मन्जूर करे। यकीनन यह वह वक्त था कि जब हकीकतन हुर के सामने इमाम हुसैन[अ०स०] से खुल कर जंग करने और आपके कत्ले नाहक में शिरकत करने का सवाल सरीही (साफ) तौर पर पैदा हो गया और उसको यह नजर आने लगा था कि मैं ने इससे पहले हुसैन[अ०स०] के खिलाफ जितने भी इकदामात किए थे वह उस मजलूम मुकद्दस हस्ती को फना की मन्जिल से क़रीब करने के सामन थे उसकी जिम्मेदारी मुझ पर है और उसके बाद फिर अब क्या मुझको उससे बडे इकदामात मे शिरकत करना चाहिए? क्या मैं हुसैन[अ०स०] के खून में अपने हाथों को रगीन कर सकता हूँ? उसका जमीर सख्ती से इन्कार करता था कि हरगिज नही मुझसे यह नहीं हो सकता। उसे अब सब कुछ याद आता होगा कि हुसैन वह थे जिन्हो ने उस सख्त मौके पर मुझे और मेरी तमाम फौज को पानी से सेराब किया था अब उन पर और उनके नन्हे नन्हें बच्चो तक पर पानी बन्द है और यह बडी हद तक मेरी ही वजह से, इसलिए कि मैंने ही उन्हें इस बेआबो गयाह (बगैर पानी व हरयाली) मकाम पर उतरने के लिए मजबूर किया यह सोच कर उसके कल्ब में खुद अपनी हस्ती से इन्तेकाम लेने का जज्बा पैदा होता होगा या कम

अज कम उसकी किसी सूरत से तलाफी की सूरतों पर गौर करते हुए वह खयाल करता होगा कि अगर मैं हुसैन[अ0स0] के पास जाकर अपनी इस खता को मुआफ़ करने की दरख्वास्त करूँ तो क्या इतना बड़ा जुर्म दुनिया में मुआफी के क़ाबिल भी है? फिर अगर हुसैन[अ0स0] ने मेरी खता को माफ न किया तो मैं कहाँ का रहा? न दुनिया मिली न आखिरत। फिर भी उसका जमीर कहता होगा कि चलकर माफी माँगना तो चाहिए अपना इम्कानी फर्ज तो बहरहाल अन्जाम देना जरूरी है। फिर मैं जब अपनी जान उनके कदमों पर डाल दूँगा तो वह करीमुन नफ्स हैं जरूर माफ कर देंगे। कराएन (हालात) की बिना पर यकीन किया जा सकता है कि यह खयालात थे जो उसके दिमाग में एक तलातुम बरपा किए हुए थे और वह शबे आशूर ही थी जिसकी सियाही के बेपनाह समन्दर में उसकी खयालात की कश्ती थपेड़े खा रही थी

हू मारता हुआ जगल और रात का सन्नाटा सफह ए तारीख भी सुनसान है। कौन मुअर्रिख है जो उस मारके की दास्तान कलमबन्द करे जो हुर के दिल व दिमाग मे बरपा था बेशक सच्चा शाएर अक्सर हकीक़त की तरजुमानी करता है। मीर अनीस[अ0र0] और उनके खानदान के दूसरे बाकमाल मरसिया गोयों ने जिस तरह उस रात को हुर की हालत की खयाली तस्वीर कशी की है। वह यकीनन एक ऐसा बयाने हाल है जिसकी रिवायत खामोश फितरत के वास्ते से शाएर के दिल तक पहुँची है और वाक़आत के कराएन उसकी तस्दीक़ करते हैं।

बहर सूरत रात किसी तरह गुजरी और सुबह हुई। हुर को फिर भी यह देखना है कि अब क्या होता है। क्या वाक़ई जग ही होगी या कोई और सूरत रूनुमा होगी। उसने इन्तेहाई सब्रो जब्त के साथ देखा कि अफवाज की तरतीब हुई। उसे यह भी मालूम हुआ कि वह एक हिस्सा फौज का अफसर क़रार दिया गया है। उसने इमाम का बेनजीर मुअस्सिर खुतबा सुना जिसने उसके दिल मे घर कर लिया। मगर फिर उसने इन्तेजार किया कि उसका असर फौजे मुखालिफ पर क्या पड़ता है। इसी असना में जुहैर बिन कैन ने बढ़कर तकरीर की और नासिहाना (नसीहत वाले) अन्दाज में अहले कूफा को मुखातब किया इन तमाम बातों के बाद भी उसे महसूस हुआ कि अफवाजे यजीद के इरादों में कोई तबदीली नहीं हुई है और वह जग पर आमादा हैं। बस उसके बाद हुर के सब्रो ज़ब्त का पैमाना छलक गया और वह खयाल जो उसके दिल में परवरिश पा रहा था अब राजदारी के हुदूद से आगे बढ़ गया। वह उमरे

सअद के पास आया और कहा 'क्या तुम इनसे वाकई जंग करोगे ?''[1] इसी एक सवाल के अन्दाज में वह सब कैफियतें मुजमर थीं जिन में हुर कई रोज से दिल ही दिल में गलतान व हैजान (डूबा हुआ और परेशान) था। उसे यह यकीन आने के क़ाबिल बात ही नहीं मालूम होती थी कि फरजन्दे रसूल से जंग अमली शक्ल भी इख्तियार करेगी। वह सब कुछ देख रहा है आसारो कराएन को जंग के कतई पा रहा है मगर फिर भी इसकी आरजू रखता है कि यह सब नुमाइशी हो और उसको वाक़ेईयत (हक़ीक़त) से कोई वास्ता न हो। उमर बिन सअद उसके जमीर के अन्दरूनी कैफियात से बिल्कुल बेगाना था। उसने हुर के सवाल का फौजी अन्दाज में बड़े इतमीनान के साथ जवाब दिया। ''हाँ कसम बखुदा, ऐसी जंग जिसका बहुत अदना नतीजा यह समझना चाहिए कि सरों की बारिश हो और हाथ कलम होकर जमीन पर गिरे।' हुर ने कहा 'क्या इतनी सूरतें मसालिहत की जो हुसैन[अ0स0] ने पेश की उनमें से कोई तुम लोगो के नजदीक मन्जूरी के काबिल नही है? '[2]इस सवाल से साफ जाहिर है कि वह सुलह की गुफ्तगू को पूरे गौर से नतीजे की जुस्तजू के साथ सुन रहा था और यह यकीन रखता था कि इन सूरतो में से कोई जरूर मान ली जाएगी उमर बिन सअद ने कहा कि 'खुदा की कसम अगर मुआमला मेरे हाथ में होता तो मैं जरूर मन्जूर कर लेता मगर क्या करूँ? तुम्हारा हाकिम नहीं मानता '[3] उमरे सअ्द का यह जवाब खुद कमजोरी का पहलू लिए हुए था और उसका उनवान हुर की राय और खयाल को मजीद तकवियत देने वाला था इसलिए कि वह तस्लीम कर रहा था कि हुसैन[अ0स0] का मसलक सुलह जूई (दिल से सुलह) का हामिल है और इब्ने जियाद की हटधर्मी है कि वह कत्ल से कम किसी बात पर रजा मन्द नहीं। उसके बाद हुर ने कुछ गुफ्तगू करना बेकार समझा और अब वह वक्त आ गया था कि वह अपने इस फैसले को जो बहुत मुशकिल से उसके दिलो दिमाग के इन्तेहाई कशमकश के नतीजे मे तय पा सका था अमली लिबास पहनाए

हुर को यह अन्देशा कतई था कि अगर फौज से निकलने के पहले यह जाहिर हो गया कि मेरी नीयत कुछ और है तो मुझे फौरन गिरफ्तार कर लिया जाएगा और मैं अपने मक़सद में कामयाब न हो सकूँगा। इसलिए जाहिर है कि

---

[1]तबरी जि/6, पेज/244
[2]तबरी जि/6, पेज/244
[3]तबरी जि/6, पेज/244

वह उस वक्त बहुत एहतयात से काम ले रहा होगा। उसके कबीले का एक शख़्स कुर्रा बिन कैस उस वक्त उसके नजदीक था।[1] ग़ालिबन यह वही शख़्स है जो उमरे सअ्द का पैगाम लेकर इमाम की खिदमत में गया था और हबीब बिन मजाहिर के नसीहत करने पर उसने कहा था कि मैं जो पैगाम लाया हूँ जाकर उसका जवाब दे दूँ तो फिर ग़ौर करूँगा कि खुद मुझे किसका साथ देना चाहिए। हुर को उसका अपने पास रहना नागवार हो रहा था वह चाहता था कि यह किसी तरह मेरे पास से हट जाए मगर कुछ बनता न था। आख़िर उसने पूछा कि कुर्रा तुम ने आज अपने घोड़े को पानी नहीं पिलाया? उसने कहा "नहीं अभी नहीं।" कहा 'फिर पिलाओगे नहीं?"[2] इन्सान का चेहरा उसकी बात चीत, उसके चेहरे का रंग सब ही उसके खिलाफ जासूसी करते हैं। हुर लाख छुपाए मगर दिल का इजतेराब छिपने की चीज नहीं। कुर्रा कुछ न समझा हो इतना तो जरूर समझ लिया कि यह मुझे अपने पास से टालना चाहते हैं। बाद मे उसका बयान था कि अगर हुर मुझ से बतला देते कि मैं इमाम हुसैन(अ०स०) की तरफ जा रहा हूँ तो मैं भी यकीनन उनके साथ हो लेता और निकल जाता।[3] मगर यह कहने की बातें हैं और ख्वाह मख्वाह के उज्र हैं जो एहसासे गुनाह पर वक़्त निकलने के बाद पेश किए जाते हैं अगर ऐसी अख्लाकी जुरअत उसमे मौजूद होती तो हुर के बे कहे चले जाने पर भी कुर्रा के लिए रास्ता बन्द नही हो गया था वह जाना चाहता तो चला जाता। बहरहाल यह महसूस होते हुए कि हुर को मेरा अपने पास रहना नागवार है उसने उसके पास से हट जाना ही मुनासिब समझा। हुर ने अपने ख़याल के मुताबिक उसको हटा कर एक रूकावट को अपने रास्ते से दूर कर दिया और आहिस्ता आहिस्ता घोड़ा अपना जमाअते हुसैनी की तरफ़ बढ़ाना शुरू किया। नफ्सियाती हैसियत से कयास किया जा सकता है कि उस वक्त उसका दिल धड़क रहा होगा। उसके सीने में तूफ़ान बरपा होगा और यकीनन वह महसूस कर रहा होगा कि अब मैं कहीं और हूँ। उस पर उस वक्त एक खुद फ़रामोशी और मदहोशी का आलम तारी होगा। उस वक्त किसी का टोक देना। मुआजअल्लाह।

---

[1]तबरी जि/6. पेज/244
[2]तबरी जि/6. पेज/244
[3]तबरी जि/6. पेज/244

महाजिर बिन औस उसके कबीले का एक शख़्स कहने लगा। 'क्यों हुर[1] क्या इरादा है? क्या हमला करना चाहते हो।?'[1] हुर उसका क्या जवाब देता? उसने फिर भी सुकूत करके पर्दा दारी की कोशिश की। कुछ जवाब नहीं दिया मगर जिस्म में लरज़ा सा पैदा हो गया महाजिर ने कहा ''हुर तुम्हारी यह क्या हालत है?' मैंने तुम्हारी यह कैफ़ियत कभी नही देखी। मुझसे पूछा जाता कि कूफ़े में सबसे ज्यादा बहादुर कौन है तो मैं तुम्हारे सिवा किसी का नाम न लेता। मगर इस वक़्त मैं तुम्हारी अजीब हालत देख रहा हूँ। आख़िर इसका सबब क्या है? यह सुनकर हुर ने मजीद राजदारी की कोशिश को बेसूद समझा कहा मेरे सामने इस वक़्त बहिश्त व दोजख़ का सवाल है मैं तो बहिश्त पर किसी चीज़ को मुकद्दम न समझूँगा। चाहे मेरे टुकड़े टुकड़े कर दिए जायें और मुझे आग में जला दिया जाये यह कहते कहते उसने घोड़े को चाबुक लगाया और असहाबे हुसैन[अ0स0] की तरफ पहुँच गया।[2]

इस मौके पर शायद हुर को अन्देशा हुआ कि उसके इस तरह बेतहाशा घोड़ा उड़ाये हुए आने से कहीं अन्सारे इमाम को परेशानी न पैदा हो और उसकी मज़ाहमत न की जाये इसलिए उसने उनके करीब पहुचते ही अपनी सिपर को पलट कर हाथ मे ले लिया।[3] यह तर्ज़े अमल अरब के दस्तूर के मुताबिक था इसलिए कि जब किसी को हमला करना मक़सूद हो तो उसके एक हाथ मे खींची हुए तलवार और दूसरे हाथ में हिफ़ाजत के लिए सिपर होती थी लेकिन अगर कोई तलवार नियाम मे रखे और पलटी हुई सिपर का हाथ में लिए आता दिखाई दे तो यह समझा जाता था कि वह अमान का तालिब है या कुछ पैग़ाम लेकर आ रहा है[4] हुर ने इस तरह असहाबे हुसैन[अ0स0] पर वाज़ेह कर दिया कि वह जंग का इरादा नही रखता है। चुनाँनचे बिला रोक टोक वह सीधा इमाम के सामने आया और कहने लगा फ़रज़न्दे रसूल[स0अ0]! मेरी जान आप पर फिदा, मैं वही गुनाहगार हूँ जिसने आपको वापस जाने से रोका रास्ते में आपके साथ साथ रहा और आपको इस जगह ठहरने पर मजबूर किया कसम है उस खुदा की जिसके सिवा कोई माबूदे बरहक़ नही कि मुझे यह गुमान हरगिज़ नही था कि यह लोग आपके तमाम शराएत

---

[1]तबरी जि/6. पेज/244
[2]तबरी जि/6 पेज/244
[3]तबरी जि/6. पेज/222
[4]अबसारुल ऐन पेज/119

को जो आप पेश करगे मुस्तरद कर देंगे और नौबत यहाँ तक पहुचेगी मैंने अपने दिल में ख़याल किया था कि क्या हरज है, मैं किसी हद तक उन लोगों का साथ दूँ और मालूम न हो कि मैं उनकी इताअत से बाहर हूँ फिर यह लोग उन शराएत को तो कुबूल ही कर लेंगे जो इमाम उनके सामने पेश करेंगे बखुदा अगर मुझ यह इल्म होता कि यह लोग उन शराएत को आपके मन्जूर नहीं करेगे तो मैं कभी आपके साथ यह तर्जे अमल इख्तियार न करता। अच्छा अब मैं हाजिर हुआ हूँ इन्तेहाई शर्मसारी के साथ तौबा करता हुआ अपने गुनाह से ख़ुदा की बारगाह में इस ग़रज से कि जान व दिल से आपका शरीके मुसीबत हूँ। यहां तक कि आपके कदमो पर निसार हो जाऊँ क्या इस तरह मेरी तौबा कुबूल हो सकती है।" हजरत ने बिला तवक्कुफ फरमाया "हाँ हाँ! खुदा तुम्हारी तौबा कुबूल करेगा और तुम्हे बख्श देगा मुबारक हो! वाकई तुम हुर (आजाद मन्श (मिजाज)) हो। वैसी ही जैसा तुम्हारी माँ ने नाम रखा है तुम आजाद हो इन्शा अल्लाह दुनिया में भी और आखिरत में भी [1] घोडे से उतरो हुर ने कहा "मेरा आप की नुसरत में घोडे पर सवार रहना नीचे उतरने से बेहतर है। चाहता हूँ थोडी देर उनसे जग कर लूँ, फिर तो (मर कर) घोडे से नीचे उतरना ही है ' इमाम ने यह देखकर कि हुर को जिहाद का वलवला है फरमाया अच्छा जो तुम्हारी खुशी हो वह करो खुदा अपनी रहमत तुम्हारे शामिले हाल रखे।"[2] वह जब्त बहुत कर चुका था। इमाम से खता मुआफ करा के उसका दिल बढ चुका था। अब उसे हक महसूस होता था कि वह अफ़वाजे यजीद के सामने जाकर उनको भी हक के रास्ते पर आ जाने की दावत दे चुनॉनचे वह फौरन मैदान मे आ गया पहले तो उसने मुलायम अलफाज में सुफूफे (सफों) अहले कूफा से तखातुब (मुखातिब) करते हुए फरमाया भाईयो! आखिर हुसैन[अ०स०] की उन बातों मे से जिनको वह पेश करते हैं किसी एक बात को तुम क्यों नहीं मन्जूर कर लेते ताकि तुम्हे उनके मुकाबले में जग करने से निजात मिले। लश्करियों ने कहा अमीर उमरे सअद मौजूद हैं जो कुछ तुम्हें कहना है उनसे कहो

हुर ने उमरे सअ्द से मुख़ातब होकर फिर वही अलफाज़ कहे और वैसा ही जवाब मिला। जो इसके कब्ल मिल चुका था कि 'अगर मुझ से मुमकिन होता तो मैं जरूर ऐसा करता।" यह सुनकर हुर को गुस्सा आ गया इतने

---

[1]तबरी जि/6, पेज/242 अल अखबारूत तुवाल पेज/254

[2]तबरी जि/6, पेज/264 इरशाद पेज/229

तल्ख अलफाज में जिसका उसे खुद उसी फौज के एक नुमायाँ अफसर होने की बिना पर पूरे तौर से हक हासिल था। उसने कहा "ऐ कूफे वालो खुदा तुम्हे गारत करे तुमने उस बुजुर्गवार को बुलाया और जब वह आया तो तुमने उसे दुश्मन के सिपुर्द कर दिया तुमने खयाल जाहिर किया था कि तुम उन पर जान निसार करोगे फिर तुम ने खुद उन पर चढ़ाई कर दी और उनके कत्ल पर आमादा हो गए। तुमने उनके नफ्स की अमादो शुद को मसदूद (आना जाना बन्द) कर रखा है और गला घोटने पर आमादा हो और चारों तरफ से उन्हें घेर रखा है। तुमने उनको खुदा की चौड़ी चकली जमीन में जिधर वह अमन का रास्ता पायें उधर जाने से रोक दिया है। और वह तुम्हारे हाथ में कैदी के मिस्ल हो गए हैं और बेबस कर दिए गए हैं और तुम ने उनको, उनके अहले हरम और बच्चों को और उनके असहाब को फुरात के इस बहते हुए पानी से रोक दिया है जिसको यहूदी मजूसी और नसरानी तक पीते हैं और इराक के सुवर और कुत्ते तक उसमे लोटते हैं मगर यह लोग हैं कि प्यास की शिद्दत ने उनको जाँ बलब कर रखा है हकीकतन क्या बुरा वह सुलूक है जो तुमने मुहम्मद मुस्तफा[स0अ0] के बाद उनकी औलाद के साथ जाएज रखा है। तुमको खुदा उस शिद्दत वाली प्यास के दिन सेराब न करे अगर तुम आज अभी इसी दम तौबा न कर लो और अपने तर्जे अमल से पशेमान होकर बाज न आ जाओ"

हुर की तकरीर दुश्मन के मफाद के खिलाफ बहुत खतरनाक साबित हो सकती थी। इसलिए तीर अन्दाजों को हुक्म दिया गया और उन्होंने कुछ तीर चलाये यह देखकर हुर ने तकरीर मौकूफ (रोकी) कर दी और चूँकि जंग बाकाएदा शुरू न हुई थी वह वापस आकर इमाम के सामने खड़े हो गए।[1]

जैसा कि शबे आशूर की मोहलत पर बहस के सिलसिले मे कहा जा चुका है यह इमाम हुसैन[अ0स0] की एक बहुत बड़ी फतह थी जो ऐन मौके–ए–जंग पर खुद आपकी आँखों के सामने और आपके दुश्मनो की निगाहों के सामने जाहिर हो गई क्योंकि हर शख्स अन्दाजा कर सकता है कि जिस कद्र हिम्मत बढ़ाने और दिलो को अपनी तरफ जज्ब करने के माद्दी असबाब हो सकते हैं सब फौजे यजीद की तरफ थे कसरते तादाद ताकत व कुव्वत, यकीन कामयाबी, आसाइश व राहत, आब व गिजा का इतमीनान, फिर जाएजा व इन्आम और बारगाहे हुकूमत में तकर्रुब (कुरबत) के तवक्कुआत (अच्छी

[1]तबरी जि/6, पेज/246, इरशाद पेज/250

उम्मीदें) उसके बरखिलाफ जितने हिम्मत शिकन और जी छुडाने वाले असबाब हो सकते हैं वह सब असहाबे हुसैन[अ०स०] में मुजतमा थे किल्लते तादाद, बेकसी व बेबसी यक़ीने बरबादी और तीन दिन की भूख प्यास और हुकूमत का एताब जिसका नतीजा अपने ही लिए नहीं बल्कि अपने बाद अपने पसमान्दगान और औलाद के लिए भी हिम्मत शिकन और ताकत रुबा (जवाब देने के लिए) होने के लिए काफी है इस सबके बावजूद तारीख यह बताने से आजिज है कि उनमें से कोई एक मालूमली सिपाही बल्कि बच्चा भी अलग होकर फ़ौजे मुखालिफ़ से जाकर मिला हो न हुसैन[अ०स०] की जिन्दगी में और न हुसैन[अ०स०] के बाद। उसके बरखिलाफ फ़ौजे मुखालिफ का कोई मालूमी शख्स नहीं बल्कि एक नुमायाँ अफसर जंग शुरू होने से कब्ल ही उधर से टूट कर इधर आ गया। यह वह गैर मालूमी फतह थी जिसने फौजे मुख़ालिफ़ को दंग कर दिया और शायद फौज का रंग बे रंग पा कर ही सालारे फौज ने मजीद ताखीर को खतरनाक पाया

अब धूप काफी चढ़ चुकी थी और दिन का अच्छा ख़ासा हिस्सा गुज़र गया था। उमरे सअ्द ने लशकर को आगे बढाया और अपने गुलाम वरीद को जो अलमबरदारे लशकर था आवाज दी कि झण्डा अपना मेरे करीब लाओ। वरीद रायते जंग (नैजा जंग का निशान) लिए उसके पास आकर खडा हो गया। उमरे सअ्द ने तीर अपना चिल्ल–ए–कमान में जोड़ कर फ़ौजे हुसैनी की तरफ रिहा किया और लशकरे यजीद को मुखातब करते हुए पुकार कर कहा "गवाह रहना कि सब से पहला तीर हमने लगाया है।"[1]

सिपह सालारे लशकर इन अलफ़ाज को अपनी जबान पर जारी करते हुए तीर रिहा करे और लशकरियों में जोश व खरोश पैदा न हो यह नामुमकिन है यकीनन हजारो कमानें कड़कीं, हज़ारों चिल्ले खिचे और हजारों तीर रवाना हो गए।

नही समझा जा सकता कि हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ वाली कलील जमाअत इस अचानक हमले का मुकाबला करने के लिए किसी तरीके पर तैयार हो सकती थी मगर उन्हें तैयारी की जरूरत ही क्या थी। उनके तने हुए सीने तीरों के इस्तेकबाल के लिए मौजूद और उनके दिल व जिगर, शौके शहादत में नावकों (जख्मों) को हाथों हाथ लेने पर आमादा थे

---

[1] तबरी जि. 6. पेज/242 इरशाद पेज/250

यजीदी लशकर वालो को अन्दाजा था और खूब अन्दाजा कि अगर हुसैनी जमाअत से वह कितनी ही मुख्तसर क्यों न सही दस्त बदस्त मुकाबला किया गया तो करबला की जग सिर्फ़ आशूर के दिन खत्म नहीं हो सकेगी और वह इसको भी अच्छी तरह समझते थे कि जग का तूल खींचना उनके लिए इन्तेहाई अन्देशा का बाइस है। इसलिए कि इमाम की मक्के से रवानगी की इत्तेलाअ् बसरे में हो चुकी है और वहाँ से मदद पहुँचने की तवक्को है। कूफे के बहुत से अफराद जो अभी तक नही पहुँच सके हैं यकीनन मौके के मुन्तजिर और नुसरते हुसैन[अ०स०] के लिए बेचैन होगे नीज़ यह भी कि ईरान कुछ दूर नहीं है और वहाँ के भी कुछ अफ़राद का इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ अकीदत रखना यकीनी है। खुसूसन जबकि उनके साथ अली बिन हुसैन[अ०स०] भी मौजूद हैं जो ननहियाली रिश्ते से ममलिकते ईरान के शहजादे की हैसियत रखते हैं। लिहाजा बहुत इम्कान है कि कौमी तअस्सुब ही ईरानियो को हुसैन[अ०स०] की हिमायत पर आमादा कर दे। यह भी खयाल हो सकता था कि एजा व सलमा पहाड़ी भी बहुत फासले पर नहीं हैं जहाँ का कबील–ए–तय काफी अहमियत व ताकत का मालिक है और तिरिम्माह बिन अदी इमाम हुसैन[अ०स०] से यह वादा भी कर चुके हैं कि अगर आप अपने को वहाँ पहुँचा दें तो आपकी मदद के लिए हजारों जवान कबील ए तय के बिल्कुल तैयार पाए जायेगे फिर खुद तिरिम्माह सहराए करबला के करीब हजरत से यह कह कर रूख्सत हुए हैं कि मेरा कुछ गल्ला है उसे घर पर रख आऊँ तो आता हूँ। मुमकिन है वह आये तो अपने साथ कुछ जवानाने तय को भी लेते हुए आयें। बहरहाल असबाब कुछ भी हों मगर बजाहिर फौजे यजीद को बहुत जल्दी थी और वह चाहती थी कि यह मुहिम जल्दी सर हो जाय मगर तीरो की इस इब्तदाई बारिश से जमाअते हुसैनी को कोई खास नुकसान नहीं पहुँचा। बेशक वह अमली तौर पर एक जग का इकदाम था जिसकी इब्तेदा फौजे दुश्मन की तरफ से हो गई और यह एक आखरी हुज्जत थी जिसके तमाम होने के इमाम मुन्तजिर थे

चुनानचे बगैर किसी हिरास और परेशानी के इमाम मुतवज्जेह हुए अपने असहाब की तरफ फरमाया "खड़े हो जाओ मौत के इस्तेकबाल के लिए जो बहरहाल जरूरी है खुदा अपनी रहमत तुम्हारे शामिले हाल रखे यह तीर नहीं बल्कि दुश्मन के कासिद हैं जो तुम्हारी तरफ रवाना किये गए हैं

असहाबे हुसैन[अ०स०] जो हैरतअगेज जब्त व तन्जीम के साथ तीरों की इस बारिश के बाद भी अपनी अपनी जगह बरकरार थे और किसी किस्म का इन्तेशार उनमे पैदा नहीं हुआ था इमाम की जानिब से इन अलफाज में इज्ने जिहाद पाते ही फौरन मुस्तइद हो गए और उन्होंने तीरों का जवाब तीरों से दिया जिसके मानी सिर्फ मुकाबले के लिए अपनी आमादगी का इजहार था। वरना जाहिर है कि हजारों तीरों के मुकाबले मे सौ दो सौ तीरों के इधर से भी चले जाने से अफवाजे मुखालिफ को कोई खास नुकसान पहुँच नही सकता था उनकी यह तीरो की सख्त बारिश इन मुट्ठी भर इन्सानों को मरऊब नहीं कर सकी और उन्हें बहरहाल इनसे जान तोड मुकाबला करना पडेगा जिस में हथियार से ज्यादा दिल की ताकत की जरूरत है और जमीर के तजलजुल (डगमगाने) से यही पहलू फौजे यजीदी का इन्तेहाई कमजोर साबित हो रहा था।

सत्ताईसवाँ बाब

अन्सारे इमाम के हालात और हैरतअंगेज़ कुर्बानियाँ

चूँकि आगाजे जंग के साथ साथ अन्सारे हुसैन[अ०स०] के मुजाहिदाना खिदमात का अमली सिलसिला शुरू हो गया था। इसलिए इस जिक्र के साथ बेहतर मालूम होता है कि असहाब व अन्सार के मुख्तसर हालात जिन्दगी और खुसूसियाते शख्सी का भी जहाँ तक कि इल्म हो सका है तआरुफ़ होता चले इसलिए वाकेयात की तारीखी तरतीब को मद्दे नजर रखते हुए जिन अन्सार के कारनामे आँखो के सामने आए हैं उनके मुखतसर हालात सिलसिल के साथ दर्ज किए जाते हैं। इन्हीं हालात के जैल में जंग के तफसीलात और वाकेयात की तरतीब का भी बयान होता जायेगा। अगरचे शोहदा–ए–करबला के हालात के मुतअल्लिक अरबी मे "अबसारूल ऐन फी अन्सारल हुसैन" उर्दू में "शोहदा ए करबला" के तीन हिस्से मतबूआ (छपी) इमामिया मिशन लखनऊ जामे व मुसतनद किताबें मौजूद हैं मगर इस गरज से कि जेरे नजर किताब इस हैसियत से तश्ना न रह जाये यहाँ उन हालात का लुब्बे लुबाब (खुलासा) वाकयाती तरतीब के साथ पेश किया जा रहा है जो लोग मजीद तहकीक व तफसील या मुखतलिफ रिवायात पर बहस व मुबाहिसे के तलबगार हो वह मजकूरा किताबों का मुतालिआ फरमा सकते हैं।

(1) अब्दुल्लाह बिन उमैर कल्बी

आगाजे जंग के बाद असहाबे हुसैन[अ०स०] में सबसे पहले मैदाने कारजार में यही आए थे।

इनका पूरा नाम व नसब अबू वहब अब्दुल्लाह बिन उमैर बिन अब्बास बिन अब्दे कैस बिन अलीम बिन खबाब अल–कलबी अल अलीमी था। कूफे के रहने वाले थे और कबील–ए–हमादान के 'बिअरजअद" नाम के कूँवे के पास अपने जाती मकान में सुकूनत रखते थे।[1] यह मकाम कूफे की गुजान आबादी

---

[1] तबरी जि/6 पेज/245

से बिल्कुल बाहर उन बागाते खुरमा (खुजूर के बाग) के करीब था जो "नखीला" के हुदूद में वाके थे। उनके साथ उनकी रफीके हयात (बीवी) रहती थीं जो कबील ए-नम्र बिन कासित से थीं और उम्मे वहब बिन्ते अब्द के नाम से याद की जाती थीं। अहले सैर का कौल है कि वह बडे सूरमा, बहादुर और शरीफ थे। शैख़ तूसी ने किताबुर्रिजाल में उनका असहाबे हजरत अली^अ०स० में तजकिरा किया है। कूफे में जनाबे मुस्लिम बिन अकील की शहादत हो चुकने पर जब इब्ने जियाद ने कत्ले हुसैन^अ०स० की तैयारी शुरू की उस जमाने में अब्दुल्लाह बिन उमैर बैरूने शहर (शहर के बाहर) अपने मकान ही में मुकीम और मौजूदा सूरते हाल से बिल्कुल बेखबर थे। जब इमाम हुसैन^अ०स० करबला पहुँच गए और इब्ने जियाद ने अपना लश्कर नखीला में करार दिया ताकि वहाँ फौजों का मुआएना करने के बाद करबला की जानिब रवाना करे तो उस गैर मामूली सूरते हाल की तरफ अब्दुल्लाह बिन उमैर को भी तवज्जोह हुई और उन्होने लोगों से वाकेयात की नौइयत दरयाफ्त की। उन्हे बताया गया कि यह फौजे दुखतरे रसूल फातिमा जहरा^स०अ० के फरजन्द हुसैन^अ०स० से जग करने के लिए भेजी जा रही हैं। यह सुनना था कि बहादुर अब्दुल्लाह के ईमानी जज्बे में तलातुम पैदा हुआ उन्होने खयाल किया कि मुझे मुश्रेकीन से जिहाद करने की हसरत रही है। उन लोगों से जिहाद करना जो अपने रसूल के नवासे के साथ जग कर रहे हों? यकीनन अल्लाह के नजदीक मुश्रेकीन के साथ जिहाद करने से कम दर्जा नहीं रखता होगा।

यह बात दिल में ठान कर वह अपनी जौजा के पास गए और उन्हें अपने इरादे से मुत्तेला किया पाक अकीदा और पुर हौसला बीबी ने आतिशे शौक को और हवा दी इस तरह कि उन्होंने कहा तुम भी जाओ और मुझे भी अपने साथ ले चलो। चुनाँनचे रात के वक्त दोनो रवाना हुए और करबला पहुँच कर अन्सारे हुसैन^अ०स० के साथ मुलहक (मिल) हो गए।

उस वक्त जब फौजे उमरे सअद की जानिब से तीरों की बारिश हो चुकी थी जो पैगामे जग की हैसियत रखती थी तो यसार और सालिम दोनों जियाद और इब्ने जियाद के गुलाम मैदाने जग में आये और मबारिज (लडने के लिए आमादा हुए) तलब हुए फौजे हुसैनी मे से हबीब बिन मजाहिर और बुरैर बिन खजीर जोश में भरे हुए आगे बढे मगर इमाम ने उनको रोक दिया बस अब्दुल्लाह बिन उमैर को तो वलवल ए जिहाद था ही वह खडे हो गए और इजाजते जग चाही। इमाम ने सर से पैर तक उन पर नजर डाली और गन्दुमी

रंग, लम्बा कद, मजबूत कलाईयाँ और बाजू कुशादा पुश्त और सीना मुलाहिजा करते हुए बतौरे खुद फरमाया "बहादुर और जंग आजमा जवान मालूम होता है? फिर फ़रमाया "जाओ अगर तुम्हारा दिल चाहता है।" अब्दुल्लाह मैदाने जंग में आए। फरीके मुखालिफ ने नाम व नसब पूछा और उन्होंने बताया। उसने कहा हम तुमको नहीं पहचानते हमारे मुकाबले में जुहैर बिन कैन या हबीब बिन मजाहिर या बुरैर बिन खजीर को आना चाहिए बस यह सुनकर अब्दुल्लाह को गुस्सा आया उसका जवाब सख्त अलफाज में देते हुए उन्होंने हमला करके पहले वार में यसार का काम तमाम कर दिया। अब्दुल्लाह उसकी तरफ मुतवज्जेह ही थे कि सालिम ने तलवार का वार किया जो सर पर आ चुका था जब उनको खबर हुई। बहादुर ने बायें हाथ को सिपर बना दिया जिससे उस हाथ की उंगलियाँ कटा हो गई। मगर अब्दुल्लाह ने इतनी देर में पलट कर एक जर्बे शमशीर से उसका भी खातिमा किया[1] जख्म खुर्दगी के गुस्से और अपने दोनो हरीफों पर फतह पाने के जोश से मुतअस्सिर होकर अब्दुल्लाह बिन उमैर रजज पढने लगे जिसका मफ़हूम यह था कि अगर मुझे न पहचानते हो तो पहचान लो कि मैं कबील–ए–कल्ब का सपूत हूँ। मेरे हसब व नसब के लिए इतना काफी है कि खानदाने अलीम में मेरा घराना है। मैं एक सख्त मिजाज और दुरूश्तखू (सख्त मिजाज) इन्सान हूँ और मुसीबत के वक्त पस्त हिम्मती से काम लेने वाला नहीं हूँ। ऐ उम्मे वहब मैं जिम्मेदारी करता हूँ तुझसे कि मैं उनमें बढ़ बढ कर नैजे लगाऊँगा और तलवारे मारूँगा। और इस तरह की शमशीर जनी करूँगा जो खुदा पर ईमान रखने वाले जवाँ हिम्मत इन्सान के शायाने शान हो।[2]

मुमकिन है कि यह बहादुराने अरब की इस आम रस्म की बिना पर हो कि वह अपने कारनामों का गवाह अपनी शरीके जिन्दगी खवातीन को बनाया करते थे। मगर अब्दुल्लाह की जौजा आम औरतों के मिस्ल न थीं वह अपने सीने में शेराना दिल रखती थीं और उस दिल में ईमाम की गैर मामूली तड़प के साथ अपने शौहर से बेइन्तेहा मुहब्बत भी थी मुमकिन है कि जब उन्होंने अपने शौहर से फ़रमाइश की थी कि मुझे भी अपने साथ ले चलो तो उसी वक्त वह यह नियत रखती हों कि मैं भी शौहर के साथ मैदाने जंग में दादे शजाअत दूँगी और उस वक्त तक शायद वह अपने क़ल्बी जजबात को

---

[1] तबरी जि/6. पेज/245-246, इरशाद पेज 250
[2] तबरी जि, 6. पेज 246

इन्तेहाई बेचैनी के बावजूद रोकती रही हो अहले हरम और उनकी हमराही खवातीन को देखकर जो अहकामे इस्लाम के तहत मैदाने जग से किनाराकश रहते हुए खैमों मे जाँगुर्जी थीं।

मगर अब्दुल्लाह बिन उमैर का मैदाने जग में मजकूर ए–बाला अशआर पढ़ना जो एक तरफ वलवल–ए जग के मजहर, दूसरी तरफ जोशे ईमान का मुरक्का और तीसरी तरफ कल्बी वारदात (दिल पर गुजरने वाले हालात) और तअल्लुके रूहानी के तरजुमान थे और उनसे यह पता चलता था कि वह इस हर्बो जर्ब (शदीद जग) के आलम में भी अपनी शरीके हयात की याद अपने दिल में और उसकी तस्वीर अपनी आँखों में लिए हुए हैं और उसके साथ ही साथ अपनी शजाअत और सर फरोशी (जान कुरबान करन) की दाद उससे लेना चाहते है। बस यह असबाब थे जिनकी बिना पर उन अशआर ने "उम्मे वहब" के जब्तो सब्र के लिए "बर्के खिरमन (बिजली कौंदने) का काम किया और वह बेतहाशा एक गुर्ज़ हाथ मे लेकर मैदाने जग में आ गई और पुकार कर कहने लगीं कि मेरे माँ बाप दोनों तुम पर निसार औलादे रसूल की नुसरत मे कोताही न होने पाए।[1]

दीलेर व गयूर अब्दुल्लाह के लिए यह मन्जर इन्तेहाई सब्र शिकन (बर्दाश्त के बाहर) साबित हुआ। वह फौरन जौजा के पास आये और चाहा कि उन्हें खैमे की तरफ पहुँचा दे मगर वह बातों मे आने वाली न थीं। अब्दुल्लाह बिन उमैर के एक हाथ में तलवार थी जिससे दुश्मन का खून टपक रहा था और दूसरे हाथ की उगलियाँ कट चुकी थीं जिनसे खुद लहू जारी था। फिर भी उन्होंने कोशिश की कि वह अपनी कूव्वत से उन्हें ख़ैमे की तरफ़ वापस कर दें मगर जोश में भरी बहादुर ख़ातून ने अपना दामन अब्दुल्लाह के हाथ से छुड़ा लिया और कहने लगीं कि मैं तुम्हें छोड़ूँगी नहीं जब तक कि तुम्हारे साथ मैं भी कत्ल न हो जाऊँ। इमाम हुसैन[अ०स०] ने यह मुलाहिजा फरमा कर उनको आवाज दी कि अल्लाह तुम दोनों को जजाए खैर दे ऐ मोमिना अहले हरम के पास वापस जाओ और उनके साथ बैठी रहो क्योंकि औरतों पर से जिहाद साकित है।

ईमान और इताअत इमाम का एहसास था जो बेपनाह जज़ब–ए–उलफत और जोशे कुर्बानी पर गालिब आया और उम्मे वहब खवातीन के पास वापस

---

[1] तबरी जि/6, पेज/246

चली गईं। और उसके बाद अब्दुल्लाह बिन उमैर भी सफ़े मुजाहदीन मे वापस आ गए उसके बाद वह मैसरा के हमले में शरीक हुए और मुस्लिम बिन औसजा के बाद शहादत पाई जिसकी तफ़सील बाद मे आएगी

(2) हुर बिन यज़ीद रियाही

नाम व नसब: हुर बिन यजीद बिन नाजिया बिन क़अ्नब बिन एताब बिन हरमी बिन रियाह बिन यरबूअ् बिन हनजला बिन मालिक बिन जैद मनात बिन तमीम अल–तमीमी अर–यरबूई अल–रियाही यह खानदाने अरब मे कदीमी इज्जत का मालिक था। एताब जो हुर की चौथी पुश्त में है नामान बिन मुन्ज़र मुल्के हीरा के मखसूसीन में वह दर्जा रखता था कि घोडे पर उसके 'रदीफ (चलते घोड़े पर) की सूरत से सवार होता था। एताब के दो फरजन्द थे कैस और कअ्नब। बाप के इन्तेकाल के बाद यह मन्सब कैस को हासिल हुआ। बनी शैदान ने उससे मुनाजिअत (लड़ाई) की जिसके नतीजे मे ''यौमुत तोहफा की खूँरेज जग वाके हुई कैस के सिलसिले मे अख़वस शायर एक सहाबी थे जिनका नाम व नसब 'जैद बिन अम्र बिन कैस बिन एताब था। तबके के लिहाज से वह हुर के बाप यजीद के चचाजाद भाई और हुर के रिश्ते के चचा होते थे।

हुर कूफे के रूउसा (मालदार) में से थे और इब्ने जियाद की फौज के अफ़सर की हैसियत रखते थे और कादसिया की फौज जो नाकाबन्दी के लिए तैनात थी उसमे यह भी दाखिल थे उसके बाद उनका इमाम हुसैन[अ०स०] को रोकने के लिए भेजा जाना इमाम का उनकी तमाम फौज को शिद्दत से प्यासा देखकर अपने साथ का कुल पानी पिलाना और इमाम से उनकी गुफ्तगू और आपके इरादः ए रवानगी के मौक़े पर सद्दे राह (रास्ता रोकना) होना। और आपको घेर कर मैदाने करबला तक लाना और इब्ने जियादा का खत पाकर आपको यहाँ कयाम करने पर मजबूर करना। उसके बाद सुब्हे आशूर उनका लशकरे यजीद से अलाहिदा होकर असहाबे हुसैन[अ०स०] में शामिल होना यह तमाम वाकेआत इस किताब में पहले बयान हो चुके हैं।

आग़ाजे जग के बाद जब अब्दुल्लाह बिन उमैर कल्बी एक कारे नुमायाँ अन्जाम दे चुके यानी दस्त बदस्त लड़ाई में उन्होंने यसार और सालिम को क़त्ल कर दिया तो उस शिकस्त के गुस्से मे बरअफरोख़्ता (बेक़ाबू) होकर अम्र

---

[1] तबरी जि 6 पेज, 246

बिन हज्जाज ने जो मैमना लशकरे यजीद पर था मजमूई (पूरी) कूव्वत से हुसैनी जमाअत पर हमला कर दिया

उस सख्त मौके पर हुसैनी मुजाहिदों ने घुटने अपने जमीन पर टेक दिये और नैज़ा की अनियाँ सामने कर दीं जिनसे दुश्मन के घोडे अपनी जगह ठहर गए और आगे न बढ सके उसके बाद जब वह लोग वापस होने लगे तो उन्होने उनको तीरों का निशाना बनाया जिससे चन्द आदमी उनमें कत्ल और चन्द जख्मी हुए।[1]

जग की इस शिद्दत को देखकर बजाहिर हुर को खयाल हुआ कि कहीं कोई नासिरे हुसैन मुझसे पहले न कत्ल हो जाए। यह सोच कर उन्होंने ख़िदमते इमाम में अर्ज किया

फरजन्दे रसूल[स०अ०] चूँकि सबसे पहले आपसे लडने को आया था लिहाजा चाहता हूँ कि आप मुझे इजाज़त दें कि सबसे पहले मैं ही आपके क़दमों पर निसार हूँ। और इस तरह दुनिया से जाकर आपके जद्दे बुजुर्गवार की दस्त बोसी का शरफ हासिल करूँ '' इमाम ने इजाजत दे दी और हुर मैदाने जग मे पहुचे और कुछ अशआर रजज में पढने लगे जिसका मफहूम यह था कि ''मैं हुर हूँ और मेहमानों का पनाह देने वाला हूँ मैं तुम्हारी गर्दनों पर तलवारें मारूँगा। उस इमाम की जानिब से जो सर जमीने मक्का का सबसे बेहतर रहने वाला है। मैं तुम को तहे तेग करूँगा और जरा भी उसको जुल्म नहीं समझूँगा '' इस रजज के बाद उन्होंने हमला करते हुए शमशीर जनी शुरू कर दी। इसके पहले जब हुर लशकरे उमरे सअ्द से जुदा होकर असहाबे हुसैन[अ०स०] में शामिल हुए थे तो यजीदी लशकर के एक सिपाही यजीद बिन सुफियान तमीमी ने कहा था कि 'बखुदा अगर मैं हुर को देख लेता उस वक्त जब वह लशकर से निकल कर जा रहा था तो एक नैजे में उसका काम तमाम कर देता।' अब जो हुर तने तन्हा इतने बडे लशकर के मुकाबले में जग कर रहे थे, आगे बढ बढके तलवारें लगा रहे थे और अन्तर का यह शेअ्र उनकी जबान पर था कि

مازلت ارميهم بثغرة نحره

ولبانه حتى تسربل بالدم

[1] तबरी जि/6. पेज/246, इरशाद पेज/250

(यानी) मैं बराबर उन पर फेंकता रहा अपने घोड़े की गर्दन और उसके सीने को यहाँ तक कि उस घोडे ने सर से पावँ तक खून की चादरें ओढ़ लीं।[1]

और यह शेअर हकीकतन उनके हस्बे हाल था क्योकि उनका घोडा जख्मी हो चुका था उसके सर व चेहरे पर तलवारें पड़ चुकी थीं और खून बह रहा था उस वक्त हसीन बिन तमीम ने जो कादसिया की नाका बन्दी पर मामूर फौज का अफसर था। यजीद बिन सुफियान से कहा कि देखो हुर ही तो है जिसके कत्ल करने की तुम आरजू रखते थे। उसने कहा "अच्छा" यह कहकर वह बाहर निकला और पुकारा हुर क्या मुकाबला मन्जूर है? हुर ने कहा "हाँ जरूर" और यह कहते ही सामने आ गया। खुद हसीन का कौल नक्ल किया जाता है कि बस यह मालूम हुआ जैसे यजीद की जान हुर के कब्जे में थी। चुनाँनचे वह दम के दम में कत्ल हो गया [2] यह ऐसा पुरहैबत मन्जर था कि दुश्मन का पराबन्द हो गया और हुर के मुक़ाबले को फिर कोई न निकला। आखिर वह अपने घोडे को जो बुरी तरह जख्मी हो चुका था मोड़ कर अपने मरकज की तरफ वापस हो गए

उसके बाद फिर वह जंगे मगलूबा मे शरीक हुए और जोहर की नमाज का वक्त आने के बाद शहीद हुए तफसील उसकी बाद मे दर्ज की जाएगी।

(3) मुस्लिम बिन औसजा असदी

असहाबे हुसैन मे मुमताज हैसियत रखते थे।

नाम व नसब अबू हज़ल मुस्लिम बिन औसजा बिन सअ्द बिन सालबा बिन दूदान बिन असद बिन खजीमा असदी सअ्दी। मुमताज व मुअज्जिज़ अशराफे अरब मे से, सरदार कौम आबिद (इबादत गुजार) व तहज्जुद गुजार (नमाजे शब के पाबन्द) थे और उन्होंने रसूल[स०अ०] की जियारत की थी शअ्बी ऐसे मुहद्दिस (हदीस कोड करने वाले) ने उनसे रिवायतें अहादीस की है इन तमाम खुसूसियात के साथ वह फारस (घुड़ सवारी में माहिर) भी थे। और मैदाने कारजार में उन्होंने कारहाए नुमायाँ अन्जाम दिए थे। सन 20 हिजरी में जब हुजैफा बिन यमान की सरकर्दगी मे फौजे इस्लाम ने ईरान के तुरकिस्तानी इलाके आजरबाईजान को फतह किया था तो उसमे मुस्लिम बिन औसजा भी

---

[1]तबरी जि/6 पेज/248, इरशाद पेज/251

[2]तबरी जि/6, पेज/248–249

शरीक थे और उन्होंने जग मे बहुत से मुशरेकीन को कत्ल भी किया था। मैदाने करबला में वह सिन रसीदा और जईफुल उम्र हो चुके थे।

मुजाहिद ए हुसैनी से मुतअल्लिक उनके खिदमात का सिलसिला आशूर–ए–मुहर्रम के बहुत पहले से शुरू हो चुका था। चुनाँनचे जब इब्ने जियाद के कूफे पर मुसल्लत होने के बाद मुस्लिम बिन अकील हानी के घर में फरोकश (रूके) हुए और उन्होंने बैयत करने वालों की अज सरेनौ (नय सिरे से) तन्जीम शुरू की थी तो मुस्लिम बिन औसजा उनके नुमाइन्द–ए खास की हैसियत से उनकी बैयत और अहले बैते रसूल के साथ वफादारी का अहदो पैमान लेते थे मगर शहादते जनाबे मुस्लिम बिन अक़ील के बाद पता नहीं चलता कि वह कहाँ गए और फिर किस तरह इमाम हुसैन[अ०स०] की खिदमत में पहुँच गए।

शबे आशूर हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने जो तारीखी खुतबा इरशाद फरमाया था जिसका माहसल (निचोड़) यह था कि तुम सब मुझे छोड़ करअलाहिदा हो जाओ और मुझे तनहा उनसे मुकाबला करने दो उसके जवाब में अजीजो के बाद सबसे पहले मुस्लिम बिन औसजा ही खडे हुए थे और तारीखे इन्सानी के लिए यादगार जोश और खुलूस में भरे हुए यह अलफ़ाज़ कहे थे कि 'भला हम और आपको छोड़ कर चले जायें और खुदा के सामने जवाब देही का सामान न करे यह नही हो सकता। बखुदा मैं इतना लड़ूँगा कि उनके सीनों मे अपने नैजे को तोड़ दूँगा। और तलवारें लगाऊँगा। जब तक कि उसका क़ब्जा मेरे हाथ में सभल सकेगा। मगर आपसे कभी जुदा न हूगा यहाँ तक कि अगर मेरे पास हथियार न होंगे जिनसे जग कर सकूँ तो उन्हें पत्थर मारूँगा, आपकी नुसरत में, यहाँ तक कि आप ही के साथ रहते हुए दुनिया से चला जाऊँ।''

सुब्हे आशूर शिम्र ने खयामे हुसैनी की पुश्त पर खन्दक में आग के शोले भड़कते देखकर जो गुस्ताखी का तखातुब (जुमला अदा) किया था उसके जवाब मे भी मुस्लिम बिन औसजा ने गैज मे आकर उसको अपने तीर का निशाना बनाना चाहा था। मगर इमाम के मानेअ् (मना करने पर) होने की वजह से खामोश हो गए थे।

अब जग छिडने के बाद कहाँ मुमकिन था कि मारिक–ए–कारजार में वह किसी से पीछे रह जाते वह बुढ़े जरूर थे मगर नुसरते हुसैन[अ०स०] मे उनका

जोश व वलवला जवानी से बदरजहा बढा हुआ था। इसीका नतीजा था कि असहाबे इमाम में सबसे पहले वही दर्जे ए शहादत पर फाएज हुए।

उस वक्त जब अब्दुल्लाह बिन उमैर दस्त बदस्त जंग कर चुके और हुर भी मैदाने जंग मे दादे शजाअत दे चुके तो नाफेअ् बिन हिलाल जमली ने आगे बढकर लडना शुरू किया और वह कहते जाते थे कि "मैं कबील–ए–बनी जमल" से हूँ अली[अ०स०] के दीन पर हूँ।" उनके मुकाबले पर एक शख्स आया जिसका नाम मजाहिम बिन हरीस था उसने कहा कि "मैं उसमान के दीन पर हूँ।" नाफेअ् ने गुस्से में भरे हुए जवाब के साथ उस पर हमला किया और उसको कत्ल कर दिया।[1]

उन पैहम नुकसानात से जो अफ्वाजे मुखालिफ को बराबर हो रहे थे, सरदाराने लशकरे यजीद परेशान हो गए। अम्र बिन हुज्जाज ने जो उसके पहले ही एक हमला करके नाकाम वापस जा चुका था। ज़ोर से अपनी फौज को ललकारा और बलन्द आवाज से कहा "बेवकूफो! तुम जानते भी हो कि किससे जंग कर रहे हो यह मुलक के खास शहसवार और जानों पर खेले हुए अफराद हैं। तुम मे से कोई शख्स इन्फेरादी तौर पर उनसे जंग के लिए न निकले। हाँ चूँकि उनकी तादाद बहुत कम है इसलिए यह बहुत थोडी देर जिन्दा रह सकते हैं अगर तुम सब मिलकर फक्त पत्थर ही उन पर बरसाओ तो भी उनको कत्ल कर सकते हो।"

यह मशवरा कि दस्त बदस्त जंग न की जाए। उमरे सअ्द को भी पसन्द आया और तमाम लशकर मे फरमान जारी कर दिया गया कि कोई शख्स मबारिज तलबी (अकेले जंग) के लिए मैदान में न निकले फिर अम्र बिन हुज्जाज ने आगे बढकर तमाम लशकर में जोश पैदा कराने के खयाल से एक तकरीर की और कहा "ऐ अहले कूफा इताअत और वफादारी के पाबन्द रहो। और अपनी जमाअत से अलग न हो और जरा भी शक व शुबहा न करो उन लोगों के कत्ल के बारे में जो दीन से निकल गए हैं और इमाम वक्त यजीद के मुखालिफ हैं।"

इमाम हुसैन[अ०स०] ने यह गुमराह कुन अलफाज सुनकर जवाब देना जरूरी समझा और इरशाद किया कि "ओ अम्र बिन हुज्जाज तू लोगों को मेरे खिलाफ आमादा करता है क्या हम दीन से निकल गए हैं और तुम दीन पर कायम हो? कसम बखुदा अनकरीब उस वक्त जबकि तुम्हारी जानें इन जिस्मों से

[1] तबरी जि० 6 पेज/449 इरशाद पेज/251

जुदा होगी और तुम अपने आमाल पर दुनिया से जाओगे। मालूम होगा कि कौन दीन से निकला था और कौन आतिशे जहन्नम मे जलने का मुस्तहक़ था।

बहर तौर अम्र व बिन हुज्जाज ने अपनी फौज को आमादा कर ही लिया था। चुनॉनचे उसने पूरे जोशो ख़रोश से मैमना की फौज के साथ फुरात की जानिब से जमाअते हुसैनी पर हमला किया उस जमाअत के छोटे से मैसरा ने ऐसी पामर्दी से मुकाबला किया कि दुश्मन को फिर वापस होना पड़ा मगर गुबार का दामन चाक हुआ तो मुस्लिम बिन औसजा खाक व खून में ग़लतॉं नजर आये। इमाम हुसैन[अ०स०] फौरन मुस्लिम बिन औसजा के सिरहाने पहुँचे जबकि उनमें रमक़े जान बाकी थी आपने उनके लिए दुआ–ए ख़ैर करते हुए इस आयत की तिलावत फरमाई: "فمنهم من قضى نحبه ومنهم من ينتظر وما بدلوا تبديلا" "यानी कुछ जाने वाले गुजर गए और कुछ वक्त के मुन्तजिर हैं मगर कोई अपनी बात से हटा नहीं "

हबीब बिन मज़ाहिर जो इमाम के साथ साथ थे मुस्लिम बिन औसजा के करीब गए और उनसे कहा कि तुम्हारा साथ छूटने का बड़ा सदमा है मगर मैं तुम्हे जन्नत की मुबारकबाद देता हूँ। मुस्लिम ने कमजोर आवाज में जवाब दिया। 'तुम्हें भी हर तरह की खैरो बरकत की मुबारकबाद कुबूल हो।' हबीब ने कहा अगर मुझे यकीन न होता कि मैं भी अनकरीब तुम्हारे पीछे पीछे आता हूँ तो कहता कुछ वसीयत करो और मैं उस वसीयत को पूरा करूँ।" मुस्लिम ने जवाब मे हुसैन[अ०स०] की तरफ इशारा करते हुए कहा वसीयत जो कुछ भी है वह इसी जात से मुतअल्लिक है। मतलब यह था कि तुम भी उन ही पर अपनी जान निसार करना। हबीब ने कहा "जरूर ख़ुदा की क़सम ऐसा ही होगा।"

अम्र बिन हज्जाज के साथ की बदहवास फौज उस मुखतसर सी जमाअत के मुकाबले की ताब न लाकर बेतहाशा भागी थी।

उसे खबर भी न थी कि कौन कत्ल होगया मगर मुस्लिम बिन औसजा के साथ उनके अहलो एयाल मौजूद थे जब उनकी शहादत की खबर खैमे में पहुँची तो एक कनीज ने चीख मार कर कहा।

"हाये इब्ने औसजा। हाये मेरा आका।" इस आवाज को सुनकर लश्करे मुखालिफ़ में ख़ुशियाँ होने लगीं कि हमने मुस्लिम बिन औसजा को कत्ल किया।" उस पर शबस बिन रबई को गुस्सा आ गया और उसने कहा 'गजब

की बात है कि मुस्लिम बिन औसजा का सा शख़्स क़त्ल हुआ और तुम लोग ख़ुशियाँ मनाओ बख़ुदा मैंने ख़िदमते इस्लाम मे उस शख़्स के कारनामे देखे हैं। आजर बाईजान की जग मं मेरा चश्मदीद वाक़ेया है कि अभी मुसलमानो के लश्कर की पूरी सफ़ बन्दी भी न होने पाई थी कि उस बहादुर ने छे आदमी फौजे मुशरकीन के क़त्ल कर दिए थे। ऐसा शख़्स तुम्हारे हाथ से मारा जाए और तुम खुश हो?

जाहिर बीं (जाहिरी निगाह रखने वाले) निगाहों को यह बातें मामूली मालूम होती होंगी मगर हकीकतन यह इमाम हुसैन[अ०स०] की हक्कानियत के वह सरीही (खुले हुए) अलामात थे जो दौराने जग में बराबर आँखों के सामने आ रहे थे।

अब्दुल्लाह बिन उमैर की शहादत

बहरहाल उस दूसरे इजतेमाई हमले की इस कामयाबी ने जो कत्ले मुस्लिम की सूरत में जाहिर हुई थी लशकर मुख़ालिफ का दिल बढ़ा दिया। इसलिए उसके बाद शिम्र बिन जिल जौशन ने मैसर ए फौज को लेकर हुसैनी मैसरा पर हमला किया और उस तरफ भी असहाबे हुसैन[अ०स०] ने बडी पामर्दी से मुकाबला किया उस मौके पर अब्दुल्लाह बिन उमैर ने जिनके हालात पहले बयान हो चुके हैं बडी जाँफिशानी से काम लिया और दो सिपाही दुश्मन के फिर क़त्ल किए मगर उसके बाद वह हानी बिन सबीत हजरमी और बकीर बिन हैई तमीमी के हाथ से दर्ज ए शहादत पर फाएज हुए। तबरी ने तसरीह की है कि वह असहाबे हुसैन[अ०स०] में दूसरे मक्तूल थे।[2]

जौज ए अब्दुल्लाह बिन उमैर जिन्हों ने अपनी ज़िन्दगी की तमाम काएनात को अपने जज्ब–ए–ईमानी पर कुर्बान कर दिया था यह मालूम करके उनका अजीज शैहर हमशा के लिए उनसे जुदा हो गया और वह करबला की तप्ती ज़मीन पर अपने खून की सुर्ख़ चादर ओढ़े मौत की नींद सो रहा है एक मर्तबा फिर बेचैन होकर इस इरादे से नहीं कि वह जग करेंगी या अपने शौहर के खून का बदला लेगी बल्कि सिर्फ इसलिए कि वह अपने शौहर की लाश को देख लें, मैदान मे पहुँचीं। वह शौहर के सिरहाने बैठकर उनके चेहरे से गर्दो गुबार साफ करती और कहती जाती थीं कि 'तुम्हे जन्नत मुबारक हो,

---

[1]तबरी जि 6 पेज/449

[2]तबरी जि/6, पेज/249

बहिश्त की सैर करना मुबारक हो। मगर दुश्मन का जुल्म व तशद्दुद इस हद पर था कि शिम्र ने अपने गुलाम को जिसका नाम रूस्तम था आवाज दी कि उसका भी काम तमाम कर दे, वह बढ़ा और उसने उन सितम रसीदा और दिल खस्ता खातून के सर पर एक ऐसा गुर्ज मारा कि वह शहीद हो गईं।[1] और इस तरह करबला के खूनी मुरक्के में एक क़ाबिले एहतेराम खातून का मुकद्दस लहू भी शामिल हो गया।

(4) बुरैर बिन खुज़ीर हमदानी

सिन रसीदा ताबेई (हदीस नक्ल करने वाले) इबादत गुजार, और हाफिजे कुरआन, हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के असहाब में से, कूफे के बाशिन्दे और क़बील ए हमदान के अशराफ में से, अबू इस्हाक़ हमदानी सबई मशहूर मुहद्दिस (हदीस लिखने वाले) व हाफिज के ममलू (भरे हुए) थे। मस्जिदे कूफा मे लोगों को क़ुरआन की तालीम देते थे। लोग उनको सय्यदुल कुर्रा हुफ्फाजे (हाफिज की जमा) कुरआन का सरदार) कहते थे। रास्ते में कहीं पर पहुँच कर हुसैन[अ०स०] के साथ हो गए और हुर की मुलाकात के बाद जो खुतबा इमाम ने इरशाद फ़रमाया था उसके जवाब में जुहैर बिन कैन और नाफ़ेअ् बिन हिलाल की तकरीरों के बाद उन्होंने भी एक मुखतसर सी तकरीर की थी जिसका जिक्र पहले हो चुका है। अब्दुर्रहमान बिन अब्दरबा से उनकी इतमीनानी गुफ्तगू का तज़किरा भी इसके कब्ल इस किताब मे आचुका है। जब बुरैर ने कुछ मिजाह (मजाक) किया और अब्दुर्रहमान ने कहा यह मजाक का वक्त नहीं है तो बुरैर ने जवाब दिया कि खुदा की क़सम मेरे कौम व क़बीले वाले इससे वाकिफ हैं कि मुझे जवानी से लेकर इस उम्र तक कभी मजाक से दिलचस्पी नहीं रही मगर इस वक्त तो अपने मुस्तकबिल के तसव्वुर से मेरी खुशी की इन्तेहा नहीं कि इधर मैदाने जग मे तलवार चली और बस नतीजे मे हमारे लिए आखिरत की जिन्दगी और सआदत नसीब हुई

इससे बुरैर के शौके शहादत का पूरा अन्दाजा हो जाता है। इसी जज्ब–ए–बेकरार का नतीजा था कि वह जग में सबकत करना चाहते थे। चुनॉनचे सबसे पहले जो दो गुलाम जियाद व इब्ने जियाद के लशकरे यजीद से निकले और उन्होने मुबारिज तलबी (मैदान में आने की दावत दी) की तो हबीब और बुरैर खड़े हो गए थे मगर इमाम ने उनको रोक दिया था। जमाअते हुसैनी मे उनका नुमायाँ हैसियत रखना इससे भी जाहिर है कि जब अब्दुल्लाह

---

[1] तबरी जि 6. पेज 251

बिन उमैर मैदान में गए तो उन दोनो गुलामो ने कहा कि हम तुमको नहीं जानते, हमारे मुकाबले के लिए ज़ुहैर बिन कैन या हबीब बिन मज़ाहिर या बुरैर बिन खज़ीर को आना चाहिए। गुज़िश्ता जगे मग़लूबा के बाद दस्त बदस्त मुकाबले के लिए यजीद बिन माअकिल लश्करे यजीद में से मैदाने जग में आया उससे और बुरैर से पुरानी मुलाकात थी और मजहबी नोक झोंक भी हुआ करती थी। इसलिए उसने मैदाने जग में बुरैर को आवाज़ दी कि "देखा तुमने, खुदा ने तुम्हारे साथ क्या सुलूक किया ' बुरैर ने कहा 'खुदा ने मेरे साथ तो बड़ा अच्छा सुलूक किया। हॉ तू अपनी कह कि बड़ा बद नसीब साबित हो रहा है।' यजीद बिन माअ्किल ने जवाब दिया झूठ कहते हो हालाँकि इसके पहले तुम्हे झूठ बोलने की कभी आदत नहीं थी। खैर यह बताओ कि तुम्हे याद है! एक दिन हम और तुम बनी लौज़ान के कूचे से होकर गुज़र रहे थे और तुम कह रहे थे कि उसमान गुनहगार थे और मुआविया खुद गुमराह और दूसरो को गुमराह करने वाला है और इमामे बरहक बस अली बिन अबी तालिब हैं।' बुरैर ने कहा कि मैं अब भी अपने इसी खयाल पर कायम हूँ" यजीद ने कहा अच्छा इस पर तैयार हो कि मैं तुमसे मुबाहला करूँ और हम तुम दोनो मिलकर खुदा से दुआ करें कि वह झूठे पर लानत करे और जो हक़ पर हो उसके हाथ से बातिल परस्त को कत्ल करा दें फिर मैं तुमसे जग करूं।' यजीद बिन माअकिल ने इसको मन्जूर कर लिया। दोनो फौजों की ऑखे लड़ी थीं दोनों ने आमने सामने खड़े होकर हाथ आसमान की तरफ उठाए और खुदा से दुआ की। फिर जग में मशगूल हो गए बस सिर्फ दो जर्बों की रद्दो बदल होने पाई इस तरह कि पहले यजीद ने तलवार लगाई जो बुरैर पर उचटती हुई पड़ी और कोई सदमा उन्हें नहीं पहुँचा। फिर बुरैर ने तलवार मारी जो खोद को काटती हुई उसके दिमाग तक पहुँची और वह घोड़े से जमीन पर गिर पड़ा इस हालत से कि बुरैर की तलवार उसके कास–ए–सर मे दर आई हुई थी और वह उसे बाहर खींच रहे थे। इसी हालत में रज़ी बिन मन्कज़ अब्दी ने उन पर हमला कर दिया वह बुरैर से लिपट गया और कुश्ती लड़ने लगा। बुरैर उसको गिरा कर सीने पर सवार हो गए कमीना और बुजदिल दुश्मन चीख उठा और पुकारने लगा "कहाँ हैं जगजू पहलवान, कहाँ हैं मुदाफियत (बचाने) करने वाले जवान, दफअतन (अचानक) काअ्ब बिन जाबिर बिन अम्र अज़दी बुरैर पर हमला करने के लिए आगे बढ़ा लश्करे यजीद के दूसरे सिपाहियों ने उसको मना भी किया कि यह बुरैर

हाफिज़े कुरआन हैं, जो मस्जिद में हिफ्ज़े कुरआन कराया करते थे। मगर उसने न माना और पुश्त की जानिब से बुरैर पर नैज़ा का वार कर दिया जो सीने से पार हो गया। और बुरैर ज़मीन पर गिर गए। फिर उसने वार लगा कर बुरैर का काम तमाम कर दिया।[1]

(5) मुनजह बिन सहम

जमाअते हुसैनी में आजाद अफ़राद के साथ साथ गुलामों की नुमाइन्दगी भी काफ़ी थी उनमें सबसे पहले सिलसिल–ए शोहदा में जिनका नाम आता है वह मुनजह हैं।

शैखुत ताइफाह ने किताबुर रिजाल मे उनका असहाबे इमाम हुसैन[अ0स0] में शुमार किया है। ज़मख़शरी ने रबीउल अबरार मे लिखा है कि हसीना हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] की कनीज थी जिसे आपने नौफ़िल बिन हारिस बिन अब्दुल मुत्तलिब से खरीद फरमाया था। और उसकी शादी सहम से कर दी थी इस तरह मुनजह की विलादत हुई और चूँकि यह कनीज अली बिन हुसैन (ज़ैनुल आबेदीन[अ0स0]) के घर में खिदमात अन्जाम देती थी इस लिए हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] इराक़ की तरफ़ रवाना हुए तो वह अपने फ़रज़न्द मुनजह समेत आपके हमराह आई करबला में उनकी शहादत अवाएले (शुरू) जंग में ही वाकेअ हुई और वह हिसान बिन बक्र हन्जली के हाथ से कत्ल हुए

(6) उमर बिन ख़ालिद

पूरा नाम उमर बिन खालिद बिन हकीम बिन हजामुल असदी अल सैदावी था। कूफे के अशराफ़ मे से और अहलेबैते रसूल के सच्चे मुहिब थे। शुरू में मुस्लिम बिन अकील की नुसरत के लिए निकले थे मगर जब अहले कूफा ने उनका साथ छोड दिया और कामयाबी की कोई सूरत नजर न आई तो यह भी रूपोश हो गए यहाँ तक कि इमाम हुसैन[अ0स0] इराक़ के हुदूद में पहुँचे और आपने कैस बिन मुसहर सैदावी को अपनी आमद की इत्तेला के साथ कूफे रवाना किया कैस रास्ते मे गिरफ्तार हो गए और उनके कत्ल का हुक्म हुआ मगर उन्होंने मरते मरते हुसैन की सिफारत के हक़ को अदा कर दिया यह एलान करके कि इमाम हुसैन[अ0स0] मक़ामे हाजिर तक पहुँच गए हैं जिसको जाना हो उनके पास चला जाए। यह खबर उमर बिन खालिद को पहुँची तो वह अपने गुलाम सअ्द और तीन दूसरे हमराहियो के साथ गैर मारूफ रास्ते से

---

[1] तबरी जि0/6, पेज/47

होकर बहुत तेज रफ्तारी के साथ मन्जिले "अजीबुल हजानात" पर इमाम हुसैन[अ०स०] की ख़िदमत में पहुँच गए

जैसाकि हुर बिन यजीद रियाही इमाम की नक्लो हरकत की निगरानी के लिए पहुँच चुका था चुनाँनचे हुर ने मुदाखिलत की और कहा कि यह लोग आपके साथ नही आए थे इसलिए या तो मैं इन्हे गिरफ्तार करूँगा या कूफे वापस मगर इमाम ने फरमाया "अब जबकि यह मेरे पास पहुँच गए और मेरी अमान में आ गए तो मैं इन्हें तुम्हारे सिपुर्द नहीं कर सकता"

रोजे आशूर जंग छिड़ने के बाद यह और इनके साथी वह पाँच आदमी थे जिन्हों ने बयक वक्त फौजे दुश्मन पर हमला किया और लशकर में घुसकर शमशीर जनी करने लगे। लश्करे यजीद ने उन बहादुरों को चारों तरफ से घेर लिया और जमाअते हुसैनी से बिल्कुल जुदा कर दिया। यह देखकर इमाम हुसैन[अ०स०] ने अपने भाई अबुल फजलिल अब्बास को उनकी मदद के लिए भेजा आपने जाकर तने तन्हा फौज पर हमला किया और तलवार चलाना शुरू की यहाँ तक कि लश्कर को मुन्तशिर कर दिया ओर उन जख्मी बहादुरों को दुश्मन के हलके से निकाल कर अपनी जमाअत की तरफ वापस ले चले। अभी रास्ता पूरा तय नहीं हुआ था कि दुश्मन तआकुब के लिए आते नजर आए अब्बास[अ०स०] ने उन बहादुरों को अपने आगे किया और आप खुद बगरजे हिफाजत पीछे हो गए ताकि उनको कोई गजन्द न पहुँचने पाए। मगर दुश्मन के करीब पहुँचते ही जख्मी बहादुरों के जोश की इन्तेहा न रही और वह अब्बास[अ०स०] की हिफाजत से निकल कर दुश्मनों पर झपट पड़े और बावजूदेकि जख्मों से बिल्कुल बे हाल थे लेकिन जान तोड़ कर शमशीर जनी की और आखिर एक ही जगह पर गिर कर शहीद हो गए[1] अब्बास ने मजबूरन इमाम की खिदमत में वापस आकर इस वाकेए की इत्तेला दी। हजरत ने चन्द बार उन बहादुरों के लिए दरगाहे बारी से रहमत तलब की

(7) सअ्द मौली उमर बिन ख़ालिद

शरीफुन नफ्स और बलन्द हिम्मत गुलाम थे। जिन्हों ने अपने मालिक अम्र बिन ख़ालिद सैदावी का आख़िर वक्त तक साथ दिया। वह अपने मालिक के साथ उसी मुख्तसर काफिले मे आकर असहाब हुसैन[अ०स०] से मुलहक (मिल गए) हुए थे जो मन्जिल अजीबुल हजानात पर ख़िदमते इमाम में पहुँचा और जंग में भी वह अपने हमराहियों के जत्थे में दर्जा ए शहादत पर फ़ाएज़ हुए

[1] तबरी जि/6, पेज/255

(8) मजमाअ् बिन् अब्दुल्लाह

नाम व नसब: मजमाअ् बिन अब्दुल्लाह बिन मजमाअ बिन मालिक बिनअयास बिन अब्दे मनात बिन सअ्दुल अशीरातुल मुजजही अल आऐजी

वह ताबेईन में से थे रसूल अल्लाह[स0अ0] के ज़माने में मुतवल्लिद (पैदा) हुए थ उनके बाप ने रसूल अल्लाह[स0अ0] की सोहबत के शरफ को हासिल किया था और खुद मजमाअ् हजरत अली बिन अबी तालिब[अ0स0] के असहाब में दाखिल थे चुनाँनचे जगे सिफ्फीन के वाकेआत के जैल मे उनका तजकिरा पाया जाता है। यह भी उन पाँच अशख़ास में से थे जो मन्जिले अज़ीबुल हजनात पर इमाम हुसैन[अ0स0] की खिदमत में हाजिर हुए थे और जब आपने उनसे कूफे की हालत के मुतअल्लिक दरयाफ्त फरमाया तो मजमा ने हस्बे जैल अलफाज में अहले कूफा की तस्वीर कशी की थी "बडे बडे आदमियों को तो बड़ी रिशवते दी गई हैं और गठरियाँ भर भर कर मालो दौलत अता किया गया है ताकि वह मुवाफिक़ रहें और ख़ैर ख़्वाही करते रहें इसलिए वह सब मुत्तफिक (एक) हैं आपके खिलाफ और अवाम, उनके दिल तो आपकी तरफ झुकते है मगर तलवारें उनकी कुल आपके खिलाफ खिची हुई होंगी।"

रोज आशूरा उन्होंने अपने जत्थे के साथ दुश्मन से जग की और दरज–ए–शहादत हासिल किया

(9) आएज़ बिन् मजमअ्

मजमअ बिन अब्दुल्लाह आएजी के फरजन्द थे। अपने बाप के साथ मन्जिले अजीबुल हजनात पर इमाम हुसैन[अ0स0] की कदम बोसी का शरफ हासिल किया था और उन्हीं के साथ अपने जत्थे में रहते हुए जग में शिरकत की और शहीद हुए।

(10) जुनादा बिन हारिस सलमानी

सलमान कबील–ए–मुराद की एक शाख और मुराद कबील–ए–मुजहज का एक शोअ्बा है जनादा बिन हारिस कूफे के बाशिन्दे और मशाहीर (मशहूर की जमा) शिया में से थे ' अहदे रसूल अल्लाह[स0अ0] का इदराक (हासिल किया) किया। फिर हजरत अली बिन अबी तालिब[अ0स0] के साथ रहे और जग सिफ्फीन में जिहाद किया शैख तूसी ने किताबुर रिजाल मे उनका नाम असहाबे हुसैन[अ0स0] में दर्ज किया है।

जब मुस्लिम बिन अकील कूफे में इमाम हुसैन[अ0स0] की बैयत ले रहे थे तो जुनादा ने वफ़ादारी के साथ बैयत की और मुस्लिम के साथ जिहाद में शरीक

भी हुए मगर जब फिज़ा मुस्लिम के ख़िलाफ़ हो गयी तो वह भी मिस्ले दीगर अशखास के मखफी (छुप) हो गए और आखिर उसी जत्थे में जो मन्जिले अजीबुल हजानात में खिदमते इमाम में पहुँचा था वह भी हाजिर हुए और उसी जत्थे के साथ रह कर जग भी की और दर्जा–ए–शहादत हासिल किया

(11) जुनदब बिन हजीर कन्दी खूलानी

कूफ़े के बाशिन्दे और मुमताज शिइयी अफ़राद में से थे हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] की सोहबत से शरफयाब हुए और जगे सिफ्फीन में कन्दा और अज्द के रिसालो के अफ़सर थे। जब इमाम हुसैन[अ०स०] कूफे की सिम्त राह पैमा (रास्ते में) थे तो हुर की मुलाकात से पहले ही वह खिदमते इमाम में पहुँच कर हमराही के शरफ से बहरायाब हुए(फौज हुसैनी का हिस्सा है) और रोजे आशूर जग के इब्तेदाई हगाम में जग करके शहीद हुए

(12) यज़ीद बिन ज़ियाद बिन महासिर अबूश शअसा कन्दी बहदली

शिअयान कूफा में से, शरीफ बहादुर और जग आजमा थे। इमाम हुसैन[अ०स०] की खिदमत मे हुर की मुलाकात से पहले हाजिर हुए और फिर हमराह हमरिकाब रहे थे जब करबला की सर जमीन के करीब पहुच कर हुर के पास इब्ने जियाद का कासिद यह खत लाया था कि जहाँ यह खत पहुचे वही हुसैन[अ०स०] को उतरने पर मजबूर किया जाये। तो अबुश शअसा ने उस क़ासिद को पहचाना था कि वह मालिक बिन नस्र बदी है। चूकि वह भी क़बील ए कन्दा से था इसलिए अबुश शअसा ने उसको नसीहत करना जरूरी मसझते हुए उससे कहा कि यह तूने क्या गजब किया इस काम के लिए तू आया? उसने कहा "मैंने अपने इमाम की इताअत के हक़ को पूरा किया। अबुश शअसा ने जवाब दिया कि तूने खुदा की तो नाफरमानी की और अपने इमाम की इताअत, यकीनन तूने इस तरह अपने नफ्स की हलाकत का सामान किया और हमेशा के लिए नगो आर (जलील) और आतिशे जहन्नम का मुस्तहक़ बना। खुदा बन्दे आलम ने यह फरमाया है कि कुछ इमाम ऐसे हैं जो आतिशे जहन्नम की तरफ दावत देते हैं और रोजे क़यामत उनकी कोई फ़रयाद रसी नहीं होगी, बेशक तेरा इमाम ऐसा ही है।"

वह बहुत बड़े तीर अन्दाज थे। रोजे आशूर अपने घुटने टेक कर इमाम के सामने बैठ गए और आठ तीर लगाये जिन में से पाच तीर ठीक निशाने पर पड़े और पाँच आदमियो को दुश्मनों में से हलाक किया जब तीर खत्म हो गए तो वह तलवार लेकर मैदान में आये और यह रजज पढ़ी

"मैं यजीद हूँ और मेरे बाप महासिर थे मैं शेरे बीशा (जगल के शेर) से ज्यादा बहादुर हूँ, खुदावन्दा गवाह रहना कि मैं हुसैन[अ०स०] का नासिर और इब्ने ज़ियाद से बे तअल्लुकी इख्तियार करने वाला हूँ।"

आखिर दरज–ए–शहादत पर फाएज हुए।

तारीख में तसरीह (साफ) है कि वह इब्तेदा–ए–जग के शोहदा में से हैं।

ैतबरी जि 6 पेज 255

हमला-ए-ऊला

हक़ीक़तन तारीख का यह यादगार और हैरत अंगेज वाकेया है कि तीस हजार फौज के मुक़ाबले पर बहत्तर या ज्यादा से ज्यादा सौ डेढ सौ नुफूस हों और वह भी तीन दिन के भूखे प्यासे और उसके बावजूद वह फौजे कसीर इस जमाअते कलील (मुख़तसर) से नुक़सान पर नुकसान और शिकस्त पर शिकस्त उठाये और उनके बनाये कुछ न बने सुबह से दोपहर के क़रीब तक का वक्त आ जाये और हुसैनी जमाअत की सफ मिस्ल एक मजबूत और मोहकम आहनी (लोहे की) दीवार के सामने मौजूद है इसके बरखिलाफ अफवाजे यजीद मे इजतेराब, बद नजमी (अफरा तफरी) के आसार नुमायाँ हों और वह किसी एक तरीक़-ए जग पर कायम न रह सकें। रावी का बयान है कि असहाबे हुसैन[अ०स०] ने सख्त जग की और उनमें के सवारों ने जो तादाद में सिर्फ बत्तीस थे लशकरे यज़ीद पर ताबड़ तोड़ हमले किए और वह जिस सफ़ पर हमला करते थे उसको मुन्तशिर कर देते थ।[1] चुनाँनचे जब गुर्रा बिन कैस ने जो लशकरे यज़ीद के सवारों की फ़ौज का अफ़सर था यह देखा तो उसने उमर बिन सअ्द के पास अब्दुर्रहमान बिन हसीन को यह पैग़ाम देकर भेजा कि "आप देखते हैं कि आज सुबह से इस छोटी सी जमाअत के हाथो मेरी फौज कीक्या हालत है? अब आप प्यादों की फौज और तीर अन्दाजों के दस्तो को भेजिए कि वह मुक़ाबला करें।' लशकरे यज़ीद के लिए किस दर्जा शर्म का मकाम था कि उसके सवारों का अफसर हिम्मत हार चुका था और खुले हुए अलफ़ाज में इक़रारे शिकस्त कर लिया। उसके बाद प्यादों (पैदल फ़ौज) की तरफ रूजू किया गया और शबस बिन रबई को जो प्यादा फ़ौज का अफ़सर था उमरे सअ्द का यह तहदीदी (सख्ती भरा) पैगाम पहुँचा कि ''तुम आगे क्यो नहीं बढ़ते? मगर उसने हिकारत आमेज जवाब दिया कि 'अफ़सोस है इस मुहिम को सर करने के लिए सवारो की इतनी बडी फ़ौज नाकाफ़ी समझी जाये

---

[1] तबरी जि/6, पेज/250 इरशाद पेज/252

और मेरे ऐसे बडे सरदार को जहमत दी जाये और फिर तीर अन्दाजो की भी जरूरत महसूस हो रही हो! क्या मेरे सिवा कोई और इस मुहिम को सर करने के लिए नहीं मिलता? यह सुनकर मजबूरन उमरे सअद ने हसीन बिन तमीम को उसी फौज के साथ जो कादसिया की सरहद में नाका बन्दी की गरज से तैनात रह चुकी थी पाँच सौ तीर अन्दाजों के इजाफे के साथ मामूर किया कि वह आगे बढे और खैम ए हुसैनी के नजदीक जाकर पास से उन पर तीरों का मेह बरसाये [1]

फन्ने जग के वाकिफ कार अच्छी तरह जानते हैं कि तीरोंकी जद के लिए एक महदूद फासला दरमियान में होना जरूरी है मुकर्ररा फासिले से ज्यादा पर तीर अन्दाजी एक तरह से हवाई फायरों की हैसियत रखती है जिससे गजन्द (नुकसान) (तकलीफ) न पहुचने का कवी (पूरा) इमकान होता है। मगर थोडी मसाफत से तीरो की हगामा खेज बारिश एक बेपनाह हमला है जिससे महफूज रहने के लिए न फुनूने जग काम दे सकते हैं, न शजाअत व जुरअत। इसीलिए यह एक मुसल्लेमा हकीकत है कि यह बुजदिलाना तरीक–ए–जग है और शजाआने रोजगार (बहादुरों) के लिए नग (बहादुरों के लिए बाइसे शर्म) यह जाहिर है कि अस्ल लशकर गाह दो मुताखासिम (दुश्मन) फरीकों के एक दूसरे से काफी फासले पर होते हैं यकीनन उसी सूरत पर करबला में भी थे।

दोनों लशकरों की सफ आराई भी इस तरीके पर होती है कि दरमियान मे काफी वसीअ् मुसाफ (दूरी) बाकी रहे और यह मसाफत भी कुछ कम नहीं होती है। पहली मर्तबा के तीरों की बारिश का उनवान यह था कि उमरे सअद ने अपने लशकर ही से जिसकी सफ आराई हो चुकी थी तीर चलाया और उसी के साथ उसके लशकर वालों ने भी तीर रिहा किये लिहाजा उन तीरो से जमाअते हुसैनी का कोई खास नुकसान नहीं हुआ था और न होना चाहिए था सिवाए इसके कि उनके जरिये से ऐलाने जग हो गया।

और अमली तौर से हर्बो जर्ब (जग) शुरू हो गई। मगर इस वक्त जिस तरीके से तीर अन्दाजी मकसूद थी उसकी नौईयत बिल्कुल मुखतलिफ थी। इसलिए कि इस मर्तबा पूरे तौर से जमाअते हुसैनी को जद पर लाकर तीर बरसाए जा रहे थे जाहिर है कि तीर की जद से ढाल या नैजा व शमशीर के जरिये से तहफ्फुज मुमकिन नही है। अलबत्ता तीर को खाली देकर उससे

---

[1] तबरी जि/6. पेज/250

बचा जा सकता है मगर यह उसी वक्त कारगर हो सकता है जब इधर उधर तीरों की जद से ख़ाली जगह मौजूद हो लेकिन तसव्वुर में इस मन्जर को सामने लाया जाये कि सिर्फ सौ डेढ सौ नुफूस (लोगों) पर मुशतमिल जमाअते हुसैनी सफ बाँधे ईस्तादा (खडे हैं) और उनके मुकाबले मे हजारों की तादाद में एक फ़ौज आकर खडी हो जाती है और तीर बरसाना शुरू करती है तो वह कितनी ज्यादा दूर तक फैली हुई होगी। और जब उसकी तरफ़ से एक मर्तबा मजमूई तौर पर यक जेहत (एक साथ) और हम आहग होकर एक निशान पर एक ही मरकज को सामने रखे हुए बहुत दूर से नहीं बल्कि करीब से तीर बरसाये जा रहे हैं तो क्या इस में कोई शक हो सकता है कि उन तीरों ने एक अजीम सैलाब एक बडे तूफ़ान, एक तेज आँधी या लोहे की एक चादर की तरह चप व रास्त (दायें बायें) हर तरफ से इस मुखतसर जमाअत को ढाँप लिया होगा। और उसके जिस्म का कोई हिस्सा ऐसा बाकी न होगा जो उन तीरों की जद में न आता हो। मगर अन्सारे हुसैन[अ0स0] ने इस बेपनाह तीरों के सैलाब का यूँ मुकाबला किया कि तलवारें सूत लीं और लोहे की उन चादरों को अपने सीनों से रेलते हुए दुश्मन की फौज पर जा पडे और उसमें दर आकर (दाखिल हो कर) शमशीर जनी करने लगे।

यही वह अजीमुश्शान हमला और घमसान की जंग है जो तारीख़ों में 'हमल ए ऊला' के नाम से मजकूर है और यह जोहर से एक घण्टा क़ब्ल का वाकेया था

असहाबे हुसैन[अ0स0] ने फिर दुश्मन को शिकस्त दी और फौज को पसपा किया मगर इस हमले का नतीजा खुद जमाअते हुसैनी के लिए भी बहुत दर्द अगेज साबित हुआ चुनाँनचे जिस वक्त मैदान साफ हुआ और गर्दो गुबार दूर हुआ तो मालूम हुआ कि यह मुखतसर तादाद और ज्यादा मुखतसर हो चुकी थी इसलिए कि पचास आदमी अन्सारे हुसैन[अ0स0] में से दर्जा–ए शहादत पर फायज हुए थे जिन मे से बाज तीरो का निशाना बनाये गए थे। और बाज जगे मगलूबा में शहीद किए गए थे। इसके अलावा जितने घोडे असहाबे हुसैन[अ0स0] की सवारी में थे वह सब भी खत्म कर दिए गए थे और चन्द असहाबे हुसैन[अ0स0] भी जो सवार थे अब प्यादा (बगैर घोडे के) हो गए थे।[1]

चुनाँनचे हुर बिन यजीद रियाही भी जिनका घोडा इसके पहले ही जख्मी हो चुका था अब प्यादा हो गए जिसका तजकेरा उनके दुश्मन ऐयूब बिन

[1] तबरी जि/6. पेज/250, इरशाद पेज/252

मशरह खीवानी ने इस तरह किया है कि मैं ही वह शख्स था जिसने हुर के घोडे को पै (पैर काट दिए) किया बस मैं ने एक तीर ऐसा लगया कि फरस थर्रा कर जमीन पर गिर गया। और हुर शेर के मानिन्द जस्त करके उसकी पुश्त से अलाहिदा हुए तलवार हाथ में लिए हुए और इस मज़मून का शेअर पढ रहे थे कि अगर तुम ने मेरा घोडा पै कर डाला तो कोई हरज नही, मैं एक शरीफ इन्सान का फरजन्द हूँ और शेर से ज्यादा शजाअत का मालिक हूँ '' दूसरे एक मुशहिद (चश्मे दीद) का बयान है कि उनका सा मैं ने दूसरा कोई शमशीर जनी करने वाला नहीं देखा।[1]

इस हमले के जैल में जो पचास अन्सारे हुसैन[अ0स0] शहीद हुए उन में नहीं कहा जा सकता कि कौन पहले शहीद हुआ और कौन बाद को, इसलिए उनके हालात हुरूफ़े तहज्जी (Alfabets) की तरतीब से दर्ज किए जाते हैं।

(13) अदहम बिन उमय्या अब्दी बसरी

कबील–ए–अब्दे कैस से बसरा के बाशिन्दे थे। बसरा मे एक खातून थीं मारिया बिन्ते मुनकिज अबदिया जो शिय–ए–अली और मुहिब्बे अहलबैते नुबूवत थीं और उनके मकान पर अक्सर शिअ्याने अली[अ0स0] का इजतिमाअ् होता रहता था जब इमाम हुसैन[अ0स0] ने मक्क–ए मुअज्जिमा से कूफ की रवानगी का क़स्द किया और इब्ने जियाद बसरे से कूफे की गवर्नरी पर मामूर हुआ और बसरा के नये गवर्नर की जानिब से नाका बन्दी का इन्तेजाम हुआ ताकि कोई शख़्स नुसरते हुसैन[अ0स0] के लिए बसरा से न जाने पाये तो मारिया अबदिया के मकान पर यज़ीद बिन सबीत कैसी ने नुसरते हुसैन[अ0स0] की गरज़ से कूफ़े की तरफ जाने का अज़्म जाहिर किया। चूँकि सरीही (साफ) तौर पर उनका यह मकसद खतरे से खाली न था कुछ ज्यादा अशखास उनके इस अज्म से हम आहग (राजी) न हुए फिर भी यजीद बिन शबीत के दो फरजन्द और चार दूसरे अफराद वह थे जिन्हों ने उनके साथ इत्तेहाद अमल किया। चुनाँनचे उन सब ने अपनी जानो पर खेल कर मकाम अबतह पर जो कि मक्क–ए–मुअज्जिमा ही के हुदूद में था इमाम की हमराही इख्तियार की। उन ही चार अशखास में एक अदहाम बिन उमय्या भी थे जो रोजे आशूर हमल–ए–ऊला में दरज–ए–शहादत पर फाएज़ हुए

---

[1]तबरी जि0/ 6 पेज/ 250

(14) उमय्या बिन सअद बिन जैद ताई

कबील–ए–तय के बहादुर, जंग आजमा और शहसवार थे। हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के असहाब में महसूब (शुमार) होते थे। आपके साथ जंगे सिफ्फीन मे शिरकत भी की थी। और कारे नुमायाँ अन्जाम दिया था उसके बाद उनका कूफ़े में कयाम रहा। जब इमाम हुसैन[अ०स०] के करबला मे पहुँचने की खबर हुई तो गुफ्तगू–ए–सुलह के दौरान में किसी उनवान से कूफ़े से करबला पहुँचे और इमाम[अ०स०] की हमराही इख्तियार की, यहाँ तक कि रोजे आशूर हमल–ए–ऊला मे शहीद हुए।

(15) जाबिर बिन हुज्जाज तैमी

कबील–ए तैमुल्लाह बिन सअलबा में से आमिर बिन नहशल तैमी के आजाद कर्दा गुलाम थे। कूफ़े के बाशिन्दे और शहसवार थे। पहले मुस्लिम बिन अकील की हिमायत के लिए कमर बस्ता हुए थे मगर हालात के नासाजगार साबित होने के बाद मिस्ल दूसरे बहुत से अफराद के वह भी अपने क़बीले में रूपोश (छुप) हो गए थे। जब इमाम के करबला मे वारिद होने की इत्तेलाअ हुई तो वह उमरे सअद की फौज के साथ करबला पहुँचे और खुफिया तरीके पर उससे अलाहिदा होकर अन्सारे इमाम हुसैन[अ०स०] में शामिल हो गए। और हमला–ए ऊला मे शहीद हुए।

(16) जबलह बिन अली श ैबानी

कूफ़े के बाशिन्दे, बहादुर और शुजाअ थे जंगे सिफ्फीन में हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के साथ जिहाद में शरीक हुए थे। हजरत मुस्लिम बिन अकील[अ०स०] की नुसरत के लिए भी कमर बस्ता हुए थे मगर हालात की नासाजगारी के बाद वह भी अपने कबीले में रूपोश हो गए। और जब इमाम हुसैन[अ०स०] करबला में पहुँच चुके तो वह भी किसी न किसी सूरत से कूफ़े से आकर अन्सारे हुसैनी मे शामिल हुए और हमल–ए–ऊला मे दर्ज–ए–शहादत पर फ़ाएज हुए।

(17) जुनादा बिन कअब बिन हारिस अन्सारी खज़रजी

इमाम हुसैन[अ०स०] की हमराही में मक्क ए मुअज्जिमा से मुतअल्लकीन समेत आए थे और हमल–ए–ऊला में जंग करके शहीद हुए।

(18) जुवैन बिन मालिक बिन कैस बिन सअलबा तैमी

कबील–ए–बनी तैम में सुकूनत रखते थे इसलिए उसी कबीले की तरफ मन्सूब होते थे और जब कूफ़े के तमाम कबाएल इमाम हुसैन[अ०स०] के खिलाफ

जंग करने के लिए भेजे जा रहे थे तो वह भी कबील ए बनी तैम के साथ उमरे सअद की फौज में शामिल हो कर मैदाने करबला तक पहुँचे और जब इमाम हुसैन[अ0स0] के पेश कर्दा शराएत सुलह ना मन्जूर कर दिये गए और जंग का होना कतई करार पाया गया तो वह उसी कबीले के चन्द दूसरे अफराद के साथ शब के वक्त उमरे सअ्द की फौज से जुदा होकर रूफका–ए–इमाम की जानिब आ गए और हमल–ए–ऊला में दर्ज–ए–शहादत पर फ़ाएज हुए

(19) हा़रिस़ बिन उमरउल कै़स बिन आबिस़ कन्दी

शजाआने रोजगार (बहादुरों) मे से और आबिद (इबादत गुजार) व जाहिद (परहेजगार) थे। अक्सर लड़ाईयों में कारे नुमायाँ अन्जाम दे चुके थे। उनके मजहबी एहसास और सिबातो इस्तेकलाल (हिम्मत साबित कदमी) का इस वाकये से अन्दाजा हो जाता है कि वह किला–ए बजर का मुहासिरा करने वालो में शामिल थे जब मुरतदीन (दीन से फिरे हुए) को इस किले से बाहर निकाल कर कत्ल किया जाने लगा।

तो हारिस ने अपने हकीकी चचा पर हमला किया। उसने कहा "मैं तो तुम्हारा चचा हूँ" हारिस ने जवाब दिया कि मगर अल्लाह मेरा परवरदिगार है और उसका हुक्म मुकद्दम है।' यह कह कर उसे कत्ल कर डाला।

करबला में वह भी उमरे सअ्द की फौज में दाखिल हो कर पहुचे थे लेकिन शराएते सुलह के ना मन्जूर होने के बाद उससे इलाहिदा होकर असहाबे हुसैन[अ0स0] के साथ हो गए और रोजे आशूर हमला ए ऊला में शहीद हुए

(20) हा़रिस़ बिन बिनहा़न

इनके वालिद बिनहान हजरत हमजा बिन अब्दुल मुत्तलिब के गुलाम व बहादुर व शहसवार थे जंगे ओहद में हमजा की शहादत वाके हुई।

उसके दो बरस बाद बिनहान ने दुनिया से रेहलत की उसके बाद से हारिस ने जनाबे अमीर[अ0स0] की खिदमत में रहना इख्तियार किया और फिर इमाम हसन[अ0स0] और इमाम हुसैन[अ0स0] की खिदमत में रहे जब हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] ने मदीने से हिजरत फ़रमाई तो हारिस भी हमराह रहे और रोजे आशूर हमल ए ऊला में शहीद हुए।

(21) हुबाब बिन हा़रिस़

इब्ने शहर आशोब ने हमला ए ऊला में उनका भी नाम दर्ज किया है। हालात बिल्कुल मालूम नहीं हुए

(22) हुबाब बिन आमिर बिन काअ्ब तैमी:

कबील ए तैमुल्लात बिन सअ्लबा में से कूफे के बाशिन्दे, शिय ए अली थे और मुस्लिम बिन अकील की बैयत की थी। जनाबे मुस्लिम की शहादत के बाद वह अपने कबीले में पोशीदा हो गए जब इमाम हुसैन[अ०स०] की कूफ़े की जानिब रवानगी की इत्तेला उनको हुई तो वह खुफिया तौर पर कूफ़े से बाहर निकले और राह मे इमाम हुसैन[अ०स०] की खिदमत मे पहुँच कर हमराह रिकाब हुए यहाँ तक कि रोजे आशूर हमल–ए–ऊला में शहीद हुए।

(23) हबशा बिन कैस नहमी

पूरा नाम व नसब हबशा बिन कैस बिन सलमा बिन तरीफ बिन अबान बिन सलमा बिन हारिसे हमदानी नहमी था। हाफिज इब्ने हज्र का बयान है कि उनके दादा सलमा बिन तरीफ सहाब–ए–पैगम्बर मे से थे और खुद हबशा बिन कैस राविये हदीस थे रोजे आशूर हमल–ए–ऊला में शहीद हुए

(24) हुज्जाज बिन जैद सअ्दी तमीमी

कबील–ए–बनी सअ्द बिन तैम में से बसरा के बाशिन्दे थे। इमाम हुसैन[अ०स०] ने मक्क–ए–मुअज्ज़िमा से रवानगी के मौके पर चन्द ख़त रूअसाए बसरा के नाम रवाना फरमाये थे जिन में से एक मस्ऊद बिन अम्र अजदी के नाम था मस्ऊद ने अपने कबीले के तमाम अकवाम बनी तमीम बनी हन्जला, बनी सअ्द और बनी आमिर को मुजतमा करके एक तकरीर की जिस में उनको नुसरते इमाम हुसैन[अ०स०] पर आमादा करना चाहा। जिसके नतीजे में एक जमाअत ने नुसरते इमाम का वादा किया। मस्ऊद ने एक खत इमाम के नाम तहरीर किया जिस में हजरत की तशरीफ आवरी इराक पर इजहारे मसर्रत करते हुए यह लिखा था कि मैंने बनी तमीम और बनी सअ्द को तमामतर आपकी नुसरत पर आमादा कर लिया है और वह सब आप पर अपनी जान निसार करेंगे यह खत हुज्जाज बिन जैद सअदी के हाथ रवाना किया गया था। चुनाँनचे वह करबला मे आकर इमाम की खिदमत मे हाजिर हुए और रोज़े आशूर हमल ए ऊला में शहीद हुए।

(25) हल्लास बिन अम्र अज्दी रासबी

असहाबे हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] में से थे और हजरत के जमान ए–खिलाफत में कूफ़े में पुलिस के अफसर की हैसियत रखते थे। वह मैदाने करबला में उमरे सअ्द की फौज के साथ आये थे मगर गुफ्तगू ए

मुसालिहत के नाकाम होने पर मख्फी (छुप कर) तरीके से शब के वक्त असहाबे हुसैन[अ0स0] में शामिल हो गए और हमल ए ऊला में शहीद हुए।

(26) हन्जला बिन उमर शैबानी

इब्ने शहर आशोब ने उनका भी नाम हमल ए–ऊला के शोहदा में जिक्र किया है हालात मालूम नहीं।

(27) ज़ाहिर बिन अम्र असलमी किन्दी

असहाबे रसूल[स0अ0] में से राविये हदीस थे और बैयते रिजवान (मस्जिदे शजरा मदीने में रसूल अल्लाह[स0अ0] के हाथ पर बैयत करने वाले) के शरफ से बहरा अन्दोज (शरफयाब) हुए थे। सुलहे हुदैबिया के बाद जगे खैबर में शरीके जिहाद भी हुए थे। शजाअत उनकी मुमताज सिफ़त और नुमायाँ जौहर था और अहले बैते रसूल[स0अ0] की मुहब्बत उनके लिए सरनाम ए एजाज जब जियाद बिन अबीह मुआविया की तरफ से कूफे का गवर्नर था और अम्र बिन हुमुक खुजाई ने उसकी मुखालिफत का अलम बलन्द किया था तो "जाहिर" भी उनके साथ थे जब मुआविया ने अम्र बिन हुमुक खुजाई की गिरफ्तारी का हुक्म भेजा तो "जाहिर" के नाम भी वारन्ट जारी हुआ था। मगर वह रूपोश हो गए और क़ब्ज़े में न आ सके।

सन 60 हिजरी में हज्जे बैतुल्लाहिल हराम से शरफ़याब हुए इसी सिलसिले में इमाम हुसैन[अ0स0] से मुलाकात हुई और वह असहाबे हुसैन[अ0स0] में शामिल हो गए

यहाँ तक कि हजरत की हमराही मे करबला आये और रोज़े आशूर हमल ए ऊला मे शहीद हुए असहाबे अइम्मा में से मुहम्मद बिन सनान जाहरी मुतवफ्फी सन 220 हिजरी जो इमाम रजा[अ0स0] और इमाम मुहम्मद तक़ी[अ0स0] के रूवात (रावी रिवायत करने वाले) मे से थे उन्ही जाहिर की नस्ल से थे।

(28) ज़ुहैर बिन बशरे खसअमी

हमल-ए ऊला के शोहदा में इनका भी शुमार है। हालात मालूम नहीं।

(29) ज़ुहैर बिन सुलैम बिन अम्र अजदी

शबे आशूर जब लशकरे यज़ीद ने इमाम हुसैन[अ0स0] को शहीद करने का कतई फैसला कर लिया तो वह वहाँ से निकल कर असहाबे हुसैन[अ0स0] की तरफ आ गए और आपकी नुसरत करते हुए हमल ए–ऊला मे शहीद हुए

(30) सालिम मौला आमिर बिन मुस्लिमुल अब्दी

अपने मालिक के साथ उसी क़ाफ़ेले मे जो यजीद बिन शुबैत कैसी के साथ बसरे से मकामे अबतह में पहुँचा था इमाम हुसैन[अ०स०] की खिदमत में हाजिर हुए और रोजे आशूर हमल–ए–ऊला मे शहीद हुए।

(31) सलीम

इमाम हसन[अ०स०] के बावफ़ा गुलाम थे और करबला मे नुसरते इमाम हुसैन[अ०स०] का हक़ अदा करते हुए हमल–ए–ऊला में शहीद हुए

(32) सवार बिन अबी उमैर नहमी

पूरा नाम व नसब सवार बिन मुन्अम बिन आबिस उमैर बिन नहमुल हमदानी अन नहमी। राविंयान अहादीस में से थे इमाम हुसैन[अ०स०] के करबला में पहुँचने के बाद गुफ्तगूए सुलह के दौरान में करबला पहुँचे थे रोजे आशूर हमल–ए–ऊला में नुसरते हुसैन[अ०स०] मे जंग का शरफ हासिल किया। यहाँ तक कि जख्मी हो कर गिर गए।

दुश्मन उनको गिरफ्तार करके उमरे सअ्द के पास ले गए उसने चाहा कि उनको कत्ल करा दे मगर उनके हम कबीला सिपाही मानअ् (रूकावट) हुए और उन्हें बचा कर अपने साथ ले गए लेकिन वह जख्मी इतने हो चुके थे कि जानबर न हो सके और छे महीने तक उन्हीं जख्मों के तकालीफ़ मे मुबत्तिला रहने के बाद इन्तेकाल किया।

(33) सैफ़ बिन मालिके अब्दी

कबील ए अब्द कैस से बसरा के बाशिन्दे और उन शीअ्यान अली[अ०स०] में से थे जो मारिया बिन्ते मुनकज अबदिया के मकान पर मुजतमा हुआ करते थे। यजीद बिन सबीत कैसी के साथ नुसरते इमाम हुसैन[अ०स०] के लिए रवाना हुए और मकामे अबतह पर आपकी खि़दमत में हाजिर हुए और हमल–ए–ऊला में दर्जा–ए–शहादत पर फ़ाएज हुए

(34)शबीब बिन अब्दुल्लाह

हारिस बिन सरीअ् हमदानी जाबरी के गुलाम, सहाबी–ए–रसूल[स०अ०] और हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के साथ जमल, सिफफीन और नहरवान की तीनों लड़ाईयों में शिरकत का शरफ हासिल किए हुए थे। कूफे के बाशिन्दे थे और करबला मे सैफ बिन हारिस बिन सरीअ् और मालिक बिन अब्द बिन

सरीअ् दोनों अपने आक़ा जादों की मईयत (साथ) में इमाम हुसैन[अ०स०] की ख़िदमत में पहुँचे थे रोज़े आशूरा हमल ए ऊला में शहीद हुए।

(35) शबीब बिन अब्दुल्लाह नहशली

तबक ए ताबेईन (सहाबिये रसूल से मुलाकात करने वाला) में से हजरत अली[अ०स०] के असहाब में महसूब (शुमार) होते थे। और आपके साथ तीनों लड़ाईयों में शरीक हुए थे। फिर इमाम हसन[अ०स०] और उनके बाद इमाम हुसैन[अ०स०] के असहाब में और आपके मखसूसीन में समझे जाते थे। जब इमाम हुसैन[अ०स०] ने मदीने को छोडा और सफरे गुरबत इख्तियार किया तो शबीब बिन अब्दुल्लाह वहीं से आपके हमराहे रिकाब रहे। यहाँ तक कि करबला में आपके साथ हमल–ए–ऊला में शहीद हुए।

(36) जरगामा बिन मालिक तग़लबी

इन्हों ने कूफे में मुस्लिम बिन अकील[अ०स०] की बैयत की और उनके शहीद होने के बाद वह भी रूपोश हो गए। फिर उमरे सअद की फौज के साथ मैदाने करबला में पहुचे और पोशीदा तरीके पर असहाबे हुसैन[अ०स०] से मुलहक़ हो गए। यहाँ तक कि हमल–ए–ऊला मे दर्जे–ए–शहादत पर फाएज हुए

(37) आमिर बिन मुस्लिम अब्दी बसरी

बसरा के बशिन्दे, उन्हीं शिअयाने अली[अ०स०] में से थे जो मारिया बिन मुन्कज़ के मकान में जमा हुआ करते थे यजीद इब्ने सबीत कैसी के साथ वह भी नुसरते इमाम के लिए रवाना हुए और मकाम अबतह पर आपकी खिदमत में पहुँचे फिर रोजे आशूर हमल–ए–ऊला में शहीद हुए।

(38) एबाद बिन मुहाजिर बिन अबिल महाजिर जहनी

मक्के से कूफे के रास्ते मे अरब के उन सहराई काबाएल में से जिनकी तरफ से गुजर होता था बहुत से लोग खुश आइन्द दुनयवी तवक्कुआत (अच्छे दिनों की उम्मीदों) को पेशे नजर रखकर उस काफिले के साथ हो जाते थे। चुनाँनचे "मियाह जहनिया" नाम के चश्मों के पास से कबील–ए–जहीना के बहुत से लोग इसी तरह आपके साथ हो गए थे उन ही में से एबाद बिन महाजिर भी थे। जब मुस्लिम व हानी के शहीद हो जाने की खबर सुनने के बाद इमाम हुसैन[अ०स०] ने मन्जिले जिबाला पर लोगों को हकीकी सूरते हाल से मुत्तेला फरमाते हुए अन्जाम से नावाकिफ अफराद को अपने काफले से जुदा होने की हिदायत फरमाई और उसके नतीजे में सिवाए उन जान निसारो के जो आपके साथ मदीने से आये थे तक़रीबन सब मुन्तशिर हो गए तो एबाद

बिन महाजिर उन गिन्ती के बावफा अफ़राद मे से थे जिन्हों ने इमाम का साथ छोड़ना पसन्द नहीं किया और वह हजरत के साथ रहे यहाँ तक कि वह राज़े आशूर हमल–ए–ऊला में दरज–ए–शहादत पर फाएज हुए।

(39) अब्दुर्रहमान बिन अब्दे रब अन्सारी खुजरजी

सहाब–ए–रसूल में से हदीसे गदीर के रावी और शाहिद (गवाह) थे।[1]

हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के मखसूस शागिर्द थे। हजरत ने खुद उनको कुरआन की तालीम दी और उनकी तरबियत भी फरमाई थी वह इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ मक्के से रवाना हुए और मैदाने करबला तक बराबर हमराहे रिकाब रहे। सुबहे आशूर इन ही से बुरैर की मिजाहिया गुफ्तगू हुई थी जिसका तजकिरा पहले हो चुका है इन्हों ने भी हमल ए ऊला में दर्ज ए शहादत हासिल किया।

(40) अब्दुर्रहमान बिन अब्दुल्लाह बिन कुदन अरहबी

तब्क ए ताबेईन में से मुअज्जिज (इज्जतदार) बहादुर और जग आजमा थे। कूफ़े से जो दूसरा वफ्द (गिरोह) इमाम हुसैन[अ०स०] के पास भेजा गया था जिसके साथ तकरीबन 53/अर्जदाश्तें (खुतूत) इमाम की खिदमत में इरसाल की गई थी जिनमे से हर एक दो तीन और चार दस्तखतों से थी उस वफ़्द में कैस बिन मुसहर सैदावी और अम्मारा बिन उबैद सलूली के साथ अब्दुर्रहमान बिन अब्दुल्लाह भी थे। उसके बाद इमाम हुसैन[अ०स०] ने मुस्लिम बिन अकील को कूफ़े भेजा तो अम्मारा और अब्दुर्रहमान को उनके साथ कर दिया उसके बाद अब्दुर्रहमान बिन अब्दुल्लाह किसी न किसी तरह कूफे से निकल कर मैदाने करबला तक पहुँचे और इमाम हुसैन[अ०स०] के असहाब मे दाखिल हो गए यहाँ तक कि हमल ए ऊला में शहीद हुए।

(41) अब्दुर्रहमान बिन मसऊद

वह मसऊद बिन हज्जाज तैमी के फ़रजन्द थे जिनका तजकिरा सिलसिल–ए–शोहदा में बाद को आयेगा। दोनों बाप बेटे उमरे सअद की फौज के साथ आये थे और मुहर्रम की सातवीं तारीख इमाम की खिदमत में सलाम करने के कस्द (इरादे) से हाजिर हुए फिर वापस नहीं गए। अब्दुर्रहमान रोजे आशूर हमल–ए ऊला मे शहीद हुए।

---

[1] जरीद असमाद–उस–सहाबा अल–जहबी पेज/277

(42) अब्दुल्लाह बिन बशर ख़सअ़मी

पूरा नाम व नसब हस्बजैल था। अब्दुल्लाह बिन बशर बिन रबिया बिन अम्र बिन मनारा बिन उमैर बिन आमिर बिन रीशा बिन मालिक बिन वाहिब बिन जलीहा बिन कल्ब बिन रबिया बिन अफ़रस बिन खलफ बिन अक्बल बिन इनमार अल खतई

इनके बाप बशर बिन रबिया अपने ज़माने के मशहूर रोज़गार और मैदाने जंग के नबर्दआज़मा (जंग में आज़माये हुए) शहसवारों में से थे कूफे का मशहूर एहाता जो "जब्बान–ए–बशर" कहलाता था उन ही के नाम से मन्सूब था जंगे कादसिया के जैल में उनका नाम सफहाते तारीख पर नुमायाँ है। उनके फरज़न्द अब्दुल्लाह सिफाते शुजाअत व जुरअत व नाम आवरी में उन ही के कदम ब–कदम थे। मैदाने करबला में फौजे उमरे सअ्द के साथ पहुँच कर खुफ़िया तरीक़े पर अन्सारे हुसैन अ०स० में शामिल हो गए। यहाँ तक कि हमल–ए–ऊला में दर्जे–ए–शहादत हासिल किया

(43) अब्दुल्लाह बिन यज़ीद बिन सबीत कैसी

यज़ीद बिन सबीत के दस बेटे थे। चुनाँनचे उन्होंने उन दसों के सामने नुसरते हुसैन अ०स० का सवाल पेश किया लेकिन उनमें से सिर्फ दो थे जिन्हों ने इस अहम इरादे में बाप का साथ दिया। उन ही दो में एक अब्दुल्लाह थे चुनाँनचे वह अपने बाप की हमराही मे बसरा से निकले और मकामे अबतह पर पहुंच कर खिदमते इमाम मे हाज़िर हुए। रोज़े आशूर हमल–ए–ऊला मे शहीद हुए

(44) उबैदुल्लाह बिन यज़ीद बिन सबीत कैसी

यह यज़ीद बिन सबीत के दूसरे फ़रज़न्द थे जिन्हों ने नुसरते हुसैन अ०स० के तहिय्या में उनका साथ दिया और यह भी हमल–ए–ऊला मे शहीद हुए।

(45) अक्बा बिन सल्लत जहनी

'मियाह जेहनिया' के आराब (रेगिस्तान) में से जो असनाए राह (बीच रास्ते) से काफिल–ए हुसैनी के साथ हो गए थे एक वह भी थे और मन्ज़िले ज़ुबाला में इमाम हुसैन अ०स० के हकीकते हाल के इज़हार पर मुशतमिल खुत्बे को सुनकर जब सिवाए खास जाँ निसारों के और सब ने अपनी अपनी राह ली तो वह इमाम के साथ ही रहे यहाँ तक कि रोज़े आशूर हमल–ए–ऊला में शहीद हुए।

(46) अम्मारा बिन अबी सलामा दालानी

नाम व नसब: अम्मारा बिन अबी सलामा बिन अब्दुल्लाह बिन इमरान बिन रास बिन दालान हमदानी। हाफिज इब्ने हजर लिखते हैं कि उन्होंने रिसालत माब[स०अ०] के जमाने का इदराक (देखा) किया था और अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के साथ जमल सिफ्फीन और नहरवान की लड़ाईयों मे शिरकत की थी करबला में इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ हमल–ए–ऊला में शहीद हुए

(47) अम्मार बिन हस्सान ताई

नाम व नसब: अम्मार बिन हस्सान बिन शरीह बिन सअ्द बिन हारिसा बिन लाम बिन अम्र बिन जरीफ बिन अम्र बिन सुमामा बिन जहल बिन जज्आन बिन सअ्द बिन तय मखसूस व मुमताज शिअ्याने अली[अ०स०] में से। मशहूर बहादुर व जंग आजमा थे। उनके बाप हस्सान बिन शरीह हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के असहाब में से थे और जंगे सिफ्फीन में आप ही की नुसरत में शहीद हुए। अम्मार इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ मक्क–ए–मुअज्जिमा से आये थे। और रोज़े आशूर हमल–ए–ऊला में शहीद हुए उनकी औलाद में से अब्दुल्लाह बिन अहमद बिन आमिर बिन सुलैमान बिन सालेह बिन वहब बिन अम्मार बिन हस्सान बिन शरीह ताई जलीलुल कद्र आलिम और फ़कीह थे जो अपने वालिद के जरिये इमाम रज़ा[अ०स०] से रिवायत करते थे और किताबुल क़ज़ाया वल–अहकाम के मुसन्निफ़ थे।

(48) अम्र बिन ज़बीया बिन कैस बिन सअ्लबा जबई तैमी

बहादुर, शहसवार और जंग के मैदान में कारे नुमायाँ अन्जाम दिये हुए थे। उमरे सअद की फौज के साथ मैदाने करबला में पहुँचे फिर अन्सारे इमाम हुसैन[अ०स०] में शामिल हो गए और हमल–ए–ऊला मे शहीद हुए।

(49) इमरान बिन कअ्ब बिन हारिस अशजई

इनका शुमार भी हमल–ए–ऊला के शोहदा में है। हालात मालूम नहीं

(50) कारिब मौलल हुसैन[अ०स०]

कारिब बिन अब्दुल्लाह बिन अरीकत लैसी दुऐली। इनकी माँ फकीहा इमाम हुसैन[अ०स०] की हरम सरा में रबाब मादरे सकीना की कनीज थीं। और उनकी शादी अब्दुल्लाह बिन अरीकत के साथ हुई और इस तरह कारिब की विलादत हुई थी वह अपनी माँ की हमराही में इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ मदीने से मक्का और फिर वहाँ से मैदाने करबला तक पहुँचे और रोज़े आशूर हमल–ए–ऊला में शहीद हुए।

(51) क़ासित बिन ज़ुहैर बिन हारिस तग़लबी

वह और उनके दो भाई मुकसत और करदूस हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के असहाब में से थे और आपके साथ लड़ाईयों में शरीक हुए थे। फिर इमाम हसन[अ०स०] के साथ रहे। यहाँ तक कि आपने हिजाज (आज का सऊदी) की तरफ मुराजेअत (वापस हुए) फरमाई। उसके बाद वह तीनों भाई कूफ़े मे क़याम पजीर रहे। यहाँ तक कि जब इमाम[अ०स०] करबला में वारिद हुए तो वह तीनों भाई किसी न किसी तरह इमाम हुसैन[अ०स०] की खिदमत मे पहुंचे और रोजे आशूर हमल-ए-ऊला में शहीद हुए।

(52) क़ासिम बिन हबीब बिन अबी बशर अज़्दी

कूफे के शिअ्याने अली[अ०स०] में से बहादुर, दीलेर और शहसवार थे। उमरे सअ्द की फौज के साथ करबला पहुँचे फिर पोशीदा तरीक़े पर इमाम के अन्सार से मुलहक़ हो गए और रोजे आशूर हमल ए ऊला में दरज ए शहादत पर फ़ाएज हुए।

(53) करदूस बिन ज़ुहैर बिन हारिस तग़लबी

वह और उनके भाई क़ासित बिन ज़ुहैर और दूसरे भाई मुकसित तीनों असहाबे हज़रत अली[अ०स०] मे से थे। और आपके साथ लड़ाईयों में शिरकत की थी। करबला में खुफिया तरीक़े पर खिदमते हुसैन[अ०स०] में पहुचे और हमल–ए–ऊला में दर्जे–ए–शहादत पर फाएज हुए।

(54) कनाना बिन अतीक़ तग़लगी

कनाना बिन अतीक बिन मुआविया बिन जमाआ बिन कैस तगलगी कूफी शुजाआने रोजगार में से आबिद व जाहिद और हाफिजे क़ुरआन थे। लड़ाई ठनने से पहले मैदाने करबला मे खिदमते इमाम हुसैन[अ०स०] में पहुँचे और रोजे आशूर हमल–ए–ऊला में शहीद हुए

(55) मजमा बिन ज़ियाद बिन अम्र जहनी

"मियाहे जेहनिया" (पानी का चश्मा) के आराब (सहराई) में से थे जो असनाए राह (रास्ते के दरमियान) मे इमाम[अ०स०] के साथ हो गए थे और जब मन्जिले ज़ुबाला मे इमाम के खुतबे को सुनकर सिवाए मखसूस जान निसारों के दूसरे तमाम लोग मुतफर्रिक़ (अलग) हो गए तो मजमा बिन जियाद इमाम[अ०स०] के हमराह ही रहे और रोजे आशूर पहले उनका घोड़ा जख्मी हो कर पै हुआ फिर चन्द आदमियो को कत्ल करके वह दुश्मनों मे घिर गए और हमल ए ऊला में दर्ज ए शहादत पर फाएज हुए।

(56) मसऊद बिन हुज्जाज तैमी

कूफे के बडे मशहूर शिय ए अली[अ०स०] और लडाईयो में काम किए हुए थे अपने फरजन्द अब्दुर्रहमान बिन मसऊद के साथ उमरे सअ्द की फौज में मैदाने करबला तक पहुचे और सातवीं मुहर्रम को इमाम की खिदमत में सलाम करने के लिए हाजिर हुए तो फिर वापस नहीं गए। रोजे आशूर हमल–ए–ऊला में शहीद हुए।

(57) मुस्लिम बिन कसीर सदफ़ी अजदी

कबील ए अज्दशुनूह मं से "आरज" यानी लग था। उन्होंने रिसालत माब[स०अ०] का इदराक (रसूल के दौर के थे) किया था जगे जमल मं हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] की नुसरत मे शरीके जग थे कि पिडली पर तीर पड़ा जिसका असर रहा। कूफे से नुसरते इमाम हुसैन[अ०स०] का तहय्या करके रवाना हुए और करबला में पहुँच कर आपसे क़दमबोस हुए। हमल ए ऊला में दर्जः ए शहादत पर फाएज हुए

(58) मुक़सित बिन जुहैर बिन हारिस तग़लबी

वह और उनके दो भाई क़ासित और कुरदूस असहाबे हजरत अली[अ०स०] में से थे और आपके साथ लड़ाईयों में शरीक हुए थे वह सब मैदाने करबला में खुफ़िया तरीके पर इमाम हुसैन[अ०स०] की खिदमत में पहुँचे और हमल–ए–ऊला में दर्ज–ए–शहादत पर फ़ाएज़ हुए

(59) मुनीअ् बिन ज़ियाद

इनका भी शुमार हमल–ए–ऊला के शोहदा मे है हालात मालूम नहीं

(60) नर्सह बिन अबी नीजर

अबू नजीर नज्जाशी बादशाहे हबशा (आज का Ethopia) या किसी और मुल्के अजम क बादशाह की नस्ल से थ। बचपन में दीने इस्लाम से मुशर्रफ़ होने का शौक़ पैदा हुआ। रसूल अल्लाह की खिदमत में पहुँचे और मजहबे इस्लाम इख्तियार किया तो आँहजरत[स०अ०] ने उनकी तरबियत फरमाई और आपकी वफ़ात के बाद वह हजरत अली[अ०स०] की खिदमत में रहे और आपके ममलूका (मिलकियत) एक नखलिस्तान (खुजूर का बाग) मे इस्लाह व तरबियत के काम पर मामूर हुए

उनके फरजन्द नस्र ने अपनी कमसिनी और नौजवानी का जमाना हजरत अलीअ0स0 और इमाम हसन[अ०स०] के साथ और बकिया जिन्दगी का दौर इमाम हुसैन[अ०स०] की खिदमत मे गुजारा। यहाँ तक कि सफरे इराक मे आपके साथ

मदीना से मक्का और मक्का से करबला पहुँचे। हमल ए ऊला में पहले उनका घोड़ा काम आया फिर वह खुद दरज ए शहादत पर फाएज हुए।

(61) नोअ्मान बिन अम्र अज़दी

कूफे के बाशिन्दे असहाबे हजरत अली[अ०स०] में से थे और आपके साथ जग सिफ्फीन में शरीक भी हुए थे। वह और उनके भाई हिलास बिन अम्र अजदी करबला मे उमरे सअद की फौज के साथ पहुँचे थे और शराएते सुलह मुस्तरद होने पर असहाबे हुसैन[अ०स०] से मुलहक हो गए यहाँ तक कि हमल–ए–ऊला में दर्ज–ए–शहादत पर फाएज हुए।

(62) नईम बिन उजलान अन्सारी

नाम व नसब: नईम बिन उजलान बिन नोअमान बिन आमिर बिन जरीक़ अल अन्सारी अल खजरजी वह और उनके दो भाई नज्र और नोअमान असहाबे हजरत अली[अ०स०] में से थे और जगे सिफ्फीन मे कारे नुमायाँ अन्जाम दिये थे और तीनो शुजाआने रोजगार और शोअरा (शाएर थे) में शुमार होते थे।

नोअ्मान बिन उजलान को हजरत अली[अ०स०] ने अम्र बिन अबी सलमा मख्ज़ूमी को माजूल फरमा के बहरैन का हाकिम मुकर्रर किया था।

नज्र और नोमान दोनो ने इमाम हसन[अ०स०] की खिलाफत के जमाने में इन्तेकाल किया और नईम कूफे में मुकीम रहे। जब इमाम हुसैन[अ०स०] सरजमीने इराक पर पहुँचे तो वह कूफे से किसी न किसी तरह निकल कर आपकी खिदमत मे पहुँच गए और रोजे आशूर हमल–ए–ऊला में शहीद हुए।

(यहाँ पर हमल ए ऊला के पचास शोहदा की तादाद पूरी हो गई। अब उन अफराद का तजकिरा किया जायेगा जो हमल ए ऊला के बाद से नमाज़े जोहर तक शहीद हुए थे।)

ख़ैमागाहे हुसैनी पर हुजूम

जब तक हुसैनी जमाअत अपनी मुखतसर तादाद में सही पूरी मौजूद थी। उस वक्त तक दुश्मनों के लिए आगे बढ़ना मुमकिन न हो सका। लेकिन अब जब हमल ए ऊला के जैल में पचास नुफूस उस जमाअत के यकबारगी (एक साथ) शहीद हो गए और जितने अन्सारे हुसैन[अ०स०] बाकी रह भी गए उनमें से किसी के पास सवारी के लिए घोड़ा न रहा तो अब लश्करे मुख़ालिफ को जुरअत हुई कि वह खयामे हुसैनी का रूख करे इस मौके पर हुसैन[अ०स०] के असहाब की तादाद बहुत कम हो चुकी थी। मगर फिर भी उनकी शुजाअत का आलम यह था कि तारीख का बयान है "उन्होंने जग की यहाँ तक कि दोपहर का वक्त हो गया। सख्त तरीन दुनिया की जग जो खल्के खुदा मे कभी किसी की नजर से गुजरी हो।"

यजीदी लश्कर की कोशिश थी कि वह किसी तरह पसे पुश्त से पहुँच कर उन बहादुरो को घेरे मे लेले मगर पुश्त की जानिब उनके खैमे थे जिन्हें इमाम के हुक्म से इस तरह एक दूसरे से मुत्तसिल और तन्नाब अन्दर तन्नाब (खैमे की रस्सी) कर दिया गया था कि उन्होने एक मजबूत दीवार और हिसार की शक्ल इख्तियार कर ली थी। इसलिए उस तरफ से हमला गैर मुमकिन था। उमरे सअ्द ने यह देखा तो हुक्म दिया कि तन्नाबे काट कर खैमों को उनके चप व रास्त (दाये बाये) से गिरा दिया जाये ताकि पूरे तौर से मुहासरा करना मुमकिन हो सके। असहाबे हुसैन[अ०स०] ने जो यह देखा तो मुतफर्रिक तौर पर अपने अपने खैमों के अन्दर दाखिल हो कर मुन्तजिर रहे यहाँ तक कि जब किसी खैमे में कोई दाखिल होता कि तन्नाबें काट कर उसको गिराये तो फौरन वह कत्ल कर दिया जाता और उसकी लाश बाहर फेंक दी जाती। जब उमरे सअ्द को अपनी इस तदबीर में भी नाकामी हुई तो उसने कहा कि अच्छा! किसी खैमे के अन्दर जाकर गिराने की कोशिश न करो बल्कि उन सब खैमों में आग लगा दो।[1]

---

[1] तबरी जि/6, पेज/250

जाहिर है कि इमाम हुसैन[अ०स०] का ख़ैमा और हरम सराए इसमत आपके असहाब के मुसलसल ख़ैमों की कतार से एलाहिदा थे दुश्मन के सिपाही जब उन ख़ैमो में आग लगाने लगे तो इमाम ने फरमाया कि आग लगा लेने दो इसलिए कि जब वह आग लगा देंगे और शोले भड़कने लगेंगे तो फिर भी वह इस तरफ से तुम पर हमला न कर सकेंगे। और जो उनका मकसद है वह पूरा न होगा। चुनानचे असहाबे हुसैन[अ०स०] ने मुदाफिअत छोड़ दी और लशकर आग लगाने में कामयाब हो गया, मगर नतीजे ने जाहिर कर दिया कि उमरे सअद ने तदबीरे जंग के लिहाज से गलती की और इमाम हुसैन[अ०स०] की राय दुश्मनों के तजुरबे में भी बिल्कुल साएब (दुरूस्त) साबित हुई यानी आग लगा देने से दुश्मन के लिए इस तरफ का रास्ता बन्द हो गया और उसके बाद भी मुकाबला सामने ही की जानिब से किया जा सका। इस तदबीर के भी नाकामयाब साबित होने पर कमीना तीनत शिम्र बरअफरोख्ता (चिराग़ पा) हो गया और उसने हमला करके खास खैम–ए–हुसैन[अ०स०] पर नैजा मारते हुए कहा कि आग लाओ ताकि मैं इस खैमे को उसके रहने वालो समेत जला दूँ। इस आवाज के सुनने से हरम सराये इसमत में एक शोर नालओ फरयाद का बलन्द हुआ इमाम हुसैन[अ०स०] ने उसको ललकार कर फरमाया कि "ऐ शिम्र तू आग इसलिए मंगा रहा है कि मेरे खैमे को मेरे अहलो अयाल समेत जला दे। खुदा तुझे आग से जलना नसीब करे।" लश्करे यजीद के दूसरे सरदारों ने भी शिम्र को मना किया और शब्स बिन रबई ने शिम्र के पास जाकर कहा "मैंने आज तक ऐसी शर्मनाक बात नहीं सुनी जैसी तुम जबान से निकाल रहे हो और न उससे बदतर इकदाम देखा जिसका तुमने इरादा किया है। तुम औरतों को खौफजदा करते हो?। उन सबकी मुखालिफत से मरऊब होकर शिम्र अपने इरादे से बाज आकर खैमे के दरवाजे से हट गया।

इतनी देर में जुहैर बिन क़ैन ने दस बहादुर साथियों को साथ लेकर हमला कर दिया इतना सख्त हमला कि शिम्र और उसके साथ वाली फ़ौज को खैमों के पास से दूर कर दिया और अबू गज ए जबाबी को जो शिम्र का खास आदमी था क़त्ल कर दिया अफ़वाजे यजीद ने जो अपने एक सरबरआवुर्दा (खास) साथी को इस हमले में कत्ल होते देखा तो वह पूरे जोशो ख़रोश के साथ उन दसों आदमियों पर टूट पड़े और सख़्त खूँरेज लड़ाई हुई मगर उन बहादुरों ने भी बड़ी पामर्दी से मुकाबला किया जिसके नतीजे में दुश्मन को शिकस्त हुई।

फिर कसरत और किल्लत का मुकाबला ही क्या? सूरत यह थी कि इस मुख़तसर जमाअत में के एक दो भी कत्ल होते थे तो उससे नुमायाँ कमी ज़ाहिर होने लगती थी बरख़िलाफ़ अफवाजे यजीद के जो कसीर तादाद में थे इसलिए जितने भी कत्ल होते कुछ पता न चलता था।[1]

जो असहाबे हुसैन[अ०स०] उसके बाद से दोपहर के वक्त तक नमाज़े ज़ोहर के हंगामे से पहले शहीद हुए, उनके नाम तारीख़ में हस्बे जैल मिलते हैं

(63) बक्र बिन हैई तैमी

उमरे सअ्द की फौज के साथ करबला आये थे मगर जंग छिड़ने के बाद तौफीके इलाही दस्तगीर हुई और इमाम हुसैन[अ०स०] की तरफ आकर शरीके जिहाद हुए और हमल–ए–ऊला के बाद दर्जे–ए–शहादत पर फाएज हुए।

(64) अम्र बिन जुनादा बिन कअ्ब ख़ज़रजी

इनके बाप जुनादा बिन कअ्ब का तज़किरा हमल–ए–ऊला के मकतूलीन में हो चुका है अम्र बिन जुनादा का वाकेय–ए–करबला में नौ या दस बरस का सिन था। उनकी माँ बहरिया बिन्ते मसऊद थीं जो अपने शौहर के साथ मैदाने करबला में मौजूद थीं जब जुनादा दरजे ए शहादत पर फाएज़ हो चुके तो उनकी बेवा ने यतीम बच्चे को हिदायत की कि वह भी जाये और इमाम हुसैन[अ०स०] की नुसरत में जंग करे। बच्चा खिदमते इमाम में आया और तालिबे इजाजत हुआ। आप ने इजाजत देने से इन्कार किया बच्चे ने फिर रूख़सत तलब की आपने असहाब की तरफ रूख करके फरमाया, अभी तो इसका बाप मारिक–ए जंग में कत्ल हो चुका है। अब अगर यह भी कत्ल हो गया तो इसकी माँ के दिल पर क्या गुजरेगी, यह सुनकर बच्चे ने कहा कि आका मेरी माँ ने ही तो मुझे भेजा है और उन्होंने ही मुझे यह जंग का लिबास पहनाया है। बहरतौर इजाजत हासिल करके बच्चा मैदान में आया और लड़कर कत्ल हुआ अफवाजे यजीद में के किसी बेरहम ने बच्चे का सर काट कर जमाअते हुसैनी की तरफ फेंक दिया। शेर दिल माँ ने बच्चे का सर उठा लिया और कहा 'शाबाश' बेटा शाबाश तूने इमाम पर निसार होकर मेरा दिल खुश और मेरी आँखों को खुन्क (ठंडक) किया " फिर उसने सर को फौजे दुश्मन की तरफ फेंक दिया और खुद एक गुर्जे आहनी लेकर दुश्मनों पर हमला आवर हुई। मगर इमाम ने उसे गवारा न किया और उसको खैमे की जानिब वापस फरमा दिया।

---

[1] तबरी जि/6 पेज/251

ज़ोहर का हंगाम और नमाज़े जोहर का हंगाम

लश्करे यजीद को अब यह फिक्र थी कि किसी तरह मुहिम जल्द सर हो जाये इसी आलम में जोहर का वक्त हो गया। इधर अबू समामा अम्र बिन अब्दुल्लाह साएदी ने इमाम की खिदमत में अर्ज किया कि "मौला यह लोग अब आपके बिल्कुल करीब आ गए हैं और यह यकीनी है कि आप पर आँच आने से पहले मैं कत्ल हो जाऊँगा। मैं चाहाता हूँ कि इस नमाज को कि जिसका वक्त आ गया है आपके साथ पढ़ लूँ। और उसके बाद खुदा की बारगाह में जाऊँ" इमाम ने आसमान पर नजर करते हुए फ़रमाया "तुमने नमाज को याद किया खुदा तुमको नमाज गुजारो और याद रखने वालों में महसूब (शुमार) करे। हाँ यह नमाज़ का अव्वल वक्त है।" फिर आपने फरमाया "उन लोगों से कहो कि इतनी देर जंग से हाथ रोक ले कि हम नमाज़ पढ़ लें।"[1]

अल्लाह अल्लाह! रसूल अल्लाह का फरजन्द जिसके घर से नमाज की बुनियाद क़ायम हुई वह नमाज की ख्वाहिश करे और वह पूरी न की जाये बल्कि मोहलत के सवाल पर हसीन बिन तमीम सफ से बाहर निकले और कहे कि "तुम्हारी नमाज़ कुबूल नहीं है।"[2]

(65) हबीब बिन मज़ाहिर असदी

नाम व नसब हबीब बिन मजाहिर बिन रूआब बिन अशतर बिन खुज़ूवान बिन फकस बिन तरीफ बिन अम्र बिन कैस बिन हारिस बिन सअ़लबा बिन दौरान बिन असद। कुन्नियत अबुल कासिम अरब के मशहूर शहसवार रबीया बिन खौत बिन रूआब के चचाजाद भाई थे। इब्ने कलबी की रिवायत के मुताबिक सहाबी थे। और रसूले अकरम[स०अ०] की जियारत से मुशर्रफ हुए थे। शैख तूसी ने उन्हें असहाबे हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] फिर असहाबे हसन और असहाबे हुसैन[अ०स०] में दर्ज किया है।

हबीब बिन मजाहिर, मीसमे तम्मार और रूशैद हुजरी की तरह हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के उन सहाब ए बा इखतेसास (खास लोगों में) में से थे जिन्हें आपने खासतौर से उलूमे बातनी और असरार (गैब की खबरें) की तालीम दी थी।

सबसे पहले जब मुआविया के इन्तेकाल की खबर कूफे में पहुँची थी और इमाम हुसैन[अ०स०] को कूफे की तरफ बुलाने का खयाल बाज़ दिमागों में पैदा

---

[1]तबरी जि/ पेज, 251
[2]तबरी जि/6, पेज/251

हुआ था तो सुलैमान बिन सुर्द खुजाई के मकान पर शीअयाने कूफ़े का इजतेमा हुआ था। उस जलसे की रूदाद से जाहिर होता है कि इस मौक़े पर हबीब बिन मज़ाहिर भी मौजूद थे। सिर्फ मौजूद ही नहीं थे बल्कि वह उस जमाअत मे नुमायाँ और जिम्मेदाराना हैसियत रखते थे चुनाँनचे जो पहला खत इमाम हुसैन[अ0स0] के नाम शीअयाने कूफ़े की तरफ से भेजा गया था उसमें सुलैमान बिन सुर्द वग़ैरह के साथ उनका नाम भी खुसूसियत के साथ सब्त था और जब मुस्लिम बिन अकील कूफ़े में वारिद होकर मुखतार बिन अबी उबैदा सकफी के मकान में फ़ुरोकश (ठहरे) हुए थे तो सबसे पहला इजतेमा शियो का जो हुआ था उसमे जनाबे मुस्लिम ने इमाम हुसैन[अ0स0] का खत पढ़कर सुनाया था उस मौके पर सबसे पहली तक़रीर आबिस बिन अबी शबीब शाकरी ने की थी और उसकी ताईद हबीब बिन मज़ाहिर ने की थी जिसका खुलासा यह था कि हम दूसरे लोगों के मुतअल्लिक जिम्मेदारी नहीं लेते मगर जहाँ तक हमारी जात का तअल्लुक है हर तरह इमदाद के लिए आमादा हैं।

मैदाने करबला मे हज़रत इमाम हुसैन[अ0स0] के पास पहुँचने के बाद वह बराबर ऐसे मौके के मुन्तज़िर रहते थे कि दुश्मन के साथ गुफ्तो शुनीद के ज़रिये नसीहत के फर्ज को अन्जाम दे सकें चुनानचे जब उमर बिन सअ्द ने कुर्रा बिन कैस हन्ज़ली को इमाम हुसैन[अ0स0] के पास बसीग ए मुरासिलत (खामोशी से गुफ्तगू के लिए) भेजा था और कुर्रा बिन कैस ने इमाम के पास आकर उमरे सअद का पैग़ाम पहुँचा कर वापस जाना चाहा था तो हबीब ने कहा था "कुर्रा बिन कैस ज़ालिम जमाअत की तरफ कहाँ जा रहे हो इस बुजुर्ग की नुसरत करो जिसके नाना की बदौलत खुदा ने तुमको और हमको इस्लाम की इज्ज़त अता की। कुर्रा ने कहा था "मैं जाकर पैग़ाम का जवाब कह दूँ तो फिर इस मसले पर गौर करूँगा [1]

इस तक़रीर का असर कुर्रा के दिल पर जरूर हुआ था चुनाँनचे बाद में वह कहा करता था कि अगर हुर जाते वक्त अपना इरादा मुझ पर ज़ाहिर कर देते तो मैं भी उनके साथ नुसरते हुसैन[अ0स0] के लिए चला जाता [2] इस तअस्सुफ (अफसोस) और इजहारे रंज से जाहिर है कि दिल उसका एहसास से मामूर हो चुका था और ज़मीर आमादा कर रहा था मगर उसमें कूव्वते इरादी इतनी न थी कि वह हुर की तरह इस खयाल को अमली जामा

[1] इरशाद पेज / 240
[2] इरशाद पेज / 249

(हकीक़त में बदल देना) पहना सकता वह इसके लिए सहारे का मोहताज था और यह उसकी अमली कमजोरी थी कि सहारा न मिलने से उसके कदम रुक गए

नवीं तारीख़ की शाम को जब अफवाजे यजीद ने दफअतन (अचानक) जमाअते हुसैनी पर हमला कर दिया और इमाम ने अबुल फजलिल अब्बास को मकसद दरयाफ्त करने के लिए भेजा और जनाबे अब्बास बीस सवारों के साथ जिनमे जुहैर बिन कैन और हबीब बिन मज़ाहिर भी थे उनके सामने गए और पूछा कि इस बे वक्त इक़दाम का क्या मन्शा है और जवाब मिला कि इब्ने जियाद का हुक्म आया है कि या तुम से बैयत ली जाये और या जंग की जाये।

जनाबे अब्बास[अ०स०] यह कहकर कि मैं इमाम से दरयाफ्त कर लूँ। तो आकर तुमको जवाब दूँ इमाम की ख़िदमत में वापस गए।

और दूसरे असहाब वहीं खडे रहे तो उस वक्फ़ को भी हबीब ने बेकार न जाने दिया। जुहैर बिन कैन से कहा कि "उन लोगो से तुम कुछ गुफ्तगू करो और नहीं तो मैं कुछ बातचीत करूँ।" जुहैर ने कहा "नहीं आप ही गुफ्तगू कीजिए।" उस वक्त हबीब ने मुखालिफ मजमा को मुखातब करते हुए हस्बे जैल तकरीर की "सोचो तो! कितना बुरा अन्जाम होगा पेश खुदा उस जमाअत का जो उसके सामने जाएगी इस हालत में कि उसने औलादे रसूल का खून बहाया हो और मुल्क के उन इबादत गुजारों को कत्ल किया हो जो पिछले पहर से उठने वाले और कसरत से जिक्र इलाही करने वाले हो।"

अरजा बिन कैस ने जो एक खफीफुल हरकात (दरमियानी) मसखरा इन्सान था बात काटने के लिए पुकार कर कहा "हबीब! तुम अपनी तरफ हर मौके पर इशारा करते रहते हो कि मैं बड़ा इबादत गुजार हूँ" यह बे मौका मुदाखिलत सुनकर जुहैर को गुस्सा आ गया और उन्होने कहा "अरजा इसमें शक ही क्या है? बिला शुबहा हबीब का नफ्स ऐसा है जिसका खुदा ने तजकिया किया है और उसको सही रास्ते पर चलने की तौफीक अता की है।"[1]

शबे आशूर हबीब बिन मजाहिर ने इमाम हुसैन[अ०स०] से इजाजत चाही कि वह जाकर कबील–ए–बनी असद से जो अतराफ में मुकीम हैं आपकी नुसरत की ख्वाहिश करे। चुनाँनचे इमाम ने इजाजत दे दी और हबीब ने बनी असद के मजमे में जाकर वाजो नसीहत के जरिये उन्हे नुसरते इमाम के फरीजे की

---

[1]तबरी जि० 6 पेज/ 237

तरफ तवज्जो दिलाई। जिसपर सबसे पहले अब्दुल्लाह बिन बशीर असदी ने लब्बैक कही और फिर दूसरे लोग भी आमादा होकर हबीब के साथ जमाअते हुसैनी की तरफ रवाना हुए मगर यह कि इस वाकए की खबर उमरे सअ्द को हो गई और उसने पाँच सौ सवार सद्द राह होने के लिए भेज दिए जिनके मुकाबले की यह जमाअत ताब न लासकी और सब लोग वापस चले गए नाचार हबीब ख़िदमते इमाम में तनहा वापस पहुचे।

सुबहे आशूरा जब इमाम हुसैन[अ०स०] ने अपना तारीख़ी ख़ुतबा इरशाद किया था और शिम्र ने इन्तेहाई बेशर्मी बेहयाई और कमीना फित्री से आपकी तकरीर मे मुदाखिलत की और कहा कि मैं मुनाफिक़ हूँ और ख़ुदा की इबादत एक हर्फ पर करता हूँ (यानी सिर्फ जुबानी) अगर कुछ मेरी समझ में आ रहा हो कि आप क्या कहते हैं तो हबीब बिन मजाहिर ही थे जिन्हों ने इस गुस्ताखी का जवाब दिया यह कह कर ब-ख़ुदा मैं समझता हूँ कि तू ख़ुदा की सत्तर हरफों की इबादत करता है (यानी तेरी इबादत मुखलिसाना हैसियत से यकरंग नहीं बल्कि हफ्ताद (70 सत्तर) रंग है) और मैं इस बात की भी गवाही देता हूँ कि तू सच कहता है तेरी कुछ समझ में नहीं आता कि इमाम क्या फरमाते हैं क्योंकि तेरे दिल पर मोहर लग चुकी है।[1]

फिर जब इमाम ने अपनी मुख्तसर जमाअत को तरतीब दिया तो मैसरे का सरदार हबीब बिन मजाहिर को करार दिया।[2]

जब मुस्लिम बिन औसजा मजरूह (जख्मी) होकर गिरे और इमाम हुसैन[अ०स०] उनके सिरहाने तशरीफ ले गए तो हबीब ने जो आपके साथ साथ थे मुस्लिम को उनकी शहादत पर मुबारकबाद देने के बाद कहा कि अगर मुझे यह यकीन न होता कि मैं भी बहुत जल्द तुमसे आकर मिलता हूँ तो कहता कि कुछ वसीयत करो ताकि मैं उस वसीयत को पूरा करूँ और इस तरह जो तुम्हारी कराबत और मजहबी खुसूसियत का हक है उसको अदा करूँ जवाब मे मुस्लिम ने इमाम हुसैन[अ०स०] की तरफ इशारा करते हुए कहा और तो कुछ नहीं वसीयत बस यह है कि इनकी नुसरत से हाथ न उठाना' जाहिर है कि उस वसीयत ने हबीब के दहकते हुए जजब ए कुर्बानी के लिए हवा से कुछ कम काम न दिया होगा।

---

[1] इरशाद पेज / 248
[2] इरशाद पेज 246

फिर कहाँ मुमकिन था कि हसीन बिन तमीम के उस गुस्ताखाना कलाम को जो उसने हुसैन[अ०स०] की जानिब से नमाजे जोहर के लिए इलतवाए (जग रोकने) जग की ख्वाहिश पर किया था वह ठडे दिल से गवारा कर लेते? चुनाँनचे उन्होंने बेताब होकर कहा "कुबूल नहीं है रसूल अल्लाह के फरजन्द की नमाज तेरे खयाल में कुबूल नहीं है और तेरी नमाज कुबूल है?[1] हसीन ने यह सुनकर हमला कर दिया और हबीब भी मुक़ाबले पर आ गए और उन्होंने उसके घोडे के मुँह पर तलवार मारी जिससे वह अलिफ (खड़ा) हो गया और हसीन जमीन पर गिर गया। मगर उसके साथियों ने बढकर उसे अपने हलके में ले लिया और हबीब के हाथ से बचा कर ले गए।

अब हबीब मैदाने जंग में आ ही चुके थे। ईमान का जोश और शुजाअत की उमग दुश्मन की जुरअत व जसारत का गुस्सा और उसके ज़िन्दा निकल जाने का रज चुनाँनचे वह इस मजमून का शेअ्र पढ़ने लगे

"मैं कसम खाकर कहता हूँ कि हम अगर तादाद में तुम्हारे बराबर होते या तुम्हारे आधे भी होते तो तुम हमारे सामने से यकीनी भाग जाते ऐ बदतरीन खलाएक हसब व नसब और अखलाक के लिहाज से।"[1]

फिरउन्होंने दूसरे शेअ्र पढ़े जिनका मजमून यह था

मैं हबीब हूँ और मेरे बाप का नाम मजाहिर है। मैदाने जग और भडकती हुई लड़ाई के हगाम का शहसवार हूँ तुम्हारी तादाद हमसे ज्यादा है और लडाई का सामान तुम्हारे पास फरावाँ है मगर हम अपनी बात के ज्यादा धनी और मुश्किलात के ज्यादा बर्दाश्त करने वाले हैं। इसके अलावा हुज्जत हमारी बाला, (यानी हमारा इमाम बलन्द) हकीकत नुमायाँ, फराएज़ की पाबन्दी ज्यादा और दामन साफ है।[2]

इन अशआर में हबीब ने असहाबे हुसैन[अ०स०] के किरदार और उन नफ्सीयाती खवास (कुदरती खुसूसियात) को जो उनके सिबात व इस्तेकलाल के जिम्मेदार थे साफ तौर पर बयान किया है।

हबीब ने सख़्त जग की यहाँ तक कि एक तमीमी पहलवान ने जिसका नाम बुदैल बिन सरीम था हबीब पर हमला किया हबीब ने एक जर्ब शमशीर में उसका काम तमाम किया। लेकिन उसी के साथ बनी तमीम के एक दूसरे शख़्स ने उन पर नैजे का वार कर दिया जिससे वह जमीन पर आ रहे। अभी

---

[1] तबरी जि 6 पेज, 251

[2] तबरी जि 6 पेज, 251

वह उठना ही चाहते थे कि उनके पहले के शिकस्त खुर्दा हरीफ हसीन बिन तमीम ने उनके सर पर तलवार लगाई जिससे वह बेजान होकर गिर गए वह तमीमी जिसके नैज़े के वार ने हबीब को जमीन पर गिराया था उनका सर काटने के लिए करीब आया तो हसीन ने कहा कि "मैं उनके क़त्ल में शरीक हूँ।" तमीमी ने कहा "नहीं, काम मैंने तमाम किया है" आखिर हसीन ने कहा कि "मुझे इतना कर लेने दो कि मैं उनका सर अपने घोड़े की गर्दन मे बाँध कर एक दफा लश्कर में गर्दिश कर लूँ ताकि लोग देख ले कि मैंने उनके क़त्ल मे शिरकत की है फिर तुम उसको ले लेना और इब्ने जियाद के पास ले जाना, वहाँ से जो इनआम मिलेगा उसमें मैं हिस्सा नहीं लूँगा" पहले तमीमी ने इन्कार किया मगर लोगों के कहने सुनने से राजी हो गया इस तरह गोया उस पहली शिकस्त की ख़िफ्फत मिटाई जो उसे हबीब के मुक़ाबले में हासिल हो चुकी थी।

हबीब की शहादत का इमाम हुसैन[अ०स०] पर खास असर हुआ।[1]

हुर की श हादत

हुर बिन यजीद रियाही ने जिनके हालात में पहले दर्ज हो चुका है कि वह हमल–ए–ऊला में अपने घोडे के पै होने के बाद प्यादा हो चुके थे और उसके पहले कई मर्तबा लड़ भी चुके थे। अब हबीब की शहादत के बाद और मजबूत इरादा कर लिया कि वह शरफ़े शहादत को हासिल करके रहेगे। चुनॉनचे उन्होने मैंदान में निकल कर यह रजज पढना शुरू किया "मैं कसम खाता हूँ कि क़त्ल न हूँगा जब तक दुश्मन को क़त्ल न कर लूँ और मारा न जाऊँगा। मगर पेश कदमी की हालत में। मैं आज तलवारे लगाऊँगा फैसला कुन तलवारें। न मेरे कदम पीछे हटेंगे और न कमजोरी का इजहार होगा।" कभी कहते थे:

"मैं शमशीर जनी करूँगा उस बेहतरीन खलाएक की तरफ से जिसके क़याम ने सरजमीने हरम को इज्जत बख्शी। मालूम नहीं इमाम का इशारा था

---

[1]तबरी जि 6. पेज 252 जब शहादते इमाम हुसैन[अ०स०] के बाद फौज वाले कूफ़े वापस हुए तो हबीब का सर उनके तमीमी क़ातिल ने लेकर अपने घोड़े की गर्दन मे आवेज़ाँ (लटकाया) कर लिया और इस तरह इब्ने ज़ियाद के महल की तरफ चला रास्ते में हबीब के फरज़न्द क़ासिम की नज़र उसपर पडी तो वह उस शख़्स के साथ हो लिए और उससे निहायत समाजत के साथ कहा कि यह मेरे बाप का सर है मुझे दे दो कि मैं दफ्न कर दूँ उसने इन्कार किया और कहा यह क्योंकर मुमकिन हो सकता है। मुझे तो अमीर इब्ने ज़ियाद से इनआम लेना है बच्चा बेबसी के साथ रोकर रह गया और वक़्त का मुन्तज़िर हो गया। मुसअब बिन जुबैर के अहदे हुकूमत में जब बाजमीरा (मुकाम) पर फौज कशी हुई है तो यह तमीमी जालिम भी फौज में था उस दौरान मे एक दिन कासिम बिन हबीब ने मौका पाकर उसे कत्ल कर दिया 2 तबरी जि/6. पेज/252

या खुद अपनी ख्वाहिश से ज़ुहैर बिन कैन ने हुर के साथ मिलकर जिहाद शुरू किया। हालत यह थी कि जब एक घिर जाता था तो दूसरा बढ़कर उसको छुड़ाने की कोशिश करता था थोड़ी देर यही सूरत कायम रही लेकिन उसके बाद प्यादों की फ़ौज ने हुर को सख़्ती से घेर लिया।[1] और ज़ुहैर की मुदाफिअत नाकाम रही। बहुत से लोग टूट पड़े और अय्यूब बिन मसरह के साथ एक और शख़्स ने कूफ़े के शहसवारों में से मिलकर हुर को शहीद किया [2] इमाम ने अपने इस नासिर की यह कद्र की कि जब उसकी लाश मैदान से उठाकर लाई गई और हजरत के सामने रखी गई तो आप खाको खून हुर के चेहरे से साफ करते जाते थे और फरमाते थे तुम बेशक हुर (ब–मानी आजाद) हो तुम्हारे वालिदैन ने तुम्हारा नाम हुर बहुत ठीक रखा था। तुम दुनिया में भी हुर हो और आखिरत में भी हुर मतलब यह था कि इन्सान की हुर्रियत व शराफत का जौहर उसके अफआल ही से नुमायाँ होता है। दुनयावी ख्वाहिशों की कैदो बन्द में गिरफ्तार और हवा व हवस में असीर होकर हक व नाहक के इम्तियाज को मिटा देने वाला हरगिज हुर्रियत जमीर और शराफते नफ्स के जौहर का मालिक नहीं हो सकता। यकीनन हुर ने तमाम दुनयावी तवक्कुआत (उम्मीदों) को ठुकरा कर हक के रास्ते पर कदम रखा तो वह हुर साबित हुए और हुर्रियत के अस्ल जौहर को उन्होंने अपने अमल से नुमाया कर दिया

(66) अबू सुमामा साएदी

नाम व नसब अम्र बिन अब्दुल्लाह कअ़ब अस साएद बिन शरजील बिन शराहील बिन अम्र बिन हशाम बिन हाशिद बिन जशम बिन हैज़ून बिन औफ बिन हमदान अल हमदानी अस साएदी। अबू सुमामा उनकी कुन्नियत थी। वह अरब के शहसवारों में से और शिइय्याने अली[अ0स0] के मुमताज अफराद में से थे [3] हजरत अली[अ0स0] की सोहबत से शरफयाब हुए थ और आपके साथ तमाम लड़ाईयों में शरीक हुए थे। आपके बाद इमाम हसन[अ0स0] की सोहबत इख्तियार की थी मगर हसन[अ0स0] की मदीने की रवानगी के बाद उन्होंने कूफ़े ही में कयाम बाकी रखा

---

[1] तबरी जि/6. पेज, 252
[2] तबरी जि/6. पेज/204, इरशाद पेज/215
[3] तबरी जि/6. पेज/204 इरशाद पेज/215

जब मुस्लिम बिन अकील इमाम हुसैन[अ०स०] के नुमाइन्दे की हैसियत से कूफे आये तो अबू सुमामा ने गर्म जोशी के साथ उनकी ताईद की और जब कूफे पर इब्ने जियाद का तसल्लुत हुआ और जनाबे मुस्लिम को खूँरेजी के आसार नजर आये तो उन्होंने अबू सुमामा को यह खिदमत सिपुर्द की कि वह जरे इआनत (जमा की हुई रकम) अपने पास जमा किया करे और अस्लह–ए–जग (हथियार) ख़रीदें इसलिए कि वह इस अम्र में बड़ी वाक़फ़ियत रखते थे।

जनाबे मुस्लिम की शहादत के बाद अबू सुमामा मख्फी (पोशीदा) तौर से कूफे से निकलकर नाफे बिन हिलाल के साथ इराक़ के रास्ते में जमाअते हुसैनी से मुलहक़ हुए।

उनकी वफ़ादारी और फ़िदाकारी का यह यादगार वाक़ेया था कि जब उमर बिन सअद ने कसीर बिन अब्दुल्लाह को पैगाम देकर इमाम हुसैन[अ०स०] के पास भेजा तो अबू सुमामा ने उससे कहा कि अपनी तलवार बाहर रख दो जब वह इस पर तैयार होते दिखाई नहीं दिया तो उन्होने कहा कि अच्छा मैं तुम्हारी तलवार के कब्जे पर हाथ रखे रहूँगा। चूँकि उसने यह भी मनजूर न किया। इसलिए उसे वापस जाना पड़ा और उमरे सअद को दूसरा कासिद भेजना पड़ा जिसने पैगाम रसानी के फर्ज को अन्जाम दिया।

जोहर की नमाज का वक्त आने पर उनकी फर्ज शनासी का बेहतरीन नमूना था कि उस सख्त मौके पर भी उनके दिल में यह ख्वाहिश जागुजीं थी कि मैं नमाजे जमाअत इमाम की इकतेदा में पढ़ लूँ फिर खुदा की बारगाह में जाऊँ इमाम हुसैन[अ०स०] इस पर इतना खुश हुए कि आपने उनको दुआ दी। फरमाया कि तुमने इस वक्त नमाज को याद किया खुदा तुमको नमाज गुजारों में महसूब (शुमार) करे '

उसके बाद इमाम ने असहाब से फरमाया कि उन लोगों से कहो कि इतनी देर जग से हाथ रोक ले कि हम नमाज़ पढ़ ले इसी इलतवा के सवाल पर हगामा हो गया था। जिसमें हबीब बिन मजाहिर और हुर दरज–ए–शहादत पर फाएज हुए। जैसाकि तारीख से पता चलता है यह सोच कर निहायत तकलीफ होती है कि अबू सुमामा की यह तमन्ना कि वह नमाजे जोहर इमाम की इकतेदा में अदा कर ले पूरी नहीं हुई बल्कि इसी हगामे मे अपने कबीले के एक शख़्स के हाथ से जो फौजे यजीद मे था वह शहीद हुए

जग मुलतवी नही हुई थी ऐसे मौके के लिए शरअ (शरीअत) ने मखसूस हुक्म ''नमाजे खौफ़' का दिया है जिसके मानी यह हैं कि फौज के दो हिस्से हो जाये। एक हिस्सा दुश्मन से मुकाबला करे और दूसरा हिस्सा नमाज में शरीक हो वह एक रकअ्त इमाम के साथ पढे और बाकी नमाज तख़्फ़ीफ के साथ फ़ुरादा पढ़कर तमाम करे और जब यह नमाज खत्म करके जाए और दुश्मन के सामने खड़ा हो जाए तो वह पहला हिस्सा फौज का मैदाने जग से आकर नमाज मे शरीक हो, मगर यह तो उस वक्त हो सकता है जब फौज की इतनी तादाद हो कि उसके ऐसे दो हिस्से हो सकते हों कि उनमें का एक दुश्मन के साथ इतनी देर मुकावमत (दिफ़ाअ) कर सके कि दूसरा हिस्सा वापस आये मगर यहाँ तो जमाअते हुसैनी की मजमूई तादाद भी अफवाजे मुखालिफ की कसरत को देखते हुए गोया कि न होने के बराबर थी मगर इमाम ने उनकी शुजाअत पर एतेमादे कामिल रखते हुए ज़ुहैर बिन कैन और सईद बिन अब्दुल्लाह हनफी से फ़रमाया कि तुम दोनो मेरे सामने खड़े हो जाओ कि मैं नमाजे जोहर पढ़ लूँ। चुनाँनचे यह दोनो जाँ निसार असहाब की तकरीबन निस्फ (आधी) जमाअत के साथ आगे बढ़े और अपने इमाम के सीना सिपर होकर खड़े हो गए यहाँ तक कि हजरत ने नमाज़े खौफ अदा की।[1]

(67) सईद बिन अब्दुल्लाह हनफ़ी

कूफे के मुअज्जि शिअयाने अली[अ०स०] में से थे और शुजाअत व इबादत की सिफत से मौसूफ थे। अहल कूफा के जो दावती खुतूत इमाम के पास मक्के भेजे गए थे उनमें के सबसे आखरी खत को लेकर आपकी खिदमत में पहुँचने वाले हानी बिन हानी शबीई और सईद बिन अब्दुल्लाह हनफी थे[2] हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने उन खुतूत का जवाब भी उन्ही दोनों के सिपुर्द किया था। चुनाँनचे अपने खत में उनके नामों का हवाला भी दिया था। इस तरह कि ''हानी और सईद मेरे पास तुम्हारा खत लेकर आए और यह दोनों सबसे आखरी तुम्हारे नुमाइन्दे थे जो मेरे पास पहुँचे।'' उसके बाद आपने तहरीर फरमाया था कि 'मैं तुम्हारी जानिब अपने चचाजाद भाई और मोअ्तमद (भरोसे

---

[1] तबरी जि/6, पेज/252, इरशाद पेज/252

[2] इरशाद, पेज/209

मन्द) अजीज मुस्लिम बिन अकील को भेजता हूँ।' यह दोनों उस खत को लेकर हजरत मुस्लिम के आगे रवाना हो गए[1]

जब मुस्लिम बिन अकील कूफे में वारिद होकर मुखतार के मकान में फरोकश (टहरे) हुए और कूफे वाले आपके पास जमा हुए थे और आपने इमाम हुसैन[अ०स०] का खत पढकर सुनाया था तो आबिस बिन अबी शबीब शाकरी और हबीब बिन मजाहिर के बाद सईद बिन अब्दुल्लाह हनफी खडे हुए थे और उन्होंने भी नुसरत व वफादारी का अहद किया था।

शबे आशूर जब इमाम हुसैन[अ०स०] ने अपना तारीखी खुतबा इरशाद किया था कि मैं अपनी बैयत से तुम्हें आजाद करता हूँ। तुम्हारा जहाँ जी चाहे चले जाओ तो असहाब मे से मुस्लिम बिन औसजा के बाद सईद खड़े हो गए थे। और उन्होने यह जोशो वलवले से भरे हुए अलफाज कहे थे कि "खुदा की कसम हम आपका साथ हरगिज नहीं छोडेंगे। ब-खुदा अगर मैं कत्ल किया जाऊँ, फिर जिन्दा किया जाऊँ फिर जीते जी जला दिया जाऊँ फिर मेरी खाक को हवा में मुन्तशिर की जाए और मेरे साथ सत्तर मर्तबा ऐसा ही सुलूक हो तो भी मैं आपसे जुदा न हूँगा। यहाँ तक कि आखरी मर्तबा भी मौत मुझे आप ही के कदमों पर आए।

सईद के लिए अपनी वफादारी व जाँनिसारी के दावों के पूरा कर दिखाने का अब मौका आ गया कि जब इमाम हुसैन[अ०स०] नमाजे जोहर मे मसरूफ थे और आपने सईद और जुहैर बिन कैन को ब-तौरे मुहाफिज अपने सामने खडा किया था। सईद ने यह सूरत इख्तियार की कि वह खास हज़रत के सामने खड़े थे और जो तीर आपकी तरफ आने लगता था उसे बढकर अपने ऊपर रोकते थे, यहाँ तक कि जख्मो की कसरत से जमीन पर गिर कर जाँ बहक तस्लीम हुए।[2] इस हालत में कि तेरह (13) तीर उनके जिस्म में पैवस्त थे

(68) जुहैर बिन कैन बिन कैस बिजली

अशराफे अरब मे से, कूफे के बाशिन्दे, बहादुर थे और मुतअद्दिद (बहुत सी) लड़ाईयों मे शरीक हो चुके थे। जमल और सिफ्फीन की लड़ाईयों के बाद से मुसलमान "उसमानी" और "अलवी" नाम की दो जमाअतों में तकसीम हो चुके थे जो लोग मुआविया के तरफदार थे उनको "उसमानी" कहा जाता था और जो हजरत अली[अ०स०] की तरफ थे वह "अलवी" कहलाते थे जुहैर आम

---

[1] इरशाद पेज/210

[2] तबरी जि/6, पेज/252

तौर पर ''उसमानी' जमाअत से मुतअल्लिक समझे जाते थे और ब ज़ाहिर वह अहलेबैते नबवी के साथ कोई ख़ास तअल्लुक़ न रखते थे।

ज़ुहैर सन 60 हिजरी में अपने अहलो अयाल के साथ मनासिके हज बजा लाने के बाद कूफे की सिम्त वापस जा रहे थे कि इमाम हुसैन[अ०स०] का साथ हो गया। अगरचे ज़ुहैर ब ज़ाहिर इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ कोई ख़ास अक़ीदत न रखते थे ताहम ऐसा मालूम होता है कि वह आपकी खानदानी वजाहत से मरऊब जरूर थे यानी उन्हे यह एहतेमाल (खयाल) था कि अगर हुसैन[अ०स०] मुझको नुसरत की दावत देंगे तो मेरे लिए रद करना उसका मुमकिन न होगा। उसी का नतीजा था कि वह हुसैनी क़ाफिले से दूर दूर रहते थे। मगर इमाम हुसैन[अ०स०] उनकी फित्री सलाहियतों से वाकिफ थे इसलिए मन्जिले जरूद पर इमाम ने ज़ुहैर को बुला भेजा जिसके बाद से ज़ुहैर बिल्कुल हुसैन[अ०स०] के साथ थे।[1]

ज़ूहसम के मकाम पर जब हुर का लश्कर हुसैनी काफ़िले के सद्दे राह (रूकावट) होने की गरज से आ चुका था तो इमाम ने अपने असहाब को मुखातब करके जो खुतबा इरशाद किया था उसके जवाब में ज़ुहैर ने वालिहाना (जोश) अन्दाज से फिदाकाराना जजबात का इजहार किया था।

उसके बाद जब हुर ने इमाम को करबला पहुच कर रोकना चाहा था और नहर के करीब खैमे बरपा करने देने से भी इन्कार किया था तो ज़ुहैर ने कहा था कि हमे इतनी फौज से जग कर लेने दीजिए। इसलिए कि इसके बाद इतना लशकर आएगा कि उससे मुकाबला करने की हम मे ताकत न होगी। उसके जवाब में इमाम ने फरमाया था कि मैं जग में इबतेदा नहीं करना चाहता [2]

फिर नवीं तारीख की शाम को अफवाजे यजीद के गैर मुतवक्का (अचानक) हमले के मौके पर जब अबुल फजलिल अब्बास[अ०स०] बाद इस्तिफसारे हाल (पूछने के लिए) इमाम से सूरते हाल बयान करने गए [3]

हबीब बिन मजाहिर ने अफवाजे मुख़ालिफ को वाजो पन्द शुरू किया था और अजरह बिन कैस ने बद–तहजीबी के साथ दौराने कलाम में मुदाखिलत की थी तो ज़ुहैर ने उसका जवाब दिया था कि बेशक हबीब के नफ्स का खुदा

---

[1]इस वाकेये की तफसील पहले बयान हो चुकी है

[2]तफसील साबिक में बयान हो चुकी है

[3]तबरी जि/6, पेज/237

ने तजकिया किया है और उसकी रहनुमाई की है। ऐ अजरा मैं तुमको नसीहत करता हूँ और अल्लाह का वासता देता हूँ कि तुम उस जमाअत के साथ शरीक न हो जो गुमराही की हिमायत कर रही है और पाक नुफूस को कत्ल करती है। जुहैर की यह आवाज तअज्जुब के साथ सुनी गई थी और अजरा ने उन्हे पहचान कर कहा था कि ''जुहैर तुम इस घराने के शिया नही थे। तुम तो उसमानी गिरोह में से थे।' और जुहैर ने कहा था ''कि इस वक्त मेरे यहाँ खडे होने से तो तुमको समझ ही लेना चाहिए कि मैं शियाए अली[अ०स०] हूँ। खुदा की कसम मैंने न हुसैन[अ०स०] को कभी खत लिखा था न कोई कासिद भेजा था और न नुसरत का वादा किया था लेकिन रास्ते में इत्तेफाक से मेरा और उनका साथ हो गया जब मैने उन्हें देखा तो रसूल अल्लाह[स०अ०] याद आ गए और उनकी खानदानी खुसूसियत का मुझे खयाल आ गया और मुझे एहसास हुआ कि हकीकतन वह दुश्मनों के ज़ुल्म व तअद्दी (सख्ती) में मुबतिला हैं बस मैंने तय कर लिया कि मुझे उनकी मदद करना चाहिए और उनकी जमाअत मे दाखिल होकर अपनी जान उन पर फिदा करना चाहिए, खुदा व रसूल के उस हक को अदा करने के लिए, जिसे तुम लोगों ने जाया व बरबाद कर दिया है [1]

फिर शबे आशूर जब इमाम हुसैन[अ०स०] ने असहाब को जमा किया था और उन्हे अपनी बैयत की जिम्मेदारियों से सुबुकदोश करने का एलान किया था तो असहाब में से मुस्लिम बिन औसजा और सईद बिन अब्दुल्लाह के बाद जुहैर ने भी तकरीर की थी और कहा था ''ब–खुदा मैं पसन्द करता हूँ कि एक दफा कत्ल हूँ, फिर जिन्दा हूँ फिर क़त्ल हूँ यूँ ही हजार दफ़ा हो लेकिन आप और नीज आपके खानदान के यह जवान कत्ल होने से महफूज रह जायें।[2]

सुबहे आशूर जब इमाम हुसैन[अ०स०] ने अपनी मुखतसर फौज को तरतीब दिया था तो जुहैर बिन कैन को मैमना का अफसर मुकर्रर किया था और जुहैर ने मैदान में निकल कर फौजे मुख़ालिफ के सामने एक मारिका आरा तक़रीर भी की थी फिर जब लडाई शुरू हो गई थी और अफवाजे मुख़ालिफ के सुफूफ (सफ की जमा) में से यसार और सालिम मैदाने जग में आए और अब्दुल्लाह बिन उमैरे कलबी मुकाबले के लिए निकले थे तो उन दोनों ने कहा था कि ''हम तुमको नहीं पहचानते हमारे मुकाबले के लिए जुहैर बिन क़ैन या हबीब

---

[1]तबरी जि/6 पेज/237

[2]इरशाद पेज 244

बिन मज़ाहिर या बुरैर बिन खुज़ैर को आना चाहिए ' इस वाक़ये से जाहिर हो जाता है कि ज़ुहैर फौजे हुसैनी के उन नुमायाँ अफराद म से थे जो दुश्मनो क नजदीक मुमताज हैसियत के मालिक समझे जाते थे

उनकी शुजाअत के कारनामे सुबहे आशूर से हगाम जोहर तक मुतअद्दिद बार जाहिर हो चुके थे चुनाँनचे जोहर के पहले जब शिम्र ने मख़सूस खैम ए हुसैनी पर हमला किया और अपना नैज़ा खैमे पर मार कर कहा था कि 'आग लाओ मैं इस खैमे को उसके रहने वालो समत जला दूँ तो ज़ुहैर ने अपने दस बाहदुर साथियों के साथ हमला करके उसकी फ़ौज को पसपा कर दिया।[1] फिर जब हबीब शहीद हो चुके और हुर मैदाने जग में आए तो ज़ुहैर ने हुर के साथ मिलकर जग की उसके बाद इमाम हुसैन[अ०स०] ने सईद बिन अब्दुल्लाह और ज़ुहैर को मामूर किया कि तुम मेरी हिफ़ाजत करो यहाँ तक कि मैं नमाजे जोहर अदा कर लूँ। चुनाँनचे सईद बिन अब्दुल्लाह नमाज तमाम होते होते इतने जख्मी हो गए कि वह जानबर न हो सके और ज़ुहैर के भी दस्तो बाज़ू जवाब दे चुके थे फिर भी नमाजे जोहर के बाद जब दुश्मन बहुत करीब आ गए थे तो ज़ुहैर बिन क़ैन ने अपनी आखरी जग की। उस वक्त वह बड़े जोश के साथ कह रहे थे:

"मैं ज़ुहैर हूँ और कैन का फरजन्द हूँ मैं अपनी तलवार से दुश्मनों को हुसैन[अ०स०] के पास से दूर करूँगा। यूँ ही थोड़ी देर तक वह शमशीर जनी करते रहे। आखिर कसीर बिन अब्दुल्लाह शअबी और महाजिर बिन औस दोनों ने एक साथ उन पर हमला किया और उन्हीं के हाथ से वह दरज ए शहादत पर फाएज़ हुए।[2]

(69) सलमान बिन मज़ारिब बिन क़ैस अल–बिजली

ज़ुहैन बिन कैन के चचाजाद भाई थे, ज़ुहैर बिन कैन के साथ सन 60 हिजरी में हज को गए थे वापसी मे जब ज़ुहैर इमाम की नुसरत के खयाल से आपके साथ हो लिए तो सलमान ने भी उनका साथ दिया रोजे आशूर जोहर के बाद शहीद हुए।

(70) अम्र बिन क़र्ज़ा बिन कअब अन्सारी

नाम व नसब: अम्र बिन कर्जा बिन कअब बिन अम्र बिन आएज बिन जैद बिन मनात बिन सअलबा बिन कअब बिन अल खज़रज अन्सारी उनके

---

[1]इरशाद पेज/252

[2]तबरी जि/6, पेज/252–253

वालिद कर्ज़ा बिन कअ्ब असहाबे रसूल अल्लाह[स०अ०] में से थे। जंगे ओहद और उसके बाद की लड़ाईयों में शरीक हुए थे।

सन 23 हिजरी में ख़लीफ ए दोम के जमाने में "रिया" उनके हाथों पर फतह हुआ था। और हजरत अली[अ०स०] ने अपनी खिलाफत के जमाने में उनको कूफे का हाकिम मुकर्रर किया था फिर जब आप जगे सिफ्फीन के लिए जाने लगे थे तो उनको अपने साथ ले गए थे और कूफे की हुकूमत अबू मसऊद बदरी के सिपुर्द की थी। क़र्ज़ा सब लड़ाईयां में हज़रत अली[अ०स०] के साथ रहे और आप ही के जमान ए खिलाफ़त में कूफे में उनका इन्तेक़ाल हुआ और आप ही ने उनकी नमाजे जनाजा पढ़ाई। एक कौल यह है कि मुआविया के इबतेदाई ज़माने में जब मुग़ीरा बिन शअ्बा कूफ़े का हाकिम था, उन्होंने इन्तेक़ाल किया।

उनके दो फरजन्द थे अम्र और अली करबला में अम्र इमाम हुसैन[अ०स०] की तरफ थे। गालिबन बड़े यही थे। इसलिए कि उनके वालिद क़र्ज़ा बिन कअ्ब की कुन्नियत (बेटे के नाम से बाप को पुकारना कुन्नियत कहलाता है जैसे इमाम हुसैन[अ०स०] अबू अब्दिल्लाह) उन ही के नाम पर अबू अम्र थी और उनका छोटा भाई अली लश्करे यजीद में था

अम्र बिन कर्ज़ा कूफ़े ही में रहते थे। वह इमाम की खिदमत म मैदाने करबला में पहुँचे थे मुहर्रम की इबतेदाई तारीखों में जब जग होने का कतई फैसला न हुआ था। इमाम ने उनको उमरे सअ्द के पास यह पैगाम देकर भजा था कि तुम मुझसे शब के वक्त दोनों लश्करों के दरमियान मुलाक़ात करो।"

रोजे आशूर नमाजे जोहर के बाद जब तमाम असहाब में जज़ब–ए–फिदाकारी तेज हो गया था और शम्ए इमाम के परवाने जाँनिसारी में एक दूसरे पर सबकत कर रहे थे अम्र बिन कर्ज़ा ने जग करना शुरू की। वह इस मजमून के शेअ्र पढ रहे थे।

"तमाम अन्सार की जमाअत जानती है कि मैं जिम्मेदारी के हुदूद की हिफाजत करूँगा। ऐसे जवाँ मर्द इन्सान की तरह शमशीर जनी करते हुए जो पीछे हटने वाला न हो। हुसैन[अ०स०] पर मेरी जान और मेरा घर बार सब फिदा हो

कुछ देर तलवार चलाने के बाद फिर अम्र इमाम के सामने आकर खडे हो गए जो तीर आता उसे अपने ऊपर रोकते और जो वार होता खुद सिपर बन

जाते आख़िर जख़्मों से चूर हो गए और इमाम से मुख़ातब होकर कहा "क्यों। फरजन्दे रसूल मैंने फर्ज़ को अदा किया" आपने फ़रमाया "हाँ तुम जन्नत में मेरे आगे जाओगे रसूले ख़ुदा[स०अ०] को मेरा सलाम पहुंचा देना। और कहना कि मैं भी अन्करीब आता हूँ।" बहादुर जाँबाज जख़्मों की कसरत से ज़मीन पर गिरा और जाँ बहक़ तस्लीम हुआ।

उनका भाई अली बिन कर्ज़ा जो फौजे उमरे सअ्द मे था सफ से बाहर निकला और इमाम को नाशाइस्ता अलफाज से मुख़ातब करते हुए कहा कि तुमने मेरे भाई को गुमराह किया और वरगला कर कत्ल करा दिया।" इमाम ने फरमाया "ख़ुदा ने तेरे भाई को गुमराह नहीं किया बल्कि उसकी हिदायत की और गुमराही में तुझे छोड़ दिया है" उसने कहा "ख़ुदा मुझे गारत करे अगर मैं तुम्हे कत्ल न करूँ या इस कोशिश मे ख़ुद हलाक न हो जाऊँ। यह कह कर उसने हमला किया। नाफेअ् बिन हिलाल ने आगे बढ़कर उस पर नैजे का वार किया जिससे वह गिर गया[1]

(71) नाफ़ेअ् बिन् हिलाले जमली

नाम व नसब: नाफेअ् बिन हिलाल बिन नाफ़ेअ् बिन हम्बल बिन सअ्दुल अशीरा बिन मुजहज अपने कबीले के सरदार और बहादुर शख़्स थे। हाफिज़े कुरआन भी थे। अमीरूल मोमिनीन हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के असहाब में से और अहादीस के हामिल (हदीसें हिफ्ज थीं) थे आपके साथ जमल सिफ्फीन और नहरवान की लड़ाईयों में शरीक भी हुए थे। इराक की तरफ इमाम की रवानगी की इत्तेला पाकर कूफे से रवाना हुए थे और रास्ते में जमाअ्ते हुसैनी से मुलहक हुए थे उस वक्त जबकि जनाबे मुस्लिम की ख़बरे शहादत भी न आई थी। उनका एक घोड़ा जिसका नाम "कामिल" था कूफ़े में रह गया था और उसके मुतअल्लिक़ उन्होंने हिदायत कर दी थी कि वह बाद मे उनके पास पहुंचा दिया जाए चुनाँनचे अजीबुल हजानात मे अम्र बिन ख़ालिद सैदावी मजमा बिन अब्दुल्लाह आएजी और जुनादा बिन हारिस सलमानी वगैरह पाँच आदमियों का जो काफिला हुसैनी जमाअ्त से मुलहक हुआ था उसके साथ यह घोड़ा भी था।

हुर से मुलाकात और गुफ्तगू के बाद ज़ूहसम में इमाम ने जो ख़ुतबा पढ़ा था उसके जवाब में उन्होंने पुरजोर तकरीर की थी।

---

[1] तबरी जि/6, पेज, 248

करबला में जब नहर पर दुश्मनों की मजाहमत शुरू हुई और इमाम और उनके साथियो पर प्यास का गलबा हुआ इमाम हुसैन[अ०स०] ने अपने भाई अबुल फ़जलिल अब्बास को पानी लाने पर मामूर किया जनाबे अब्बास[अ०स०] बीस सवारो और बीस प्यादों के साथ बीस मश्कीजे लेकर आगे बढे और नहर के करीब पहुँचे तो नाफेअ् बिल हिलाल ने अलम अपने हाथ में लिया और सबसे आगे हो गए। अम्र बिन हज्जाज जुबैदी ने जो नहर का मुहाफिज था टोका और कहा कौन है जो नहर पर जा रहा है चूँकि अम्र बिन हज्जाज कबील–ए–जुबैदा से था जो 'मुजहज' और मुराद' की एक शाख़ है और क़बील–ए–जमल जिससे नाफ़ेअ् थे यह भी मुराद की एक शाख इसलिए नाफेअ ने जब अपना नाम बताया और कबीलो का पता देते हुए कहा कि हम पानी पीने आए हैं तो अम्र ने कहा "तुम शौक से पियो तुम्हे पीना गवारा हो " नाफ़ेअ् ने जवाब में कहा "मैं अकेला थोड़ी पियूँगा। दर सूरतेकि हुसैन[अ०स०] और उनके सब असहाब प्यासे हों। यह सुनते ही फ़ौजे मुखालिफ़ आगे बढ़ी यह कहती हुई कि "यह तो मुमकिन ही नहीं कि उन तक पानी पहुँच सके। हम यहाँ मुकर्रर इसी लिए किए गए हैं कि पानी का एक कतरा भी जमाअते हुसैनी तक न जाने दें।" नाफेअ् उन लोगो से गुफ्तगू के लिए आग बढे और उन्होंने अपने साथियो से कहा कि तुम लोग तेजी से मशकें पानी से भर लो। चुनाँनचे साथियों ने जल्दी जल्दी पानी भर लिया और जब उधर से निगहबानों की फौज आगे बढ़ी तो अबुल फजलिल अब्बास[अ०स०] के साथ नाफेअ् बिन हिलाल और दूसरे बहादुरों ने उसका मुकाबला करके पीछे हटा दिया इस दौरान में वह लोग जो मश्कें लिए हुए थे साहिल से ऊपर आ गए थे। चुनानचे बहादुरों ने उनको खयामे हुसैनी की तरफ रवाना कर दिया और ख़ुद वहीं खडे रहे। पासबानों ने फिर बढकर हमला किया।

इस मौके पर नाफ़ेअ् बिन हिलाल ने अम्र बिन हज्जाज की फ़ौज में से एक शख़्स पर जो कबील ए–सदा से था नैजे का वार किया जिससे बाद में वह हलाक हो गया। बहरतौर असहाबे हुसैनी पानी लेकर खयामे हुसैनी तक पहुच गए।[1] जो इतनी बडी जमाअत के लिए जिनके साथ घोडे भी थे सिर्फ जरा ही देर तक के लिए तसकीने अतश का बाइस हो सकता था

रोजे आशूर जंग छिड़ने के बाद ही से नाफेअ् का वलवल–ए–जंग काम करने लगा था चुनाँनचे अफवाजे मुखालिफ के एक पहलवान मजाहम बिन

---

[1] तबरी जि 6. पेज 234–235

हरीस के साथ उनका दस्त ब दस्त कामयाब मुकाबला हुआ था। उसके बाद अम्र बिन कर्जा की शहादत के मौके पर जब उनके भाई अली बिन कर्जा ने इमाम की शान में गुस्ताखाना कलमात कहे और हमला किया था तो नाफेअ ने उसका मुकाबला करके उसे मगलूब किया था

नाफेअ् तीर अन्दाजी में बडे मुशताक और यगान–ए–रोजगार (नामवर) थे उन्होंने अपने तीरों के सूफार (मुह पर ऊपरी हिस्सा) पर अपना नाम लिख दिया था। और तीरों को जहर मे बुझा लिया था चुनाँनचे जोहर के बाद उन्होंने तीर लगाना शुरू किए वह कहते जाते थे कि "मैं जमली हूँ और अली[अ0स0] के दीन पर हूँ।" और अफवाजे मुखालिफ के बारह आदमियों को इस तरह कत्ल किया और बहुत सों को जख्मी। यहाँ तक कि दुश्मनों ने उनको चारों तरफ से घेर कर मारना शुरू किया जिससे दोनों बाजू उनके शिकस्ता हो गए और वह गिरफ्तार कर लिए गए शिम्र सिपाहियों की एक जमीअत के साथ उनको पकड़ कर उमरे सअ्द के पास ले गया। इस हालत में कि उनकी डाढी से खून टपक रहा था। उनको देखकर उसने कहा "नाफेअ् यह तुम ने अपने नफस के साथ क्या सुलूक किया?" नाफेअ ने कहा "मेरे जमीर से खुदा वाकिफ है। खुदा की कसम मैंने बारह आदमी तुम में से जान से मारे है और जखमियों की तादाद उसके अलावा है। मुझे मुसर्रत है कि मैंने अपने फर्ज के अदा करने में कोताही नहीं की। और अगर मेरे बाजू टूट न जाते तो तुम मुझे इस तरह हरगिज गिरफ्तार न कर सकते।" शिम्र ने कहा कि इस शख्स को जिन्दा नहीं छोड़ना चाहिए उमरे सअ्द ने जवाब दिया कि तुम गिरफ्तार कर के लाए हो तुमको इख्तियार है।" शिम्र तलवार खींच कर बढा तो नाफेअ् ने कहा "अगर तू मुसलमान होता तो कभी हम लोगो के खून में हाथ न भरता। खुदा का शुक्र है कि उसने हम लोगों की मौत बदतरीने खलाएक अफराद के हाथों करार दी ' शिम्र ने तलवार लगाई। नाफेअ् शहीद हुए। पस्त हौसला और कमीना फितरत शिम्र उस जख्मी और मजबूर मुजाहिद को कत्ल करके फतह मन्दी का एहसास करने लगा। और रजज के अशआर जबान पर जारी करके हुसैन[अ0स0] के बाकी मान्दा असहाब पर हमला आवर हुआ।[1]

(72) श ौजब बिन अब्दुल्लाह

हमदान की एक शाख कबील–ए–शकिर के गुलाम जादों से आबिस बिन शबीब शाकरी से वाबस्ता थे। शिआयाने कूफा में अपने औसाफ की बिना पर

---

[1] तबरी जि 6 पेज/ 253

नुमायाँ हैसियत रखते थे और एक तरफ तो मैदाने जंग के शहसवार थे दूसरी तरफ अहादीस के हाफ़िज और हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] से इस्तेफादा किए हुए थे और कूफे में इस बाब में मरजईयत रखते थे, लोग उनसे अहादीस हासिल करने आया करते थे।

जब आबिस मुस्लिम बिन अकील का खत लेकर कूफे से मक्क--ए--मुअज्जिमा रवाना हुए थे तो शौजब भी उनके साथ थे और इमाम हुसैन[अ०स०] के हमराह मक्के से इराक आए और करबला पहुचे थे

रोजे आशूर आबिस ने अपने बावफा गुलाम से कहा "क्या शौजब! तुम्हारा क्या इरादा है? शौजब ने कहा "इरादा क्या है? यही कि आप के साथ रह कर फरजन्दे रसूल[स०अ०] की नुसरत में जंग करूँ और कत्ल हो जाऊँ " आबिस ने कहा "शाबाश मुझे तुमसे यही उम्मीद थी। अच्छा तो फिर आगे बढो और इमाम पर जान निसार करो ताकि इमाम तुम्हारी मुसीबत भी उसी तरह देख लें जैसे अपने दूसरे असहाब की देखी और मैं भी तुम्हारे गम को बरदाश्त करके सवाब का मुस्तहक बनूँ। यकीनन अगर इस वक्त कोई ऐसा शख्स मेरे साथ होता जिस पर मुझे उससे ज्यादा इख्तियार हासिल होता जितना मुझे तुम पर हासिल है तो मेरी खुशी यह होती कि वह मेरे सामने जाये ताकि मैं उसके गम को बरदाश्त करूँ क्योंकि आज वह दिन है जिसमें इन्सान से जितना हो सके उतना अज्र व सवाब हासिल करले इसलिए कि आजके दिन के बाद हमारे अमल का दफ्तर बन्द हो जाएगा। और हिसाब के सिवा कुछ रह नहीं जाएगा।[1]

यह वह अलफाज हैं जिन्हे इतमीनानी हालत मे शाएरी के तौर पर हर शख्स कह सकता है लेकिन ऐन मुसीबत के मौके पर वाकई तौर से उनका इस तरह कहना कि अमल से उनकी तस्दीक होती हो बहुत मुशकिल है। अलफाज से साफ जाहिर था कि राहे हक में मसाएब उठाने का एक शौक है और तकालीफ के बरदाश्त करने का वलवला जो खुद इख्तियारी तौर पर अमली इकदामात का मुहर्रिक (पहचान) है।

बहरतौर शौजब आगे बढ़े इमाम हुसैन[अ०स०] को सलाम करके रुख्सत हुए और जंग करके शहीद हुए।[2]

---

[1]तबरी जि/6, पेज/254
[2]तबरी जि/6, पेज/254

(73) आबिस बिन अबी श बीब शाकरी

नाम व नसब आबिस बिन अबी शबीब बिन शाकिर बिन रबीया बिन मालिक बिन सअब बिन मअ़तया बिन कसीर बिन मालिक बिन जशम बिन हाशिद अल–हमदानीशाकरी। बनू शाकिर कबील–ए–हमदान की एक शाख थे और उन ही की निसबत हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] ने जगे सिफ्फीन के मौके पर फरमाया था कि अगर उनकी तादाद एक हजार हो जाए तो खुदा की इबादत उस तरह होने लगे जिस तरह कि होना चाहिए

यह लोग बडे शुजा और जग आजमा थे और "फतियानिस सबाह" के लकब से मशहूर थे जिसके मानी हैं "वक्ते सुबह के जवाँमर्द" चूँकि गारतगरी और जग का मुकाबला ज्यादा तर अवकाते सुबह मे होता था, इसलिए उस वक्त की तरफ निसबत दी गई।

हमदान की एक दूसरी शाख बनू वादिआ के पास उन लोगो ने जाकर कयाम किया तो यह भी उनकी तरफ मन्सूब होने लगे और इसी लिए आबिस शाकरी भी कहा जाता था और वादई थी

आबिस शिअ़याने कूफे में से रईसे कौम, बहादुर, मुकर्रिर (बोलने वाले), इबादत गुजार और शब जिन्दादार थे। मुतअद्दिद लड़ाईयों मे कारे नुमायाँ अन्जाम दे चुके थे और दिलों पर उनकी शुजाअत का सिक्का कायम था

जब मुस्लिम बिन अकील कूफे वारिद हुए थे और आपने पहला जलसा मुनअकि़द करके इमाम हुसैन[अ०स०] का खत सुनाया था तो उस वक्त सबसे पहले आबिस ही खडे हुए थे और उन्होने कहा था कि "मैं दूसरों का जिम्मेदार नहीं। मगर जहाँ तक मेरी जात का तअल्लुक है मैंने तय कर लिया है कि आखरी दम तक आप लोगों का साथ दूँगा।"

उनकी तकरीर इतनी जामे (ठोस) और पुरमगज (इल्मी) थी कि हबीब बिन मजाहिर ने उनकी तारीफ की थी और उन ही की ताईद में अपनी नुसरत व वफादारी का अहद किया था।

जब कूफे के अठठारह हजार आदमियो ने मुस्लिम की बैयत कर ली और आपने इस सूरते हाल से मुतमइन होकर इमाम हुसैन[अ०स०] को इत्तेला देना चाही तो आपने वह खत आबिस ही के हाथ मक्के भेजा था। चुनाँनचे वह उस खत को लेकर इमाम हुसैन[अ०स०] के पास पहुँचे और फिर आपसे जुदा नहीं हुए।

उनका गुलाम शौजब उनके साथ साथ था चुनाँनचे उन्होने अपने गुलाम को अपनी तरफ से हुसैन[अ०स०] पर निसार किया।

जब शौजब दर्ज–ए–शहादत पर फाएज हो चुके तो आबिस ने इमाम की खिदमत में अर्ज किया 'ब खुदा रूए जमीन पर कोई ऐसा नहीं जो मुझे आपसे ज्यादा अजीज व महबूब हो

अगर मुझे कुदरत होती कि मैं अपनी जान से ज्यादा कोई अजीज शै आपकी खिदमत में पेश करूँ तो ऐसा ही करता मगर अब तो बस मेरी जान बाकी है। बस अब इजाजत दीजिए मैं आखरी सलाम अर्ज करते हुए खुदा को गवाह करता हूँ कि मैं आपके और आपके पिदरे बुजुर्गवार के दीन पर कायम हूँ।'

इन अलफाज को कह कर इमाम से रूख्सत हुए और तलवार खींचे हुए सुफूफे (सफ की जमा) मुखालिफ के सामने पहुँचे उनकी पेशानी पर उस वक्त एक जख्म मौजूद था जो शायद पहले किसी हमले मे आ गया था फौजे कूफा का एक शख्स रबीअ बिन तमीम जो वाकए करबला में मौजूद था बयान करता है कि मैंने आबिस को आते देखा तो पहचान लिया इसलिए कि मैं उन्हें इसके पहले लड़ाईयों में देख चुका था और उनकी शुजाअत से वाकिफ था। चुनाँनचे मैंने अपने साथियों से कहा 'ऐयुहन्नास (ऐ लोगो!) यह शेरों का शेर है यह इब्ने अबी शबीब है देखो कोई एक शख्स तुम मे से उसके मुकाबले को बाहर न निकले।' आबिस ने आवाज देना शुरू की ''क्या कोई मर्द मैदान नहीं जो एक मर्द मैदान के मुकाबले को निकले। मगर फौजे यजीद में से एक शख्स भी बाहर न निकला। उमरे सअद ने कहा इस बहादुर को पत्थरो से मार लो। चुनाँनचे हर तरफ से पत्थरों की बारिश होने लगी, यह अजीब तरीक ए जग देखकर आबिस ने जिरह और खोद बक्तर (फौजी लिबास) उतार कर फेक दिया और तलवार सूत कर सुफूफे मुखालिफ पर टूट पड़े जिस सफ की तरफ रूख करते थे सैंकड़ों आदमी उनके सामने से भागते नजर आते थे। थोड़ी देर की जग के बाद फौज के एक बड़े हिस्से ने उनको चारों तरफ से घेर कर कत्ल कर दिया। फिर उनका सर कलम किया गया और बहुत से आदमियों ने आपस में झगड़ना शुरू किया हर एक कहता था कि इस शख्स को मैंने कत्ल किया है बिल आखिर उमरे सअद ने उसका यह कहकर फैसला किया कि झगड़ा न करो। उस शख्स का कातिल कोई एक नहीं हो सकता तुम सब उसके कातिल हो इस तरह यह निजा (लडाई) बर तरफ हुई[1]

---

[1] तबरी जि./ 6, पेज / 253

(74 व 75) अब्दुल्लाह व अब्दुर्रहमान फ़रज़न्दाने उरवा बिन हिराक़ गफ़्फ़ारी[1]

अबूज़र गफ्फारी के क़बीला–ए–हिराक़ गफ्फारी असहाबे हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] में से थे और आपके साथ जमल, सिफ्फीन और नहरवान के मारकों में शरीक रहे थे। उनके दोनों पोते अब्दुल्लाह और अब्दुर्रहमान अशराफ व शुजाआने कूफ़ा में से और शिअयाने अली में मुमताज़ हैसियत के मालिक थे। दोनों भाई इमाम हुसैन[अ०स०] के पास मैदाने करबला मे पहुँचे और आपके अन्सार में शामिल हुए थे।

जोहर के बाद जब वक्त सख्त से सख्त होता जा रहा था। असहाबे हुसैन[अ०स०] में से हर एक की अब यह कोशिश थी कि मैं अपनी जान निसार करूं। चुनॉनचे इन दोनों भाईयों ने इमाम की खिदमत में अर्ज किया "या अबा अबदिल्लाह! हमारा सलाम कुबूल कीजिए दुश्मन अब आगे बढते चले आ रहे हैं और हमारा बस नहीं चलता इसलिए हम चाहते हैं कि खुद आपके सामने क़त्ल हो जायें और आपकी नुसरत का हक़ अदा करें। इमाम ने फरमाया अल्लाह तुम्हें जजाये खैर अता फरमाये। आओ मेरे करीब आओ। यह दोनों इमाम के करीब ही उस फौज से जो बढ आई थी बरसरे पैकार हो गए और रजज़ पढ रहे थे कि

'तमाम बनी गफ्फार और खन्दक व बनी नजार के कबाएल इस बात से वाकिफ है कि हम फासिक व फाजिर गिरोह पर हमले करेंगे बाढ दार बुर्रान (नैजा उठाने वाले) शमशीरों के साथ। ऐ मेरे रफ़ीको! आले रसूल[स०अ०] की हिफाजत में शमशीर व नैजे के साथ जंग मे कोई दकीका उठा न रखो।' आखिर दोनों जंग करते हुए शहीद हुए।"[2]

(76) हन्ज़ला बिन असअद् शबामी

नाम व नसब: हन्जला बिन असअद शबाम बिन अब्दुल्लाह बिन असअद बिन हाशिद बिन हमदान अल–हमदानी अश–शबामी

शिअयाने कूफ़ मे से नाम आवर और खुश तक़रीर, बहादुर और हाफ़िज़े क़ुरआन थे इमाम हुसैन[अ०स०] के पास आपके मैदाने करबला मे वारिद होने के बाद पहुचे थे और इमाम ने गुफ्तगू–ए–सुल्ह के दौरान में अक्सर उनको उमरे सअ्द के पास ब सिलसिल–ए–नामा व प्याम भेजा था।

---

[1]बाज किताबों में उरजा है तबरी जि/6, पेज/254

[2]तबरी जि/6, पेज/253

रोजे आशूर जोहर के बाद जब हुसैनी मुजाहिदों मे से बहुत से शहीद हो चुके तो वह इमाम के सामने आकर खडे हुए और फौजे कूफा को मुखतब करके ब आवाजे बलन्द कहने लगे।

''ऐ मेरी कौम के लोगो! मुझे तुम्हारे मुतअल्लिक अन्देशा है उस रोजे बद का जो बहुत सी क़ौमो को नसीब हुआ जैसे कौमे नूह और आद और समूद वगैरह। और अल्लाह बन्दों पर जुल्म नहीं करता बल्कि उनकी बद आमालियों ही का बदला देता है ऐ मेरी कौम मैं तुम्हारे लिए अन्देशा रखता हूँ क़यामत के दिन से जबकि तुम इस दुनिया से पुश्त (पीठ) फिराओगे और कोई तुम्हारा बचाने वाला खुदा के अजाब से न होगा और जिसकी हिदायत से खुदा हाथ उठा ले फिर उसकी हिदायत कौन कर सकता है। ए मेरी कौम! हुसैन अ0स0 को क़त्ल न करो नही तो ख़ुदा तुम पर अज़ाब नाज़िल करेगा और झूठ कहने वालो का अन्जाम नाकामी है।[1]

दुश्मन पर ऐसी तकरीरों से असर ही कब होता था। इमाम ने पुकार कर फ़रमाया ऐ इब्ने सअ्द खुदा अपनी रहमत तुम्हारे शामिले हाल करे। यह लोग अजाबे ख़ुदा के मुस्तहक़ तो उसी वक्त हो गए जब उन्होने हक़ बात को कुबूल न किया और तुम लोगो के खिलाफ फौज कशी की, चेजाएकि अब अब तो यह तुम्हारे बहुत से नेक साथियों को कत्ल भी कर चुके हैं।'

हन्ज़ला ने कहा 'हुजूर सच फरमाते हैं हुजूर से बढ़कर इन बातों को कौन समझ सकता है अच्छा तो इजाजत दीजिए कि हम भी जाये खुदा की तरफ और अपने साथियो से मुलहक़ हो। इमाम ने फ़रमाया जाओ दुनिया और आखिरत की नेकी और ऐसी सलतनत की तरफ जिसको जवाल नहीं है'' हन्जला ने रूखसती सलाम किया, मैदाने जग मे गए। लड़े और शहीद हो गए [2]

(77 व 78)सैफ़ बिन हारिस बिन सरीअ् व मालिक बिन अब्द बिन सरीअ् बिन जाबिर हमदानी

दोनों चचाजाद भाई और एक माँ की औलाद थे [3] उन दिनो में कि जब सुल्ह की गुफ्तगू हो रही थी मैदाने करबला में पहुँच कर जमाअते हुसैनी से

---

[1] तबरी जि, 6, पेज/254 इरशाद पेज/252

[2] तबरी जि/6, पेज/254, इरशाद पेज/252

[3] तबरी जि, 6, पेज/252

मुलहक हुए थे। उनका गुलाम शबीब भी उनके साथ था और हमल–ए–ऊला मे शहीद हुआ था।

रोजे आशूरा जब बाजारे शहादत गर्म था तो यह दोनो जवान इमाम के नजदीक खड़े होकर रोने लगे। यह उनके दिल की बेचैनी थी जिसने अल्फाज को सरिश्के गम(आँख मे आँसू) की सूरत मे तबदील कर दिया था और उनके मुह से रंज की वजह से बात नही निकलती थी। उनकी इस हालत का मुशाहदा करके इमाम[अ०स०] ने फरमाया कि 'क्यों मेरे भाई के फ़रजन्दो रोते क्यो हो? देखो थोड़ी देर मे तुम्हारे लिए खुशी ही खुशी के सामान मुहैय्या होगे ' दोनो ने अर्ज किया 'हमारी जान आप पर कुर्बान हम अपने लिए थोड़ी रोते हैं हमें तो आपकी बेकसी पर रोना आ रहा है। हम देख रहे हैं कि आपको चारों तरफ से घेर लिया गया है और पूरे तौर पर हमसे आपकी हिफाजत का इम्कान नहीं रहा है।' इमाम ने फ़रमाया "तुम्हें इस सदमे पर जो मेरी वजह से है और उस हमदर्दी पर जो मेरे साथ है खुदा बेहतरीन जजा अता फरमाये "[1]

हन्जला इब्ने असअद शबामी की शहादत के बाद वह दोनों हुसैन[अ०स०] की खिदमत में सलामे आखिर बजा लाये और लड कर शहीद हुए।[2]

(79)जौन (गुलाम अबूजर गफ्फ़ारी)

नाम व नसब: जौन बिन हुवी बिन कतादा बिन आवर बिन साअदा बिन औफ बिन कअब बिन हुवै मौला अबूजर अल–गफ्फ़ारी, हबशी नस्ल से फजल बिन अब्बास बिन अब्दुल मुत्तलिब के ममलूक थे। हजरत अली[अ०स०] ने डेढ सौ अशरफी को उन्हें खरीद फरमाया था और अबूजर गफ्फारी को हिबा कर दिया था ताकि उनकी खिदमत करे। चुनाँनचे वह अबूजर के साथ रहे यहाँ तक कि रबजा में ब–हालते जिला वतनी भी उनके साथ रहे।

जब सन 32 हिजरी मे अबूजर का इन्तेकाल हुआ तो जौन मदीने वापस होकर फिर हजरत अली[अ०स०] की खिदमत में रहने लगे। और आपकी शहादत के बाद इमाम हसन[अ०स०] और फिर इमाम हुसैन[अ०स०] के पास रहे।

रोजे आशूरा जब जंग के शोले बलन्द हो गए तो जौन ने भी इमाम हुसैन[अ०स०] से इजाजते जेहाद तलब की आपने फरमाया "तुम हमारे साथ राहत के लिए थे। अब हमारी वजह से क्यो मुसीबत मे मुबतिला होते हो।" यह

---

[1]तबरी जि/6, पेज, 253
[2]तबरी जि/6, पेज, 254

सुनना था कि जौन ने आपके कदमों पर गिर कर अर्ज किया 'फरजन्दे रसूल[स0अ0] यह क्यों कर हो सकता है कि राहत के जमाने में तो मैंने आपके यहाँ के प्याले चाटे और अब सख्ती के वक्त मैं आपका साथ छोड़ कर चल दूं। खुदा की कसम मेरे जिस्म से बदबू आती है मेरा हसब व नसब पस्त और रंग सियाह है। आप अपने तुफ़ैल से मुझे जन्नत का मुस्तहक बना दीजिए कि मेरी बू खुशबू से बदल जाये, मेरा हसब व नसब बावक़ार हो जाये और मेरा रंग सुफ़ैद हो जाये। ब खुदा मै आपसे जुदा न हूँगा जब तक कि यह सियाह खून आप बुज़ुर्गवारों के नूरानी खून में मिल न जाए। बहरतौर इजाजते जंग मिलने पर जौन ने मैदाने जंग मे आकर रजज पढ़ना शुरू किया।

"ज़रा कुफ्फार देखें तो कि एक सियाह गुलाम शमशीर व नैज़े से किस तरह जंग करता है। आले रसूल[स0अ0] की नुसरत व हिमायत में।' उसके बाद उन्होंने जिहाद किया और दरजः ए शहादत पर फाएज हुए।

हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] के दिल में जौन के वह अलफाज घर कर चुके थे, इसलिए आप जब उनकी लाश पर तशरीफ ले गए तो दुआ की "खुदा वन्दा! इसके चेहरे को रौशन कर दे, इसकी बू को खुशबू से बदल दे और इसे सालेहीन के साथ महशूर कर और इसे मुहम्मद आले मुहम्मद[स0अ0] की हकीकी मारिफ़त रखने वालों में महसूब फ़रमा।'

(80)गुलामे तुरकी

हाफिजे कुरआन, हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] के गुलाम थे जिनको आपने अपने फरजन्द अली बिन हुसैन[अ0स0] (जैनुल आबेदीन) को हिबा किया था। उन्होंने इमाम से इजाजते जिहाद मागी तो आपने फरमाया कि खैमे में जाकर अपने आका से इजाजत हासिल करो चुनाँनचे वह इजाजत हासिल करने के बाद तमाम अहले हरम की खिदमत में सलामे आखिर बजा लाकर मैदाने जंग में आये। और यह रजज पढने लगे "समन्दर में मेरे नैज़े व शमशीर की गर्मी से आग लग जाती है और फिजा मेरे तीरों की परवाज से ममलू (भर) हो जाती है। जब मेरी तलवार मेरे हाथ में चमकती है तो मगरूर हासिद का दिल शिगाफ्ता (फट) हो जाता है

जंग करके उन्होंने बहुत से लोगों को कत्ल किया। बिल आखिर जख्मी होकर गिर गए इमाम हुसैन[अ0स0] उनकी लाश पर सिरहाने तशरीफ लाये और गले मे बाहें डाल दीं और रूख्सारा अपना उनके रूख्सार पर रख दिया।

उन्होंने आँखें खोलीं और इस इज्जत अफजाई को देखकर मुसकुराते हुए हमेशा के लिए आँखें बन्द कर ली।

(81) अनस बिन हारिसे असदी

नाम व नसब: अनस बिन हारिस बिन नबिया बिन काहिल बिन अम्र बिन मुसअब बिन असद बिन खज़ीमा असदी काहली असहाबे रसूल[स०अ०] मे से हदीस के रावी थे। वह पैगम्बरे खुदा[स०अ०] की जबानी शहादत हुसैन[अ०स०] की खबर सुनकर नुसरत के इरादे से उस दिन के मुन्तज़िर रहने लगे।

वाक़ए करबला के मौके पर वह बहुत कबीरूस सिन (बूढ़े) हो चुके थे मगर जज़बा ए–ईमानी ऐसा रखते थे कि इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ करबला पहुँचे और रोजे आशूरा इजाजते जिहाद हासिल करने के बाद उन्होंने अमामा से अपनी कमर चुस्त बाँधी और भवों को जो आँखों पर लटक आई थी ऊँचा करके रूमाल से पेशानी पर बाँधा इमाम नुसरते दीन में उनका यह एहतेमाम देख देख कर रो रहे थे और फरमा रहे थे شكر الله لک يا شيخ यानी ऐ बूढ़े मुजाहिद खुदा तेरे हुस्ने अमल की कद्र करे।' बिल आखिर वह जंग करके दर्जा ए शहादत पर फ़ाएज़ हुए।

(82) हज्जाज बिन मसरूक़ जअ़फ़ी

जअ्फ बिन सअ्दुल अशीरा की नस्ल से कूफ़े के मुअज्जिज (इज्जतदार) शिया थे और हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] की सोहबत से शरफयाब हुए थे। जब इमाम हुसैन[अ०स०] मक्का में कयाम गुजीं थे तो वह कूफ़े से जाकर आपके हमराह रिकाब हुए और अवकाते नमाज मे अजान की खिदमत अन्जाम देने लगे

जब इमाम मक्का से इराक़ की तरफ़ रवाना हुए तो वह आपके साथ थे चुनानचे उस मौके पर जब हुर के लशकर से मुलाक़ात हुई थी और नमाजे जोहर का वक्त आया था तो तरीख में यह तसरीह (साफ) मौजूद है कि हुसैन[अ०स०] ने हज्जाज बिन मस्रूक को अजान का हुक्म दिया।[1] रोजे आशूर उन्होंने भी इज़्ने जिहाद हासिल किया। मैदान मे जाकर रजज़ पढ़ा। जंग करके बहुत से दुश्मनों को क़त्ल किया और आख़िर जामे शहादत नोश किया।

[1]इरशाद, पेज / 235

(83) ज़ियाद बिन अरीब हमदानी

नाम व नसब: अबू आमिर बिन अम्र बिन अरीब बिन हन्जला बिन वारिम बिन अब्दुल्लाह बिन कअ्ब अस साएदी अल हमदानी उनके बाप को खिदमते रसूले खुदा[स0अ0] में हुजूरी का शरफ हासिल था और खुद जियाद बडे आबिद (इबादत गुजार) व जाहिद (परहेज़गार), शब जिन्दा दार (रातों को जाग कर इबादत करने वाले) और तहज्जुद गुजार (नमाजे शब) थे और शुजाअत में बुलन्द पाया रखते थे। रोज़े आशूर सख्त जंग करने के बाद दरज-ए-शहादत पर फ़ाएज़ हुए।

(84)सालिम बिन अम्र बिन अब्दुल्लाह मौला बनुल मदीनतुल कलबी

बनुल मदीना कबील-ए-कल्ब कुजाआ की एक शाख थे। जैद बिन हारिसा सहाबी और मुहम्मद बिन साएब कल्बी साहिबे तफसीर भी इसी नस्ल से थे।

सालिम उसी खानदान के गुलाम थे और शिअ्याने कूफ़ा में उनका शुमार होता था मुस्लिम बिन अकील के साथ जंग में शरीक हुए थे और आपकी शहादत के बाद गिरफ्तार कर लिए गये थे मगर किसी तरह मौका पाकर रिहा हो गए और अपनी कौम में मख्फ़ी (छुप) हो गए थे जब इमाम हुसैन[अ0स0] के मैदाने करबला में वारिद होने की खबर सुनी तो कबील ए कल्ब के लोगों के साथ वहाँ पहुच कर आपके अन्सार में दाखिल हुए और रोजे आशूरा दरज-ए-शहादत पर फाएज हुए।

(85)सअ्द बिन हारिस मौला अमीरूल मोमिनीन

हजरत अली बिन अबी तालिब[अ0स0] के गुलाम थे आपकी शहादत के बाद इमाम हसन[अ0स0] और फिर इमाम हुसैन[अ0स0] की खिदमत में रहे। मदीना से करबला तक आपके साथ आए थे और रोजे आशूरा उन्होंने भी अपनी जान आप पर निसार की

(86)उमर बिन जुन्दब हजरमी

शिअ्याने कूफ़ा मे से थे। हजरत अली बिन अबी तालिब[अ0स0] के साथ जमल और सिफ्फीन के मारको में शरीक हुए थे। सन 51 हिजरी में हुज्र बिन अदी का हुकूमते बनी उमैया से तसादुम हुआ था तो वह हुज्र के आवान (मददगारों) मे दाखिल थे और इसी लिए जब हुज्र को गिरफ्तार करके शाम भेजा गया तो वह रूपोश हो गए थे और जियाद बिन अबीह के हलाक होने के बाद कूफे वापस आए थे। जब मुस्लिम बिन अकील कूफे मे वारिद हुए थे तो

वह उनके अन्सार में शरीक हो गए थ और मुस्लिम की शहादत के बाद मख़फ़ी तौर पर इमाम हुसैन[अ०स०] की खिदमत में पहुचे। रोजे आशूर दरज ए शहादत पर फ़ाएज हुए।

(87) क़अ्नब बिन अम्र अन–नमरी

शिअ्याने बसरा में से थे। हज्जाज बिन जैद सअ्दी के साथ इमाम हुसैन[अ०स०] की खिदमत मे हाजिर हुए और रोजे आशूर दरज–ए–शहादत पर फाएज हुए।

(88) यजीद बिन सुबैत–अल–अब्दी

वह शिअयाने बसरा और अबूल असवद दुअली शागिर्द हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के मुसाहेबीन (दोस्तों) में से थे जब इमाम हुसैन[अ०स०] मक्का से इराक की तरफ़ रवाना हुए थे तो इब्ने जियाद ने अपने नाएब को जो बसरा में था खत लिखा था कि "बसरा के लोगों से होशयार रहना, कोई शख़्स नुसरते हुसैन[अ०स०] के लिए वहाँ से आने न पाये " मगर बसरा में अब्दे कैस के कबीले की एक खातून मारिया बिन्ते मुन्क़ज बड़ी मुहिब्बे अहलेबैत थीं और उनका मकान शिअ्याने बसरा के इजतेमा का मरकज था। चुनाँनचे उन ही के मकान पर एक जलसा के दौरान मे यजीद बिन सुबैत ने नुसरते हुसैन[अ०स०] के इरादे का इजहार किया था और अपने दस फरजन्दों को भी इसकी तरग़ीब दिलाई थी मगर उनमें से सिर्फ दो तय्यार हुए थे अब्दुल्लाह बिन सुबैत और उबैदुल्लाह बिन सुबैत (जिनका तजकिरा इस किताब में पहले हो चुका है) उनके बहुत से साथियो ने जो उस मकान मे जमा हुआ करते थे उनको इस इरादे से बाज रखना चाहा मगर उन्होंने उनके मशवरों की तरफ कोई एतेना (परवाह) न की और चल खड़े हुए। कुछ और लोग भी उनके साथ हो गए और बिल आखिर इराक़ के रास्ते में अबतह की मन्जिल पर इमाम वारिद हुए थे जब यह लोग उस मकाम पर पहुँच कर उनके खैमे की तरफ शरफे मुलाकात हासिल करने के लिए गए तो इमाम ख़ुद उनके आने की खबर सुनकर उनसे मिलने के लिए दूसरे रास्ते से उनकी जाए कयाम पर तशरीफ ले जा चुके थे। और जब उन्हे न पाया तो वहीं इन्तेजार के लिए बैठ गए थे। यह लोग इमाम को उनके खैमे में मौजूद न होने की वजह से मायूस होकर वापस हुए थे कि इमाम को अपने ही यहाँ बैठा पाया उस वक्त उनकी खुशी का अन्दाजा गैर मुमकिन था उन्होंने आयते कुरआन पढ़ी कि अल्लाह के फजल व रहमत से मोमिनीन को खुश होना चाहिए। उसके बाद इमाम की

खिदमत मे सलाम अर्ज किया और अज़्मे नुसरत का इजहार किया। इमाम ने दुआए ख़ैर दी

रोजे आशूर वह अपने फरजन्दों के बाद जग करके दरज ए शहादत पर फ़ाएज़ हुए।[1]

(89) यज़ीद बिन मुग़्फ़ल जअ्फ़ी

असहबे अली बिन अबी तालिब[अ0स0] में से थे और आपके साथ जगे सिफ्फीन में शरीक हुए थे खरीत बिन राशिद नाजी ने जब सर ज़मीने अहवाज मे खुरूज किया था तो हजरत अली[अ0स0] ने मुअक्किल बिन कैस की सरकरदगी मे उसकी सरकूबी के लिए लश्कर रवाना किया था उस लश्कर में यजीद बिन मुग़फिल मैमन–ए–फौज के सरदार मुकर्रर हुए थे

मुरजबानी ने मोअ्जमुश्शुअ्रा (वह ईरानी शाएर जो अरबी अल्फाज इस्तेमाल करें) मे उनका जिक्र किया है और लिखा है कि वह ताबईन (हदीसें कोड करने वाले) में महसूब हैं उनके बाप सहाबा में से थे। उन्होंने रोज़े आशूर इमाम हुसैन[अ0स0] की नुसरत की। जग के मौके पर वह रजज पढ रहे थे।

अगर न पहचानते हो मुझे तो पहचान लो कि मैं मुगफिल का फरजन्द हूँ मैदाने जग का शहसवार और मुकम्मल असलहा रखने वाला हूँ। मेरे हाथ में तेज शमशीर रहती है जिसको गुबारे जग के अन्दर शहसवार दुश्मन के सर पर बलन्द करता हूँ।" बिल–आखिर दरज–ए–शहादत पर फाएज हुए।

(90) राफ़ेअ् बिन अब्दुल्लाह मौला मुस्लिमुल अज़्दी

मुस्लिम बिन कसीर आरज के गुलाम थे अपने मालिक के साथ करबला आए थे और रोज़े आशूर बादे जोहर जग करके शहीद हुए।

(91)बशीर बिन अम्र बिन अल–अहदूस अल–हज़्रमी अल–किन्दी

अस्ल में "हजरमूत" के रहने वाले थे लेकिन कूफे में मुहल्ल–ए–बनी किन्दा में कयाम करने से किन्दी कहे जाने लगे जब करबला में सुल्ह की गुफ्तगू हो रही थी उस जमाने में आकर अन्सारे हुसैन[अ0स0] में शामिल हुए थे

रोजे आशूरा उन्हें खबर मिली थी कि उनका फरजन्द अम्र रै (आज का तेहरान) की सरहद पर कैद हो गया है उस वक्त इमाम हुसैन[अ0स0] ने उनसे कहा था कि तुम खास तौर पर मेरी बैयत से आजाद हो जाओ और अपने बेटे की रिहाई का बन्दोबस्त करो, मगर उनके जज्ब–ए–ईमानी ने उनको इसकी

---

[1]तबरी. जि/6 पेज/198

इजाज़त न दी। चुनाँनचे वह इमाम हुसैन[अ०स०] का साथ छोड़ कर न गए और असहाबे हुसैन[अ०स०] के सिलसिले में तकरीबन बिल्कुल आखिर में शहीद हुए।

(92) सुवैद बिन अम्र बिन अबिल मताअ् अल खसअमी

जईफुल उम्र, आबिदो जाहिद और बड़े नमाज गुजार थे मुतअद्दिद लड़ाईयो में शरीक होकर कारहाये नुमायाँ अन्जाम दे चुके थे।

रोजे आशूर शरीके जग थ और असहाबे हुसैन[अ०स०] मे सबसे आख़िर में वही एक बाकी रह गए थे [1] चुनाँनचे बशीर बिन अम्र हजरमी के बाद उन्होंने मैदाने जग में निकल कर जग की और बिल–आख़िर वह इस दर्जा जख़्मी होकर गिरे कि आम तौर पर समझ लिया गया कि उनकी रूह जिस्म से मुफारिकत (जुदा) कर गई मगर हकीकतन उनमें जान बाकी थी। चुनाँनचे जब इमाम हुसैन[अ०स०] शहीद हो चुके तो उन्हें होश आया और उनके कान में आवाज़ गई कि हुसैन[अ०स०] कत्ल हो गए बस वह बेताब होकर उठ खड़े हुए। उनकी तलवार लोग ले जा चुके थे। एक छुरा मौजूद था उससे उन्होने अपने नजदीक के दुश्मनों पर हमला किया। आखिर दुश्मन टूट पड़े। और सर उनका जिस्म से जुदा कर लिया

अब जबकि असहाबे हुसैन[अ०स०] का (बनी हाशिम के अलावा, सिलसिला खत्म हो चुका है तो बेहतर यह मालूम होता है कि उस जमाअत की नौईयत और हैसियत पर एक नजर फिर डाल ली जाए।

उन असहाब के उन हालात से जो सिलसिलावार पेश हुए हैं। यह अन्दाजा हो जाता है कि वह कुछ गुमनाम और गैर मारूफ शखसियतों के मालिक नहीं थे। बल्कि आदाद व शुमार के जरिये यह मालूम किया जा सकता है कि उनमें मुन्दर्जा जैल (नीचे लिखे हुए) अशखास को असहाबे रसूल होने का शरफ हासिल था।

(1) मुस्लिम बिन औसजा। (2) जाहिर बिन अम्र असलमी कन्दी। (3) शबीब बिन अब्दुल्लाह मौला हमदान (4) अब्दुर्रहमान बिन अब्दे रब अन्सारी खज़रजी। (5) अम्मार बिन अबी सलामा दालानी (6) मुस्लिम बिन कसीर सदफी। (7) हबीब बिन मजाहिर (8) अनस बिन हारिस असदी

वफाते रसूल अल्लाह[स०अ०] से वाक़–ए–करबला तक पचास बरस का जमाना गुजर चुका था। इसलिए उनमें से किसी की उम्र पचपन (55) या साठ (60) बरस से कम नहीं करार पा सकती और उनमे से बाज की उम्र इससे

---

[1] तबरी, जि/6, पेज 256

यकीनन ज्यादा थी। जैसे अनस बिन हारिस अब्दुर्रहमान बिन अब्द रब, हबीब बिन मजाहिर मुस्लिम बिन औसजा, इनके अलावा सुवैद बिन अम्र खसअमी, आम इन्सानी तबियत के तक़ाजों के लिहाज से उन बूढ़े मुजाहदीन में से किसी एक के मुतअल्लिक़ भी यह नहीं कहा जा सकता वह किसी वक्ती जोश या वलवल ए जंग की वजह से तेग आजमाई पर तय्यार हो गए थे

हस्बे जैल असहाबे हजरत अली[अ०स०] थे जो इस्तेलाहन ताबेईन मे दाखिल हैं और ताबेईन का मर्तबा सहाबा के बाद सबसे बेहतर समझा जाता है।

(1) अब्दुल्लाह बिन उमैर कलबी। (2) मजमा बिन अब्दुल्लाह मुजहजी। (3) जनादा बिन हारिसे सलमानी। (4) जुन्दब बिन हुजैर कन्दी (5) उमैया बिन सअद ताई। (6) जबला बिन अली शैबानी। (7) हारिस बिन बनहान। (8) हिलास बिन अम्र अजदी। (9) शबीब बिन अब्दुल्लह नहशली। (10) कासित बिन जुहैर तगलबी। (11) कुरूदुस बिन जुहैर तगलबी। (12) मकसत बिन जुहैर तगलबी। (13) नोमान बिन अम्र अजदी (14) नईम बिन अजलान अन्सारी। (15) अबू सुमामा साएदी (16) शौजब बिन अब्दुल्लाह। (17) जौन गुलामे अबूजरे गफ्फारी (18) हुज्जाज बिन मसरूक जअफी। (19) सअद बिन हारिस। (20) यजीद बिन मगफल जअ्फ़ी (21) अम्र बिन जुन्दब हजरमी।

इनमे से अक्सर जमल, सिफ्फ़ीन और नहरवान की लड़ाईयों में जंग कर चुके थे। और बाज ऐसे भी थे जो हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के जमान ए खिलाफत में मुखतलिफ सरकारी ओहदों पर फाएज रह चुके थे और बाज शागिर्द की हैसियत से आप से इल्मी इस्तेफादा कर चुके थे।

हस्बे जै़ल हुफ़्फ़ाज़े कुरआन (हाफ़िज़) थे

(1) बुरैर बिन खजीर हमदानी जो सय्यदुल कर्रा (कारियों के सरदार) के लकब से मुलक्क़ब (लक़ब दिया गया था) थे और कूफे में बच्चो को क़ुरआन की तालीम देते थे। (2) अब्दुर्रहमान बिन अब्द रब अन्सारी। (3) कनाना बिन अकील तगलगी। (4) नाफ़े बिन हिलाल जमली। (5) हन्जला बिन असअद शबामी। (6) गुलाम तुरकी।

हस्बे जै़ल उलमा और रावियाने हदीस थे

(1) मुस्लिम बिन औसजा। (2) हबशा बिन कैस नहमी (3) जाहिर बिन अम्र असलमी। (4) सवार बिन अबी उमैर नहमी। (5) अब्दुर्रहमान बिन अब्द रब अन्सारी। (6) हबीब बिन मजाहिर असदी। (7) नाफ़े बिन हिलाल जमली। (8) शौजब बिन अब्दुल्लाह। (9) अनस बिन हारिस असदी।

हस्बे जैल शुजाआने रोजगार थे जिनकी लड़ाईयों के कारनामे लोगों की जबान पर थे

(1) हुर बिन यजीद रियाही। (2) मुस्लिम बिन औसजा असदी। (3) हारिस बिन उमरउल कैस कन्दी। (4) अब्दुर्रहमान बिन अब्दुल्लाह बिन कदन अरजी (5) सईद बिन अब्दुल्लाह हनफी। (6) मसऊद बिन हज्जाज तैमी (7) जुहैर बिन कैन बिजली (8) आबिस बिन अबी शबीब शाकरी। (9) जियाद बिन अरीब हमदानी (10) सुवैद बिन अम्र बिन अबिल मताअ खसअमी।

इसके अलावा इबादत और जोहदो तकवा में तो उनमें से अक्सर अफ़राद जिनके नाम मुन्दज ए बाला (ऊपर बयान हो चुका है) मुखतलिफ़ उनवान के तहत में दर्ज किए जा चुके हैं शारह–ए–आफाक (मशहूर) थे बल्कि बाज अपनी मख़सूस शुजाअत के साथ इबादत व रियाजत के लिए भी मशहूर थे जैसे आबिस बिन अबी शबीब और जियाद बिन अरीब जिनके मुतअल्लिक तारीख मे सराहत मौजूद है कि वह शब जिन्दादार (रातो को इबादत करने वाले) थे और सईद बिन अब्दुल्लाह हनफी जिनके अवसाफ़ में इबादत का खास तौर पर तजकिरा किया गया है।

यह सबके सब वह मायानाज अफराद थे जिनकी जिन्दगियाँ मुकम्मल तौर पर मेयारी हैसियत रखती थीं और इस्लामी अखलाक की जिन्दा तस्वीर थीं

इमाम हुसैन[अ०स०] को मैदाने करबला में ऐसे ही अफराद की जरूरत थी आप जानते थेकि एक कायद को अपने साथ वालों की वजह से कितनी कशमश में मुबतिला होना पडता है इसी लिए आप अवाम के मजमे को अपने साथ रखना मुनासिब न समझते थे। चुनाँनचे आपने सफरे इराक और करबला के कयाम के दौरान मे हत्ता कि रोजे आशूर तक बराबर हर हर मौके पर यह कोशिश जारी रखी कि जिन अशखास मे कुछ भी खामी हो, वह आपका साथ छोड़ कर चले जायें।

दर हकीकत आप एक ऐसे अहम मकसद की तकमील के लिए जो आपके पेश नजर था अवाम पर भरोसा कर ही नहीं सकते थे।

हुसैन[अ०स०] को जिस तरह का मुकाबला मन्जूर था उसकी नौइयत सतही नजरें कभी समझ ही न सकती थीं इसलिए कि इसके पहले जितनी भी लड़ाईयॉ कभी लड़ी गई उनका मकसद फरीके मुखालिफ को माद्दी (दुनयावी) तौर पर शिकस्त देना होता था। इस मकसद के हासिल होने में खराबी वाके नहीं होती अगर एक हजार आदमियों में से सौ भी साबित कदम रहें बशर्तेकि

वह बहादुरी से दुश्मन पर फतह हासिल करने मे कामयाब साबित हो जायें। मगर इमाम हुसैन[अ०स०] को ताक़त का मुकाबला ताकत से करना नही था बल्कि ताकत का मुकाबला किरदार से। बातिल का मुकाबला हक से। तशद्दुद का मुकाबला साबित कदमी से करना था आपको अपने खून की छींटों से एक ऐसी दुनिया को ख्वाबे गफलत से जगाना मकसूद था, जिस पर बेहिसी और बेहोशी छाई हुई थी आप किरदार के ऐसे नमूने पेश करना चाहते थे जो मौजूदा और आइन्दा नस्लो के लिए मशअले राह बन सकें। यह मरहला बड़ा नाज़ुक था यहाँ साथ वालों के इन्तेखाब का मसला बड़ा अहम था।

इमाम हुसैन[अ०स०] को अगर ताक़त का मुकाबला ताक़त से करना होता तो आपने वैसे इन्तेजाम किए होते। मगर चुँकि आपका मकसद यह न था बल्कि आप चाहते थे कि बेहोश इस्लामी दुनिया में एहसासे बेदारी पैदा करे इसके लिए आपके साथ मुल्के अरब के चीदा (चुने हुए) और मुन्तख़ब आबिद, जाहिद, मुत्तक़ी और पारसा अफ़राद ही हो सकते थे। आप ने अपने साथ ऐसे जईफ़ लिए जिनकी उमरों का बेशतर हिस्सा मेहराबे इबादत में गुज़र चुका था। क्योंकि ऐसे ही अफराद की कमरे कस कर तलवारें सूत कर मैदान में आने से मुसलमानों की आँखें खुल सकती थीं और वह यह सोचने पर मजबूर हो सकते थे कि इस्लाम पर क्या ऐसा वक्त आ पड़ा है कि ऐसे ऐसे आबिद व जाहिद भी तलवारें खींच कर मैदाने जंग में आ गए हैं।

हुसैन[अ०स०] के साथियों की शखसियत का सिर्फ दूसरे मुसलमानों पर नहीं जो गैर जानिबदार (किसी तरफ़ नहीं) या खालियुज जहन (अक्ल से खाली) थे बल्कि खुद अफवाजे मुखालिफ़ पर जो हवा व हवस के पन्जों में असीर और हुकूमत की कोराना इताअत (अंधी तकलीद) के शिकन्जे मे गिरफ्तार थीं जबरदस्त असर पड रहा था। जिसके मुख़तलिफ शवाहिद वाकयात की सूरत में नजरों के सामने आ रहे थे। मसलन मुस्लिम बिन औसजा की शहादत पर जब लशकरे मुखालिफ में खुशियाँ होने लगी थीं तो शब्स बिन रबई बोल उठा कि "क्या गजब की बात है कि मुस्लिम बिन औसजा का सा शख्स कत्ल हो और तुम लोग खुशियाँ मनाओ मैने ब–चश्मे खुद खिदमते इस्लाम में इस शख्स के कारनामों का मुशाहदा किया है " या जब बुरैर हमदानी जंग कर रहे थे और लशकरे यजीद की जानिब से उन पर हमला करने के लिए एक शख्स बढा था तो उस पर फौज के दूसरे लोगो ने मना किया था कि "अरे यह तो बुरैर हाफिजे कुरआन हैं जो मस्जिद मे हिफ्जे कुरआन कराया करते थे।" या

जब आबिस बिन अबी शबीब मैदान में आए थे तो सुफूफे मुखालिफ से यह आवाज बलन्द हुई थी कि "यह शेरों का शेर है यह आबिस बिन अबी शबीब है।"

जाहिर है कि इस किस्म के रिवायात दूसरों तक सिर्फ मुखालफीन ही की जबानी पहुँच सकते थे और इसलिए यह अन्दाजा किया जा सकता है कि निसबतन इस किस्म के बहुत कम वाकेयात हम तक पहुँच सके हैं और इस तरह इनसे इस आम इजतेराब और इन्तेशार का अच्छी तरह अन्दाजा हो जाता है जो हुसैनी मुजाहिदों के मुकाबले मे अफवाजे यजीद मे पाया जाता था।

उन असहाब की शिरकत वाकेय–ए–करबला की नौइयत को बरकरार रखने के लिए निहायत जरूरी थी। अगर इमाम हुसैन[अ०स०] सिर्फ अपने खानदान के अफराद के साथ करबला की सरजमीन पर आ गए होते तो यह कहा और समझा जाता कि यह एक खानदानी जग थी जैसा कि आम तौर से बतलाया जाता है कि उमैया और बनी हाशिम एक ही खानदान की दो शाखें थीं और उनमे बराबर खाना जगी रहा करती थी मगर इमाम हुसैन[अ०स०] के तकरीबन तकरीबन मुल्के अरब के हर कबीले और मुखतलिफ मकामात के मुमताज और सर बरआवुर्दा (नुमायाँ) अफराद मौजूद थे जिनमे नुक्त–ए–मुशतरक (एक होकर) सिर्फ उसूल का एहसास और एक ख़ास वजह यानी फरीज ए दीनी का इत्तेहाद हो सकता था, और बस।

चुनाँनचे इस उसूल और मकसद की अहमियत को ज्यादा नुमायाँ कर दिया इमाम हुसैन[अ०स०] के इस तरीक ए कार ने, कि आपने हर शख्स से यह इसरार किया कि तुम मेरा साथ छोड दो और मुझे इस मुहिम को यक्क–ओ–तन्हा (अकेले) करने दो यह सूरत इसलिए इख्तियार की गई कि आम तौर पर अवाम साहिबुर राय नहीं होते जो भी राय होती है वह लीडरों की। अब अगर इमाम हुसैन[अ०स०] वाकेआत की हकीकी नौइयत से हर हर मुतनफ्फिस (शख्स) को पूरे तौर पर आगाह न करते तो यह सिर्फ आप ही का इकदाम समझा जाता क्योंकि दूसरों ने सिर्फ आपके असर और दबाव से इस मुआमले मे आपका साथ दिया होता। मगर इमाम हुसैन[अ०स०] यह चाहते थे कि हर दिमाग पर वजन डाल कर उसे खुद उसके फेअ्ल का मोहर्रिक (तहरीक में शरीक) और जिम्मेदार बना दें। ऐसा नहीं था कि हुसैन[अ०स०] अपने मकसद के लिए उन सबको नज़्र (कुरबान) कर रहे हो बल्कि हकीकतन उनमें से हर एक ने अपना सर हथेली पर रख कर हुसैनी मकसद पर खुद को निसार किया।

इसलिए उनमे से हर एक मोहर्रिक (शरीक) इन्फ़ेरादी (जाती) और इजतेमाई (गुरूप की) हैसियत से हर तरह खुद उसका जमीर था और दर हकीकत यही उनके सिबाते कदम और इस्तेकलाल (अटल होने) का बड़ा राज था।

अठ्ठाईसवाँ बाब

अक्रुबा–ए–इमाम (क़रीबी रिश्तेदार) यानी बनी हाशिम की कुर्बानियाँ

असहाब की शहादत के बाद अब इमाम हुसैन[अ०स०] के अइज्जा यानी बनी हाशिम की बारी थी। हक़ीक़त मे असहाब की वफ़ादारी का यह एक हैरत अगेज कारनामा था कि जब तक उनमे का एक भी बाक़ी रहा उन्होंने बनी हाशिम में से किसी एक फ़र्द को भी कोई गजन्द (आँच नहीं आने दी) नहीं पहुँचने दिया। हालाँकि उस दरमियान में जगे मगलूबा भी हुई, तीरों की बारिश भी हुई मगर इस सब मे कोई एक जख्म भी किसी एक हाशमी जवान या बच्चे को लगने का तारीख मे पता नहीं है।

इन सबकी शहादत के बाद इमाम हुसैन[अ०स०] के बेटे भाई, भतीजे और भान्जे एक एक करके जामे शहादत नोश करने लगे। चुनाँनचे उनके हालात भी तरतीबे शहादत के मुताबिक दर्ज किए जाते हैं।

(1)हज़रत अली अकबर[अ०स०]

आप इमाम हुसैन[अ०स०] के फरजन्द थे और सिलसिल–ए–बनी हाशिम के शोहदा में सबसे पहले आपकी जात थी।[1] आपकी वालिदा लैला बिन्ते अबी मर्रा बिन उरवह बिन मसऊद बिन माबद अल–सकफी थी और उनकी माँ मैमूना बिन्ते अबी सुफ़ियान बिन हर्ब।

इस तरह अली अकबर[अ०स०] बाप की तरफ से बनी हाशिम में दाखिल और माँ की तरफ से कबील–ए–सकीफ़ से तअल्लुक रखते थे। नीज आपकी वालिदा अमीरे शाम मुआविया बिन सुफियान की भान्जी और यजीद की फूफीजाद बहन थीं इस लिहाज़ से आपको मुवाफिक़ (तरफ़दार) और मुखालिफ सब ही इज्जत की निगाह से देखते थे और आपकी अजमत का एहसास रखते थे। यहाँ तक कि दरबारे शाम मे आपका तजकिरा होता था।

[1]तबरी, जि/6, पेज/256, अख़बारुत्तुवाल पेज/254

चुनाँनचे एक मर्तबा मुआविया ने अपने हाजरीने दरबार से पूछा था कि तुम्हारे नजदीक मन्सबे खिलाफत का सबसे ज्यादा हक़दार कौन है? दरबारियो ने ख़ुशामद में कह दिया था कि 'आप'' मगर खुद मुआविया ने कहा 'नहीं। सबसे ज्यादा मुस्तहके खिलाफ़त हुसैन[अ0स0] के फ़रजन्द अली हैं जिनके दादा रसूल अल्लाह थे। उनमें बनी हाशिम की शुजाअत, बनी उमैया की सखावत और कबील ए सकीफ की खुद्दारी की सिफतें यकजाई (एक होकर) हकीकत से मौजूद हैं।''

उस दौर के उमवी शोअ्रा आपकी तारीफ व तौसीफ में अशआर भी नज़्म किया करते थे। चुनाँनचे अबू उबैदा और खलफ अहमर ने जो दो बड़े अदीब हैं। उन अशआर को नक्ल किया है जो अली अकबर की शान में उस जमाने में किए गए थे। उनका मज़मून यह है:

'कोई भी जमीन पर उनके मिस्ल आँखो से दिखाई नहीं दिया। उनके जियाफत खाने मे मेहमानों के लिए गोश्त बराबर पकता रहता है और जब पक जाता है तो मेहमानो से अजीज नहीं किया जाता। जब उनके मेहमान खाने की आग रौशन होती है तो उनकी इज्जत और बुज़ुर्गी उस आग में हरारत पैदा करती है। इससे मकसूद यह होता है कि उस आग को मुसीबतज़दा और गरीब लोग देखें या किसी ऐसे शख़्स की नज़र पड़ जाए जो बेकस और बेबस हो और उसे देख कर मेहमान खाने में चला आए। आप कभी दुनिया को दीन पर तरजीह नहीं देते और न हक़ को बातिल के एवज फरोख्त करते हैं। मेरा रूए सुखन (यह शेअ्र) लैला के फ़रजन्द की तरफ है जो साहिबे अता व जूद (सखावत) है। वह जो बड़े हस्ब व नसब वाली खातून के फरजन्द हैं।''

मुमकिन है कि उमवी सियासत की बड़ी उम्मीदे आपकी जात से वाबस्ता हों उसके मन्सूबे हो कि आपकी ननिहाली खुसूसियत पर जोर देते हुए आपके अवसाफ़ व कमालात को सराह कर फित्री हैसियत से आपके दिल में यह एहसास जागुजी (पैदा) किया जाए कि आप बनी हाशिम में एक इलाहिदा शान और हैसियत के मालिक हैं और इस तरह ख़ानदाने बनी हाशिम में फूट पड़ने के इम्कानात पैदा हो जायें।

अगर अली अकबर[अ0स0] की जगह कोई कम्जोर नफ्स का इन्सान होता तो बहुत मुमकिन था कि वह सियासत की इन चालों का शिकार हो जाता मगर आपका बलन्द और पाकीज़ा नफ्स इस फ़रेब में आने वाला न था। आपने कभी इन बातो की तरफ़ ऐतिना (तवज्जो) भी न की। और अमवी फ़रेब कारियों की

शिकस्त पर आपने मैदाने करबला में फ़रज़न्दे फ़ातिमा ज़हरा[स0अ0] की हिमायत मे अपना खून बहाकर कभी न मिटने वाली मोहर सब्त कर दी और आपकी वालिद–ए–गिरामी लैला ने मुहब्बते आले रसूल मे उन तमाम रूह फ़रसा (जान लेवा) मसाएबो आलाम को जो वाकए करबला के दौरान में और उसके बाद अहले बैते नुबूवत को मुतवातिर (लगातार) पेश आते रहे इन्तेहाई सब्रो इस्तेकलाल के साथ बरदाश्त करके उनके साथ अपनी रूहानी यगानगी (जानो दिल से) और इत्तेहाद का इतना मुकम्मल सुबूत फ़राहम कर दिया कि आज तक उनके मुतअल्लिक इस हकीकत का बयान करना कि उन्हें खानदाने बनी उमैया से क़रीब का तअल्लुक था तबियत पर बार गुजरता है

अली अकबर[अ0स0] सूरतो सीरत दोनों मे रसूल अल्लाह[स0अ0] का नमूना थे और बहुत नुमायाँ शबाहत रखते थे इसलिए इमाम हुसैन[अ0स0] को अपने फ़रज़न्द के साथ बडी मुहब्बत थी। करबला पहुँचने से क़ब्ल कस्रे बनी मकातिल मे इमाम हुसैन[अ0स0] ने ख्वाब में एक सवार को देखा था जो यह कह रहा था कि यह लोग जा रहे हैं और मौत इनकी तरफ बढ रही है। चुनॉनचे उसे सुनकर अली अकबर ने आपसे सवाल किया था कि बाबा' क्या हम हक पर नही हैं? इमाम ने जवाब दिया था कि बेशक हम हक पर हैं। उस पर अली अकबर ने खुश होकर कहा था कि फिर हमे मौत की क्या परवाह है।[1] इसी एक वाकए से अली अकबर के इस्तेकलाल (मजबूत इरादा) और हक की राह में फ़िदाकारी का अच्छी तरह अन्दाज़ा हो सकता है।

शैख मुफीद [र0अ0] की तसरीह के मुताबिक अली अकबर की उम्र वाक़–ए–करबला में उन्नीस बरस की थी और हुस्नो जमाल में अपनी मिसाल आप थे।[2] वह अकबर इस लिहाज़ से कहे गए कि वाकेय–ए–करबला में शहीद होने वाले अली असग़र के लिहाज से बड़े थे मगर अपने बाप की औलाद में वह इमाम जैनुल आबेदीन[अ0स0] से सिन मे छोटे थे इसलिए उनके एतेबार से इनको अली असग़र कहना दुरूस्त है।[3]

हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] ने करबला में अपना एक खास घोड़ा जिसका नाम लाहक़ था अली अकबर की सवारी के लिए दिया था।[4]

---

[1]इरशाद पेज 237
[2]इरशाद, पेज 253
[3]इरशाद. पेज / 265
[4]तबरी. जि, 6. पेज / 242

आप सुबहे आशूर ही से बेचैन होंगे कि मैदान जिहाद मे जाकर हाशमी शुजाअत के जौहर दिखाए मगर हुसैनी तदबीर ने जो निज़ामे अमल क़ायम कर दिया था उसमे दरअन्दाजी (अपनी मर्जी) का किसी को हक न था। जब सब असहाब शहीद हो चुके तो सबसे पहले अली अकबर ने इज्ने जिहाद तलब किया इमाम ने अपने फ़रजन्द को नरग ए आदा मे भेजने के मुतअल्लिक़ पसो पेश तो नहीं किया मगर दिल की बेचैनी ने जजबात में तलातुम (हलचल) जरूर पैदा कर दिया। आपने आसमान की तरफ हाथ बलन्द करते हुए बारगाहे इलाही में अर्ज़ किया "ख़ुदा वन्दा गवाह रहना उन लोगो के जुल्म पर कि अब जा रहा है उनकी तरफ वह नौजवान जो सूरत व सीरत और गुफ्तार में तेरे रसूल के साथ सबसे ज्यादा मुशाबेहत रखता है जब हम तेरे पैगम्बर की जियारत के मुशताक होते तो इसका चेहरा देख लेते थे।"[1]

कोई शक नहीं कि इस मुख्तसर मुनाजात के अलफाज उस बेपाया अन्दोह (बेचैनी रज) की पूरी तशरीह कर रहे हैं जो उस वक्त इमाम के दिल पर गालिब था मगर उसी के साथ वह उस इज्जत नफ्स और बलन्द निगाह के हामिल हैं जो हुसैन[अ0स0] की जात से मखसूस थी उनको ज्यादा कलक है तो इस बात का कि इस वक्त मेरे जद्दे बुजुर्गवार रसूल की तस्वीर मुझसे जुदा हो रही है।

यही वह इम्तियाजी शान है जिससे हुसैन[अ0स0] हकीकतन हुसैन मालूम होते हैं "जा रहा है" के अलफाज में इज्ने जिहाद लाजमी तौर पर मुजमर (छिपा) है। चुनाँनचे इस मुनाजात के उनवान ही से अली अकबर समझ गए कि मुझे मैदाने जग मे जाने की इजाज़त हासिल है। अब मैदान मे आए और यह रजज पढ़ने लगे

"मैं हूँ अली हुसैन[अ0स0] का बेटा और अली[अ0स0] का पोता रब्बे काबा की कसम सबसे ज्यादा हमको रसूल अल्लाह की विरासत का हक पहुँचता है

ख़ुदा की क़सम हमारे बारे में फैसला जिनाज़ादा की औलाद हरगिज नहीं कर सकती।[2]

यह रजज शोहदा–ए–करबला में सबसे अलग खास अन्दाज का हामिल था। दूसरे शोहदा के रजज मे ज्यादा तर शुजाआने अरब के मामूल के मुताबिक़ अपनी शुजाअत का इजहार मकसूद था या इमाम[अ0स0] से अपने अहदे

---

[1]इरशाद पेज/253

[2]तबरी, जि 6, पेज/256, इरशाद, पेज/253

वफ़ा की तजदीद (फिर से एलान किया) लेकिन अली अकबर का रजज एक तबलीगी हैसियत रखता था उसके मुख़्तसर अलफ़ाज मे रसूल अल्लाह[स०अ०] के साथ अपनी क़राबतदारी और इस्तेहक़ाक़ विरासत(हकदार) और अपने मदद्दे मुक़ाबिल की पस्ती को दिखाते हुए उसकी इताअत से इन्कार पर जोर दिया गया था। गोया इमाम हुसैन[अ०स०] के मक़ासिद जंग का एलान किया जा रहा था।

जनाबे अली अकबर[अ०स०] ने कई हमले किए।[1] और बराबर यही अशआर पढ़ रहे थे। इस शदीद जंग में आप खुद भी बहुत जख़्मी हो गए थे। मगर फिर भी पै दर पै हमले किए जाते थ। फौजे मुख़ालिफ में के एक सिपाही मुर्रा बिन मुन्कज बिन नोमान अबदी ने अपने साथियों से कहा 'अगर अब की मर्तबा इस जवान ने फिर हमला किया और मेरी तरफ से गुजरा तो मैं जरूर उसके बाप को उसके गम में मुबतिला करूँगा।'

एसा ही हुआ अली अकबर तलवार हाथ मे लिए दुश्मनो पर हमला आवर हो रहे थे कि मुर्रा ने पुश्त की तरफ़ से नैजा मारा जो सीने के पार हो गया।

अली अकबर घोड़े से जमीन पर गिरे और दुश्मनों ने चारो तरफ़ से घेर कर आपके जिस्म को तलवारों से टुकड़े टुकड़े कर डाला।

फित्री हैसियत से अली अकबर की शहादत का हुसैन[अ०स०] पर बड़ा असर हुआ आपने फरमाया 'खुदा फना करे उस जमाअत को जिसने तुझे कत्ल किया ए मेरे फरजन्द कितनी जुरअतें बढ़ गईं उन लोगों की खुदा और उसके रसूल[स०अ०] के मुकाबले में। तेरे बाद दुनिया की जिन्दगी पर खाक है '[2]

आप नौजवानाने बनी हाशिम की तरफ मुतवज्जे हुए और फरमाया कि 'उठाओ अपने भाई की लाश सब नौजवान आगे बढ़े और उन्होंने अली अकबर की लाश को लाकर उस ख़ैमे के आगे रख दिया जो मरकजे सिपाह की हैसियत रखता था।[3]

(2)अब्दुल्लाह बिन मुस्लिम बिन अक़ील

आपकी वालिदा रूक़य्या बिन्ते अली बिन अबी तालिब थीं जो उम्मे हबीब बिन्ते एबाद बिन रबिया बिन यहिया बिन अलकमा तगलबिया के बत्न से थीं जिन्हें हजरत अली[अ०स०] ने जंगे यमामा या ऐनुत्तम्र के असीरों में से खरीद

[1]अख़बारुत्तुवाल पेज/264 तबरी जि, 6. पेज/256
[2]तबरी. जि, 6. पेज/256, इरशाद, पेज/253
[3]तबरी. जि/6. पेज/256

फ़रमाया था। इस एतेबार से अब्दुल्लाह इमाम हुसैन[अ०स०] के चचाज़ाद भाई के फ़रजन्द भी थे और भान्जे भी

मुस्लिम बिन अक़ील की आलमे गुरबत मे शहादत भी एक ताजा सानेहे की हैसियत रखती थी और उसका असर इमाम हुसैन[अ०स०] के दिल पर बहुत ज्यादा था चुनाँनचे इसी लिए शबे आशूर आपने अपने असहाब को मुजतमा करके जो तक़रीर फ़रमाई थी उसके आखिर में औलादे अकील से खास तौर पर खिताब फ़रमाया था कि "तुम्हारे लिए मुस्लिम की शहादत काफी है। तुम चले जाओ मैं तुमको इजाजत देता हूँ।" मगर उन सबने मुत्तफिक होकर कहा था कि यह मुमकिन नही हम सब भी आप पर अपनी जानें निसार करेंगे।[1]

उनमें सबसे पहले शहीद अब्दुल्लाह थे। मालूम होता है कि आप बहुत कमसिन थे अली अकबर की शहादत से खैम ए हुसैनी मे जो कोहराम बरपा हुआ तो कमसिन बच्चे घबरा कर बाहर निकल पड़े बेरहम दुश्मनों को मौका मिल गया अम्र बिन सबीह सदाई ने अब्दुल्लाह बिन मुस्लिम बिन अकील को तीर लगाया।[2] जो आपकी पेशानी की तरफ आया आपने घबराहट में हाथ अपना पेशानी पर रखा। तीर ने हाथ को पेशानी के साथ छेद दिया फिर दूसरा तीर आया जो सीने पर पडा और उसने काम तमाम कर दिया।[3] दूसरी रिवायत यह है कि एक जालिम ने नैजे का वार किया और सीने पर मारा। उससे आपने शहादत पाई।[4]

(3) मुहम्मद बिन मुस्लिम बिन अक़ील

अब्दुल्लाह के मुखतलिफुल बत्न (दूसरी माँ से) भाई थे इब्ने जूज़ी ने लिखा है कि आपकी वालिदा उम्मे वलद थीं। अब्दुल्लाह की शहादत के बाद औलादे अबी तालिब ने एक साथ हमला कर दिया। इमाम हुसैन[अ०स०] ने आवाज दी "हाँ मेरे चचा के फरजन्द मौत के मरहले को सर कर दो" उनमे से मुहम्मद बिन मुस्लिम अबू मरहम अजदी और यकीत बिन अयास जहनी के हाथ से शहीद हुए।

---

[1] इरशाद पेज / 244

[2] अख़बारूत तुवाल पेज / 254

[3] तबरी. जि / 6. पेज / 256

[4] इरशाद पेज / 253

(4)जाफ़र बिन अक़ील

अब्दुल्लाह बिन मुस्लिम की शहादत के बाद जाफ़र बिन अकील ने जग की. आप यह रजज पढ़ रहे थे। 'मैं मक्के का रहने वाला हूँ[1] तालिब के खानदान का हाशिम की नस्ल और गालिब के घराने से। यकीनन हम तमाम क़बाएल के सरदार हैं और हुसैन[अ०स०] तमाम पाकीजा अशखास मे सबसे ज्यादा पाकीजा "

बिल आखिर आपको अब्दुल्लाह बिन अरजा खसअमी ने तीर मार कर शहीद किया।[1]

(5)अब्दुर्रहमान बिन अक़ील

आप मैदाने जग में आए। रजज पढ़ी और जिहाद किया आखिर उसमान बिन खालिद जहनी और बशीर बिन खौत हमदानी दोनों ने मिलकर आपको शहीद कर दिया।[2] दूसरा कौल यह है कि अब्दुल्लाह बिन उरवा ख़सअमी ने तीर का निशाना बनाया।[3]

(6) मुहम्मद बिन अबी सईद बिन अक़ील

आपने मैदाने करबला में जिहाद किया। और यक़ीत बिन यासिर जहनी ने आपकी पेशानी पर तीर मारा जिससे आप शहीद हो गए।

(7)मुहम्मद बिन अब्दुल्लाह बिन जाफ़र बिन अबी तालिब

आप इमाम हुसैन[अ०स०] के चचाजाद भाई के फ़रजन्द थे। आपकी वालिदा का नाम खौसअ् बिन्ते हफसा बिन सकीफ था और वह कबील–ए–बनी बक्र बिन वाएल से थीं आप और आपके भाई औन जो जनाबे जैनब बिन्ते अली[अ०स०] के फरजन्द थे दोनों अपने वालिद बुजर्गवार अब्दुल्लाह बिन जाफर के भेजे हुए आकर इराक के रास्ते मे काफिल–ए–हुसैनी से मुलहक हुए थे उस वक्त जब इमाम मक्के से बाहर निकल चुके थे।

रोजे आशूर अब्दुर्रहमान बिन अकील के बाद आप मैदान में आए और जिहाद किया और बिल आख़िर आमिर बिन नहशल तमीमी के हाथ से शहीद हुए।[4]

---

[1]तबरी. जि/6, पेज/356

[2]तबरी, जि/6, पेज/256

[3]अख़बारुत तुवाल पेज/254

[4]तबरी, जि/6, पेज, 256, इरशाद पेज/252

(8) औन् बिन् अब्दुल्लाह बिन् जाफ़र

आप जैनब बिन्ते अली[अ०स०] के बत्न से थे और इस तरह इमाम हुसैन[अ०स०] के हकीकी भान्जे थे अपने भाई मुहम्मद के बाद आप मैदाने कारज़ार में आए और अब्दुल्लाह बिन कतबा ताई के हाथ से दरज–ए–शहादत पर फ़ाएज़ हुए [1]

(9) क़ासिम् बिन् हसन

आप इमाम हुसैन[अ०स०] के बड़े भाई हज़रत इमाम हसन[अ०स०] के फ़रज़न्द थे अभी आप हद्दे बुलूग को न पहुँचे थे कि मारक–ए–करबला दरपेश हुआ और हुस्नो जमाल का यह आलम था कि जब मैदाने जंग में आए तो फ़ौजे दुश्मन के एक सिपाही का बयान है यह मालूम हुआ कि जैसे चाँद का एक टुकड़ा सामने नमूदार हो गया। उनके जिस्म पर जिरह भी न थी बल्कि सिर्फ़ एक पैराहन (लिबास) पहने हुए थे। पैर में नालैन (चप्पल) ऐसे थे जिनमें से एक का तस्मा टूटा हुआ था।[2] साफ़ ज़ाहिर है कि उन्हें असलेह ए जंग से मुसलेह (हथियार से लैस) नहीं किया गया था सिर्फ़ हाथ में तलवार लिए हुए वह नुसरते इमाम के जोश से मैदान में आ गए और हमला कर दिया

उमर बिन सअ्द नफ़ील अज़दी की नज़र जो कासिम पर पड़ी तो उसने कहा कि

'मैं इस बच्चे को क़त्ल करूँगा। बाज़ लोगों ने रोका भी मगर उसने न माना और कासिम के पास आकर सर पर तलवार लगाई। कासिम मुँह के बल ज़मीन पर गिर गए और अपने चचा को मदद के लिए पुकारा। हुसैन[अ०स०] ग़ज़बनाक शेर की तरह झपट कर करीब पहुँचे उमर बिन सअ्द बिन नुफ़ैल जिसने कासिम को क़त्ल किया था अभी पास ही मौजूद था। आपने उसपर तलवार का वार किया जिससे उसका हाथ कोहनी से कट कर गिर गया। लशकरे मुख़ालिफ़ उसके बचाने के लिए हुसैन[अ०स०] पर टूट पड़ा मगर इस तरह चारों तरफ़ से बेतहाशा घोड़े दौड़ा कर वह लोग उसकी कुमक को आए कि वह खुद अपने हवाख़्वाहों के घोड़ों से पामाल होकर हलाक हो गया

जब मजमा मुन्तशिर हुआ तो हुसैन[अ०स०] क़ासिम के सिरहाने खड़े होकर हसरत व अन्दोह के साथ फ़रमाने लगे।

---

[1] तबरी. जि / 6. पेज / 256, इरशाद पेज / 253

[2] तबरी जि / 6 पेज / 256. इरशाद पेज / 253-254

'तेरे चचा पर बहुत शाक है यह अम्र कि तू उसे पुकारे और वह तेरी खबर न ले सके या तेरी आवाज़ पर आने के बाद भी तुझे कोई फाएदा न पहुँचा सके।'

उसके बाद आपने खुद कासिम की लाश उठाई इस तरह कि सीने से सीना मिला हुआ था और पैर जमीन पर खत देते जाते थे और जहाँ अली अकबर और दूसरे अजीजों की लाशें पहले से मौजूद थीं कासिम की लाश को भी वही लाकर लिटा दिया।[1]

(10) अबू बक्र बिन हसन[अ०स०]

आप इमाम हसन[अ०स०] के फरजन्द थे। आपकी वालिदा का नाम उम्मे इसहाक बिन्ते तलहा अल तमीमी अब्दुल्लाह इब्ने अक़बा गनवी ने तीर मारा जिससे आप शहीद हो गए।[2]

(11)मुहम्मद बिन अली बिन अबी तालिब[अ०स०]

आप हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के फ़रजन्दों में मुहम्मद बिन हनफिया से छोटे थे इसलिए मुहम्मदुल असगर कहलाते थे आपकी वालिदा ब–कौले असमा बिन्ते उमैस खसअमिया और बकौले उम्मे वलद।[3]

मुहम्मद अपने वालिदे बुजुर्गवार के बाद अपने भाई इमाम हसन[अ०स०] और फिर इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ रहे और रोजे आशूर मैदाने जिहाद में बहुत से दुश्मनों को कत्ल किया। आखिर कबील–ए–बनी अहान बिन दारिम के एक शख्स ने आपको तीर मारा जिससे आप दर्जे ए शहादत पर फाएज हुए और वह आपका सर जुदा करके उमरे सअ्द के पास ले गया।[4]

(12) अब्दुल्लाह बिन अली

आपकी वालिदा उम्मुल बनीन फातिमा बिन्ते अबुल अजल हिज़ाम इब्ने खालिद बिन रबिया बिन आमिर अल वहीद बिन कअ्ब बिन आमिर इब्ने कलाब थीं।[5] हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] ने अपने भाई अकील से जो अन्साबे (नसब की जमा) अरब से खूब वाकिफ थे यह फरमाइश की थी कि ऐसे खानदान की लडकी तजवीज कीजिए जो बडे बहादुराने अरब की नस्ल से हो

---

[1]तबरी. जि/6, पेज/256. इरशाद पेज/254

[2]अखबारुत तुवाल. पेज/354 इरशाद पेज/254

[3]तबरी. जि/6, पेज/89) और तीसरे कौल के मुताबिक लैला बिन्ते मसऊद दारमिया थीं इरशाद पेज/189

[4]तबरी. जि/6, पेज/257

[5]तबरी. जि/6, पेज/89 व 336

ताकि उससे जो औलाद हो वह भी बड़ी बहादुर और जंग आजमा हो। अकील ने कहा था कि उम्मुल बनीन कलाबिया से अक्द कीजिए जिसके बाप दादा बड़े शुजाअ् व बहादुर हैं। चुनानचे आपने उम्मुल बनीन से अक्द कर लिया था

उनके सिलसिल ए अजदाद (दादा परदादा वगैरह) में मलाएबुल असना अबू बर्राअ् और तुफ़ैल फ़ारस करजन और आमिर बिन तुफ़ैल मुल्के अरब में बहुत मशहूर सूरमा गुज़र चुके थे।

लुबैद बिन रबीआ शाएर जो मुअल्लकात (काबे पर कसीदे लटकाए जाते थे उन में से उनका क़सीदा भी था) मे से एक कसीदे का मुसन्निफ था वह भी इसी खानदान से था चुनॉंनचे उसने अपने खानदानी खुसूसियात पर नोमान बिन मुन्जिर बादशाह हीरा के भरे हुए दरबार मे इन अलफाज में फख्र किया था

نحن بنو ام البنين الاربعه
ونحن خير عامر بن صعصعه
الضاربون الهام وسط المجمعه

इस आवाज को तमाम क़बाएले अरब के नुमाइन्दों ने खामोशी के साथ सुना था इन अशआर से जाहिर होता है कि उम्मुल बनीन इस सिलसिले में पहले भी कोई मशहूर खातून गुजर चुकी थीं और उनके भी चार बेटे थे जो बड़ी शोहरत के मालिक थे।

उम्मुल बनीन के बत्न से हजरत अली[अ०स०] के चार फरजन्द थे

(1) अबुल फजलिल अब्बास जो अपने भाईयों मे सबसे बड़े थे। (2) अब्दुल्लाह जिनके हालात यहाँ दर्ज किए जा रहे हैं (3) उसमान। (4) जाफ़र जो सबसे छोटे थे

अब्दुल्लाह बिन अबील महल बिन खिराम बिन खालिद बिन रबीआ बिन आमिर अल-वहीद उम्मुल बनीन का भतीजा था और कूफे के बड़े एमायद (नामवर लोगों) मे शुमार होता था। इत्तेफाक से उस वक्त जब शिम्र अब्दुल्लाह बिन जियाद का खत लेकर करबला की जानिब रवाना हो रहा था, वह भी दरबारे इब्ने जियाद में मौजूद था। उसने इब्ने जियाद से कहा कि "हमारे खानदान की एक लड़की के फ़रजन्द हुसैन[अ०स०] के साथ हैं आप उनके लिए अमान नामा लिख दीजिए। यह इस्तदआ (दरख़्वास्त) इब्ने जियाद ने मन्जूर कर ली और अब्बास और आपके भाईयों के लिए अमान नामा लिख दिया जिसे

अब्दुल्लाह बिन अबी महल ने अपने एक गुलाम करनान नामी के हाथ करबला रवाना कर दिया वह उसको लेकर उन मुजाहिदों के पास पहुचा और कहा कि आपके मामूजाद भाई ने इब्ने जियाद से हासिल करके भेजा है उन चारों ने यकजुबान होकर कहा कि हमारे भाई को हमारी तरफ से सलाम कह देना और कहना कि हमको इब्ने जियाद के अमान नामे की जरूरत नहीं है। अल्लाह की अमान हमारे लिए बहुत काफी है।[1] खुद शिम्र जिल जौशन भी इसी खानदान यानी आले वहीद कलाबी नस्ल आमिर बिन सअ्सा से था[2] चुनाँनचे करबला पहुँच कर इब्ने जियाद का खत उमरे सअ्द तक पहुँचाने के बाद सबसे पहला काम जो उसने किया वह यही था कि जमाअते हुसैनी के सामने खड़े हो कर आवाज दी कि "कहाँ हैं हमारी बहन के बेटे। यह सुनकर अब्बास[अ०स०] और आपके तीनों भाईयों ने सामने आकर पूछा कि हमसे क्या कहना चाहते हो? उसने कहा "तुम लोग अमान मे हो।" मुजाहिदों ने तेवर बदल कर जवाब दिया कि "खुदा लानत करे तुझ पर और तेरे अमान पर, हमारे लिए अमान है और फ़रजन्दे रसूल के लिए अमान नहीं है।"[3]

चूँकि रोजे आशूर अन्सार व अकरुबा–ए–हुसैन[अ०स०] में से हर फर्द यह चाहता था कि जहाँ तक मुमकिन हो अपने से वाबस्तगी रखने वाली हर अजीज हस्ती को खुद अपनी जिन्दगी में राहे हक मे निसार किया जाए। इसी बिना पर जनाबे अब्बास[अ०स०] ने भी एक एक करके अपने भाईयो को अपने पहले मैदान में भेजा और फरमाया कि "बढ़ो अपने आका पर निसार हो।[4] ताकि तुमको कत्ल होते हुए मैं अपनी आँखों से देख लूँ और उसको अपने लिए तोशे ए आख़िरत समझूँ। क्योंकि तुम्हारे तो कोई औलाद है नहीं।[5] मतलब यह यह था कि अगर तुम्हारे औलाद होती और काबिले जंग होती तो तुम उसका इन्तेजार करते कि पहले उसको अपने सामने कत्ल होने भेज दें तो खुद जायें। चुनाँनचे अब्दुल्लाह जो आपके बाद उन भाईयों में सबसे बड़े थे मैदान मे गए और शदीद जंग के बाद हानी बिन सुबैत हजरमी की तलवार से शहीद हुए[6]

---

[1] तबरी, जि/6, पेज/236

[2] अख़बारुत तुवाल, पेज/254

[3] तबरी, जि/6, पेज/237 इरशाद, पेज/242

[4] अख़बारुत तुवाल, पेज/255

[5] इरशाद, पेज/255

[6] तबरी जि/6 पेज 257 इरशाद पेज/255 दैनवरी ने हानी बिन सबीब हजरमी लिखा है। अख़बारुत तुवाल पेज 255

(13)उसमान बिन अली[अ०स०]

आप अबुल फजलिल अब्बास के दूसरे भाई थे जब आपकी विलादत हुई तो अली इब्ने अबी तालिब[अ०स०] ने आपका नाम उसमान रखते हुए फरमाया था कि मैं अपने दोस्त उसमान बिन मजऊन के नाम पर इस मौलूद का नाम रख रहा हूँ। यह उसमान इब्ने मजऊन बड़े जलीलुल क़द्र सहाबी थे रसूल अल्लाह[स०अ०] के सामने उनका इन्तेकाल हुआ था और आपने उनको जन्नतुल बकी में दफ्न किया था

जनाबे अब्बास[अ०स०] ने अब्दुल्लाह के बाद उसमान को मैदाने जंग में भेजा। चुनाँनचे आपने जिहाद किया और बिल–आखिर खूली बिन यजीद असबही के तीर से जमीन पर गिरे और बनी अबान बिन दारिम के एक शख्स ने आपका सर जिस्म से जुदा किया।[1]

(14) जाफ़र बिन अली[अ०स०]

आप उम्मुल बनीन की औलाद में सबसे छोटे थे उसमान की शहादत के बाद जनाबे अब्बास आपकी तरफ़ मुतवज्जेह हुए और कहा 'जाओ जैसे तुम्हारे दोनों भाईयों का सदमा मैंने बरदाश्त किया वैसे तुम्हारा भी बरदाश्त करूँ। क्योकि तुम मे से किसी के भी औलाद नहीं है।"

चुनाँनचे जाफर ने भी जिहाद किया और बिल आखिर हानी बिन सुबैत हजरमी के हाथ से शहीद हुए [2]

एक रिवायत के मुताबिक अब्दुल्लाह के बाद जाफर और जाफर के बाद उसमान शहीद हुए।[3]

(15) अबुल फ़जलिल अब्बास बिन अली[अ०स०]

आपकी माँ उम्मुल बनीन के खानदानी खुसूसियात का तजकिरा इसके पहले आपके भाई अब्दुल्लाह के हालात में हो चुका है।

सन 36 हिजरी में आपकी विलादत हुई थी चौदह बरस आपने अपने वालिदे बुजुर्गवार के साय ए आतिफ़त (मेहरबान) में परवरिश पाई सन 40 हिजरी में हजरत अली[अ०स०] की शहादत के बाद से दस बरस आप अपने भाई इमाम हसन[अ०स०] के जेरे तरबियत रहे और सन 50 हिजरी में इमाम हसन[अ०स०] के जहर दगा से शहीद होने के बाद से आशूर मुहर्रम सन 61 हिजरी तक का

---

[1]तबरी, जि/6. पेज/257 इरशाद, पेज/255

[2]तबरी, जि 6. पेज/257 इरशाद, पेज/255

[3]अख़बारुत तुवाल, पेज/255

ज़माना आपने अपने भाई इमाम हुसैन[अ०स०] की रिफ़ाक़त में बसर किया। वाक़ेय–ए–करबला में आपकी उम्र 34 बरस की थी।

आप हुस्नो जमाल और कुव्वतो शुजाअत मे अपने ज़माने में बहुत मुमताज़ दर्जा रखते थे और आम तौर पर कमरे बनी हाशिम के लकब से मशहूर थे। आप ऐसे कदआवर भी थे कि अस्पे दो रिकाबा (दो रिकाब का घोड़ा) पर सवार होने के बावजूद आपके पावँ ज़मीन पर खत देते जाते थे

यह तो आपकी ज़ाहरी शान थी और बातनी औसाफ के मुतअल्लिक इमाम जाफरे सादिक[अ०स०] ने फरमाया है कि "हमारे चचा अब्बास बिन अली[अ०स०] बड़े दींदार और कामिलुल ईमान थे। आपने हुसैन बिन अली[अ०स०] का साथ देते हुए मारिक ए करबला मे कारहाये नुमायाँ अन्जाम दिए और आखिर दरज–ए–श्हादत पर फ़ाएज़ हुए।'

नहर पर फौजे मुखालिफ के कब्जे के बाद जब अतफाले (बच्चों) हुसैन[अ०स०] पर प्यास का गल्बा हुआ तो अबुल फजलिल अब्बास नहर से पानी लाने पर मामूर हुए इमाम हुसैन[अ०स०] ने तीस सवार और बीस प्यादे बीस मश्कों के साथ अपके हमराह कर दिए थे। चुनाँनचे जब नहर के करीब पहुचे तो अम्र बिन हज्जाज जो नहर का मुहाफिज था अपनी सिपाह के साथ सद्दे राह (रूकावट बना) हुआ अब्बास[अ०स०] ने सवारों की जमाअत के साथ उसका मुकाबला किया और प्यादों से फरमाया कि तुम तेजी से अपनी मश्कें पानी से भर लो। मुख्तसर यह कि अब्बास[अ०स०] की क़यादत मे मश्कें पानी से भर कर ख्यामे हुसैनी मे पहुँचा दी गईं।[1] इसी वाकेए की बिना पर आपको "सक्का" का लक़ब हासिल हुआ।

इब्ने ज़ियाद के तहरीरी अमान नामे को ठुकरा देना आपकी वफा शिआरी का एक बड़ा कारनामा था। इस वाकये में अगरचे तमाम भाई मुशतरक हैसियत रखते थे मगर बहरहाल आपके छोटे भाई सब आपके मुतीअ् (कहने मे) थे। इसलिए यह समझना बिल्कुल दुरूस्त है कि दीगर भाईयों की वफादारी में जनाब अब्बास[अ०स०] की इन्तेहाई पुख़्तगी और जाँ निसारी बहुत बड़ी हद तक असर अन्दाज थी

जब मुहर्रम की नवीं तारीख़ सहपहर के वक्त उमरे सअ्द ने अपनी फौज के साथ अन्सारे हुसैन[अ०स०] पर दफअतन (अचानक) हमला कर दिया था तो

[1] अख़बारूत तुवाल, पेज / 253

अब्बास को इमाम ने उस अचानक हमले का सबब दरयाफ्त करने पर मामूर फरमाया।[1]

इस वाकये से जाहिर है कि अब्बास की सन्जीदगी, मुआमला फहमी, वफादारी और शुजाअत पर इमाम हुसैन[अ०स०] को कितना एतेमाद था।

चुनाँनचे अब्बास ने इन्तेहाई सब्रो सुकून के साथ इस नाजुक मरहले को सर किया और एक शब के लिए जंग मुलतवी करा ली।

शबे आशूर जब इमाम ने अपने तमाम असहाब को जमा करके फरमाया था कि मैं अपनी बैयत से तुम सबको आजाद करता हूँ, जिसका जिधर दिल चाहे चला जाए बल्कि तुम मे का एक एक मेरे एक एक अजीज को भी अपने साथ लेता जाए तो अब्बास बेताब हो गए थे और सबसे पहले आपने इस तरह इजहारे खयाल फरमाया था कि "हम ऐसा किस लिए करें? क्या इसलिए कि आपके बाद जिन्दा रहें? हरगिज नहीं खुदा वह रोज हमको न दिखाए" आपके बाद दूसरे अइज्जा ने भी इसी किस्म के खयालात का इजहार किया था।[2]

सुब्हे आशूर जब हुसैन[अ०स०] ने अपनी इस मुखतसर सी जमाअत को भी लशकर के उनवान से तरतीब दिया तो अलमदारी का शरफ अबुल फजलिल अब्बास को अता हुआ और आपने इस आन बान के साथ हुसैनी परचम की इज्जत को क़ायम रखा जो दुनिया की तारीख में यादगार है।

मैदाने जंग मे अब्बास व अली अकबर साए की तरह इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ साथ रहते थे। चुनानचे उस वक्त जब आपने इतमामे हुज्जत की ग़रज से नाके पर सवार हो कर सुफूफे (सफों) मुखालिफ को मुख़ातब करते हुए तक़रीर फ़रमाई और आपकी आवाज़ खयामे हरम तक पहुँची और उनमे से शोर रोने का बलन्द हुआ था तो आपने अब्बास व अली अकबर को भेजा कि उन्हें खामोश करो। रोने का वक्त बाद को आएगा।

अब्बास बिन अली[अ०स०] की शुजाअत का एक बेनजीर मुरक्का वह था जब उमर बिन ख़ालिद सैदावी वगैरह चार मुजाहिद एक साथ सुफूफे मुख़ालिफ़ पर हमला आवर हुए थे और लशकर में घुस कर शमशीर जनी करते हुए चारों तरफ से घिर कर अन्सारे हुसैन[अ०स०] से बिल्कुल जुदा हो गए थे। यह देखकर हुसैन[अ०स०] ने अब्बास को उनकी इमदाद के लिए भेजा था चुनाँनचे आप ने तने

---

[1] इरशाद पेज/243

[2] इरशाद पेज/234

तन्हा हमला करके ऐसी तलवार चलाई कि लश्करे मुखालिफ परागन्दा हो गया और आप उन ज़ख्मी मुजाहिदों को अपने मुस्तकर (महफूज) की तरफ वापस ले चले थे

हजरत अबुल फजलिल अब्बास की शहादत असहाब व अइज्जा में से सबसे आखिर में हुई है देनवरी का बयान है कि जनाबे अब्बास[अ०स०] हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के सामने खड़े होकर तने तन्हा आपकी हिफाजत में मसरूफ़ हो गए इस तरह कि जिस तरफ हजरत मुड़ते थे अब्बास भी रूख मोड़ देते थे। यहाँ तक कि आप दर्जे–ए–शहादत पर फाएज हुए और उसके बाद इमाम बिल्कुल अकेले रह गए।

दूसरी रिवायत है कि जब अब्बास अपने तीनों भाईयों को इमाम पर निसार कर चुके और सिवाए अब्बास और हुसैन[अ०स०] के कोई ऐसा बाकी नहीं रह गया जो नुसरते हक में जिहाद करे तो अबुल फजलिल अब्बास ने हुसैन[अ०स०] से इज्ने जिहाद तलब किया।

इमाम हुसैन[अ०स०] ने अपने भाई के सरापा पर हसरतो यास से नजर की और फ़रमाया " तुम तो मेरे अलमदार हो आपने अर्ज किया "अब मुझको बिल्कुल ताबे जब्त बाक़ी नहीं और ज़िन्दगी मेरे लिए बारे गराँ हो रही है " इमाम ने फ़रमाया अच्छा जाते हो तो पानी की फिक्र करना" अब्बास ने मशकीजा ले लिया और नहर की तरफ रवाना हुए फौजे दुश्मन ने मजाहमत की आपने हमला किया सिर्फ इसलिए कि नहर का रास्ता साफ हो जाए।

चुनाँनचे आप अपनी कोशिश मे कामयाब हुए। नहर पर पहुँच कर मशकीजा पानी से भर लिया। और चूँकि खुद भी आप बहुत प्यासे थे इसलिए फ़ितरी तौर पर एक चुल्लू पानी का लेकर मुँह के क़रीब ले गए थे। इस तरह कि जैसे पीना चाहते हैं मगर हुसैन[अ०स०] और अतफाले (बच्चे) हुसैन[अ०स०] की प्यास याद आ गई और आपने पानी चिल्लू से फेंक दिया और उसी तरह भरा हुआ मशकीजा दोश पर सँभाल कर नहर से निकले और खैमागाहे हुसैनी की जानिब रवाना हो गए अफवाजे मुखालिफ को एक फर्दे वाहिद (अकेले) के मुक़ाबले से गुरेज़ (पीछे हटने) करने पर गैरत दिलाई जा चुकी थी और उनको अब यह कद (फिक्र) थी कि पानी किसी तरह हुसैन[अ०स०] तक पहुँचने न पाए। चुनाँनचे आप चारों तरफ से घेर लिए गए उस वक्त के आपके मुशकिलात का अन्दाजा करना आसान नहीं। दोश पर मश्क वाजेह तौर पर जग से माने

---

[1]अख़बारूत तुवाल. पेज / 255

(रूकावट) थी और फिर एक हाथ में आपको हुसैनी निशान का बलन्द रखना भी मकसूद था मगर क्या कहना आपकी अदीमुल मिसाल जुरअत व शुजाअत का कि आपने इसी आलम में बड़े जोश व ख़रोश के साथ हमले करना शुरू कर दिये और उस वक्त आप की जबान पर यह शेअर जारी थे। "मौत कितने ही नारे लगाए मैं मौत से कभी ख़ौफ़ज़दा नही होता यहाँ तक कि तलवारों के साये मे जमीन पर गिरा दिया जाऊँगा। मेरा नाम अब्बास है मश्क ले जाऊँगा और ज़रूर ले जाऊँगा। और हगामे जग मौत की कोई परवाह नहीं करूँगा।"

इस अम्र को दुश्मनों की बुजदिली का मुकम्मल ऐलान समझना चाहिए कि उन्होंने अब्बास के हाथों की मौजूदगी अपने लिए इन्तेहाई खतरनाक महसूस की और हकीम बिन तुफैल सनसबी ने आपके दाहने हाथ पर तलवार लगाई। चूंकि अब्बास को अपनी जान से ज्यादा अलम का खयाल था इसलिए आपने अलम को गिरने नहीं दिया बल्कि बायें शाने पर ले लिया और फरमाया "हालाँकि तुमने मेरा दाहना हाथ कता कर दिया है मगर यह न समझना कि मैं अपने दीन की हिमायत न कर सकूगा खुदा की कसम इस फर्ज को तो मैं हमेशा हमेशा अन्जाम देता रहूँगा।

उसके बाद जैद बिन वरका़ जहनी ने मौका पाकर आपके बायें हाथ पर तलवार लगाई और वह भी क़ता हो गया अब्बास[अ०स०] ने पुश्ते फ़रस पर झुक कर अलम को सीने से रोकना चाहा ही था कि कबील–ए–तमीम के एक शख्स ने सर पर गुर्ज़ का वार किया जिससे आप जमीन पर गिर गए और बलन्द आवाज से पुकारे कि 'भाई मेरी खबर लीजिए।"

इमाम हुसैन[अ०स०] पर इस आवाज का जो असर न होता कम था आप मिस्ल शाहीन (बाज़, शिकरा) के झपट कर भाई की लाश पर पहुचे तो देखा कि अब्बास[अ०स०] जख्मों से चूर दोनों हाथ कता पेशानी शिकस्ता एक आँख में तीर पैवस्त, जमीन पर दम तोड रहे हैं

इमाम आलमे रजो मलाल में सिरहाने बैठ गए। यहाँ तक कि अब्बास की रूह ने जसद से मुफ़ारिकत (जिस्म से जुदा) की अब कोई ऐसा नहीं रह गया था जिसे इमाम इज्न जिहाद देते आप लाश से उठे और आगे बढे तलवार नियाम से निकाली और दाहने और बायें दुश्मनो पर हमला करना शुरू कर दिया जब वह आपके सामने से भागते थे तो आप फरमाते थे 'भागते कहाँ हो

तुमने मेरे भाई को मार डाला भागते कहाँ हो। तुमने मेरे बाजू शिकस्ता कर दिए हैं।'

उसके बाद आप अपने मुस्तकर (ठिकाने) पर वापस पहुच कर खड़े हो गए।

अब दुश्मनों की कसरत थी और अकेले हुसैन[अ०स०] थे। नुसरते इस्लाम का फरीजा था और वह मुस्तहकम अज्म था जो इतने मसाएब और अजीजो के दाग उठाने के बाद भी पहले ही की तरह कोहे गराँ (मजबूत, पहाड) की सूरत अपनी जगह कायम व बरकरार था।

सतही नजर से मुजाहदीन की यह तरतीब खिलाफे क्यास समझी जा सकती है। इसलिए कि अमली रहनुमाई का तकाजा यह मालूम होता है कि सबसे पहले हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] खुद मैदाने जिहाद में कदम रखते हुए अपनी अमली मिसाल पेश फ़रमाते। फिर आपके अज़ीज यके बाद दीगरे जाते और आखिर में असहाब की नौबत आती हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] ने नहजुल बलागा मे रसूल अल्लाह[स०अ०] के तरीक–ए–जग के मुतअल्लिक फरमाया है कि आप खतरे के मौकों पर अपने अहलेबैत और अइज्जा को आगे रखते थे और उन्हे अपने असहाब की सिपर बनाते थे। मगर मैदाने करबला में तरतीब इसके खिलाफ रखी गई यहाँ असहाब पहले मैदान मे भेजे गए और फिर अइज्जा और आखिर मे खुद इमाम हुसैन[अ०स०] तशरीफ़ ले गए।

मगर गौर करने से मालूम होता है कि वाक़ ए करबला और दूसरे मारको की नौइयत मे बड़ा फ़र्क था। दूसरे हर मौके पर यह यकीनी था कि कुछ लोग कत्ल हो और कुछ सही व सलामत महफूज रहें। लिहाजा यह कोशिश की जाती थी कि ज्यादा से ज्यादा खतरा वही बरदाश्त करे जो रसूल अल्लाह[स०अ०] के साथ खानदानी तअल्लुकात रखते हो और वह लोग ज्यादा से ज्यादा महफूज रहे जो गैरो की हैसियत रखते हो मगर मारक–ए–करबला में आशूर के दिन यह बिल्कुल यकीनी था कि जिन्दा बचने वाला कोई नहीं। बहरहाल जितने भी हैं उन सबको शहीद होना है। जहाँ तक ख़तरे से बचाने की कोशिश का तअल्लुक़ था वह शबे आशूरा की जा चुकी थी और उस वक्त हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने बा–इसरार तमाम फरमाया था कि 'मुझे तन्हा इस खतरे को कुबूल कर लेने दो तुम सब अपनी जानों को ख़तरे में मुबतिला न करो मगर हर एक ने अइज्जा व असहाब में से इन्कार करते हुए अपनी जानें हुसैन[अ०स०] पर कुर्बान करने के अज्म बिल जज्म (दिलो जान से) का एलान

कर दिया था उसके बाद अब यह सवाल तो बाकी ही नहीं रहा था कि कौन क़त्ल हो और कौन जिन्दा रहे ज़िन्दगी की दिल फ़रेबियाँ तो बहुत पहले ठुकराई जा चुकी थीं। अब तो हर एक के सामने बस मौत ही थी अब इस सूरत मे सवाल था तो सिर्फ क़ब्ल और बाद का मगर वाक़–ए–करबला की नौइयत यह थी कि जितना वक्त गुजरता जाता था, इम्तिहान सख्त तर होता जाता था। पानी बन्द था ही और रोजे आशूर दिन चढ़ने और तमाज़ते आफताब (सूरज की तपिश) में इजाफा होने के साथ साथ प्यास की तकलीफ लहजा ब–लहज़ा (वक्त से साथ साथ) बहुत बढ़ती जाती थी। फिर इस हालत में कसीरूल तादाद (बड़ी फौज) दुश्मनों से पैहम नबर्द आजमाई (बराबर) साथियों की जुदाई और ऐसी हालत मे जाहिर है कि जितनी भी किसी मुजाहिद की शहादत में देर वाके होती थी उसका इम्तेहान शदीद तर होता जाता था।

इमाम हुसैन[अ०स०] अपने असहाब और अइज्जा की वफ़ादारी पर कितना ही एतेमाद क्यों न रखते हो मगर आप उन पर इतना बार नहीं डालना चाहते थे जो उनकी कुव्वते बर्दाश्त से बाहर होता। आपके लिए लाजिम यही था कि आप दूसरों के सब्रो तहम्मुल और अपनी कुव्वते बरदाश्त के इम्तियाज पर नजर रखते हुए निजामे जग मुरत्तब फ़रमाते।

हकीक़तन हुसैन[अ०स०] के लिए निसबतन यह बहुत आसान होता कि सबसे पहले आप अपनी जान का हदिया राहे हक मे पेश कर देते उस सूरत मे आपकी कुर्बानी अपनी जान की कुर्बानी होती और उसको किसी ऐसे शहीद की कुर्बानी का बड़ा दर्जा न दिया जा सकता जिसने कभी भी हिमायते हक मे अपने नफ्स की कुर्बानी पेश की हो

इस सूरत मे आपकी कुर्बानी इससे ज्यादा वकीअ (बलन्द) नहीं समझी जा सकती जितनी कि ब–कौले नसारा हजरते ईसा[अ०स०] की कुर्बानी कि आप दीने हक की तबलीग़ की वजह से सूली पर चढ़ा दिए गए। या सुक़रात की कुर्बानी कि उनका उसूल की हिमायत में जहर का जाम पीना पड़ा और हुसैन[अ०स०] के लिए इस मन्जिल से गुजर जाना मुशकिल ही क्या होता जबकि आप उस बाप के बेटे थे जिसका कौल यह था कि मुझे इसकी परवाह नहीं कि मौत मुझ पर आ पड़ती है या मौत पर मै जा पड़ता हूँ और नीज यह कि मौत से उससे ज्यादा मानूस हूँ जितना कि बच्चा पिस्ताने मादर से मानूस होता है बल्कि यूँ कहना चाहिए कि आप उस घराने के बुजुर्ग थे जिसके बच्चों का यह कौल था

कि 'मौत शहद से ज़्यादा शीरीं है।' बल्कि उस ज़माने में मुल्के अरब के बहादुर का उसूले जिन्दगी यह था कि वह मौत का तलवारों के साये में आना अपने लिए बाइसे मुबाहात (फख्र) समझता था।

मगर हुसैन[अ०स०] की शहादत को जो खास इम्तेयाज हासिल है वह इसी लिए कि आपने ऐसी हर हर फर्द को जो आपकी जात से दूर या करीब का तअल्लुक रखती थी अपनी मौजूदगी में राह हक में निसार कर दिया।

इन्साफ से देखा जाए तो तमाम साथियों का एक एक करके जुदा होना, भतीजों का आँखों के सामने दम तोड़ना, जवान बेटे का ख़ाक पर ऐड़ियाँ रगड़ना और जाँनिसार भाईयों का आलमे जवानी में मौत की नींद सो जाना। यह वह मसाएब थे जिन में से हर एक इन्सानी नफ्स के लिए मौत से ज्यादा नाकाबिले बरदाश्त करार पा सकता है हुसैन[अ०स०] का कमाले अमल महेज यही नहीं था कि वक्त और मौका आने पर आपने अपनी जान राहे खुदा में पेश कर दी बल्कि आपके नफ्स का कमाल यह था कि आपने जान से अजीज़ हस्तियाँ रिज़ा ए हक के रास्ते में यके बाद दीगरे कुर्बान कर दीं। और जब तक सब्रो तहम्मुल के साथ उन तमाम दुश्वार गुजार मनाजिल को तय न कर लिया उस वक्त तक खुद अपनी जान का हदिया पेश नहीं किया।

कुव्वते बर्दाश्त के इस खास दर्जे मे हुसैन[अ०स०] के अलावा कोई दूसरा नजर नहीं आता अमली हैसियत से इस बलन्दिये नफ्स की तवक्को क्या इमाम हुसैन[अ०स०] के सिवा किसी और से की जा सकती थी जो उसे आप अपने बाद के लिए छोड़ देते?

(16) तिफ्ले शीरख़्वार

तमाम असहाब व अइज्जा की शहादत के बाद गालिबन दुश्मनाने दीन यह समझ रहे होंगे कि हुसैन[अ०स०] के सब्र व तहम्मुल की इन्तेहा हो चुकी मगर अभी जालिमों के तरकश मे तशद्दुद का एक जबरदस्त तीर बाकी था और उसके मुकाबले में हुसैन[अ०स०] को एक जबरदस्त कुर्बानी पेश करना थी जिस पर हर मजहबो मिल्लत का इन्सान यह गवाही देने पर मजबूर है कि यजीदियों को इन्सानियत से कोई दूर का भी इलाका न था।

शीरख्वार अब्दुल्लाह[1] जो 'अली असगर' के नाम से मशहूर हैं और आपकी वालिदा रबाब बिन्ते उमराउल कैस बिन अदी कल्बी थी जिनके बत्न से

---

[1] तबरी, जि/6, पेज/257 इरशाद पेज/269

एक साहबजादी भी मुतवल्लिद (पैदा) हुई थी जिनका नाम सकीना बिन्तुल हुसैन[अ०स०] था।[1]

इन्सानियत लर्जा बरअन्दाम (थरथरा रही) थी जब उस बच्चे को हुसैन[अ०स०] अपने हाथों पर लिए हुए थे और उस वक्त एक तीरे ज़ुल्म ने बाप के हाथों पर बच्चे का काम तमाम कर दिया।[2] यह तीर मारने वाला क़बील ए बनी असद में से एक जालिम था [3]

एक रिवायत के मुताबिक इमाम हुसैन[अ०स०] ने उस बच्चे को हाथों पर बलन्द करके पानी का सवाल किया और उस वक्त बजाए पानी पिलाने के सरदारे लश्कर उमरे सअ्द के हुक्म से हुरमुला बिन काहिल असदी ने तीर लगाकर उस मासूम को शहीद कर किया।

---

[1] इरशाद पेज 269

[2] तबरी जि/6, पेज 220 व 257

[3] तबरी. जि 6, पेज 257 अख़बारुत तुवाल पेज/255, इरशाद पेज/254

उनतीसवाँ बाब

जिहादे आख़िर और शहादत

यह सब कुछ हुआ। असहाब एक एक करके रूख्सत हो गए। अजीज जुदा हो गए भतीजे कत्ल हुए। बेटा तलवार से टुकडे हुआ। भाई तहेतेग हुए। मगर इमाम हुसैन[अ0स0] ने कोई ऐसी जंग नहीं की जिसे हुसैन की जग कहा जाए। जाहरी असबाब की बिना पर नावाकिफ़ आदमी यह समझ सकता है कि आपको ब–ज़ाते ख़ुद जग करने का हौसला नहीं नबर्द आज़माई (दुश्मन से भिड़ने) का वलवला ही नहीं हालाँकि हकीकत में आपकी जंग का लुत्फ़ तो जब ही था कि जब आप तलवार लेकर हमला आवर होते और एक तरफ अब्बास दादे शुजाअत देते और एक तरफ़ अली अकबर मारक–ए–जग में जौहर दिखाते होते एक तरफ असहाब हिफाजत के लिए साथ साथ होते। उस सूरत में जग का मंजर दूसरा ही होता। मगर हुसैन[अ0स0] ने सबको दुनिया से एक एक करके रुख्सत हो जाने दिया और उनके साथ मिलकर जग नहीं की। फिर अब जबकि दिन भर की धूप सर पर पड चुकी। साथियों और अजीज़ों के गम ने दिल को शिकस्ता कर दिया। कमर अब्बास के मरने से टूट चुकी और आँखो की बसारत अली अकबर के साथ गोया जा चुकी। यह सत्तावन बरस की बुढापे की उम्र का इन्सान अब इस आलम मे भला तलवार खींच सकता है और जंग कर सकता है? मगर हुसैन[अ0स0] को तो करबला मे सब्रो बर्दाश्त की मन्जिलों को तय करने के साथ साथ फराएज के हुदूद दिखलाना थे। वह शुरु से इस्लामी आईन के मुहाफिज थे। और उन ही आईनो उसूल के लिए जग कर रहे थे। वह जानते थे कि दुश्मन के सामने 'सिपुर्दगी'' आईने इस्लाम के खिलाफ़ है। हिफ़ाजत खुद इख्तियारी के लिए दिफ़ा (Deffence) आखरी इम्कान के दर्जे तक हर इन्सान का फर्ज है। हुसैन[अ0स0] ने उस फर्ज को उस वक्त अन्जाम दिया जब कोई दूसरा इन्सान उसे अन्जाम नहीं दे सकता था।

अब अली असग़र को नज़्रे राहे खुदा करने के बाद हुसैन[अ0स0] के पास कोई एसी कुर्बानी न थी जिसे वह हक की बारगाह में पेश करते। अब बस

एक आखरी मरहला था जो आपके लिए पहले ही बहुत आसान था आपने उसे खुद अब तक अपने लिए मुशकिल से मुशकिल तर बनाया था। अब जबकि यह तमाम मुशकिले खत्म हो चुकी हैं, अब जबकि मन्जिले अमल के दरमियानी किलों को तमाम व कमाल फतह कर चुके हैं। जाहरी तौर पर आपसे बढ़कर उस वक़्त दिल शिकस्ता कोई नही मगर हकीकतन आपसे बढ़कर उस वक्त कामयाबी के एहसास से बालीदा (बाहिम्मत) कोई दूसरा नहीं किसी के क़दम जिन रास्तों के तसव्वुर से डगमगा सकते थे उन्हें आप अमली तौर पर इस्तेकलाल और साबित क़दमी के साथ तय किए हुए खड़े थे। आपसे बढ़कर उस वक्त फतहमन्दी का एहसास किसी दूसरे को हो नहीं सकता अब आपके लिए अपना सर शमशीरे कातिल के सिपुर्द कर देना था। यह बिल्कुल आसान था मगर वह पैग़म्बरे इस्लाम[स0अ0] के नवासे और अली[अ0स0] के बेटे न होते अगर अपना सर झुका के खामोशी से दुश्मनो को दावत दे देते कि आओ यह सर कलम कर लो होने वाला है आखिर मे यही मगर ज़रा मैदाने जंग को बद्र व ओहद, खन्दक व सिफ्फीन का नमूना बन जाने दो। ज़रा भूली हुई दुनिया को अली[अ0स0] की याद आ जाने दो। ज़रा न देखी हुई आँखो के सामने हमज़ा व जाफर की तस्वीर खिंच जाने दो।

आज ही तो मौका आया है कि हुसैन[अ0स0] अपने नाना के उस कौल को सच कर दिखाये कि हुसैन को मेरी जुरअत और सखावत मीरास मे मिली है। सखावत के मुजाहरे बहुत हुए थे मगर जुरअत के अमली इज़हार का वक्त अब आया है और सच पूछिये तो रसूल अल्लाह[स0अ0] को मैदाने जंग मे आम तौर पर कभी तलवार लेकर खुद जिहाद का मौका नहीं मिला इसलिए कि साथ वाले मौजूद रहे हुसैन[अ0स0] भी जब तक एक लाएक़े जंग मुजाहिद भी साथ रहा, अपने नाना रसूल अल्लाह[स0अ0] की बिल्कुल तस्वीर बने रहे मगर अब जबकि आपकी हिमायत में तलवार खींचने वाला कोई बाकी नहीं रहा तो हुसैन[अ0स0] ने दिखला दिया कि अगर ज़रूरत पड़ती तो मेरे नाना रसूल अल्लाह[स0अ0] भी अमली हैसियत से किस पाये की शुजाअत व जुरअत का मुरक्का खींचते।

आप रूख्सते आखिर के लिए खैमे में आए और एक यमनी चादर को जा–ब–जा से चाक करके बाकी लिबास के नीचे पहना।[1] शायद इसलिए कि

---

[1] तबरी, जि / 6, पेज / 240

बादे शहादत जब लिबास को लूटा जाए तो यह बोसीदा कपड़ा जिस्म पर रह जाए। उसके बाद मैदाने जग में तशरीफ ले गए

तारीख शाहिद है कि हुसैन[अ०स०] गमजदा दिल शिकस्ता तश्ना (पयासा) व गुर्सिना (भूखा) होने के बावजूद तने तन्हा जब तलवार खींच कर फौजे मुखालिफ पर हमला आवर हुए तो तमाम गुजिश्ता बहादुरों के कारनामे महो (मिट) हो गए और इन्सानी हाफ़िज़े में क़यामत तक इस शुजाअत व जुरअत की तस्वीर महफूज रह गई

मगर यह गैर मसावी (बराबरी की) जग जाहरी एतेबार से अब अन्करीब खत्म होने वाली थी इसलिए कि एक का हजारों से मुकाबला कहाँ तक जारी रह सकता था ताहम आपने अपने दुश्मनों के दिलों में यह धाक बिठा दी थी उनमे से कोई भी आपका मुकाबला करने की जसारत न करता था। यजीदी अफवाज की इस सरासीमगी (हैरान व परेशान) को देख कर शिम्र ने फ़ौज को ललकारा और नए सिरे से तरतीबे लशकर को दुरूस्त करके सवारों को प्यादों के पीछे खड़ा किया और तीर अन्दाजों को हुक्म दिया कि वह तीर बारॉ करें इतनी शिद्दत से तीर बरसाए गए कि जिस्मे हुसैन[अ०स०] साही के कॉंटो की तरह हो गया।[1]

उस वक्त दोबारा शिम्र ने चिल्ला कर कहा कि 'खुदा तुमसे समझे खड़े क्या देख रहे हो उन्हें कत्ल करो। खुदा करे तुम्हारी माये तुम्हे रोयें '

इस तरह गैरत दिलाए जाने के बाद वह लश्करे बेकराँ (बेइन्तेहा) हुसैन[अ०स०] पर चारों तरफ से टूट पड़ा।[2] और आप पर तीरों, तलवारों और नैजों का मेंह (बारिश) बरसने लगा जिससे यकीन है कि घोड़ा भी काफी जख्मी हो गया होगा और उससे मजबूर होकर आप पुश्ते फ़रस से ज़मीन पर तशरीफ़ लाए मगर प्यादा (पैदल) होने के बाद भी आपने मुकाबला जारी रखा।

इसना–ए–जिहाद (जग के दौरान) में एक मौका ऐसा आया कि हजरत तमाम फ़ौज को भगा कर नहर तक पहुँच गए। दुश्मनों को अन्देशा हुआ कि आप कहीं पानी से सेराब न हो जायें। उस वक्त हसीन बिन तमीम ने तीर लगाया जो आपके दहेन पर पड़ा और खून मुँह से उबलने लगा। आपने चिल्लू

---

[1]इरशाद पेज / 257
[2]इरशाद पेज / 257

मे खून लिया। आसमान की तरफ उछाल दिया और फिर शुक्रे खुदा अदा किया[1]

इसी असना (दौरान) मे बेहया लश्करे यज़ीद का एक दस्ता अपनी शिकस्त की खिफ्फत को मिटाने के लिए शिम्र की कयादत में खयामे हुसैनी की तरफ जिसमें अहले हरम थे गारतगरी के इरादे से मुतवज्जेह हुआ और आपके और खयाम के बीच में हाएल हो गया। यह देखना था कि आपने पूरी फौज को मुखातब करके फरमाया कि अगर तुम्हें मज़हब का पास और आखिरत का कोई तसव्वुर नहीं है तब भी दुनिया में अपनी कौमी शराफत का सुबूत दो अभी मैं जिन्दा हूँ। मेरे खयाम से तअर्रुज (छेड़ छाड़) न करो। शिम्र अपनी हरकत पर शर्मिन्दा हुआ और खयाम की तरफ से पलट आया[2]

अब शिम्र ने प्यादों को अपने साथ लेकर खुद आपका मुहासरा कर लिया मगर आलम यह था कि जिस तरफ आप रूख करते थे उधर की जमाअत मुन्तशिर हो जाती थी।[3] गालिबन इसी मौके का तजकिरा फौज दुश्मन के एक सिपाही ने इन अलफाज मे किया है कि मैंने कोई ऐसा नहीं देखा जो जख्मी हो चुका हो और उसकी औलाद अजीज और साथी सब कत्ल हो चुके हों और फिर वह हुसैन[अ०स०] का ऐसा मुतमइन और साबित कदम नजर आए और उनकी सी जुरअत व हिम्मत से मुकाबला करे। हालत यह थी कि प्यादे चारों तरफ से उन्हें घेरते थे और वह तलवार लेकर उन पर हमला कर देते थे तो वह सब दाहने बायें से यूँ हटते थे जैसे गोसफन्द का गोल भेड़िये के हमले के वक्त मुन्तशिर हो।[4]

उस वक्त आपकी जबान पर यह तारीखी अलफ़ाज थे जिनसे एक तरफ फरीज ए हिदायत पूरा हो रहा था और दूसरी तरफ नताएज की तरफ साफ इशारा था

"याद रखो कि अल्लाह मेरे कत्ल से इन्तेहाई नाराज है। मैं ब–कसम कहता हूँ कि तुम्हारे जिल्लत देने से अल्लाह मुझे इज्जत देगा और फिर मेरा बदला तुमसे इस तरह लिया जाएगा जिसका तुम्हें इसके कब्ल तसव्वुर भी न होगा। याद रखो कि मुझे क़त्ल करने के बाद खुद तुम्हारे दरमियान तफरका

---

[1]तबरी, जि/6, पेज/258
[2]तबरी, जि/6, पेज/258
[3]तबरी, जि/6, पेज/259
[4]तबरी, जि/6, पेज/259, इरशाद पेज/256–257

पड़ जाएगा। खाना जंगियाँ होंगी और बिल आखिर तुम्हारा खून भी बहाया जाएगा। फिर उसके बाद आख़िरत की सजा, वह उससे भी ज्यादा है।[1]

उसके बाद आप पर हर जानिब से शिद्दत के साथ हमले होने लगे और आखिर जख्मों से चूर होकर आप जमीन पर गिर गए और खड़े होने की कुव्वत बाकी न रही।

(17) अब्दुल्लाह बिन हसन

आप हसन[अ०स०] बिन अली[अ०स०] के फरजन्द थे। आपका सिन अपने भाई क़ासिम से भी कम था और आपकी वालिदा उम्मुर रबाब बिन्ते उमराऊल कैस रबाब मादरे सकीना व अली असगर की बहन थीं।

जब इमाम हुसैन[अ०स०] जख़्मों से चूर चूर हो कर जमीन पर तशरीफ ला चुके थे उस वक्त आप खैमे से बरामद हुए और इमाम[अ०स०] की तरफ चले। जनाबे जैनब बिन्ते अली[अ०स०] ने आपको रोकना चाहा मगर आप किसी तरह न रूके और दौड़ते हुए इमाम के पास पहुँच गए उस वक्त बहर बिन कअ़ब बिन उबैदुल्लाह तैमी हजरत पर तलवार का वार करना चाहता था। आपने उससे कहा "जने खबीसा के बेटे क्या तू मेरे चचा को कत्ल करेगा?" मगर उस पर भी जब उसने तलवार का वार कर ही दिया तो आपने उसे अपने हाथ पर रोका हाथ जिल्द के आखिर हिस्से तक कट कर लटकने लगा और आपके मुह से बेसाख्ता निकल गया या उम्माह इमाम हुसैन[अ०स०] ने आपको अपने सीने से लगा लिया और फरमाया कि बेटे सब्र करो इस मुसीबत पर और उसके अज्रो सवाब के मुन्तज़िर रहो, तुम भी अपने बुजुर्गों यानी रसूल अल्लाह[स०अ०], अली बिन अबी तालिब[अ०स०], हमजा जाफर[अ०स०] और हसन[अ०स०] की खिदमत में पहुँचा चाहते हो[2]

अभी आप यह फ़रमा ही रहे थे कि हुरमुला ने चिल्ल ए कमान में तीर जोड़ कर मारा जिससे अब्दुल्लाह की शहादत वाके हुई।

(18) इमाम की शहादत

देर तक हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] खस्ता व मजरूह (जख़्मी) बर सरे खाक बाकी रहे जबकि आपको शहीद कर देने से बज़ाहिर कोई अम्र माने (किसी बात की रूकावट) न था मगर हर शख़्स इस जुरमे अजीम के इरतिकाब से

---

[1] तबरी, जि/6, पेज/261

[2] इरशाद, पेज/256

बचना चाहता था।[1] शिम्र ललकारा कि आखिर अब क्या इन्तेजार है आखिर मालिक बिन नस्र बदी आगे बढ़ा। उसने आपके सर पर तलवार लगाई जो कास ए सर तक पहुच गई।[2] बिल आखिर जरआ बिन शरीक की तलवार[3] सनान बिन अनस का नैजा[4] और फिर शिम्र जिल जौशन का खजर वह था जिसने उस मुजस्सम–ए–हक की शमे हयात गुल कर दी सच्चाई की गर्दन क़लम हुई और "शहीदे हक, शहीदे इन्सानियत, शहीदे राहे खुदा का सर नैजे पर बलन्द कर दिया गया

10/मुहर्रम सन 61 हिजरी की वह यादगार तारीख़ जुमे का दिन है कि इन्सानी तारीख का यह सबसे अहम वाकेया रूनुमा हुआ।

---

[1]अख्बारूत तुवाल, पेज/255, इरशाद पेज/257

[2]तबरी. जि/6. पेज/250. देनवरी ने मालिक बिन बशर कन्दी लिखा है अख्बारूत तुवाल पेज/255

[3]अख्बारूत तुवाल पेज 255

[4]तबरी. जि/6. पेज/260. अख़बारूत तुवाल पेज/256

तीसवाँ बाब

शहादत के बाद

हज़रत इमाम हुसैन[अ0स0] और आपके अक़रुबा व अन्सार के शहीद किए जाने पर मज़ालिम का खातिमा नहीं हुआ बल्कि आप जो लिबास पहने थे वह भी उतार लिया गया।

इसहाक बिन हैवा ख़ज़रमी ने क़मीस ली। बहर बिन कअ्ब ने ज़ेरे जामा[1] अख़नस बिन मुरसद ने अम्मामा, बनी दारिम के एक शख़्स ने तलवार।[2] और क़ैस बिन अशअस ने क़तीफ़ा (चादरे यमानी) जो खज (शहर का नाम भी है, एक किस्म का रेशमी कपड़ा) की थी ले ली इसी लिए कूफ़े में वह "कैसे क़तीफ़ा" के नाम से मशहूर हो गया था।[3]

उसके बाद यज़ीदी फ़ौज ने खयामे अहले बैते नबवी पर छापा मारा और उनमें का तमाम असबाब व सामान लूट लिया।[4] हत्ता कि मुखद्दराते इस्मत के सरों से चादरें तक उतार ली [5] उसके बाद खैमों मे आग लगा दी गई। और उमरे सअ्द ने अपनी फ़ौज मे आवाज़ दी कि कौन कौन ऐसे हैं जो लाशे हुसैन[अ0स0] को घोड़ों से पामाल करने के लिए तैयार हो उस पर दस आदमी आमादा हुए जिन्हों ने लाशे मुतहर के साथ उस ज़ुल्म को भी अन्जाम तक पहुंचाया।[6]

सरे इमाम हुसैन[अ0स0] जो तन से जुदा किया जा चुका था खूली बिन यज़ीदे असबही के हाथ इब्ने ज़ियाद के पास पहले रवाना किया गया।[7] और

---

1 तबरी, जि/6, पेज/259

2 इरशाद पेज/257

3 तबरी, जि/6 पेज 260, एक रिवायत में उस शख़्स का नाम अब्दुर्रहमान बिन मुहम्मद बिन अशअस है और लिखा है कि वह "अब्दुर्रहमान क़तीफ़ा" के नाम से मशहूर हुआ। (किताबुल बिलदान पेज/172

4 अखबारुत तुवाल पेज/356

5 तबरी, जि/6, पेज/260

6 तबरी, जि/6, पेज/261 262, इरशाद पेज/258

7 अख़बारुत तुवाल, पेज/266

कुछ शोहदा के सर कता करके उसके बाद शिम्र बिन जिल जौशन, कैस बिन अशअस, अम्र बिनुल हज्जाज और अजरा बिन कैस के साथ रवाना किए गए।[1]

इमाम हुसैन[अ०स०] के पसमान्दगान (पीछे छोड़े हुए) में सिर्फ एक बीमार फरजन्द अली बिन हुसैन[अ०स०] पर्दा नशीन खवातीन और कुछ छोटे बच्चे रह गए थे जो रात भर खैमो के जलने के बाद उसी खुले हुए सहरा में मुक़ीम रहे।

11/मुहर्रम को उमरे सअ्द ने अपनी फौज के कुश्तो (मरे हुए) को जमा किया और उन पर नमाजे जनाजा पढ़कर दफ्न किया[2] मगर शोहदा–ए–राहे खुदा की लाशें उसी तरह बे दफ्न छोड़ दीं और शाम होते होते अहलेबैते रसूल[स०अ०] को ब–तौर कैदियों के साथ लेकर इब्ने सअ्द कूफे की जानिब रवाना हो गया और बकिया शोहदा के सरों को जो तादाद में बहत्तर थे नैज़ों पर बलन्द करके साथ ले गए।[3]

लाशह–ए–बेसर को लशकरे यजीद के करबला से चले जाने के बाद क़बील ए–बनी असद जो करबला से थोड़ी दूर पर गाजरया मे रहता था आ कर दफ्न किया।[4]

हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] को उसी मकाम पर जहाँ कि इस वक्त जरीह मौजूद है और आपके पाईने पा (पाइतियान) अली अकबर को [5]जनाबे अब्बास[अ०स०] को गाजरया के रास्ते पर नहरे फ़ुरात के क़रीब जहाँ कि आप शहीद हुए थे और दूसरे अइज्जा और असहाब को एक गढा खोद कर यकजा दफ्न कर दिया गया जिनके कुबूर का वसूक के साथ मुऐयन करना मौजूदा माखज़ा (जगहों) के लिहाज से गैर मुमकिन है सिर्फ इतना मालूम है कि वह इमाम हुसैन[अ०स०] के गिर्दो पेश ही दफ्न हैं और हाएर (इमाम हुसैन[अ०स०] के कब्रे मुबारक के पास) का एहाता उन सबको घेरे हुए है।[6]शोहदा के सर जब कूफे पहुँच गए तो शिम्र ने उन सरो को इब्ने जियाद के सामने पेश किया।[7]

---

[1]इरशाद पेज 258
[2]तबरी. जि/6. पेज/260
[3]अखबारूत तुवाल, पेज/256
[4]तबरी. जि/6. पेज/260. इरशाद पेज/258. अख़बारूत तुवाल पेज/257
[5]इरशाद पेज/258
[6]इरशाद पेज/265
[7]अखबारूत तुवाल पेज/257

उस मौके पर इब्ने जियाद ने सरे इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ बेअदबी की जसारत की और वह एक छड़ी से आपके लबो दन्दान पर जर्ब लगाने लगा। यह गुस्ताख़ी देखकर जैद बिन अरकम सहाबी ए रसूल को ताब न रही। उन्होंने कहा अरे यह लब वह हैं जिन पर मैंने खुद रसूल अल्लाह[स०अ०] के लबों को बोसे लेते हुए देखा है और यह कह कर रोने लगे इब्ने जियाद ने कहा अगर तुम बूढ़े न होते और अक्ल न जा चुकी होती तो मैं अभी तुम्हारी गर्दन मारने का हुक्म दे देता। जैद बिन अरकम उठ कर इब्ने जियाद को बुरा कहते और मुसलमानो को उसकी हुकूमत तस्लीम करने पर लानत मलामत करते चले गए।[1]

इधर अहले बैते नुबूवत का लुटा हुआ काफेला कैदियो की शक्ल में उसी शहरे कूफ़ा में कि जहाँ हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के दौरे हुकूमत में जैनब[स०अ०] व उम्मे कुलसूम[स०अ०] शाहजादी की हैसियत से रह चुकी थी लाया जा रहा था मगर कब्ल इसके कि वह हुदूदे शहर में दाखिल हों हाकिम की तरफ से यह मुनादी कर दी गई थी कि इस मौके पर कूफे में कोई शख्स सिलाहे (हथियार) जंग के साथ घर से बाहर न निकले। न कोई शख्स हथियार लगाए हुए कूफे की सड़कों पर दिखलाई दे। इसके अलावा जगह जगह पर किसी खास दहशत के सबब से सवार और प्यादों के बड़ी तादाद में पहरे बिठला दिए गए थे। तमाशाईयों में से बाजों को अस्ल वाकए की खबर थी और बाज बेखबर हुकूमत के बयान पर एतेबार करते हुए यही समझते थे कि मुखालफीने इस्लाम की जमाअत पसपा हुई है और उनके अहलो अयाल गिरफ्तार होकर आ रहे हैं। सहल शहजोरी हज्जे बैतुल्लाह से फारिग हो कर ऐन उसी वक्त कूफ़े में पहुँचे देखा कि बाज़ार सजा हुआ है तमाशाईयों में से अक्सर के चेहरों पर मसर्रत के आसार नुमायाँ हैं मगर उन ही में से बाज ऐसे भी है जिनके चेहरे उदास हैं। उन्होंने बढ़कर एक बूढ़े से हाल दरयाफ्त किया। वह उनको एक गोशे में ले गया और ब–चश्मे गिरया (रोते हुए) खानदाने रिसालत की तबाही पर मुन्दर्जा जैल अशआर पर मुशतमिल मरसिया पढ़कर उनको हकीकते हाल से मुत्तेला किया

الم تران الشمس اصبحت مريضه　　لقتل حسين والبلاد ضمحلت

وكانوا عيانا ثم اضحوا رزيه　　لقد عظمت تلك الرزايا وجلت

وان قتيل الطف من آل هاشم　　اذل رقاب المسلمين وذلت

---

[1]अखबारुत तुवाल पेज/20. तबरी, जि/6 पेज/262

"क्या तुमने नही देखा कि कत्ले हुसैन[अ0स0] से सूरज को गहन लग गया और तमाम आबादियाँ मगमूम(गम मे डूब गई) हो गई। हाए अफसोस खानदाने रिसालत तो लोगों के लिए फरयाद रस था लेकिन आज वह खुद मुबतिलाए मुसीबत हो गया और सच तो यूँ है कि यह मुसीबते बडी अजीम और सख्त थीं। ब–तहकीक कि शहीदे करबला की शहादत से मुसलमानों की गर्दनों में रूसवाई और जिल्लत का तौक पड़ गया और दर अस्ल वह जलील हो गए "

अभी यह मरसिया खत्म भी न हुआ था कि शादियानों की आवाजों के साथ साथ अहले बैते रसूल[स0अ0] का तबाह हाल काफिला शहर में दाखिल हो गया आगे आगे नैजों पर शोहदा के सर थे। और उनके पीछे ओसरा–ए–आले मुहम्मद[स0अ0] कैदी थे। एक औरत जो इस मजर को देखने के लिए अपने कोठे पर बैठी हुई थी कैदियों से मुखातब होकर पूछने लगी कि 'तुम किस कौम व कबीले से हो ' जवाब दिया गया कि हम उसरा–ए–आले मुहम्मद है, यह सुनना था कि एक कोहराम बर्पा हो गया गिरया व जारी के शोर से कान पडी आवाज़ सुनाई न देती थी।

सतही नजर से देखने वाले इस मंजर को अहले बैते नुबूवत के लिए सख्त तौहीन व जिल्लत का बाइस समझ रहे होंगे लेकिन हकीकत यह है कि उस वक्त हुसैन[अ0स0] की तबलीग मुन्तहाए (इन्तेहाई) शबाब पर पहुँच गयी और दावते हक का दाएरा वसी से वसी तर (बढता) हो गया।

अगर चश्मे हकीकत बीं (हकीकत भरी नजरों) से देखा जाए तो एक तरफ नैजे पर सरे हुसैन[अ0स0] जिसकी पेशानी पर सजद–ए–ख़ालिक का निशान पड़ा हो और चेहर से नूर सातेअ् (निकल रहा हो) और दूसरी तरफ मुखद्दराते इसमत (पर्दा नशीन औरतें) जो नामहरमों के मजमे में चादर व मक़ना से महरूम कर दिए जाने के बाद भी ग़ैरत व हया का मुजस्समा, एखलाके मुहम्मदिया की तस्वीर बनी हुई जाहो जलाल की चादरों में पिनहाँ तहारत व इफ्फत (पाक दामनी) के लिबास मे मलबूस थीं दोनों ने सच्चाई के पैकर में रूह फूँक दी। और दुनिया की आँखो के सामने से जिहालत व जलालत के पर्दों को चाक करके फेंक दिया।

इस मौके पर जबकि आले रसूल[स0अ0] का लुटा हुआ काफेला कूफे से इस बेकसी के आलम मे गुजर रहा था कि उसको देख कर पत्थर का दिल भी पिघल जाता जनाने (औरतों) कूफा ने फितरतन बेचैन होकर रोना शुरू किया तो अली बिन हुसैन[अ0स0] (सय्यदे सज्जाद) ने जोअ्फो नातवानी (कमजोरी) के

बाइस थर्राई हुई आवाज में कहा कि "तुम ही ने तो हमारा खून बहाया, अब तुम्हारी औरतें हमारे हाल पर रो रही हैं? हमारा और तुम्हारा फैसला खुदा के सिपुर्द है। फिर जरा ग़मो अलम की तासीर मे इजाफा हुआ, और मर्दो जन (औरतें) सब मिलकर रोने लगे। आपने फरमाया कि "तुम लोग हमारी मुसीबत पर नाला व शेवन (रो रहे) कर रहे हो। फिर आखिर हमको तबाह व बरबाद किसने किया है?' बशीर बिन हजीम असदी नाकिल (नक्ल किया) है कि उस वक्त जैनब बिन्ते अली[अ०स०] ने मज़मे की तरफ़ रूख किया और मौएज़ा (तकरीर) फरमाना शुरू किया। मैंने कभी एक पर्दा नशीन खातून को आपकी तरह पुरजोर तक़रीर करते न सुना था बस यह मालूम होता था कि आपकी जबान से आपके पिदरे बुजुर्गवार अली बिन अबी तालिब[अ०स०] बोल रहे हैं।

आपने लोगो की तरफ सुकूत इख्तियार करने का इशारा किया जिससे हर तरफ ख़ामोशी छा गई। आपने फरमाया कि "हम्द का सजावार अल्लाह है और सलवातो सलाम मेरे पिदरे बुजुर्गवार मुहम्मदे मुस्तफा[स०अ०] और उनकी इतरत से मखसूस है। ऐ अहले कूफा ऐ अहले मकरो दगा तुम रोते हो? खुदा करे तुम्हारे आँसूओ को थमना नसीब न हो और तुम्हारी नौहा व फरयाद की आवाजों मे सुकून पैदा होने न पाए ' फिर आपकी तकरीर का सिलसिला जारी रहा। यहाँ तक कि आपने फरमाया

'क्या तुम लोग सच मुच आँसू बहा रहे हो और चीखें मार मार कर रो रहे हो? हकीकतन तुम्हारे लिए है भी यही बेहतर कि ज्यादा रोओ और कम हँसो। तुमने समझने की कोशिश भी की कि किस तरह तुमने रसूले खुदा[स०अ०] के जिगर को चाक किया? उनके मोहतरम अहले हरम को बेपर्दा किया और उनकी हतके हुरमत (तौहीन) की? क्या तुमको इस पर तअज्जुब है कि आसमान ने खून बरसाया? यह तो कुछ नहीं आखिरत का अजाब बहुत सख्त होगा। और उस वक्त तुम्हारा कोई मददगार न होगा। इस चन्द रोज़ा मोहलत से खुश न होना खुदा को जल्द बाज़ी की जरूरत नही इसलिए कि उसको मौके के हाथ से जाने का अन्देशा नहीं बिला शुबहा वह तुम्हें एक वक्त तक तुम्हारे हाल पर छोडे रहेगा।' रावी नाकिल (बयान करता है) है कि आपकी इस दिल हिला देने वाली तकरीर के दौरान मे मेरे गिर्दो पेश तमाम सामईन (सुनने वाले) हालते इज्तेराब (बेचैनी) में दाँतो में उगलियाँ दबाए हुए रो रहे थे। और एक बूढे को मैंने देखा वह कह रहा था कि मेरे माँ बाप तुम पर निसार, तुम्हारे बूढे तमाम दुनिया के बूढ़ों से तुम्हारे जवान तमाम जवानों से, तुम्हारी

औरते तमाम औरतों से और तुम्हारी नस्ल तमाम नसलों से अफजल व बेहतर है। न वह कभी जलील की जा सकती है न रूसवा।"

आपके बाद फातिमा बिन्तुल हुसैन[अ०स०] उम्मे कुलसूम बिन्ते अली[अ०स०] और जैनुल आबेदीन (अली बिनल हुसैन[अ०स०]) ने मुतअद्दिद खुत्बे इरशाद फरमाए जिनसे अहले कूफा की आँखों के सामने से पर्दे हट गए और हुकूमत ने बेख़बरी और अवाम फ़रेबी (झूठ) का जो तिलिस्म (ड्रामा) क़ायम किया था वह टूट गया।

हुसैनी शखसियत का असर इतना जबरदस्त था कि खुद हुसैन[अ०स०] के कातिलों मे से एक जब सरे हुसैन[अ०स०] लिए हुए दरबार इब्ने जियाद में पहुँचा तो उसकी जबान पर हुसैन बिन अली[अ०स०] और आपके शख्सी और खानदानी खुसूसियात के तजकिरे मे मुन्दर्जा जैल अशआर जारी हुए।

املأ ركابي فضة وذهب   لقد قتلت الملك المحجبا

ومن يصلي القبلتين في الصبا   وخيرهم اذ يذكرون النسبا

قتلت خيرلناس اما وابا

"यानी मेरे पालाने शुतुर (ऊँट की अमारी) को तला (सोना) व नुकरा (चाँदी) से भर दीजिए क्योंकि मैंने (आपकी खातिर से) एक बडे जी इज्जत बादशाह को कत्ल किया है उसे जो बचपने मे दोनो किबलो की तरफ नमाज़ पढ़ चुका था और हसबो नसब में दुनिया भर से बेहतर था मैंने उसे कत्ल किया है जिसके माँ बाप दुनिया में सबसे बेहतर थे।" उसके जमीर की आवाज इज्तेरारी (न चाहते हुए भी) तौर पर उसके मुँह से निकल रही थी दरआँलाकि उसने महसूस न किया कि उसके यह अलफाज़ सियासते बनी उमैया के लिए किस दर्जा मुजिर साबित हो सकते थे। नतीजा यह हुआ कि इब्ने जियाद ने गजबनाक होकर उससे कहा कि "अगर तू उन्हें ऐसा ही समझता था तो फिर उनके कत्ल में शरीक क्यो हुआ? तुझे मुझसे किसी अच्छे सुलूक की तवक्को न रखना चाहिए बल्कि मैं खुद तुझे भी उन ही के पास भेज दूँगा।" चुनाँनचे वह शख्स उसी वक्त कत्ल कर दिया गया

इब्ने जियाद ने दरबार में पस्मान्दगाने (अहले हरम, अस्ल मानी पीछे छोड़े हुए अहले खाना) हुसैन[अ०स०] की हाजरी का हुक्म दिया। चुनानचे खानदाने रिसालत को कैदियो की हैसियत से लाकर इब्ने जियाद के सामने खड़ा कर दिया गया। उसने उनका दिल दुखाने के लिए इमाम हुसैन[अ०स०] के दनदाने

मुबारक को छड़ी से जर्ब लगाना शुरू किया यह बेअदबी देखकर जैद बिन अरक़म सहाबिये रसूल[स०अ०] ने कहा कि यह वह लबो दनदान (होंट दाँत) हैं जिनके रसूल[स०अ०] बोसे लिया करते थे।

एक रिवायत के मुताबिक अनस बिन मालिक दरबार में मौजूद थे वह रोए और कहने लगे कि हुसैन[अ०स०] सबसे ज्यादा रसूल[स०अ०] से मुशबह थे [1]

उस मौके के लिए हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] की बड़ी बेटी जनाबे जैनब[स०अ०] ने पहले ही लिबास में तब्दीली कर ली थी। खुसूसियत के साथ बहुत पस्त और मामूली दर्जे के कपड़े पहन लिए थे और अब उस वक्त कनीजों ने आपके गिर्द हल्का बाँध लिया था।[2] मगर खलकी (पैदाईशी) अजमत व जलाल छुपाने से नही छुपते। चुनाँनचे इब्ने जियाद ने जैनबे कुबरा की तरफ इशारा करते हुए पूछा कि वह कौन औरत है? तीन दफ़ा उसने यही कहा मगर कुछ जवाब न मिला। आखिर एक कनीज़ ने कह दिया। अरे यह जैनब बिन्ते फातिमा[स०अ०] हैं। यह सुनकर इब्ने जियाद ने जो फतहो जफर के नशे में चूर था। आपको मुखातब करते हुए कहा। 'खुदा का शुक्र कि उसने तुम लोगो को रूसवा किया। तुम्हें कत्ल किया और तुम्हारा झूठ ज़ाहिर कर दिया "[3]

'तुम लोगों' के खिताब के साथ इस फिकरे में कि "तुम्हारा झूठ जाहिर कर दिया " बड़ी वुसअत थी उसमें कुर्आन, हदीस, रिसालत और वही सबका इन्कार मुजमर (छुपा) था अब इस्लामी उसूल पर हमला हो रहा था जिस पर हजरत जैनब[स०अ०] ने खामोश रहना अपने लिए रवा न जाना। फरमाया'

"हम्द है उस खुदा के लिए जिसने हमको इज्जत दी मुहम्मदे मुस्तफा[स०अ०] के साथ और हमें पाको पाकीजा करार दिया इस तरह जो हक है पाको पाकीजा क़रार देने का। न वह कि जो तू कहता है। रूसवा वह होता है जो फासिक व फाजिर हो और झूठ उसका खुलता है जिसके मद्दे नजर हमेशा सच्चाई न रहे और वह हम नहीं हैं हमारा गैर है।

अगर गैरत होती तो इब्ने जियाद को मुन्फइल (शर्मिन्दा) होना चाहिए था। मगर वहाँ तो इकतेदार का नश्शा और सलतनत का गुरुर था। उसे ख्वाह मख्वाह जनाबे जैनब का दिल दुखाने का खयाल पैदा हुआ। और यह कहने

[1] सही बुखारी जि/11 पेज 188
[2] तबरी. जि/6. पेज/262 इरशाद पेज/259
[3] तबरी. जि/6, पेज 262

लगा 'देखा तुमने अल्लाह ने तुम्हारे भाई और दीगर अजीजों के साथ क्या किया?।'

यह तन्जिया फिकरा एक औरत के दिल पर जो असर कर सकता है वह जाहिर है मगर जनाबे जैनब[स0अ0] ने मतानत के साथ जवाब दिया "मैंने तो अच्छा ही अच्छा देखा। वह खासान खुदा वह थे जिनके लिए शहादत का दर्जा खत्ते तक़दीर में लिख दिया गया था और वह अपने पैरो से चलकर क़ुर्बानगाह की तरफ गए। और वह दिन भी दूर नही कि जब पेशे खुदा तेरा और उनका मुकाबला होगा। और तुझको अपने करतूत पर जवाब देही करना होगी।[1]

उस पर इब्ने जियाद को गुस्सा आ गया और उसने आपको ताजियाने से ईजा रसानी का इरादा किया मगर अम्र बिन हरीस वगैरह के समझाने से बाज रहा। फिर भी उसने आपकी तरफ मुतवज्जेह होकर कहा कि "खुदा ने मेरे दिल की मुराद पूरी कर दी तुम्हारे सरकश भाई और घराने के दूसरे नाफरमान और बागी अशखास को कत्ल करके ' उसके इस तर्जे कलाम से जैनबे कुबरा के दिल पर चोट लगी। और आपकी आँखों से आँसू निकल आये। मगर आपने सब्रो जब्त से काम लेते हुए उसके जवाब में कहा कि "हाँ बेशक तूने मेरे अजीजों को कत्ल किया है, मेरी शाखो को काट डाला है और मेरी जड़ को उखाड़ फेंक दिया है। अगर तेरी मुराद उससे बर आ गई है तो खुश होले।"

उसने कहा कि "यह बड़ी काफिया बाज (हाजिर जवाब) औरत है और इसके बाप भी तो शाएर और काफिया बाज थे।"

जनाबे ज़ैनब[स0अ0] ने फिर सुकूत मुनासिब न समझते हुए फरमाया भला एक औरत को क़ाफ़िया बन्दी और शाएरी से क्या तअल्लुक़ और मैं तो इस आलम में हूँ कि मुझे काफिया बन्दी का होश कहाँ! लेकिन दिल की आवाज थी जो मेरे दहेन से निकल गई।"[2]

उसके बाद वह हुसैन[अ0स0] के बीमार फरजन्द की तरफ़ मुखातब हुआ। आपका नाम दरयाफ्त किया। आपने फरमाया "अली बिन हुसैन[अ0स0]" वह कहने लगा "क्या अल्लाह ने अली बिन हुसैन[अ0स0] को कत्ल नहीं किया? आपने सुकूत किया इब्ने जियाद ने कहा क्यों कुछ बोलते क्यो नही। आपने फरमाया कि मेरे एक और भाई का नाम भी अली था। जिनको लोगो ने क़त्ल कर

[1]तबरी. जि/6, पेज/262

[2]तबरी. जि/6 पेज/263, इरशाद पेज/259

दिया। उसने कहा 'नहीं बल्कि अल्लाह ने कत्ल किया।'' आपने इस आयत की तिलावत फरमाई कि الله يوفى لانفس حين موتها यानी अल्लाह ही मौत के वक्त क़ब्ज़े रूह करता है'' यह और बात है वह बोला कि यह बच्चा नहीं है। समझदार है। ले जाओ इसको भी क़त्ल कर दो ' यह सुनना था कि जनाबे जैनबे कुबरा[स०अ०] दौड कर अपने भतीजे से पिलट गई और कहा मुझे भी इन ही के साथ कत्ल किया जाए जनाबे जैनब[स०अ०] की इस बेताबी से वह जालिम भी मुतअस्सिर हो गया और कहा ''रहने दो।'' इन औरतो को लेकर यही जाएगा।''[1]

लेकिन मौत पर फतह पाने वाले बीमार ने निहायत जुरअत व इस्तेक़लाल के साथ फरमाया कि

''इब्ने जियाद तू मुझे मौत से डराता है? क्या तू नही जानता कि कत्ल होना हमारी आदत है और शहादत हमारी फ़ज़ीलत।'' यह वह पुरशिकवा आवाज थी जो दरबारे इब्ने जियाद में गूजी और हर शख्स ने सहम कर उसको सुना। इब्ने जियाद अरक़े इन्फ़ेआल (शर्मिन्दगी के पानी) में डूब गया

उसने दरबार बरखास्त कर दिया लेकिन कैदियो को उस वक्त के लिए क़ैद ख़ाने मे रखे जाने का हुक्म दिया। जब तक कि दमिश्क़ से इब्ने ज़ियाद का क़ासिद उसके तहनियत (शाबाशी) नामे का जवाब लेकर वापस न आ जाये।

उसके बाद इब्ने जियाद ने तमाम अहले कूफ़ा को मस्जिदे जामे में जमा होने का हुक्म दिया।

जब लोग जमा हो गए तो उबैदुल्लाह बिन जियाद ने मिम्बर पर जाकर ब–तरीके एलाने आम यह नारवा कलेमात (गलत बातें) अपनी जबान पर जारी किए कि الحمدلله الذى اظهر الحق واهله ونصر ميرالمومنين يزيدبن معاوية وحزبه وقتل الحسين بن على وشيعة'' इन अलफाज मे अपनी फतह का एलान करते हुए जनाबे अमीर[अ०स०] और हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के लिए इन्तेहाई नाजेबा अलफ़ाज़ इस्तेमाल किए थे। जिनके सुनते ही अब्दुल्लाह बिन अफ़ीफ़ अज़दी खड़े हो गए। यह शिअयाने अली[अ०स०] में से एक थे जिनकी बाईं आँख जंगे जमल में जनाबे अमीर[अ०स०] की नुसरत में काम आई थी। और फिर सिफ्फीन में सर पर एक तलवार पड़ी और दूसरी ज़र्ब अबरू पर पड़ी जिससे दाहनी ऑख भी

---

[1]तबरी जि/8, पेज, 263

जाती रही अब उनका दस्तूर यह हो गया कि यह सुब्ह को मस्जिदे जामे में आ जाते थे और रात तक नमाजों में मसरूफ रहते थे फिर वापस जाते थ। उन्होंने इब्ने जियाद के इन अलफाज को रद करते हुए कहा 'ओ पिसरे मरजाना! तू झूठा और तेरा बाप झूठा और वह झूठा जिसने तुझको हाकिम बनाया और उसका बाप झूठा ओ मरजाना के लड़क पैगम्बर की औलाद को कत्ल करने के बाद रास्तबाजो की तरह कलाम करना चाहता है?' इब्ने जियाद ने गजबनाक होकर सिपाहियो को हुक्म दिया कि वह उनको गिरफ्तार कर ले मगर अब्दुल्लाह ने अपनी कौम अजदी को आवाज दी जिसके सात सौ जगी जवान कूफे मे मौजूद थे। चुनाँनचे कुछ बहादुर अजदी उनकी इमदाद के लिए आ गए और सिपाहियों के हाथ से उनको छुड़ा कर निकाल ले गए और उनके मकान पर पहुँचा दिया मगर रात को मख़फ़ी तौर से इब्ने जियाद ने फिर उनके घर पर से उन्हे गिरफ्तार कराया और बेरहमी के साथ उनको कत्ल करा दिया और उनकी लाश को दूसरो की इबरत के लिए दार पर खींचा।[1]

दूसरे दिन इब्ने जियाद के हुक्म से सरे इमाम हुसैन[अ०स०] को कूफ़े के कूचे व बाजार और तमाम क़बाएल में गर्दिश दी गई। और फिर दरवाज–ए–कस्र पर आवेज़ाँ करा दिया गया।[2]

जिस जमाने में अहले बैते अतहार कूफे में असीर थे आम खयाल यह था कि यजीद तमाम कैदियों के कत्ल कर दिये जाने का हुक्म देगा उसी दौरान मे कि जब उसराए (क़ैदी) आले मुहम्मद[स०अ०] कूफे मे कैद थे एक दिन किसी ने क़ैद खाने में एक पत्थर फेंका जिसमे इस मजमून की एक तहरीर बधी हुई थी कि आपके मुआमिलात के लिए एक खत यजीद के पास भेजा गया है। कासिद इस तारीख को जा रहा है और इस तारीख तक पलटेगा। अगर नावक्त तकबीर की आवाज सुनाई दे तो अपने मुतअल्लिक हुक्मे कत्ल का यकीन कर लीजिएगा। और अगर तकबीर न सुनाई दे तो समझ लीजिएगा कि इन्शाअल्लाह अमान है। लेकिन कासिद के आने पर तकबीर की आवाज बलन्द नहीं की गई क्योकि यजीद ने हुक्म दिया था कि कैदियों को दमिश्क़ रवाना कर दो।[3]

---

[1] तबरी, जि 6, पेज / 263–264, इरशाद पेज / 260
[2] इरशाद पेज / 260
[3] तबरी, जि / 6, पेज / 266

इब्ने जियाद ने हुक्म दिया कि इमाम हुसैन[अ०स०] के सर को नोके नैज़ा पर बलन्द करके तमाम शहर में गर्दिश दी जाए फिर तमाम शोहदा के सरों को ज़हर बिन कैस वगैरह चन्द आदमियों के सिपुर्द किया और उन्हे दमिश्क की तरफ रवाना किया और उनके एअकब (पीछे) में बीमार व नातवाँ अली बिन हुसैन[अ०स०] की गर्दन मे तौक डाल कर और अहले हरम को ऊँटों पर सवार करके महजर बिन सअलबा आएदी और शिम्र ज़िल जौशन की निगरानी में रवाना किया।[1]

खानदाने रसूल की ताराजी और अपनी कामयाबी को नुमायाँ करने के लिए इराक से दमिश्क जाने का वह रास्ता इख्तियार किया गया जिसमें आबादियाँ ज़्यादा पडती थीं

रास्ते भर इमाम जैनुल आबेदीन[अ०स०] का आलम यह था कि किसी से कलाम नही करते थे बिल्कुल खामोश चले जा रहे थे।[2] लेकिन पसमान्दगाने हुसैन के इस तरह तशहीर किए जाने से आम तौर पर उमवी हुकूमत के खिलाफ गम व गुस्से का इज़हार किया जाने लगा और बहुत से मकामात पर बेचैनी और बरहमी के आसार नमूदार हुए। बहरहाल तरह तरह के अन्दोह (तकलीफ) व मसाएब को बरदाश्त करने के बाद यह पसमान्दगान (अहले हरम) दमिश्क मे दाखिल हुए। उस दिन वहाँ के बाज़ार खास एहतेमाम से सजाए गए थे। और मजमे की यह कसरत थी कि आफताब निकलने के साथ ही दाखिल होने के बावजूद कहीं ज़वाल के वक्त दरबारे यज़ीद में पहुँच सके थे। जब खानदाने रिसालत का यह लुटा हुआ काफ़ेला बाज़ार से गुज़र रहा था तो इब्राहीम बिन तलहा बिन अब्दुल्लाह ने अली बिन हुसैन[अ०स०] से तन्ज़न पूछा कि "ऐ फरज़न्दे रसूल फतह किसकी हुई?" आपने जवाब में फ़रमाया "तुमको अगर मालूम करना है कि फतह किसकी हुई तो नमाज़ के वक्त जब अज़ान व एक़ामत कहना उस वक्त मालूम कर लेना कि किसकी फ़तह हुई और किसकी शिकस्त।"

जब अहलबैत नुबूवत हालते असीरी में दरवाज़ ए मस्जिदे दमिश्क़ पर पहुँचे तो एक बूढ़ा सामने आया और उसने उनको देखकर कहा "हम्द है उस खुदा की जिसने तुमको क़त्ल और हलाक किया और मुल्कों और शहरों को तुम्हारे मर्दों से खाली और पुरअमन बनाया। और अमीरूल मोमिनीन यज़ीद को

---

[1]अख़बारूत तुवाल पेज / 257 तबरी. जि / 6, पेज / 264. इरशाद पेज / 260

[2]तबरी. जि / 6, पेज 264

तुम पर गलबा अता फरमाया उस बूढे से यह कलेमात सुनकर बीमारे करबला अली बिन हुसैन[अ०स०] ने फरमाया "ऐ शैख क्या तूने कुरआन में यह आयत पढ़ी है 'قل لااسئلكم عليه اجراً الاالمودة فى القربى' यानी कह दो (ऐ हमारे हबीब) कि मैं सिवाए अपने जविल कुर्बा (अहलबैत) की मवद्दत व मुहब्बत के तुमसे और कोई अज्र व मुआवेजा इस तबलीगे रिसालत पर नहीं माँगता, बूढे ने कहा कि "हाँ यह आयत मैंने पढ़ी है। आपने फरमाया वह रसूल के जविल कुर्बा हम ही हैं जिनकी मुहब्बत तुम पर फर्ज की गई है। फिर फरमाया क्या यह आयत भी पढ़ी है। "واعلموا انماغنمتم من شئ فان لله خمسه وللرسول ولذى القربى" यानी याद रखो कि जो तुम कुछ मुनफअत (फाएदा) हासिल करो और जो माल बगैर मुशक्कत पाओ उसमें से पाँचवाँ हिस्सा अल्लाह रसूल और उनके जविल कुर्बा (कराबतदार) का हक निकाल दो। उसने अर्ज किया कि हाँ यह आयत भी पढ़ी है आपने फरमाया वह जविल कुर्बा हम ही हैं। जिनका यह हक खुम्स में निकालना वाजिब है और क्या यह भी पढ़ा है कि 'انما يريد الله ليذهب عنكم الرجس اہل البيت ويطهركم تطهيرا' उसने अर्ज किया कि बेशक पढ़ा है। आपने फरमाया कि वह अहलेबैते नुबूवत हम ही हैं जिनको खुदा ने बुराई से पाक रखा और मासूम बनाया है। बूढ़ा यह सुनकर हैरान हो गया।

उसने तस्दीक के तौर पर दरयाफ्त किया कि "खुदा की कसम सचमुच तुम वही हो? आपने जोर देकर फ़रमाया कि हाँ कसम ब–खुदा हम वही आले रसूल अहलेबैते नुबूवत जविल कुर्ब–ए–रिसालत हैं। बिला शक व शुबहा और अपने जद रसूल अल्लाह ही की कसम कि हम वही हैं। यह सुनना था कि बूढे ने फूट फूट कर रोना शुरू किया अम्मामा सर से फेंक दिया। सर आसमान की तरफ बलन्द किया और कहा कि खुदा वन्दा गवाह रहना कि मैं हर दुश्मने आले मुहम्मद[स०अ०] से चाहे वह जिन (जिन्नात) हो या इन्स (इन्सान) बेज़ार हूँ और उनसे दूरी चाहता हूँ" फिर बीमारे करबला की तरफ मुख़ातब होकर पूछने लगा कि "क्या मेरी तौबा कुबूल हो सकती है? आपने फरमाया हाँ अगर तुम तौबा करो तो कुबूल होगी। और तुम हमारे असहाब मे शुमार होगे। उसने अर्ज किया "मैं तौबा करता हूँ, उस गुस्ताखी से जो मैंने अदमे मारिफत (समझे बगैर) की बिना पर आपकी शान में की थी"

इस वाक़ये से जाहिर हो जाता है कि बनी उमैया के पचास बरस के प्रोपैगन्डे के नतीजे में आम मुसलमान खुसूसन अहले शाम किस हद तक आले मुहम्मद[स०अ०] से ना आशना हो चुके थे

इब्ने अल–कफती ने अपनी तारीख़ में लिखा है कि जिस वक्त उसराए आले मुहम्मद और सरहाए शोहदा दमिश्क में दाखिल हो रहे थे उस वक्त यजीद अपने महल के बालाख़ाने पर जो मक़ामे जैरून मे था इस मन्जर का मुशाहदा करने के लिए मौजूद था और जूँही सरहाए शोहदा नैजो पर दूर से नजर आये उसने यह अशआर पढ़ै

لمابدت تلک الحمول واشرفت   تلک الرؤس علی ربی جیرون

نعب الغراب قل اولا تقل   فلقد قضیت من الرسول دیونی

जब वह सवारियाँ नजर आईं और उन सरों का साया जबरून के टीलों पर पड़ा तो कौवा काय कायें करने लगा। (जो कि नहूसत की निशानी समझी जाती थी) मैंने कहा तू बोल या न बोल मैंने बहरहाल पैगम्बर[स०अ०] से अपने करजे वसूल कर लिए हैं।

उन दो शेअ्रा ही से यज़ीद की गलत जहनियत का इन्केशाफ़ साफ़ तौर पर हो जाता है यानी इमाम हुसैन[अ०स०] आपके अन्सार और अहले हरम के खिलाफ जो जो मजालिम किए गए थे उनको वह हजरत मुहम्मद मुस्तफा[स०अ०] से क़र्जा वसूल होने के बराबर समझता था।

शहरे दमिश्क़ में दाखिल होने के बाद यह काफिला उस दरवाजे के पास जो दरबारे शाही से करीब था रोक दिया गया और वहाँ काफी देर तक ठहराए रखे जाने के बाद उसको इज्ने हुजूरी मिला और उस दरबार में जो खुसूसियत के साथ आरास्ता किया गया था। खानदाने रिसालत मिस्ले गुलामाने हबश व कनीजाने तुर्कों दैलम और तश्ते तला में हुसैन मजलूम[अ०स०] का सरे मुबारक यजीद के सामने पेश किया जा रहा था।

जहर बिन क़ैस ने गलत तौर से बढ़ा चढ़ा कर अपनी जमाअत की बहादुरी और असहाबे हुसैन[अ०स०] की बेबसी का नक्शा खींचते हुए रूदादे जंग यजीद को सुनाई जिसका मजमून यह था कि सरकारे वाला हुसैन बिन अली[अ०स०] इराक की तरफ अठ्ठारा आदमियों को लिए हुए अपने अहलेबैत मे से और साठ आदमियो के साथ अपने शियों में से तो हम उनके मुकाबले के लिए गए और उनसे मुतालबा किया कि वह गैर मशरूत (बगैर शर्त) तरीके पर अपने को अमीर उबैदुल्लाह बिन जियाद के सिपुर्द कर दें या जिदाल व

किताल (जग और कत्ल) पर आमादा हो जाये उन्होने जग को सिपुर्दगी के मुकाबले मे तरजीह दी। तो सूरज निकलने के बाद ही हमने उनको चारो तरफ से घेर कर इस तरह हमला कर दिया जिस तरह कबूतरो पर शिकरे हमला करते हैं। जिससे उनको किसी तरह पनाह न मिलती थी। चुनाँनचे ज्यादा देर गुजरने न पाई कि उनका पूरे तौर पर खातमा कर दिया गया और उनके जिस्म बेलिबास खाक व खून मे आलूदा छोड दिए गए।[1]

उस मौके पर यजीद अपने नुदमा (दोस्तों) के साथ बैठा हुआ शतरज खेल रहा था और शराब के नशे में यह शअ्र गा रहा था।

ادرکساوناوبها   الایاایهاالساقی

फिर कैफो सुरूर के साथ साथ बे दीनी का पारा और ऊँचा हुआ और यह अशआर पढने लगा।

لیت   اشیاحی   بمدرشهدوا   جرع الحروج من وقع الاسل

لاهلّو   واستهلوا   فرحاً   ولقالوا   یا   یزید   لاتشل

لعست بنوهاشمی بالملک ولا   خبرجاء   ولاوحی   نزل

यानी मेरे जगे बद्र वाले बुज़ुर्ग जिन्दा होते और देखते कि दीने मुहम्मदी के अन्सार किस तरह नैज़ों के पड़ने से घिर गए हैं। तो वह इस सूरत में खुश होकर मुझे दुआएं देने लगते बनी हाशिम ने हुसूले सलतनत का एक खेल खेला था। हकीक़त मे न कोई खबर आई थी और न कोई वही नाजिल हुई थी।

यह सुनना था कि जनाबे ज़ैनबे कुबरा[स0अ0] खड़ी हो गईं और आपने मारिकतुल आरा तकरीर शुरू की जिसने यजीद के जाहो जलाल (शानो शौकत) की तमाम बुनियादों को खोखला कर दिया। आपने फरमाया कि 'कितना सच्चा है मेरे परवरदिगार का इरशाद कि "आखिर में उन लोगों की जो बुरे आमाल करते हैं यह नौबत पहुची कि वह आयाते खुदा वन्दी की तकजीब (झुठलाने) करने और उनकी हसी उड़ाने लगे।" तूने ऐ यज़ीद! क्या यह गुमान किया है कि चूँकि तूने हम पर जमीन व आसमान के तमाम रास्तों को बन्द करते हुए हमको इस हालत मे पहुँचा दिया है कि आज हम तेरे सामने कैदियों की तरह लाये जा रहे हैं तो इससे खुदा के नजीक भी हम

---

[1]तबरी जि 6. पेज/264. इरशाद पेज/261 दैनवरी ने इस तकरीर को शिम्र की तरफ मन्सूब करके दर्ज किया है अख़बारुत तुवाल. पेज/257–258

हकीर और तू बाइज्जत करार पा गया। या यह कि तुझे यह जाहरी कामयाबी तेरे मुकर्रब (क़रीबतर) बारगाहे इलाही होने की जेहत से हासिल हुई है इसी खयाल के मातहत तू खुश हो हो कर अपने शानों पर नजर डाल रहा है। इसलिए कि इस वक्त तुझको यही दिखाई दे रहा है कि दुनिया तेरे हुक्म की पाबन्द और उमूरे ममलकत मुनज्जम व मुरत्तब (हुकूमत का निज़ाम ठीक ठाक) हैं। और सलतनतो हुकूमत तेरे लिए तमाम खतरात से पाको साफ हो गई है। क्या तू भूल गया खुदा के कौल को कि न खयाल करें वह लोग जिन्हो ने कुफ्र इख्तियार कर रखा है कि हम जो उनको मोहलत देते हैं वह उनके लिए किसी बेहतरी का बाइस होगी। हम उनको सिर्फ इसलिए मोहलत देते हैं कि वह खूब दिल खोल कर गुनाह कर लें।

बिल–आखिर तो उनके लिए हिकारत (जिल्लत) आमेज सजा मुकर्रर ही है। क्या इस्लामी ग़ैरत व हमीयत इसी की मुतकाजी (तक़ाज़ा) है कि तू अपनी औरतों बल्कि कनीजो तक के लिए पर्दे का एहतेमाम करे और रसूल[स०अ०] की नवासियो को क़ैद करके दर बदर फिराए और फिर उस पर यह कहने की जुरअत करे कि "لاهلوا واستهلو فرحا" गोया तू अपने मुशरिक बुजुर्गों से दाद (तारीफ) का तालिब है। घबरा नहीं थोड़े ही दिनों मे तू भी उसी घाट उतार दिया जायेगा और उस वक्त तू आरजू करेगा कि काश तेरे हाथ शल और जबान गुंग होती और तूने जो कुछ कहा और किया वह न कहा और न किया होता। तेरे लिए इससे बदतर क्या हो सकता है कि रोजे हश्र खुदा तेरा फैसला करने वाला मुहम्मद मुस्तफा[स०अ०] तेरे मुकाबिल में मुद्दई (हमारे गवाह, दावा) और जिब्रील उनकी तरफ से दावे के गवाह होंगे। उस वक्त उन लोगों को भी जिन्हो ने तेरे अफआल (बदकारियों) की ताईद की है और तेरा साथ देकर तुझे मुसलमानो की गर्दनो पर मुसल्लत रखा है। मालूम हो जाएगा कि जालिमों को कैसा बुरा बदला दिया जाता है। अगरचे इन्केलाबे जमाना ने यह नौबत पहुँचा दी है कि मै तुझसे बात कर रही हूँ, मेरी नजरों मे तेरी तो कोई वुक़अत नहीं हत्ता कि तेरी तोबीख़ व सरजनिश (मलामत) को भी मैं अपने लिए एक बडी मुसीबत खयाल करती हूँ। लेकिन करूँ क्या कि दिल भरा हुआ है और कलेजे मे आग लगी है। खुदा की शान कि खुदा परस्त अफराद शैतानी लशकर के हाथों क़त्ल हों।

अच्छा (ए यजीद तुझको कसम है) तू कोई दक़ीक़ा उठा न रख और अपनी पूरी कोशिश सर्फ कर और अपनी तमाम जिद्दो जोहद खत्म कर दे,

लेकिन खुदा की कसम तू हमारे ज़िक्र को और हमारी ज़िन्दगी को फना नही कर सकता। और न हमारे असली मकसद को तू पहुँच सकता है इस खूने नाहक़ का धब्बा तेरे दामन पर कयामत तक बाक़ी रहेगा और तू कभी उसको धो नही सकता

तेरी राए यक़ीनन गलत, तेरी जिन्दगी बहुत महदूद। और तेरे इर्द–गिर्द का मजमा बहुत जल्द तितिर बितिर होने वाला है वह दिन बहुत नजदीक है जब मुनादी निदा करेगा कि "ज़ालिमो पर खुदा की लानत है।" शुक्र है उस खुदा का जिसने हमारे पेशरौ बुज़ुर्गों का अन्जाम सआदत के साथ और हमारे आखरी बुज़ुर्ग का अन्जाम शहादत व रहमत के साथ मुकर्रर किया और वही हमारे लिए काफी और बेहतरीन नासिर व मुईन (मददगार) है।'

अब यजीद ने इमाम जैनुल आबेदीन[अ०स०] की दिल आज़ारी (दिल दुखाना) करना चाही और आपको मुखातब करते हुए कुरआन की यह आयत पढ़ी "وَمَا

أَصَابَكُمْ مِنْ مُصِيبَةٍ فَبِمَا كَسَبَتْ أَيْدِيكُمْ

"जो मुसीबत तुम पर आई वह तुम्हारे हाथों आई।" इमाम ने दूसरी कुरआनी आयत पढ़ते हुए बताया कि हम पहली आयत के मिसदाक नहीं हैं बल्कि इस आयत के मिसदाक़ हैं

ما أصاب من مصيبة في الأرض ولا في أنفسكم إلا في كتاب مبين من قبل أن نبرأها إن ذلك على الله يسير[1]

मतलब यह हुआ कि हमारी मुसीबत एक अहदो पैमान के मुताबिक है जो अजल से कलमबन्द हो चुका था और जिसकी तकमील जरूरी थी।

पैहम (मुसलसल) हक के एलानात ने हाज़रीन की निगाहों से बातिल के पर्दे भी हटाए और जुरअते इजहार भी पैदा की। चुनाँचे जब यजीद ने भी लबो दन्दाने हुसैन[अ०स०] के साथ इस बेअदबी का एआदा (दोहराया) किया जो कूफे में इब्ने जियाद कर चुका था गालिबन इस खयाल के मातहत कि कूफा शिअयाने अली[अ०स०] का मरकज रह चुका था। लिहाजा जैद बिन अरकम इब्ने जियाद को बरसरे दरबार टोक देने की हिम्मत कर सके। भला दमिश्क मे किसकी मजाल होगी कि मुझ पर मोतरिज (एतेराज) हो सके। मगर हुआ यहाँ भी वही।

अबू बरज ए असलमी खड़े हो गए और कहा अरे तू अपनी छड़ी उस लबो दन्दान पर लगाता है जिसे मैंने अक्सर देखा कि उस पर रसूल

---

[1] काफी जि, 1 पंज, 503

अल्लाह[स०अ०] अपना मुँह रखते थे। याद रख कि अब कयामत के दिन बस तेरी शिफ़ाअत इब्ने जियाद ही करेगा।[1]

बावजूद इसके यजीद की इन जसारतों और गुस्ताखियों को देख कर अहले दरबार की हिम्मतें बढ़ गईं चुनॉनचे एक सुर्ख रंग शामी खड़ा हुआ और कहने लगा कि ऐ अमीरूल मोमिनीन! यह लड़की मुझे दे दीजिए। और इशारा किया उसने फातिमा बिन्तुल हुसैन[अ०स०]की तरफ यह सुनना था कि आप कॉंपने लगीं और अपनी फूफी जनाबे जैनब[स०अ०] से लिपट गईं जनाबे ज़ैनब ने बच्ची को तसल्ली दी और बलन्द आवाज़ से उस शामी से कहा कि क्या बकता है ब–खुदा तू मर भी जाए तो यह नहीं हो सकता। न यजीद ऐसा कर सकता है। आपके आख़री फिकरे पर यजीद को तैश आ गया और वह कहने लगा "तुम गलत कहती हो मुझे इसका इख़्तियार हासिल है और अगर मैं चाहूँ तो ऐसा यकीनन कर सकता हूँ जनाबे ज़ैनब[स०अ०] ने फ़रमाया "जब तक इस्लाम का दावा रखता है तू हरगिज ऐसा नहीं कर सकता, यह और बात है कि अलल एलान तू हमारे मजहब से ख़ारिज हो कर कोई दूसरा दीन इख़्तियार कर ले।" उस पर यजीद का गुस्सा और बढ़ा और वह कहने लगा "मुझसे तुम ऐसी बातें करती हो। दीन से खारिज तो, तुम्हारे बाप और भाई थे जनाबे जैनब[स०अ०] ने जवाब दिया कि मेरे बाप और भाई के दीन ही को बजाहिर इख्तियार करके तू और तेरा बाप और दादा मुसलमान कहलाये " यजीद उसके बाद और ज्यादा सख्त कलामी पर उतर आया। नाचार जैनबे कुबरा को यह कहना पड़ा कि यजीद तू एक जालिम हाकिम है और अपने जबरो तशद्दुद से हमको दबाना चाहता है।" आपके इस जवाब से यजीद को कुछ शर्म दामनगीर हुई और वह खामोश हो गया। उसके बाद जब शामी ने फिर अपनी दरख्वास्त को दोहराया तो यजीद ने उसे सख्ती से डॉंट दिया और कहा कि "दूर हो खुदा तुझे गारत करे" 1 (तबरी, जि/6, पेज/265, इरशाद पेज/260)

एक दफ़ा दरबार में यजीद ने हजरत इमाम जैनुल आबेदीन[अ०स०] से मुखातब होकर कहा "ऐ अली बिन हुसैन[अ०स०] तुम्हारे बाप ने मेरी क़राबतदारी का खयाल न किया मेरे हुकूक को नजर अन्दाज किया और मेरी सलतनत में मुनाजिअत (लड़ाई) की तो अल्लाह ने उनके साथ वही किया जो तुम देख रहे हो।" इमाम ने उसके जवाब में वही आयत पढ़ी कि "

[1]तबरी, जि/6, पेज/267

ما أصاب من مصيبة في الأرض ولا في أنفسكم إلا في كتاب من قبل أن نبرأها

मतलब यह था कि यह तो अलमे इम्कान में लैलो नहार (सुबह व शाम) रहता ही है किसी को फतह और किसी को शिकस्त इसकी दलीलें हक्कानियत नहीं समझना चाहिए

अब यज़ीद को फ़तह की तरग (नशा) और बढ़ी। यह उसकी नफ़्सियाती खलिश (अन्दर की जलन) का असर था वह समझ रहा था कि खुद मेरे दरबार मे हर शख्स मुझे मुजरिम समझ रहा है। वह सफाई की कोशिश करने लगा। जो मजीद उसके खबसे नफ्स (अन्दर की गदगी) का सुबूत बन गई वह अपने खानदान की मुद्दते दराज (बरसों) की इस सियासत को कि आले रसूल[स0अ0] से अवाम को नावाकिफ़ रखा जाए फतह के नशे मे खुद शिकस्ता कर रहा था। उसने कहा 'तुम लोग जानते हो इन पर यह मुसीबत क्यों आई? सिर्फ इसलिए कि यह अपनी जगह समझते थे कि मेरे बाप अली[अ0स0] इस (यजीद) के बाप से बेहतर और मेरी माँ उसकी माँ से बेहतर और मेरे नाना उसके नाना से बेहतर थे और मैं खुद उससे बेहतर और खिलाफत का उससे ज्यादा मुस्तहक हूँ। हालाँकि उनका यह खयाल कि उनके बाप मेरे बाप से बेहतर थे उसका तसफिया (फैसला) यूँ हो जाता है कि मेरे बाप और इनके बाप के दरमियान झगड़ा तो दुनिया को मालूम है कि उसका फ़ैसला किसके मुवाफिक हुआ बेशक उनका यह कहना कि उनकी माँ मेरी माँ से बेहतर थीं और यह भी कि उनके नाना मेरे नाना से बेहतर थे। यकीनन दुरूस्त है इसलिए कि कोई मुसलमान रसूल[स0अ0] का मद्दे मुकाबिल दूसरे को नहीं समझ सकता। मगर कुरआन की यह आयत उनके पेशे नजर न थी कि सलतनत का मालिक अल्लाह है जिसे चाहता है देता है और जिससे चाहता है सल्ब (ले लेता) करता है और जिसे चाहता है इज्जत देता है और जिसे चाहता है जलील करता है वह हर शै पर कादिर है।'

इस तकरीर से जाहिर है कि औसाफ (खुसूसियतों) इम्तेयाजी के मुकाबले मे यज़ीद ने अपनी शिकस्त का इकरार कर लिया। मगर आख़िर में दलील वही कहरो गल्बा की पेश कर दी। जिसकी बिना पर नमरूद फिरऔन और शद्दाद तक बेजुर्मो खता साबित किए जा सकते हैं। मगर जाहिर है कि यह मेयारे हक्कानियत (हक की कसौटी) नहीं है न कुरआन की आयत का यह मतलब है

ख़ानदाने बनी उमैया का एक शख़्स यहिया बिन हकम इन हालात से इतना मुतअस्सिर हुआ कि एलानिया उसने अपने अशआर मे हुसैन[अ०स०] की शहादत पर इज़हारे रजो मलाल और इब्ने ज़ियाद को बुरा कहना शुरू कर दिया। उस पर यज़ीद ने यहिया के सीने पर हाथ मारा और कहा ख़ामोश नहीं रहते हो[1]

इतना ही नहीं बल्कि यज़ीद की बीवी हिन्द बिन्ते अब्दुल्लाह बिन आमिर बिन करेज़ तो दरबार में निकल आई कि अरे रसूल[स०अ०] की बेटी फातिमा के लाल का सर और इस तरह।[2] फिर भी ऐसा नही हुआ कि अहलेबैते नुबूवत को फौरन मदीने रवाना कर दिया जाता बल्कि वह अरसे तक ज़िन्दान मे कैद रहे बेशक जब मुल्क में बेचैनी के आसार नज़र आये और सियासी तौर पर अपनी गलती का एहसास हुआ तो अब उसने अहलेबैते रसूल[स०अ०] को रिहा कर दिया और उनके लिए एक मकान खाली करा दिया जिसमे दमिश्क़ की ख़ास ख़ास घरानों की औरतों ने आकर अहले बैते हुसैन[अ०स०] को हुसैन का पुरसा दिया और तीन दिन तक इमामे मज़लूम का मातम बरपा रहा।[3]

नोमान बिन बशीर अन्सारी को जो जनाबे मुस्लिम बिन अकील के साथ तशद्दुद (जुल्म) न करने के जुर्म में कूफे की हुकूमत से माज़ूल कर दिए गए थे और उसके बाद से वह दमिश्क में गोया नज़र बन्द रखे गए थे आले मुहम्मद[स०अ०] का हमदर्द समझ कर हिदायत की गई कि वह पसमान्दगाने (अहले हरम) हुसैन[अ०स०] को बाइज़्ज़त व एहतेराम के साथ मदीने पहुँचाने का इन्तेज़ाम करें।[4]

अब यज़ीद कत्ले हुसैन[अ०स०] से अपने को बरी ज़ाहिर करने की नाकाम कोशिश कर रहा था। इसलिए उसने इमाम ज़ैनुल आबेदीन[अ०स०] को तन्हाई में अपने पास बुलाया और कहा कि खुदा इब्ने मरजाना पर लानत करे। अगर बराहे रास्त आपके वालिद का और मेरा सामना हो जाता तो जो कुछ वह फरमाते मैं मन्ज़ूर कर लेता और कभी उनको क़त्ल करना गवारा न करता। बहरतौर खुदा को जो मन्ज़ूर था वह हुआ अब आप मदीने तशरीफ़ ले जाइये

---

[1]तबरी, जि/6, पेज/265
[2]तबरी, जि/6, पेज/267
[3]तबरी, जि/6, पेज/267
[4]तबरी, जि/6, पेज/265

और वहाँ से मुझे खत लिखते रहियेगा और जो भी जरूरत हो उससे मुझे मुत्तेला कीजिएगा।[1]

उसके बाद तीस आदमी नोअमान बिन बशीर के साथ किए गए और नोमान ने हस्बे हिदायत अहलबैते रिसालत के साथ रास्ते भर पूरे एहतेराम का बर्ताव रखा और उनको मदीने तक पहुँचाया।[2]

इस लुटे हुए काफेले के पहुँचने से मदीने मे एक कोहराम बरपा था। पर्दा नशीन खवातीन तक बेताबाना घरों से निकल आईं चुनाँनचे खानदाने अब्दुल मुत्तलिब की एक खातून का यह आलम था कि वह बाल बिखराए हुए दर्दअगंज नौहा पढ़ रही थीं जिसका मजमून यह था कि रोज़ कयामत रसूले खुदा[स0अ0] को क्या जवाब दोगे जब वह पूछेंगे कि तुमने मेरे बाद मेरे अहलेबैत से क्या सुलूक किया जिनका आलम यह है कि कुछ उनमें से कैदी बनाए गए हैं और कुछ खाको खून में आगुश्ता (मुबतिला) हुए क्या मेरी खिदमात का यही सिला था कि तुम मेरी औलाद के साथ मेरे बाद यह सुलूक करो।[3]

---

[1] तबरी. जि/6. पेज, 268, इरशाद पेज/263

[2] अखबारूत्तुवाल पेज/258

[3] तबरी. जि/6 पेज, 221

इक्तीसवाँ बाब

असीरि–ए–अहले हरम के वाके़आत पर एक जामे तबसेरा

गुजिश्ता वाकेआत की रौशनी में पूरे तौर पर यह अन्दाजा हो जाता है कि यजीद को इन्कारे बैयत के बहाने सिर्फ कत्ले हुसैन[अ०स०] ही मकसूद न था बल्कि हकीक़तन वह उस रूहानी मरकज को फना करना और अवाम की नज़रों से गिराना चाहता था जो तालीमाते इस्लामी का मुहाफिज होते हुए नाजाएज इक्तेदार के तसर्रूफात में किसी भी जमाअत के साथ तआवुन न कर सकता था और उसकी तमाम जिम्मेदारी दमिश्क की मरकजी हुकूमत पर थी जिसने अपने मकसद के हुसूल के लिए मदीने फरमान भेजा, हाकिमे मदीना को बदला, मक्के में हाजीयों के लिबास में फौज के सिपाही भेजे इब्ने जियाद को कूफे का गवर्नर मुकर्रर किया और उसे इस मुहिम को सर करने का पूरा इख्तियार दिया। अगर यह सब बातें हुक्मे यजीद से न हुई होतीं तो इब्ने जियाद अहलेबैत को दमिश्क न भेजता, कूफे ही में कैद रखता। फिर उसके इत्तेला देने के बाद अगर यज़ीद को अहलेबैते रिसालत की तजलील व तौहीन मद्दे नज़र न होती तो कैद करके शाम बुलाने की कोई वजह न थी बल्कि करबला या कूफे ही से वह मदीने रवाना कर दिए जाते। शहादते इमाम हुसैन[अ०स०] तक तो ब फर्जे मुहाल मान भी लिया जाए कि यजीद को इत्तेला न थी और वह इब्ने जियाद का जाती फेअ्ल (अमल) था मगर शहादते हुसैन[अ०स०] के बाद तो इब्ने जियाद ने पसमान्दगाने हुसैन[अ०स०] को इसी गरज से कूफे में ठहराये रखा कि उनके मुतअल्लिक यज़ीद से हिदायात हासिल किए जायें। चुनाँनचे उसके बाद से जो कुछ अमल दर आमद हुआ वह तो सराहतन (खुले हुए) यजीद के अहकाम के बाद हुआ। फिर भी क्या इस खयाल की गुन्जाइश बाकी रह सकती है कि सरहाए शोहदा और अहले हरम का कैद करके दमिश्क भेजना भी इब्ने ज़ियाद का ज़ाती फेअल था।

फिर अगर यजीद को ख़्वाह मख़्वाह उन हजरात की तौहीन मन्जूर न होती तो कोई मकान पहले से मुहैया किया जाता और उसी में अहलबैते

रिसालत को उतारा जाता। और यजीद ने पहली ही बार इज्जतो एहतेराम के साथ सय्यदे सज्जाद अली बिनल हुसैन[अ०स०] से मुलाकात की होती, मगर तारीखें मुत्तफ़िक हैं कि अहले हरम शाम बुलवाये गए यजीद ने दरबारे आम और ना महरमों के मजमे में उसराये (असीर) आले मुहम्मद[स०अ०] को तलब किया और कुछ न हुआ होता तो अहलेबैत की यही क्या कम बेहुरमती थी जो बिला वास्ता खुद यजीद ही के हाथों अमल में आई थी न कि "मज़ीद बरआँ चूब खेजरान और सरे हुसैन[अ०स०] के साथ बेअदबी' यह वह कयामत खेज मन्जर था कि जिस पर मुसलमान तो मुसलमान, ईसाई भी एहतेजाज करने पर मजबूर हो गए।

खयाल किया जा सकता है कि इन तमाम मजालिम का मौका खुद इमाम हुसैन[अ०स०] ने दिया अहले हरम को अपने साथ रखकर इसी लिए यह इमाम के अमल का नाज़ुक तरीन पहलू समझा गया है जिससे मशवरा देने वाले मना कर रहे थे मगर हुसैन[अ०स०] ने उनका अपने साथ रखना जरूरी समझा था।

हालाँकि आम तौर पर मैदाने जंग में औरतों और बच्चो का किसी फरीक़ के साथ मौजूद होना उनके हिफाजती और मुदाफेअती (Defence) मुशकिला बहुत बढ़ा देता है और फ़रीके मुखालिफ़ (दुश्मन) के लिए बड़ी आसानियाँ पैदा कर देता है। चुनाँनचे एक शाएर कहता है।

الهفى بقرى سحل حين احليت

عليب الولايا والعد والمياسل

यानी "अफसोस है कि उस जग के मैदान मे हमारे खिलाफ फौज कशी की, हमारे साथ औरतो और सख्त दुश्मन दोनों ने मिलकर ' इस सूरत मे यह सवाल पैदा होता है कि इमाम हुसैन[अ०स०] अपने साथ अहले हरम को ले क्यों गए जहाँ तक कि तारीख से पता चलता है इमाम हुसैन[अ०स०] ने किसी मशवरा देने वाले के उन खयालात को रद नहीं किया जो आइन्दा के खतरात के मुतअल्लिक़ वह पेश करते थे। फिर भी आपने उनका साथ ले जाना नागुजीर (जरूरी) बताया। कभी यह कह कर कि मन्जूरे इलाही यही है कि यह कैद हों और कभी यह कह कर कि जो मुकद्दर में है वह होकर रहेगा। इन बातो से साफ़ जाहिर हो जाता है कि इमाम हुसैन[अ०स०] तमाम ख़तरात को पेशे नज़र रखते हुए अहले हरम का अपने साथ ले जाना जरूरी समझते थे और इस सूरत में यह मानना पडेगा कि उनके साथ रखने को आपके मकसद की तकमील मे बडा दखल था और यह कि बराहे रास्त हजरत इमाम

हुसैन[अ०स०] को माद्दी जराए (जाहरी ताकत) इख्तियार करते हुए किसी सलतनत से मुतसादिम (भिड़ना) होना मक़सूद न था आपका नुक़्त–ए–नजर यह न था कि खुद तख़्ते हुकूमत पर बैठ कर माला मनाल (दौलत) और लज्जते हयात (अरामदेह जिन्दगी) दुनिया से मुतमत्ते (ख्वाहिश) हो बल्कि आप महज हक्कानियत के तहपफ़ुज में हिमायते बातिल से बचते हुए यजीद की बैयत से इन्कार फरमा रहे थे और इस इन्कार पर अपनी आखरी साँस तक क़ायम रहने का तहैया कर चुके थे ताकि आपका यह इन्कार दुनिया की आँखों के सामने हकीकत के वाजेह होने का एक जरिया बने और वह यजीद के आमाल व अफआल को आज और कभी शरीअते इस्लाम का जुज्व (हिस्सा) न समझ ले। उसके लिए बड़ी जरूरत इस बात की थी कि आपकी मुकाविमत (तहरीक) के किसी उन्सुर (बात) के मुतअल्लिक़ गलत तौजीहो (तरीक़े से) की इशाअत करना फरीके मुखालिफ (दुश्मनों) के लिए नामुमकिन हो जाए और आपकी शहादते उजमा को किसी 'पुर असरार हादिसे (खामोशी से हादिसा)।' की शक्ल न दी जा सके, इसलिए कि उस सूरत में हक्कानियत के दवामी तहपफ़ुज (हमेशा के लिए) में रखना (रोड़ा) पड़ने का पूरा पूरा इम्कान बाकी रह जाता। यह मकसद इमाम हुसैन[अ०स०] का अहले हरम के जरिये इन्तेहाई कामयाबी के साथ पूरा हुआ और आपकी हक्कानियत व मजलूमियत इतनी नुमायाँ हो गई कि बनी उमैया की कोई तावील (बहाना) व कोई तमा कारी (मक्कारी) और सियासी शोबदा बाजी (चालें) उसको मुशतबह (शक) न बना सकी।

तारीख़ की खुली हुई हकीकत है कि बनी उमैया ने एक जबरदस्त चाल बनी हाशिम के मुकाबले में यह चली कि उसमान को बहैसियत मजलूम पेश किया और उस खून की जिम्मेदारी गलत तौर पर बनी हाशिम और बिल खुसूस अली बिन अबी तालिब[अ०स०] पर आएद कर दी इसके लिए उसमान का खून भरा कुर्ता और उनकी जौजा नाएला की कटी हुई उंगलियाँ मुद्दत तक मस्जिदे जामे दमिश्क में मजमे के सामने पेश की जाती रहीं और मजमा उनको देख कर आहो जारी करता और सरो सीना पीटता था। इस तरह एक बहुत बड़ी जमाअत के दिलों को अहलेबैते रसूल से मुन्हरिफ किया गया और आले सुफियान ने मक़तूल के वुरसा (वारिस) बनकर लोगों की हमदर्दी हासिल की। यह प्रोपिगन्डा उस वक्त तक खत्म नहीं हो सकता था जब तक आले बनी हाशिम मे औलादे सुफियान के हाथों एक ऐसा गमअगेज

हादसा न हो जाये जो हमदर्दी के असरात को मअ्कूस (बरअक्स, उलटा) कर दे हकीकतन इमाम हुसैन[अ0स0] को शहीद करके दुश्मन खुद कहरी तौर पर इस काम के अन्जाम पाने का जरिया बन गया जिसका बनी उमैया अपने जोशे जफरयाबी (कामयाबी) मे इब्तेदाअन (शुरू में) अन्दाजा भी न कर सके। वह रोजे आशूर तक अपने इकदामात के जवाज मे कत्ले उसमान के वाक़ेए का हवाला देते थे मसलन हुसैन[अ0स0] और आपके साथियों पर पानी बन्द करने की सनदे जवाज इसी को करार दिया कि इसके पहले उसमान पर पानी बन्द किया जा चुका है इसलिए यह उसका बदला है। हालाँकि उसमान पर पानी बन्द करने में बनी हाशिम का कोई हाथ न था मगर प्रोपेगन्डा तो यही किया गया था लेकिन पहले तो खुद करबला ही में जवानो नौजवानो और सबसे आखिर मे शशमाहे बच्चे की शहादत से मजलूम का दर्जा इतना ऊँचा हो गया कि अब उसमान का नाम लेना भी इन्सानी इन्साफ की निगाह में गैर मुतवाजिन (नबराबरी) बात हो गई और फिर अहलेबैते अतहार की असीरी ने तो आले रसूल[स0अ0] की मजलूमियत को इस नुक्त–ए मेराज तक पहुँचा दिया जिसके बाद हवा ख्वाहाने बनी उमैया की जबानें बन्द हो गईं और उन्हे फिर उसमान के वाकय ए कत्ल का नाम लेते हुए भी शर्म दामनगीर होने लगी। लुत्फ यह है कि उसमान की कमीस खून आलूद और उनकी जौज ए मुकर्रमा की कटी हुई उंगलियों की नुमाइश तो खुद मकतूल (जिनका कत्ल हुआ है) वाली जमाअत के हाथों से हुई थी। जिसके साथ उसका कोई सुबूत न था कि उसका मुरतकिब (जिम्मेदार) कौन हुआ है लेकिन हुसैन[अ0स0] के सरे बुरीदा और उनके अहलबैते अतहार की असीरी की नुमाइश खुद उन ही जालिमो के हाथ से हो रही थी जो इस जुल्म के मुरतकिब थे इसलिए इस जुर्म का इरतेकाब करने वलो को कहीं और ढूढने की ज़रूरत न थी इसका नतीजा यह था कि उस दुनिया की भी जो इसके पहले जनाबे उसमान से हमदर्दी की वजह से आले सुफियान के साथ और बनी हाशिम से मुन्हरिफ (फिरी हुई) थी हमदर्दियाँ मुन्कलिब (पलट) हो गई। वह अब बनी हाशिम की गमख्वार बनकर आले सुफियान से मुन्हरिफ़ (फिर) हो गईं। अगर इमाम हुसैन[अ0स0] अहले हरम को साथ न लाते तो हकीकते वाक़ेआ और उमवी जेहनियत का इस दर्जा इन्केशाफ (खुल कर सामने न आई) गैर मुमकिन था

तारीखे इस्लाम में यह मिसाल मौजूद है कि इसके पहले हसन[अ0स0] बिन अली[अ0स0] जहेर से शहीद कर दिए गए मगर उस वक्त तक हुकूमते बनी

उमय्या के जोरे हुकूमत से मरऊब (डर कर) या सियासी चालों से फरेब (धोखा) खुर्दा तारीखों में यह मसला मुशतबा (मशकूक) बना रखा गया है कि इस साजिश की पूरी ज़िम्मेदारी किस की है। इसी तरह करबला के बेआबो गयाह (बग़ैर खाना पानी) मैदान मे बहत्तर या सवा सौ आदमी जिन्हे चारों तरफ़ से फौजी आहनी (लोहे नुमा) हिसारों में इस तरह महसूर (घेर) कर लिया गया था कि किसी आदमी का आना जाना बल्कि खबरों तक की आमदो रफ्त (मिलना) नामुमकिन थी। जब कत्ल हो जाते तो किसी को क्या ख़बर होती, बस उधर क़ातिलो की ज़बानें होतीं और अपनी बेजुरमी की दास्तानें और इधर से कोई जवाब देने वाला न होता इस तरह हुसैनी मसलक (तहरीक) मुशतबा (मशकूक) बना दिया जाता और नौईयते शहादत बिल्कुल ही बदल दी जाती।

इस सूरत मे हुसैन[अ०स०] ने जानो माल और औलाद सबको हक्कानियत के अहया (जिन्दा करने) में सर्फ तो करते लेकिन नतीजा इसका यह होता कि तारीख के औराक (पन्ने) और कुतुब सेर (सीरत की किताबो) के सफहात में यजीद के लिए मिस्ले दीगर (पहले की जगों की तरह यजीद को भी) जग आजमा हस्तियों के गाजी और मुजाहिद का लकब इस्तेमाल किया गया होता और पैकरे हक्कानियत हुसैन बिन अली[अ०स०] के लिए (माजल्लाह) मुफसिद (फसादी) और बागी के से गलत अलफाज सर्फ किए गए होते। इस तरह सिर्फ इमाम हुसैन[अ०स०] ही नही बल्कि आपके साथ हक्कानियत व सिदाक़त भी कत्ल हो जाते जिससे बढ़ कर हुसैन[अ०स०] की शिकस्त न हो सकती थी।

इमाम हुसैन[अ०स०] के नजदीक आपकी शहादत के बाद आपके फलसफ़ ए शहादत और हक़्क़ानियत व सिदाक़त की तबलीग का काबिले इतमीनान कोई ज़रिया हो ही नही सकता था, सिवा उन ही बेवालि ओ वारिस मुखद्दराते इस्मत (पर्दा दार औरतें) के जो क़ैदी बनाकर शहर बशहर फिराई जा रही थीं, जिनके दिलों में गम व गुस्से की आग भडक रही थी जिनकी रगों में अलवी और फातमी ख़ून जोश खा रहा था जिनकी जबानो पर इजहारे हक की खातिर नबवी बलागत और अलवी फसाहत अलफाज की सूरत में मौजजन थी या फिर अली बिन हुसैन[अ०स०] जिनको मशीअते बारी (अल्लाह) ने शिद्दते मरज की बिना पर नुसरते हुसैन[अ०स०] से रोज़ आशूर मैदाने जिहाद में हिस्सा ले सकने से शायद इसी गरज से बाज रखा था।

इमाम हुसैन[अ०स०] खूब वाकिफ थे कि बनी उमैया हुदूदे इन्सानियत से कितना ही गुजर जायें फिर भी वह बेवाली व वारिस खवातीन को कत्ल करने

की हिम्मत न कर सकेंगे जिनका कुसूर ज्यादा से ज्यादा यह बताया जा सकता है कि उन्होने इन्तेहाई इजतेराब और परशानी के आलम में हुकूमत के मजालिम पर सदाए फ़रयाद बलन्द की

यह सही है कि रोजे आशूर दुश्मनों के हाथ से बाज औरतें और बच्चे भी शहीद हुए थे मगर मारिकए जंग के खुसूसियात दूसरे मवाके पर बतौरे सनद पेश नहीं किए जा सकते। बल्कि यकीन किया जा सकता है कि यज़ीद व इब्ने जियाद अपने तमाम जुल्मो जौर पस्त फितरती और बहमियत (जानवर सिफत) के बावजूद इस पर कादिर न थे कि वह मारिक–ए–करबला के बाद अहले हरमे हुसैन में से किसी एक फ़र्द को भी कत्ल करा देते हरगिज उन में इतनी जुरअत व हिम्मत बाक़ी न थी और न उनके गिर्दो पेश की फिजा इसकी मुतहम्मिल (आप पास की फिज़ा बर्दाश्त कर सकती थी) हो सकती थी। चुनाँनचे कूफे में जब जनाबे जैनबे कुबरा ने अपनी बातिल शिकन (बातिल को बेनिकाब करने वाली) तक़रीर से उमवी हुकूमत के फिस्को फ़ुजूर (बदकारी) और खबस सक़ावत (जालिम खबीस) को तश्त अज बाम (बेनक़ाब) कर दिया था तो इब्ने जियाद ने चाहा भी था कि आपको ताजियाने से अजीयत दे मगर उसी के दरबार वालों में से अम्र बिन हरीस सामने आ गया था और मजाहिम (रूकावट) हुआ था।

बाद को यजीद का क़त्ले हुसैन[अ०स०] की जिम्मेदारी इब्ने जियाद पर आएद करना खुद एहसासे शिकस्त की बिना पर था मगर चूकि अहले हरमे हुसैन[अ०स०] के साथ भी इन्तेहाई बदसुलूकियाँ की जा चुकी थीं। लिहाजा उसके अफआल की बाबत किसी तावील (उसके बहाने) की गुन्जाइश बाकी न रह गई थी। जिसकी बिना पर मुअर्रखीन (तारीख लिखने वाले) को यह समझना पड़ा की अगर उसके दिल मे कब्ले इस्लाम के कीनें (जलन) और बद्र की अदावतें न होतीं तो वह सरे इमाम हुसैन[अ०स०] का एहतेराम करता। उनके कफन व दफन का हुक्म देता और अहलेबैते रिसालत के साथ हुस्ने सुलूक से पेश आता।

बत्तीसवाँ बाब

उसरा–ए–अहलेबैत के मुख़्तसर हालात

अब जबकि असीरी के हालात भी बयान हो चुके उसके नताएज पर भी तबसेरा हो गया। मुनासिब मालूम होता है कि जिस तरह इसके क़ब्ल के बाब में शोहद–ए–करबला में से हर हर फर्द के हालात पेश किए जा चुके हैं उसी तरह यहाँ असीराने करबला में से नुमायाँ अफराद के हालात भी अलाहिदा अलाहिदा दर्ज कर दिए जायें।

(1) अली बिनल हुसैन[अ०स०]

जैनुल आबेदीन और सय्यदे सज्जाद आपके मशहूर अलक़ाब थे। आप इमाम हुसैन[अ०स०] के सबसे बडे फरजन्द थे आपके जरिए से कुदरत को अरब और अजम के कमालात को एक मरकज पर मुजतमा (जमा) करना था। इसलिए कि शहरबानों यानी आपकी वालिद ए गिरामी यज्दजुर्द आखरी बादशाहे ईरान की बेटी थीं सन 37 हिजरी में आपकी विलादत हुई [1] जबकि हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] कूफे में मसनदे खिलाफत पर मुतमक्किन (फाएज) थे और अभी आपका सिन पूरे तीस साल भी न होने पाया था कि 21/रमजान सन 40 हिजरी को अली बिन अबी तालिब[अ०स०] की शहादत वाके हुई। फिर आप पूरे बारह साल के न होने पाये थे कि 28/सफर सन 50 हिजरी को आपके चचा हसने मुजतबा जहरे दगा से शहीद कर दिए गए।

सन 60 हिजरी में आपकी उम्र 22/साल से कुछ जाएद थी जब 28/रजब को अपने वालिदे बुजुर्गवार इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ इराक़ के लिए रवाना हुए। यक़ीन के साथ नहीं कहा जा सकता कि रास्ते में या करबला पहुँचने के बाद कहाँ आप बीमार हो गए। बहर सूरत 10/मुहर्रम सन 61 हिजरी को इमाम हुसैन[अ०स०] की शहादत के मौके पर आप इस क़द्र बीमार थे कि नशिस्तो बरखास्त (उठना बैठना) मुशकिल थी और जाहिर है कि सातवीं

---

[1] काफी जि/1 पेज/298 इरशाद पेज/200

मुहर्रम को पानी बन्द होने के बाद फिर आपको भी तशनगी की मुसीबत उठानी पड़ी जिससे जोफ इज़्महलाल (कमजोरी नकाहत) मे इजाफा हो ही जाना चाहिए था इसका नतीजा था कि आप नुसरते हुसैन[अ०स०] में उस तरह शिरकत न कर सके जिस तरह आपके दूसरे भाईयों ने की मगर कुदरत को आपका इम्तेहान दूसरी तरह लेना मन्जूर था। आशूर के बाद आप दुश्मनों के हाथों बहनो फुफियो और दीगर अजीज खवातीन के साथ पा--ब--जजीर होकर करबला से कूफा और कूफे से शाम ले जाये गए दरबारे इब्ने ज़ियाद में आपकी गुफ्तगू और यजीद के रूबरू आपके पुरजोर एहतेजाज का तजकिरा इसके पहले किया जा चुका है। शाम से रिहाई के बाद आप मदीने में रहे और पूरी जिन्दगी इबादते खुदा मे गुजार दी आपकी इबादत के मुतअल्लिक वारिद है कि जब आप नमाज़ के लिए वुजू करते थे तो चेहरा आपका जर्द हो जाता था और कोई इसका सबब दरयाफ्त करता तो आप फ़रमाते थे कि तुमको नहीं मालूम कि किसकी बारगाह में हाजरी देने जा रहा हूँ।[1]

तर्के दुनिया और सादगी मे आपकी जिन्दगी हजरत अमीर[अ०स०] की सीरत का नमूना थी इसी के साथ मुद्दतुल उम्र(काफी अरसे तक) आप अहकामे शरअ् और उलूमे अहलबैते नुबूवत की खामोशी के साथ तालीम भी देते रहे। फिर पोशीदा तरीके पर रातों को ग़रीबों और मिसकीनो के लिए खाना भी पहुचाया करते थे इस तरह कि खूद उन्हें भी मालूम न होता था कि कौन दे गया है। जब आपकी वफात हुई और लोगों का आज़ूका (अनाज) पहुचना बन्द हुआ उस वक्त पता चला कि वह आप थे जो दे जाते थे [2]

फरजदक़ का क़सीदा आपकी शान मे जो मक्क ए मुअज्जेमा में हज के मौके पर उन्होने नज्म किया था,[3] अदबे अरबी का एक मख़सूस शाहकार है। खुद आपकी दुआओं का मजमूआ 'सहीफ–ए–कामिला।' के नाम से आलमे इस्लामी में मशहूरो मारूफ है उसमे मआरिफ (अल्लाह से इरफान) का दरया मौजें मारता नजर आता है। उसको ''जुबूरे आले मुहम्मद'' के नाम से भी याद किया जाता है

[1]इरशाद पेज/272
[2]काफी जि/2, पेज/296, इरशाद पेज/275
[3]इरशाद पेज, 276

अफसोस है कि आपकी इस खामोश और खालिस रूहानी जिन्दगी को भी तागूती (शैतानी) सलतनत ने बरदाश्त न किया और आपने सन 94 हिजरी[1] या 95 हिजरी में वफात पाई और जन्नतुल बक़ी में अपने चचा हजरत इमाम हसन[अ०स०] की क़ब्र के पास दफ्न हुए।[2]

(2) जैनब[स०अ०] बिन्ते अली[अ०स०]

आप हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] और जनाबे फातिमा जहरा[स०अ०] बिन्ते मुहम्मद मुस्तफा[स०अ०] की बेटी और पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] की बड़ी नवासी थीं। इस हैसियत से आप पसमान्दगाने (अजीजों में) हुसैन[अ०स०] में सबसे नुमायाँ शखसियत की हामिल थीं जब आपके जद्दे बुजुर्गवार हजरत मुहम्मद मुस्तफा[स०अ०] और वालिद–ए–गिरामी जनाब फातिमा जहरा[स०अ०] की वफात हुई तो आप बहुत कमसिन थीं। उनके बाद आप अपने वालिदे माजिद हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के साय–ए–तरबियत में परवान चढीं और हजरत ने आपकी शादी अपने हकीकी भतीजे अब्दुल्लाह बिन जाफर के साथ की।

हजरत अली[अ०स०] मुहब्बत व शफकत के लिहाज से जैनब[अ०स०] के साथ तकरीबन हसन[अ०स०] हुसैन[अ०स०] के बराबर का बर्ताव करते थे। चुनॉनचे अपनी शहादत के कब्ल माहे रमजान में आपने अफ्तार के दिनों को जो अपनी औलाद पर तक़सीम फ़रमाया वह इस तरह कि एक रात इमाम हसन[अ०स०] के यहाँ इफ्तार फ़रमाते थे एक रात इमाम हुसैन[अ०स०] के यहाँ और एक रात अब्दुल्लाह बिन जाफर के माकन पर यानी अपनी साहबजादी जनाब जैनब[स०अ०] के यहाँ [3]

वाक़ेय ए करबला तक कमो बेश पचास बरस की तूलानी मुददत मे गैर मामूली वाक़ेयात पेश आए और उनमें आपने गैर मामूली कुव्वते बरदाश्त के मनाजिर का कम अज कम तीन जिन्दा मिसालो में बराबर मुशाहदा फरमाया। यही वह बुनियाद थी जिस पर आपके किरदारे बलन्द की वह मुस्तहकम (मजबूत) इमारत क़ायम हुई जिसे करबला के मसाएब भी जर्रा भर मुतजलजल (हिला) न कर सके।

---

[1] तबरी जि 8, पेज 95
[2] इरशाद पेज 270
[3] तबरी जि/8, पेज/95

मदीने से लेकर करबला तक जैनब[स०अ०] हर मन्जिल मे बिल्कुल हुसैन[अ०स०] के साथ थीं और इसलिए अब तक कि जितने वाकेआत इस किताब मे दर्ज हुए हैं उन सबको जैनबे कुबरा[स०अ०] ही की रूदादे हयात समझना चाहिए।

उनमे से बाज वाकेआत का जिक्र सफ़हे तारीख पर नुमायॉ तौर से नजर आता है। चुनाँनचे कयामे करबला के बाद एक मौका वह है जब बहन ने भाई की जबानी वह हसरत आमेज अशआर सुने जिनका मतलब यह था कि जमाने का अन्दाज सुबह व शाम यही है कि कोई न कोई लुकम ए अजल होता है और हर जीरूह को उसी रास्ते पर जाना है इन अशआर से जैनबे कुबरा ने महसूस किया कि भाई खुद अपनी सुनानी सुना रहे हैं वह बेताबाना भाई के पास आई और कहा हाए काश मैं दुनिया से गुजर चुकी होती अरे आज महसूस हो रहा है कि मेरी मॉ का साया सर से उठा। मेरे बाप और मेरे भाई हसन[अ०स०] आज ही मुझसे छुट रहे हैं आप ही तो अब उन सबके जानशीन हैं। इमाम हुसैन[अ०स०] ने बहन को तलकीने सब्र फरमाई। जैनब[स०अ०] ने कहा क्यों भाई क्या बिल्कुल आप मरने पर तैयार हो गए हैं हजरत ने एक अरबी की मिसल जबान पर जारी फरमाई कि لو ترک القطا لنام मतलब यह था कि इसके सिवा चारा ही क्या है। यह सुनकर जनाबे जैनब की बेचैनी और बढी और कहा "हाय गजब "

इसका मतलब है कि आपको जबरतस्दी हमसे छीन लिया जाएगा। यह कहकर अपने मुह पर तमाचे मारे, गरीबान चाक किया और गश खाकर गिर पडीं। इमाम किसी तरह बहन को होश में लाये और बसीरत अफरोज अलफाज मे बहन को सब्र की हिदायत फरमा कर कसम दी कि मेरे बाद गरीबान न फाडना मुह न नोचना और वावैला कहकर नौहा न करना। फिर बहन को ले जाकर उस जगह बिठा दिया जहाँ जैनुल आबेदीन[अ०स०] बीमारी के आलम में लेटे हुए थे।[1] ताकि फुफी भतीजे की तीमारदारी में मसरूफ हो जायें और उनकी तवज्जो उसी तरह मरकूज़ रहे।

जैनबे कुबरा[स०अ०] ने अपने भाई की उस वक्त की हिदायतों को सख्त मवाके पर भी पेशे नजर रखा और मसाएब की इन्तेहाई शिद्दत के बावजूद ऐसी बेताबी का मुजाहरा नहीं किया कि दुश्मनों को शमातत (मसाएब पर खुश होते) का मौका मिले।

[1] तबरी जि / 6, पेज / 239–240

फिर नवीं मुहर्रम की अस्र को जब फौजे दुश्मन ने हमला किया तो जनाबे जैनब ही थीं जिन्हों ने पास आकर इमाम हुसैन[अ०स०] को उस सूरते हाल की तरफ़ मुतवज्जा किया।

रोजे आशूर जब इमाम रूख्सत के लिए तशरीफ़ लाये तो आप ने जनाबे जैनब[स०अ०] ही से वह पैराहन लेकर पहना जिसे और जाबजा से चाक कर लिया ताकि दुश्मन लूटने के वक्त बोसीदा होने की वजह से शायद इस पैराहन को न लें और लाश आपकी बरहना न हो।

उसके बाद जैनबे कुबरा की आँखों के सामने वह मनाजिर पेश आए जिनका तसव्वुर भी लरजा बर अन्दाम (कापने) करने के लिए काफी था। भाई की शहादत खैमो की लूट और फिर आतिश जदगी और उसके बाद असीरी। इन तमाम मराहिल को जनाबे जैनब ने जब्तो सब्र के साथ तय किया।

11/मुहर्रम की सुबह को जब पसमान्दगाने हुसैन[अ०स०] कैदी बनाए जा चुके और लुटा हुआ क़ाफ़िला कूफे की तरफ रवाना किया गया तो कत्लगाह से होकर गुजारा कि जहाँ अफ़वाजे यजीद के मकतूलीन को दफ्न किये जाने के बाद शोहदा–ए–राहे खुदा की लाशें बेगुस्लो कफन खाक व खून में आलूदा छोड़ दी गई थीं।

इस जिगर खराश मन्जर से बीमारो नातवाँ अली बिल हुसैन[अ०स०] का वह आलम हुआ जिसे देख कर जनाब जैनब[स०अ०] बेताब हो गईं और उनसे दरयाफ्त किया कि ऐ यादगारे रफ्तगाँ यह तुम्हारी क्या हालत है कि रूह तुम्हारे जिस्म से परवाज किया चाहती है। भतीजे ने जवाब दिया ऐ फूफी इस मन्जर को देखकर किस तरह बरदाश्त करूँ कि मेरे पिदरे बुजुर्गवार और चचा और भाई ग़रजकि तमाम अजीज व अक़ारिब को देख रहा हूँ कि सबके सब इस मैदान मे अपने खून में नहाए बे दफ्नो कफन पड़े हैं और कोई इनका निगराँ है न पुरसाँ। इस नाजुक मौके पर जनाबे जैनब[स०अ०] ही का काम था कि उन्होंने इमाम ज़ैनुल आबेदीन[अ०स०] को तसल्ली और दिलासा दिया।

उसके बाद कूफे का बाजार हालाँकि इससे पहले आपने किसी मजमे में कोई तक़रीर न की थी मगर जब आपने माहौल के इन्तेहाई खिलाफ़ होने के बाद तकरीर शुरू की (जिसका तजकिरा पहले किया जा चुका है) तो जितना मजमा आपके हद्दे नजर में था आपके इशारे पर खामोश हो गया। उस तक़रीर में आपने अपनी अन्दोहनाक (तकलीफ देह) हालत का तजकिरा नहीं किया और न इस बिना पर उनसे किसी रहमो करम की इलतेजा की। बल्कि

उन बद आमालियों पर सैर हासिल तबसेरा फरमाते हुए उनको अपने नुफूस का जाएजा लेने उनके मुतअल्लिक खुद फैसला कर लेने की तरफ मुतवज्जेह किया। चुनाँनचे वह आँखें जो कैदियों का तमाशा देखने के लिए उनकी तरफ उठी थीं जमीन में गड़ गईं और मजमे में हर मुतनफ्फस (शख्स) अपने को मुजरिम महसूस करने लगा।

फिर दरबारे आम में जब खास तौर पर इब्ने जियाद ने गुफ्तगू की तो वहाँ भी आपने अलवी फसाहत व बलागत के वह जौहर दिखाए जिनका अपने तरीके पर इब्ने ज़ियाद को भी एतेराफ करना पड़ा और जिनका उसके पास सिवाये इराद ए तशद्दुद के कोई जवाब न था।

उसके बाद फिर दरबारे यजीद में आपकी गुफ्तगू जिसका जिक्र भी पहले हो चुका है कोई शक नही कि ऐसे सख्त और ना खुशगवार माहौल में अपने सुकून दिमाग को कायम रखना और अपने महसूसात के पूरे इजहार पर क़ादिर होना बस जैनबे कुबरा[स0अ0] का काम था। रिहाई के बाद जालिम के दारूस सलतनत मे मजलूम का मातम बरपा करना भी आप ही का कारनामा था। और यह इमाम हुसैन[अ0स0] की शहादत के बाद पहली मजलिसे अजा थी जो उसी सोगवार बहन ने बरपा की थी।

(3) उम्मे कुलसूम बिन्ते अली[अ0स0]

जैनबे सुगरा और उम्मे कुलसूम कुन्नियत थी।[1] हजरत अली बिन अबी तालिब[अ0स0] और जनाबे फातिमा जहरा[स0अ0] बिन्ते मुहम्मद मुस्तफा[स0अ0] की छोटी बेटी। रसूल अल्लाह[स0अ0] के जमाने के आखिर में मुतवल्लिद (पैदा) हुईं थीं और तक़रीबन दो साल की उम्र मे अपने नाना रसूले खुदा[स0अ0] और उसके चन्द ही महीने के बाद अपनी वालिदा गिरामी के साय–ए–आतिफत (मुहब्बत) से महरूम हो गईं। अपने चचाजाद भाई मुहम्मद बिन जाफर बिन अबी तालिब के साथ आपका अक्द हुआ था।

बेवा होने के बाद से आप अपने भाईयों के साथ रहीं और उसी दौरान में अपने शफीक बाप की शहादत से इन्तेहाई दर्जा दिल शिकस्ता हुईं। आखरी रात जिसकी सुबह को हजरत अली[अ0स0] के सर पर इब्ने मुलजिम ने तलवार लगाई हजरत अपनी इसी बेटी के मेहमान थे और उस रात के तमाम हालात जनाबे उम्मे कुलसूम ही की जबानी वारिद हुए हैं जब अली बिन अबी तालिब[अ0स0] के सरे मुबारक पर जरबत लग चुकी है। और आप बैतुश शरफ में

---

[1]इरशाद पेज 189

लाए गए हैं और उसके बाद जहर की तासीर बढ़ रही है तो खुसूसियत के साथ उम्मे कुलसूम शिद्दत से गिरया कर रही थीं।[1]

देनवरी ने सराहत के साथ लिखा है कि जब हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] मदीने की सुकूनत तर्क फरमा कर मक्के तशरीफ़ ले गए थे। तो आपकी दोनों बहनें ज़ैनब व उम्मे कुलसूम आपके साथ थीं।[2]

बाज़ारे कूफ़ा में ज़ैनबे कुबरा के खुतबे के बाद आपने भी बसीरत अफरोज तक़रीर फ़रमाई थी

(4) रूक़य्या बिन्ते अली बिन अबी तालिब[अ०स०]

आप उमर बिन अली[अ०स०] की हकीकी बहन बल्कि उन्हीं के साथ तौअम (जुड़वा) पैदा हुईं। आपकी वालिदा उम्मे हबीब बिन्ते रबीआ थीं।[3]

आपका अक्द मुस्लिम बिन अकील के साथ हुआ था। मदीने से अपने शौहर की मईयत (साथ) में हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ चली थीं। जब मुस्लिम मक्के से कूफे की तरफ रवाना कर दिए गए थे तो आप अपने भाई इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ गईं मक्का से रवानगी के बाद रास्ते में आपको अपने शौहर की शहादत की इत्तेला हुई थी और करबला पहुँच कर रोजे आशूर आपने अपने साहबजादे अब्दुल्लाह बिन मुस्लिम बिन अकील को इमाम पर निसार कर दिया था। फिर असीरी में अपनी दोनो बहनों ज़ैनब व उम्मे कुलसूम के साथ रूह फरसा मसाएब व आलाम का मुकाबला करती रहीं और रिहाई के बाद उन ही के साथ मदीने वापस गईं

(5) लैला सक़फ़िया

आप अली अकबर बिन हुसैन[अ०स०] की वालिद ए मोहतरमा थीं आपके नाम व नसब और खानदानी खुसूसियात का तजकिरा अली अकबर[अ०स०] के हालात में हो चुका है आप मारक ए करबला में मौजूद थी और असीरी में दुख्तराने अली व फातिमा के साथ थीं मगर उसके बाद से आपके हालाते जिन्दगी का तारीख़ में कोई तजकिरा नहीं है

(6) रबाब बिन्ते उमराउल कैस कलबी

आप अली असगर और सकीना बिन्तुल हुसैन[अ०स०] की वालिद–ए–गिरामी थीं आप मैदाने करबला में मौजूद थीं और असीरी में भी शरीक लेकिन रिहाई

---

[1] इरशाद पेज / 8–9

[2] अख़बारूत तुवाल पेज / 220

[3] इरशाद पेज 189

के बाद आपने मदीने जाने से इन्कार कर दिया और एक साल तक कब्रे हुसैन[अ०स०] पर खैमा लगा कर मुजाविर की हैसियत से मुकीम रहीं। जिसमें शबो रोज मजलिसे गिरया व बुका और नौहा व मातम में मसरूफ रहती थीं।[1]

एक साल के बाद मदीने वापस हुईं यहाँ भी आपने इमाम हुसैन[अ०स०] का मातम बरपा किया। और अरसा-ए-दराज तक वह उनकी कनीजें और उनसे वाबस्तगी रखने वाली खवातीन नौहा व जारी मे मसरूफ रहीं।[2]

(7) फ़ातिमा बिन्तुल हुसैन[अ०स०]

आपकी वालिदा उम्मे इसहाक़ बिन्ते तलहा बिन अब्दुल्लाह तैमिया थीं।[3]

शैख मुफीद [र०अ०] ने लिखा है कि इमाम हसन[अ०स०] के फरजन्द हसने मुसन्ना (दूसरे) ने अपने चचा हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] से आपकी दो साहबजादियों में से किसी एक के साथ अक्द की ख्वास्तगारी की। हजरत ने फ़रमाया कि उन दोनों मे से जिसके साथ तुम कहो तुम्हारा अक्द किया जाए। हसन ने शर्म से सर झुका लिया और कुछ जवाब न दिया। हज़रत ने फ़रमाया अच्छा मै खुद ही तुम्हारे लिए अपनी लड़की फातिमा को मुन्तखब करता हूँ। क्योंकि वह मेरी मादरे गिरामी फ़ातिमा बिन्त रसूल[स०अ०]से ज़्यादा मुशाबेह (मिलती) है।[4]

हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] को अपनी इस साहबजादी पर इतना एतेमाद था कि जब आप मैदाने करबला में ब अज्मे (इरादे) जिहाद तशरीफ ले जा रहे थे तो चूँकि आपके फरजन्द इमाम जैनुल आबेदीन[अ०स०] शिद्दते बीमारी से गश में थे आपने मखसूस तहरीरी अमानतें एक सर ब मुहर बद लिफाफे में और वसीयत नामा दोनों को फातिमा के सिपुर्द फरमाया। बाद में फातिमा ने यह चीजें अपने भाई के सिपुर्द कीं।[5]

आप वाकेय-ए-करबला के बाद अरसे तक जिन्दा रही थीं और रावियाने अहादीस में आपका शुमार है। आपके साहबजाद अब्दुल्लाह अल-महज आपके वास्ते से नक्ले हदीस करते थे[6]

---

[1]अन्साबा मिस्र जि/ पेज/113
[2]काफी जि/1, पेज/296
[3]इरशाद पेज/269
[4]इरशाद पेज/201
[5]काफी जि/1, पेज/179 व 188
[6]काफी जि/1 पेज/394 व इब्ने हिशाम जि/1 पेज/153

आप अपने भाई हजरत इमाम जैनुल आबेदीन[अ०स०] के साथ खुलूसो मुहब्बत रखती थीं और अपनी औलाद को हजरत के पास बैठने और इस्तेफादा करने की हिदायत करती थीं।[1]

आखिर मे आपको अपने शौहर हसन बिन हसन[अ०स०] की वफात का सदमा उठाना पड़ा। आपने एक साल तक उनकी क़ब्र पर अपना ख़ैमा बरपा रखा।[2] और बराबर दिन को रोज़ा रखती थीं और रात भर नमाजें पढ़ती थी जब एक साल कामिल हो चुका तो खैमा हटाया गया और आप मदीना वापस गईं[3]

(8) सकीना बिन्तुल हुसैन[अ०स०]

आप रबाब मादरे अली असग़र[अ०स०] के बत्न से थीं। वाकेय–ए–करबला मे आप बहुत कमसिन थीं। वाक़ेय ए करबला के बाद आपकी जिन्दगी के जो हालात मिलते हैं वह मोतबर व मुस्तनद तरीके से साबित नहीं हैं।

जबकि खवातीने अहलेबैते रिसालत[स०अ०] का तज़किरा हो रहा है तो बाज ऐसी खवातीन का भी यहाँ जिक्र कर देना मुनासिब मालूम होता है जो मैदाने करबला में खुद तो मौजूद न थीं मगर करबला के वाकेआत से अहम तअल्लुक रखती थीं

(1) उम्मुल मोमिनीन उम्मे सलमा जौज–ए–खातिमुन नबीईन हजरत मुहम्मद मुस्तफ़ा[स०अ०]

आप अजवाजे रिसालत मआब[स०अ०] मे इन्तेहाई नेक निहाद और मुक़द्दस व मोहतरम बीबी थीं। आँहजरत[स०अ०] ने हिजरत के दूसरे साल जगे बद्र के बाद आपसे अक्द किया था। रसूल अल्लाह[स०अ०] की वफात के बाद भी उम्मे सलमा को हजरत के अहलेबैत यानी अली बिन अबी तालिब[अ०स०] और हसनो हुसैन[अ०स०] के साथ खास उलफ़त व मुहब्बत रही। चुनाँनचे जगे जमल के मौके पर जब उम्मुल मोमिनीन आएशा ने हज़रत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के खिलाफ़ सफ़ आराई की थी और उसकी खबर मदीने पहुँची तो उम्मुल मोमिनीन उम्मे सलमा ने हजरत अली बिन अबी तालिब से कहा कि अगर मेरे लिए घर से निकलना शरअन ममनू (मना) न होता और मुझे यह यकीन न होता कि आप उसे कभी

---

[1] इरशाद पेज / 202
[2] बुख़ारी जि 1 पेज / 147
[3] इरशाद पेज / 203

गवारा न करेंगे तो मैं खुद आपके साथ जंग में चलती मगर क्या करूँ मजबूर हूँ कि निकल नहीं सकती।

बहरहाल अपने फरजन्द उमर को जिसे मैं अपनी जान से ज्यादा अजीज रखती हूँ, मैं आपके साथ भेजती हूँ। वह आपकी नुसरत में जंग करेगा चुनाँनचे यह बराबर हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] के हमराह रिकाब रहे यहाँ तक कि आपने हुकूमते बहरैन उनको तफवीज (सिपुर्द) फरमाई। जिस पर वह एक अरसे तक क़ायम रहे [1]

तिरमिजी की रिवायत है कि उम्मे सलमा ने रोजे आशूर रसूल अल्लाह[स०अ०] को ख्वाब में इस हालत में देखा कि आप रो रहे थे और आपके सरो रीशे मुबारक (डाढी) पर खाक पड़ी हुई थी। उम्मे सलमा ने सबब दरयाफ्त किया। आपने फरमाया कि अभी अभी मेरा हुसैन[अ०स०] कत्ल कर दिया गया है।

सहीह मुस्लिम की एक रिवायत के मुताबिक उम्मे सलमा का वजूद सन 63 हिजरी तक मालूम होता है। मगर एक कौल यह भी है कि आपने उसी रोज यानी सन 61 हिजरी आशूरे मुहर्रम को इन्तेकाल फ़रमाया

(2) उम्मुल बनीन, जौज–ए–अमीरूल मोमिनीन अली बिन अबी तालिब[अ०स०]

आपके नाम व नसब और खानदानी खुसूसियात का तजकिरा अबुल फजलिल अब्बास[अ०स०] और उनके भाईयों के हालात के जैल में हो चुका है।

जिस माँ के ऐसे चार बेटे हों और वह सबके सब एक साथ कत्ल हो जायें उसके तअस्सुरात जबाने कलम से कहाँ अदा हो सकते हैं। शरहे कामिल में अबुल हसन अखतश अरब के एक बड़े अदीब की जबानी यह रिवायत दर्ज है कि वाकेआते करबला से मुत्तेला होने के बाद उम्मुल बनीन रोजाना बकीअ की तरफ अब्बास के कमसिन फरजन्द अब्दुल्लाह को साथ लेकर चली जाती थीं और वहाँ अब्बास का मरसिया पढती थीं जो इतना दर्दनाक होता था कि मदीने के लोग वहाँ जमा हो जाते थे हत्ता कि मरवान बिन हकम का सा खानदान नुबूवत का दुश्मन भी अक्सर उस मजमे में दिखाई देता था और आपके पुरदर्द अशआर को सुनकर लोगों की आँखो से बेसाख्ता आँसू जारी हो जाते थे।

---

[1] तबरी जि/5, पेज/167

आपके यह अशआर पुरदर्द ही नहीं बल्कि उस कुव्वते नफ्स के भी हामिल होते थे जिससे जाहिर होता था कि आप अब्बास ऐसे मुजाहिदे राहे ख़ुदा की माँ हैं।

चुनाँनचे आपके अशआर में से बाज तारीख के औराक तक पहुँच कर हमारी नजर से भी गुजरे हैं जिनका मफ़हूम दर्जजैल है

कहाँ हैं उस मन्जर को देखने वाले कि जब मेरा शेर दिल अब्बास हमला आवर हो रहा था भेडों के गल्ले पर और उसके पीछे थे हैदरे सफदर (अली बिन अबी तालिब) की औलाद में से कई बाहिम्मत शेर, हाय अफसोस कि मेरे फरजन्द का सर गुर्जे गिराँ से शिगाफ्ता किया गया। उस वक्त कि जब उसके दोनों हाथ कट चुके थे ऐ अब्बास मुझे यक़ीन है कि अगर तलवार तेरे हाथ में रहती तो किसी की हिम्मत न थी कि तेरे करीब आ सकता।

"ऐ लोगो! अब मुझे "उम्मुल बनीन" (फरज़न्दों की माँ) न कहो, इसलिए कि उससे मुझे मेरे शेर याद आ जाते हैं। मेरे कभी कई बेटे थे जिनकी तरफ निसबत देकर मैं पुकारी जाती थी। अब तो मेरे बेटे ही नहीं रह गए। वह चारों जो मिस्ल बाजहाये (शिकरे) शिकारी के थे मौत के गले में बाहे डाल चुके। नैजों ने उनके टुकड़े कर दिए और वह सब जमीन पर बेजान होकर गिर गए। क्या सही है जैसाकि लोग कहते हैं कि अब्बास के हाथ भी कता कर दिए गए थे ?।"

जबकि ख्वातीने मुतअल्लिक़ ए करबला का तजकिरा हो रहा है तो असहाबे हुसैनी से निसबत रखने वाली उन ख्वातीन का जिक्र भी मुनासिब मालूम होता है जिनका वाकेआते करबला मे कोई कारनामा तारीख के सफहात पर सब्त (बाकी) है ताकि वाकेय–ए–करबला की हमागीरी के सिलसिले मे उसका पूरा अन्दाजा हो सके कि तबक़–ए–खवातीन का इस मारके मे कितना हिस्सा है

(11) दलहम बिन्ते अम्र

यह जुहैर बिन कैन की जौजा थीं। उनका जिक्र हज़रत इमाम हुसैन[अ०स०] के सफरे इराक के सिलसिले में मन्जिले ज़रूद के हालात में आ चुका है।

यह मोहतरम खातून अपने शौहर के साथ सन 60 हिजरी मे हज को गई हुई थीं। उनके शौहर जुहैर अब तक ख़ानदाने रसूल[स०अ०] से कोई ख़ास रब्त ज़ब्त न रखते थे। बल्कि आम तौर से उसमानी जमाअत में समझे जाते थे मगर वाकेय–ए– करबला से अन्दाजा होता है कि उस ख़ातून के दिल में

मख्फी तौर पर (खामाशी से) सही अहलेबैते रसूल[स0अ0] के साथ अकीदत मौजूद थी इसी बिना पर जब मन्जिले जुरुद में हज़रत इमाम हुसैन[अ0स0] ने ज़ुहैर के बुलाने को आदमी भेजा और ज़ुहैर को जाने में तअम्मुल हुआ तो इस खातून ने कहा कि सुबहानल्लाह फरजन्दे रसूल तुम्हारे बुलाने को आदमी भेजें और तुम न जाओ बड़े गज़ब की बात है। ज़रा जाकर सुनो तो कि हज़रत क्या फरमाते हैं। इसी बसीरत अफरोज फिकरे का असर था कि ज़ुहैर गए और वापस आये तो जानो दिल से इमाम की नुसरत पर आमादा होकर। बेशक उस खातून को खुद वाकेय ए करबला मे शिरकत का मौका नहीं मिला इसलिए कि ज़ुहैर ने उसे अपने साथ ले जाना पसन्द नहीं किया बल्कि उसी मन्जिल पर उसे तलाक देकर उसके मैके भेजवा दिया और खुद इमाम हुसैन[अ0स0] के साथियों में शामिल हो गए। मगर उस की मोहर्रिक (ज़िम्मेदार) यही खातून थी इसलिए वाकेय–ए–करबला के तजकिरे में नजर अन्दाज नहीं किया जा सकता।

(12) उम्मे वहब बिन्ते माबद

कबील–ए–नम्र बिन क़ासित में से अब्दुल्लाह बिन उमैर कलबी की जौजा थीं। कूफे में क़बील–ए–हमदान के मकाम बेअरअल जाअ्द के पास उनका मकान था जो कूफे की गुन्जान (घनी) आबादी से बाहर नखीला (पेड़ों) के हुदूद में बागाते खुरमा के करीब था। जब इमाम हुसैन[अ0स0] के करबला पहुँचने की इत्तेला इब्ने जियाद को पहुँची और उसने अपना लशकर गाह नखलिया में करार दिया और अब्दुल्लाह ने उस फौज कशी का सबब मालूम होने पर यह इरादा किया कि वह हज़रत इमाम हुसैन[अ0स0] की मदद को जायेंगे तो उन्होंने अपने इस मुबारक इरादे का तजकिरा अपनी इसी क़ाबिले एतेमाद और वफादार बीबी उम्मे वहब से किया उसने बगैर किसी तरद्दुद (हिचकिचाहट) और हिरास (खौफ) के अपने शौहर की हिम्मत अफज़ाई की और कहा तुमने बिल्कुल ठीक इरादा किया है खुदा तुम्हारे इरादे में बरकत अता करे ज़रूर ऐसा ही करो और मुझे भी अपने साथ ले चलो।" चुनाँनचे रात के वक्त दोनों रवाना हुए और अन्सारे हुसैन[अ0स0] के साथ करबला मे जाकर मुलहक हो गए

उसका तफसीली तज़किरा अब्दुल्लाह बिन उमैर कलबी के हालात में हो चुका है। तबक–ए–ख़वातीन में यही वह तन्हा खातून है जिसके बेगुनाह खून ने शोहदा–ए–करबला के साथ करबला में जलती रेत पर बहकर उस मुरक्के की दिल दोजी और दर्दअंगेजी में एक मुअस्सिर इजाफा किया।

सलाम हो उस ख़ातून पर जिसने मज़लूम की नुसरत मे अपने घर बार, अपने सुहाग और फिर अपनी जान को भी निसार कर दिया।

(13) ज़ौजा—ए—मुस्लिम बिन औसजा

फ़ाजिले समावी ने लिखा है कि बनी हाशिम के अलावा जितने अन्सारे इमाम हुसैन[अ०स०] थे वह करबला में अपने अहलो अयाल को साथ न लाए थे। इसलिए कि जो अफराद मदीने से साथ आए थे वह देख रहे थे कि हजरत बैयते यजीद से बचने के लिए कैसे गैर इतमीनानी तरीक़े पर तशरीफ लिए जा रहे हैं। तो वह अपने साथ मुतअल्लकीन (अजीजो को) क्यो लाते और जो लोग रास्ते में पहुँचे या करबला में आकर शरीक हुए वह दुश्मनो की नाका बन्दी से बचते हुए ख़ुद ही कितनी मुशकिलों से जान बचा कर आए थे। फिर वह अपने साथ अपने अहलो अयाल को क्यो कर ला सकते थे

बस सिर्फ तीन आदमी थे जो करबला में अपने मुतअल्लकीन (अजीजों) के साथ आए थे। एक अब्दुल्लाह बिन उमैर कबली (जिनका जिक्र अभी हो चुका है)

दूसरे जुनादा बिन हारिस सलमानी (उनका जिक्र अभी आएगा।)

तीसरे मुस्लिम बिन औसजा यह करबला में अपने मुतअल्लकीन (अजीजों) के साथ आये खुद असहाबे हुसैन[अ०स०] के खयाम के साथ अपना खैमा लगा लिया और औरतों को खयामे हुसैन[अ०स०] में अहले हरम के पास भेज दिया। चुनानचे जगे मगलूबा में क़त्ले जोहर जब मुस्लिम बिन औसजा शहीद हुए तो उनकी एक कनीज ने बलन्द आवाज से रोते हुए कहा واسيداه واسلم ابن عوسجاه 'हाय मेरे आक़ा। हाय मुस्लिम बिन औसजा इसी आवाज़ से फौजे शाम को यह इल्म हो सका कि मुस्लिम शहीद हो गए हैं।[1]

(14) बहरिया बिन्ते मसऊद

यह जुनादा बिन कअब अन्सारी की जौजा थी। अपने शौहर और बच्चे के साथ मक्के से हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के काफले मे आई थीं जब जुनादा बिन कअब शहीद हो गए तो उन्होंने अपने नौ उम्र फरजन्द अम्र बिन जुनादा को नुसरते हुसैन[अ०स०] के लिए भेज दिया चुनाँनचे जब इमाम हुसैन[अ०स०] ने इजाजत देने में तअम्मुल (इन्कार) फरमाया इस बिना पर कि अभी तो उसका बाप काम आया है अब उसकी बेवा माँ के दिल पर क्या गुजरेगी तो बच्चे ने

[1] अबसारुल ऐन, पेज / 128

कहा कि मुझे मेरी माँ ही ने तो भेजा है और उन्होने ही मुझे यह जग का लिबास पहनाया है।

जब यह बच्चा मैदान में जाकर अपनी कुर्बानी पेश कर रहा था तो यह मुकद्दस खातून अपने खैमे के दरवाजे पर खडी इस मन्जर का मुशाहदा कर रही थीं। बेरहम दुश्मनो ने बच्चे का सर काट कर फ़ौजे हुसैनी की तरफ फेंक दिया। तो माँ ने उस सर को उठा लिया और कहा शाबाश बेटा। शाबाश! तूने मेरा दिल खुश कर दिया और मेरी आँखों में ठंडक डाल दी।

फिर उसने सर को उठा कर फौजे दुश्मन की तरफ फेक दिया और खुद भी एक गुर्जे आहनी लेकर हमला कर दिया। इमाम ने हुक्मे इस्लामी याद दिलाया कि औरतो को तलवार लेकर जिहाद नहीं करना चाहिए तो वह फर्ज शनास खातून वापस चली आईं और अहले हरम के पास आकर बैठ गईं।

कयास कहता है कि मुस्लिम बिन औसजा और जुनादा बिन काब दोनों की मुतअल्लका खवातीने अहले हरम हुसैन[अ0स0] के साथ असीरी मे शरीक होंगी मगर फाजिल समावी की तहकीक़ यह है कि वह कूफ़े तक साथ रहीं और कूफ़े में उनके अजीजो अकारिब इब्ने जियाद से कह सुनकर उन खवातीन को रिहा करा ले गए। कूफ़े से शाम तक जो ले जाई गई वह सिर्फ खानदाने रिसालत की मुकद्दस खवातीन या उनके साथ हमेशा वाबस्तगी रखने वाली कनीज़ें थीं।[1]

---

[1]अबसारूल ऐन, पेज/132

तैंतीसवाँ बाब

गुज़िश्ता वाक़ेआत की रौशनी में हुसैनी शख़सियत और कारनाम–ए–हुसैनी पर तबसेरा

राहे हक में वाकेय–ए–करबला के पहले भी बहुत सी कुर्बानियाँ हुई हैं मगर वह इन्फरादी (एक आदमी का कत्ल) हैसियत रखती थीं जैसे सुकरात का जामे जहर (जहर का प्याला) पीना। जनाबे जकरिया और यहया का शहीद किया जाना (ब–क़ौल नसारा) हजरत ईसा[अ०स०] का सलीब पर चढाया जाना और बहुत से दूसरे अम्बिया व मुरसलीन का कत्ल कर दिया जाना। मगर वाकेय ए करबला की हैसियत इजतेमाई (गिरोह की शक्ल) थी जहाँ हुसैन[अ०स०] की कयादत व रहनुमाई में एक जमाअत मसरूफे कार थी जिसमे बच्चे बूढे और जवान आजाद और गुलाम, अरबी और ग़ैर अरबी, करशी (मक्के के क़बील–ए–कुरैश से) और गैर करशी हर सिन और हर तबके के अफ़राद मौजूद थे जिनमें मुशतरक नुक्ता सिवाए एक इत्तेहादे मकसद के कुछ न था।

यह नाकाबिले इन्कार हकीकत है कि इतने हम दिल और हम जबान, हम खयाल और हम आहग अफ़राद दुनिया मे न वाकेय–ए–करबला के पहले एक नुकते पर मुजतमा (जमा) हुए और न उसके बाद।

हालाँकि जजबाते इन्सानी में माहौल और सिनो साल के इख्तेलाफ़ से किस कद्र फर्क हुआ करता है। मसलन जवान ज्यादा तर इकदाम पसन्द(जज्बाती) होते हैं और जल्द ही मैदाने अमल में कूद पडना चाहते हैं। बूढे निसबतन बुर्दबार (गौरो फिक्र करने वाले) होते है और हर मुआमले मे बहुत सोच समझकर हाथ डालना चाहते हैं और औरते ज्यादा तर दिल की कमजोर होती है इसलिए हौलनाक मौके पर शिद्दत से मुतअस्सिर होकर मर्दो के अज्मो इरादे को भी पस्त कर देने की बाइस करार पाती हैं और बच्चे तो नामुवाफिक हालात में रोने या मचलने लगते हैं चुनाँनचे अगर किसी सख्त

मौके पर एक मर्द एक औरत एक बच्चा और एक बूढ़ा यकजा हो तो उफ़तादे तबा (मिजाज) के लिहाज से उनके रूजहानात में इतना इख्तेलाफ होगा कि उनमे की जिम्मेदार फर्द को किसी एक राह अमल को मुऐयन करने और सबको उस पर चलाने में काफी दिक्कत महसूस होगी चेजाएकि सौ डेढ सौ आदमियों की वह जमाअत जिस में एक नहीं मुतअद्दिद बूढे मुतअद्दिद जवान, मुतअद्दिद बच्चे और फिर इनके अलावा मुतअद्दिद औरतें मौजूद हों, और फिर यह तमाम अफराद बगैर किसी बाहमी इख्तेलाफ या कशमकश के सख्त से सख्त हालात में भी बराबर से शरीके कार व मसरूफे अमल हों तो इसके मुतअल्लिक बस यही समझा जा सकता है कि उनके क़ाएद की क़यादत अजीब तासीर रखती थी कि उसने जवानों के खून की गर्मी को घटा कर उसमे बूढ़ों के साथ ठहरने की सलाहियत पैदा की और बूढ़ों की तबियत में हरारत पैदा करके उनको जवानों के साथ साथ चलने के काबिल बनाया। औरतो के दिलों में इतनी कूव्वत भर दी कि वह शदीद से शदीद जुल्मो तशद्दुद के हगाम में परेशान व मुज़तरिब न हो और बच्चो की तबियतो में वह पुखतगी रासिख (पैवस्त) कर दी कि हौलनाक मौकों पर भी वह रोने के बजाये हसते नजर आयें।

इमाम हुसैन[अ०स०] का यह तरीक ए क़यादत हकीकतन एक राजे सर बस्ता (पोशीदा) की हैसियत रखता है। इसलिए कि दुश्मनो के मुकाबले में तो आपने ब–गरज इतमामे हुज्जत तकरीरे की। लेकिन अपने अहबाब व अइज्जा में जोशे अमल पैदा करने के लिए कोई तकरीर भी नहीं की बल्कि उसके बरखिलाफ आप बराबर उनको अपना साथ छोड कर चले जाने की तरगीब देते रहे और वह सख्ती के साथ आपकी नुसरत का दम भरते रहे।

उसके मुतअल्लिक इससे ज्यादा कुछ नहीं कहा जा सकता कि यह बस इमाम हुसैन[अ०स०] की मखसूस जेहनी तरबियत थी कि हक्कानियत की सही क़द्रो कीमत का एहसास इस तरह उनके दिल में उतार दिया था कि वह खुद अपने जमीर की तहरीक से क़दम आगे बढ़ाने पर गोया कि अपने को मजबूर पा रहे थे। वहाँ किसी खातिर दारी और मुरव्वत या दबाव का सवाल न था बल्कि उनकी वह जमाअत थी जो हक को हक समझते हुए राहे हक पर गामजन थी और हकीकतन ऐसे ही साथियों की हुसैन[अ०स०] को जरूरत भी थी। इसी लिए आपने मक्क–ए–मुअज्जिमा से रवानगी के वक्त से लेकर शबे आशूर तक हर हर मौके पर अपनी दुशवार गुजार मुक़ावमत (रास्तो) के ब जाहिर

हौलनाक अन्जाम से उनको बार बार मुतनब्बेह (आगाह) करते रहने को अपना मुस्तकिल शिआर (तरीका) बना लिया था और यही आपका तरीक़ ए कार था जिसने आपकी मुकावमत (इकदाम) को एजाज की हद तक कामयाब साबित कर दिखाया

ऐसा आज भी मुमकिन है कि दौराने जग मे किसी फ़रीक की गोला बारी से कोई बस्ती बिल्कुल तहस नहस और वीरान हो जाये और उसमें कोई एक मुतनफ्फिस (शख्स) भी जिन्दा बाक़ी न रहे मगर उन लोगों में से कि जिनकी जानें उस गोला बारी के जैल में जाए हो रही होंगी नामुमकिन है कि हर एक उस मुसीबत को बर्दाश्त करने का हकीकतन आरजू मन्द हो और खुद इख्तियारी तौर पर उसको गवारा कर रहा हो उनमें से बेशतर का अगर बस चल सके तो जिस कीमत पर भी हो अपने को इस मुसीबत से बचा लें। मगर करबला मे अन्सारे हुसैन[अ0स0] में से हर एक खुद जाती हैसियत से मौत की आँखों में आँखें डाल कर मसलक की हक्कानियत पर यकीने कामिल रखते हुए ब रजा व रगबते (दिलो जान से) तमाम आगे बढ रहा था। इस तरह कि उनमें से किसी एक के दामने अमल पर भी कमजोरी का धब्बा न आ सका

गद्दारी और मुखालिफाना सरगर्मी से कतए नजर (छोड कर) करते हुए किसी जमाअत में मुनसलिक (जुडे हुए) शुदा अफराद का बाहम (एक दूसरे) नेक नीयती और खुलूस के साथ इखतेलाफे राय रखना उमूमन काबिले एतेराज़ अम्र नहीं होता लेकिन चूँकि अमल में हमआहगी (एक आवाज) और यक जेहती (एक तरीका) बाकी नहीं रहती लिहाजा मकसद और नतीज–ए–तहरीक के इस्तेहकाम पर उसका भी असर बुरा पडता है मगर जमाअते हुसैनी के अफ़राद में बाहम इख्तेलाफे राय का नामो निशान भी न था बल्कि वहां पूरी जमाअत ने इख्तियारी तौर पर और पूरे शऊर (होशो हवास) व इरादे के साथ अपने तसव्वुर खयाल इरादा, अज्म और इकदाम को मुस्तगरक (गर्क) कर दिया था। एक इन्सान के ख़याल इरादे और इकदाम के अन्दर इसी लिए यह कहना दुरूस्त है कि ऐसे काएद और ऐसी जमाअत की मिसाल दुनिया के पर्दे पर नजर नहीं आती।

जमाअत में से हर एक रहनुमाई की हस्ती और वह उसके मसलक पर जिसे खुद भी अपने दिमागो अक्ल से सही समझ चुका था। अपने को कुर्बान कर रहा था। और रहनुमा उनमें से हर एक की मुसीबत को बर्दाश्त करने के बाद अपने को सख्त तरीन मौके की आजमाइश के लिए तैयार पा रहा था।

वह सख्त मौका वह था जब आस पास कोई न रहा था और सिर्फ एक अकेले हुसैन[अ०स०] की जात थी मगर अब भी उस एक अकेले इन्सान के अज्मो इरादा में वही जाहो जलाल और इस्तेहकाम (मजबूत इरादा) था जो मददगारों के मौजूद होने के आलम में मौजूद था चिराग बुझ गया मगर अपनी रौशनी छोड़ गया वह रौशनी जो हजारों तारीकियों के पर्दे में अब तक जगमगा रही है। कोई शुबहा (शक) नहीं कि जुल्म और तशद्दुद की आग ने इब्तेदा ए आफरीनिश (इब्तेदा ए जमाना) से आज तक लाखों बस्तियाँ खाकिस्तर कर दी मगर मजलूमियत में कभी शऊर (जागरुक्ता) इकतेदार व इख्तियार और फराएज की बजा आवरी (अमल करने) मे इतमीनान व सुकूनो वकार का यह मुजाहरा नजर नही आया जो करबला के मैदान मे नजर आ रहा था

सबसे पहले जबरूत (ताकत का नशा) व तशद्दुद के मुकाबले मे जाहरी हैसियत से बेसरो सामानी और बेबसी की जंग का नूमना करबला में पेश किया गया इसलिए कि इसके पहले ताकत का मुकाबला ताकत से हमेशा होता रहा था मगर ताकत का मुकाबला किरदार की कुव्वत से कभी नहीं किया गया था।

इसी तरीक ए मुकाबले को बहुत ही नाकिस दर्जा पर हिन्दुस्तान की निजात के लिए इख्तियार किया गया मगर बावजूद यह कि यहाँ मुकाबिल के जुल्मो तशद्दुद का दर्जा इतना संगीन न था जो बिल–उमूम (आम तौर से) इन्सानो की बेश कीमत जानों तक पहुचता फिर भी अफराद में वह हमरंगी (एक खयाल) व हम आहंगी (एक सोच) नजर न आ सकी जो इस किस्म के मुकाबले की कामयाबी का असली राज़ है।

इसके साथ वाकेय ए करबला में यह खास खुसूसियत थी कि वहाँ ताकत के मुकाबले में बेकसी और बेबसी के बावजूद भी वह "सिपुर्दगी" (हथियार डाल देना) न थी जो जालिम की हिम्मत अफजाई की बाइस हो सके। बल्कि वहाँ हिफाजते खुद इख्तियारी के उस फित्री आईन (कुदरती निजाम) पर पूरा अमल किया जा रहा था जो इस्लाम का बुनियादी कानून है इस तरह वाकेय–ए–करबला में एक ऐसी नौइयत पैदा हो गई थी जिसे दुनिया आज तक न दोहरा सकी है। न आइन्दा कभी दोहरा सकेगी

इस मुकाबले की अदीमुल मिसाल (जिसकी कोई मिसाल न हो) नौइयत को मलहूजे खातिर (नजर में) रखते हुए करबला के मैदान मे इमाम हुसैन[अ०स०] मुखद्दराते इस्मत (अहले हरम) और अतफाले खुर्दो साल (छोटे बच्चे) को भी

अपने साथ लाए जिन्हो ने अपने अपने हुदूद के अन्दर उस मुजाहिद ए-उजमा (बडी कुर्बानी) में नुमायाँ और मुनज्जम हिस्सा लिया जिसने वाकेय ए-करबला के मुनफरिद खुसूसियात में एक बडा इजाफा कर दिया जिसके मुतअल्लिक गुजिश्ता अबवाब (पिछले) मे सेर हासिल बहस की जा चुकी है।

हकीकत यह है कि वाकेय–ए–करबला में बूढ़े जवान बच्चे और औरतें सब ही हक्कानियत के तहफ्फुज में अपने अपने महल (जगह) पर अपना काम, फर्ज के कामिल एहसास के साथ अन्जाम दे रहे थे जिनके लिहाज से वाकेय–ए–करबला सिर्फ दर्दअगेज और जाँ गुसल (मुसीबतों भरा) वाकेया नहीं रहा बल्कि वह मजहबी व अखलाकी तालीमात का एक बे मिसाल मुरक्का बन गया जो इतमीनानो सुकून के लमहात में भी अगर मुरत्तब (रूनुमा) होता तब भी इन्तेहाई तारीफ़ के काबिल होता चेजाएकि वह एसे पुर इजतेराब (मुसीबतों के) आलम मे मुरत्तब हुआ था जबकि इन्सान के होश भी बजा रहना मुशकिल हैं।

हुसैनी शख्सियत की बेनज़ीर रफ़अत

हुसैन[अ०स०] अपने किरदार की बलन्दी में मुन्फरिद होते उस वक्त भी कि जब यजीद की खिलाफ़त के तमाम आलमे इस्लामी में तस्लीम शुदा (मान लेना) होने के बाद तन्हा इन्कार की आवाज ही आपने बलन्द की होती, लेकिन उस वक्त हुसैन[अ०स०] और भी बलन्द नजर आये कि जब आपने हजारो तलवारों नैजों और तीरो के मुकाबले में भी उस इन्कार को कायम रखा। हुसैन[अ०स०] उस वक्त भी हुसैन होते जब आप अकेले कुर्बान गाहे शहादत में तन्हा अपनी जान का हदया पेश कर देते लेकिन हुसैन[अ०स०] और भी बलन्द हो गए जब आपने अपने साथ कम अज कम बहत्तर कुर्बानियाँ और भी पेश कर दीं।

हुसैन[अ०स०] बेशक हुसैन ही रहते अगर आप किसी जमाअत को पुर जोश तक़रीरो के जरिये से तरगीब (रागिब) व तहरीस (अच्छी तवक्को) से काम लेते हुए अपने साथ रखने मे कामयाब हुए होते लेकिन हुसैन और भी बलन्द मन्जिलो पर नजर आए कि जब आपने अपने साथ वालों को इस किस्म की किसी सूरत से अपने साथ रखने में कामयाबी हासिल नही की। बल्कि आपने अपनी हक्कानियत को इस तरह पर उनके जहेन नशीन किया कि उनमें से हर एक हुसैनी अज्म और इस्तेकामत का हामिल हो गया यानी आम तौर पर तो एक इन्सान का अपने दिलो दिमाग को काबू मे रखना और अपने कदम का मुस्तकिल रखना ही एक बडा कारनामा होता है लेकिन हुसैन[अ०स०] ने बहत्तर

आदमियों के दिलो दिमाग को एक मरकज पर जमा करके गोया हर एक सीने में अपना दिल और हर दिल में अपना इस्तेकलाल वदीयत (पेवस्त) कर दिया था जिसे यूँ कहा जा सकता है कि

हुसैन[अ०स०] एक अकेले मैदाने जिहाद में हुसैन होकर नहीं आए थे बल्कि वह ब वक्ते वाहिद (एक वक्त में) बहत्तर हुसैन मैदाने कुर्बानी में पेश कर रहे थे यानी ऐसे अफ़राद जिनमें हर एक कौम, क़बीले और सिनो साल के बाहमी (आपसी) इख़्तेलाफ के बावजूद उस एक रूह का हामिल था जिस रूह को हम सिवाये "लफ्जे हुसैन" के किसी दूसरे नाम से ताबीर नहीं कर सकते।

उसके बाद हुसैन[अ०स०] उस वक्त भी हुसैन ही रहते जब आप अपने अइज्जा व अहबाब के दाग उठाने के कब्ल जामे शहादत नोश फरमा लेते लेकिन हुसैन[अ०स०] उस वक्त और बलन्द सतह पर नजर आए कि जब आपने उनमे की हर फ़र्द को अपने सामने राहे हक में निसार कर दिया

फिर उस सूरत में भी हुसैन[अ०स०] यकीनी एक मख्सूस मन्जिल पर होते अगर उसके बाद आप बगैर मुकाबला किए हुए अपने को नैजे व शमशीर के सिपुर्द कर देते मगर हुसैन[अ०स०] उस क्त उससे भी बलन्द नजर आये जबकि उन ही हाथो से जिन पर अभी अभी तिफ्ले शीरख़ार (दूध पीता बच्चा) का लाशा उठा चुके थे। तलवार के कब्जे को मजबूत पकड़ा और मर्दाना वार मुकाबला शुरू कर दिया और इस तन्हाई के आलम में, और हजारों के नरगे में भी आपने हमजा व जाफर[अ०स०] और हैदरे सफदर के रवायात को जिन्दा कर दिखाया।

हुसैन और भी बलन्द मन्जिल पर उस वक्त नजर आते हैं जब हम उस पर गौर करते हैं कि आपने शदीद से शदीद मसाएब व आलाम मे मुबतिला होने के बावजूद शरीअते इस्लाम के आम फराएज व तालीमात को एक लमहा के लिए नजर अन्दाज नहीं फरमाया चुनानचे असहाब व अइज्जा के लाशे उठाने के साथ साथ गुलामो के लिए भी मसावात (बराबरी) इस्लामी को बरत रहे थे जैसाकि जौन गुलामे अबूजरे गफ्फारी और गुलामे तुरकी के हालात में दर्ज किया जाचुका है। और उस मौके पर भी कि जब आपके असहाब एक एक करके शहीद होते जा रहे थे और जिदालो किताल (जंग) जारी था। आपने नमाजे जोहर ब–जमाअत अदा फ़रमा कर एहसासे फ़र्ज की बेनजीर मिसाल पेश की। दूसरे लफ्जों में यह है कि ब–वक्ते वाहिद आप जिहाद भी करते जाते थे और मकासिदे जिहाद का अमली ऐलान भी।

हुसैन[अ०स०] उस वक्त भी हुसैन ही रहते कि जब आप सिर्फ अपने तमाम असहाब व अइज्जा के साथ शहीद हो जाते और अपने जिहाद को अपनी जिन्दगी के खातमे ही पर खत्म करते, मगर उस वक्त हुसैन[अ०स०] मैदाने जिहाद में और भी बलन्द नजर आये जब आपने अपनी शहादत के बाद के लिए उस शहादत के मकासिद (मकसद) की इशाअत (प्रचार) का इन्तेजाम किया अपने अहले हरम और छोटे बच्चों को साथ ला कर जिनमे से हर एक में फर्ज शनासी और हकीक़त परवरी इस तरह सरायत (पेवस्त) किए हुए थी कि इब्ने जियाद के दरबार और यजीद के क़स्रे हुकूमत में भी उन पसमान्दगान में से किसी एक मुतनफ्फिस (शख्स) ने उमवी हुकूमत के सामने सरे तस्लीम खम नही किया यानी वह बैयत का इन्कार जिस पर हुसैन[अ०स०] का सर नैज़े पर पहुँच गया अब भी क़ाएम था और अब उसके अलमबरदार सय्यदे सज्जाद[अ०स०], जैनब खातून[स०अ०], उम्मे कुलसूम[स०अ०] ही नहीं बल्कि कमसिन बच्चे फातिमा[स०अ०] और सकीना[स०अ०] और मुहम्मदे बाक़र[अ०स०] भी थे।

किरदारे हुसैनी की लामुतनाही रफअत (न खत्म होने वाली बलन्दी) के मजकूर–ए–बाला मनाजिल (ऊपर बयान की हुई मन्जिलो) में से हर मन्जिल वह है जहाँ इन्सानियत सरे तस्लीम खम कर देती है और उसी को इन्तेहाए इम्कान (आखरी हद) समझ लेने पर इक्तेफा (तकिया) कर लेती है। मगर हुसैनी अमल उसके बाद भी आगे बढ़ता ही नजर आता है और आखिर यह तस्लीम करना पडता है कि आपकी जात तारीखे आलम में एक नए इन्सानी तसव्वुर का इजाफा करती है। वह तसव्वुर जिसके खत व खाल समझने में तेरह सौ बरस से अब तक दुनिया मसरूफ़ है और अभी बहुत कुछ समझ कर लफ़्जो में बयान कर सकना बाकी है।

चौंतीसवाँ बाबा

फ़तह किसकी हुई

माद्दी (जाहरी) नुकत ए नजर से यह खयाल किया जा सकता है कि मारिक–ए–करबला के नतीजे में यजीद की फतह हुई और इमाम हुसैन[अ०स०] की मुकम्मतल तौर से शिकस्त हो गई। मगर हकीकत यह है कि किसी जबान व लुगत में भी फतह पाने के मानी ''क़त्ल कर देना'' और शिकस्त खाने के मानी कत्ल कर दिया जाना नहीं करार पा सकते बल्कि फतह नाम है कामयाबी यानी मकसद के हुसूल का और शिकस्त नाकामी यानी मक़सद के हाथ न आने का। लिहाजा मारिक–ए–करबला के नतीजे के मुतअल्लिक किसी फैसले तक पहुँचने के लिए तरफैन (दोनो तरफ) के मकासिद को समझना बहरहाल जरूरी है। जैसा कि पहले साबित किया जा चुका है। यजीद से इमाम हुसैन[अ०स०] को जाती और शख्सी अगराज (गरज) की बिना पर मुखालिफत न थी अगर ब–हैसियत एक मुतनफ्फिस (शख्स) के हुसैन[अ०स०] बस जिन्दगानिए दुनिया ही के ख्वाहाँ होते और यजीद आप की दुनियावी सियासत से एलाहदगी को अपने इकतेदारे सलतनत के काएम रहने के लिए काफी समझता तो अमली हैसियत से किसी तसादुम का इमकान ही न होता

मगर वहाँ सूरते हाल यह थी कि यजीद मुसलमानों के सरो पर ब–हैसियत एक खुद सर और मुतलकुल एनान (बेलगाम) फरमाँरवा (हाकिम) के मुसल्लत होने के साथ साथ ब–हैसियत पैगम्बरे इस्लाम[स०अ०] की नियाबत का दावेदार था और हुसैन[अ०स०] के खामोशी के साथ बैयत से अलाहिदा रहने को भी वह अपने मकसद में मजाहिम (रूकावट) समझता था। वह कबले इस्लाम की माद्दा परस्ती (इस्लाम से पहले वाले हालात) को पलटाने के लिए अमली तौर से कोशाँ और हुसैन[अ०स०] रूहानियत और खुदा परस्ती को कायम रखने के जिम्मेदार, वह जब्रो जुल्म और इस्तिबदाद (जबरदस्ती) का सिक्का चलाने के दरपै और हुसैन[अ०स०] हक व रास्ती का अलम बलन्द करने पर मामूर, वह इस्लामी हुदूद व इम्तेयाजात (फर्क) मिटाने पर तुला हुआ, और

हुसैन[अ०स०] इस्लामी खुसूसियात को बाकी रखने के फ़रीजे पर मुतएय्यन (क़ाएम) थे चुनाँनचे यजीद ने मारिक ए–करबला के मकासिद का तज़किरा करते हुए अपने कहरमानी (ज़ुल्मो कहर) नुक्त–ए–नजर को बेनकाब कर दिया यह कहकर कि हुसैन[अ०स०] ने (अवाम को उनके हुकूक से आगाह करके) हमारी बलन्द इमारतों और आराइश व आसाइश के सामानो को खतरे में डाल दिया था इसलिए हमें अपने इकतेदार और दौलत को काएम रखने के लिए जंग करना पड़ी।'' और हुसैन[अ०स०] ने अपनी मुकाविमत (इकदाम) की नौइयत को मुन्दर्जा जैल अशआर में वाजेह फरमाया है जो इब्ने खशाब ने नक्ल किए हैं

الله يعلم ان ما   بيدى يريد لغيره
وبانه لم يكتسبه   بخيره وبميره
لوانصف النعس الحنو   ان لقصرت من سيره
ولكان ذلك منه   مادنى شره من خيره

यानी अल्लाह जानता है कि जो कुछ यजीद के पास है वह सबका सब दूसरों का है। खुद उसको कोई इस्तेहक़ाक (हक़) उस पर तसर्रुफ़ का हासिल नहीं है। अगर वह खयानत करने वाला इन्साफ से काम लेता तो अपनी रफ्तार बदल देता और शरारत में कमी करता।

हुसैन[अ०स०] का यही नज़रिया वह था जिसका फैलना और दूसरो के दिमागो और फिर ज़बानो तक पहुँचना यज़ीद की तबाही का बाइस हो सकता था।

पहले बयान किया जा चुका है कि इस्तेबदादी (ज़ुल्म भरी) ताकत इस अम्र की मुतकाजी (तक़ाजा) होती है कि अफरादे क़ौम की कूव्वते एहसास और जुरअते इजहार खत्म की जाए

चुनाँनचे हुकूमते दमिश्क की तरफ से ऐसी ही तदबीरें की गईं कि अवाम ने यह सोचना छोड़ दिया था कि हुकूमत जाएज है या ना जाएज। और अगर कोई सोचता और समझ भी लेता तो उसमें इतनी हिम्मत न होती कि वह अपने खयालात का आजादी के साथ इजहार कर सकता। उसके बिल्कुल बरखिलाफ इमाम हुसैन[अ०स०] का मक़सद यह था कि जमहूर (अक्सरियत) मुसलमीन में कूव्वते एहसास और जुरअते इजहार की सिफतें जो मफकूद (खत्म) हो गई थीं फिर से पैदा हो जायें

हुसैन[अ०स०] अपने बलन्द किरदार से एक आम बेदारी पैदा करना चाहते थे। जिसके मातहत सिर्फ़ ताकत व इकतेदार को हक न समझा जाए बल्कि अस्ल हक को हक समझने और उसपे अमल पैरा होने की ताकत पैदा हो,

जाहिर है कि आम खयालात जिस सतह पर कायम हो जाते हैं। उससे उस वक्त तक नहीं हटते जब तक कि 'फजा ए दिमागी में हलचल डालने वाला कोई अहम वाकेया पेश नहीं आता।

चुनांनचे सन 60 हिजरी में हुकूमते शाम के क़बीह (बदतरीन) व मजमूम (घिनौनी) अफआल (हरकतें) आम तौर पर मुसलमान अपनी आँखो से देख रहे थे फिर भी उन पर एक आम बेहिसी छाई हुई थी। यही सबब था कि इमाम हुसैन[अ०स०] का साथ देने वाले भी तादाद मे बहुत कम थे।

लिहाजा फित्री हैसियत से जरूरत थी किसी ऐसे अचानक हादिसे की, बल्कि गैर मामूली वाकेए की जो आम खिल्कते इन्सानी की कुव्वते एहसास को बेदार कर दे। चुनाँनचे इमाम हुसैन[अ०स०] की शहादत ने इसी मकसद को हासिल किया।

इसी के साथ आपकी अमली हैसियत से निहायत शानदार मुक़ाविमत (इकदाम) की मिसाल ने उनमे फिर से जुरअते इजहार पैदा कर दी। बात यह है कि आम तौर पर जब तक इन्सान मैदाने अमल में कोई सरीही (खुली हुई) मिसाल नहीं देख लेता उस वक्त तक हिचकिचाता रहता है लेकिन मिसाल सामने आ जाने पर वह खुद भी सरगर्मे अमल होने पर आमादा हो जाता है

मैदाने करबला में न सिर्फ हुसैन[अ०स०] ही को बल्कि बूढो जवानों और बच्चों तक को निहायत इतमीनान व सुकून के साथ अपनी अपनी जानों की कुर्बानियाँ पेश करते अपनी आँखों से देखने या कानो से सुन लेने वालो के नजदीक राहे हक में मौत का मरहला पहले से बहुत ज्यादा आसान हो गया।

याद रखना चाहिए कि अक्सर वही असबाब जिनके जरिए से ख़ास तरह का नतीजा पैदा करना मक़सूद होता है हद से बढ़ जाने पर तवक्क़ो के बिल्कुल ख़िलाफ़ नतीजा बरामद करते हैं जैसा कि अरब का मक़ूला है "الشی اذا تجاوز عن حده رجع الی ضده" यानी कोई शै जब अपनी हद से तजावुज (आगे) करती है तो अपनी ज़िद (Oposite) की तरफ़ माएल होती है।

चुनाँनचे एक जाबिर व क़ाहिर हुकूमत की तरफ से अवाम पर उस पाबन्दी का आएद किया जाना कि उसके तर्जे अमल के खिलाफ आवाज बलन्द न की जाए। ज्यादा तर जब्रो तशददुद की बिना पर होता है लेकिन यही जुल्मो तशद्दुद जब हद से गुजर जाता है तो फिर उसी दबी और पिसी हुई खिलकत की आवाज एक बे–इख्तियार चीख़ के तौर पर बलन्द होती है जो आगे चल कर कहीं ज्यादा खतरनाक साबित होती है।

यजीदी हुकूमत जो हुसैन[अ०स०] पर जुल्मो सितम ढा रही थी वह इसी गरज से कि आपके बजाहिर इबरतनाक अन्जाम को देखकर फिर किसी को जरा भी मुखालिफत की जुरअत न हो और इमाम हुसैन[अ०स०] उसके तमाम मजालिम सब्रो सुकून के साथ बर्दाश्त कर रहे थे।

नतीजतन हुकूमत अपने जौके सितम रानी (जुल्मो सितम का शवा) के सबब से यह तमीज न कर सकी कि जुल्मो जौर को किस हद तक जब्र के दबाव से खिलकत बर्दाश्त करने पर तैयार की जा सकती है। और किस नुकते तक पहुँच कर बजाहिर वह एहसासात भी फुरहरी (झुरझुरी) लेकर चौंक पड़ते हैं और शिकन्ज–ए–जुल्म में गिरफ्तार और बजाहिर बेबस खल्के खुदा इस शिद्दत से फड़फड़ाती है कि खुद शिकन्जा टूट कर रह जाता है।

चुनाँनचे हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] यह एतेमादे कामिल रखते थे कि आप हक्कानियत के तहफ्फुज में मसाएब का वह गैर मामूली मुकाबला कर सकेंगे कि खुद जुल्मो तशद्दुद के दस्तो बाजू आपकी कुव्वते बर्दाश्त के मुकाबले में मुअत्तल (बेकार) व आजिज नजर आने लगेंगे।

हुकूमत की तवक्को तो यह थी और मजालिम ढाए इसी लिए जाते हैं कि दूसरे इबरत हासिल करके उसके बाद ऐसी जुरअत न करेंगे और हुकूमत की मन्शा के खिलाफ तर्जे अमल इख्तियार करने का यह दर्दनाक अन्जाम देखकर किसी को लब कुशाई (जबान खोलने) की हिम्मत न होगी। इसी खयाल के मातहत पसमान्दगाने (अहले हरम वगैरह) हुसैन[अ०स०] का लुटा हुआ काफिला बहाले तबाह शहर ब–शहर और दयार ब–दयार तशहीर (घुमाया) किया गया था। मगर औराके तारीख गवाह हैं कि नतीजा बिल्कुल यजीद की तवक्को के खिलाफ जाहिर हुआ जिसके आसार ऐन मौक़ ए जंग ही पर हुर बिन यजीद रियाही के लशकरे शाम से जुदा हो जाने ही से नजर आने लगे थे चुनॉनचे शहादते हुसैन[अ०स०] के बाद तीसरे ही दिन जब दरबारे इब्ने जियादा में सरे हुसैन[अ०स०] के साथ बेअदबी की जा रही थी तो बूढ़े सहाबी जैद बिन अरकम ने सरे दरबार खड़े होकर सदा ए एहतेजाज बलन्द की जिससे जाहिर हो गया कि करबला के वाकये से हक गोई की जुरअत कम नही हुई बल्कि ज्यादा हो गई। फिर जब मस्जिदे जामे में लोग जमा किए गए एलाने फतह सुनने के लिए तो बावजूदेकि वफादारों का खास जमाओ था, फिर भी हुसैन[अ०स०] और आपके वालिदे बुज़ुर्गवार अली बिन अबी तालिब[अ०स०] का नाम बेअदबी के साथ आना था कि दफ़अतन (अचानक) मस्जिद की ख़ामोश फ़िज़ा में एक हैजानी

कैफियत पैदा हो गई और बूढे नाबीना अब्दुल्लाह बिन अफीफ ने इस बेजिगरी के साथ इब्ने ज़ियाद को टोका जो तारीख़ में यादगार है।

इसी तरह यजीद ने अपने दरबार मे जब चौबे खेजराँ (लकड़ी की छड़ी) से सेरे हुसैन[अ0स0] के साथ बेअदबी की तो अबू बरज–ए–असलमी और नीज सफीरे बादशाहे रोम ने जो ईसाई था उसके मुह पर उसको बहुत कुछ सख़्त व सुस्त कहा

यह थी हुसैनी फतह, कि बातिल के ख़िलाफ़ एहतेजाज होने लगा। और मुसलमान ही नहीं बल्कि गैर मुस्लिम भी अपने में जुरअते इजहार महसूस करने लगे थे।

मरक–ए–करबला से पहले किसकी मजाल थी कि यजीद के दरबार में इमाम हुसैन[अ0स0] का नाम इज्जत के साथ ले सके। लेकिन पसमान्दगाने हसुैन[अ0स0] के क़ैदियों की सूरत में उसके सामने पेश किए जाने के बाद उसके मुंह पर हुसैन[अ0स0] की तरीफ़ें होती थीं और उसको खामोशी के साथ सुनना पड़ता था

इस सब के बाद नतीजे के लिहाज से यह मानना लाजमी है कि हुसैन[अ0स0] अपने मकसद में कामयाब हुए। लिहाजा वह फातेह थे और यजीद अपने मकसद में नाकाम हुआ लिहाजा वह यकीनन मफतूह (हारा हुआ) था।

पैंतीसवाँ बाब

मुजरिमों की पशेमानी

फ़तह और शिकस्त की एक खास शनाख्त यह है कि फातेह अपने कारनामे पर नाज़ाँ होता है और मफतूह अपने तर्जे अमल पर शर्मिन्दा व पेशमान, चुनानचे जाहिर है कि हुसैन[अ0स0] जिस रास्ते पर चले थे उस पर क़ायम रहे और आपने जो कुछ किया और जो उसका नतीजा हुआ उस पर न आप खुद पशेमान हुए न आपके साथी, आपके पसमान्दगान और आपके छोटे छोटे बच्चों तक मे से कोई पशेमान हुआ न आपकी औलाद या आपके मानने वालों में से कोई आपके बाद पशेमान हुआ कि हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] ने ऐसा क्या किया जिसका नतीजा आपकी बरबादी की सूरत में जाहिर हुआ लेकिन आपके कातिल और मुखालिफ़ ही नहीं बल्कि वह भी जिन्हो ने अमली हैसियत से आपकी नुसरत का फर्ज अदा न किया था या न कर सके थे बाद में पशेमान हुए कि हमने ऐसा क्यों किया।

नफ़सियाती हैसियत से इजहारे पशेमानी मुखतलिफ सूरतें इख्तियार करता है। कभी तो उसके मातहत अपने तर्जे अमल के मुतअल्लिक़ तावीलों (बहाने) और उज्र तराशियो से काम निकाला जाता है और कभी अपने सर से जिम्मेदारी हटा कर दूसरों के सर आएद की जाती है और कभी निदामत व अफसोस का साफ साफ़ इजहार कर दिया जाता है।

चुनानचे हकीकी मानी में बरमहल और काबिले सद सताइश इजहारे निदामत हुर बिन यजीद रियाही का था जिसके जैल में उन्होने रोजे आशूर नुसरते हुसैन[अ0स0] के अहम फ़रीजे की पूरी बजा आवरी करते हुए अपने बहते हुए खून से अपनी फर्दे अमल को धो कर साफ बना दिया और सआदते शहादत हासिल की, उसके बाद जिन जिन लोगों ने भी अपनी अपनी पशेमानी का इज़हार मुखतलिफ़ तरीक़ो पर किया वह बाद अज़ वक़्त (वक्त गुजर जाने के बाद) था।

इनमें सबसे खफीफ (हल्का) दर्जे के मुजरिम वह अहले कूफा थे जिन्हो ने मुस्लिम बिन अकील के वास्ते से नुसरते हुसैन[अ०स०] का अहदो पैमान किया था मगर वक्त आने पर उन असबाब से जिनका तज़किरा तफसील के साथ इस किताब में हो चुका है करबला न पहुच सके या पहुचने की कोशिश न की। उनकी पशेमानी निहायत सच्चे दिल से मारक–ए–करबला के बाद बहुत जल्द ही वकूअ (जाहिर) में आ गई जिसे उन्होंने अपनी उन कोशिशो से जो खूने हुसैन[अ०स०] का इन्तकाम लेने के लिए की गई एक काबिले एहतेराम दर्जा दे दिया और "तव्वाबीन" लकब हासिल किया

ऐसे मुजरिमों में जिन्हो ने फरीज–ए–नुसरत के अदा करने मे कोताही की थी एक अब्दुल्लाह बिन हुर अल जअ्फी था जिसे राहे कूफा मे हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने खुद नुसरत की दावत दी थी मगर उसने हीला व हवाला (बहाने बाजी) से अपनी जान बचाई और इस सअतादत से महरूम रहा।[1] उस पर उसे उम्र भर निदामत रही जिसे उसने इन अशआर की सूरत मे जाहिर करते हुए कहा।

فیالک حسرة مادمت حیا — تردديين حمعی و لترقی

حسین حین یطلب بدل نصری — علی اهل لعد وه الشقق

فما انی غداة یقول حزنا — اتترکنی وتزمع لاطلاق

فموفق لتلهف قلب حی — لهم العلب هّی بملاق

(यानी) तमाम जिन्दगी मुझे यह रजो मलाल रहेगा कि हज़रत इमाम हुसैन[अ०स०] ने मुझसे मदद तलब की और मैंने उस सआदत को हासिल न किया।[2] फिर वाका ए करबला के बाद जब इब्ने जियाद ने उससे शिकायत की कि तुम अरसे से कहाँ गाएब थे तुमने हुसैन[अ०स०] के मुकाबले को जाने से गुरेज किया मालूम होता है तुम हमारे दुश्मनों से हमदर्दी रखते थे तो यह सुनकर उसके जज़बात में और ज्यादा तूफ़ान पैदा हो गया और अब उसने जो अशआर कहे उनमें से दो शेअ्र हस्बे जैल थे।

یقول میر غادر حق غادر — الا کنت قاتلت الشهید بن فاطمه

فیاندمی لا اکون نصرته — الا کل نفس لا تسدد نادمة

[1] इरशाद पेज 237

[2] अखबारूत तुवाल पेज 258

"वह अमीर जो खुद इन्तेहाई गद्दार है मुझसे पूछता है कि तुम फरजन्दे फातिमा जहरा[स०अ०] के ख़िलाफ़ जग में शरीक क्यो न हुए? हालाँकि मुझे तो उसी की निदामत है कि मैंने उनकी नुसरत क्यों न की और यकीनन जो शख़्स भी सही रास्ता न इख़्तियार करे तो उसे नादिम होना ही चाहिए' उसके बाद वह कूफे से निकल कर सरजमीने जबल की तरफ चला गया।"[1]

उनसे ज्यादा मुजरिम वह ख़िलक़त थी जो हज़रत इमाम हुसैन[अ०स०] का मुक़ाबला करने के लिए मैदाने करबला मे सफ बस्ता खड़ी थी। चुनाँनचे उनमें से बाज के इजहारे पशेमानी पर मबनी अकवाल जस्ता जस्ता (धीरे धीर) तारीख़ ने हम तक पहुँचाये हैं मसलन कुर्रा बिन कैस कि जो उमर बिन सअ्द के नुमाइन्दे की हैसियत से इमाम हुसैन[अ०स०] की खिदमत में आया था वाकेय–ए–करबला के बाद कहा करता था कि अगर हुर बिन यजीद ने मुझको मुत्तेला कर दिया होता कि वह जमाअते हुसैनी की तरफ जा रहे हैं तो मैं भी उनके साथ जरूर हो लेता।[2]

इसी तरह रजी बिन मुनकज अबदी कि जिसने मैदाने करबला में बुरैरे हमदानी पर हमला किया था और बिल आख़िर जेर होने पर काब बिन जाबिर बिन अम्र अजदी को अपनी कुमक (मदद) पर बुलाया था और उसने बुरैर को नैज़ा मार कर कत्ल कर दिया था, वाक़ेय ए करबला के बाद अपनी पशेमानी का हस्बे ज़ैल अशआर में इजहार करता था।

"मुकद्दर में इस तरह लिखा न होता तो मैं इस जग में शरीक ही न हुआ होता कि इब्ने जाबिर का एहसान मुझ पर हो सकता। वह दिन मेरे ही लिए तमाम उम्र के आरो नग (जिल्लतो रूसवाई) का बाइस नहीं हुआ बल्कि मुतअद्दिद नसलों की जिल्लत व ख्वारी का सबब हो गया। काश बुरैर के कत्ल और हुसैन[अ०स०] स मुकातिला (एक दूसरे को कत्ल करना) के दिन से पहले ही मैं मर कर कब्र में पहुच गया होता[3]

शबस बिन रबीअ् को जो फौजे इब्ने सअद के बडे सरदारो मे से था। यह कहते हुए सुना गया कि अल्लाह इस मुल्क वालो को कोई खैर नहीं पहुँचाएगा कितने गजब की बात है कि हमने पाच बरस तक अली बिन अबी तालिब[अ०स०] और उनके फरजन्द (हसने मुजतबा[स०अ०]) के साथ मिलकर आले अबू सुफियान

---

[1]तबरी जि/6, पेज/270
[2]इरशाद पेज/349, तबरी जि/6, पेज/244
[3]तबरी जि/6, पेज/248

से जग की फिर उसके बाद उन ही के फरजन्द इमाम हुसैन[अ०स०] के मुकाबले मे जो अपने जाती सिफात के लिहाज से भी तमाम रूए जमीन के लोगो से बेहतर थे हमने मुआविया और जियाद की औलाद के साथ मिलकर चढ़ाई कर दी। यह इतनी बड़ी गुमराही थी जिससे बढ़ कर हो नहीं सकती।[1]

अय्यूब बिन मशरह हैवानी जिसने हुर बिन यजीद रियाही के घोडे को करबला में तीर मार कर क़त्ल किया था, अरसे के बाद जब वह यह रूदाद बयान कर रहा था तो हाजरीन में से बाज ने पूछा कि तुमने हुर को क़त्ल भी किया था? कहा नही ब–खुदा मैंने उन्हे क़त्ल नहीं किया। क़त्ल किसी दूसरे ने किया और मुझे पसन्द भी न था कि मैं उन्हें क़त्ल करूँ। अबू अलविदाक (हाजरीन में से एक शख्स) ने कहा क्यों? कहा आम खयाल यह है कि वह बहुत नेक आमाल लोगों में से थे अब अगर उनके मुकाबले में हाथ उठाना गुनाह था तो मैं सिर्फ़ जख़्मी करने और मुक़ाबले मे खड़े होने ही की हद तक गुनागहार हुआ यह बेहतर था उससे कि मैं उनमे से किसी के कत्ल का मुरतकिब होता। यह सुनकर अबू अलविदाक को गुस्सा आ गया। कहा मेरे नजदीक तो तुमसे अल्लाह उन सबके क़त्ल का मुवाखिजा करेगा। अरे किसी को तीर लगाया किसी के घोड़े का ख़ातिमा किया किसी से दस्त ब दस्त मुकाबला किया कभी खुद हमला किया और कभी दूसरों को तरगीब (हिम्मत) दिलाई और कुछ नही तो कम अज कम अपनी मौजूदगी से सवारे लशकर में इजाफा किया और जब हमला हुआ तो मैदान से फरार करना गवारा न किया और तुम्हारी तरह दूसरों ने भी यही सब बाते कहीं तो तुम सब ही उन तमाम शोहदा के कातिल ठहरे और सब ही को इस जुर्म की सजा मिलना है अय्यूब के पास उसका कोई सन्जीदा जवाब न था। वह जलकर कहने लगा कि अच्छा अगर तुम्हारे हाथ रोज़े क़यामत का हिसाब हो तो तुम मुझे कभी न बख़्शना।[2]

उनसे भी बढकर मुजरिम अफवाजे यजीद का अफसर उमरे सअ़द था। उसके तअस्सुरात का बयान हमीद बिन मुस्लिम ने किया है वह कहते हैं कि उमर बिन सअ़द मेरा दोस्त था जब वह मैदाने करबला से वापस हुआ तो मैंने जाकर उससे हालात दरयाफ्त किए उसने कहा कुछ न पूछो कोई मुसाफिर अपनी मन्जिल की तरफ़ ऐसे बुरे अन्जाम के साथ वापस नहीं हुआ होगा जैसे

---

[1] तबरी जि / 6, पेज / 250

[2] तबरी जि / 6, पेज / 250

कि मैं। मैंने करीबी रिश्तेदारी का पास न करते हुए एक जुर्मे अज़ीम का इरतेकाब किया।[1]

उससे बड़ा मुजरिम हाकिमे कूफ़ा उबैदुल्लाह बिन जियाद था कि जिसने तमाम अफवाज को अपनी निगरानी मे मैदाने करबला की तरफ भेजा और उमर बिन सअ्द को कत्ले हुसैन[अ0स0] पर मामूर किया। वह अपने इस अमल से मुतअल्लिक जिम्मेदारी यजीद पर आएद करता था। चुनाँनचे जब यजीद के मरने पर इराक में हुकूमत के खिलाफ हमागीर (पूरे मुल्क में) शोरिश बरपा हो गई और इब्ने जियाद को बसरा से फ़रार इख़्तियार करना पड़ा तो उसने कबील–ए–बनी यशकर मे से एक शख़्स को रास्ता बताने के लिए अपने साथ लिया। असनाये राह (रास्ते में) में एक मर्तबा जब देर तक इब्ने जियाद नाके पर सर झुकायबैठा रहा तो उस शख़्स ने यह खयाल करके कि वह सो गया है उसको आवाज दी। इब्ने जियाद ने जवाब मे कहा कि मैं सो नही रहा हूँ बल्कि एक अहम मसले के मुतअल्लिक गौरो फिक्र कर रहा था। उस शख़्स ने कहा मैं जानता हूँ आप क्या सोच रहे थे, फिर इब्ने जियाद के दरयाफ्त करने पर उसने बतलाया कि आप हुसैन बिन अली[अ0स0,] के कत्ल करा देने पर खजालत (शर्मिन्दगी) व पशेमानी का एहसास कर रहे थे और बसरा में जो कस्रे अबयज़ (सफ़ेद महल) तामीर कराया है और उसमें रहना नसीब न हुआ उसके मुतअल्लिक़ सोच रहे थे। या बसरा के खवारिज को जो महज बदगुमानी और तवहहुम की बिना पर आपने कत्ल कर दिया था उस पर पशेमान हो रहे थे ' इब्ने जियाद ने जवाब दिया कि तुमने कोई बात ठीक नहीं की चूँकि हुसैन बिन अली[अ0स0] ने बादशाहे वक्त की मुख़ालिफत की थी और उसने मुझको उनके कत्ल करने का हुक्म दिया था लिहाजा उसकी जिम्मेदारी यजीद बिन मुआविया पर है मुझ पर नहीं है।[2]

इसी पशेमानी का नतीजा था कि जब यजीद ने हिजाज पर फ़ौज कशी करना चाही और इब्ने जियाद को लिखा कि अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर के मुकाबले के लिए जाओ तो उसने इनकार कर दिया और कहा उस फासिक के कहने से रसूल[स0अ0] के नवासे को तो क़त्ल कर चुका अब काबे पर फ़ौज कशी करूँ। यह मुझसे नहीं हो सकता।[3]

---

[1] अख़बारूत तुवाल, पेज/257

[2] तबरी जि/6, पेज/28-29

[3] तबरी जि/7 पेज/6

सबसे बडा मुजरिम यजीद बिन मुआविया था जिसकी तस्दीक इब्ने जियाद के बयान से हो चुकी और उसका सुबूत यह है कि यह इत्तेला मिलने पर कि हुसैन[अ०स०] कूफे की तरफ मुतवज्जेह हुए हैं उसने इब्ने जियाद को कूफे का हाकिम इसी लिए मुकर्रर किया था कि वह इन्तेहाई सख्त गीरी से काम ले सकेगा। फिर जब इब्ने जियाद के हुक्म से मुस्लिम बिन अकील[अ०स०] शहीद कर दिए गए और उनका सर काट कर यजीद के पास भेजा गया तो यजीद ने उससे अपनी खुशी का इजहार करते हुए इब्ने जियाद के हुस्ने खिदमत का इक़रार किया और उसको मज़ीद हिदायत भेजी कि अब हुसैन[अ०स०] का मुक़ाबला भी उसी उनवान से किया जाये

फिर शहादते हुसैन के बाद इब्ने जियाद ने पहले सरहाए शोहदा और पसमान्दगाने हुसैन[अ०स०] की बाबत यजीद की मर्जी मालूम कर ली, उस वक्त उनको कूफ़ से दमिश्क़ की तरफ़ रवाना किया और तमाम वाकेआते मज़ालिम मालूम होने के बाद यजीद की तरफ से इब्ने जियाद पर कोई एताब नहीं हुआ बल्कि वह यजीद की जिन्दगी की आखरी सॉस तक कूफे के तख्त हुकूमत पर बाकी रहा और यजीद की नवाजिशे उसी पर नहीं बल्कि आले जियाद में से दूसरे अफ़राद पर भी और ज्यादा हो गई। चुनॉनचे इब्ने जियाद का एक भाई अब्दुर्रहमान बिन जियाद जो सन 58 हिजरी से खुरासान में का हाकिम था शहादते हुसैन[अ०स०] को सुनने के बाद खुरासान में अपनी जगह एक दूसरे शख्स को क़ायम मुकाम बना कर दमिश्क गया और खुरासान के खजाने में जो दो करोड़ दिरहम उसके इक़रार के मुताबिक़ जमा थे वह अपने नाम माफ़ करा लिए।[1] फिर अब्दुर्रहमान के बाद खुरासान की हुकूमत उसी के दूसरे भाई मुस्लिम बिन ज़ियाद के सिपुर्द की गई।[2]

इन सब बातो से जाहिर है कि क़त्ले हुसैन[अ०स०] यजीद के मन्शा के मुताबिक और उसी के हुक्म से अमल में लाया गया था, इसी बिना पर शुरू शुरू उसने शहादते हुसैनी पर इन्तेहाई शादमानी (खुशी) का इजहार किया लेकिन उसके बाद जब आसारे इन्केलाब कवी से कवी तर होते गए तो उसका सारा नशा हिरन हो गया और वह कफ़ (हथेली) अफसोस मल मल कर निहायत हसरतो यास के साथ कहने लगा कि हाय हुसैन बिन अली[अ०स०] को कत्ल करके इब्ने जियाद ने मुसलमानो की नजरों मे मुझको जलील व ख्वार

[1] अल-मजरा वल किताब, पेज/18

[2] अल-मजरा वल किताब, पेज/19 तबरी जि/6, पेज/272

और काबिले नफरत बना दिया और उनके दिलो में मेरी तरफ से कीना व अदावत के बीज बो दिए। कत्ले हुसैन[अ0स0] को सगीन तरीन जुर्म समझते हुए मुसलमानों में के नेक व बद सब ही मुझसे बेज़ार हो गए। हाये इब्ने मरजाना (इब्ने जियाद) ने यह क्या किया खुदा उस पर लानत करे।[1]

इन्फ़ेआल व पशेमानी का लाजमी नतीजा यह होता है कि इन्सान अपनी बात से हट जाये इमाम हुसैन[अ0स0] और यजीद में बिनाए मुखासिमत यही थी कि यजीद हुसैन[अ0स0] से बैयत हासिल करने पर मुसिर था और इमाम हुसैन[अ0स0] को आख़री हद तक इन्कार था अब यह तो क़तई तौर पर साबित है कि इमाम हुसैन[अ0स0] ने अपने इन्कारे बैयत को इकरार से तब्दील नहीं किया इसलिए कि अगर ऐसा कर दिया होता तो सर नोके नैजा पर नजर न आता। मगर यह देखना है कि यजीद अपने मुतालबे पर क़ायम रहा या उससे हट गया? यहाँ पर यह याद कर लेना जरूरी होगा कि यजीद का हुसैन[अ0स0] से बैयत का मुतालबा शख्सी हैसियत मे से न था बल्कि पैगम्बरे इस्लाम के रूहानी विरसेदार की हैसियत से जब ऐसा था तो जो हैसियत अपनी जिन्दगी में हुसैन को हासिल थी वही आपके बाद आपके फरजन्द अली बिन हुसैन[अ0स0] को हासिल हो गई थी फिर हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] तो ब नफ्से नफ़ीस (जाती तौर पर) यजीद की गिरफ्त में कभी आ न सके थे। इसलिए कि यजीद था दमिश्क में और हुसैन[अ0स0] थे मदीने मक्के या फिर करबला में। मगर आपके पसमान्दगान के लिए ऐसा वक्त आया कि जब वह सबके सब कैदियों की हैसियत से यजीद के सामने पेश किए गए। अगर यज़ीद अपने मुतालबे ए बैयत पर कायम होता तो उसको अली बिन हुसैन[अ0स0] के सामने इस सवाल को फिर पेश करना चाहिए था लेकिन पसमान्दगाने हुसैन[अ0स0] में से किसी फर्द के सामने भी बैयत का सवाल पेश नहीं किया गया। इससे जाहिर है कि यजीद अपने मुतालब–ए–बैयत से हट गया था। हालाँकि मजालिम ढाये इसी लिए जाते हैं कि कमज़ोर फ़रीक मरऊब व खौफजदा हो जाये मगर इब्ने ज़ियाद के दरबार में ऐसा मौका पेश आ चुका था कि उसके अली बिन हुसैन[अ0स0] को कत्ल की धमकी देने पर आपने तेवर बदल कर नहीफ़ (कमजोर) मगर अज्मे मुस्तकिल की पूरी तरजुमानी करती हुई आवाज में कहा था ८।

---

[1] तबरी जि 7 पेज 19

علمت ان القتل لـ عدة وكرامتنا الشهادة ' यानी क्यो इब्ने जियाद! अभी तक तू नहीं समझ सका कि कत्ल होना हमारी आदत है और शहादत हमारी इज्जत है

इससे जाहिर हो गया कि ज़ुल्म उठाने वाले ज़ुल्म की सगीनी से खौफ़जदा नहीं हुए मगर ज़ुल्म करने वाले उनके सब्रो इस्तेक़लाल को देख कर खौफ जदा हो गए। चुनाँनचे यजीद में अपने तमाम जबरूत के मुजाहरों के बावजूद अब इतनी हिम्मत न थी कि वह पसमान्दगाने हुसैन[अ०स०] में से किसी के सामने सवाले बैयत पेश करता। इसलिए कि उसकी आँखों के सामने हुसैन[अ०स०] का सरे बुरीदा मौजूद था और उसके कानों में करबला के हालात गूंज रहे थे और वह समझ रहा था कि अगर सवाले बैयत कहीं फिर कर दिया गया तो दमिश्क का दरबार सहराए करबला बन जायेगा, लिहाजा दूसरी तरह की दिल आजारियाँ पसमान्दगाने हुसैन[अ०स०] के खिलाफ इख्तियार की गई मगर सवाले बैयत उठाया नही जा सका क्या इससे बढ़ कर हुसैन[अ०स०] की फतह और यजीद की शिकस्त का दूसरा कोई सुबूत दरकार है।?

छत्तीसवाँ बाब

आलमे इस्लामी के तअस्सुरात

शहादते हुसैन[अ०स०] के तफसीलात पर मुत्तेला होते ही आलमे इस्लामी की हर फ़र्द के दिल में गम व गुस्से का तूफ़ान बरपा हो गया और जो जो भी उसके इरतिकाब के ज़िम्मेदार समझे गए उनसे नफ़रत व बेजारी का इजहार किया जाने लगा और क़त्ले हुसैन[अ०स०] उनके लिए रूसवाई की एक सनद बन गया।

चूँकि ब जाहिर हालात इस शहादते उजमा से अहले कूफ़ा को करीब का तअल्लुक था लिहाजा उनके दामन पर उसका ऐसा धब्बा लगा कि सदियों तक वह धोया न जा सका यहाँ तक कि अबुल अब्बास सुफ्फ़ाह के सामने जब बसरा और कूफ़े की बाहमी (एक दूसरे की) अफ़जलियत के बारे मे मुनाजरा हुआ तो अबू बकर हजली की मजम्मत में यही चीज खास तौर से पेश की कि यहाँ के लोगों ने हुसैन[अ०स०] को कत्ल किया

अबू उसमान नहदी एक सहाबिए रसूल[स०अ०] कूफे में रहा करते थे जब हुसैन[अ०स०] मैदाने करबला मे शहीद कर दिए गए तो कूफ़े से वह बसरा की तरफ मुन्तकिल हो गए यह कह कर कि मैं उस शहर में नहीं रहूँगा जहाँ रसूल अल्लाह[स०अ०] का नवासा शहीद कर डाला गया हो।

फिर चूँकि कूफ़ा और करबला सरजमीने इराक पर वाके हैं लिहाजा इराक के लिए भी कत्ले हुसैन[अ०स०] बाइसे जिल्लत शुमार किया जाने लगा। चुनाँनचे अहले इराक़ में से एक शख्स ने अब्दुल्लाह बिन उमर से दरयाफ्त किया कि हालते एहराम में मच्छर मारना जाएज है या नहीं? उस पर उन्होंने कहा कि अहले इराक को देखो तो यह मच्छर के खून के मुतअल्लिक इस्तिफ्सार (पूछ गूछ) करते हैं हालाँकि उन ही लोगों ने पैगम्बरे खुदा के नवासे का खून बेदरेग

बहा दिया। बावजूदेकि पैगम्बरे खुदा ने हसन व हुसैन[अ०स०] के बारे में फरमाया था कि यह दोनों काएनाते आलम में मेरे दो गुलदस्ते हैं।[1]

शखसियतों के लिहाज से शोहदाए करबला के कातिलों से तनफ्फुर (नफरत) खुद उनके घर वालों तक को हो गया चुनाँनचे बुरैर हमदानी का कातिल कअब बिन जाबिर जब अपने मकान पर वापस हुआ तो उसकी बीवी या बहन नवार बिन्ते जाबिर ने कहा कि मैं तुझसे अब उम्र भर बात नहीं करूँगी। तूने फातिमा ज़हरा[स०अ०] के फरजन्द के खिलाफ जंग में शिरकत की और सैयदुल कुर्रा (बुरैर) को कत्ल किया।[2]

इब्ने जियाद जिसने बराहे रास्त करबला की तरफ फौजें भेजी थीं उसके मुतअल्लिक कब्ल इसके कि यजीद की सियासत में कोई तबदिली वाके हो और वह खुद इब्ने जियाद को कत्ले हुसैन[अ०स०] का जिम्मादार करार देते हुए उसकी मजम्मत शुरू करे दूसरे लोग उसके दरबारियो मे से इब्ने जियाद को माँ सुमैया के हिकारत आमेज़ तज़किरे के साथ उसे बुरा कहते थे जिसे यजीद को बहरहाल खामोशी के साथ सुनना पडता था। चुनाँनचे यहया बिन हकम ने यज़ीद के पहलू में बैठ कर हस्बे ज़ैल शेअ्र पढ़ दिए थे।

لهام بجنب الطف ادنیٰ قرابة   من ابن زیاد العد ذی الحب الوغل

سمیة اضحی بسلها عد لحصی   وبنت رسول الله لیس لها نسل

"यानी वह सर जो मैदाने करबला मे तना से जुदा कर दिए गए कराबत के एतेबार से हमसे ज्यादा नजदीक थे ब निसबत गुलाम जादा इब्ने जियाद के जो कमीना खानदान से है। अफसोस सुमैया की नस्ल तो संगरेजो की तरह फैल गई और दुख्तरे रसूल[स०अ०] की नस्ल बाकी न रही।"[3]

किसी और का क्या जिक्र उसी सुमैया ने जो इब्ने ज़ियाद की माँ थी बेटे को उसके इस फेअ्ल पर लानत मलामत की।[4]

खुद यजीद की रूसवाई के आलम का पूरा पूरा अन्दाजा उसी के इस कौल से हो जाता है कि इब्ने जियाद ने मुसलमानों में मुझको जलील व ख्वार और काबिले नफरत बना दिया और उनमें के नेक व बद सब ही मुझसे बेजार हो गए।

---

[1]बुख़ारी जि/2 पेज/188 जि/4 पेज/32

[2]तबरी जि/6, पेज/247

[3]इरशाद पेज 261-262

[4]तबरी जि 7 पेज/6

न सिर्फ यह कि खुद उसके जमाने में लोग उसे बुरा कहते और समझते थे बल्कि उसके बाद आने वाली नसलों में भी उसके खिलाफ गम व गुस्से का क़वी जजबा पाया जाता था यहाँ तक कि खुद बनी उमैया में से उसके बाद होने वाले सलातीन (हाकिम) इस चीज के रवादार न थे कि कोई भी उसका जिक्र ताजीम व एहतेराम के साथ करे बल्कि खुद उसके बेटे मुआविया बिन यजीद ने बर सरे मिम्बर अपने बाप की बद आमालियो का इकरार करते हुए उसके खाली किए हुए तख्ते हुकूमत पर बैठने से इन्कार कर दिया।

दूसरी सदी हिजरी के अवाएल (शुरू) तक यह जजबा बरक़रार रहा। चुनाँनचे उमर बिन अब्दुल अजीज के दरबार में किसी शख्स ने एक मर्तबा यजीद के नाम से साथ लफ्जे "अमीरूल मोमिनीन" कह दिया था तो उमर बिन अब्दुल अजीज ने गुस्से से कहा "तुम उसे अमीरूल मोमिनीन कहते हो?" और फिर हुक्म दिया कि उसे बीस ताज़ियाने लगाये जायें। चुनाँनचे यह सजा उसको दी भी गई।

इतना ही नहीं बल्कि कत्ले हुसैन[अ०स०] और यजीद की हुकूमत उम्मते इस्लामिया के दामन पर एक धब्बा बन गई जैसा कि चौथी सदी हिजरी के मशहूर फलसफी शाएर अबुल अला मअरी ने मुन्दर्जा जैल दो शेअ्रों में इसका इजहार किया है

ارى الايام تفعل كل كره   فما انا بالعجائب مستزيد

اليس قريشكم قتلت حسينا   وكان على خلافتكم يزيد

यानी "जमाने की नीरगियाँ मेरे सामने अजीब नक्शे पेश करती रहती हैं। यहाँ तक कि उनको देखने की अब मुझे हवस बाकी नहीं रही क्यों? क्या तुम्हारे कुरैश ने हुसैन[अ०स०] को क़त्ल नही किया और क्या तुम्हारी खिलाफ़त के तख्त पर यजीद सा खताकार नहीं बैठा?"

जाहिर है कि इस दर्जा वसीअ् और देरपा (मुददतों) जजब–ए–नफरत जो क़ातिलाने हुसैन[अ०स०] के खिलाफ आम तौर पर खल्के खुदा मे पैदा हो चुका था वह बेनतीजा नहीं रह सकता था। लिहाजा नामुमकिन था कि सूरते हाल में इन्केलाब पैदा न होता।

सैंतीसवाँ बाब

आसारे इन्केलाब
वाक़ेय–ए–हुर्रा ख़िलाफ़ते इब्ने ज़ुबैर, इज़तेराबे इराक़ व ईरान और दीगर जुज़ई (छोटे) वाक़ेयात

बडे से बड़े इन्केलाब का संगे बुनियाद वही दो चीजें हैं कि जो शहादते हुसैन[अ०स०] के कहरी नतीजे के जैल में आम तौर पर मुसलमानों मे पैदा हो चुकी थी। यानी कूव्वते एहसास और जुरअते इजहार जब यह दो चीजें किसी खास सलतनत किसी खास निजाम या किसी खास इक्तेदार के खिलाफ बरूए कार आ जाये तो फिर इन्केलाब रूनुमा होना लाजमी और जरूरी है।

चुनाँनचे हुकूमते यजीद के खिलाफ आसारे इन्कलाब उसी वक्त से नुमायाँ होने लगे थे कि जब पसमान्दगाने हुसैन[अ०स०] क़ैदियों की सूरत से कूफ़े के बाजार में तशहीर (नुमायाँ) किए जा रहे थे। हालाँकि उन कैदियों को खुद रोने की इजाजत न थी और हुकूमत की तरफ़ से फतह की खुशियाँ मनाने का एहतेमाम था मगर बहर तौर पसमान्दगाने हुसैन[अ०स०] की हालते जार को देखकर, और ज़ैनब व कुलसूम[अ०स०] और अली बिन हुसैन[अ०स०] के जोरदार खुतबों को सुनकर कूचा व बाजार में गिरया व जारी के शोर से एक कोहराम बरपा हो गया था यह राय अम्मा (आम राय) का वह बेसाख्ता मुजाहिरा था जिसे कोई ताकत दबा नहीं सकती थी।

फिर जब पसमान्दगाने हुसैन[अ०स०] शाम की तरफ रवाना किए गए तो यजीदियों के मुकाबले में रास्ते मे बहुत सी मंजिलों पर शहरों के दरवाजे बन्द कर लिये गये। बहुत से मकामात पर लोग मुसल्लह (हथियारो से लैस) होकर निकल आये और अक्सर जगह जंग की सूरत भी पेश आई। चुनाँनचे यह आगाज ही वह था जो बजाए खुद किसी बड़े इन्केलाब की अपने अन्जाम में खबर दे रहा था।

मदीन–ए–मुनव्वरा और मक्क–ए–मुअज्जिमा यह दोनों मुसलमानों के खास मरकज थे। मदीना बनी हाशिम का शहर था जिनमें से अबूतालिब की अक्सर औलाद हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ जा चुकी थी। मगर इस

खानदान के दूसरे अफराद तो सब ही मदीने मे रह गए थे फिर औलादे अबूतालिब में से भी मुहम्मद बिन हनफिया और अब्दुल्लाह बिन जाफर मदीने ही में रहे थे। खवातीन में से भी कई बाकी रह गई थीं। अहले मदीना कितने ही बेहिस सही मगर इतने दर्दमन्द दिलों के तअस्सुरात उन्हें कहाँ तक मुतअस्सिर न बनाते। उसी वक्त जब इब्ने जियाद ने सरे इमाम हुसैन[अ०स०] दमिश्क की जानिब रवाना किया यजीद ने अब्दुल मलिक बिन अबिल हदीस सलमा को मदीना रवाना किया और कहा कि जाकर अम्र बिन सईद बिन आस (हाकिमे मदीना) को कत्ले हुसैन[अ०स०] की खुश खबरी पहुँचाओ अब्दुल मलिक जब मदीने के पास पहुचा तो रास्ते ही में एक शख्स ने कुरैश में से उसे देख कर पूछा, क्यों क्या वाकेया है? उसने कहा कि वाकेया अमीर के पास पहुँच कर मालूम होगा। यह सुनना था कि उसने कहा "انا لله وانا اليه راجعون" ब खुदा हुसैन[अ०स०] कत्ल हुए।

अब्दुल मलिक ने अम्र बिन सईद के पास पहुँच कर शहादते हुसैन[अ०स०] की इत्तेला दी। उसने कहा कि जाओ और मदीने में इसका एलान कर दो। अब्दुल मलिक ने मदीने में एलान किया तो एक मर्तबा शहर मदीना में पिट्टस पड़ गई। खुद अब्दुल मलिक का बयान है कि मैंने उम्र भर में रोने का यह शोर नही सुना जो हुसैन बिन अली[अ०स०] के कत्ल का एलान सुनने के बाद मदीने में बनी हाशिम के घरो से बलन्द हुआ

अब्दुल मलिक इस एलान के बाद अम्र बिन सईद के पास वापस आया तो वह उसको देख कर मुसकुराया और मिसाल में अम्र बिन माअदीकर्ब का यह शेअर पढ़ा

عجب نساء بنی زید عجة

لعجیج نسوتنا غداة الارنب

और कहा यह आज का मातम बदला है, उस मातम का, जो बनी उमैया की औरतों में उसमान के कत्ल पर बरपा हुआ था। फिर उसने मस्जिद में जाकर तकरीर की और लोगों को इमाम हुसैन[अ०स०] की शहादत से मुत्तेला किया।[1]

[1]इरशाद पेज/263

मुहम्मद हनफिया को जिस वक्त इत्तेला मिली वजू कर रहे थे। उनकी आँखो से आँसू टप टप उसी तश्त में गिरने लगे।[1]

अब्दुल्लाह बिन जाफर को हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ ही साथ उनके दोनों बेटों की शहादत की इत्तेला भी दी गई। उन्होने कलम ए "إنا لله وإنا إليه راجعون" जबान पर जारी किया। उनका गुलाम अबूस्सलासिल जो हुसैनी अजमत से नावाक़िफ़ था और अपने आका जादों के क़त्ल से मुतअस्सिर था कहने लगा कि यह रोजे बद हमें हुसैन[अ०स०] की बदौलत देखना पड़ा। अब्दुल्लाह बिन जाफर ने जो यह सुना तो गजबनाक होकर अपनी नअ्ल (चप्पल) से उसे जर्ब लगाई और कहा "हराम जादे! तू हुसैन[अ०स०] के बारे में ऐसा कहता है ब–खुदा अगर मैं उनके साथ होता तो अपनी जान निसार करता मुझे तो बस इससे एक तरह का सब्र आ गया कि मेरे दोनों बच्चे मेरे भाई के साथ वफादारी का हक अदा करके सब्रो इस्तेक़लाल के साथ जाँ बहक़ तस्लीम हुए।

फिर हाजरीन से मुखातब होकर कहा अल्लाह का शुक्र है कि अगर मैं खुद हुसैन[अ०स०] की नुसरत न कर सका तो कम अज कम मेरे दोनो फ़रजन्दों ने हक्के नुसरत अदा किया।[2]

एक तरफ़ अकील बिन अबी तालिब की बेटियाँ, मुस्लिम की बहनें उम्मे लुकमान और उम्मे हानी, असमा और रमला और जैनब अपने भाई मुस्लिम पर तो तवज्जोह नहीं कर रहीं थीं मगर हुसैन[अ०स०] के गम में अजीब पुर तासीर अन्दाज से कह रही थीं–––

"क्या कहोगे (ऐ मुसलमानो!) जब रसूल तुमसे पूछेंगे कि मेरे बाद तुमने मेरी औलाद और मेरे अहलबैत के साथ क्या सुलूक किया? यह कि कुछ उनमें से कैद हैं और कुछ मक्तूल खाको खून में आलूदा हैं। मैंने तुम्हारे साथ जो खैरख्वाही की और जो खिदमतें अन्जाम दीं उनका यही सिला था कि मेरे बाद मेरे घराने के साथ ऐसा सुलूक करो।"[3]

मुमकिन नहीं था कि यह तअस्सुरात असर पैदा न करते इन तअस्सुरात ही का नतीजा था कि मदीने वालों ने ऑखें खोलीं और यजीद के अफआल व आमाल की जांच का खयाल पैदा हुआ। चुनॉनचे सन 62 हिजरी में अब्दुल्लाह

---

[1] तबरी जि/6 पेज/223

[2] इरशाद पेज/264

[3] तबरी जि/7 पेज/4 तारीखे कामिल जि/4 पेज/52

बिन हनजला ग़सीलुल मलाएका (उन्हे मलाएका ने गुस्ल दिया था) वग़ैरह शुरफाए मदीना के वफ्द ने शाम जा कर यजीद के हालात का मुतालिआ किया हालाँकि उन लोगों को बड़ी बड़ी रकमें दी गईं। मगर जब वह वापस आये तो उन्होने यजीद के बेदीनी के हालात को जाहिर किया और कहा कि "हम ऐसे शख्स के पास से आ रहे हैं कि जो कोई मजहब नहीं रखता बल्कि शराब पीता है, तम्बूरा बजाता है, गाने वालियों से गाना सुनता है और कुत्तों से खेलता रहता है। और रिन्दों बदमस्तों के साथ किस्सा गोई मे औकात सर्फ करता है चुनाँनचे हम सब उसकी बैयत का क़लादा (फंदा) अपनी अपनी गर्दन से उतार डालते हैं[1]

अल्लामा जलालुददीन सियूती तारीखुल खुलफा मे लिखते हैं कि उस वफ्द के अरकान ने बयान किया कि "हमने यजीद की मुखालिफत उस वक्त इख्तियार की है कि जब हमे उसका अन्देशा पैदा हो गया कि हम पर अजाबे इलाही के तौर पर आसमान से पत्थर बरसेंगे। इसलिए कि वह ऐसा शख्स है जो अपने बाप की तसर्रुफ कर्दा (इस्तेमाल में) कनीजों (अपनी सौतेली माओं) और बहनो तक को अपने लिए हलाल समझता है शराब पीता है और नमाज को तर्क करता है।"

अगरचे मदीने से जो वफद दमिश्क गया था उसके अरकान के रूजहानात पर काबू रखने के लिए तमाम वह तदाबीर बरूए कार लाये गए थे जो उसके बहुत पहले से हुकूमत दमिश्क़ के जेरे तजुर्बा रह कर कामयाब साबित होते रहे थे मगर शहादते हुसैन[अ0स0] का यह असर था कि इस मर्तबा वह तमाम ज़राए नाकामयाब साबित हुए बल्कि उस वफ़द के एक रूक्न (Membar) मुन्जिर बिन ज़ुबैर ने अपनी तकरीरों में यह भी जाहिर कर दिया कि यजीद ने मुझको एक लाख दिरहम दिये हैं मगर यह चीज मुझे उसके सही हालात आप लोगों के सामने बयान करने से बाज नहीं रख सकती। चुनाँनचे मै साफ साफ बतलाता हूँ कि वह शराब पीता है और उस नशे में ऐसा सरशार होता है कि नमाज तर्क हो जाती है। इसके अलावा वह तमाम वाकेआत उन्होने भी बयान किए जो उनके दूसरे साथी बयान कर चुके थे

चुनाँनचे सन 63 हिजरी के शुरू होते ही अहले मदीना ने मुत्तफिक़ होकर यजीद के गवर्नर को जो यजीद का एक चचाजाद भाई उसमान बिन मुहम्मद

---

[1]तबरी जि/7 पेज/4, तारीखे कामिल जि/4, पेज/52

बिन अबू सुफियान था मदीने से निकाल दिया और बनी उमैया का बावजूदेकि वह वहाँ तक़रीबन एक हज़ार की तादाद मे थे मुहासिरा कर लिया।[1]

अब अमल और रद्दे अमल (जवाब) के तहत में यजीद की तरफ से तशद्दुद और मुसलमानों की तरफ से मुजाहिराते नफरत का एक सिलसिला था जो जारी हो गया क़त्ले हुसैन[अ0स0] ने जो बेदारी पैदा की उसके नतीजे में मदीने वालो मे बेचैनी पैदा हुई और अब मदीने वालों की सरकूबी (कुचलने) के लिए मुस्लिम बिन अक़बा की सर करदगी में जो फौज भेजी तो ग़ैजो गजब की शिद्दत में उसे हुक्म दे दिया कि फ़तह पाने के बाद मदीने को तीन दिन के लिए मुबाह (जाएज) समझ लेना यानी बे मुहाबा (बगैर रिआयत) कत्लो गारत करना और जो माल या हथियार या क़ैदी मिले वह सब फौज की मिलकियत होंगे।[2]

देनवरी की रिवायत के अलफाज़ यह हैं कि "अगर अहले मदीना पर फतह पाना तो तीन दिन तक बराबर मदीने को लूटते रहना। [3]

चुनाँनचे रोजे चहार शम्बा (बुध) 28/जिलहिज्जा सन 63 हिजरी को मदीन–ए–मुनव्वरा में कत्लो गारत करके मुकम्मल तौर पर उस हुक्म की तामील की गई।[4] और तीन दिन रात मुसलसल अहले शाम मदीने को लूटते रहे [5]

ज़ाहिर है कि मदीने में क़ैदी जो मिल सकते हैं वह यहूदो नसारा वग़ैरह नहीं होंगे। वह सहाब–ए–रसूल और ताबेईन के घरानों के औरते और बच्चे थे मगर यजीद की तरफ से उनके लिए यह हुक्मे सरीह मौजूद था कि वह फौज के सिपाहियों पर तकसीम हो जायेंगे।

उस वक्त बातिल का हौसला इतना बलन्द था कि बाक़ी मान्दा अहले मदीना से जो यजीद की बैयत ली गई वह इस शर्त के साथ कि वह सब यजीद के ग़ुलाम होंगे। यजीद उनकी जानो माल और अहलो अयाल के बारे में मुकम्मल इख़्तियारात का मालिक होगा [6] चुनाँनचे जनाबे उम्मे सलमा जौजा–ए–रसूल[स0अ0] के नवासे यजीद बिन अब्दुल्लाह बिन रबिया बिन असवद

---

[1]तबरी जि 6 पेज 273- 274

[2]तबरी जि, 7 पेज/6–7

[3]अखबारूत तुवाल पेज 260

[4]तबरी जि, 7 पेज/8

[5]अखबारूत तुवाल, पेज/261

[6]तबरी जि, 7 पेज 12–13

ने इन अलफाज के साथ बैयत करने से इन्कार किया तो उन्हे फौरन कत्ल कर दिया गया।[1] यजीद ने यह सब वाकेआत सुने तो उन पर बजाए तअस्सुफ (अफसोस) के खुशी का इजहार किया और यह अशआर पढे कि

ليت اشياخي ببدر شهدوا   جزع الخزرج من وقع لاسل
حين حكّت بقباء بركها   واستحرالقتل في عبد لاشل[2]

इसके मानी यह हैं कि मदीने पर यह हमला और अहले मदीना के साथ यह सुलूक भी पैग़म्बरे इस्लाम से बदला लेने ही के सिलसिले में था

इधर मक्के वाले भी करवट बदल चुके थे चुनॉनचे अब्दुल्लाह बिन जुबैर ने कि जो अरसे से खिलाफत के मुतमन्नी (तमन्ना) थे इमाम हुसैन[अ०स०] की शहादत की खबर सुनकर और यजीद व बनी उमैया के ख़िलाफ़ नफ़रत व बेजारी का कौमी जजबा लोगों में पाकर मौके को गनीमत समझा और एक पुरजोर तक़रीर में कूफ़े और इराक़ के लोगों की बेवफाई और जफ़ा शेआरी, (जुल्म की आदत) की पूरी तरह मजम्मत की और हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की सिदाक़त और हक्क़ानियत का इजहार व एतेराफ करते हुए कहा कि "कसम है खुदा की हुसैन[अ०स०] ने शराफत व करामत के साथ जान देने को जिल्लत और हिकारत के साथ ज़िन्दा रहने पर तरजीह दी। क़त्ले हुसैन[अ०स०] के बाद हम कभी उस कौम की तरफ़ से मुतमइन नहीं हो सकते। ब खुदा उन लोगों ने ऐसे बुजर्गवार को शहीद किया है कि जो क़लीलुन नौम (कम सोने वाले) और कसीरूस सौम (ज्यादा रोजे रखने वाले) था रातों को इबादते इलाही में तूलानी कयाम करने वाला, दिनों को बकसरत रोजा रखने वाला शरफ व बुज़ुर्गी और दीन में सबसे अफ़ज़ल और अम्रे ख़िलाफत के लिए सबसे ज्यादा मुस्तहक और मौज़ूँ था क़सम है खुदा की कि उसने कभी क़ुरआन को ग़लत मानी नहीं पहलाए खौफे इलाही से वह बेहद रोने वाला था और बजाए मैख्वारी (शराब) के हमेशा रोजे रखता था और बजाए शिकारी कुत्ते पालने के जिकरे इलाही के जलसे उसके घर में बरपा रहते थे उसी तकरीर का असर था कि अहले मक्का को यजीद से बेजारी पैदा हुई और अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर की बैयत के लिए तैयार हुए। यजीद यहाँ के हालात से बहुत फिक्र मन्द हुआ और उसने कोशिश की कि मक्क–ए–मुअज़्ज़ेमा की किसी मुमताज शख्सियत

[1] अखबारूत तुवाल, पेज / 261
[2] अखबारूत तुवाल, पेज / 236

को अपने साथ वाबस्ता कर सके मगर कत्ले इमाम हुसैन[अ०स०] का वह बड़ा जुर्म उसके नाम-ए आमाल में था कि जो अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर की इताअत न करना चाहते थे वह भी यजीद से बहरहाल नफरत करते थे चुनानचे अब्दुल्लाह बिन अब्बास ऐसे ही शख्स थे कि उन्होंने इब्ने ज़ुबैर की बैयत करने से इन्कार कर दिया था। यजीद को यह मालूम हुआ तो उसने अब्दुल्लाह बिन अब्बास को लिखा कि मुझे इत्तेला मिली है कि उस ला मजहब (इब्ने ज़ुबैर) ने आपको हरमे इलाही मे अपनी बैयत हासिल करने के लिए बुलाया था मगर आपने हमारी वफादारी का सुबूत देते हुए उसकी बैयत करने से इन्कार कर दिया है बस अपने अबनाए वतन (वतन के लोगो) को और उन लोगों को जो बैरूनजात (बाहर वाले) के आपके पास आमदो रफ्त रखते हैं इब्ने ज़ुबैर और मेरी निसबत अपने सही खयालात से बराबर आप मुत्तेला फरमाते रहें इसलिए कि इब्ने ज़ुबैर आपको अपनी बैयत और इताअत मे लेने के बाद आपसे बातिल की तमन्ना और अपने गुनाहों में आपको शरीक करने की आरज़ू रखता था मगर आपने हमारी बैयत व इताअत मे दाखिल रहते हुए वफ़ाए अहद के हक़ को पूरा किया है लिहाजा खुदा इस सिला रहम की आपको जजाये खैर दे और बहरतौर मैं भी आपके इस सिला ए रहम की आपको जजाए खैर दे और बहरतौर मैं अभी आपके इस नेक सुलूक को भूलने वाला नहीं हूँ और जिस सिले व इन्आम के आप मुस्तहक हैं वह बहुत जल्द आपके पास पहुँचाऊँगा। मुकर्रर यह(याद रहे कि) कि आप आने जाने वालो को इब्ने ज़ुबैर की बुराईयों और उसकी चर्बजुबानी के मुतअल्लिक मुतनब्बेह (आगाह) करते रहे क्योंकि आम तौर पर लोग उसके मुतअल्लिक आपकी राय को ज्यादा वकीअ (बलन्द) और मोतबर समझते हैं।'' अब्दुल्लाह इब्ने अब्बास ने उस खत का हस्बे जैल जवाब यजीद को रवाना किया

'तुम्हारा खत पहुंचा। तुमने जो यह लिखा है कि मैंने अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर की बैयत तुम्हारी वफादारी के ख़याल से नही की यह गलत है। तुम्हें मालूम होना चाहिए कि मैं कभी भी तुम्हारा मद्दाह (चाहने वाला) और हवा ख्वाह (तरफ़दार) नहीं रहा क्या तुम समझते हो कि मै उस बात को भूल जाऊँगा कि तुमने ही हुसैन[अ०स०] को कत्ल किया है और क्या बनी मुत्तलिब के उन नौजवानों की खाको खून में भरी लाशों का हौलनाक तसव्वुर मेरे दिमाग़ से महो (मिट) हो जायेगा जिनके कपडे तक लूट लिए गए थे और बेगोरो कफन गर्म रेग पर यूँही छोड दी गई थीं। सिर्फ हवा के झोको ने खाक डाल

कर जिनकी पर्दा दारी का हक अदा किया और जानवराने सहराई (रेगिस्तानी जानवरों)ने उनकी हिफ़ाजत के फ़र्ज को पूरा किया यहाँ तक कि अल्लाह ने एक कौम के जरिये उनके दफ़्न व कफ़न का सर अन्जाम किया

हाँ हाँ ऐ यजीद! मैं नहीं भूल सकता और कभी नहीं यह कि तुमने हुसैन[अ०स०] को हरमे ख़ुदा और हरमे रसूल से निकलने पर मजबूर किया और इब्ने मरजाना को कत्ले हुसैन[अ०स०] पर मामूर किया मैं तो ख़ुदा की जात से बहरहाल उम्मीद रखता हूँ कि वह मुन्तकिमे हकीकी (सही सजा देने वाला खुदा) बहुत जल्द तुम्हारे आमाल के मुताबिक सजा देगा और अजाब में मुबतिला फरमाएगा क्योंकि तुमने उसके नबी की इतरत को कत्ल किया है और उनके कत्ल पर राजी हुए हो और यह जो तुमने लिखा है कि तुम मेरे साथ सिल–ए–रहम बरतोगे और इन्आमो इकराम से पेश आते रहोगे तो तुम अपनी इस मेहरबानी और सिल ए रहम को बस अपने ही लिए उठा रखो। हमको इसकी मुतलक (कत्ई) जरूरत नही है और यह जो तुमने लिखा है कि मैं लोगों को तुम्हारी तरफ माएल (झुकाओ) और अब्दुल्लाह बिन जुबैर से मुन्हरिफ (दूर) और बरगश्ता (बेजार) करूं तो उसके मुतअल्लिक मैं बस यही कह सकता हूँ कि तुम्हारे लिए कभी खैरो बरकत ना हो इसलिए कि तुम मुझसे अपनी नुसरत और हिमायत की उम्मीद रखते हो दराँहालेकि तुमने मेरे इब्ने अम को कत्ल और रसूल अल्लाह[स०अ०] के उन अहलेबैत को जिबह किया है जो रूश्दो हिदायत के चिराग और तारीक रातो में रौशन सितारे थे अफसोस कि उनको तुम्हारी फौजों की घघोर घटा ने पोशीदा कर दिया क्यों ऐ यजीद क्या तुमने अपने नमक ख्वारों को इसलिए हरमे इलाही मे नहीं भेजा था कि हुसैन[अ०स०] को उसी हरमे मुकद्दस मे कत्ल कर दे और क्या तुम हुसैन को बराबर डराते धमकाते नही रहे यहाँ तक कि वह सफ़रे इराक इख़्तियार करने पर मजबूर हो गए तुमने ही यह सब कुछ किया और इसलिए किया कि तुम्हारे दिल में मुखालिफते खुदा और रसूल और आले रसूल कि जिनकी शान में ख़ुदा ने आयते ततहीर नाजिल फरमाई, जागुजीं, (हक) है। इस आयते ततहीर के मिस्दाक आले रसूल[स०अ०] ही थे, न कि तुम्हारे बाप दादा, जो जफ़ाकार, तागी (फासिद) व बागी और दुश्मने ख़ुदा और रसूल[स०अ०] थे। अब इन अफआल (बुरे कामों) व आमाल के बावजूद भी क्या तुम मुझसे अपनी हवा ख्वाही (तरफदारी) की उम्मीद रख सकते हो? ऐ यजीद! सबसे ज्यादा अजीम जसारत तुम्हारी यह थी कि तुमने रसूल[स०अ०] की नवासियों को सर बरहना किया और

कैदी बनाकर इराक से शाम तक तशहीर कराया ताकि लोगों के दिलो पर अपने गलब ए तसल्लुत और कह्हारी का यह सिक्का बिठाओ कि बजाहिर किस तरह ज़ुर्रियते (आले) रसूल[स0अ0] को मगलूब (कमजोर) व मकहूर (कहर ढाना) करने में तुम कामयाब हुए हो और फिर तुम उस पर नाज़ाँ हो कि इस तरह तुमने आले रसूल से अपने उन फासिक व फाजिर और काफ़िर बुजुर्गों के खून का बदला लिया है जो जगे बद्र में कत्ल हुए थे और जिसका कीना तुम्हारे दिल में दबी हुई चिंगारी की तरह छुपा हुआ था।

अल्लामा सिब्ते इब्ने जैजी लिखते हैं कि जब यह ख़त यजीद ने पढ़ा तो सख्त बरअफ़रोख्ता (आपे से बाहर) हुआ। बल्कि इब्ने अब्बास के क़त्ल का इरादा भी उसने किया मगर यह कि इब्ने ज़ुबैर के खिलाफ जंग में मशगूल होकर कत्ले इब्ने अब्बास की तदबीर न कर सका।

अल्लामा इब्ने असीर ने भी अपनी तारीख[1] में इस ख़तो किताबत को कुछ कमी और बेशी के साथ दर्ज किया है।

मदीने में कत्लो गारत के बाद यजीद की हिदायत के मुताबिक उसका फरस्तादा (फरमाँ बरदार) अफसर मुस्लिम बिन अक़बा मक्क–ए–मुअज्जिमा की तरफ़ मुतवज्जेह हुआ मगर मुहर्रम सन 64 हिजरी में अभी वह रास्ते ही में था कि पन्जा ए मौत मे गिरफ्तार हो गया।[2] ताहम मरने से पहले ही उसने अपनी जगह यजीद के कहने के मुवाफ़िक हसीन इब्ने नुमैर सकूनी को सरदारे लशकर बना दिया और यह हिदायत कर दी कि देखो अहले मक्का के साथ शाम वाले जो भी करना चाहें तुम उसमें कोई मजाहमत (रोक टोक) न करना।[3] हसीन ने मक्के पर हमला किया और खाना ए काबा का मुहासिरा कर लिया कई महीने तक अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर से मुकाबला होता रहा और नौबत यहाँ तक पहुँची कि रोजे शम्बा (हफ्ता) 3/रबीउल अव्वल सन 64 हिजरी को मिन्जिनीक (तोप खाना) नस्ब करके खान–ए–काबा पर पत्थर ही नहीं बरसाये गए बल्कि आतिशबारी (आग बरसाई) की गई जिससे काबे मे आग लग गई।[4]

---

[1] मतबूआ मिस्र जि/4. पेज/82

[2] तबरी जि 7 पेज 14

[3] अख़बारूत तुवाल पेज/263

[4] सही मुस्लिम जि, 1 पेज/630 तबरी जि/7 पेज/14

बस यह आखरी कारनामा था जिसके बाद रोजे सह शम्बा (मगल) 14/रबीउल अव्वल सन 64 हिजरी को यजीद दुनिया से रूख़्सत हो गया।[1]

जिसके बाद हसीन बिन नुमैर ने अब्दुल्लाह बिन जुबैर से कहला भेजा कि जिसने हमको तुमसे जग के लिए भेजा था वह तो हलाक हो गया लिहाजा अब हमारी तुम्हारी जग भी खत्म हो गई। अब तुम शहर के दरवाजे हमारे लिए खोल दो कि हम ख़ाना-ए-काबा का तवाफ करके वापस जायें। चुनाँनचे ऐसा ही हुआ और यह फ़ौज वापस गई।[2]

अल-फखरी लिखता है कि "यजीद के अहदे हुकूमत की मजमूई मुद्दत सही हिसाब के रू से कुल तीन साल और छः महीने होती है उनमें से पहले साल में उसने हुसैन बिन अली[अ०स०] को शहीद किया। दूसरे साल में मदीना ए मुनव्वरा पर चढाई की और उसको तीन रोज तक ताराज किया और तीसरे साल में मक्क-ए-मुअज्जिमा पर फौज कशी की। उन हरसा मज़ालिम में से करबला के हादिसे ने बिल खुसूस दुनियाए इस्लाम में ऐसी खौफनाक सन्सनी फैला दी कि जो शख्स भी अपने दिल में कुव्वते एहसास रखते हुए इस नाजेबा इकदाम के तफसीलात से मुत्तेला होता था मुमकिन ही न था कि उसका दिल मुतअस्सिर न हो इसलिए कि यह इक़दाम सिर्फ शरई गुनाह और क़ानूनी जुर्म ही न था बल्कि एक बहुत बड़ी सियासी गलती थी जिसके मातहत यजीद और उसके नालाएक कमीने मुशीराने तदबीर (राय देने वाले) मसलन इब्ने जियाद व शिम्र वगैरह ने उन लोगो को भी अपनी मुखालिफत पर आमादा कर दिया कि जो रसूले खुदा[स०अ०] की अज़मत के क़ाएल होने और दीने इस्लाम से वाबस्तगी रखने के बावजूद उमवी हुकूमत के साथ अक़ीदत और वफ़ादारी तो नहीं अदम तअर्रूज़ (कोई एतेराज़ नहीं) और रवादारी के मसलक पर आखिर तक कायम रहना जरूर चाहते थे

सन 64 हिजरी मे यजीद की हलाकत के बाद इराक के घुटे हुए जजबात इब्ने जियाद के खिलाफ इस तरह उबले कि उसे 'ब-यक बीनी व दू गोश (आनन फानन)" बसरे से फरार करना पड़ा[3] उसे अपनी जात से खलके खुदा (अवाम) की बेजारी का अन्दाजा हो गया रास्ते में जब एक शुतुरबान (ऊँट

---

[1] तबरी जि 7 पेज 15

[2] अख़बारूत तुवाल, पेज/263

[3] अख़बारूत तुवाल पेज/276-277 तबरी जि/7 पेज/2

वाला) को सुना कि वह अपने ऊँट की हुदी ख्वानी (ऊँट को हकाते वक्त गाना) इन अशआर के साथ कर रहा था।

يارب رب الارض والعباد   لعن زياد اوبى زيد

كم قتلوا من مسلم عاد   حم الصلوة خاشع الفؤاد

يكبدالليل من التسهاد

यानी परवरदिगारा जियाद और औलादे जियाद पर लानत फ़रमा कि उन्होंने कितने नमाज गुजार शब बेदार मुत्तकी और परहेजगार मुसलमानो को बेजुर्मो खता कत्ल किया है।[1]

अहले इराक का इशतेआल (गुस्सा) उसके खिलाफ इतना बढा हुआ था कि जब तआकुब (पीछा) करने पर वह खुद न मिल सका तो दारूल अमारा पर हमला करके जो कुछ उसका मालो मता (सामान) था सब लूट लिया।[2]

कूफे का जो आलम था वह उन वाकेआत से जाहिर है कि जब कूफे में यजीद की हलाकत के बाद इब्ने जियाद की हुकूमत तस्लीम किए जाने की तहरीक हुई तो यजीद बिन हारिस बिन रवीम शैबानी ने उसकी मुखालिफ़त करते हुए कहा कि हम तो इब्ने सुमैया से निजात हासिल करने के मुतमन्नी (तमन्ना) हैं। हम हरगिज उसकी हुकूमत को नहीं मान सकते [3]

हालाँकि यह यजीद खुद करबला में लशकरे यजीद के अन्दर मौजूद था मगर वह भी अब बनी उमैया की हुकूमत से नफरत जाहिर कर रहा था। उससे आम फिजा का अन्दाजा किया जा सकता है इतना ही नहीं बल्कि हमदान की औरतें हुसैन[अ0स0] का मातम करती हुई और उनके मर्द तलवारें लिए हुए यह सब मस्जिद मे आकर मुजाहरा करने लगे कि हम अब ऐसे अशखास का इकतेदार बरदाश्त नहीं कर सकते जिन्हों ने फ़रजन्दे रसूल[स0अ0] का करबला में खून बहाया है [4]

ब–कौले जनाब नज्म आफ़न्दीः

शहीदज़ुल्म कलेजे हिला दिये तूने
हुसैन दर्द के दरया बहा दिये तूने

---

[1] अखबारूत तुवाल. पेज / 278

[2] तबरी जि / 7 पेज / 28

[3] तबरी जि / 7 पेज / 30

[4] सवाएके मुहर्रिका पेज, 134, तबरी जि / 7 पेज 30

हर एक जर्रे–ए–बेहिस मे एक तड़प भर दी
दिमाग वजा किये दिल बना दिये तूने

इन्तेहा यह थी कि खुद यजीद के बेटे और जानशीन मुआविया बिन यजीद ने सरे मिम्बर अपने बाप के आमाल व किरदार से नफरत व बेजारी का इजहार किया इस तरह कि जब यजीद के बाद उसे खलीफ़ा तस्लीम किया गया तो उसने मिम्बर पर जाकर हस्बे ज़ैल तक़रीर की।

"ऐयुहन्नास यह अम्रे खिलाफ़त अल्लाह की एक मुस्तहकम (मजबूत) रस्सी थी, मगर मेरे दादा मुआविया बिन अबी सुफियान ने उसके मुतअल्लिक हकीकी मानी में मुस्तहक्के खिलाफत शख्स अली बिन अबी तालिब[अ०स०] से झगड़ा किया और वह मज़मूम (गिरा हुआ, गलत) तरीका इख्तियार किया जिससे सब ही वाकिफ हैं। बहरहाल जब वह अपने गुनाहों मे चारो तरफ से घिर कर कब्र में पहुँच गए तो यह मन्सब मेरे बाप यजीद को पहुचा और वह भी किसी तरह उसके मुस्तहक़ न थे। उन्होंने रसूल के नवासे हुसैन इब्ने अली[अ०स०] को कत्ल किया। बिल आखिर उनकी भी उम्र खत्म हो गयी। और वह भी अपने गुनाहों में गिरफ्तार क़ब्र में जा पहुंचे।"

उसके बाद वह रो दिया और कहने लगा कि सबसे बड़ी मुसीबत हमारे लिए इस अम्र (बात) का एहसास है कि उनका अन्जाम बुरा हुआ क्योंकि उन्होंने औलादे रसूल[स०अ०] को कत्ल, शराब को मुबाह (जाएज) और हुरमते खान–ए–काबा को बरबाद किया पस अब मैं जो इस वक्त तक खिलाफत की शीरीनी (मिठास) से ना आशना हूँ तो उसकी तलखी का मज़ा क्यो चखूँ। तुम जानो और तुम्हारा काम। मुझे खिलाफत से कोई सरोकार नहीं। बिल फर्ज दुनिया अगर कोई अच्छी नेअ्मत है तो भी हम उसमे से बहुत काफ़ी हिस्सा पा चुके और हकीकतन अगर वह कोई बुरी चीज है तो जितना भी इस वक्त तक हमको उसमें से मिलता रहा वही बहुत ज्यादा है।' उसके बाद वह महल में चला गया और चालीस दिन गुजारने के बाद इस दारे फ़ानी (खत्म होने वाली दुनिया) से रेहलत (मर) कर गया।

बाज मुअर्रिख़ीन का खयाल है कि उसे जहर दे दिया गया [2] मुआविया बिन यजीद के बाद ख़ुरासान में भी हरकत पैदा हो गई उन्होने अपने यहाँ के गवर्नरों को निकाल दिया, और जगो जिदाल शुरू कर दी।[1]

---

[1]तबरी जि/7 पेज/30, सवाएके मुहर्रिका पेज/134
[2]तबरी जि/7 पेज/34

अब ख़िलाफत औलादे अबू सुफियान से हमेशा के लिए निकल गई। शाम में बूढ़े मरवान बिन हकम की बैयत की गई और ख़िलाफत फिर अरसे तक उसी की औलाद में बरकरार रही।

[1]तबरी जि/7 पेज/44

अड़तीसवाँ बाब

जमाअते तव्वाबीन

मुअर्रिखे तबरी का बयान है कि जब हुसैन बिन अली[अ०स०] कत्ल कर दिए गए और इब्ने जियाद अपने लश्कर गाह से जो नखीला में करार दिया गया था वापस होकर फिर कूफ़े में दाखिल हुआ तो शिअयाने अली[अ०स०] ने एक दूसरे को नफ़रीन व मलामत और अपनी कमजोरी पर इजहारे निदामत और शर्मसारी करना शुरू किया और अच्छी तरह महसूस करने लगे कि हमसे एक बड़े जुर्म का इरतिकाब हुआ कि पहले तो इमाम हुसैन[अ०स०] से नुसरत के वादे पर कूफे तशरीफ लाने की ख्वाहिश की। मगर जब आप हमारी दावत मन्जूर फ़रमा कर इराक़ तशरीफ़ ले आये तो आपकी मदद को न गए। यहाँ तक कि आप हमारे बिल्कुल करीब ही क़त्ल कर डाले गए। लिहाजा उन्होंने तय कर लिया कि यह आरो नग (शर्म) हमसे दूर नहीं हो सकता जब तक कि हम उन लोगों को जिन्हों ने हुसैन व अन्सारे हुसैन[अ०स०] के कत्ल में शिरकत की थी क़त्ल न कर लें या इस कोशिश के जैल में खुद भी अपनी अपनी जानें दे न दें। चुनाँचे उन्होंने इस सिलसिले मे दोस्ताने अहले बैत[अ०स०] मे से पाँच अहम शख्सियतो से राब्ता कायम किया। सुलैमान बिन सुर्द खुजाई जो असहाबे रसूल[स०अ०] में से थे। मुसैयब बिन नजबा फजारी जो असहाबे हजरत अली[अ०स०] में से मुमताज हैसियत रखते थे अब्दुल्लाह बिन सअद बिन नुफैल अजदी, अब्दुल्लाह बिन वाल तैमी और रिफ़ाआ बिन शददाद बिजली। चुनाँचे यह पाँचों आदमी और दूसरे बहुत से मुमताज अफराद सुलैमान बिन सुर्द खुजाई के मकान पर जमा हुए और मुसैयब बिन नजबा ने तक़रीर की [1] जिसमे कहा कि हम अपनी सच्चाई पर नाज और अपनी जमाअत पर फ़ख्र किया करते थे लेकिन जब खुदा ने हमारा इम्तेहान लिया, मालूम हुआ कि हमारे दावे सरासर गलत थे हमने इमाम हुसैन[अ०स०] को दावत दी और उनके पास पैगाम भेजे कि

---

[1] तबरी जि/7 पेज/47

आईये हम आपकी नुसरत पर आमादा है लेकिन जब आप तशरीफ ले आये तो हमने अपनी जान चुराई और हमने अपनी जानों और अपने अमवाल बल्कि अपनी जबानों से भी अपने फरीजे और नुसरत व हिमायत को पुरा न किया और न अपने कबीले ही को उसके लिए आमादा किया अब हम खुदा व रसूल[स0अ0] को क्या जवाब देंगे जबकि हमारा कोई उज्र काबिले कुबूल करार पा ही नही सकता। अलबत्ता यह एक सूरत हो सकती है कि कत्ले हुसैन[अ0स0] में किसी हैसियत से भी जिन जिन ने हिस्सा लिया है उन सब अशखास को कत्ल करें या इस सिलसिले में खुद अपनी जानों से गुजर जाये अब आप लोगों को लाजिम है कि कोई अपना सरदार मुन्तखब करें जिसके जेरे कयादत इस मुहिम की तकमील हो।

उनकी तकरीर खत्म होते ही रिफाआ बिन शद्दाद खड़े हुए और उन्होने मुनासिब अलफाज में उनकी ताईद की और कहा कि अगर आप पसन्द करें तो आप ही को इस मुहिम की कयादत सिपुर्द की जाये और आपकी राय न हो और दूसरे हज़रात भी मुत्तफिक हों तो हम इस जिम्मेदारी को अपनी जमाअत की सबसे मुअम्मर फर्द सुलैमान बिन सुर्द के सिपुर्द करें। जो पैगम्बरे खुदा[स0अ0] के सहाबी हैं और जिनके कारनामे नुसरते दीन मे सब ही को मालूम हैं और जिनकी इसाबते राय (नेक मशवरा) और बसीरत (सूझ बूझ) भी काबिले एतेमाद है। अब्दुल्लाह बिन दाल और अब्दुल्लाह बिन सअ्द ने भी अपनी तकरीरों में मजीद ताईद के साथ मुसैयब बिन नजबा और सुलैमान बिन सुर्द दोनों की अहलियत का इकरार किया। और में मुसय्यब बिन नजबा की एखतितामी तकरीर के बाद बिल इत्तेफाक सुलैमान बिन सुर्द का इस जमाअत की कयादत के लिए इन्तेखाब हो गया।

अब सुलैमान खडे हुए और उन्होंने इन्तेहाई पुरजोर व असर एक तकरीर की जिसे वह उसके बाद से हर जुमे मे दोहराया करते थे [1] उसका मुखतसर इक्तेबास दर्ज जैल है

'हम लोग गर्दनें उठा उठा कर इशतियाक के साथ अहले बैते रसूल[स0अ0] की तशरीफ़ आवरी की राह देखा करते थे लेकिन जब वह आये तो हमने तगाफुल (गफलत) और तसाहुली (काहिली) से काम लिया। यहाँ तक कि हमारे मुल्क में और हमारे करीब फरजन्दे रसूल[अ0स0] कत्ल कर दिए गए जबकि आप आवाजे इस्तेगासा (मदद के लिए) बलन्द कर रहे थे लेकिन कोई लब्बैक कहने

---

[1] तबरी जि/7 पेज 48

वाला न था। गिरोहे फ़ासिक़ीन ने उनको अपने तीरों का निशाना और नैज़ों का सर मश्क़ बनाये रखा यहाँ तक कि आप शहीद हो गए। और इतना ही नहीं बल्कि आदा (ज़ुल्म करने वाले) ने बादे शहादत आपका लिबास तक लूट लिया। फिर अब उठना है तो उठ खड़े हो। अल्लाह का गज़ब हरकत में आ चुका है बस अब तय कर लो कि अपने बीवी बच्चों के पास उस वक़्त तक वापस नहीं जाओगे जब तक अल्लाह की ख़ुशनूदी का सामान न कर लोगे। और बख़ुदा मेरे ख़याल में तो वह उस वक़्त तक तुमसे ख़ुशनूद नहीं हो सकता जब तक कि उनके क़ातिलों को कैफ़रे किरदार (अंजाम) तक न पहुंचा दो। या ख़ुद उसी राह में जान न दे दो। हाँ ख़बरदार मौत से डरना नहीं क्योंकि जो कोई मौत से डरता है वह ज़लील होता है। देखो तो कि बनी इस्राईल की एक जमाअत ने जब गोसाला (गाय) परस्ती के जुर्म का इरतिकाब किया तो उनकी तौबा किस तरह क़ुबूल हुई? उनसे कहा गया कि तुम अपने नुफ़ूस के क़त्ल करने पर तैयार हो जाओ। उस पर उस जमाअत ने क्या किया? वह गर्दनें बढ़ा कर फ़ैसल ए क़ुदरत के इजरा के लिए तैयार बैठ गए इसलिए कि उन्हें अपने जुर्म का सही एहसास था और यह मालूम हो गया था कि बग़ैर उसके तौबा क़ुबूल नहीं हो सकती अब तुम भी अगर अपने को मुजरिम समझ रहे हो तो ऐसी ही क़ुर्बानी के लिए तैयार हो जाओ तलवारें तेज़ कर लो। नैज़ों की अनियाँ दुरूस्त कर लो और पूरे साज़ो सामान से तैयार हो कर मुन्तज़िर होकर बैठ जाओ कि जब तुम्हें दावत दी जाये तो फ़ौरन निकल खड़े हो देर न होने पाये।"

यह पुरजोश तक़रीर थी जिसे सुनकर मजमे के जज़बात में तूफ़ान बरपा हो गया

मुतअद्दिद मुक़र्ररीन ने खड़े हो हो कर अपने तअस्सुरात और अज़्मे जिहाद का इज़हार किया। अब्दुल्लाह बिन दाल तैमी ख़ज़ान्ची मुक़र्रर हुए और तय पाया कि उनके पास रूपया जमा किया जाय और अज़्म व वलवले से भरा हुआ यह मजमा मुन्तशिर हुआ।

अब सुलैमान ने मदाएन में सअद बिन हुज़ैफ़ा बिन यमान और दूसरे मक़ामात पर कुछ दूसरे अशख़ास को ख़ुतूत भी लिखे।[1] उन ख़ुतूत के मज़मून का अहम हिस्सा हस्बे ज़ैल था।

---

[1] तबरी जि/7 पेज/49

"शीईयाने अहलेबैत ने अपने इस मुवक्किफ पर गौर किया है जो उनसे रूनुमा हुआ। फ़रज़न्दे रसूल के बारे में जिन्हें दावत दी गई तो वह आगए और उन्होने जब दावते नुसरत दी तो उस पर लब्बैक न कही गई। और उन्होने वापस जाना चाहा तो उन्हे रोका गया और उन्होंने अमान चाही तो इन्कार किया गया और उन्होंने चाहा कि उन्हे उनके हाल पर छोड़ दें मगर दुश्मनों ने उन्हे न छोड़ा और उन पर चढ़ाई करके उन्हें शहीद कर डाला फिर उनका लिबास लूट लिया और लाशे मुतह्हर (पाक) को उरियाँ छोड दिया। अब हमारी जमाअत ने उस पेश आमद (हालात) पर गौर किया है और उन्हें शिद्दत के साथ यह एहसास पैदा हुआ कि उनसे इस मासूम की मदद न करने में बहुत बड़ी खता सरजद हुई है जिसका कफ्फारा यही है कि उनके कातिलों को कत्ल करें या खुद अपनी जान दे दे। अब यह सब बिल्कुल तैयार हो गए हैं। लिहाजा आप लोग भी तैयार हो जायें हमने इस मोहिम के आग़ाज के लिए एक तारीख़ और जगह मुक़र्रर कर दी है जिसमे सबको मुजतमा (जमा) हो जाना चाहिए तारीख़ यकुम रबीउस सानी सन 65 हिजरी होगी और जगह मकामे नखीला।"

यह खत सअ्द को पहुँचा और उन्होंने मदाएन के शियों को पढ़ कर सुनाया और उसके साथ खुद तकरीर की [1] जिसमें कहा कि "वाकेया यह है कि आप लोग मुत्तफिका तौर (एक हो कर) पर हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की नुसरत का अज्म रखते थे और जूंही उनके तशरीफ लाने की इत्तेला मिले फौरन ही उनके पास जाने का इरादा रखते थे मगर आपको अचानक उनकी शहादत की खबर मिली जिससे मजबूर होगए। बहरहाल अल्लाह के यहाँ आपकी नीयतों का अज्र मिलेगा। अब सूरत हाल यह है कि आपके बरादराने दीनी अहले बातिल से मुकाबले के लिए आपकी मदद के ख्वास्तगार (दरख्वास्त) हैं अब गौर करना है कि इस बारे में क्या करना चाहिए।"

सबने कहा कि हम जरूर उनकी मदद करेंगे और मुत्तफिका तौर पर दुश्मनाने अहलेबैत से जिहाद करेंगे। चुनाँनचे सअ्द बिन हुजैफा ने सुलैमान बिन सुर्द के खत का जवाब इक़रारे नुसरत पर मुशतमिल रवाना कर दिया। इसी तरह के जवाब दूसरो के भी आये। यह सब कारवाईयाँ बिल्कुल खामोशी से हो रही थीं। यहाँ तक कि राजदारी के साथ काफी अफराद इस तहरीक से मुत्तफिक हो गए। ताहम सन 61 हिजरी से लेकर रबीउल अव्वल सन 64

---

[1] तबरी जि/7 पेज/60

हिजरी यानी हलाकते यजीद तक हालात ऐसे पैदा नहीं हो सके कि इस सिलसिले में कोई अमली इक़दाम किया जा सकता [1] मगर यजीद की मौत के बाद इस तहरीक में ज्यादा क़ुव्वत पैदा हुई और अब तक़रीबन एलानिया उसकी इशाअत की जाने लगी। यहाँ तक कि यह तहरीक मिस्र तक भी पहुँच गई और उबैदुल्लाह बिन अब्दुल्लाह मतरी की मुसलसल तकरीरो ने जिनमें शहादते इमाम हुसैन[अ०स०] का तजकिरा निहायत मुअस्सिर (पुर असर) अलफ़ाज में किया जाता था। वहाँ भी जोशो खरोश पैदा कर दिया।[2]

यकुम रबीउस सानी सन 65 हिजरी मुकर्ररा तारीख पर यह लोग नखीला में जमा हुए तो यह देख कर किसी हद तक मायूसी हुई कि जिन लोगों ने इकरारे नुसरत किया था और जिनके नाम फ़ेहरिस्त मे दर्ज हो चुके थे वह सोलह हजार थे मगर तारीख़े मुऐयन (तै हुई) पर जो तादाद जमा हुई वह सिर्फ चार हजार की थी [3] ताहम यह लोग अज्मो इरादे के पुख़्ता थे। इसलिए क़िल्लते तादाद की परवा न करते हुए उन्होने अमली इकदाम का तहैया कर लिया

बाज लोगो की राय थी कि कातिलाने हुसैन[अ०स०] कूफ़े ही में मौजूद हैं उनसे यहीं समझ लेना चाहिए मगर सुलैमान की राय यह हुई कि सबसे बड़ा कातिल हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] का जो इस वक्त मौजूद है। इब्ने जियाद है जिसने तमाम शराएते मुसालिहत (सुलह) को मुस्तरद (रद) किया और यह कहा कि जब तक हुसैन[अ०स०] गैर मशरूत (बगैर शर्त) तौर पर इताअत न कर लें उनको अमान नहीं मिल सकती। लिहाजा उसी के मुकाबले के लिए चलना चाहिए। जब उसके मुक़ाबले मे कामयाबी हो जाये तो फिर उन छोटे आदमियों को सजा देना कौन मुशकिल है। चुनाँनचे सबने उस राय पर इत्तेफाक कर लिया।[4]

शबे जुमा 5/रबीउस सानी सन 65 हिजरी को अंधेरे मुह यह लोग शाम की तरफ रवाना हो गए।[5]

---

[1] तबरी जि/7 पेज/51
[2] तबरी जि/7 पेज/52
[3] तबरी जि/7 पेज/67
[4] तबरी जि/7 पेज/68
[5] तबरी जि/7 पेज/69

सबसे पहले उन लोगों ने जाकर क़ब्रे हुसैन^अ०स० की ज़ियारत की। उस वक्त उनके गिरया व शेवन (बैन) का अजीब आलम था और हर एक इस आरज़ू से बेताब था कि काश वह नुसरते इमाम में रोजे आशूर काम आया होता और इस शहादत के दर्जे को हासिल करता। एक शबो रोज उन्होंने इसी आलम में नौहा व मातम के साथ साथ नमाज व मुनाजात और तौबा व अस्तग़फार में बसर किया। उसके बाद जज़बात के इन्तेहाई तलातुम में वह पूरा मजमा क़ब्रे इमाम हुसैन^अ०स० से रूख्सत हुआ जिसके साथ सुलेमान बिन सुर्द और दूसरे सरदारों की इन्तेहाई मुअस्सिर (दिलों पर असर करने वाली) तकरीरों ने वलवले व जोश के दरया को शिद्दत के साथ तूलानी कर दिया।[1]

उन मुजाहदीन ने मन्ज़िल ब मन्ज़िल तय करके ऐनुल वरदा मे जाकर अपने सुफूफ़ मुरत्तब (सफों को ठीक) किए। पाँच दिन के बाद शाम की फौजें इब्ने ज़िल कलाअ् और हसीन बिन नुमैर की सरकर्दगी मे उनके मुकाबिल पहुँच गईं। अब सुलैमान बिन सुर्द ने आखिरी इन्तेज़ामात किए और ऐलान किया कि अगर मैं काम आ जाऊँ तो सरदारे लशकर मुसैय्यब बिन नजबा होंगे और वह शहीद हो जायेंतो सरदार अब्दुल्लाह बिन सअद बिन नफील होंगे और उनके बाद अब्दुल्लाह बिन वाल और फिर रिफाआ बिन शद्दाद।[2]

रोज चहार शम्बा (बुध) 8/जमादिल ऊला को पहला मुकाबला हुआ। बावजूदेकि दुश्मन की फौज बारह हजार थी।[3]और यह कुल चार हजार फिर भी यह गालिब आये। मगर दूसरे दिन आठ हज़ार फौज की कुमक उनके मुकाबले में आगई जिसे उबैदुल्लाह बिन ज्याद ने रवाना किया था। आज बड़ी शिद्दत का मुकाबला रहा और रात आने तक जग जारी रही अब जखमियों की तादाद मुजाहदीन में बहुत ज्यादा थी।

तीसरे दिन दुश्मनों की कसरत और उनकी किल्लत से हालत दिगरगूँ (खराब) हो गई फिर भी जान तोड़ मुकाबला करते रहे मगर आखिर मे बुज़दिल दुश्मनों ने तीर बाराँ (बरसाये) का सिलसिल जारी कर दिया। चुनाँनचे एक तीर आकर सुलैमान बिन सुर्द खुजाई के लगा जिससे वह दरजः ए शहादत पर फाएज हुए उनके बाद अलमे लशकर मुसैयब बिन

---

[1]तबरी जि/7 पेज/70
[2]तबरी जि/7 पेज/74
[3]तबरी जि 7 पेज/75

नजबा ने लिया और बडी बहादुरी से कई हमले किए मगर आखिर वह भी शहीद हुए।[1]

उनके बाद अब्दुल्लाह बिन सअ्द बिन नफ़ील ने अलम सभाला और कबील ए अज्द की जमाअत का साथ लेकर मुक़ाबला शुरू किया। उस दौरान में मदाएन के तीन सवार आये जिन्हों ने इत्तेला दी कि मदाएन और बसरा से कुमक रवाना हो चुकी है मगर यहाँ हालत इतनी नाज़ुक हो चुकी थी कि उन मुजाहदीन की जिन्दगी में उस फ़ौज के पहुचने की उम्मीद न थी आखिर वह नौ वारिद (नये आने वाले) तीनो मुजाहदीन भी लड कर जाँ बहक तस्लीम हुए।[2] और उसके बाद अब्दुल्लाह बिन सअद और फिर अब्दुल्लाह बिन वाल भी शहीद हो गए।[3]

अब शाम हो गई थी इसलिए जग मौक़ूफ़ (बद) हो गई। नाम जद सरदारों में अब सिर्फ रिफ़ाआ बिन शद्दाद बाकी थे मगर अब हालत यह थी कि उनकी तादाद चार हजार से घट कर सिर्फ चन्द सौ बाकी रह गई थी और उनमे से भी अक्सर जख्मी और नाकाबिल जग थे लिहाजा उन्होंने मुकाबला जारी रखने में कामयाबी की सूरत न देखते हुए रात के वक्त अपनी कलील फ़ौज के साथ मुराजेअत (वापस) इख्तियार की।[4] और इस तरह कातिलाने हसैन[अ०स०] से बदला लेने की यह पहली कोशिश मन्जिले आखिर तक पहुची

[1]तबरी जि/7 पेज/76
[2]तबरी जि/7 पेज/77
[3]तबरी जि/7 पेज/78
[4]तबरी जि/7 पेज/80

उनतालीसवाँ बाब

खूने नाहक़ का इन्तेक़ाम

सुलैमान बिन सुरदे खुज़ाई की सरकर्दगी में जमाअते तव्वाबीन ने भी क़ातिलाने हुसैन[अ०स०] ही से इन्तेकाम लेना चाहा था। मगर चूकि उन्होंने अपने नुक़त–ए–नजर के मुताबिक बराहे रास्त हुकूमते यजीद के ख़िलाफ महाज़े जग क़ायम किया था और उसको अपनी क़लील तादाद की बिना पर कोई खास माद्दी नुक़सान न पहुचा सके लिहाजा इन्फेरादी हैसियत में क़ातिलाने हुसैन[अ०स०] से वह कोई इन्तेक़ाम न ले सके। फिर भी क़ुदरत इस क़त्ले नाहक के इरतिकाब करने वालो को ज्यादा अरसे तक मोहलत देने के लिए तैयार न थी चुनाँनचे मशीयते ईजदी (अल्लाह) ने इस काम के लिए मुखतार बिन अबी उबैदा सक़फ़ी को मुन्तखब किया।

ख़ानदानी एतेबार से वह रूऊसाये अरब में से थे। उनके वालिद अबू उबैदा इस्लामी फ़ुतूहात के सिलसिले में तसखीरे ईरान (ईरान पर कब्जे के लिए) से मुतअल्लिक अक्सर नबर्द आजमाईयो (जग) में शरीक हो चुके थे। चुनाँनचे ''जसर अबी उबैद'' की जग उन्ही के नाम से मन्सूब है और खुद मुख़तार अहलेबैते रसूल[स०अ०]के हमदर्द की हैसियत से खास तौर पर मशहूर हुए अगरचे जो खुतूत हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] को कूफ़े से भेजे गए थे उनमें उनके नाम की सराहत नजर नहीं आती, ताहम जब मुस्लिम बिन अकील कूफ़े पहुचे थे तो आपने मुखतार ही के घर पर क़याम किया था।[1]

उसके बाद जब इब्ने जियाद का कूफ़े पर तसल्लुत हुआ और फ़िज़ा मुकद्दर (खुराब) हुई तो उस मौक़े पर मुखतार कूफ़े में मौजूद नहीं थे बल्कि अपनी जमींदारी में किसी मौजअ् (घर) पर गए हुए थे। लिहाजा मुस्लिम उनके घर से मुन्तकिल होकर हानी के मकान पर क़याम पजीर हुए फिर हानी के गिरफ़्तार होने पर मुस्लिम को जिहाद के लिए निकलना पड़ा और बिल आख़िर

---

[1]तबरी जि/7 पेज/58, इरशाद पेज/211

मुस्लिम व हानी दोनों शहीद हुए। उसके बाद अम्र बिन हरीस ने रायते अमान (हथियार डाल देने पर अमान) उस एलान के साथ बलन्द किया कि जो इस झण्डे के नीचे आ जाएगा उसका जानो माल महफूज रहेगा। उस वक्त मुखतार कूफे वापस पहुँचे [1] और अम्र बिन हरीस के रायते अमान के नीचे आ गए लेकिन उनकी तरफ से हुकूमते कूफा इस दर्जा बदज़न थी कि उन्हें उस झण्डे के नीचे पहुँच जाने पर भी अमान न मिल सकी। इब्ने जियाद ने अपने दरबार में बुलाकर अपनी छड़ी से उनके चेहरे पर ऐसी जरब लगाई कि उनकी आँख को सदमा (तकलीफ) पहुँच गया। और फिर उन्हे कैद खाने भिजवा दिया। चुनानचे जब हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की शहादत वाकेअ हुई तो वह कूफे में मुकैयद (कैद) थे और गालिबन कत्ल भी कर दिए जाते मगर उनकी बहन अब्दुल्लाह बिन उमर की जौजा थीं और अगरचे अब्दुल्लाह बिन उमर भी शुरू में यजीद की बैयत से इन्कार करते थे। मगर शहादते हुसैन[अ०स०] पर मुत्तला होने के बाद उनका हौसला पस्त हो चुका था और वह हुकूमते यजीद की तरफ़ झुकने लगे थे।

उधर यजीद आम तौर पर आलमे इस्लामी की बेरहमी (गुस्से) और बेजारी से मुतअस्सिर होकर हर ऐसे शख्स की इन्तेहाई दिल जूई (जीतने) और मुराआत (आसानियाँ) करना चाहता था कि जो कम अज कम उसकी हुकूमत के खिलाफ़ आवाज बलन्द करने से बाज रखा जा सकता हो लिहाज़ा इस मौके पर अब्दुल्लाह बिन उमर की किसी बात को रद करके उनको अपने से बरगश्ता खातिर (दूर) करना किसी तरह मुनासिब न समझता था। चुनाँनचे अब्दुल्लाह बिन उमर ने मुखतार की बहन के इन्तेहाई इसरार से मजबूर होकर यजीद को मुखतार की रिहाई के लिए खत लिखा और यज़ीद ने फौरन उबैदुल्लाह बिन जियाद को ताकीदी हुक्म भेजा कि मुखतार को रिहा कर दिया जाए।

इस तरह इब्ने जियाद उनको रिहा करने पर मजबूर हो गया मगर शर्त कर दी कि तीन दिन के अन्दर कूफा छोड देना वरना तुम्हारा खून मुबाह (जाएज) होगा चुनाँनचे तीन दिन के अन्दर मुख़तार कूफे से हिजाज की तरफ़ रवाना हो गए।[2]

---

[1] तबरी जि/7 पेज/59

[2] तबरी जि, 7 पेज/59

एक साल से ज्यादा वह हिजाज़ में मुख़तलिफ मकामात पर गर्दिश करते रहे और उस दौरान में वह बराबर कहते रहते थे कि मुझे हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के खून का इन्तेकाम लेना है। जो मैं लेकर रहूँगा[1] जब दमिश्क़ की फ़ौजों ने हसीन बिन नुमैर की सरकर्दगी में अब्दुल्लाह बिन जुबैर के मुक़ाबले में फौज कशी की और मक्क ए मुअज्जिमा का मुहासिरा किया तो मुख़तार उस वक्त मक्के मे थे और 3/रबीउल अव्वल सन 64 हिजरी को जिस दिन खान ए काबा में आग लगाई गई और शाम की फौजें शहरे मक्का में दाखिल हुई तो मुखतार ने अहले शाम के मुकाबले मे तकरीबन तने तन्हा जुरअत व हिम्मत के साथ शदीद जग की।[2]

यहाँ तक कि अहले शाम को शिकस्त हुई उसी दौरान में हलाकते यजीद की खबर आई और शाम की फौजे वापस गईं। मुखतार उसके बाद भी पाँच महीने से कुछ ज्यादा अब्दुल्लाह बिन जुबैर के पास मक्क ए मुअज्जिमा में मुकीम रहे।

इतने अरसे में कूफे की हुकूमत में इन्कलाब हो चुका था। अहले कूफा इब्ने जियाद के नाएब हुकूमत अम्र बिन हरीस को निकाल चुके थे और आरजी (वक्ती) तौर पर आमिर बिन मसऊद को हाकिम बना दिया था जिसने अब्दुल्लाह बिन जुबैर की इताअत कर ली और अहले कूफ़ा से इब्ने जुबैर की बैयत तस्लीम कराई। मगर अभी तक कूफे में नज्मो नस्क (कानून) पूरे तौर पर क़ायम नहीं होने पाया था मुखतार को यह वक्त कातिलाने इमाम हुसैन[अ०स०] से इन्तेकाम के मुतअल्लिक अपने मन्सूबे की तकमील के लिए बहुत मुनासिब मालूम हुआ वह कूफे की तरफ रवाना हो गए[3] और वहाँ पहुच कर मुमताज अफरादे शिया से अपनी मुहिम के बारे मे तबादिल–ए–खयाल शुरू कर दिया। और बहुत से अशखास उनके साथ मुत्तफिकुर्राय (राजी) हो गए।[4]

मगर जब सुलैमान बिन सुर्द खुजाई जमाअते तव्वाबीन के साथ शामियों के मुकाबले को निकले, उस वक्त कूफे में मुखतार को भी कैद करके दाखिले जिन्दाँ कर दिया गया।[5]

---

[1]तबरी जि/7 पेज/62
[2]तबरी जि/7 पेज/63
[3]तबरी जि/7 पेज/63
[4]तबरी जि/7 पेज/64
[5]तबरी जि/7 पेज/65

सुलैमान की शहादत के बाद जब उनकी जमाअत के बाकी मान्दा अफराद रिफाआ बिन शद्दाद के साथ कूफे वापस हुए तो मुखतार कैद खाने में थे।[1]

आखिर को अब्दुल्लाह बिन उमर ने फिर अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर और इब्राहीम बिन मोहम्मद बिन तलहा को जो उस वक्त अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर की तरफ से कूफे का हाकिम था मुखतार की रिहाई के लिए खत लिखा जिसके बाद वफादारी की कसमें लेने के बाद मुख़तार को रिहा कर दिया गया।

उसके बाद अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर ने उन दोनो को माज़ूल (हटा दिया) कर दिया और अब्दुल्लाह बिन मुतीअ को कूफे का गवर्नर मुकर्रर किया।[2] जो रोज़े पन्जशम्बा (जुमेरात) 25/माहे रमज़ान सन 65 हिजरी को कूफे में वारिद हुए।[3]

अब मुख़तार के साथ बहुत से मुमताज़ साहिबाने अज़्मो हिम्मत मुत्तफिकुर्राए (एक राय) हो चुके थे मगर मालिके अशतर के फरजन्द इब्राहीम की एक अहम शख़सियत थी जिनका मुत्तहिद बनाना इस मुहिम के लिए जरूरी महसूस होता था। चुनाँनचे इब्राहीम को मकसद से पूरे तौर पर आगाह करके उन्हे भी मुत्तफिक बना लिया गया जिससे मुखतार की तहरीक को बडी कूव्वत हासिल हुई।[4]

अब बराबर मुखतार इब्राहीम के यहाँ आमदो रफ्त (आना जाना) रखने लगे रोजाना शाम के वक्त इब्राहीम उनके यहाँ जाते थे और रात गए तक तबादिल ए खयाल करते रहते थे बिल आखिर इस अम्र (बात) पर इत्तेफाक हुआ कि शबे पन्जशम्बा (जुमेरात) 14/रबीउल अव्वल सन 66 हिजरी को अमली इकदामात का आगाज कर दिया जाए।[5]

उन लोगों ने बाहम यह राय कायम की कि हमको क़ातिलाने हुसैन[अ0स0] से इन्तेकाम लेने के लिए दमिश्क जाने की जरूरत नहीं बल्कि हकीकतन क़ातिलाने हुसैन[अ0स0] चूँकि यहीं कूफे मे मौजूद हैं लिहाजा उनसे हमको बदला लेना चाहिए लेकिन इस सूरत मे इब्ने ज़ुबैर की हुकूमत से उनका तसादुम

---

[1] तबरी जि/7 पेज/80
[2] तबरी जि/7 पेज/94
[3] तबरी जि/7 पेज/95
[4] अख़बारूत तुवाल पेज/282-283, तबरी जि/7, पेज/98-99
[5] तबरी जि 7 पेज/ 00

लाजमी था। इसलिए कि कातिलाने इमाम हुसैन[अ०स०] का बराहे रास्त तअल्लुक़ अगरचे हुकूमते शाम से था। मगर वह उस वक्त कूफ़े के बाशिन्दे थे। उनसे इन्तेक़ाम लेन के मानी थे क़ानून को अपने हाथ मे लेना और जाहिर है कि हुकूमते वक्त को इस सूरत में अपने निजाम के तहफ्फुज की खातिर उन अफराद की हिफ़ाजत करना थी जो उस शहर के बाशिन्दे थे लिहाज़ा मुख़्तार और उनकी जमाअत के लिए कातिलाने हुसैन[अ०स०] से अपने हस्बे दिलख्वाह (अपनी मर्जी से) इन्तेकाम लेना मुमकिन ही न हो सकता था जब तक कि वह कूफे की मौजूदा हुकूमत को खत्म करके एक खुद मुख़तार हुकूमत कायम करने में कामयाब न हो जाते चुनाँनचे इस नजरये के मातहत उनका हुकूमते इब्ने जुबैर से तसादुम नागुजीर (फ़साद यक़ीनी था) हुआ और नतीजा अब्दुल्लाह बिन मुतीअ् के ताबे मुक़ाबला न लाकर फरार इख़्तियार करने पर कूफे में मुखतार की हुकूमत क़ायम हो गई।

इस तरह मुखतार दो हुकूमतों के गैजो गजब का मरकज बन गए। एक तरफ हुकूमते शाम जिससे बराहे रास्त कातिलाने इमाम हुसैन[अ०स०] का तअल्लुका था और दूसरी तरफ इब्ने जुबैर की हुकूमत जो कूफे में अपने तसल्लुत (इकतेदार) के लिए मुखतार से जंग करना जरूरी समझती थी

इस सूरते हाल के देखने के बाद ही हम उन इलजामात की हकीक़त के मुतअल्लिक़ बहुत कुछ समझ सकते है जो मुखतार के मुतअल्लिक़ आम तवारीख मे दर्ज कर दिए गए हैं मसलन यह कि वह इल्मे गैब के मुद्दई (चाहते) थे, वह कहते थे कि मुझ पर जिब्रील आते हैं उन्होंने मुहम्मदे हनफिया की महदवियत का एलान करके गलत तौर पर अपने को उनका नुमाइन्दा बताया और उनकी तरफ से जाली खत बनाकर इब्राहीम बिन मालिके अशतर को अपना हम खयाल बनाया वगैरह वगैरह। हम सझते हैं कि यह सब हुकूमतों की तरफ से उनके खिलाफ प्रोपिगन्डा था जिसकी मिसालें बराबर तारीख में हमारे सामने आती रहती हैं। यहाँ तक कि अब्दुल्लाह बिन जुबैर को यज़ीद और उसके हवा ख़्वाह (साथी) मुलहिद (बेदीन) के नाम से याद करते थे। फिर अगर मुखतार के ख़िलाफ इस क़बील (तरह) के अलफाज़ मिलते हैं तो उन्हें क्योंकर हकीकत समझा जा सकता है

हमारे नजदीक तो इन इलजामात का गलत होना उन अफ़राद ही पर नजर करने से साबित हो जाता है जो मुखतार के साथ थे और बराबर रहे

जैसे कि अबू तुफैल आमिर बिन वासिला बिन असका कनानी कि जो सहाबि–ए–रसूल थे।[1]

इसी तरह उसमान नहदी और फिर रिफाआ बिन शद्दाद, यजीद बिन अनस, अब्दुर्रहमान बिन सईद बिन कैस, वरका बिन आजिब और अहमर बिन शुमैत वगैरह। यह सब साहिबाने बसीरत और दीनदार लोग थे

इब्राहीम बिन मालिके अशतर के मुतअल्लिक यह मान भी लिया जाए कि उन्हे गलत तहरीर दिखला कर मुवाफिक बना लिया गया था तो बाद में मुखतार के साथ तकरीबन हर वक्त रहने के बावजूद उन्हे मुखतार के अकाएद व आमाल पर इत्तेला न होती और इत्तेला होने के बाद वह मुन्हरिफ न हो जाते? फिर अगर फर्ज किया जाए कि उन्हें हर वक्त साथ रहने के बावजूद उन बातों की इत्तेला नहीं हुई तो आखिर उन रावियों को उन की इत्तेला क्योंकर हो सकी जो मुखतार के साथ वैसे रवाबित भी न रखते थे।

मुखतार का खुलूस तो इससे जाहिर है कि हुकूमत पाने के बाद भी मुखतार और उनके साथियों ने अपने नस्बुल ऐन (मकसद) को फरामोश नहीं किया और चुन चुन कर उन्होंने कातिलाने हुसैन[अ०स०] को कत्ल करना शुरू कर दिया। जिस तरह उनका इम्तियाजी नारा था। 'या लिसारातिल हुसैन"[2] उसी के मुताबिक़ उनका अमल जाहिर हुआ। उसकी तकमील इस तरह हो गई कि एक तरफ़ तो उबैदुल्लाह बिन जियाद शाम की फौज को लेकर मूसल पर हमला आवर हुआ मुखतार ने उसके मुकाबले के लिए तीन हजार की जमियत के साथ यजीद बिन अनस को भेजा[3] उस फौज ने दुश्मन के लशकर को जंग मे शिकस्त भी दे दी[4] मगर ऐन मारिक ए जग में यजीद बिन अनस की जो पहले से बीमार थे वफात हो गई और वरका बिन आजिब ने फौजे दुश्मन की कसरत और अपनी किल्लते तादाद के सबब अपने सरदार के इन्तेकाल के बाद इस मुहिम को कूफे से मजीद कुमत मँगवाने तक मुलतवी करने का फैसला किया।[5]

---

[1] सन 100 हिजरी मे वफात पाई। असहाबे रसूल[स०अ०] मे सबके आखिर में उन्ही की वफात हुइ है सही मुस्लिम जि/2 पेज 258

[2] तबरी जि/7 पेज/120

[3] तबरी जि/7 पेज/113

[4] तबरी जि/7 पेज/114

[5] तबरी जि/7 पेज/115

मुखतार को यह इत्तेला हुई तो उन्होंने इब्राहीम बिन मालिके अशतर को सात हजार फौज के साथ वरका की मदद के लिए मूसल की तरफ रवाना किया। कूफे के सरदारों ने जो तकरीबन सब ही वह लोग थे जो हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के मुकाबले मे जग मे शिकरत कर चुके थे उस मौके को गनीमत जान कर कि इब्राहीम कूफे से बाहर गए हुए हैं और मुखतार तक़रीबन अकेले हैं मुत्तफिक़ होकर बगावत कर दी और मुखतार से जग शुरू कर दी। उनमें हस्बे ज़ैल अफ़राद के नाम नुमायाँ तौर पर मिलते हैं शब्स बिन रबीअ् शिम्र जिल जौशन मुहम्मद बिन अशअस, जहर बिन कैस, हिजार बिन अबजर, यजीद बिन हारिस बिन रवीम शीबानी, अम्र बिन हज्जाज जुबैदी।[2] इनमें से कोई भी नाम वाक़ेआते करबला का मुतालिआ कर चुकने वालों के लिए अजनबी नहीं हैं

मुखतार ने अपने साथ वाली जमाअत के साथ उन लोगों का मामूली तौर से मुकाबला जारी रखा और एक कासदि को इब्राहीम बिन अशतर के पास भेज कर इत्तेला दी कि वह अपनी फौज के साथ फौरन कूफे की तरफ वापस आये, चुनाँनचे तीसरे दिन वह अपने लशकर के साथ कूफ़े वापस आ गए [3]

अब दुश्मनाने आले रसूल की सरकूबी का हगाम आ गया था। चुनानचे गिरफ्तारियों का सिलसिला शुरू हो गया।

पहला ही पाच सौ आदमियों का जत्था जो गिरफ्तार होकर मुखतार के पास पेश हुआ तो मुखतार ने कहा। उनमें से जो जो कत्ले हुसैन[अ०स०] के मौके पर करबला मे मौजूद हो उन्हें मुझे बताते जाना, उनकी मैं जान बख़्शी नहीं करूँगा बाकी सबको छोड़ दूँगा चुनाँनचे जिन जिनके बारे मे यह इलजाम साबित हुआ वह कत्ल कर दिए गए। बाकी सबको इकरारे वफादारी लेने के बाद रिहा कर दिया।[4]

उसके बाद मुखतार की जानिब से शहर मे निदा दी गई कि जो अपने घर का दरवाजा बन्द करके बैठ जाए उसे अमान होगी सिवा उस शख्स के

---

[1] तबरी जि/7 पेज/116
[2] तबरी जि, 7 पेज/116-117
[3] तबरी जि/7 पेज/118
[4] तबरी जि/7 पेज/121

जो आले रसूल[स०अ०] के खून में शरीक हुआ हो।[1] यह रोजे चहार शम्बा (बुध) 24/ज़िलहिज्जा सन 66 हिजरी का जिक्र है।[2]

अबू उमरा कियान पुलिस के अफसर थे चूँकि कातिलाने हुसैन[अ०स०] भी अब घरो में छुप गए थे इसलिए अबू उमरा मामूर हुए कि एक हजार मजदूर साथ लेकर जायें और जो जो मजालिमे करबला में शरीक थे उनके घरो को मिसमार करायें क्योंकि अबू उमरा उन लोगो से खूब वाकिफ़ थे। चुनाँनचे उन्होंने बकसरत घर मुन्हदिम कराए और इस जैल में बहुत से दुश्मनाने अहले बैत क़त्ल हुए।[3]

अब बड़े बड़े नुमायाँ अफराद जो क़ातिलाने इमाम हुसैन[अ०स०] में से थे तलवार के घाट उतार दिए गए। जैसे शिम्र बिन जिल जौशन।[4] अब्दुल्लाह बिन असद जहनी। मालिक बिन नसबदी, हमल बिन मालिक महारबी[5] जियाद बिन मालिक इमरान बिन खालिद। अब्दुर्रहमान बिन खशकारा बिजली, अब्दुल्लाह बिन कैस खूसलानी अब्दुल्लाह बिन सलखब,अब्दुर्रहमान बिन वहब, उसमान बिन खालिद जहनी, बशर बिन सौत काबिजी।[6] खूली बिन यजीद असबही,[7] उमर बिन सअद [8]हकीम बिन तुफैल ताई सानबसी,[9] जैद बिन रिक़ाद जहनी। हुरमुला बिन काहिल असदी, अम्र बिन सबीह सदाई।[10] और कैस बिन अशअस।[11]

कूफे की मुहिम से फरागत के बाद मुखतार ने इब्राहीम को फिर इब्ने जियाद से जंग के लिए रवाना किया।[12] मूसल से पॉच फरसख पर मकाम ख़ाजर मे जंग हुई शदीद मुक़ाबले के बाद शाम की फौज को शिकस्त हुई और खुद इब्ने जियाद इब्राहीम के हाथ से क़त्ल हुआ। इसके अलावा हसीन

---

[1]तबरी जि/7 पेज/121
[2]तबरी जि/7 पेज/124
[3]अख़बारूत तुवाल, पेज 286
[4]तबरी जि/7 पेज/122
[5]तबरी जि/7 पेज 124
[6]तबरी जि/7 पेज/125
[7]तबरी जि 7 पेज 126
[8]तबरी जि 7 पेज 127
[9]तबरी जि/7 पेज/128
[10]तबरी जि/7 पेज/129
[11]तबरी जि/7 पेज/139
[12]अख़बारूत तुवाल, पेज/138

बिन नुमैर सकूनी और सरजील बिन जिल कलाअ् जो शाम के दो मशहूर सरदार थे वह भी इस जग मे मारे गए [1]इब्राहीम ने इब्ने जियाद का सर काट कर मुखतार के पास भेजा और मुखतार ने उसे मुहम्मद बिन हनफिया के पास भेज दिया।[2] उसके बाद इब्राहीम ने मुसल और उसके तमाम अतराफ पर तसल्लुत कायम करके उम्माल (काम करने वाले) मुकर्रर किए और खुद नसीबीन में जाकर क़याम किया।[3] मुखतार अब कूफे मे अकेले रह गए।

इब्ने ज़ुबैर को मुखतार से बिनाये मुखासिमत (नफ़रत) क़ायम हो चुकी थी और इराक में बसरा पर उनका तसल्लुत कायम था। उस दौरान में उन्होंने बसरा के मकामी हाकिम को जो ज्यादा उनके नजदीक काबिले इतमीनान न था माजूल (हटा कर) करके अपने भाई मुसअब बिन ज़ुबैर को बसरा में हाकिम मुकर्रर किया मुमकिन है उसी वक्त उसका मकसद मुखतार के मुकाबले में मुहिम का सर अन्जाम देना हो।

इधर कूफे से जो कातिलाने इमाम हुसैन[अ०स०] मुखतार के हाथों बच कर किसी तरह निकले जैसे शबस बिन रबीअ मुहम्मद बिन अशअस, मर्रा बिन मुन्कज अबदी, सनान बिन अनस और अब्दुल्लाह बिन उरवह खसअमी वगैरह वह सीधे मसअब बिन ज़ुबैर के पास बसरा पहुचे।[4] और उन्होंने भी उसको मुखतार से जग पर आमादा किया खुसूसियत के साथ शबस बिन रबीअ् और मुहम्मद बिन अशअस ने बडे मुबालगे (गलत बयानी) के साथ अपनी मजलूमी के गलत अफसाने सुनाकर इलहाह व जारी (गिड़गिडाने, रोने) से काम लिया और कूफे पर हमला करने की तरगीब (आमादा) दी।[5]

देनवरी का बयान है कि दस हजार अहले कूफा रफ्ता रफ़्ता निकल कर बसरा पहुँच गए और उन सबने मुहम्मद बिन अशअस की सरकर्दगी में मुसअब को कामयाबी का यकीन दिलाया।[6]

उसी दौरान में एक वाकेया यह भी पेश आया कि अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर ने मक्क–ए–मुअज्जिमा में मुहम्मद बिन हनफ़िया, उनके मुतअल्लकीन (रिश्तेदार) और उन कूफ़े के आदमियो को जो मक्के में थे मुक़ैयद (क़ैद) कर दिया। और

---

[1] अख़बारूत तुवाल, पंज / 288

[2] तबरी जि / 7 पेज 144–145

[3] अख़बारूत तुवाल, पेज 289

[4] तबरी जि / 7 पेज / 124–128 –129–130 व 146

[5] तबरी जि / 7 पेज / 146–147

[6] अख़बारूत तुवाल, पेज / 295

एक मुद्दत मुक़र्रर कर दी कि अगर उस वक्त तक उन्होंने बैयत न की तो वह सब ज़िन्दा जला दिए जायेंगे मुहम्मदे हनफ़िया ने एक क़ासिद के ज़रिये से इसकी इत्तेला मुख़तार को दी। मुख़तार ने कूफ़े से फ़ौज रवाना की जिसने मक्के जाकर मुहम्मदे हनफ़िया और उनके साथ वालो को क़ैद से रिहाई दी। यह लोग तो इब्ने ज़ुबैर का ख़ातमा कर देने पर आमादगी ज़ाहिर कर रहे थे मगर मुहम्मद हनफ़िया ने हरम में ख़ूँरेज़ी से सख़्ती के साथ मुमानिअत की इसलिए यह लोग मुहम्मदे हनफ़िया को एक महफ़ूज़ जाएपनाह तक पहुचा कर वापस आ गए।[1]

बिल आख़िर मुसअब बिन ज़ुबैर ने ग़ालिबन अपने बड़े भाई अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर की हिदायत ही की बिना पर एक लशकरे गिराँ (बड़े लश्कर) के साथ कूफ़े पर हमला कर दिया। मुख़तार ने भी मुक़ाबले की तैयारी की मगर अब मशीयते इलाही का फ़ैसला कुछ और था। मुख़तार अपने मक़सदे हयात को पूरा कर चुके थे। उनकी ताक़त भी उस वक्त यकजा (एक जगह) न थी क्योंकि इब्राहीम बिन मालिके अशतर नसीबैन में थे और इस सूरते हाल की उन्हे कोई इत्तेला न थी मुसअब के पास फ़ौज बहुत ज्यादा थी और मुहम्मद बिन अशअस वग़ैरह रूअसाए अहले कूफ़ा भी साथ थे इसलिए ख़ुद कूफ़े के बहुत से लोग जो दबे हुए थे वह भी उनका साथ देने के लिए उठ खड़े हुए। नीज़ मुख़तार के ख़िलाफ़ एक तबक़ावाराना (नस्ल परस्ती) सवाल अरब और ग़ैर अरब का उठा दिया गया था और यह कह कर कि मुख़तार ने अजमियों (ईरानी) को अरबों पर मुसल्लत कर दिया है तमाम अरबों के जज़बात को मुख़तार के ख़िलाफ़ भड़का दिया गया।[2]

ताहम मुख़तार ने अपने पास के लशकर के साथ कई दिन बड़ी बहादुरी के साथ मुसअब से जंग की जिसके दौरान में उनके साथ के कई मुमताज़ सरदार जैसे अहमर बिन शुमैत और अब्दुल्लाह बिन कामिल वग़ैरह शहीद हो गए[3]

इस जंग में फ़ौजे मुख़ालिफ़ में से भी एक शख़्स जो दुश्मनाने अहले बैत में नुमायाँ हैसियत रखता था यानी मुहम्मद बिन अशअस क़त्ल हुआ।[4]

---

[1]तबरी जि 7 पेज 136
[2]अख़बारूत तुवाल पेज/295
[3]तबरी जि/7 पेज/148-149
[4]अख़बारूत तुवाल पेज/297 तबरी जि/7 पेज/151

आखिरूल अम्र मुखतार के तमाम बावफा साथी शहीद, अवामुन्नास (लोग) मुन्तशिर और वह खुद किले के अन्दर महसूर हो गए। फिर चन्द जाँबाजों के साथ निकल कर उन्होंने आखरी बार बडी पामर्दी से जग की और ऐन मारिके–ए–जग में 14 माहे रमजान सन 67 हिजरी को सरसठ 67 बरस की उम्र मे जान अपनी जान आफरीं के सिपुर्द की।[1]

अदावत और कसावत की हद यह थी कि उनके बाद उनकी बीवी उमरा बिन्ते नोमान बिन बशीर अन्सारी को भी जिन्हों ने मुखतार को बुरा कहने से इन्कार किया मजम ए–आम में क़त्ल किया गया।[2]

यकीनन खुश किसमत है वह इन्सान जो मशीयत के किसी मकसद की तकमील का जरिया बने। मुखतार उन्हीं खुश किसमत इन्सानो में थे। उनकी जात के साथ कुदरत ने अपना एक अमली निजाम वाबस्ता किया था और इस निजाम की तकमील के साथ उनकी जिन्दगी भी ख़त्म हो गई। अब वह ख़त्म नहीं हो गई बल्कि जाविदानी तौर पर बाकी है।

हरगिज नमीरद ऑकि दिलश ज़िन्दा शुद ब–इश्क़
सब्त अस्त बर जरीद ए-आलम दवामे मा।

[1]तबरी जि/7 पेज/155 व 161
[2]तबरी जि/7 पेज/158, अख़बारूत तुवाल पेज/300

चालीसवाँ बाब

उमवी हुकूमत का अन्जाम

तारीखी हकीकत है कि जब किसी कौम को इस हद तक गलब–ए–इकतेदार हासिल हो जाता है कि उसके साहिबाने हल्लो अक्द (हाकिम वज़ीर वगैरह) के लिए महज़ जरूरियाते जिन्दगी ही नहीं बल्कि फ़रावानी के साथ सामाने तअय्यश (ऐश) भी फराहम हो सके तो उसमें ऐश पसन्दी, जाह तलबी, (हवस) कमीना तबई (तबीयत) खुद गरजी नाआकिबत अन्देशी (सूझ–बूझ की कमी), सहेल अंगारी (आराम तलबी) और नतीजतन बुजदिली पैदा हो जाती है जैसा कि कुरआने मजीद में इरशाद हुआ है:

"وَ اِذَآ اَرَدْنَآ اَنْ نُّهْلِكَ قَرْيَةً اَمَرْنَا مُتْرَفِيْهَا فَفَسَقُوْا فِيْهَا فَحَقَّ
عَلَيْهَا الْقَوْلُ فَدَمَّرْنٰهَا تَدْمِيْرًا"

यानी "जब हम किसी आबादी को बरबाद करना चाहते हैं तो उसके दौलत मन्दो की तादाद में इजाफ़ा कर देते हैं वह फ़िस्को फ़ुजूर (हराम कामों) में मुबतिला हो जाते हैं। फिर उन पर हमारा कानूने फ़ितरत मुन्तबक़ (लागू) हो जाता है और हम उसको तबाह व बरबाद कर देते हैं।'

रसूल अल्लाह[स0अ0] के बाद से दौरे यजीद तक बनी उमैया की माद्दी तरक्कियाँ किसको मालूम नहीं दौलत व सरवत, वुसअते (बराबरी) ममलिकत और हशम व खदम (नौकर चाकर) के लिहाज से वह कैसर व किसरा (ईरानी शहनशाहियत) की हमसरी (बराबरी) करते नजर आते थे लेकिन नफ्स परस्ती और तन परवरी के एतेबार से उनसे भी कहीं बढे हुए थे चुनाँनचे क़ानूने फ़ितरत के मुताबिक़ उनके इन्हितात और जवाल का वक्त यूँ ही करीब आ चुका था उस पर ना आकिबत अन्देश यजीद ने नश–ए–सलतनत व इमारत से सरशार होकर इमाम हुसैन[अ0स0] को आपकी रूहानी अज़मत और हक्कानित की नाक़ाबिले तस्खीर, (कभी न खत्म होने वाली) ताक़त का खयाल किए बग़ैर शहीद कर दिया। उसका नतीजा जाहिर था और वह यह कि मुतजलजिल

(डॉवा डोल) उमवी निजाम तेजी के साथ तबाही और बरबादी के आखरी दर्जे तक पहुच गया।

उधर अब्दुल्लाह बिन जुबैर खूने हुसैन[अ०स०] का वास्ता दिला कर खुल कर यजीद के मुकाबिल आ गए इधर अहले मदीना जिन्हो ने चुपचुपाते इमाम हुसैन[अ०स०] को शहीद होते देखा था मुखालिफ हो गए तव्वाबीन का गिरोह अलाहिदा उठ खड़ा हुआ। मुख़तार ने एक तरफ़ अलमे मुखालिफ़त बलन्द किया फिर जैद बिन अली बिन हुसैन[अ०स०] भी सन 118 हिजरी में खूने हुसैन[अ०स०] के इन्तेकाम ही के तालिब होकर उठे।[1] और अगरचे शहीद कर डाले गए मगर एक मुस्तकिल जमाअत की तशकील कर गए। जो जालिम हुकूमत के लिए ख़तरा बनी है। बनी अब्बास अलाहिदा खूने मजलूम का बदला लेने के नाम से बनी उमैया के मुक़ाबिल में आ डटे।[2]

यह समझना बिल्कुल गलत होगा कि इन तमाम तहरीकों में खुलूस मुजमर था बल्कि इन में से बाज में सियासी करवटें थीं और इसी लिए औलादे इमाम हुसैन[अ०स०] का उनमें जर्रा बराबर हाथ न था। तारीख बतलाती है कि औलादे इमाम इन्केलाब कुनिन्दगान (बरपा करने वाले) से एलाहिदा रहते हुए मना करते रहे मगर कानून फितरत को पूरा होना जरूर था, और वह पूरा होकर रहा।

बहरतौर जब अबू मुस्लिम खुरासानी ने इन्तेकामे खूने हुसैन[अ०स०] के एलान के साथ मरू में सियाह झण्डा निकाला तो हजारों आदमी उसके नीचे जमा हो गए और बिल आख़िर बनी उमैया का आखरी बादशाह मरवान बिन मुहम्मद जगे जाब मे मारा गया।[3] और इसी के साथ उमवी हुकूमत का हमेशा के लिए खात्मा हो गया।

---

[1] इरशाद पेज 286

[2] इस तहरीक का आगाज मुहम्मद बिन अली बिन अब्दुल्लाह बिन अब्बास ने सन 100 हिजरी के आखिर या सन 101 हिजरी के शुरू में किया 3 तबरी जि/8 पेज 135 अखबारूत तुवाल पेज 318 सन 104 हिजरी मे अबुल अब्बास (सुफ्फाह) अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद बिन अली की विलादत हुई तबरी जि 8, पेज 174 सन 127 में मरवान बिन मुहम्मद तख़्ते हुकूमत पर बैठा तबरी जि 9 पेज 54 सन 129 हिजरी में दावते तबलीग एलान के साथ शुरू हुई तबरी जि/9, पेज/83

[3] तबरी जि/9, पेज/138

इकतालीसवाँ बाब

बनी अब्बास की सल्तनत

शहादते इमाम हुसैन[अ0स0] के कुछ अरसे के बाद जो बनी अब्बास ने दावत का आगाज किया और रफ्ता रफ्ता उसमें तरक्की हुई यहाँ तक कि अबू मुस्लिम खुरासानी ने खुरासान में कामयाबी हासिल की और ईरान से इराक़ तक तमाम ममलिकते इस्लामी में बनी उमैया के ख़िलाफ हरकत पैदा हुई तो यह सब आले रसूल[स0अ0] की हमदर्दी के नाम से था।

अगरचे उनकी सियाह पोशी का शोहदा–ए–करबला के गम से तअल्लुक न था बल्कि वह अपनी इस तहरीक के बानी मुहम्मद बिन अली बिन अब्दुल्लाह बिन अब्बास की वफ़ात पर इजहारे रंजो मलाल[1] और फिर उनके फ़रजन्द और उस जमाअत के सरगिरोह इब्राहीम बिन मुहम्मद के क़त्ल किए जाने पर सोगवारी का मुजाहरा था [2] ताहम अक्सर नावाक़िफ़ यही समझते रहे कि यह भी गमे इमाम हुसैन[अ0स0] की अलामत थी और इस खयाल को इसलिए और तकवियत पहुँची कि उमवी खलीफा मरवान के कत्ल के बाद कूफे की मस्जिदे जामे में जो उनका सियाह पोश इज्तेमा हुआ वह 10/मुहर्रम सन 132 हिजरी यानी अशरे के दिन था।[3] जो शहादते इमाम हुसैन[अ0स0] की तारीख है।

फिर लोगो को अहलेबैत और इतरते रसूल[स0अ0] के फ़ज़ाएल और हुकूक़ ही का वास्ता देकर उस तहरीक से वाबस्ता किया गया। चुनाँनचे एलाने दावत के बाद उनके एक खास कारकुन अबूदाऊद खालिद बिन इब्राहीम ने एक मजमे के सामने जो तकरीर की वह हस्बे जैल थी।

"क्या तुम में किसी को इसमें शक है कि अल्लाह सुबहानहू ने हजरत मुहम्मद मुस्तफ़ा[स0अ0] को अपनी रिसालत के लिए मुन्तखब किया और तमाम खल्क की तरफ़ मबऊस (भेजा) किया? (सबने कहा नहीं, इसमें कोई शक नहीं)

---

[1]अख़बारूत तुवाल पेज/324
[2]अख़बारूत तुवाल पेज/243
[3]अख़बारूत तुवाल पेज/324

अच्छा तो क्या इसमे कोई शक है कि अल्लाह ने उन पर अपनी किताब नाजिल की जिसे जिब्रीले अमीन लेकर उतरे और उसमे अहकामे हलालो हराम का बयान है? (सबने कहा बेशक) फिर क्या इसमे शक है कि आप दुनिया से जब तशरीफ ले गए तो पूरे तौर से रिसालत के फ़र्ज को अन्जाम देने के बाद? (सबने कहा नही कोई शक नहीं?) अच्छा वह इल्म जो आप पर उतरा था क्या आप ही के साथ उठ गया या आपके बाद बाकी रहा? (सबने कहा जरूरी बाकी रहा।) जब बाकी रहा तो क्या वह आपकी इतरत और अहलेबैत के सिवा और के पास हो सकता है? (सबने कहा नहीं।) तो फिर अगर ऐसे इम्कानात पैदा हों कि हुकूमते इस्लामिया अहलेबैत व इतरते रसूल[स0अ0] में आ जाए तो क्या तुम में से कोई यह पसन्द करेगा कि वह उनके सिवा किसी दूसरे तक पहुच जाए?"

(सबने कहा नहीं। हम में से कोई इसको पसन्द न करेगा)[1]

सन 130 हिजरी में तरीद बिन शकीक सलमी ने नस्र बिन सियार से जग की तैयारी के सिलसिले में अपनी एक तकरीर में कहा

'कबील–ए–मुजिर के लोग आले रसूल[स0अ0] के कातिल और बनी उमैया के आवान व अन्सार (मददगार) हैं।"[2]

बैयत जो लोगों से ली जाती थी वह किसी खास बादशाह का नाम लेकर नही बल्कि यह कह कर कि "ابايعكم على كتاب الله عزوجل وسنة نبيه والطاعة للرضا من اهل بيت رسول الله"

'मैं तुमसे बैयत लेता हूँ किताबे खुदा और सुन्नते रसूल[स0अ0] और अहलेबैते रसूल[स0अ0] के रिजा (पसन्दीदा शख्स) की इताअत पर '[3] कहतबा ने अहले खुरासान को मुखातब करके जो तकरीर की उसमे कहा कि "बनी उमैया ने इतरते रसूले खुदा[स0अ0] में से उन अफराद को जो नेकूकार और परहेजगार थे खौफो दहशत में मुबतिला किया। अब अल्लाह ने तुम्हें मुकर्रर किया है कि तुम्हारे ज़रिये बनी उमय्या से उनका इन्तेकाम ले।[4]

11/मुहर्रम सन 132 हिजरी को इराक में हाशमी सलतनत के कयाम का एलान किया गया तो अबू सलमा हफ्स बिन सुलैमान जो दोस्ताने अहलेबैत में

---

[1]तबरी जि 9 पेज/87
[2]तबरी जि 9 पेज/97
[3]तबरी जि/9. पेज/97
[4]तबरी जि 9. पेज/106

से थे वजीर मुकर्रर किए गए वह 'वजीरे आले मुहम्मद' और अबू मुस्लिम खुरासानी "अमीने आले मुहम्मद" के नाम से मशहूर हुए।[1]

बेशक अहले बैत रसूल[स0अ0] मे से जिम्मेदार अफ़राद इकदामात की हकीकत से वाकिफ थे और जानते थे कि आले रसूल[स0अ0] का नाम सिर्फ सियासी मकसद बरारी (कामयाबी) के लिए लिया जा रहा है। चुनान्चे जब ख़िलाफ़त की पेशकश पर मुशतमिल ख़त हज़रत जाफ़र बिन मुहम्मद सादिक़[अ0स0] के पास भेजा गया तो आपने उसे कासिद के सामने ही चिराग के शोले में जलाकर खाक कर दिया और फरमाया कि अहले खुरासान हकीकत में शिय–ए–अली[अ0स0] नहीं हैं। अबू सलमा को धोखा दिया गया है और उसे नतीजे में क़त्ल कर दिया जाएगा।[2]

चुनान्चे वाक़ेया यही सामने आया कि इधर अबुल अब्बास सुफ्फाह अब्दुल्लाह बिन मुहम्मद बिन अली बिन अब्दुल्लाह बिन अब्बास की खिलाफत का एलान हुआ और उसी के कुछ दिन बाद अबू सलमा का खातिमा कर दिया गया।[3] और सफ्फाह के बाद तो आले रसूल[स0अ0] के साथ वक्तन फवक्तन वैसी ही बदसुलूकियाँ की गईं जैसी बनी उमैया के दौर में हो चुकी थीं। मगर उससे इस तारीखी हकीकत पर कुछ असर नहीं पडता कि अवाम की हमदर्दियाँ बनी उमैया के खिलाफ सिर्फ़ अहलेबैते रसूल[स0अ0] और आले मुहम्मद[स0अ0] के नाम ही पर हासिल की गई थीं उसी जजब ए नफ़रत की बिना पर जो उन्हें शहादते इमाम हुसैन[अ0स0] के बाद बनी उमैया से पैदा हो चुका था

---

[1] तबरी जि 1 पेज 142

[2] अलफजारा वल किताब पेज/57

[3] अलफजारा वल किताब पेज/60

बयालीसवाँ बाब

तब्दीले ज़ेहनियत

इमाम हुसैन[अ०स०] का मकसद जैसाकि जाबजा इस किताब में बताया गया है बराहे रास्त यह नही था कि यजीद या बनी उमैया की हुकूमत को माद्दी (जाहरी) हैसियत मे तबाह व बरबाद कर दिया जाए इसलिए कि अगर आपको यही मन्जूर होता तो आपने शुरू ही से माद्दी जराए इख्तियार किए होते और अपने गिर्द मुनासिब हाल फ़ौजी ताक़त जमा की होती बल्कि आप हकीकतन जहनी इन्क़ेलाब पैदा करने के लिए कोशाँ थें और जाहिर है कि फौजी ताकत और तलवार इन्सानी अजसाम (जिसमों) को टुकडे टुकडे किया करती है मगर उनकी जहनियत को तब्दील नहीं कर सकती। लिहाजा आपने उसकी तरफ़ पूरी तवज्जोह नहीं फरमाई बल्कि नसबुल ऐन (तरीका) कुल्ली तौर पर यही रखा कि उनकी जेहनियत में तब्दीली करें। ऐसी तब्दीली जो मुस्तकिल और देरपा हो। और जिसके असरात महो (मिट) न हो सकें। अब देखना चाहिए कि इमाम हुसैन[अ०स०] इस मक़सद मे कहॉ तक कामयाब हुए।

यह बात हर एक को मालूम होगी कि मुसलमानों की अक्सरियत ने खुलफ़ ए इस्लाम को ''ऊलिल अम्र'' (अल्ला के नुमाइंदे) माना और उनकी इताअत को इताअते खुदा व रसूल की तरह फ़र्ज क़रार दिया। इस जैल में किसी दर्जे तक ''हक्के तशरीअ्'' (शरीयत) भी उनके लिए तस्लीम कर लिया गया। इसका मुकतजा (मुराद) तो यह है कि जो ख़ुलफ़ा का रास्ता हो वह ठीक है मगर आज शियो का जिक्र नहीं जो इस खिलाफ़त को किसी हैसियत से तस्लीम ही नहीं करते बल्कि जमहूरे मुसलमीन यानी अहले सुन्नत ख़िलाफ़त के दो हिस्से करार देते हैं एक खिलाफ़ते राशिदा (हिदायत याफ्ता), और एक गैरे राशिदा जिसको ''मुलके अज़ूज'' कहा जाता है। आम तौर पर हजरत अली[अ०स०] और फिर इमाम हसन[अ०स०] की खिलाफ़त जो मुआविया से सुल्ह के कब्ल तक रही खिलाफते राशिदा की आखरी हद मानी जाती है। मुआविया और फिर यजीद और दीगर खुलफा–ए–बनी उमैया व बनी अब्बास सब

खुलफा कहे जाते हैं मगर गैर राशिदीन। यह तफरीक इमाम हुसैन[अ0स0] के लिए बेपनाह एहतेजाज और मख़सूस रंग के जिहाद ही का नतीजा हो सकती है

आपकी इस मुकाविमत (इकदाम) के बाइस यह मसला हमेशा के लिए साफ हो गया कि खुलफा में से किसी को भी हक्के तशरीअ् नहीं है और जिस तरह बुरे आमाल अगर कोई आम इन्सान करे तो वह गुनाह हैं इसी तरह मुसलमानों का मुन्तखब कर्दा खलीफ–ए–वक्त उनका इरतिकाब करे तो वह भी गुनाह हैं और सबसे बडे गुनाह हैं यह भी कि बरसरे इकतेदार हाकिमे वक्त की इताअत अम्ने आम्मा के तहफ्फुज के लिए उसी वक्त तक है जब तक मफादे खुदा वन्दी से तसादुम (टकराव) न हो लेकिन जब इलाही कानून का तकाजा उस हुकूमत की मुखालिफत में मुजमर हो तो हर बन्द ए खुदा का फ़र्ज है कि वह ब–मुकतजाए (मुताबिक) हुक्म खुदा वन्दी मुकाबले के लिए तैयार हो जाए

इस तरह इस भेडिया धसान वाली कैफियत में जो सन 60 हिजरी तक नजर आ रही थी आपने एक फर्ज शनासी का एहसास और हुकूमते जौर से मुहासिबे (अपना हिसाब खुद करना) का एक जजबा पैदा कर दिया जिसकी बदौलत फिर किसी सलतनत की नजर मे उसका ख्वाबे खरगोश पुर कैफ (मजेदार) और खुशगवार बाकी न रह सका

उसके बाद हुसैन[अ0स0] का सब्रो इस्तेकलाल एक दाएमी (हमेशा के लिए) मिसाल बन गया जो हर सख्त मौके पर याद किया जाता और मुतजलजल (डावाँ डोल) दिलों में इस्तेकलाल (साबित कदमी) पैदा करता रहा। चुनाँनचे उस वक्त जब सन 71 हिजरी में मुसअब बिन ज़ुबैर के मुकाबले में अब्दुल मलिक बिन मरवान ने लशकर कशी की और फौजे मुखालिफ की कसरत से मुसअब की फौज में अबतरी (कमजोरी) हो गई और एक आम रोब तारी हो गया तो मुसअब ने उरवा बिन मुग़ीरा बिन शाअ्बा को पुकारा कि इधर आओ। जब वह क़रीब आया तो मुसअब ने कहा इस वक्त हुसैन[अ0स0] के हालात बयान करो कि उन्होने किस तरह इब्ने जियाद का हुक्म मानने से इन्कार किया और जिहाद पर कमर चुस्त बाँधी उरवा ने इमाम हुसैन[अ0स0] के हालात बयान किए मुसअब ने जोश में अपने घोडे को ताजियाना लगाया और यह शेअ्र पढा।

فان الالی بالطف من آل ہاشم

تآسو فسنوا للکرام التآسیا

यानी "वह जो करबला में हाशमी घराने की फ़र्दें थीं एक ऐसी मिसाल कायम कर गई हैं जो शरीफों के लिए हमेशा के वास्ते एक बेहतरीन नमूना है।"

यह कहकर फौजे दुश्मन का जान तोड मुकाबला किया और जंग करते हुए तलवार के घाट उतारे गए। यह 15 जमादिल अव्वल सन 72 हिजरी का वाकेया है।[1]

इसी तरह हजरत इमाम हुसैन[अ0स0] ने जो कुव्वते बर्दाश्त और जुरअते इजहार पैदा कर दी थी वह हमेशा जुल्मो जौर की ताकतों के खिलाफ एक खतरा बनी रही और एहसासे इन्सानी को बेदारी का जो पैगाम दिया गया था वह इस वक्त तक बाकी है और यूँ ही बाकी रहेगा। जैसा कि "जोश" ने कहा है-

यह आज जो एक गूंज है आजादी की
यह भी है हुसैन इब्ने अली की आवाज

---

[1] अख़बारुत तुवाल पेज 301-303

तैंतालीसवाँ बाब

एख़्लाक़ी नताएज

वाकेय–ए–करबला की हकीकी और लाफ़ानी एफ़ादियत (कभी न खत्म होने वाला फ़ाएदा) उस रद्दे अमल और नीज उन इन्केलाबाते माद्दी (जाहरी) से बिल्कुल अलाहिदा और मुख़्तलिफ है जो कि क़हरी नतीजे (जोर जबरदस्ती) के तौर पर हगामी हैसियत से मुरत्तब हुए थे। वह उस अखलाकी कुव्वत से वाबस्ता है जो नौए बशर (अवाम) की जहनियत की सही तामीर और रहबरी करने की पूरी जमानत कर सकती है।

इमाम हुसैन[अ0स0] की जात और उनके कारनाम–ए–जावेद को उसके हकीकी फ़ुयूज (फ़ाएदे) व बरकात के लिहाज़ से किसी एक गिरोह में महदूद कर देना इस्लाम की उस रुह के खिलाफ़ है जो खालिके काएनात को रब्बुल आलमीन बनाने में मुजमर है। जब खुदा की खुदाई किसी खास गिरोह से मखसूस नहीं समझी जा सकती तो हुसैन[अ0स0] ऐसे फ़िदय–ए–राहे खुदा की कुर्बानी को किसी एक गिरोह मे हमदूद करना भी सरासर गलत है। बल्कि आपकी शहादत का मफ़ाद उन तमाम लोगों से मुतअल्लिक़ है जो आप से इन्सानी जिन्दगी का सबक लेना चाहें।

जैल मे वाकेय ए–करबला से मजहबे इन्सानियत और इस्लाम के मुतअल्लिक़ जो फ़वाएद हासिल होते हैं। उनको सिलसिले के साथ दर्ज किया जाता है।

(1)

मज़हब और रूहानियत की ताक़त का मुज़ाहरा

माद्दियत (दुनयवी जिन्दगी) और रूहानियत मे जंग हमेशा ही बरपा रही और आज भी मजहब रूहानियत का अलमबरदार है। इसलिए आज जबकि दुनिया रूहानियत की तरफ से मुँह मोडे हुए है तो वह मजहबी मोतकिदात

(अकीदों) का औहाम (वहम की जमा) के नाम से ताबीर करके उनकी अहमित को घटाती है मगर मजहब अपनी ताकत हमेशा मनवाता रहा है।

करबला की जंग मजहबियत और माद्दियत के दरमियान एक अजीमुश्शान जंग थी। उस तरफ तमाम माद्दी मजाहिर (दुनयवी आराम) थे जो आँखो के सामने थे और वह एक इन्सान को मरऊब और मुतअस्सिर बनाने के लिए काफ़ी थे और इस मरऊबियत (मुतअस्सिर) व तअस्सुर का लाजमी तकाज़ा यज़ीद की बैयत के लिए सरे तस्लीम ख़म कर देना था और इधर वही 'नादीदा (न दिखने वाली)' हकीकते थीं जिन्हें मजहब इन्सानी दिमाग में रासिख करता है

दुनिया ने देख लिया कि तमाम माद्दी मजाहिर हज़रत इमाम हुसैन अ०स० और उनके जाँबाज रूफ़का को मुतअस्सिर बनाने मे नाकाम हुए और वह इन्कारे बैयत जो गैबी ताकत पर ईमान का नतीजा था पूरे जाहो जलाल के साथ आखिर तक कायम व बरकरार रहा और नतीजे के एतेबार से कामयाबी हासिल करके दुनिया के सामने रूहानियत की फतह का ला ज़वाल नमूना बन गया।

(2)
हक्क़ानियते इस्लाम की तस्दीक़ व इशाअत

एक मजहब की सच्चाई का बड़ा निशान है उसके बानियान का सिबाते कदम और इस्तेकलाल के साथ मसाएब को बरदाश्त करना और आखिर तक अपने उसूल से मुन्हरिफ (हटना) न होना।

मगर किसी मजहब के अकीदत केशो (आदत) में आम अफराद का मसाएब झेल लेना या अपने को कुर्बानी के लिए पेश करना कोई एसा मुस्तनद अम्र नहीं है इसलिए कि आम अफराद अक्सर हकीकते हाल से बेखबर और वाकई धोखे और फरेब मे मुबतिला होते हैं। उनके लिए बिल्कुल मुमकिन है कि वह सराब (पानी जैसी दिखने वाली रेत) को आब और मजाज को हक़ीकत खयाल करलें और अपने जामें (गुमान) बातिल की हिमायत में जान देने पर भी तैयार हो जायें लेकिन खुद बानिए मजहब और उसके मख़सूस वाकिफ कार अफ़राद और घर वालो का जो उसके असरारे जिन्दगी और रुमूजे हयात और मेयारे अखलाक व औसाफ से पूरे तौर पर वाकिफ़ हैं उसूल की हिमायत में

इस्तेकलाल व सिबाते कदम के साथ मसाएब को बरदाश्त करना और जरूरत के वक्त जान की कुर्बानी पेश करना बेशक इस बात की दलील होता है कि उस उसूल में सच्चाई और खुलूस का जौहर मुजमर (छिपा) है।

इसी लिए हजरत रसूल[स0अ0] का तर्जे अमल अपनी लड़ाईयों में भी यही था कि वह अपने अजीजों को मैदाने जंग में सबसे आगे रखते थे जिसका तजकिरा हजरत अली[अ0स0] ने नहजुल बलागा में फरमाया है इन अलफाज में कि जब खूँरेज जंग की सूरत सामने आती थी और लोगों के कदम पीछे हटते थे तो आप अपने घराने वालों को आगे बढ़ाते थे और उनको अपने असहाब की हिफाजत का जरिया बनाते थे नैजा व शमशीर की आँच से इसका नतीजा था कि उबैदा बिन हारिस बिन अब्दुल मुत्तलिब रसूल[स0अ0] के चचा जाद भाई शहीद हुए जंगे बद्र में जो सबसे पहली इस्लामी लड़ाई थी और हमजा बिन अब्दुल मुत्तलिब जो हजरत[स0अ0] के चचा थे ओहद में मारे गए और जाफर बिन अबी तालिब जो रसूल[स0अ0] के दूसरे चचाजाद और हजरत अली[अ0स0] के हकीकी भाई थी। मौता के मारके में शहीद हुए और खुद हजरत अली[अ0स0] हर खतरे में मौत की तरफ़ आगे बढते नजर आये।

यह तर्जे अमल रसूल[स0अ0] का बतलाता है कि खुदा का दीन हजरत को किस दर्जा अजीज था। और आप इसके लिए कैसी कुर्बानियाँ पेश करने पर तैयार रहते थे। आखिर में जरूरत पडी एक शहीद की जो कमाले मजलूमियत का नमूना हो इसके लिए भी रसूल[स0अ0] का जिगर बन्द हुसैन[अ0स0] ही आगे बढ कर आया।

इमाम हुसैन[अ0स0] की कुर्बानी कोई खामोश कुर्बानी न थी बल्कि आप अमली कुर्बानी के साथ साथ बराबर अपनी जबान से भी हकीकी इस्लाम की तरफ दावत देते रहे और अपने किरदार से भी अहकामे इस्लाम की अजमत दिलों मे कायम करते रहे। आपने करबला में तब्लीगे हक के पहलू को किसी वक्त नजर अन्दाज नहीं किया। उस वक्त कि जब खून के प्यासे दुश्मनो ने चारों तरफ से इमाम पर रास्ता बन्द कर दिया था और तीस हजार के लशकर ने दीन व मजहब बल्कि इन्सानियत वगैरह को खैरबाद कहकर फरजन्दे रसूल[स0अ0] के कत्ल पर कमर बाँध ली थी तो हालाँकि उनका गुमराही से बाज़ आना मुमकिन न था और हुसैन[अ0स0] इससे पूरी तरह वाकिफ थे फिर भी चूँकि एक मुबल्लिगे मजहब और दाईये (बुलाने वाला) हक का फरीजा यही है कि

वह हक की आवाज बलन्द करे और तब्लीग़ व दावत में कोताही न करे लिहाजा इस फरीजे को इमाम आखिर दम तक अदा करते रहे।

9/मुहर्रम को उस वक्त जबकि खूँख्वार लश्कर की यूरिश (हमला) थी और हुसैन[अ०स०] और उनकी मुख्तसर जमाअत के कत्ल कर देने के लिए हमला कर दिया गया था तो आपने अपने भाई अब्बास को भेज कर एक शब की मोहलत माँगी सिर्फ इसलिए कि उस रात भर आख़िरी दफा बेदार रहकर खुदा की इबादत कर ले चुनाँनचे शब इस तरह गुजारी गई कि لهم دوی کدوی النحل यानी उस जमाअत की आवाजें जिक्रे इलाही और तस्बीह के साथ इस तरह गूँज रही थी जैसे शहद की मक्खी के छत्ते से आवाज आती है इस तरह उन्होंने दिखला दिया कि सख्त तरीन मवाके पर किस तरह उसूले मजहब का खयाल रखना चाहिए और यह कि रूहानी कूव्वत, आलम की हर कूव्वत से ज्यादा पुर ताक़त है

उससे ज्यादा और कठिन वह मौक़ा था जब रोजे आशूर लड़ाई शुरू हो चुकी थी। हुसैनी जमाअत के बहुत से अफराद कत्ल हो चुके थे और नुमायाँ कमजोरी महसूस होने लगी थी। और तीरों की बारिश जारी थी। लेकिन इस हालत में भी नमाजे जोहर ब जमाअत अदा की गई। और ऐसी नमाज कि जिसकी नजीर आलम की तारीख पेश नहीं कर सकती।

इमाम रू–ब–किबला और मुजाहदीन की सफे पीछे और दो बहादुर जानिसार इमाम के आगे सीना सिपर बने हुए कि जो तीर आये अपने सीने पर लें जिसका लाजमी नतीजा यह था कि नमाज खत्म होते होते उन दो बहादुरों में से एक सईद बिन अब्दुल्लाह हनफी जमीन पर गिर कर तड़पने लगे और दुनिया से रूख्सत हो गए

यह थे हक्कानियत के वह मुजाहरात (वाकेआत) और इस्लामी तालीम के वह नमूने जिन्हों ने एक तरफ तो दुनिया को दावते हक की पुर जोर आवाज से ममलू (भर दिया) कर दिया और अफरादे इस्लाम के इस्लामी एहसासात को झिझोड कर बेदार कर दिया और दूसरी तरफ यजीद और हवा ख्वाहाने (चापलूस) यजीद के जालिमाना अफआल (हरकतें) और इस्लाम कुश (मुखालिफ) हरकात का पर्दा चाक कर दिया।

तारीख शाहिद है कि करबला की जंग मे हुसैनी जमाअत की हर फर्द एक मुबल्लिग (तब्लीग़ करने वाले) की हैसियत रखती थी। बुरैर हमदानी का मुबाहला, हबीब बिन मजाहिर का मुकालमा (Dialogs), जुहैर बिन कैन का

खुतबा और तमाम अन्सार व अकरबा के रजज (जंग से पहले तकरीर करने को रजज कहते हैं) इन सबके जरिये हुसैनी इक़दाम के असबाब व इलल (वजह) निहायत तसरीह (साफ़) के साथ मैदाने करबला ही मे बयान कर दिए गए। ख्वाह उनका असर जाहिर हुआ या न हुआ क्योंकि एक मुबल्लिग की कामयाबी यह नहीं है कि उसकी आवाज पर लब्बैक कहने वाले ज्यादा से ज्यादा तादाद मे पैदा हो जाये बल्कि उसकी कामयाबी यह है कि वह सख्त और कठिन मौक़ों पर और दुश्वार गुजार मनाजिल मे अपने फ़रीज़े को अदा कर दे और जो दावत व इजहार का हक़ है उसे पूरा कर दे।

यहाँ तक कि जब हुसैनी जमाअत के पीरो (बूढ़े) जवान सब दादे शजाअत देकर रूख़सत हो चुके और सिर्फ मजलूम हुसैन बाक़ी रह गए थे दुश्मनों का नरगा था दिल पर मसाएब का हुजूम और आँखो में दुनिया अंधेर थी तो उसके बावजूद अपने फ़रीजे से जरा देर के लिए भी ग़ाफ़िल नहीं हुए। उन्होंने कोई दकीक़ा इजहारे हक में उठा नहीं रखा। और आखिर नफ़स (सांस) तक अपने फ़र्ज को अदा करते रहे

उस वक्त भी जबकि शिम्र का खन्जर बोसा गाहे मुस्तफा के करीब आ चुका था और खामिसे आले एबा की जिन्दगी का चिराग गुल हो रहा था हुसैन[अ०स०] ने अपने कातिल के हक में भी तब्लीग का फर्ज अदा किया और अपने नाना की हक्क़ानियत को साबित कर दिखाया। यह फ़रमा कर कि "ऐ शिम्र' जरा अपने चेहरे से निकाब उठा" शिम्र ने नकाब हटाई। हजरत ने फरमाया "मेरे नाना रसूल अल्लाह ने सच कहा था कि ऐ हुसैन[अ०स०] तुम्हारा कातिल एक मबरूस (कोढी) शख्स होगा।"

रूही ल–क–ल फिदा ऐ हुसैन बिन अली[अ०स०] आपने मरते दम तक अपने फ़रीजे से हाथ नही उठाया। आपने अपने नाना के कौल की जेरे खंजर भी तस्दीक की, आपके खून का हर कतरा जो करबला की सरजमीन पर गिर रहा था इस्लाम की सच्चाई का एक दाएमी निशान था।

एख़्लाक़ी और तमद्दुनी तालीमात

करबला का वाक़ेया मुरक्क़ ए मसाएब होने के साथ सिर्फ़ दावते आहो नाला और तहरीके अश्क अफ़शानी (आँसू बहाना) का सरमाया नहीं है बल्कि इसके अलावा वह एक दर्सगाह तालीम व तरबियत भी है जिससे इन्सानी रफअत (बलन्दी) की शाहराहें सामने आती हैं।

हालाँकि आम तौर पर किसी अमल में कोई एक पहलू होता है तालीम का मगर वाक़ेय–ए–करबला बावजूद अपनी मुख़्तसर मुद्दते वुकूअ् (वाक़ेअ् होना) के तमाम अहम तालीमात का मरकज़ है, जैल में कुछ अनावीन (Titles) को दर्ज करके वाक़ेयात का हवाला दिया जाता है जिनसे किसी हद तक वाक़ेय–ए–करबला की हमागीरी का अन्दाजा किया जा सकता है।

हुर्रियत

हुर्रियत के मानी ख़्वाहिश के मुताबिक़ मुतलक़ुल ऐनानी (खुली आजादी) के नही हैं बल्कि उसके मानी यह हैं कि इन्सान अपने जमीर के फैसलों पर बगैर किसी रूकावट के अमल पैरा हो सके उन रूकावटो मे सबसे बढ़कर खुद अपने लजाएज और उन चीजों से मुहब्बत है जो उस जमीर की आवाज पर अमल करने से खतरे मे पड़ती हैं

अगर इन्सान अपनी ख़्वाहिशो और नफ्स के तकाजों से आजाद हो गया तो दुनिया का कोई जालिम उसे गुलाम नहीं बना सकता।

हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के सामने हर वह चीज खतरे में थी जो किसी इन्सान को अजीज होती है लेकिन आपने अपने जमीर के फ़ैसले के मुताबिक अमल करके ऐसे हंगाम में हुर्रियते नफ्स का सुबूत दिया जिसकी शिद्दतों का तसव्वुर भी आम तौर पर इन्सान को लर्जा बर अन्दाम बनाने के लिए काफी है।

यही हुर्रियत के वह मानी हैं जिसके एतेबार से आपने हुर बिन यजीदे रियाही को जो फौजे बातिल का साथ छोड कर हक की तरफ आ गए हुर्रियत की सनद देते हुए फरमाया "انت کانت کما سمتک امک" तुम बेशक इसमे बा मुसम्मा (बामानी नाम) हो "

"انت حر فی الدنیا والآخرة" यानी तुम दुनिया में भी हुर हो और आखिरत मे भी। यह हुर्रियते आजादी और गुलामी के उस मफहूम से बिल्कुल अलग है जो आज सियासी दुनिया मे राएज है

किसी आजाद मुल्क के अफराद भी हकीकत में गुलाम हैं जब वह गगा जमुनी तवक्कुआत की बिना पर गलत मफादात की राह इख़्तियार किए हुए हों और किसी "गुलाम" मुल्क के भी अफराद आजाद हैं। अगर वह बावजूद जब्रो तशद्दुद के शिकन्जे के अपने फराएज़ हक़ परस्ती से गाफ़िल न हों

इस्तेक़लाल

सख्त और दुश्वार मुन्जिलों के सामने आने पर क़दम में लगज़िश न होना सिबात व इस्तेकलाल है और इस इम्तिहान मे करबला के मुजाहदीन का नम्बर सबसे अव्वल है।

कौन नही जानता कि गुफ्तार और किरदार दो मुखतलिफ चीज़ें हैं। कहना आसान है। लेकिन अमल करना मशुकिल है।

माज़ि ए क़रीब की अजीम जगों में बहुत सी कौमों की आजादी सल्ब हुई।

उनमें से कौन वह कौम थी जिसने जग शुरू करते वक्त यह एलान न किया हो कि हम आखरी कतर–ए–खून गिरने तक दुश्मनों की गुलामी क़ुबूल नहीं करेंगे मगर वह मुल्क फतह हो गए और कोई नहीं कह सकता कि उस वक्त उनमें कोई फर्द भी काबिले जग बाकी न रह गई थी। होता यही है कि उनमे बहुत बडी जमाअत ऐसी बाकी रहती है जो जग करने के काबिल समझी जा सके मगर मुशकिलात के सामने वह सिपर अन्दाख्ता (हथियार डाल देती है) हो जाती है

उसके बरख़िलाफ़ अगर करबला वालों पर नजर डालिए तो आपको वहाँ का बच्चा बच्चा अपने क़ौल की कसौटी पर पूरा उतरता हुआ दिखाई देगा। और आपको मालूम हो जाएगा कि उस फौज के सरदार और उसके साथियों ने जो कहा उस पर अमल करके दिखा दिया।

हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने जब यह फ़रमाया था कि "बैयत नहीं करूँगा" तो उस वक्त इसका सही मफहूम दुनिया को मालूम न था क्योंकि इन्सानी तख़ैयुल (खयाल) के हुदूद उन इम्कानात का अन्दाजा नहीं कर सकते थे जहाँ तक वाकेयात की रफ्तार बाद को पहुँच गई।

दुनिया नहीं समझ सकती थी कि इस नहीं मे कितने मुशकिलात के मुक़ाबले का अज्म मुजमर है। लेकिन हुसैन[अ०स०] जिस वक्त "नहीं" की आवाज बलन्द कर रहे थे तो दिल की गहराईयों मे अपनी कूव्वते इरादी का जाएजा लेने और मौके की नजाकत पर गौर करने के बाद यह फैसला कर रहे थे कि शदाएद (मुशकिलें) अपने इम्कानात की आखरी हद तक पहुँच जाएगे लेकिन मेरे अज्म को न बदल सकेंगे। चुनाँनचे नतीजे ने जाहिर कर दिया कि इस 'नहीं' में कितना वज्न था।

रास्ते में जब हुर कहता हुआ जा रहा था कि अपने ऊपर रहम कीजिए। मैं देखता हूँ कि आप कत्ल हो जायंगे। तो आपने फरमाया था कि क्या इसके आगे भी कुछ है? जब इन्सान हक पर कायम है तो मौत के आने मे कोई मुजाएका नहीं।

आपके फरजन्द अली अकबर[अ०स०] ने यही कहा था कि जब हम हक पर कायम हैं तो मौत की कोई परवा नहीं।

आपकी इस कुव्वते अज्म का अन्दाजा दुश्मन को भी था चुनाँनचे उस वक्त कि जब शिम्र इब्ने जियाद का खत लेकर नवीं तारीख मुहर्रम को आया था कि हुसैन[अ०स०] से गैर मशरूत तौर पर इताअत का इकरार लो या जंग करो। और उमरे सअ्द ने खत देखा था तो बजाए इसके कि इमाम हुसैन[अ०स०] के पास जाता और आपको मजमूने खत से इत्तेला देता उसने अपनी जगह पर कह दिया कि 'हुसैन[अ०स०] इस तरह तो इताअत न करेगे। वह अपने बाप का दिल अपने सीने में रखते हैं।'[1]

नतीजे में सबने देख लिया कि मैदाने जग मे हजारों मसाएब के सैलाब थे जो आते थे और उस कोहे अज्मो इस्तेकलाल से टकरा कर वापस चले जाते थे गोया इन तमाम मसाएब के हुजूम में हुसैन[अ०स०] की जबान पर यह शेअर जारी था कि

ان كان دين محمد لم يستقم

الايقتلی ياسيوف خذينی

अगर मेरे नाना का दीन उस वक्त तक बरकरार नहीं रह सकता जब तक कि मेरी रगे हयात कता न हो जाए तो ऐ खून आशाम तलवारो आओ यह जिस्म हाजिर है।"

---

[1] इरशाद पेज / 242

यहाँ तक कि उस वक्त भी कि जब आस पास कोई मौजूद न रहा था। असहाब व अन्सार सब शहीद हो चुके थे खुद आप पर हमले हो रहे थे और जख्मों से चूर चूर थे। उस वक्त भी आपकी अबरू पर शिकन न थी खुद फौजे उमरे सअद का एक आदमी बयान करता है कि "खुदा की कसम मैंने कोई दिल शिकस्ता व जख्म रसीदा आदमी जिसके औलाद, भाई, अइज्जा व अन्सार सब कत्ल हो गए हो ऐसा नही देखा जो हुसैन[अ०स०] से ज्यादा मुतमइन, मुस्तकिल मिजाज साबित कदम और बाहिम्मत हो।[1] खुदा की कसम उनसे ज्यादा क्या मैंने उनके कब्ल और उनके बाद उनके मिस्ल भी कोई नहीं देखा।[2]

जमाअती तन्ज़ीम

तन्जीमे इज्तेमाई (ग्रुप) एक जमियत की वहदते खयाल (एक खयाल), वहदते कद्र और वहदते अमल से पैदा होती हैं एक शख्स अगर तन्हा एक खयाल पर कायम भी है तो यह जरूरी नही कि उसे साथी भी ऐसे मिल जाये जो बिला इस्तंसना सब आख़िर तक उसके साथ साथ चलते रहे। पैरूओं (इताअत करने वालो Followers) का सिबात व इस्तेकलाल एक अलाहिदा चीज है जो किसी इन्सान की इन्तेहाई अज़मत के बाद भी जरूरी नहीं है कि हासिल ही हो जाये।

हमारे सामने अम्बिया व मुरसलीन के हालात हैं। हमे मालूम है कि हज़रत मूसा[अ०स०] के बनी इस्राईल पर कितने एहसानात थे उनको मजालिम से छुड़ाया। मिस्र के मुल्क से बचा कर निकाल ले गए। बैतुल मुकद्दस के फतह करने के लिए तैयार किया मगर जब यह लोग अमल की मन्जिल से दो चार हुए और फिलिस्तीन के कदआवर (लम्बे) आदमी दिखाई दिए तो उन्होंने मूसा[अ०स०] से साफ कह दिया कि 'वहाँ तो बड़े बड़े जबरदस्त लोग मौजूद हैं। हम हरगिज नहीं जायेंगे जब तक कि वह खारिज न हो जाये। हाँ जब वह निकल जायेंगे तो फिर हम अन्दर दाखिल होंगे।' उस बड़े मजमे में जो मूसा[अ०स०] के साथ था कुर्आन ने शुमार करके बताया है कि कितने आदमी थे जो अपनी बात पर कायम रहे।' सिर्फ दो मख़्सूस आदमी वह थे जिन्हों ने कहा कि दरवाजे में दाखिल हो। जब तुम दाखिल हो जाओगे तो तुम्हे फतह हासिल होगी और

---

[1] इरशाद पेज/256
[2] तबरी जि/6, पेज/259

ख़ुदा पर भरोसा करो अगर ईमान रखते हो। मगर दूसरे लोगो ने कोई असर नहीं लिया। और निहायत दिल शिकन अलफाज मे कहा हम हरगिज दाखिल नहीं होंगे जब तक यह उसमें मौजूद हैं। ऐसा ही है तो आप जाईये और आपका परवरदिगार और आप दोनों मिल कर जंग कर लीजिए। हम यहाँ बैठ कर तमाशा देखेंगे।"

हजरत ईसा[अ०स०] के शागिर्दों का तजकिरा भी हमारे सामने है। थोडे से तो वह लोग ही थे जो ईमान लाए थे उनमें भी यह आलम था कि शागिर्द ही में से एक था जिसने उनके खिलाफ खबर रसानी की और उनको गिरफ्तार करा दिया।

इन्जील बता रही है कि यसूअ मसीह ने अपने साथियो से कहा कि तुम मे से कोई ऐसा न होगा जो मेरे बारे मे ठोकर न खाए। एक बडे मखसूस शागिर्द पितरूस ने कहा कि ऐ मेरे बाप सब ठोकरें खाये मैं नही खाऊँगा। यसूअ् ने फरमाया कि (सुबह को) मुर्ग के अजान देने से पहले तू तीन मर्तबा मेरा इन्कार करेगा। अन्जाम यही हुआ कि जब हजरत मसीह[अ०स०] को गिरफ्तार करके ले चले तो यह शख्स पीछे पीछे हालात देखने के लिए गया। मुखालिफ जमाअत को शक हुआ कि यह हजरत ईसा[अ०स०] का आदमी है। पूछा तुम इनके तरफदारो में से हो? कहा नहीं मैं इनको नहीं जानता। दूसरी मर्तबा भी ऐसा ही हुआ और तीसरी मर्तबा उसके साथ हजरत ईसा[अ०स०] की शान मे नाजेबा कलमात भी इस्तेमाल किए। उस वक्त मुर्ग की अजान की आवाज आई और इस तरह मसीह[अ०स०] की यह पेशिनगाई पूरी हुई। इसी तरह बाकी साथियों ने भी हजरत ईसा[अ०स०] की कोई नुसरत व हिमायत नहीं की और राहे हक पर साबित कदम न रह सके

हमारे पैगम्बर[स०अ०] की तारीखे जिन्दगी भी इस तरह के वाकेयात से भरी हुई है। बहुत से इस तरह के मवाके का तजकिरा कुरआने करीम के अन्दर मौजूद है। एक मामूली सा वाकेया यह है कि एक अफसर की मातहती में जिसका नाम अब्दुल्लाह बिन जुबैर था पचास आदमियो को दर्रा कोहे ओहद पर खड़ा कर दिया गया था कि चाहे हमे शिकस्त हो चाहे फतह, तुम इस जगह से न हटना मगर जब जंग मे मुसलमानो को कामयाबी हुई तो बावजूदेकि अफसर रोकता रहा मगर सिवाए चन्द आदमियों के वहाँ कोई न रह गया। और सब माले गनीमत के लूटने मे मसरूफ हो गए नतीजा यह हुआ

कि फतह शिकस्त की सूरत में तब्दील हो गई और मुसलमानो की अक्सरियत सब्रो इस्तेकलाल से आरी (खाली) साबित हुई

ऐसे नमूने तारीख में बेशुमार हैं लेकिन करबला में हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ जो लोग थे, उनमें कोई एक शख्स भी ऐसा न था जिसके क़ौल व अमल में इख़्तेलाफ की झलक भी नजर आ सके।

इसी वजह से इमाम हुसैन[अ०स०] फख्र से कहते थे कि जैसे वफादार और जाँनिसार मेरे साथी हैं ऐसे किसी के न थे।

इज्ज़ते नफ्स

कोई शक नहीं कि जिन्दगी अजीज शै है और फितरते इन्सानी में हयाते दुनिया की मुहब्बत वदीअत (पैवस्त) की गई है। इन्सान इसी की खातिर सख्त तरीन दुनिया के मुशकिलात को बरदाश्त करता और सर्द व गर्म आलम का तहम्मुल (बरदाश्त) करता है। और तमाम वह मुमकिन जराये जिनसे उसकी हस्ती की बका का इम्कान हो अपने लिए हासिल करना ज़रूरी समझता है। इस्लाम ने इस फितरी रूजहान को रोकने की वजह नहीं बतायी बल्कि لا، تلقوا بأيديكم إلى التهلكة (अपने नफ्स को हलाकत में न डालो) के हकीमाना हुक्म से हिफाजते नफ्स को एक लाजमी फरीजा करार दिया लेकिन जमाने के लैलो नहार (रात दिन) में ऐसे नाजुक मवाके भी पेश आ जाया करते हैं जब जजबात में तलातुम और तबई (तबियत) व अकली रूजहानात में तसादुम (टकराओ) होता है जिन्दगी अपनी तमाम दिल फरेबियों के बावजूद इतनी मुहीब (डराऊनी) सूरत में नजर आती है कि इन्सान बेइख्तियार उससे आँखें मोड लेना पसन्द करता है और उसी महबूब जिन्दगी से जिस पर वह हर मुमकिन चीज कुर्बान कर देना पसन्द करता था हाथ धोने में लज्जत महसूस करता है।

यह सूरत कभी गैर शुऊरी (नासमझी), शहवानी (ख्वाहिशे नफ्स), जाहिलाना नाआकिबत अन्देश (अन्जाम से बेखबर) रूजहानात से पैदा होती है और उस मौके पर जान देने से न अक्ल बढ कर मरहबा कहती है और न शरअ शाबाश की आवाज देती है। लेकिन जिस वक्त मौत से बदतर जिन्दगी और ज़िन्दगी से बेहतर मौत में मुआमिला पड़ गया हो, जिस वक्त बक़ाये हयात अहम तरीन मकासिद के पामाल हो जाने पर मौकूफ (रूका) हो और जिस वक्त इज्जते नफ्स और फ़नाये वक्ती का सवाल दरपेश हो। जबकि मीजाने अक्ल ने सूरते हाल के मुखतलिफ़ पहलूओं को तौल कर मौत को

हयात पर तरजीह भी दी हो तो उस वक़्त मौत के मुह में जा पड़ने वाले हयाते दाएमी के मालिक हो जाते हैं।

हुसैन बिन अली[अ०स०] ने करबला में अपने फ़रीजे का एहसास करते हुए जो रास्ता तय किया था वह इसी उसूल पर मबनी था आपकी जबान से निकली हुई लफ़जे (الموت خير من ركوب العار) "नगो आर के बरदाश्त करने से मौत का आना बेहतर है और यह कि (الموت في عز خير من حيوة في ذل) "यानी इज्जत की मौत ज़िल्लत की जिन्दगी से बेहतर है'

सहरा–ए–करबला में गूँज कर फना नहीं हो गये बल्कि उनका पाएदार (मजबूत) मफहूम अब भी गैरतदार अकवाम के सहीफ़ ए हयात का सरनामा और दीबाचा–ए–जिन्दगी का उनवाने अव्वल है।

यह मुखतसर लफ्जें उलूये (बलन्द) हिम्मत की मुनादी (सदा देने वाला) और इज्जते नफ्स की तरजुमान हैं और उन्ही को हुसैन[अ०स०] ने अमली वज्न के साथ दुनिया के सामने रखा है।

सब्र

यह सिफत तो हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ ऐसी मखसूस हुई कि 'सय्यदुस साबेरीन" (सब्र करने वाला के सरदार) का लकब हासिल हो गया। मुसीबत के हगामी तौर पर आजाने के बाद फिर उसको बरदाश्त कर लेना तो एक मजबूरी का सवाल समझा जा सकता है मगर करबला मे हक़ के शैदाई मुसीबतों का खुद इस्तेकबाल करते थे

हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] का खुद तलवार न उठाना और तमाम साथियों और अजीज़ो को अपने सामने रूख़सत करना कुव्वते बरदाश्त का इन्तेहाई इम्तिहान देना था।

यही रूह आपके तमाम साथियों में भी कार फरमा नजर आती है

वह आबिस का कहना अपने गुलाम से कि "तुम्हारा क्या इरादा है।" और शौजब का जवाब कि 'इरादा यही है कि आपके साथ रह कर फ़रजन्दे रसूल[स०अ०] की नुसरत मे जग करूँ और कत्ल हो जाऊँ। और फिर आबिस का कहना कि "शाबाश! मुझे तुम से यही उम्मीद थी। अच्छा तो फिर बढ़ो आगे और इमाम पर जान निसार करो ताकि इमाम तुम्हारी मुसीबत भी उसी तरह देख लें जैसे अपने दूसरे असहाब की देखी है और मैं भी तुम्हारे गम को बरदाश्त करके सवाब का मुस्तहक़ बनूँ। यक़ीनन अगर इस वक्त कोई ऐसा

शख्स मेरे साथ होता जिस पर मुझे तुमसे ज्यादा इख्तियार होता तो मेरी खुशी होती कि वह मेरे सामने जिहाद मे काम आए। ताकि मैं उसकी मुसीबत को बरदाश्त करूँ क्योकि आज तो दिन ऐसा है जिसमे जितना इन्सान से हो सके उतना अज्रो सवाब हासिल करले क्योकि आज के दिन के बाद फिर अमल का दफ्तर खत्म है। और हिसाब के सिवा कुछ नही है "[1]

यह वह अलफाज हैं जिन्हे इतमीनान के मौके पर शाएरी के तौर पर हर शख्स कह सकता है लेकिन ऐन मुसीबत के मौके पर वाकई तौर से उनका कहना बहुत मुशकिल है मालूम होता है मसाएब के उठाने का एक जजबा है जो खुद इख्तियारी तौर पर अमली इकदामात का मुहर्रिक है।

इसी तरह जनाबे अबुल फजलिल अब्बास[अ०स०] का कौल भी अपने भाईयों से कि "बढ़ो आगे बढ़ो ताकि मैं तुम्हें अपनी आँख से कत्ल होते देख लूँ " इसी वलवले और जजबे का आईनादार है।

श ुजाअत

इल्मे एखलाक मे तय पाया है कि इन्सान की तमाम कूव्वतों का मोतदिल (Balance) होना मजमूई तौर पर फजाएल का सगं बुनियाद है

यह दुनिया वालो की नासमझी है कि वह हर उस शख्स को जो महल बे महल जग पर आमादा हो जाए, बहादुर और शुजाअ कह देते हैं लेकिन शुजाअत हकीकतन यह है कि इन्सान के लिए जिस वक्त कदम उठाना मुनासिब हो और इकदाम जरूरी हो उस वक्त पुर जिगरी के साथ वह आगे बढ़े और वह सब कुछ करे जो उसका फर्ज मालूम होता हो, चाहे इस सिलसिले में उसे जान भी देना पडे और जिस मौके पर इकदाम मुनासिब न हो बल्कि सुकूत और चश्मपोशी की जरूरत हो। उस वक्त तहम्मुल से काम ले चाहे उसमें कितने ही मुशकिलात दरपेश हों और नागवार सूरतो का मुकाबला करना पड़े।

इस सूरत में खामोशी उसी तरह शुजाअत का सुबूत होगी जिस तरह पहली सूरत में नबर्दआजमाई (जग)।

दुनिया वाले उमूमन जाहिर बी (देखने वाल) होते हैं। वह हकीकी असबाब व एलल (सबब) पर गौर नहीं करते चुनाँनचे हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने जिस तरह और जिस मौके पर मैदाने करबला में अपनी अजीम कुर्बानी पेश की

---

[1] तबरी जि/6. पेज/254

उसकी हकीकी अहमियत व अजमत का एहसास करने वाले दुनिया मे बहुत कम हैं मगर हर शख़्स हर मौके पर जोश पैदा करने के लिए वाकेय ए करबला की मिसाल जरूर पेश करता है, गोया हर शख़्स अपने वक्त का हुसैन[अ०स०] और हर मौका उसके लिए करबला है। मगर दुनिया को मालूम होना चाहिए कि महल का तकाजा और असबाब की सूरत मुख्तलिफ हुआ करती है

हुसैन बिन अली[अ०स०] की शुजाअत का वह सिर्फ एक रुख है जिसे करबला पेश करती हे और उसका दूसरा पहलू वह है जिसे हजरत ने दस बरस तक अपने भाई इमाम हसन[अ०स०] की सुलह का पाबन्द रह कर पहले दिखलाया। उस दौरान में बहुत से तकलीफ़देह वाकेआत पेश आए मगर इमाम हुसैन[अ०स०] ने उन्हें बरदाश्त किया। और किसी तरह मुकद्दर (ज़ुल्म की गन्दगी) फिजा में अपनी तरफ़ से इजतेराब पैदा न किया। बेशक जिस वक्त आपको यह फर्ज मालूम हुआ कि आप खडे हों और बातिल से टकरा जायें तो फिर पहाड़ों का इस्तेहकाम (मजबूती) आपके इस्तेकलाल तक नहीं पहुचता था।

आपकी शुजाअत का वह रुख भी बेनजीर था और यह रूख भी ऐसा था जिसकी मिसाल पेश नहीं की जा सकती मगर चूंकि सुकून से हरकत ज्यादा नुमायाँ चीज है और नफी (इन्कार) से ज्यादा इस्बात (सुबूत) नजरों को मुतवज्जेह करता है इसी लिए आम निगाहों में शुजाअत का यह ईजाबी (जरूरी) पहलू ज्यादा खपता है और दुनिया उसे देखती है तो हुसैनी शुजाअत का कलमा पढने लगती है।

सिर्फ आप ही नही बल्कि आपके साथी भी इस सिफत में बेनजीर नजर आते हैं।

करबला की जंग मे जो पुर जिगरी के मुजाहरात सामने आए हैं वह इन्सान के जिस्म पर रोंगटे खड़े कर देने के लिए आज भी काफी हैं

याद कीजिए जोहर की नमाज को कि किस तरह अदा की गई थी इमाम और आपके असहाब मुसल्ले पर नमाज मे मसरूफ और सईद बिन अब्दुल्लाह हनफी सामने सिपर बने हुए खड़े थे, जो तीर दाहनी या बाईं तरफ से आता था उसे अपने जिस्म पर रोकते थे यहॉ तक कि जख्मो से चूर होकर गिर गए थे।

या जोहर से कब्ल का वह वक्त जब हमल ए ऊला के बाद पचास आदमी फ़ौजे हुसैनी के एक साथ शहीद हो गए थे और उससे लशकरे

मुखालिफ की हिम्मत बढ़ गई थी। जिस पर अब उसकी कोशिश थी कि दम के दम में यह मुहिम सर हो जाए मगर यह हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की बेनजीर सियासते हर्ब (जंग) और हुसैनी जमाअत की बेमिसाल शुजाअत ही थी जो हर हमले को नाकाम बना देती थी। आखिर जब शिम्र ने मखसूस खैमए इमाम हुसैन[अ०स०] पर हमला किया और अपना नैज़ा खैमे पर मार कर कहा था कि आग लाओ मैं इस खैमे को उसके रहने वालों समेत जला दूँ और खैमे से एक शोर रोने का बलन्द हुआ तो सिर्फ दस बहादुर जाँबाज थे जिन्हें लेकर जुहैर बिन कैन आगे बढ़े और शिम्र और उसके साथ की फ़ौज को खैमों के पास से दूर हटा दिया था।

या यह मन्जर कि अम्र बिन कर्ता जंग करते हैं और कुछ देर तलवार चलाने के बाद फिर इमाम के सामने आकर खड़े हो जाते हैं जो तीर आता है उसे अपने सीने पर रोकते हैं और जो वार होता है खुद सिपर बन जाते हैं आखिर जख्मों से चूर चूर हो जाते हैं और इमाम से मुखातिब होकर कहते हैं 'क्यो फरजन्दे रसूल[स०अ०] मैंने फ़र्ज को अदा किया ' हजरत फरमाते हैं कि 'हाँ तुम जन्नत में मेरे आगे जाओगे।' बहादुर जाँबाज ज़ख्मों की कसरत से जमीन पर गिरता है और जाँ बहक तस्लीम होता है

या यह आलम कि जब आबिस तलवार खींचे हुए फ़ौजे दुश्मन पर हमला आवर होते हैं और बुजदिल दुश्मन की फौज पत्थरों की बारिश कर देती है तो आबिस जेरह और खोद व बक्तर उतार कर फेंक देते और तलवार नियाम से लेकर फ़ौजे मुख़ालिफ़ पर टूट पड़ते हैं।

यकीनन उनमें से हर मन्जर शुजाअत का एक यादगार मुरक्क़ा है और उनसे ज्यादा अजीम हुसैनी शुजाअत के काम में लाए जाने का वक्त था जब एक यका तन्हा और बेकस कमर खमीदा और दिल शिकस्ता के सामने हजारों आदमी भागते नजर आते थे

तमाम मुजाहदीने करबला और उनके सालार हजरत सैयदुश्शोहदा की शुजाअत ने वह मुरक्क़े पेश किए जिनका असर दुश्मनों के दिल पर मुद्दतुल उम्र रहा और इसका इजहार उनकी जबान से हुआ किया जैसा कि बुरैर हमदानी के कातिल काअ्ब बिन जाबिर ने अपने अशआर में कहा

"मेरी आँखों ने न इस जमाने में और न इसके पहले इब्तेदाए उम्र से कभी उनकी ऐसी जमाअत नहीं देखी जो इस शिद्दत से हर्बो जर्ब (लड़ने) करने वाली हो उन्होंने बगैर जेरह व बक्तर के जंग में गैर मामूली इस्तेकलाल

दिखला दिया यह और बात है कि नतीजतन उससे कोई फाएदा हासिल न हुआ।[1]

यह आखरी फिक्रा उसकी माद्दी जेहनियत के लिहाज से ही जो कामयाबी को सिर्फ जंग की जाहरी फतह में मुजमर समझती थी। हालाँकि मुस्तकबिल ने साबित कर दिया कि फतह भी उसी बहादुर जमाअत को नसीब हुई और उनकी मुखालिफ़ अक्सरियत को वह अबदी शिकस्त हुई जो तारीख़ में मिसाल नहीं रखती

ईसार

मुशतरिका (सबकी) जरूरत के वक्त दूसरे को अपने नफ्स पर मुकद्दम करना ईसार है। इस सिफ़त का बेहतरीन और मुकम्मल नमूना इमाम हुसैन[अ0स0] और दूसरे मुजाहदीने करबला ने पेश किया

इमाम ने तो अपने अमल से यह मिसाल क़ायम कर दी कि जरूरत के वक्त दोस्त क्या दुश्मन को भी अपनी ज़ात पर मुकद्दम करो यह सबक हज़रत ने उस वक्त दिया जब इराक की राह मे फौजे हुर को जो सद्दे राह (रूकावट) होने के लिए आई थी आपने अपने साथ का सब पानी पिला दिया और अपने और अपने वाबस्तगान के मुस्तकबिल के लिए उसको महफ़ूज़ न फरमाया। और करबला मे असहाब व अकारिब इमाम में से हर फ़र्द ने इमाम के नफ्स की हिफाजत को अपने जिस्मो जान के मुकाबले मे इस तरह मुकदम क़रार दे लिया था कि वह अपनी हस्ती को जीते जी मादूम (खत्म) समझते थे। सईद का इमाम के मुसल्ले के सामने सिपर बन कर खड़ा होना और तीरों का अपने सीने पर रोकना न भूलने वाले ईसार का मुरक्का है।

करबला में कुर्बानी पेश करने के लिए हर एक दूसरे पर सबकत करना चाहता था और हर एक का मन्शा यह था कि कम अज कम वक्त के लिए सही वह खुद अपनी जान से गुजर कर दूसरों के तहफ्फुज का जरिया बन सके। अगरचे यह सबको मालूम था कि बचने वाला कोई नहीं फिर भी फिक्र यह थी कि जब तक हम हैं दूसरों पर आँच न आने पाए।

उन्हे अपना ग़म न था, अपनी फिक्र न थी, ग़म था अगर तो हुसैन[अ0स0] का फिक्र थी तो उनकी तन्हाई की चुनाँनचे याद कीजिए सैफ़ बिन हारिस व मालिक बिन अब्द दोनों भाईयों का वह इमाम के पास आकर रोने लगना और

[1] तबरी जि/6, पेज/248

इमाम का फरमाना क्यों रोते हो? और उनका कहना कि हम अपने लिए थोड़ी रोते हैं। हमें तो आपकी बेकसी पर रोना आ रहा है हम देख रहे हैं कि आपको चारों तरफ से घेर लिया गया है और यह कि अब हमसे आपकी हिफाजत करार वाक़ई तौर पर न हो सकेगी।

इसी तरह यह वाकेया भी कि बशीर बिन अम्र हजरमी को खबर पहुँचती है कि उनका फरज़न्द अम्र रै की सरहद में कैद हो गया है। इमाम बुलाते हैं और फरमाते हैं कि तुम मेरी बैयत से आजाद हो जाओ और अपने फरज़न्द की रिहाई की फिक्र करो और वह बावफ़ा मुजाहिद कहता है कि मुझे जीते जी दरिन्दे खा जायें अगर मैं आपसे जुदा हूँ। यह किसी तरह मुमकिन नहीं।

इन्फेरादी तौर पर जान बचाने के इम्कानात ठुकराये जा रहे थे सिर्फ हुसैन[अ०स०] के साथ हक्क़े वफादारी अदा करने के लिए जनाबे अबुल फजलिल अब्बास[अ०स०] और उनके भाईयों को दो अमान नामे पहुँचे एक अब्दुल्लाह बिन अबल महल के जरिये से जो उनकी वालिदा ए गिरामी उम्मुल बनीन का भतीजा था और एक शिम्र के जरिये से जो उसी खानदान से था मगर दोनों रद कर दिए गए अपने सामने जिन्दगी की राह साफ होने के बावजूद दूसरे की खातिर मौत को इख़्तियार करना कोई मामूली ईसार का मुजाहिरा नहीं है। फिर यह भी इमाम और उस पूरी जमाअत का ईसार ही था कि दीनो मज़हब के तहफ्फुज और नौए इन्सानी को मजालिम से बचाने की खातिर अपना सब कुछ नज़्र कर दिया और किसी भी शै को जो दुनिया के किसी शख्स को अजीज होती, उन्होंने कतअन अजीज न किया।

मवासात

दूसरे का मुसीबत में मुबतिला पाकर उसका शरीक और हमदर्द बन जाने का नाम मवासात है। करबला में हुसैन[अ०स०] और अन्सारे हुसैन[अ०स०] ने बाहमी मवासात का बे मिसाल नमूना पेश किया।

इमाम की मवासात का यह आलम था कि कोई मुसीबत अन्सार व असहाब पर नहीं पड़ी जिसमें इमाम ने उनका साथ न दिया हो। अन्सार और अज़ीज़ों की शहादत के उनवान मुख़्तलिफ थे लेकिन जब इमाम की शहादत पर नज़र डाली जाती है तो मालूम होता है कि वह किसी एक उनवान के साथ मख़सूस न थी बल्कि एक बेकस के कत्ल की जितनी सूरतें हो सकती हैं वह उस एक जात में जमा हो गई थीं इसी तरह असहाबे हुसैन[अ०स०] की इमाम के साथ मवासात दुनिया–ए–तारीख़ में बेनजीर है। वह सिर्फ अपनी

जानें नहीं दे रहे थे बल्कि दुनिया को मवासात का न भूलने के क़ाबिल सबक याद करा रहे थे और एक बेनजीर मिसालिया कायम कर रहे थे।

हुस्ने मुआशिरत

दोस्तों के साथ क्या बर्ताव होना चाहिए और अपनों में किस तरह मसावात (बराबरी) मद्दे नजर रहना चाहिए इसका बेहतरीन सबक इमाम हुसैन[अ०स०] ने दिया है। पहले के वाकयात का तजकिरा जबकि इतमिनान के लम्हे और सुकून के अवक़ात थे इतना अहम नहीं है क्योंकि उन हालात में दूसरे भी मुआशिरती (सोसाइटी) हुकूक़ का कुछ न कुछ लिहाज करते हैं मगर आशूर के दिन जब मसाएब का हुजूम था, इमाम हुसैन[अ०स०] ने किस तरह हुकूक का लिहाज़ किया है और यह ख़याल रखा है कि किसी के साथ जानिबदारी और पासदारी होने न पाए इसको करारे वाक़ई तौर पर समझने के लिए यह देखना होगा कि जमाअत हुसैनी में अज़ीज भी थे और गैर भी थे मगर आपका तर्जे अमल सबके साथ अपने अपने हुदूद मे मसावियाना (बराबर) था और फिर हिफ़्जे मरातिब (दर्जा) के साथ यही चीज़ मुशकिल है। जग के मैदान में और खयामे हुसैनी के कयाम की जगह में काफी फासला था। चुनाँनचे इमाम के नफ्स को कितना तअ्ब (थकन) और कितनी मशक्क़त बर्दाश्त करना होती होगी मगर चूँकि आपको सबसे अज़ीज़ाना बर्ताव करना जरूरी था। लिहाजा जो मुजाहिद आता था और इजाजत जिहाद माँगता था ब–गौर उसे देखते थे, इजाजते जिहाद देते थे जब तक कि जंग करता था खड़े होकर उसकी जग का मुशाहिदा फरमाते थे और जब ज़ख्मी हो कर गिरता था तो उसकी लाश पर जाते थे। उस धूप और गर्मी और तमाजते आफ़ताब मे हर शहीद की लाश पर जाना और फिर वापस आना कितनी सख़्त जहमत का बाइस होता होगा। मगर इमाम को तो दिखाना था कि एक सरदार, एक रईस और एक अफसर को अपने साथियो, मा–तहतो या सिपाहियों के साथ किस तरह यगायगी और मसावात को मल्हूज (पेशे नजर) रखना चाहिए।

उन सख़्त अवक़ात मे जबकि एक इन्सान के होश व हवास बजा नहीं रह सकते, यह इमाम हुसैन[अ०स०] ही का काम था कि मुआशिरती हुकूक़ की निगहदाश्त (हिफ़ाजत) कामिल तौर पर मलहूज रखी फिर याद कीजिये वह

वाकेया कि जब बशर बिन अम्र को उनके फरजन्द की गिरफ्तारी की खबर मिली थी तो इमाम हुसैन[अ०स०] ने उनका बुलाकर फरमाया कि जाओ और अपने फरजन्द की रिहाई की फ़िक्र करो और उस मुजाहिद ने कतई तौर पर साथ छोड़ने से इन्कार किया था उस वक्त क़द्र दाने इमाम ने उनको पाँच क़ीमती कपड़े दिये थे जिनकी क़ीमत पाँच हज़ार अशरफी के क़रीब थी और फरमाया था कि अच्छा तुम नहीं जाते हो तो अपने फ़रजन्द मोहम्मद को भेज दो ताकि वह इन कपड़ों की कीमत से अपने भाई की रिहाई का सामान करे। आम तौर पर इन्सान फराएज के पूरा करने में मामूली से मामूली उज़्र के जरिये अपना बचाव करता है और इमाम हुसैन[अ०स०] से बढकर जाहरी तौर पर उस वक्त मजबूर कौन समझा जा सकता था आप अपने वतन मे नहीं बल्कि सफर में थे यही मजबूरी इजहारे माजूरी के लिए काफी थी सूरते वाकेया से यह भी जाहिर होता है कि आपके पास नकद रूपया भी मौजूद न था। फिर उस वक्त महसूर (घिरे) भी थे। बे–आबो दाना भी थे मौत की मन्जिल के सामने भी थे। अपनी और तमाम साथियो की जान का मुआमिला दरपेश था। ऐसी हालत में अगर उस परेशानी पर जो आपके एक साथी को दरपेश थी आप अखलाकी तौर पर सिर्फ इजहारे अफ़सोस पर इक्तिफ़ा करते तो उन हालात के लिहाज़ से कोई मुतनफ्फिस (जानदार) आपके तर्जे अमल पर हर्फ़गीरी (उंगली नहीं उठा सकता) नही कर सकता था मगर हुसैन[अ०स०] उस दिन कमाले इन्सानियत का मिसालिया कायम कर रहे थे। आपने उस वक्त भी जब हर शख्स आपको मजबूर समझ रहा था और उन होशरूबा (होश उड़ा देने वाली) परेशानियों के आलम में जो दरपेश थीं आपने खुद अपने इमकानात का जाएजा लिया और जो मुमकिन सूरते इमदाद की नज़र आई उससे दरेग नहीं किया।

मैदाने करबला में ऐन मारक–ए जग मे अक्सर साथियो और अजीजों ने मुखतलिफ़ तरीकों पर हुसैन[अ०स०] से मदद चाही और कभी यह नहीं हुआ कि आपने मदद न दी हो

याद कीजिये वह मौका जब अम्र बिन ख़ालिद सैदावी मजमा बिन अब्दुल्लाह और जुनादा बिन हारिस वगैरह पाँच बहादुरों ने अन्सारे इमाम हुसैन[अ०स०] में से फौज मुखालिफ़ में घुस कर शमशीर जनी करना शुरू कर दी थी और फौजे आदा ने उनको चारों तरफ से घेर कर जख्मी कर दिया था। यह देखना था कि इमाम हुसैन[अ०स०] ने अपने भाई अब्बास[अ०स०] को उनकी

इमदाद के लिए भेजा। और आप ने तने तन्हा जाकर फ़ौज पर हमला किया और बहादुरों को दुश्मनों के हल्के से निकाल लिया था।

यह अब्बास[अ०स०] वही थे जिनकी जिन्दगी इमाम को इस क़द्र अजीज थी कि जब तक एक मुजाहिद भी मौजूद रहा अब्बास को मरने की इजाजत नहीं दी मगर साथियो की क़द्र दानी ऐसी थी कि उनकी ख़ातिर अपने ऐसे अजीज़ भाई को फौज के नरगे में भेज दिया और खत्र की कोई परवाह नहीं की

वह भी एक तरह की इम्दाद ही थी की जब अब्दुल्लाह बिन उमैर मैदान में मसरूफ़ थे और उनकी वफ़ादार बीवी उम्मे वहब गुर्ज़ हाथ में लिये हुए मैदान मे निकल आई थी और पुकार कर कहने लगी थी कि "हाँ मेरे माँ बाप तुम पर निसार नुसरते औलादे रसूल में कोताही न हो।" अब्दुल्लाह से कुछ बन न पड़ता था कि जौजा को किस तरह ख़ेमे में वापस करें इमाम ने जो यह देखा आवाज दी कि "ऐ मोमिना ख़ेमे में वापस जा औरतो पर से जिहाद साकित है।' हुक्मे इमाम का वह नहीब (रोअ्ब) था कि फर्ज शनास खातून फौरन वापस हुई और ख़ैमे में चली गई।

असहाबो अइज्जा में ज्यादातर जो घोडे से गिरता था यही आवाज देता था कि या अबा अब्दिल्लाह अदरिकनी (यानी) ऐ इमाम मेरी खबर लीजिये और आप हर एक की इमदाद का अपना फर्ज समझते थे इमाम की कोशिश यह थी कि किसी का सर उसके तन से जुदा न किया जा सके और यह एक वाकेया है कि इमाम की जिन्दगी में सिवाये बाज़ अन्सार के जिन्हे इमाम को आवाज देने का मौका भी न मिल सका था और किसी का सर तन से जुदा नहीं किया जा सका।

शोहदा की लाशों का एहतेराम हजरत को इम्कानी हद तक पेशे नजर था असहाब की शहादत के मौके पर तो साथी अक्सर मौजूद होत थे जो लाश की हिफ़ाजत का सामान कर लेते थे मगर जब अजीजों की बारी आई तो फिर ज्यादा तर खुद हुसैन[अ०स०] को उनकी लाशो को मैदान से उठवाने और ख़ैमे तक लाने का एहतेमाम करना पड़ा अली अकबर[अ०स०] के लिए कुछ जवानाने बनी हाशिम के जिम्मे यह खिदमत की गई कि अपने भाई की लाश खैमे तक पहुचाओ और कासिम की लाश आपने खुद उठाई और दूसरे बनी हाशिम की लाशों के पास पहुचाई। फिर भी यह तमन्ना दिल मे यकीनी होगी कि काश आप उन सबको दफ्न भी कर सकते इसलिए अगर हालात ने इतनी मोहलत न दी कि आप बडी लाशों को दफ्न कर सकें फिर भी आपने

इस फर्ज को कुल्लियतन तशन–ए–तकमील नही छोड़ा चुनानचे शीरख्वार अली असगर की छोटी सी लाश को आपने अपने हाथ से सिपुर्दे जमीन किया। और इस तरह यह साबित कर दिया कि उस सख्त तरीन हगाम ए मसाएब में ऐसा नही होने पाया कि कोई एक फरीज ए–एखलाकी भी आपकी नजर से ओझल और तवज्जा से महरूम रह सके।

इन्सानी हमदर्दी

दोस्तो के साथ मराआत और सुलूक करना एक मोतदिल (Ba ance) फ़ितरत इन्सान का खास्स–ए–मिजाज होता है और यह कोई गैर मामूली अम्र नहीं है लेकिन दुश्मनों के साथ एहसान करना और उन लोगों के साथ नेक सुलूक करना जो अपने से जग पर तैयार हों। उनकी जरूरत पर काम आना जो अपने खून के प्यासे हो यह हर इन्सान का काम नहीं है। यह सबक हुसैन[अ०स०] ने दिया।

इस सिलसिले मे नाजरीन को करबला के रास्ते में मन्जिले शिराफ का वाक़ेया याद होगा।

करबला में आखिर वक्त तक दुश्मनों की खैरख्वाहाना (हमदर्दी) नसीहत से बाज नहीं आए।

असहाब भी इमाम के रास्ते के सालिक (साथी) और आपके कदम ब कदम थे। हर एक ने नसीहत व दावते हक के फर्ज को अदा किया। जुहैर बिन कैन की तकरीर इसी जजब ए हक कोशी की तरजुमान थी। वह कह रहे थे

"देखो हर मुसलमान का फ़र्ज है कि वह अपने बरादरे मुस्लिम को खैर ख्वाही के साथ नसीहत करे। और सच्चा मश्वरा दे और हम तुम अभी तक भाई भाई हैं और एक ही दीन और एक ही मिल्लत पर हैं जब तक हमारे दरमियान तलवार चलने न लगे। उस वक्त तक तुम इसके मुस्तहक हो कि तुमको नसीहत करें और नेक सलाह दे

हकीकत में हुसैन[अ०स०] अपने किसी दुश्मन के भी दुश्मन न थे बल्कि दोस्त थे वह चाहते थे कि वह किसी तरह निजात के रास्ते पर आ जाए

साफ़ बयानी

दुनिया के सियासत अन्देश और कयादत पसन्द अफ़राद जब किसी तहरीक के दाई (बानी) होते हैं तो वह उन लोगों को जिन्हें साथ लेना चाहते हैं तरह तरह के मवाईद (वादो) से अपनी हिमायत पर आमादा करते और तरह

तरह के खुश आइन्द तवक्कुआत पैदा करा के उन्हे अपनी तरफ मुतवज्जा करते हैं फ़तह व जफर की कहानियाँ सुनाई जाती हैं। मालो दौलत और जाहो सरवत के ख्वाब दिखाए जाते हैं और इस तरह लोगों को अपने गिर्द मुजतमा (जमा) किया जाता है।

कौन होगा जो अपनी कमजोरियाँ, मायूसियाँ और ना उम्मीदियो को उन अशखास पर जाहिर कर दे जिनसे उसे काम लेना मन्जूर हैं बजाएकि कहना कि तुम हमारा साथ छोड़ दो। हमारे पास से चले जाओ और हम नहीं चाहते कि तुम हमारी वजह से जान दो।

मगर हकीकत यह है कि इन्सान की सच्चाई ईमानदारी और दियानत पर बड़ा हर्फ़ आता है इससे कि वह दूसरो को धोखे में मुबतिला रखे और ग़लत तवक्कुआत क़ायम कराके अपने साथ ले या कम अज कम खामोश रह कर अरसे तक उनको गलत फ़हमी में मुबतिला रहने दे।

इमाम हुसैन[अ०स०] ने शुरू से आखिर तक इस बात की कोशिश की कि कोई आपके मुतअल्लिक गलत फहमी में मुबतिला न हो और गलत तवक्कुआत की बिना पर साथ देने के लिए आमादा न हो आप बराबर हकीक़ते हाल और अपने आखरी अन्जाम से मुत्तेला करते रहे और एलान फरमाते रहे कि हमारा आखरी नतीजा इस सफर में मौत है।

उस वक्त जबकि अभी मदीन–ए–मुनव्वरा से रवाना भी न हुए थे और अगयार (मजमा) आपके साथ न हुए थे। सिर्फ अइज्जा थे जो हमराही पर आमादा थे उस वक्त भी आप ऐसी बाते करते थे जिनसे खुद बखुद मौत के इस्तेकबाल की तैयारी का पता चलता था।

चुनाँनचे अबू सईद मकबरी जो रजब सन 60 हिजरी में यानी उस जमाने में जब इमाम हुसैन[अ०स०] मदीन–ए–मुनव्वरा से रवाना हुए हैं वहाँ मौजूद थे नाकिल (बयान करते हैं) हैं कि मैंने इमाम हुसैन[अ०स०] को देखा कि आप मस्जिदे नबवी में तशरीफ़ ले जा रहे थे और आपकी ज़बान पर इब्ने मुफर्रग शाएर का यह क़ौल ब–तौरे तमसील (मिसाल) जारी था कि

لاذعرت السوام فی فلق الصبح　سعیر اولا دعیت یزیدا

یوم اعطی من المهابة ضیما　والمنایا یرصدننی ان احیدا

''यानी यह नहीं हो सकता कि मौत के खौफ से मैं जिल्लत को बरदाश्त करूँ और उस वक्त कि जब मौत मेरी ताक में हो मैं हट जाऊँ।

यह कोई तकरीर नहीं थी और न कोई खास एलान था मगर सुनने वाले ने समझ लिया और बाद मे बयान किया कि इन अशआर को सुनते ही मैंने अपने दिल में कह दिया कि ब–खुदा इन शेअ्रो का पढना रम्ज (राज) से खाली नहीं और कोई न कोई खास मुहिम आपके पेशे नजर है। उसके बाद दो दिन न गुजरे थे कि आप मदीने से रवाना हो गए।[1]

अब वह वक्त आया कि आप मक्क–ए–मुअज्जिमा से रवाना होने वाले हैं। यह वह वक्त है कि लोगों को बहुत खुश आइन्द (अच्छे दिन) तवक्कुआत (उम्मीदें) आपके मुतअल्लिक कायम हो चुके हैं इसलिए कि कूफ़ा इराक का पाए तख्त और बड़ा मरकज है। हजरत अली[अ०स०] का दारूस सलतनत रह चुका है लोगों की गलत खयाली उन्हे इस धोखे मे मुबतिला किए हुए है कि कूफा अली[अ०स०] और औलाद अली[अ०स०] के दोस्तों से भरा हुआ है। वहाँ से बारह सौ खत भी आ चुके हैं कि आप आईये और हम आपकी नुसरत में अपना खून पसीने की तरह बहाने के लिए तैयार हैं। इन खुतूत के बाद हजरत मुस्लिम[अ०स०] रवाना किए जा चुके हैं और उनका भी खत आ चुका है कि अट्ठारह हजार आदमियों ने आपकी बैयत कर ली है। इस सबके बाद इमाम हुसैन[अ०स०] कूफे की तरफ़ रवाना हो रहे हैं तो आम अफराद का खयाल इसके मुतअल्लिक यही है कि आप एक ऐसी जगह जा रहे हैं जहाँ ताजो तख्त के मालिक होंगे और बादशाह तस्लीम किए जायेंगे इसलिए फितरतन बहुत से लोगो को आपके साथ इस खयाल से हो जाना चाहिए था कि वहाँ जाकर आपकी सलतनत से फाएदा उठायेंगे और नीज चूकि आप ज़रखेज (उपजाऊ) खित्त ए जमीन की तरफ जा रहे हैं इसलिए वहाँ जाकर माली मुनाफ़े भी हासिल करेंगे। इस तरह यकीनन आप जो कूफे की तरफ तशरीफ ले जाते तो एक कसीर (बड़ी) जमाअत जो एक लशकर की हैसियत रखती होती आपके साथ होती लेकिन यह आपको मन्जूर न था आपने जरुरत महसूस की कि आम लोगों के सामने हकीकत को वाजेह फ़रमा दें और सब पर आशकार कर दें कि उनके खुश आइन्द तवक्कुआत सराब (धोखा) से ज्यादा हकीकत नहीं रखते आपने मक्क ए–मुअज्जिमा से रवानगी के एक दिन कब्ल हम्दो सलात (नमाज) के बाद यह तारीखी खुतबा इरशाद फ़रमाया कि

"मौत औलादे आदम के गले का हार है मैं अपने असलाफ (बुजुर्गों) की मुलाकात का मुशताक हूँ उतना कि जितना याकूब यूसुफ़ की मुलाकात के

[1]तबरी जि 6. पेज/191

मुशताक थे। मेरे लिए बेहतर है वह जगह जहाँ मैं कत्ल करके गिराया जाऊँगा। मेरे पेशे नजर है वह मन्जर जब मेरे जोड़ बन्द वहशी दरिन्दे कता कर रहे होगे मेरे खून से अपनी प्यास बुझा रहे होंगे। और अपनी हसरतें मेरे खून से निकाल रहे होंगे। कोई चार–ए–कार नही है। कोई मफर (फरार) नहीं है उस दिन से जो कलमे तकदीर ने लिख दिया है। जो खुदा की मर्जी हो। उसी में हम अहलेबैत की मर्जी है हम उसकी आजमाइश पर सब्र करते हैं और जो साबरीन का अज्र है उसको पूरा पूरा हासिल करते हैं रसूले खुदा[स०अ०] से उनके जिगर के टुकड़े दूर नहीं हो सकते बल्कि वह बारगाहे कुदरत में जन्नते आला में उनके पास जमा होने वाले हैं जिनसे उनकी आँखें खुन्क (ठडी) होंगी और उनका वादा पूरा होगा।

जो अपनी जान मेरे साथ फिदा करना चाहता हो और मौत पर कमर बाँधे हुए हो वह मेरे साथ चले मैं सुबह को इन्शाअल्लाह रवाना हो जाऊँगा।

देखिए किन अलफाज में लोगो को अपने साथ चलने की दावत दी जा रही है। क्या इससे बढकर दुनिया में हक्कानियत और सच्चाई का सुबूत हो सकता है? क्या इससे बढकर साफ गोई और पाकबाजी का मुजाहरा हो सकता है? अब साथ चलने वाले वही लोग थे जो जान देने पर तैयार थे। जो हकीकतन इस्तेकलाल और साबित कदमी रखते थे जिनको दुनिया की तवक्को (उम्मीदें) और राहते दुनिया का कोई खयाल अपनी तरफ मुतवज्जे नहीं कर रहा था। बल्कि वह मजाज (बेहकीकत) के पर्दों को चाक करके हकीकत को हासिल करना चाहते थे

इस हकीकत परवर तकरीर के बाद वही लोग आपके साथ हुए जो दुनिया के मालो दौलत और जाहो हशम को हेच (बेकार) समझते थे। जो हकीकी जिन्दगी के तालिब थे और उसे मौत का नतीजा समझते थे।

यह तकरीर मक्क–ए–मुअज्जिमा में की गई थी जिसने हर किस्म की गलत फ़हमी के पर्दों को चाक कर दिया और हकीकते हाल वाजेह कर दी मगर मक्क–ए–मुअज्जिमा से रवानगी के बाद रास्ते के आराब (देहाती), बादिया नशीन (रेगिस्तान के रहने वाले) कबाएल और दूसरे बेखबर अशखास इमाम को देखते हैं कि एक जमीअत के साथ एक काफिले की सूरत मे जा रहे हैं दरयाफ्त करते हैं मालूम होता है इराक का इरादा है, वहाँ से तलबी हुई है। ज्यादा तर जो सुनता है उसे खयाल होता है कि हम भी आपके साथ हो ले।

नतीजा यह हुआ कि मक्क–ए–मुअज्जिमा से साथ चलने वाली जमाअत गो मुख़्तसर थी मगर रास्ते में तरह तरह के लोग शरीक होते गए और इस तरह वह जमीअत जो इसके कब्ल एक काफेले की हैसियत रखती थी एक लशकर की सूरत इख्तियार कर गई।

कोई और होता तो इस नाख्वान्दा (बे बुलाये) अजदहाम को गनीमत समझता और उसके अपने साथ हो जाने को बेहतरीन इत्तेफाक खयाल करता। वह चाहता कि किसी तरह उन्हें गिरवीदा बनाये रखे और अपनी गिरफ्त से निकलने न दे मगर इमाम हुसैन[अ०स०] ने अरसे तक इस सूरते हाल को बरदाश्त न किया। बल्कि उस वक्त जब मुस्लिम बिन अक़ील और हानी बिन उरवा के क़त्ल होने की खबर पहुची और अब्दुल्लाह बिन यकतर जो आपके क़ासिद थे उनके भी शहीद होने की इत्तेला आ गई तो मन्जिले जिबाला पर आपने क़याम फरमाया और एक तहरीर जिसे सरकारी बयान कहना चाहिए आपने तमाम अहले काफेला के मजमे में पढ़कर सुनाई जिसका मजमून यह था कि

हमे यह दर्दनाक खबर पहुची है कि मुस्लिम बिन अक़ील और हानी बिन उरवा और अब्दुल्लाह बिन यकतर शहीद कर डाले गए और उन लोगों ने जो हमारी दोस्ती का दावा करते थे हमारा साथ छोड़ दिया। इस सूरते हाल के बाद जो शख़्स तुम में से वापस जाना चाहे वह वापस चला जाए। हमारी तरफ़ से उस पर कोई जिम्मेदारी आएद न होगी।"

हजरत की इस तकरीर के बाद लोग मुतफर्रिक़ (छटने) होने लगे यहाँ तक कि बस वही मुन्तखब जमाअत रह गई जो आपके साथ मदीन ए मुनव्वरा से आई थी

यूँ समझना चाहिए कि मजमा छट जाने के बाद सिर्फ वही लोग रह गए जो आपकी मक्क–ए–मुअज्जिमा वाली तकरीर को सुन चुके थे और हकीकतन मौत पर आमादा थे।

उसके बाद करबला पहुंच कर दसवीं मुहर्रम की शब को जबकि सुलह की गुफ्तगू खत्म हो चुकी थी और सिर्फ एक रात की मोहलत ब मुशकिल माँगने से मिली थी और साथ गिनती के मुन्तखब अफ़राद रह गए थे जो मौत के यकीनी होने का जिक्र कई बार सुन भी चुके थे मगर हजरत ने चाहा कि खतरे के बिल्कुल सामने आने के बाद भी साथ वालों को मौका दे दिया जाए। चुनानचे आपने एक मबसूत (साफ लफ़्जों में) और यादगार खुतबा इरशाद फरमाया उसमें साफ तौर से कह दिया कि कल का दिन हमारा उन दुशमनों

के साथ तारीखी होगा। मैंने तुम्हारे मुतअल्लिक़ गौर किया है और इस नतीजे पर पहुचा हूँ कि तुम सब इस वक्त चले जाओ और मेरी इजाज़त से मेरा साथ छोड़ दो। तुम पर मेरी तरफ़ से कोई जिम्मेदारी आएद न होगी। देखो रात का पर्दा पड़ गया है उसे तुम अपने लिए गनीमत समझो और उससे फ़ाएदा उठाओ। तुम खुद भी जाओ और इतना और भी करो कि हर एक तुममें से मेरे एक एक अजीज का हाथ पकड ले और उसे साथ लेता जाए। उसके बाद अपने अपने देहात और शहरो मे मुतफर्रिक (इधर उधर) हो जाओ तावक्तेकि तुम्हे कशाइश (आसूदगी) हो और बनी उमैया की सलतनत से निजात हासिल हो। यह लोग तो सिर्फ मेरे तालिब हैं जब मैं उन्हें मिल जाऊँगा और मुझे क़त्ल कर डालेंगे तो फिर उन्हें किसी दूसरे की फ़िक्र न होगी।

यह आखरी इतमामे हुज्जत थी लेकिन ऐसी जमाअत के सामने जिसमें का कोई फर्द हकीकते हाल से बे ख़बर होकर या किसी लालच से साथ नहीं आया था लिहाजा एक तरफ अइज्जा खडे हो गए और दूसरी तरफ असहाब और सबने इमाम का साथ छोडने से इन्कार किया।

इमाम हुसैन[अ0स0] ने इस तर्जे अमल से यह सबक दिया कि दुनिया में हक्कानियत जमीर की सफाई और अमानत का लिहाज रखना चाहिए। किसी गलत फहमी से फाएदा उठा कर अपना मकसद न निकाले कभी गलत तवक्कुआत क़ायम करके अपनी कार बरारी (काम न निकाले) न करे गलत फहमी का सद्दे बाब (दूर) करके जो हकीकी जान निसार हों बस उनकी ही हमदर्दी कुबूल करे और किसी की गलत अन्देशी और फरेब खुर्दगी (धोखे में रख कर) से फाएदा न उठाए

अम्न पसन्दी और रवादारी

यह इस्लाम का एक बुनियादी उसूल है।

अम्नो अमान यानी "जियो और जीने दो। इसकी तरफ़ खुद इस्लाम का नाम तक इशरा रखता है। "इस्लाम मुश्तक है।" 'स्लिम' से और उसके मानी हैं 'सुलह पसन्दी " और ईमान जो एक बलन्द मर्तबा है वह मुश्तक है 'अमन" से। एक सच्चे मुस्लिम और मोमिन की शान यह है कि उसके हाथ और जबान से दूसरे अफराद महफूज रहें तुम्हारे हाथ से किसी को तकलीफ न पहुचे। तुम बिला वजह किसी से बर सरे पैकार (लडो नहीं) न हो। कभी फितना व फसाद के बाइस न हो लेकिन उसके साथ एक अहम उसूल और

है। वह यह कि बातिल की हिमायत कभी न करो और तुम्हारे अमल से हक पामाल न होने पाए

यह दो उनसुर (बुनियादे) अम्न पसन्दी मगर हिमायते बातिल से एलाहदगी ही वह होते हैं जिनके लिए अकसर सब्रो सुकून और कभी कयाम व इकदाम (जुल्म के खिलाफ खडे होना) दोनों ही बातों की जरूरत होती है इस तरह कि जब तक अपने ऊपर हिमायते बातिल का इलज़ाम न आता हो उस वक्त तक चाहे जितने भी नुकसानात बरदाश्त करना पडें और नागवार तबा (दिल को नागवार गुजरने वाले) हालात से गुजरना पडे, अमन पसन्दी और खामोशी कायम रहे। मगर जिस वक्त खामोशी से हक का दामन तार तार होता हो और बातिल को तकवियत देने की जिम्मेदारी अपने ऊपर आती हो उसी वक्त से खामोशी की मोहर टूट जाए और जिस हद तक इक़दाम जरूरी हो और आगे बढना बातिल परवरी से दामन बचाने के लिए लाजिम हो दरेग न किया जाए चाहे अपने ऊपर इसमें जो भी मजालिम हो जायें।

यही चीज हमको पैगम्बरे इस्लाम[स0अ0] की सीरत मे नजर आती है, यही अमीरुल मोमिनीन हजरत अली[अ0स0] के यहाँ यही हजरत इमाम हसने मुजतबा[अ0स0] के यहाँ और यही इमाम हुसैन[अ0स0] के वाकेआते ज़िन्दगी और क़दम की रफ्तार में साफ नुमायाँ है।

किताब के इब्तेदाई हिस्सो मे पैगम्बरे खुदा[स0अ0] के सुलह हुदैबिया फिर हजरत अली बिन अबी तालिब[अ0स0] के दौरे हयात और फिर सुलहे इमाम हसन[अ0स0]के हालात में यह मिसालें काफी वजाहत के साथ दर्ज हुई हैं। उन पर जरूरी तबसिरा भी किया गया है

इमाम हुसैन[अ0स0] ने सुलहे हसन[अ0स0] के बाद दस बरस तक इमाम हसन[अ0स0] की जिन्दगी में और दस बरस इमाम हसन[अ0स0] के बाद रवादारी और खामोशी की जिन्दगी बसर की हालाँकि उस मुद्दत में कैसे सब्र आजमा मराहिल पेश आए। इमाम हसन[अ0स0] की वफात और रसूल[स0अ0] के रौज़े में दफन से मुमानिअत (मना) यह कोई मामूली वाकेया नहीं था मगर हुसैन[अ0स0]जिनकी शुजाअत व जुरअत का वाक़ेय–ए–करबला ने दुनिया से कलमा पढवा दिया ऐसे मौक़े पर खामोश रहे। यह रवादारी न थी तो क्या था?

यजीद की बिल्कुल गैर आईनी (नाजाएज) खिलाफत के सिलसिले मे अमीरे शाम ने जो सूरते इख्तियार कीं जलसे किए ममालिके इस्लामिया में पैगाम रवाना किए, लोगों को बैयत पर मजबूर किया मगर इमाम हुसैन[अ0स0] की

तरफ़ से उसके खिलाफ़ कोई इस तरह का इक़दाम नहीं हुआ कि आप इस्लामी बिलाद (शहर) में खुतूत भेजते, इज्तेमाई जलसे करते, तक़रीरों और तहरीरों के जरिये से मुसलमानों को मुखालिफत पर आमादा करते। ऐसा नहीं होता।

आपका इब्तेदाई और इन्तेहाई इक़दाम उन मौकों पर यही इन्कार था कि मैं बैयत नहीं करूँगा आप जानते थे कि अगर मुसलमानों में सोचने समझने की कुछ भी सलाहियत बाक़ी है तो यह मेरा इन्कार ही है हक पर से पर्दा हटाने के लिए काफी है। और अगर उनकी कूव्वते शुऊर (समझने की सलाहियत) व इम्तियाज बिल्कुल खत्म ही हो गई है तो कम अज कम हम तो ताईदे बातिल के जिम्मेदार न होंगे हमे दुनिया से मतलब नही है वह जैसे चाहे ख़लीफा और बादशाह बनाए और जो करना हो करे मगर हमसे तअर्रुज (बूछ--गछ) न करे, हमसे बैयत की ख्वाहिश न हो यह उसूल था जिस पर इमाम हुसैन[अ०स०] अव्वल से कायम थे और आखिर तक कायम रहे और इसी लिए मुआविया ने अपनी आजमूदा कारी (तजरबा) और जहाँ दीदगी (समझदारी) से आपके खिलाफ कोई सख़्त अमली क़दम नहीं उठाया क्योंकि वह समझते थे कि हुसैन[अ०स०] अम्नो अमान के हामी हैं, जब तक हम खुद उन्हे मजबूर न करेंगे वह अम्न पसन्दी से अलाहिदा न होंगे।

लेकिन उसके बाद मुआविया का इन्तेकाल हो गया और यजीद तख़्ते खिलाफत पर बैठा बाप बेटे में नुमायाँ तफरका (फर्क) था।

यजीद, हुसैन[अ०स०] से ब–जब्र (जबरदस्ती) बैयत का तालिब हुआ और मदीने के गवर्नर ने बैयत का मुतालबा हुसैन[अ०स०] के सामने सख़्ती के साथ पेश किया।

यह मालूम है कि जब एक बादशाह दुनिया से जाता है तो लोगो में खास तौर से इन्तेशार होता है और निजामे हुकूमत भी इन्तेहाई कमजोर हो जाता है। अगर हुसैन[अ०स०] चाहते तो चूंकि उस वक्त मदीने मे वलीद के पास कोई ख़ास फौज भी मौजूद न थी वलीद को क़त्ल कर देते और मरवान का भी काम तमाम कर देते और इस तरह वक्ती हैसियत से मदीने में आपकी सलतनत कायम हो जाती और फिर आपको मौका होता कि अतराफ व जवानिब मे खुतूत लिखकर अपने जेरे असर एक बड़ा लशकर फराहम कर लें मगर उस सूरत में एक तवील सिलसिल ए हर्बो जर्ब (जग) के आगाज की जिम्मेदारी आप पर आएद होती जिसका नतीजा भी बहर हाल मशकूक था।

आपने खूँरजी से बचने के लिए मदीना छोड़ना गवारा किया और मक्क ए–मुअज्जिमा तशरीफ ले गए जहाँ आपका जाना इस बात का अमली सुबूत पेश करता था कि आपका हकीकी मक़सद सिर्फ़ हिमायते बातिल से अलग रहते हुए अपनी और अपने मुतअल्लिकीन की जिन्दगी को खतरे से महफूज़ रखना है इसलिए कि मक्क–ए–मुअज्जिमा वह जगह है जिसको (मामिनन्नास) तमाम अन्सानों के लिए महल्ले अमन क़रार दिया गया है

यहाँ आने के बाद दुनिया की कोई तारीख इस बात का पता नहीं देती कि आपने लोगों को मक्क–ए–मुअज्जिमा के अन्दर अपनी तरफ दावत दी या कुछ लोगों को बाहर से बुलाया हो और लशकर की फराहमी में किसी किस्म का कोई क़दम उठाया हो

जाहिर है कि रसूल अल्लाह[स०अ०] से जो निसबत आपको थी और मक्के वालों को जितनी आपकी हस्ती अजीज़ हो सकती थी उतनी अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर की नहीं थी। चुनानचे तारीख बतलाती है कि इमाम हुसैन[अ०स०] के मक्के में वारिद होने से पहले लोग अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर के गिर्द आकर बैठा करते थे लेकिन जब से आप तशरीफ ले आए थे तमाम लोगों ने अब्दुल्लाह को छोड़ दिया था और इमाम के गिर्द परवाना वार जमा हो गए थे फिर जब अब्दुल्लाह के लिए मक्के में यह मुमकिन हो सका कि वह अपना मजबूत जंगी महाज कायम कर ले और एक अरसे तक हुकूमते शाम से बरसरे पैकार रहें तो इमाम हुसैन[अ०स०] के लिए यह बदर्जे–ए–औला (बेहतर) मुमकिन होता मगर आपने मक्क ए मुअज्जिमा में खामोशी के साथ कयाम करके अमली तौर पर एलान कर दिया कि हम दुनिया मे अम्न अमान के ख्वाहाँ हैं चाहते हैं कि दुनिया में सुकून रहे मगर हम भी अपने इस हक के साथ जिस पर हम हैं क़ायम रहे अमनो अमान में खलल भी न पडे और बातिल की हिमायत भी न होने पाए।

जब इराक वालों को यह खबर मालूम हुई कि इमाम हुसैन[अ०स०] ने इस तरह बैयत से इन्कार किया है तो उन्होंने खुतूत लिखना शुरू किए जिनकी तादाद सैकड़ों तक पहुची उन खुतूत मे से बाज में यह भी दर्ज था कि अगर आप आ जाये तो हम नोमान को बाहर निकाल दें और आपको हाकिम बना दे मगर इमाम हुसैन[अ०स०] ने उन खुतूत के जवाब में जो कुछ लिखा उसमें यह तारीखी फिक़रात भी दर्ज किए कि इमाम के मानी सिर्फ़ यह है कि किताबे

ख़ुदा पर आमिल (अमल पैरा) हो इन्साफ़ का पाबन्द हो। हक को अपना उसूले जिन्दगी करार दे और अपनी जात को ख़ुदा की ख़ुशनूदी के लिए वक्फ़ रखे

इसका साफ मतलब यह था कि यह न समझना कि मैं जो आ रहा हूँ वह इसलिए कि किसी के खिलाफ तलवार उठाऊँगा या तख्ते सलतनत पर कब्जा करूँगा बल्कि मुझे हिदायते खल्क मन्जूर है और किताबे इलाही व सुन्नते रिसालत पनाही का इजरा (आम करना) मक़सूद है।

खत में इसका इशारा तक नहीं कि हमारे सफीर के पहुचते ही कूफे के हाकिम को बाहर निकाल देना और हमारे फरस्तादा (भेजे हुए) को नज्मे हुकूमत सिपुर्द कर देना। उस वक्त मेरे आने की उम्मीद करना।

इसीलिए हजरत मुस्लिम ने भी जो आपकी तहरीर के मुताबिक आपके मोतमिदे (जिम्मेदार) खास और काबिले एतेबार थे और आपकी हिदायत से यकसरे मू (बाल बराबर भी) इन्हेराफ करने वाले न थे जहाँ तक हालात साथ देते रहे अपने अमल से उसी का सुबूत दिया।

वह अली[अ०स०] का भतीजा और हुसैन[अ०स०] का सफीर था जो फक़ीराना लिबास मे बगैर किसी साबिका (पिछले) इत्तेला या तुज्को एहतेशाम (शानो शौकत) के कूफे में दाख़िल हुआ नोमान बिन बशीर दारूल एमारा के अन्दर तख़्तो ताज का मालिक और हज़रत मुस्लिम को उससे न कोई मतलब न तअर्रूज (ग़रज)। आप जाते हैं और एक मामूली जमींदार मुखतार बिन अबी उबैदा सकफी के मकान में फरोकश (ठहरे) हो जाते हैं वहाँ इजतेमा होता है तो इमाम का खत पढ़ कर सुना देते हैं और बस। लोग इमाम की इताअत व वफा का अहदो पैमान करते हैं आ आप उनसे बैयत लेते हैं यह बैयत इसकी दलील नहीं है कि आप कोई बगावत बरपा करना चाहते थे या किसी सलतनत की बुनियाद कायम कर रहे थे बल्कि यह सिर्फ इस करारदाद की पहचान थी कि हम हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की पैरवी और इत्तेबा पर आमादा हैं और हजरत की हिमायत व हिफाजत में ब–जानो दिल कोशॉ रहेंगे। इसी लिए जब अटठारह हजार कूफियों ने बैयत कर ली थी तब भी उन्होंने कोई कदम हुकूमत के खिलाफ नही उठाया। फिर भी वह उसी मुखतार के घर में मुकीम रहे और नोमान बिन बशीर को उसी तरह तख्ते हुकूमत पर रहने दिया। ख़ुद नोमान को इसका एहसास था कि जनाबे मुस्लिम का तर्जे अमल मुआनिदाना (दुश्मनी भरा) नहीं है। चुनानचे जब लोगों ने कहा कि मुस्लिम बैयत ले रहे हैं और तुम ख़ामोश बैठे हो। तो नोमान ने जवाब दिया "मैं बस उस शख्स से

जग करूँगा जो मुझसे जग करे और उस पर हमला करूँगा जो मुझ पर हमला आवर हो मगर मैं बद गुमानियों पर अमल नहीं करता।"[1]

इससे साफ जाहिर है कि नोमान भी इस बात का एहसास रखता था कि मुस्लिम कोई बगावत का कदम नहीं उठा रहे हैं।

उसके बाद उन असबाब की बिना पर जिनका तज़किरा अपने महल (जगह) पर हो चुका है नोमान बिन बशीर को माजूल किया गया और उबैदुल्लाह बिन जियाद कूफ़े का गवर्नर मुकर्रर हुआ और पुर अम्न व सुलह पसन्द खामोश व गोशा गीर (अलग थलग रहने वाले) मुस्लिम बिन अकील को बेदर्दी से कत्ल कर दिया गया

अभी मुस्लिम के मुतअल्लिक कोई इत्तेला आने नहीं पाई थी कि इमाम हुसैन[अ०स०] ने मक्क ए मुअज्जिमा से हिजरत फरमाई। इस फौरी और ब–जाहिर बे मौका रवानगी ही से अन्दाजा हो सकता है कि मक्के में हुसैन[अ०स०] को अपने लिए खतरा कितना नजदीक नजर आ रहा था जिस हस्ती को इबादते इलाही का इतना शौक हो कि मरते मरते इबादत के लिए एक शब की मोहलत मागी हो वह हज के ऐन मौके पर हज को तर्क कर दे यक़ीनन आपको कवी अन्देशा था कि अगर आप मक्क ए मुअज्जिमा में कयाम करेंगे तो बहुत जल्द आप खुफिया तरीके पर कत्ल कर दिए जायेंगे। इस सूरते हाल से मुतमइन होने के लिए एक तरीका यह हो सकता था कि वहीं हिफ़ाज़ती तदाबीर (हिफाजत के तरीके) इख्तियार किए जाते मगर इस हालत में तसादुम के इम्कानात बहुत क़रीब हुए जाते थे। लिहाजा जिस तरह मदीने से निकल कर आपने साबित कर दिया था कि मुझे जग करना मन्जूर नहीं है उसी तरह कयामे मक्का को तारीखे हज से सिर्फ एक दिन पहले जबकि मुसलमान तमाम ख़ित्तों से हज के लिए जमा हो रहे थे तर्क किया

इमाम हुसैन[अ०स०] कूफे की तरफ रवाना होते हैं। क्या आपने कोई तैयारी की है? सामाने जग साथ लिया है? नहीं बल्कि उसके खिलाफ अहले हरम मय अतफाल खुर्द साल (कम्सिन बच्चे) आपके साथ हैं जिससे मालूम होता है कि आप अम्नो सलामती की जिन्दगी बसर करने के ख्वाहाँ हैं और अपनी तरफ से जग के इम्कानात पैदा होने देना नहीं चाहते।

उसके बाद जब कूफे के रास्ते में भी खूँरेजी के आसार मालूम हुए और हुर का लशकर आता नजर आया तो आपने रास्ता बदल दिया और दाहनी

---

[1]अख़बारुत तुवाल पेज 233

तरफ का रूख करके जूहसम पहाड के दामन में जाकर कयाम किया। मगर यह आने वाली फौज खुद तशद्दुद पर आमादा और सुलह पसन्दी से अलाहिदा (दूर) थी। इसलिए जिधर आप को मुतवज्जा देखा इसी तरफ यह लशकर भी मुतवज्जा हो गया इस वक्त इन वाकेयात का तफसील से जिक्र करना मकसूद नही है। वह पहले बयान हो चुके हैं सिर्फ जहाँ तक के रवादारी और सुलह पसन्दी के सुबूत का तअल्लुक है। इजमालन (मुखतसर) यहाँ जिक्र किया जा रहा है।

हजरत का सबसे पहले हुर के लशकर को सैराब कर देना भी बडा सुबूत इसका था कि आप जगजूई के तरीको पर अमल नहीं फरमा रहे थे। जोहर की नमाज के वक्त हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने एक तकरीर में इरशाद फरमाया था

"मैंने उस वक्त तक तुम्हारी जानिब आने का खयाल नहीं किया जब तक कि तुम्हारे खुतूत और कासिद मेरे पास नहीं पहुँचे इस मजमून पर मुशतमिल कि हमारा कोई इमाम नहीं है आप आईये। शायद आपकी वजह से हम हक पर मुजतमा (जमा) हो जाये। अब अगर तुम इस बात पर क़ायम हो तो मुझसे अहदो पैमान (वादों) करो और मैं तुम्हारे साथ कूफे चलने पर तैयार हूँ और अगर तुम्हें यह मन्जूर नहीं है और मेरा आना नागवार है तो मैं जहाँ से आया हूँ वहाँ वापस चला जाऊँ।"[1]

क्या रवादारी का इससे बढकर मुजाहरा हो सकता है?

अस्र की नमाज के वक्त भी आपने तकरीर फरमाई और यही कहा कि अगर तुम्हें मेरा आना ना पसन्द हो तो मैं वापस चला जाऊँ मगर हुर ने उसे न माना और आखिर तय यह हुआ कि आप न तो कूफे की तरफ जायें और न मदीने की तरफ बल्कि ऐसा रास्ता इख्तियार करें जो कूफे और मदीने के अलावा किसी दूसरी तरफ को गया हो और उसी करारदाद के मुताबिक आप रवाना हुए।[2] मगर करबला की जमीन के क़रीब पहुच कर इब्ने जियाद का वह इन्तेहाई तशद्दुद आमेज (भडकाऊ) खत हुर के पास आया कि "हुसैन[अ०स०] के साथ सख्ती से काम लो और हुसैन को उतरने पर मजबूर करो एक खुश्क जमीन पर जहाँ कोई पनाह लेने का ठिकाना और पीने के लिए पानी न मौजूद हो"

[1] इरशाद पेज 235
[2] इरशाद पेज, 236

इस खत के बाद हुर ने इतनी सख्ती बरती कि कुर्बो जवार (आस पास) के कसबे (गावँ) जो बहुत नजदीक थे जैसे नैनवा, गाजरया, शफिया किसी में क़याम करने की इजाजत न दी और कहा मुझे हुक्म यही है कि मैं आपको किसी आबाद मक़ाम पर नहीं बल्कि चटियल मैदान मे उतरने पर मजबूर करूँ जहाँ पानी भी क़रीब न हो। उस वक्त असहाब ने इमाम हुसैन[अ0स0] से कहा कि दुश्मन की तादाद भी ज्यादा नहीं है आप जग कर लें लेकिन हुसैन[अ0स0] ने ऐसा करने से इन्कार कर दिया और कहा मैं किसी सूरत मे भी इबतेदा करना नहीं चाहता।[1] फिर उमरे सअ्द के करबला पहुचने के बाद आपने कई दिन तक उसके साथ मुफाहमत (सुलह) की गुफ्तो शुनीद (बात चीत) जारी रखी

जब उमरे सअद आपसे मुलाकात के लिए रात के वक्त उस खैमे की तरफ चला जो दोनो लशकरों के दरमियान इसी मकसद के लिए नस्ब किया गया था तो उसने बीस सवार अपने साथ ले लिए शायद इसलिए कि मुखालिफ का सामना है मालूम नहीं सूरते हाल क्या पेश आए मगर जब इमाम हुसैन[अ0स0] तशरीफ लाए और आपके साथ आपके असहाब भी हो लिए ताकि हजरत तन्हा न रहें तो आपने असहाब को अलाहिदा हो जाने का हुक्म दिया और फरमाया मैं उमरे सअ्द से तन्हा मुलाकात करूँगा। इस तरह यह साबित करना था कि खुलूस और नेक नियती और सब्रो सुकून के साथ गुफ्तगू करना है जिसके लिए किसी जमीयत (गिरोह) की ज़रूरत नहीं।

जब उमर बिन सअ्द ने यह देखा कि इमाम तन्हा रह गए हैं तो उसने भी साथियों को वापस कर दिया। इमाम हुसैन[अ0स0] की गुफ्तगू सरासर सुलह पसन्दी पर मबनी थी आपने यह कहा कि मैं मदीने वापस चला जाऊँगा। यह कहा कि मुझे मुल्के अरब से बाहर चला जाने दो और दूर तरीन सरहदों में जिन्दगी गुजारने दो।

मुखतसर यह कि अम्न आम्मा (पूरी तरह अम्न) को कायम रखने के लिए आप अपनी जात पर हर तकलीफ़ बरदाश्त करने के लिए तैयार थे मगर यजीद को जाएज खलीफ-ए-रसूल या इस्लाम का सच्चा नुमाइन्दा तस्लीम करने पर आप किसी तरह तैयार न थे।

आपका रवैया तहफ्फुजे अमन के बारे में इतना वाजेह था कि फौजे यज़ीदी के अफसर उमरे सअद ने अपने हाकिम उबैदुल्लाह बिन ज़ियाद को खत लिखा कि "मुबारक हो खुदा ने फ़ितने की आग को बुझा दिया और

---

[1] इरशाद पेज / 238-239

मुसलमानों के शीराजे को मुजतमा (एक जगह) किया और उम्मते इस्लामी के अम्र (आमाल) की इस्लाह की। हुसैन[अ०स०] सुलह पर आमादा हैं और उनके शराएत ऐसे हैं जिन्हें क़ुबूल करने में हमको उज्र न होना चाहिए।

इब्ने जियाद भी मुसालेहत की तरफ माएल हो चुका था। सिर्फ़ शिम्र की मुफ़सिदाना (फसाद पर मबनी) दरअन्दाजी वह थी जिसकी वजह से इब्ने जियाद ने इस आखरी रिश्ते को तवक्कुआते अम्न (अम्न की उम्मीद) को कता (ख़त्म) कर दिया। और इब्ने सअ्द को खत लिखा कि हमने तुमको गुफ्तो शुनीद (बात चीत) और मुसालिहत के शराएत तय करने के लिए नहीं भेजा है बल्कि तुम हुसैन[अ०स०] के सामने सिर्फ गैर मशरूत इताअत का मुतालिबा पेश करो। और अगर वह मन्जूर न करे तो फिर उनसे जंग करो।[1] इस खत का पहुँचना था कि बस उमरे सअ्द ने पूरी फौज को हुसैन[अ०स०] और असहाबे हुसैन[अ०स०] पर टूट पड़ने का हुक्म दे दिया। फिर भी इमाम हुसैन[अ०स०] ने एक रात के लिए खूँरेज़ी को और रोका

सुबह हुई आशूर की कयामत खेज सुबह। पैमाना लब्रेज और पानी सर से ऊँचा हो चुका है और कोई उम्मीद सुलह की बाकी नहीं है मगर हुसैन[अ०स०] अब भी अमन पसन्दी का सुबूत दे रहे हैं कि मैं अपनी तरफ़ से जंग करना नहीं चाहता।

सुबहे आशूर उस वक्त कि जब इमाम खामोशी के साथ अपने खैमे के दरवाजे पर खड़े थे और खैमे की पुश्त पर खन्दक़ में आग भड़क रही थी शिम्र ने आकर निहायत सख़्त जुमला कहा कि "आख़िरत की आग से पहले दुनिया ही में तुमने आग का सामान कर लिया।' यह इतना इशतेआल अगंज़ फिकरा था कि जईफुल उम्र मुस्लिम बिन औसजा को भी ताब न रही और इमाम से इजाजत मांगी कि उसे तीर का निशाना बनायें।[2] मगर हजरत ने फरमाया कि "नहीं ऐसा न करो मैं जंग में इब्तेदा नहीं करना चाहता

इतमामे हुज्जत की तमाम मन्ज़िलें इमाम हुसैन[अ०स०] की तरफ़ से तय की जा रही हैं जिन्हें अपनी जान का कोई खौफ नहीं है जो मौत को अपनी आखरी मन्जिल समझ चुके हैं उसका बित-तकरार (बार बार) एलान फरमाते रहे हैं जो मौत का इस्तेकबाल कुशादा पेशानी (खुले दिल) के साथ करने पर तैयार हैं उसके बाद यह अमन पसन्दी, यह सुलह जूई यह इशतेआल

---

[1] इरशाद पेज / 241
[2] इरशाद पेज / 247

(वरगलाने) से अलाहदगी यह जजबात की रोक थाम यह साथियो के वलवलों (हौसलों) की निगहदाश्त (नजर)। यकीनन इमाम हुसैन[अ०स०] उस दिन जिहाद बिस–सैफ (तलवार) से पहले जिहाद बिन–नफ्स की मन्जिल तय कर रहे थे। और "जिहादे असगर" के साथ "जिहादे अकबर" का फर्ज अदा कर रहे थे

इमाम हुसैन[अ०स०] ने सुबह की मैदाने जग मे जबकि तमाम इशतेआल अगेज सूरतें पैदा हो चुकी थीं मगर उसके बाद भी आपकी जानिब से जग की तैयारी का मुजाहरा नहीं हुआ। आप घोडे पर सवार भी नहीं हुए जो जग का मरकब (सवारी) होता है बल्कि नाके पर सवार हुए जो अमन की निशानी है और उसके बाद वह तारीखी खुतबा पढा जिसमे अपने नाम व नसब का तआरूफ कराया अपनी बेगुनाही का ब–दलाएल सुबूत पेश किया और उसके आखिर में आपने पूरे मजमे के सामने यह ऐलान किया कि अगर तुम लोगों को मेरा आना पसन्द नहीं है तो मैं जहाँ से आया हूँ वहीं वापस जाने दो। यही वह बात थी जो आपने हुर के सामने पेश की थी और वही अब पूरे लशकर के सामने पेश की जा रही थी। यह वह जबरदस्त अम्न पसन्दी के मुजाहरात थे जिन्हों ने हुर को फौजे यजीद का साथ छोड़ देने पर मजबूर किया जिसकी तफसील पहले बयान हो चुकी है। उसके बाद जग छिड़ गई। दुनिया में जग का काएदा था कि बड़े से बड़े बहादुर भी जग में जिरह पहनते थे मगर करबला में हुसैन सिर्फ एक कुर्ता पहने हुए थे खज का जो एक निहायत बारीक कपडा होता है और सर पर अम्मामा बाँधे थे[1] उसे देख कर हर शख्स सोच सकता है कि क्या जग की तैयारी यूँही होती है और जिसको लड़ना मन्जूर होता है वह यूँही मैदाने जग में आता है?

कुर्बानी

हुसैन[अ०स०] की कुर्बानी एक मुनज्जम (Sistametic) हैसियत रखती थी। अगर वह अपनी शहादत के मरहले को सबसे पहले तय कर लेते तो यह कहने को होता कि मसाएब से घबरा कर अपनी जान दे दी लेकिन आपने आहिस्ता आहिस्ता कुर्बानी के मनाजिल (दरजे) को तय करके यह साबित कर दिया कि आपका इकदाम किसी वक्ती जजबे का नतीजा नहीं था बल्कि मुआमिला फहमी (हालात को समझ कर) और फर्ज शनासी (जिम्मेदारी का एहसास) पर मबनी था।

[1] तबरी जि / 6, पेज / 259

आपका मकसद यह था कि अपनी तरफ निसबत रखने वाली हर अजीज शै को खुद अपने हाथ से कुर्बान करें और जब अपने नफ्स (जान) के सिवा कुछ बाक़ी न रह जाए तो इस मताये गिराँ माया (क़ीमती जान) को कुर्बानी के मैदान में पेश कर दें।

आपने रोज़े आशूर सबसे पहले अपने महबूब तरीन आवान (मददगार) व अन्सार और साथ के खेले हुए अहबाब को कुर्बान किया। यहाँ तक कि अज़ीज़ों की बारी आई तो आपने एक एक करके उन सबको मैदाने कुर्बानी में भेजा अपने दिल की कूव्वत आँखों की रौशनी और पीरी (बुढ़ापे) के सहारे अली अकबर के ऐसे फरज़न्द कासिम व अब्दुल्लाह ऐसे भतीजे। अबुल फजलिल अब्बास[अ०स०] ऐसे वफादार भाई सबको फ़िदय–ए–राहे हक होने दिया और सबके बाद बागे उम्मीद की आखरी कोपल और गुन्च ए–नाशगुफ्ता (वह फूल जो न खिल सका कली) अली असगर[अ०स०] को खुद अपने हाथों पर निशाना–ए–तीरे सितम होते देख लिया अभी तक दिल के टुकड़ों की कुर्बानी हो रही थी। अब आजाए (हिस्सा) बदन तक नौबत पहुची। सतहे जिस्म का चप्पा चप्पा और खून का हर हर क़तरा कुर्बान किया। यहाँ तक कि तने अक़दस पर तीरों को जगह न मिलती थी और दुश्मनों की तलवारों और नैज़ों को जुस्तजू के बाद भी कोई खाली गोशा दस्तेयाब न होता था जब जिस्म का हर हिस्सा और दिल का हर टुकड़ा कुर्बान हो चुका तो अब हुसैन[अ०स०] के लिए कोई चार–ए–कार न था कोई कुर्बानी के काबिल शै बाकी नहीं रही थी। सिर्फ एक रिश्त ए हयात था जो रूह व बदन के बन्दर पूरी कशमकशे हयात के बावजूद कायम था और सरो गर्दन का इरतिबात (रिश्ता) था जिसमें अब तक जुदाई न हुई थी ऐसे बाहिम्मत मुजाहिद के लिए गुजिश्ता तमाम कुर्बानियो के मरहले तय कर चुकने के बाद यह मन्ज़िल बिल्कुल आसान थी। अस्र के होते होते हुसैन[अ०स०] इस कुर्बानी में कामयाब हो गए और खन्जरे शिम्र से कुछ देर राज़ो नियाज़ के बाद एक तरफ नफस की आमद व शुद (सास के आने) का सिलसिला और जिस्मो रूह का जाहरी इत्तेसाल (राबिता) क़ता (खत्म) हुआ और दूसरी तरफ सरो गर्दन के बाहमी इरतेबाद (रब्त) में जुदाई पैदा हुई।

आसमान लाखो बरस गर्दिश करे, ज़माने के वरक हजारों बार उलट जायें लेकिन इतनी शानदार मुकम्मल, व मुनज़्ज़म और मुरत्तब कुर्बानी की मिसाल पैदा नहीं हो सकती।

बाज़ मुतफ़र्रिक़ (मुख़्तलिफ़) तालीमात

वाक़य–ए–करबला की यह खास खुसूसियत है कि इतने हंगामा ख़ेज माहौल में हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने फराएज के ऐसे जुजईयात (छोटी छोटी बातों) तक को पूरा किया है जिन्हें आम इन्सान निसबतन (सिरे से) बिल्कुल मामूली और खफीफ (हलका) इजतेराब (परेशानियों) के मौके पर भी तर्क कर देते हैं या कम अज कम मुलतवी (टाल) करते है या फर्ज की पाबन्दी में कम अज कम खिफ्फत (हलका समझना) पैदा करते हैं। मगर हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने सख्त से सख्त अवकात में फराएज की पाबन्दी उतनी ही सख्ती के साथ की जितनी कि आम हालात में हो सकती थी। मसलन चन्द चीजें दर्ज जैल हैं।

पर्दा

यह शरीअते इस्लामिया का एक कानून है कि मर्द और औरत के फराएज, तर्जे जिन्दगी और निजामे मुआशरत (सोसाईटी) जुदा है। मर्द पर जब मौका आए तलवार लेकर जिहाद वाजिब है मगर औरत पर से जिहाद साकित नहीं है। मर्द मैदान में नजर आना चाहिए और औरत घर की चहार दीवारी के अन्दर यह पर्दा औरत के लिए एक लाजमी फरीजा है और उसकी पाबन्दी ताहद्दे इम्कान (इम्कान की आखरी हद तक) जरूरी है

खानदाने रसूल[स०अ०] की शान जिस तरह तमाम इबादात व वाजिबात के अदा करने में इम्तियाजी दर्जा रखती थी उसी तरह पर्दे के बारे मे भी उस घराने का एहतेमाम खुसूसी इम्तियाज रखता था।

दुख़्तरे रसूल हजरत फ़ातिमा जहरा[स०अ०] उस घराने की मुकद्दस ख्वातीन के लिए मूरिसे आला (बलन्द तरीन नमून–ए–अमल) की हैसियत रखती थीं जिन्हे पर्दे का इतना खयाल था कि मरने के बाद जनाजे पर भी नामहरम की निगाह पड़ना गवारा न थी।

करबलाः में हज़रत इमाम हुसैन[अ०स०] के साथ उस घराने की तकरीबन तमाम मुकद्दस ख्वातीन मौजूद थीं। पैगम्बरे खुदा की नवासियाँ जैनब व उम्मे कुलसूम हजरत अली[अ०स०] की बेटियां फातिमा और रूक़ैया बहूवें बेव–ए–इमामे हसन[अ०स०] और खुद आपकी अजवाज लैला और रबाब, साहबजादियाँ फातिमा व सकीना[अ०स०] और दीगर अजीज ख्वातीन। उनके अलावा कनीज़ें थीं बाज़ असहाब भी अपने मुतअल्लकीन (फ़ैमली) के साथ आए थे जैसे मुस्लिम बिन औसजा, अब्दुल्लाह बिन उमैर और जुनादा बिन काअब वगैरह।

हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने अपने अहले हरम की पर्दे दारी का एहतेमाम हर लमहा पशे नजर रखा। रास्ते में जब फौजे हुर आते दिखाई दी थी तो आपने जूहसम पहाड़ी इसी लिए मुन्तखब की थी कि उसे पुश्त पर करार देकर खयामे अहलेबैत बरपा (लगाये) किए जायें। चुनानचे यह काम इतनी तेजी से अमल में लाया गया कि खैमे बरपा हो चुके और अहले हरम खैमों में फुरूकश (आराम फरमा) हो चुके उस वक्त हुर का लशकर वहाँ पहुच सका।

करबला में भी हजरत ने जाए कयाम के लिए रेगिस्तानी टीलों का एक सिलसिला मुन्तखब किया था फिर शबे आशूर खैमों की तनाबो को एक दूसरे से इस तरह वाबस्ता कर दिया था कि किसी एक खैमे की तनाबें काट कर गिराना गैर मुमकिन हो गया था और खैमों के गिर्द खन्दक खुदाई थी और उस शदीद गर्मी में उसके अन्दर आग रौशन कराई थी इसी लिए कि पुश्त पर से दुश्मन खैमों की जानिब न आ सके।

यह तमाम इन्तेजामात सुबहे आशूर आगाजे जिहाद से पहले ही मुकम्मल हो चुके थे।

बीबीयाँ खैमो के अन्दर और अइज्जा मैदाने जिहाद में बाहर थे। क्या इस मौके पर अहले हरम के दिलो में इजतेराब की जो कैफियत थी उसका कोई अन्दाज़ा कर सकता है। जबकि तीरो की मुसलसल बारिश हो रही थी। जमीन घोड़ों के सरपट दौड़ने से लरज रही थी, चारों तरफ़ गुबार से तारीकी छाई हुई थी। फौजो का सैलाब बार बार सफे हुसैनी के कोहे इस्तेक़लाल (मजबूत अज्मो इरादे के पहाड़) से टकरा कर शोर करता हुआ वापस होता था और हर मर्तबा बहने भाईयो के लिए, माये बच्चों के लिए, बीवियाँ शौहरों के लिए फितरतन मुजतरिब हो जाती होंगी मगर क्या मुमकिन था कि उनमें से किसी का कदम खैमे से बाहर निकला हो।

वह मौका उससे ज्यादा सख्त था कि एक माँ को खबर पहुचती है कि उसका बेटा मसरूफे जिहाद है। या एक बहन को यह कि भाई लड रहा है। या एक खातून को यह कि उसका शौहर दुश्मन की फौज में घिर गया है। इस मौके पर एक शरीफ और बाइज्जत ख़ातून के लिए और वह भी अरब की खातून जो खुद फित्री शुजाअत का खून रगों में रखती हो और वह भी खानदाने बनी हाशिम की ख़्वातीन जिनको शुजाअते हैदरी विरसे में मिली हो कितना दुश्वार है कि वह सब्र व सुकून के साथ अपनी जगह पर बैठी रहें

जबकि कोसों की मुसाफत नही, पहाडों का ओट नही बल्कि सिर्फ खैमे का पर्दा और मैदाने जग की वुसअत दरमियान मे है

उससे ज्यादा सख्त वक्त वह था कि जब खबर पहुचती है कि बेटा, भाई या शौहर जख्मी होकर गिर गया है और अपनी जिन्दगी की आखरी सासे ले रहा है और फिर उसकी फरयाद की आवाज आती है कि या अबा अब्दिल्लाह अदरिकनी और जब इमाम उसकी आवाज पर जाते दिखलाई देते हैं। यह मौक़ा दिल की दुनिया में ज़लज़ला पैदा कर देने वाला और सब्रो तहम्मुल की कशती को तूफ़ानी बना देने वाला है।

ऐसे मौकों पर बाज असहाब की औरतें नुसरते हुसैन[अ०स०] के शौक़ में बेचैन होकर मैदाने जिहाद में निकल आईं जैसे अब्दुल्लाह बिन उमैर की जौजा और अम्र बिन जुनादा की माँ तो इमाम हुसैन[अ०स०] ने उनको फर्जे इस्लामी की तरफ़ तवज्जो दिलाई फ़रमाया कि औरतों पर से जिहाद साक़ित है और उन्हें खैमों की तरफ़ वापस कर दिया।

क्या कोई कह सकता है कि जौज–ए–अब्दुल्लाह बिन उमैर और मादरे अम्र बिन जुनादा में जुरअत व शुजाअत का जौहर हजरते जैनब व हजरत उम्मे कुलसूम से ज्यादा था जिनकी रगों में अली बिन अबी तालिब[अ०स०] का खून गर्दिश कर रहा था। हरगिज नहीं मगर उनके एहसासे फराएज की पुख्तगी थी कि उन्होंने किसी वक्त भी अपनी हद से कदम आगे नहीं बढ़ाया

बहुत ज्यादा सख्त मौका वह था जब खुद इमाम हुसैन[अ०स०] नैजा व शमशीर व तबर का निशाना बने हुए थे फिर सबसे बढ़कर वह वक्त जब आप घोड़े से जमीन पर तशरीफ़ ला चुके थे। मगर क्या अन्दाजा हो सकता है उन बरगुज़ीदा खवातीन के एहसासे फराएज का जिन्हो ने उस मौके पर भी उसूले शरीअत का एहतेराम हाथ से नहीं जाने दिया

जिस वक्त अब्दुल्लाह बिन हसन ने खैमे से तड़प कर बाहर निकलना चाहा था और हजरत उम्मे कुलसूम ने दामन पकड लिया था कि कहाँ जाते हो मगर बच्चा यह कहता हुआ कि इस आलम में मैं अपने चचा को तन्हा न छोडूगा दामन हाथ से छुडा कर रवाना हो गया बस अब उम्मे कुलसूम बेबस हो गई थीं और ऐसा नहीं हुआ कि आप बच्चे के साथ मैदान मे आ जातीं। मालूम होता है कि जहाँ तक खैमे के हुदूद थे वहाँ तक उम्मे कुलसूम चली आईं और जहाँ से बच्चा उससे आगे बढ गया बस शाहजादी के कदम रुक गए।

करबला में हिफ्जे मरातिब (मर्तबों का लिहाजा) के उसूल बरते जा रहे थे। वहाँ हर अदना आला पर कुर्बान हो रहा था असहाब अइज्जा पर कुर्बान हुए और अइज्जा इमाम पर कुर्बान हुए और इमाम दीने खुदा पर कुर्बान हुए। अगर आईने इस्लाम के हुदूद में कुछ भी गुन्जाइश होती तो उस वक्त जब हुसैन[अ०स०] जख्मी हो चुके थे और करीब था कि आपके जिस्म व रूह में मुफारिकत (जुदाई) हो जाए तमाम खानदाने बनी हाशिम की ख्वातीन तलवारें लेकर मैदाने जिहाद में आ जातीं बल्कि यकीन समझना चाहिए कि काफी वक्त तक हुसैन[अ०स०] की हिफाजत की जा सकती थी और जरूर वाकेय ए करबला में एक नई नौइयत पैदा हो जाती मगर न इमाम हुसैन[अ०स०] इस तरह की कुर्बानी को अपने निजामे अमल में जगह दे सकते थे और न वह मुखद्दराते इस्मत (पर्दा दार औरतें) खून के इन्तेहाई जोश और दिल के इन्तेहाई तलातुम के बावजूद कोई एक क़दम भी हुसैन[अ०स०] के मुरत्तब कर्दा (तैयार किया हुआ) नक्श–ए–जंग के खिलाफ उठाने के लिए तैयार थीं इसलिए हुसैन[अ०स०] की तन्हाई भी देखी दुश्मन के हमलों का खरोश (शोर) भी सुना, फतह के बाजों की आवाजे भी आईं और कुतिलल हुसैन की जिगर खराश (जख्मी) सदा भी गोश ज़द (कानों में) हुई मगर वह जहाँ हुसैन बिठा गए थे वहीं बैठी रहीं उस वक्त तक जब तक वह जगह बाकी रही। हाँ जब खैमों में आग के शोले बलन्द थे उस वक्त मजबूर होकर इमामे वक्त हजरत जैनुल आबेदीन[अ०स०] के शरई हुक्म के मातहत मैदान में निकलीं और फिर भी इख्तियार की रफ्तार के साथ पर्दे का एहसास कायम रहा जब तक चादरें रहीं चादरों का पर्दा रखा। चादरें न रहीं तो बालों से मुह छुपाए। दरबार में कनीज़ों के हल्के में अपने को मखफी (छिपाया) किया। और जब यजीद के दरबार में तकरीर की जरूरत महसूस हुई तो अजीजों के तलवारों से टुकडे टुकडे किए जाने से ज्यादा दर्दनाक अलफ़ाज में उस मुसीबत का शिकवा किया कि तूने अपनी औरतों और कनीजों को तो पर्दा में बिठाया है और ख़ानदाने रसूल[स०अ०] की ख़्वातीन को इस तरह दर बदर फिरा रहा है कि उनके चेहरों पर अपने पराए हर एक की निगाह पड रही है।

ऐसे सब्र आजमा मवाके पर इस फरीज–ए–इस्लामी की इतनी मुशकिल निगहदाश्त (तवज्जो) की गई है जो हमेशा के वास्ते मुसलमानों के सामने एक ज़र्री मिसाल की हैसियत से क़ायम रहेगी।

वसीयत

शरीअते इस्लामी में वसीयत का पूरा करना एक अहम फरीजा है। बाज वसीयतें इन्सान के जाती जजबात व नफसियात के खिलाफ़ होती हैं मगर मरने वाले इन्सान का एहतेराम उसकी वसीयत की तामील पर मजबूर करता है। बाज वसीयतें बाद के पैदा शुदा हालात में दुशवार या आम निगाहों में खिलाफे मसलेहत भी होती हैं मगर फर्ज शनास इन्सान को वसीयत की पाबन्दी मौजूदा हालात के तकाजे पर मुकद्दम महसूस होती है।

हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] ने अपने बुजुर्गों की वसीयत का जिस तरह और जिन जिन मौकों पर लिहाज किया है वह न भूलने के काबिल एक सबक है। रसूल अल्लाह[स०अ०] की वफात के वक्त इमाम हुसैन[अ०स०] बहुत कमसिन थे मगर मजहबी रिवायात मुत्तफिका (बगैर इख्तिलाफ के) तौर पर यह बतलाते हैं कि रसूल अल्लाह[स०अ०] ने अपने इस बच्चे की सलाहियतो का कमसिनी ही में अन्दाजा करके उसे अपने मजहबे इस्लाम की मुस्तकबिल में हिफाजत करते रहने की वसीयत की थी। अगर उसे लफ्जी तौर पर कोई न भी माने तो इसमें तो शुबहा (शक) नहीं कि रसूल अल्लाह[स०अ०] का बर्ताव हुसैन[अ०स०] के साथ और इस्लाम के मफाद पर पैगम्बर[स०अ०] का हर कुर्बानी के लिए आमादा रहना यह हर लमहा हुसैन[अ०स०] के नजदीक उस वसीयत की हैसियत रखता था कि जब इस्लाम पर कोई वक्त पड़े तो अपनी जान अजीज न करना। तुम्हे उसी दिन के लिए इस मुहब्बत व शफकत की गोद में पाला जा रहा है। हुसैन[अ०स०] ने उस वसीयत को मरते दम तक याद रखा और करबला का पूरा वाकेया उसी वसीयत की तामील था।

हजरत अली बिन अबी तालिब[अ०स०] ने अपनी वफात के कब्ल इमाम हसन[अ०स०] को जानशीन बनाते हुए हुसैन[अ०स०] को उनकी पैरवी की हिदायत कर दी थी। हुसैन[अ०स०] ने बेनजीर तरीके पर उस फर्ज़ को भी अन्जाम दिया

इमाम हसन[अ०स०] की वसीयत थी कि मेरे ताबूत को मेरे जद्दे बुजुर्गवार रसूल अल्लाह[स०अ०] के मजार की तरफ विदा के लिए ले जाना लेकिन अगर मुजाहमत (रूकावट) हो तो एक कत्तर–ए–खून गिरने न पाए बगैर किसी जग व मुकाविमत के मेरे जनाजे को वापस लाना और बकीअ् में दफ्न कर देना। हुसैन[अ०स०] हस्बे वसीयत भाई का जनाजा रौज–ए–रसूल पर ले गए मगर जैसा कि इमाम हसन[अ०स०] का अन्देशा था वही हुआ। उम्मुल मोमिनीन आएशा और मरवान वगैरह ने मुखालिफत की। नौबत यह पहुची कि मुखालिफ़ जमाअत ने

तीरो की बारिश कर दी और कुछ तीर जनाज़-ए-इमाम हसन[अ०स०] तक पहुचे। बनी हाशिम के इशतेआल (गुस्से) की इन्तेहा न थी मगर वह फर्ज शनास हुसैन[अ०स०] थे जिन्हों ने भाई की वसीयत के मुक़ाबले में अपने तमाम जोश वलवले और तबीयत के तकाजो का ख़ून कर दिया। उन्होने सब्र और ख़ामोशी के साथ दुश्मन की मुख़ालिफत को बरदाश्त किया और इमाम हसन[अ०स०] का ताबूत वापस ले जाकर जन्नतुल बक़ीअ़ में दफ्न कर दिया।

अपने मरहूम भाई इमाम हसन[अ०स०] की वसीयत के एहतेराम ही की बिना पर करबला में अपने अजीज भतीजे क़ासिम बिन हसन[अ०स०] को इजाजते जिहाद दी जबकि आप खुद इसलिए इज्ने जिहाद में तअम्मुल (इजाज़त नहीं दे रहे थे) फरमा रहे थे कि अभी क़ासिम हद्दे बुलूग (बालिग न थे) को न पहुचे थे और जिहाद की तकलीफ़ आएद न थी।

अपनी नाम्जद लड़की का यतीमे इमामे हसन[अ०स०] के साथ अक्द कर देना भी अपने भाई की वसीयत की तामील ही में था।

जब ही तो हजरत इमाम हुसैन[अ०स०] की जियारत मे इस सिफ़त का ख़ास तजकिरा है कि 'والی وصیۃ اخیک مسارعا' यानी अपने भाई की वसीयत के पूरा करने में आपने बड़ी ताजील (जल्दी) की कि कहीं वक्त निकल न जाए और वसीयत की तामील रह न जाए।

तलक़ीने सब्र

बलन्द मर्तबा हस्तियों के मसाएब के तजकिरे पर अश्कबार होना हकीकतन उन बलन्द औसाफ की कद्रो कीमत का इजहार है जो उन हस्तियों के साथ उठ गए और इस लिए यह आँसू सच्चाई की शर्त के साथ बड़ी कद्रो क़ीमत के हामिल हैं मगर किसी इन्सान का ख़्वाह वह कितना ही बलन्द मर्तबा हो खुद अपनी मुसीबत पर बेताब होना और बिलखुसूस जबकि दुश्मनों को मजहका (मजाक़ उड़ाने) का मौक़ा मिले। उस इन्सान की अज्मते नफ्स के खिलाफ है।

राहे हक में इन्सान को खुद अगर मुसीबत से दोचार होना पडे तो उसे सब्रो सुकून के साथ बरदाश्त करना शाने सिबातो इस्तेकलाल (हिम्मत साबित कदम) है जो मर्तबा की रफअत (बलन्दी) का सबब होती है

हज़रत इमाम हुसैन[अ०स०] करबला में खुद साहिबे मुसीबत थे और आप की शहादत के बाद आपके अहले हरम और बिलखुसूस जैनब व कुलसूम साहिबे मुसीबत थीं। हजरत जैनब को मुहब्बत भी अपने भाई के साथ गैर

मामूली थी। वह एक मर्तबा सिर्फ हुसैन[अ0स0] की जबान से उनकी शहादत की खबर के तौर पर कुछ अशआर सुन कर बेहोश हो गई थी इमाम हुसैन[अ0स0] को यह फिक्र थी कि कहीं मेरे गम में मेरे अहले हरम और बिलखुसूस मेरी बहन ज्यादा अपना हाल तबाह न करें और कहीं ऐसा न हो कि उनका फ़ित्री इजतेराब दुश्मनों के तान व तशनीअ (बुरा भला) का जरिया बन जाए। इसलिए आपने अपनी बहन को बड़े मुअस्सिर (बा असर) अन्दाज में यह वसीयत फरमाई कि मेरे गम मे गरीबान न फाड़ना, मुह पर तमाचे न मारना और वावैला व वासबूरा (फरयाद करना यानी हम बरबाद हो गए) कह के नौहा न करना[1] यकीनन हुसैन[अ0स0] की सी बलन्द मर्तबा हस्ती के ग़म में यह तमाम बातें रवा थीं मगर अपनी बहन जैनब को हुसैन[अ0स0] खुद साहिबे मुसीबत होने के एतेबार से असीरी के हौलनाक माहौल और दुश्मनों के मुहासरे में ऐसे सब्रो सुकून का मुरक्का बनाना चाहते थे जो दुनिया के साहिबाने मुसीबत के लिए एक उसव–ए–हसना (नमून–ए–अमल) हो सके और हजरते जैनब[स0अ0] ने उस पर ऐसे बेहतरीन तरीके पर अमल किया कि खुद बेताब होना कैसा वह कूफ़े की तरफ़ रवानगी के मौके पर और मक्तले शोहदा में से हो कर गुजरने के वक्त अपने भतीजे इमाम जैनुल आबेदीन[अ0स0] को दिलासा दे रही थीं जबकि वह अपने बाप के लाशे को जमीने गर्म पर बे दफ्न देख कर इतना मुतअस्सिर हुए थे कि करीब था रूह जिस्म से मुफारिकत (अलग, परवाज) कर जाए।

---

[1] इरशाद पेज / 248

शआएरे इलाहिया(अल्लाह की निशानियाँ) का एहतेराम

इमाम हुसैन[अ०स०] ने काबे के एहतेराम को मद्दे नजर रखने के लिए हज को तर्क किया और मुसाफ़िरत गवारा की। चुनानचे खुद फ़रमाया मैं नहीं चाहता कि मेरी वजह से खान ए काबा की हुरमत बरबाद हो।

असलाफ़ (बुजुर्गों) की याद

हुसैन[अ०स०] किसी वक्त अपने बुजुर्गों को नहीं भूले जब मदीने से रवानगी कतई हो गई थी तो आपने आखरी शब अपने बुजर्गों के मजारात की जियारत के लिए मखसूस की थी।

मक्के से चलते वक़्त जो खुत्बा पढ़ा था उसमें भी फरमाया था कि मैं अपने बुजुर्गों की मुलाकात का इतना मुशताक़ हूँ जितना याकूब यूसुफ़ से मुलाक़ात के मुशताक थे।

नहुम(9)मुहर्रम की अस्र को जिस वक्त हमला हुआ है तो आप पर गनूदगी तारी थी। जनाबे जैनब[स०अ०] ने बेदार किया तो फरमाया मैंने अपने नाना को ख्वाब में देखा वह फ़रमा रहे थे कि अब तुम मेरे पास आने वाले हो।[1]

आशूर के दिन आपने अपने जवान फरजन्द अली अकबर को इज्ने जिहाद देने के बाद खुदा की बारगाह में हाथ उठाए और कहा खुदा वन्दा गवाह रहना कि वह जवान जा रहा है जो सूरत व सीरत व रफ्तार व गुफ्तार (बोलने) में तेरे रसूल[स०अ०] से मुशाबेह (मिलता) है जब हम मुशताक तेर रसूल की जियारत के होते थे तो उसके चेहरे पर नजर डालते थे। इस तरह आपने अली अकबर के गम में अपने शदीद तअस्सुर का सबब भी जाहिर कर दिया। ब–कौल आलिम नक़वी

शह को गम था शबीहे अहमद का
कब वह रोते थे अपने अकबर को

---

[1]इरशाद पेज/243

ख़ुद्दारी

आम इन्सान ज़रा सा सख़्त मौक़ा आए तो गिड़गिड़ाने लगता है और बहुत सी ऐसी सूरतें इख़्तियार करता है जो एक ख़ुद्दार इन्सान के शायाने शान नहीं होती।

हज़रत इमाम हुसैन[अ०स०] ने शुरू से आख़िर तक कोई ऐसा तर्ज़े अमल इख़्तियार नहीं किया जो अज़मते नफ़्स के ख़िलाफ़ हो।

उस वक़्त जब आप मदीने से रवाना हो रहे थे तो लोगों ने कहा था कि अब्दुल्लाह बिन ज़ुबैर की तरह आम रास्ते को छोड़ दीजिए और ग़ैर मारूफ़ (जो आम रास्ता न हो)रास्ते से रवाना हो जाईये। मगर हज़रत ने फ़रमाया था कि मैं मुजरिमों की तरह छुप कर जाना नहीं चाहता। मैं आम रास्ते ही से जाऊँगा।

करबला में सातवीं तारीख़ से पानी बन्द हो गया था। कोई नहीं कह सकता कि ग़िज़ा मौजूद थी, जैसा कि जनाबे शैख़ जाफ़र शुसतरी ने लिखा है। यक़ीनन ग़िज़ा भी मयस्सर न थी और इस लिए इमाम हुसैन[अ०स०] और उनके अहले हरम जिस तरह तीन दिन के प्यासे थे वह तीन दिन के भूखे भी थे लेकिन उसके बावजूद करबला में इमाम हुसैन[अ०स०] ने सवाले आब तो बार बार किया और प्यास का मुख़्तलिफ़ तरह इज़हार भी किया मगर कोई तारीख़ नहीं बतला सकती कि आपने या आपके अइज़्ज़ा व अन्सार में से किसी ने भी भूख की शिकायत की हो। और ग़िज़ा के लिए सवाल किया हो।

इसका क्या सबब है? सिर्फ़ यह कि पानी मांगना उसूले शराफ़त के ख़िलाफ़ नहीं है हर आदमी दूसरे से पानी मांग लेता है मगर खाना मांगना या भूख की तकलीफ़ ज़ाहिर करना रकीक (बेइज़्ज़ती) बात है और शराफ़त के ख़िलाफ़ समझा जाता है हज़रत इमाम हुसैन[अ०स०] और उनके साथियों में से किसी ने उसको एक लमहे के लिए भी गवारा नहीं किया। बल्कि पानी का सवाल भी हक़ीक़त में कोई सवाल न था। सवाल तो उस वक़्त कहा जा सकता था कि जब उनका जमा करदा कोई ज़ख़ीरा पानी का होता और इमाम हुसैन[अ०स०] उसमें से तलब करते। यहाँ तो अल्लाह की जारी की हुई नहर सामने थी जिसे ब-सूरते ज़ुल्मो तशद्दुद दुश्मनों ने रोक रखा था। तो जिसे सवाल कहा जाता है वह दर हक़ीक़त एक हक़ का मुतालबा था और ज़ुल्मे नारवा (बिला वजह ज़ुल्म) के ख़िलाफ़ एहतेजाज था। इस की नौईयत उस सवाल की है ही नहीं जो किसी भी मन्ज़िल पर इज़्ज़ते नफ़्स के ख़िलाफ़ समझा जा सके।

ख़ातिम-ए-किताब

आलमे इन्सानी को इस्लाहे अमल और इत्तेबाए उसव–ए–हुसैनी (हुसैनी उसूलों पर चलने) की दावत

सन 1361 हिजरी में वाक़ेय–ए–करबला को पूरे तेरह सौ बरस का ज़माना गुज़रा और उसकी सीज़दह सद साला (1300) यादगार शर्क़ व ग़र्ब (पूरब पश्चिम) आलम में मनाई गई। जिसके ज़ैल में हर तबक़ा और हर ख़याल के लोगों ने मिल कर हुसैन बिन अली[अ०स०] की ख़िदमत में ख़िराजे अक़ीदत पेश किया।

इसी यादगार के सिलसिले में यह तारीखी किताब ''शहीदे इन्सानियत'' पेश हो रही है।

आम तौर पर वाक़ेय–ए–करबला को एक ऐसे ग़मनाक हादिसे ही की हैसियत से देखा जाता है कि जिस पर हमारा काम आँसू बहाना और इज़हारे रंजो मलाल करना हो और बस। मगर यह तो एक फ़ित्री तक़ाज़–ए–इन्सानियत है। उसको मक़सदे हुसैन[अ०स०] या अस्ल मफ़ादे वाक़ेय–ए–करबला समझना किसी तरह दुरूस्त नहीं है।

हुसैन[अ०स०] का बलन्द नस्बुल ऐन (तरीक़े) हमसे कुछ और चाहता है। वह यह कि हम अपनी सीरते ज़िन्दगी को हुसैनी सीरत के सांचे में ढालने की कोशिश करते रहें।

इमाम हुसैन[अ०स०] को इस एतेबार से निजात देहिन्दा (निजात दिलाने वाले) समझना ग़लत है कि आप ने अपने मोतक़ेदीन (चाहने वालों) को फ़राएज़ की वाजबी पाबन्दी से कुल्लियतन आज़ाद कर दिया और (माज़ल्लाह) ख़ुद उनके गुनाहों के कफ़्फ़ारे के तौर पर शहीद हो गए और यह समझना भी कि इमाम हुसैन[अ०स०] ने गुनाहगाराने उम्मत के लिए शहादत इख़्तियार की, इस मानी में हरगिज़ सही नहीं हो सकता कि गोया आपने हमको गुनाहों के इरतिकाब का जवाज़ अता कर दिया। अगर कोई इस तरह का अक़ीदा रखता है तो अपनी

ग़लत ज़हनियत की बिना पर शहादते हुसैन[अ०स०] के मक़सदे हक़ीक़ी को फ़रामोश करने का दरपै होता है।

हुसैन[अ०स०] यक़ीनन निजात देहिन्द–ए–उम्मत थे और हैं ब–ई माना (इन माना में) कि आपने निजात का रास्ता नुमायाँ कर दिया। और एक ऐसी जमाअत की बक़ा का सामान कर दिया जो अपने अमल से निजात की हक़दार हो। अगर हुसैन[अ०स०] का करबला का जिहाद न होता तो दीनो शरीअत की अस्ल सूरत रूख़्सत हो जाती। बादशाहों की सीरत सुन्नते इलाहिया क़रार दी जाती और उनकी तक़लीद ही मेयारे नजात समझी जाती। इस तरह उम्मते इस्लामिया अबदी हलाकत में मुबतिला होती। हुसैन[अ०स०] ने अपने उसव–ए–हसना (अमल) से हमको निजात के क़ाबिल बना दिया।

हुसैन[अ०स०] ने हमारे क़वाये (सलाहियत) अमल को मुअत्तल (ख़त्म) व शल (अपाहिज) नहीं किया बल्कि आपका उसव–ए–हुसना हमारे लिए बेहतरीन मुहर्रिके अमल (नमूना)हो सकता है।

पेशवायाने मज़हब ने जो गिरया व बुका की ताकीद की और उसके लिए आख़िरत के बेहतरीन सवाब बताये। उसका फ़लसफ़ा यही था कि अगर यह सवाब हमारे पेशे नज़र होगा तो हम उनके हालात को ज़्यादा सुनने और याद करने की कोशिश करेंगे इसका असर यह होगा कि हमारे आमाल पर उसका असर पड़ेगा। अगर इतनी अहमियत इस वाक़ए को बहैसियते मुसीबत न दी गई होती तो दुनिया के तमाम दीगर वाकेयात की तरह यह भी तारीख़ के अवराक़ के सिपुर्द हो जाता और यह जो बच्चा बच्चा उससे वाक़िफ़ है यह कभी न होता। जब हम उससे पूरे तौर पर वाक़िफ़ ही न होते तो सबक़ क्या हासिल करते।

सीज़दह सद साला (तेरह सौ साल) यादगारे हुसैनी को इम्तियाज़ी शान के साथ क़ायम करने का भी अस्ल माहसल (निचोड़) यही है। हुसैन[अ०स०] की याद अगर पूरी ताक़त और एक नई ज़िन्दगी के साथ हमारे दिल में ताज़ा हुई है तो इसका असर हमारे किरदार पर पड़ना चाहिए।

वाक़ेय–ए–करबला हक़ीक़त में एक मदरस–ए–तरबियत है जहाँ दुनिया को मज़हब, अख़लाक़ और फ़राएज़ शनासी के उसूल बताए गए हैं। मुबारक होंगे वह अफ़राद जो उससे सबक़ हासिल करें और अपने को अमली हैसियत से वैसे ही पेश करें जैसाकि हुसैन[अ०स०] दुनिया को बनाना चाहते थे।

Mirza Jamal (mahakavi)

http://www.slideshare.net/changezi
http://alinaqinaqvi.blogspot.in/
http://youtube.com/user/mahakavi